

PURCHASED

THE
KASHI SANSKRIT SERIES

235

CATURVARGACINTĀMAṆI

OF
ŚRĪ HEMĀḌRĪ

Volume II
VRATAKHAṆḌA

PART II

EDITED BY

PANḌITA BHARATAÇANDRA SIROMAṆI

PANḌITA YAJÑEŚVARA SMṚTIRATNA

and

PANḌITA KĀMĀKHYĀNĀTHA TARKAVĀGĪŚA



CHAUKHAMBHA SANSKRIT SANSTHAN

Publishers and Distributors of Oriental Cultural Literature

P. O. Chaukhambha, Post Box No. 1139

Jadau Bhawan, K. 37/116, Gopal Mandir Lane

VARANASI (INDIA)

© Chaukhambha Sanskrit Sansthan, Varanasi

Phone : 65889

Price Rs. 2500-00 for the set of four volumes in seven parts

Rs. 1000-00 for Volume II (Vratakhaṇḍa, Part 1-2)

THE ASIATIC SOCIETY
CALCUTTA 700016

Acc No . S 507

Date . 22.5.86

S
294.592
H 487
- 1.2, P. 2.

Originally Published by The Asiatic

Society of Bengal in 1879

Reprinted 1985

22.5.86

COMPUTERISED

C 1034

Also can be had of

CHAUKHAMBHA VISVABHARATI

Post.Box No. 1084

Chowk (Opposite Chitra Cinema)


VARANASI-221001

Phone : 65444

Printers—Srigokul Mudranalaya, Gopal Mandir Lane, Varanasi
and Globe Offset Press, New Delhi

॥ श्रीः ॥

काशी संस्कृत ग्रन्थमाला

२३५


चतुर्वर्गचिन्तामणिः

श्रीहेमाद्रिविरचितः

तत्र

प्रतखण्डनाम्नो

द्वितीयखण्डस्य

द्वितीयो भागः

श्रीभरतचन्द्रशिरामणिना

श्रीयज्ञेश्वरस्मृतिरत्न

श्रीकामाख्यानाथनर्कवागीशेन

च

परिशोधितः

चौरवम्भा संस्कृत संस्थान

भारतीय सांस्कृतिक साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक

पो० आ० चौखम्भा, पो० बा० न० ११३६

जड़ाव भवन, के. ३७/११६, गोपाल मन्दिर लेन

वाराणसी (भारत)

प्रकाशक : चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी

मूल्य : रु० २५००-०० संपूर्ण १-४ खण्ड, ७ भाग

रु० १०००-०० द्वितीयखण्ड (प्रतखण्ड, भाग १-२)

मूल रूप से आसियाटिक् सोसायिटि आफ बंगाल द्वारा प्रकाशित, १८७६

पुनर्मुद्रण १९८५

अन्य प्राप्तिस्थान

चौखम्भा विश्वभारती

पोस्ट बाक्स नं० १०८४

चौक (बिन्ना सिनेमा के सामने)

वाराणसी-२२१००१ (भारत)

फोन : ६५४४४

मुद्रक : श्रीगोकुलमुद्रणालय, गोपाल मंदिर लेन, वाराणसी एवं

ग्लोब आफसेट प्रेस, नई-दिल्ली

सूचीपत्रम् ।

— ७७७ —

| प्र | पृष्ठ | | पृष्ठ |
|----------------------------------|-------|-----------------------------|-------|
| अग्निपनेत्रविधिः | ८५६ | अष्टवधूतं न | ६५४ |
| अग्निवैकृत्यं | १०८ | अष्टिमात्रं | ८६५ |
| अनङ्गवयोदशौवतं (कालोत्तरीक) | ८ | आ | |
| अनङ्गवयोदशौवतं (भविष्योत्तरीक) | १ | आश्विनक्रान्तिवतं | ७२८ |
| अनन्तवतं | २६ | आदित्यवतं (भविष्यपुराणीक) | ५२१ |
| अनन्तवतं (पिष्ण प्रमोत्तरीक) | ६६७ | आदित्यवतं (भविष्योत्तरीक) | ५२० |
| अनन्तवतोऽपनविधिः | ९६ | आदित्यग्रयनवतं | ६८० |
| अनन्तवतं | ८६६ | आदित्यशान्तिवतं | ५२७ |
| अनन्तवतं | ८४८ | आदित्यहृदयविधिः | ५२६ |
| अमावस्यावतं (कर्मपुराणीक) | २४७ | आदित्याभिसर्गविधिः | ५२५ |
| अमावस्यावतानि | २४६ | आनन्दवतं | ८४० |
| अर्कवतं | ५०६ | आम्नीननाविधिः | ७४५ |
| अर्कवतलोपशमनं | १०८८ | आयुषवतं | ८३१ |
| अर्कवावर्जिकावतं | ७४३ | आयुर्वतं | २२७ |
| अर्कदयवतं | २४६ | आयुःक्रान्तिवतं | ७३७ |
| अरुन्धतीवतं | ३१२ | आरोग्यवतं | ७६१ |
| अशीर्वाचवतं | २७८ | आशादित्यवतं | ५२२ |
| अशोकपूर्णमात्रं | १६२ | आश्विनवतानि | ७४८ |
| अश्ववतं | ८११ | आषाढवतानि | ७४१ |
| अश्वगान्धिः | १०३१ | इ | |
| अश्विषोऽस्त्रानि | ४८३ | इन्द्रपौणमासीवतं | १८६ |

| पृष्ठा | पृष्ठा |
|---------------------------------|---|
| इन्द्रवतं ... | ८८७ कार्तिकव्रतानि ... ७६२ |
| ई | कालतिराचिव्रतं ... ७२६ |
| ईश्वरवतं ... | १४८ कौर्णव्रत ... ८६३ |
| उ | लच्छव्रतानि ... ७६८ |
| उपस्कारवैद्यतीपशम | १०८६ लक्ष्मिव्रत ... १०८ |
| उमामहेश्वरव्रतश्चापर ... | ७८६ ललितकान्तानि ... ४८० |
| उमामहेश्वरव्रत देवीपुराणोक्तं | ६८१ लक्ष्मवत्तुर्दशव्रतं ... ६४ |
| उष्ट | लक्ष्मवत्तुर्दशव्रत (लक्ष्मपुराणोक्तं) १४६ |
| उष्टव्रतानि ... | ८४८ लक्ष्मवत्तुर्दशव्रतं (शिवधर्मोक्तं) १४४ |
| ए | लक्ष्मवत्तुर्दशव्रतं (सौरपुराणोक्तं) १४६ |
| एकभक्तव्रत ... | ७४८ कोकिलव्रत ... ७४५ |
| एकभक्तव्रतं विष्णुधर्मोक्तोक्तं | ८६७ कौमुदीव्रतमवः .. २४० |
| औ | कौमुदीव्रत .. ७६० |
| औरपातिकं | १००८ समव्रतं .. १४४ |
| क | ग |
| कदलौव्रतं ... | १२४ गजनीराजव्रतविधिः .. २२६ |
| करव्रत ... | ७१८ गजपूजाविधिः .. २२९ |
| करव्रतानि ... | ७१८ गजशक्ति ... १०३६ |
| करिव्रतं ... | ८११ गन्धव्रत ... २४१ |
| करपट्टव्रतं ... | ८१० गलतिकव्रत .. ८६१ |
| काञ्चनपुरीव्रत .. | ८६८ गायत्रीव्रतं ... ६२ |
| कामचयीदशव्रत ... | २४ गङ्गावाग्नव्रत ... ४८८ |
| कामदेवव्रतं ... | १८ गुरुव्रतं ... ५०८ |
| कामधेनुव्रतं ... | २४४ गोविराजव्रतकथा ... २८२ |
| कामव्रत ... | ७५ गोविराजव्रतं (भविष्यीतगीता) २०२ |
| कामावाग्नव्रतं ... | १४५ गोविन्दव्रतं (स्कन्दपुराणोक्तं) २८८ |
| कारीवाग्निसाधन ... | २६० गोपद्विगाव्रत ... २२२ |
| कार्तिकमासव्रतं ... | ७०२ गोथुय्यव्रत ... ६८४ |

सूचीपत्रम् ।

३

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|---------------------------------|--------|-------------------------------|--------|
| बीरव्रतं ... | ८८५ | अथपौर्णमासीव्रतं | १६० |
| मोक्षान्तिः ... | १०२७ | अथव्रतं (विष्णु चर्मोपरोक्तं) | १५५ |
| प्रतिपद्यक्यामभावात्पौर्णमासी | ५८० | अथविधि | ५२५ |
| घ | | अथावाप्राप्तं | ७६ |
| घटिकाभिषेकः .. | १०१५ | आतिथिराचितं | ३१० |
| घृतभाजनव्रत .. | १५० | ज्ञानावाप्राप्तं | ७४८ |
| घृतक्षयनविधि .. | ८११ | ज्ञानाव्रतानि | ७५० |
| घृताविषयविधि. ... | ८८२ | ज्वालाव्रत | ६२० |
| च | | त | |
| चण्डिकाव्रत .. | ५१० | ताज्यसंक्रान्तिव्रतं .. | ७४६ |
| चतुर्दशीआमरणव्रत .. | १४८ | तिथिसंस्कारव्रतानि | ५८८ |
| चतुर्दशीव्रतं | १५६ | तिथिगुणव्रतपञ्चकं | १८७ |
| चतुर्दशीव्रतानि | २५ | तीर्थव्रत | ८१७ |
| चतुर्दशीव्रत(भविष्योपरोक्तं) | १२२ | मेज संक्रान्तिव्रत | ७४५ |
| चतुर्दशीव्रतमौनव्रत .. | १५८ | वयोदशव्रतानि | १ |
| चतुर्दशीव्रतानि | ८०० | वयोदशव्रत | १८ |
| चतुर्थमन्त्रं | ५०० | विपुलमन्त्रव्रतं | ५२५ |
| चन्द्रमन्त्रचक्रान्ति | ५५८ | चित्रकमन्त्रव्रत | ३१८ |
| चन्द्रव्रत | २४५ | चित्रकमन्त्र | ८५४ |
| चन्द्रव्रत पञ्चपुराणोक्त .. | ८८४ | चित्रकमन्त्र (भो.पुराणोक्त) | ८५६ |
| चन्द्रव्रतं विष्णु चर्मोपरोक्तं | २५६ | चाम्पकव्रत | १४७ |
| चन्द्रो हजोशयनव्रत | १७५ | ट | |
| चन्द्रमण्यो परागज्ञानम् ... | १२१ | दक्षिणपक्षिणां | १२४ |
| चान्द्रायणव्रतं | ७८७ | दक्षिणपक्षिणां | ५५७ |
| ज | | दशादिव्यव्रत | ५५८ |
| जनमाशान्तिः | १०७७ | द्विषाकाव्रत | ५६८ |

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|---------------------------------|--------|----------------------|--------|
| दीपदानविधि .. | ४७५ | न | |
| दीपव्रत .. | ४८२ | नक्षत्रपुरुषव्रत | ६८६ |
| दीपव्रतं ... | ५६६ | नक्षत्रपूजाविधि ... | ५८५ |
| दुर्गाभदीर्भाग्रनाशनवयोदशीव्रतं | १४ | तत्त्वव्रतनाश | ५८७ |
| दुर्गाचिराचरत | ५१५ | नक्षत्रहोमविधि .. | ६८४ |
| देवव्रत पञ्चपुराणोक्त | ५६२ | नक्षत्रार्थव्रत | ६८६ |
| देवव्रत | ६४ | नदीव्रत ... | ४६२ |
| देवसर्पव्रत | ५०४ | नन्दव्रत .. | १८ |
| देवशयनोत्थानविधि | ८०० | नन्दादिविधि | ५२२ |
| देवीव्रत ... | २०६ | नन्दादिव्रतविधि ... | ५२७ |
| देवीव्रत देवीपुराणोक्त | ७७५ | नन्दाविधि | ५२७ |
| देवीव्रत भविष्योक्तोक्त .. | ८८३ | नन्दाव्रत | ८३२ |
| देवीव्रत देवीपुराणोक्त .. | ८१५ | मवनचक्रशक्ति | ६८८ |
| द्वितीयाभद्रावतं .. | ७०५ | मवस्याद्युपवासव्रत | ५०६ |
| द्वीपव्रत | ४६४ | नवपणिमाव्रत | १६६ |
| ध | | नरसिंहचतुर्दशीव्रत | ४१ |
| धनसक्ताव्रत | ७३६ | नरसिंहचतुर्दशीव्रत | ४१ |
| धनावापिव्रतं विष्णुधर्मोक्त | १५५ | नानातथ्यव्रतानि | २५८ |
| धनावापिव्रत | ५०१ | नानाफलपूणिमाव्रत ... | २४३ |
| धनावापिव्रतं विष्णुधर्मोक्त | ७५६ | नानामाव्रतानि .. | ८०० |
| धराव्रत .. | ८८८ | निकम्पपूजा ... | २४१ |
| धान्यसक्ताव्रत ... | ७३० | नोराजनविधि ... | ६७५ |
| धामचिराचरत .. | ८२२ | प | |
| धाराव्रत ... | ८४८ | पञ्चषट्पणमाव्रत ... | १६५ |
| धृतिव्रत | ५८६ | पञ्चसर्पव्रत .. | २६८ |
| भोजनं ... | ८८८ | पञ्चव्रत .. | ८६४ |
| | | पथीव्रत .. | ८५४ |

सूचीपत्रम् ।

४

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|---|--------|--|--------|
| पञ्च नक्षत्रम् ... | ६०५ | पतिमातृत् | ५७ |
| पञ्चभूभाजनत्रयम् ... | ६०६ | प्रदीपविधि | ७६३ |
| पवित्रागोहणविधि ... | ४०० | प्रदोषवृत्तं | १६ |
| पातासूत्रम् | ४०६ | प्रभातृत् | ८४ |
| पात्रत्रयम् | ३०२ | प्रमथयेत् | १०८६ |
| पादोदकस्नान | ६५० | प्राजापत्यवृत्त | ८०३ |
| पापमोचनत्रयम् | ३८६ | प्राप्तिवृत्त | ८६६ |
| पापसंकान्तिवृत्तम् | ७०६ | फलवृत्तं | ८१८ |
| पालोचनवृत्तं शोचत | ११० | फलसंकान्तिवृत्तम् | ७८३ |
| पाणपत्रम् | १४५ | फाल्गुणविधि | ७८८ |
| पाणपत्रस्य वायुमन्त्रितं | ११३ | फाल्गुणवृत्तानि | ७८७ |
| पाणपत्रम् (मन्त्रशोधन) | १८७ | स | |
| पितृवृत्तम् | १४३ | बन्धुसिन्धुकावध | १०१७ |
| पितृवृत्तम् (भविष्यपुराणीक) | १४४ | बाणिज्यलाभवृत्त | ६४८ |
| पितृवृत्तम् (विष्णुपुराणीक) | १४५ | वृषवृत्तम् | ४७८ |
| पितृवृत्तम् (विष्णुश्रद्धोत्तरीक) | १४६ | धनीरपातशमन | १०८१ |
| पुत्रकामवृत्तम् | १७१ | ब्रह्मचर्यवृत्तम् | ८३१ |
| पुत्रदोषविधि | ४२४ | ब्रह्मचर्यवृत्तम् (विष्णुश्रद्धोत्तरीक) | ८३८ |
| पुत्रवृत्तम् | ८८३ | ब्रह्मचार्यवृत्तम् (विष्णुश्रद्धोत्तरीक) | ८४४ |
| पुत्रप्राप्तिवृत्तम् | ८८४ | ब्रह्मण्यप्राप्तिवृत्तम् | ४८० |
| पुत्रोत्पत्तिवृत्तम् | ६४८ | ब्रह्मवृत्तम् | ८७५ |
| पुराणश्रवणविधि | ८८७ | ब्रह्ममाविर्भाववृत्तम् | २६८ |
| पुर्णिमावृत्तम् (विष्णुश्रद्धोत्तरीक) | १४७ | ब्रह्मण्यप्राप्तिवृत्तम् | २४६ |
| पुर्णिमावृत्तम् (विष्णुपुराणीक) | १४८ | भ | |
| पुर्णिमावृत्तम् (विष्णुश्रद्धोत्तरीक) | १४९ | भद्रवृत्तवृत्तम् | १०३ |
| पुर्णिमावृत्तम् | १५० | भद्रविधि | ४८३ |
| पुष्यवृत्तानि | ८८८ | भद्रानुवृत्तम् | २४० |
| पुष्यवृत्तानि | ८८९ | भद्रपदवृत्तानि | ७७८ |

सूचीपत्रम् ।

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|----------------------------------|--------|---------------------------------|--------|
| भीमवृत्तं | ८८४ | महेश्वरवृत्तं | १५२ |
| भीमपञ्चकवृत्तं | ३२९ | महेश्वरस्त्राजं | १००८ |
| भूभाज्यवृत्तं | ८६७ | महोदधिवृत्तं | १४८ |
| भूतमात्रपञ्चक | २८५ | माघमासवृत्तानि | ७८८ |
| भूमिवृत्तं | ६३ | माघस्त्राजविधिः | ७८० |
| भृगुपतनविधिः | ८६१ | मार्गशीर्षवृत्तानि | ७८४ |
| भौमसंक्रान्तिवृत्तं | ७३३ | मासमसिचारावृत्तं | ८२५ |
| भौमावाप्तिवृत्तं | ७४९ | मासवृत्त | ८४९ |
| भौमवारवृत्तं | ५६७ | मासवृत्तानि | ७४४ |
| भौमवृत्तं | ५६७ | मासोपशासवृत्तं | ७७६ |
| भौमवृत्त (पद्मपुराणीक) . | ५६८ | मक्षत्रत | ८६५ |
| भू | | मक्षत्राणि: | ६४५ |
| मङ्गलवृत्तोद्यापन | ५७४ | मूलस्त्राज | ६४४ |
| मङ्गलावृत्तं | ३३२ | मृगपक्षिवैद्यतोपशमनं | १०८ |
| मङ्गलमहोत्सव . | २१ | मौमवृत्तम् | ४८२ |
| मनोरथपूणिभावृत | १७३ | मौनवृत्तोद्यापनम् | ४८२ |
| मनोरथसंक्रान्तिवृत्तं | ७५१ | य | |
| महातपोवृत्तानि | ८१७ | यमलजननशान्तिः | १०९३ |
| महापौर्णमासोत्सव | १८१ | यमवृत्त | १४१ |
| महाप्रस्थानं | ८५४ | यमवृत्तं (महाभारतीक) | ३७७ |
| महाफलवृत्त | २८२ | यमवृत्त (विष्णुधर्मोत्तरोक्त) | १५३ |
| महाराजवृत्त | १३८ | यमादशनमथादशोवृत्त | ८ |
| महालक्ष्मीवृत्त | ४८३ | युगावतारवृत्त | ५१८ |
| महावृत्त | ३७७ | युगादिविधिः | ५१७ |
| महावृत्त (लङ्गपुराणीक) . | ३८८ | युगादिवृत्त | ५१५ |
| महावृत्त (विष्णुधर्मोत्तरोक्त) | ४६१ | योगवृत्त | ७०७ |
| महाशान्तिः | ५८० | योगवृत्तानि | ७०७ |
| महाशान्तिः (भविष्यपुराणीक) | १०७९ | | |

सूचीपत्रम् ।

७

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|------------------------------|--------|-------------------------------|--------|
| र | | वसुधूतं | ८८५ |
| रक्षावन्मर्षोर्भाषीवृत ... | १८० | वक्त्राचिराचवृतं | १११ |
| रथयात्रीत्यव. देवीपुराणोक्तः | ४१० | वक्त्रवृतं | १४५ |
| रथयात्रीत्यवः | ४१४ | वायुवृतं | १४१ |
| रक्षाचिराचवृतं | १८३ | वारवृतानि | ४१० |
| रविवृतं | ७८५ | वारिवृतं | ८५० |
| रात्रिवृतं | १३८ | विद्यावाप्रिवृतं | ७८६ |
| रुद्रवृतं | ८६६ | विनायकवृतम् | १००३ |
| रुद्रवृतं (पञ्चपुराणोक्तं) | १०११ | विक्रपाचवृतं | १४३ |
| रुद्रस्नातम् | ६०१ | विल्वचिराचवृतं | ३०८ |
| रूपसद्वृतं | ७७४ | विशीकसंक्रान्तिवृतं | ७४१ |
| रूपसंक्रान्तिवृतं | ७७४ | विष्टिवृतं | ७१८ |
| रूपवाप्रिवृतं | ५२६ | विष्णुद्वयकीवृतं | ८३६ |
| रोगहरविधिः | ५२८ | विष्णुपदवृतं | ६६५ |
| रोहिणीवृतं | ५२८ | विष्णुवृतं | ४५८ |
| रोहिणीस्नानं | ५२८ | वृक्षाकृत्यामविधिः | ८०८ |
| स | | वृषवृतं | २४२ |
| सन्मीमाराधनवृतं | १६४ | वृषतमर्गं | ८८३ |
| सलिलायुतं | ५१० | वृष्टिवृष्टिप्रशमनं | १०८४ |
| स्नावणावाप्रिवृतं | ७८५ | वेदवृतं | ८३७ |
| सोकवृतं | ४६३ | वेद्यावृतं | ५४१ |
| व | | वैशाखवृत्ताणि | ७४८ |
| वटसावित्रीवृतं | १४७ | वैशाखीकार्त्तिकाम्नीधीविधिः | १६६ |
| वरवृतं | ८८६ | वैशानरवृतं | ८६० |
| वरुचवृतं पञ्चपुराणोक्तं | ८०४ | वैष्णववृतं | ८१८ |
| वरुचवृतं | १३६ | व्यतीपातवृतं नारदीयपुराणोक्तं | ७०८ |
| वर्हापत्रविधिः | ८८६ | व्यतीपातवृतं | ७१३ |
| | | व्योमवृतं | ८८६ |

सूच्यपत्रम् ।

| पृष्ठ | पृष्ठ |
|-----------------------------------|-------------------------------------|
| शकध्वजोच्छ्रागविधि | शुकवृतं ५७८ |
| शकवृतं ... | शूलटानवृतं ... २५२ |
| शकवृतं | शूलवृतं ४६३ |
| शङ्करनारायणव्रत | शैवमहापुरुषव्रतं ... २८३ |
| शतभिषाज्ञान | शिवमहावृतं ... ८४३ |
| शकनाशनव्रतं | शिवमहावृतसप्त |
| शनिवृतं | शिवोपशमवृतं ३८७ |
| शनेष्टरादिशान्ति | श्यामाशक्तोत्थ |
| शङ्कवृत | श्रवणवृतं ... २४१ |
| शान्तिकपौष्टिकानि | श्रद्धावृतं ८६९ |
| शान्तरायणीव्रतं | श्रावणवृतं ... ७४२ |
| शिवचतुर्दशोक्त | श्रावणवृतं ... ७४१ |
| शिवनक्तव्रतं | श्रीवृत ४६६ |
| शिवशिवव्रतं | म |
| शिवरात्रिव्रतं ... | महावृत नाम अन्नदानमाहात्म्य ४६६ |
| शिवरात्रिव्रतमाहात्म्य | मन्त्रानन्दवृत भविष्योत्तराक्ष २३८ |
| शिवरात्रिवृतं स्कन्दपुराणोक्त | मन्त्रपितृवृत ५६८ |
| शिवलिङ्गव्रत | मन्त्रमागवृत ५७७ |
| शिवव्रत | मन्त्रानन्दवृत ८८६ |
| शिवयोगयुक्त शिवरात्रिवृतमाहात्म्य | मन्त्रवृत ४४४ |
| शिववृत कालोत्तराक्ष | मन्त्रलाभवृत्त १०८५ |
| शिवव्रत पञ्चपुराणोक्तं ... | मन्त्रानन्दवृतानि ७२७ |
| शिवव्रत कालोत्तराक्ष | सक्रान्तिवृतानि दशपुराणोक्तानि ७२८ |
| शिवोपशमवृतं | सप्तमविधि ८८८ |
| शालावाग्निव्रतं | मघादकवृत वराहपुराणोक्त २८० |
| शङ्कुनाशव्रतं | मध्यवृतं ८८८ |
| | मन्त्रोत्तराक्ष भविष्यपुराणोक्त ३८३ |
| | भक्तव्रत विष्णुपञ्चरात्रोक्त ३१६ |

ग्रन्थानां वचनमंख्या ।

— ०००००० —

| अ | पृष्ठा | अ | पृष्ठा |
|------------------------------------|--------|--------------------------------------|--------|
| अथर्वजगोपयन्त्राक्षुष — ८८१, ८८२ | | अरुचिचपुराण—१४, ४८, २०५, ३००, | |
| अथर्वपरिशिष्टं—६१८, ६२३, ६२६ । | | ३८१ । | |
| अथर्ववेदः—८१६ । | | भारद्वाजपुराण—३१०, ३३५ । | |
| आ | | अभिषेकपुराण—३११ । | |
| आदिपुराण—२४२, २४३, २१५ । | | प | |
| आदित्यपुराण—३४८, ५१८, ६४०, | | पद्मपुराण—२५, १४०, १०४, १०८, | |
| ७६८, २४८, २४९, २४८, २८८ । | | २८८, २४९, २५४, २१८, ३२२, ३८४, ४०४, | |
| क | | ६०८, ६८४, ६८४, ७४८, ८१८, ८५०, ८६०, | |
| कालिकापुराण—१४१, १८०, ३३२, | | ८६२, ८६३, ८६४, ८६६, ८६७, ८८३, | |
| ३८२, २०९, २८२ । | | ८८४, ८८५, ८८६, ८८७, ८०१, ८०२, ८०४, | |
| कालीभर—८, ४००, ४८०, ८९१ । | | ८०४, ८११ । | |
| कूर्मपुराण—१५१, १५६, २४०, २४८ । | | पालकथाः—२२२ । | |
| ग | | प्रभासखण्ड—२४५ । | |
| गङ्गा—२८८, | | ख | |
| गायत्रिपुराण—२८१, २८२, ८०६ । | | ब्रह्मपुराण—३८८, ८०१, ८१४, ८४०, ८८४, | |
| द | | ब्रह्मवैवर्तः—८०५, ८०१, ८८१ । | |
| देवीपुराण—३०३, ३३४, ४२४, ४५५, | | ब्रह्माण्डपुराण—४५२, ७१८, ७४४, ८५५ | |
| ४८२, ६२०, ६८३, ६८४, ६८५, ६८८, ७००, | | झ | |
| ७०६, ८५४, ८५६, ८१६, ८६४, ८८० । | | भविष्यपुराण—८८२, १०११, | |

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|--------------------------------|--------|------------------------------------|--------|
| विष्णुस्मृतिः—७६९ | | सौरपुराण—२४, १५६, ३८८, ८१४, | |
| अ | | ८१७, ८४४, ८६६ | |
| शिवस्मृतिः—१५४, १५६, १८५, ८४३, | | अथर्वपुराण—८०, ८९, ११९, १४०, | |
| ८५१, ८८८, ८९९, १०३० | | १४८, १५९, १७८, १८८, १८९, ३१९, ३१५ | |
| शिवस्मृत्योत्तर—३८६, ८८३ | | ४८९, ४८९, ४८८, ५१४, ५१७, ५६६, ५६७, | |
| शिवस्मृत्युत्तर—८६१ | | ५८८, ६४०, ७३९, ७३९, ७३४, ७३५, ७३६, | |
| स | | ७३७, ७३८, ७३८, ७४०, ७४१, ८६७, ८८१ | |
| सौरपुराण—५५७ | | अथर्वमहाकाण्ड अथ—१५१, २४११ | |

अथ सप्तदशोऽध्यायः ।

—000—

अथ त्रयोदशीव्रतानि ।

धर्मादपेतं न कदाचिदेव यदीयवाचो विप्रयत्नमेति ।

स एव हेमाद्रिरनुक्रमेण त्रयोदशीषु व्रतवृन्दमाह ॥

बुधिष्ठिर उवाच ।

भगवन् भूतभक्ष्येण संसारार्णवतारक ।

व्रतं कथय किञ्चिन्मै रूपसौभाग्यदायकं ॥

अनङ्गः प्रीणितो येन फलं यच्छति केशव ।

आत्मवद्रूपसौभाग्यं तस्मै विस्तरतो वद ॥

कृष्ण उवाच ।

अनङ्गः श्रूयते देवः शूलपाणिः पिनाकभृत् ।

तस्मिन् सम्पूजिते* पार्थ किञ्चाप्नोति नरोभुवि ॥

तेन ते कथयिष्यामि शूलपाणिव्रतेष्विदम् ।

यस्य कस्यचिदाख्यातं व्रतानामुत्तमं व्रतं ॥

चीर्त्सा भक्त्या नरोमर्त्ये यद्यदिच्छति पाण्डव ।

तत्तदाप्नोत्यसन्दिग्धमनङ्गाख्यां त्रयोदशीम् ॥

किं व्रतैर्व्युभिः पार्थ उक्तमात्रफलप्रदैः ।

त्रयोदशी त्विदं पुण्या सर्वव्रतफलप्रदा ॥

* तस्मिन् बुध्जित इति पुस्तकाकारे पाठः ।

तस्मात् कार्या प्रयत्नेन बहुपुण्यमभीक्ष्णता ।
 त्रयोदशीस्नानङ्गास्या सखीऽचौघ* विनाशनी ॥
 सर्वदुष्टोपशमनी सर्वमङ्गलदायिनी ।
 अतुल्यसुखसौभाग्यरूपलावण्यदायिनी ।
 पुरा दग्धेन कामेन त्रिनेत्रमयनाम्निना ।
 भस्मीभूतेन लोकेऽग्निम् सङ्कल्पयेन पाण्डव ।
 अग्नयेन कृताज्ञेया तेनानङ्गत्रयोदशी ॥
 अपरं श्रूयते यस्यां पुराणेनेतिविश्रुतम् ।
 नाम निर्व्वचनं पार्थ कथयामि शृणुष्व तत् ॥
 अग्नौ भगवान् शश्वस्तेजो† मूर्त्तिरगोचरः ।
 स एव देवोयेनास्यां तेनानङ्गत्रयोदशी ॥
 प्रमिष्टा समनुपाप्ता नित्या सर्वफलप्रदा ।
 मार्गशीर्षमले पक्षे त्रयोदश्यां समाहितः ॥
 स्नान नद्यां तट्टागे वा गृहे वा कूपतोऽपि वा ।
 कृत्वाभ्यर्च्य महादेवं विधानाच्छशिभूषणं ॥
 लिङ्गं स्वयम्भवं भूतमभावे यत्प्रतिष्ठितं ।
 तदनङ्गमितिप्रोक्तं पूजयेद्भक्तितोव्रतो ॥
 दधि, दुग्ध, घृत, क्षौद्र, शर्कराद्यमृतैः शुभैः ।
 स्थाप्यः एवामृतैः पश्चात् स्नापयेद्भस्मवारिणा ॥
 धूपदीपादिनैवेद्यैः पुष्पैस्तत्कालसम्भवे ।

* सखीऽचौघेति पुस्तकालये पाठः ।

† शिव्युरिति पुस्तकालये पाठः ।

‡ स्नापयति पुस्तकालये पाठः ।

फलैर्नानाविधैर्भक्ष्यैर्गीतवादिभिरनिस्त्रयैः ॥
 श्रुतनामान्यद्योश्चार्थं होमः कार्यस्तिलाच्यते ।
 अक्षतश्च, जाति, नारङ्ग, पायसैर्न्यधुना पिबेत् ॥
 अक्षतवादि क्रमात् काष्ठपुष्पफलनैवेद्यप्राशनानि ॥
 एवमुत्तरेष्वपि मासेषु
 अन्नं पूजयेदादौ मधुमत्यासमन्वितं ।
 अन्नङ्गान्ना संपूज्य मधु प्राश्य स्वपेक्षिणि ॥
 मधुप्राशनयोगेन जायते मधुरध्वनिः ।
 अन्नमेधस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोति भक्तिमान् ॥
 पुष्पैश्चोदुम्बरैर्वीर शुभदाङ्घ्रिममोदकैः ।
 चन्दनेन च योगीशं मद्यन्त्या श्रुतं यजेत् ॥
 स्नाप्य क्षीरादिभिः पार्थं पूजयित्वा विधानतः ।
 योगेश्वरेति संस्पृश्य चन्दनं प्राशयेन्निशि ॥
 सौम्यः श्रोतः सुगन्धश्च चन्दनप्राशनाद्भवेत् ।
 राजसूयस्य यज्ञस्य तद्भक्तः फलमाप्नुयात् ॥
 माघे न्यग्रोधसक्तान्द मातुलिङ्गं सुमालिकैः ।
 सुमालिकं सोमलकं मुक्ता भोतिश्च योगीशं मद्यन्त्या सहितं
 यजेत् ।

माघेश्वरेति संस्मृत्य प्राशयेन्मौक्तिकोदकं ;
 प्राशनस्य प्रभावेन निर्मला धीः प्रजायते ।
 रूपान्धश्च वंपुःस्त्रीणां मनोनयनमन्दनं ॥
 मुक्तापूर्णापमे नेत्रे पद्मपञ्चायते शुचिः ।
 सौम्यः शान्तः सुगन्धश्च चन्दनप्राशनाद्भवेत् ॥

बहुशर्माख्यहस्तस्य प्राप्नोत्यधिकलं फलं ।
 फासगुणे वदरीकैश्च गोरजीवीरणोदकैः ॥
 कक्कोलेनच वीरेशं सशीतं निशि पूजयेत् ।
 वीरनाम जपेद्रात्रौ कक्कोलं प्राशयेन्निशि ॥
 तेनास्य सुरभिर्गन्धो जायते कायवक्रयोः ।
 तथा गुणगणावासो द्रुतकाञ्चनसन्निभः ॥
 गोमेधस्य फलं प्राप्य शक्रलोके महीयते ।
 चैत्रे करञ्ज, दमन, द्राक्षा, वटुक, शीतलैः ॥

शीतलः कर्पूरः ।

देवेशं रूपनामानं यज्ञे सुभगया सह ।
 पूर्वोक्तविधिना पार्थ कर्पूरं प्राशयेन्निशि ॥
 कर्पूरवान् प्रियालोके गन्धगौरवसंयुतः ।
 चन्द्रवत्सर्वलोकानां लोचनाङ्गादकारकः ॥
 जायते स नरः पार्थ यः करोतीह भक्तिमान् ।
 नरमेधफलावाप्तिर्जायते नात्र संशयः ॥
 वैशाखे सहकारार्कपुष्पाक्षफलसक्तभिः ।
 जातीफलैर्मंहारूपमिन्द्राक्ष्या सहितं यजेत् ॥
 प्राशयेद्रात्रिसमये जातीफलमनुत्तमं ।
 सफलास्तस्य सर्वाशा भवन्ति भुवि भारत ॥
 गोसहस्रफलं प्राप्य रुद्रलोके महीयते ।
 ज्यैष्ठे जम्बूविश्वपत्रैः त्रीफलैः पूषकैस्तथा ॥
 लवङ्गनाथं संपूज्य प्रद्युम्नं ललिताम्बितम् ।
 लवङ्गं प्राशयेद्रात्रौ लावण्यं तेनचाप्नुयात् ॥

वाजयेयफलं सन्ध्या मोदते दिवि भारत ॥
 आषाढे ऽपामार्गनीप नालिकेरकदम्बकैः ।
 तिलैश्चोमापतिं रात्रौ पूजयेच्च तिलोत्तमां ।
 उमापतिं जपन् प्राप्तः प्राशयेच्च तिलोदकं ॥
 तिलोत्तमावदभवत् रूपसम्पदनुत्तमा ।
 प्राप्नोति पुण्डरीकस्य फलं कुरुकुलोदह ।
 श्रावणे सुमनोभ्यो ऽज रुद्रीफलमण्डकैः ॥

सुमना जाता ।

गन्धतोयैः शूलपाणिं शुक्लवासोन्वितं यजेत् ।
 गन्धोदकञ्च संप्राश्य स्वपेद्रात्रौ विमत्सरः ॥
 सुगन्धः सर्व्वसौ ख्यात्यधिरायुयोपजायते ।
 अग्निष्टे मय यज्ञस्य तस्य स्यात् फलमुत्तमं ॥
 भाद्रे पालाशचाम्प्यशर्कराज्य पुरैस्तथा ।

आज्यपुरी छतपूरः ।

यजेतागुरुणा सद्योजातं गीर्थासमन्वितं ॥
 अगुरुं प्राशयित्वा तु गुरुर्भवति भूतले ।
 तुलापुरुषदानस्य हेमस्य फलमश्रुते ॥
 आश्विने चाप्यपामार्गकर्कश्वगुहपूरकैः ।
 स्वर्णाभ्योमिः सुवर्णञ्च विद्वाधिपतिं यजेत् ॥
 हेमोदकञ्च संप्राश्य हेमवर्णः प्रजायते ।
 नरमेधस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोति निश्चितं ॥
 जर्ज कदम्बक द्रोणकुशाण्ड लवणेन तु ।
 फले च विद्याधिपतिं यजेन्नन्दनदा वृष्ट ॥

फलैरमृतफलाख्यैर्भक्ष्यलवणवान् ज्ञेयः ।

लवणं प्राशयेत्तत्र अह्नया परयान्वितः ।

रूपलावण्यसंयुक्तः प्राशनादस्य जायते ॥

नैवेद्यानामप्यलाभे हविष्यान्नं प्रकल्पयेत् ।

इह प्रतिस्नोक्तं दन्तधावनं कुसुमं नैवेद्यं प्राशनानां यथा
क्रममभिहितानां तस्य तस्याभावे अयमनुकल्प उक्तः ।

सर्वेषु पारणेष्वेव भोजयित्वा द्विजोत्तमान् ।

सदक्षिणस्ततोऽग्रीयाद्वन्धुभिः सहितो वशी ।

व्रतविघ्नो यदा तस्यामशक्तो सूतकेऽथवा ॥

उपोष्य एवोपवास्य तदहः पारयेत् पुनः ।

एवं सम्बत्सरस्यान्ते शक्ता रक्षाद्यलङ्घनं ॥

उमामहेश्वरं हैममधिवास्य ततो निशि ।

पुष्पैर्धूपैस्तथागन्धैर्नैवेद्यैर्विविधैः फलैः ॥

ततः प्रभातसमये कृतहोमवलिक्त्रियः ।

वक्ष्यमाणमिदं सर्वं प्रदद्यात्तु द्विजातये ॥

लिङ्गाकारमनङ्गञ्च सौवर्णं कारयेच्छिवं ।

ताम्रपात्रेषु संस्थाप्य कलशोपरिविन्द्यसेत् ॥

शुक्लवस्त्रेण संष्क्राय पुष्पनैवेद्यपूजितं ।

ब्राह्मणाय प्रदातव्यं शिवभक्ताय सुश्रुत ॥

शक्तिमान् शयनं दद्यात्सवत्सां गां पयस्त्रिणीं ।

कृत्रीपानत्प्रदानञ्च कलशा सोदकान्विताः ॥

हादशात्रं प्रकर्त्तव्याः स्रक्चन्दनविभूषिताः ।

सितपक्वान्नसंस्कृता ब्राह्मणेभ्यो निवेदयेत् ॥

देवस्यैव प्रदातव्याः कुम्भा द्वादशगण्डकाः ।
 वितानं पञ्चवर्णं च ध्वजकिङ्किणिनादिनम् ॥
 घण्टा च सुम्बना भद्रास्त्रभीयाद्विवमन्दिरे ।
 तस्मिन्नेव दिने पार्थ सम्प्रीडयामानमर्चयेत् ॥
 देवदेवं त्रिशूलेशं पुष्पनैवेद्यदीपकैः ।
 गीतवादित्रनृत्यादि प्रेक्षकैर्विविधैरपि ॥
 दानान्यत्र प्रदेयानि स्ववित्तस्यानुसारतः ।
 सूर्योपरागसदृशोयतः सदिवसो मतः ॥
 भोजनञ्च यथा शक्ता घट्टसं मधुरोत्तमम् ।
 प्रदद्याद्विवभक्तानां देयानि च विशेषतः ॥
 अर्चितो नावमन्येत अक्षिपेन्नमृतं वदेत् ।
 एवं तदुत्सवं कृत्वा शिवयज्ञमनुत्तमं ॥
 ततः स्वयन्तु भुञ्जीयाद्भृत्यवर्गसमन्वितः ।
 शान्ताचारकनिष्ठस्तु हृदि देवं निवेश्य च ।
 एवं निर्वर्त्य विधिवत्कृतकृत्यः पुमान् भवेत् ॥
 नारी वा नृपशादूँल कृत्वेतद्भूतमुत्तमं ।
 फलं त्वेतदवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ।
 एवं कृत्वा नरः सम्यक् भक्तिभावेन भावितः ॥
 मुच्यते सर्वपापोर्वैर्ब्रह्महत्यादिकैरपि ।
 इह कीर्त्तिमवाप्य वै मृतः स्वर्गं महीयते ॥
 पुण्यशेषादिहागत्य सार्वभौमो नृपो भवेत् ।
 व्रतस्यास्य प्रभावेन मूर्तिमान् मदमो भवेत् ॥
 सोभाग्यधनसौख्यान्वः शान्तचित्तो जितेन्द्रियः ॥

पुत्रपौत्रैः सुसंपूर्णैः जीवेच्च शरदां शतं ।
 शिवभक्तपरो भूत्वा शिवकगतमानसः ॥
 अन्तकाले शिवं स्मृत्वा शिवसायुष्यतां व्रजेत् ।
 कामेन याकिल पुरा समुपोषिता सौत्
 शुभ्रान्तिथिं त्रिदशदेहमवाप्तिहेतोः ।
 तां प्राशनैरुदितनामयुतैरुपोष्य
 दिव्यं प्रयाति परमं पदमिन्दुमौलः ॥
 इति भविष्योत्तरोक्तं मनङ्गचयोदशीव्रतं ।

चैत्र शुक्लचयोदश्यामनङ्गं तु पटे लिखेत् ।
 नीलदूर्वाङ्कुरश्याम हस्तमात्रं प्रमाणतः ॥
 रतिघ्नौघभयोपेतं पौष्पसायकवापधृक् ।
 पटेषु सुस्थितः कार्यः सर्वैश्चाक्षरासां गणैः ॥
 नानापुष्पैस्तु संपूज्य वस्त्रनैवेद्यदीपकैः ।
 धूपैर्नानाविधैर्हस्तैर्नानातोयारवेण तु ॥
 पुष्पमण्डपमध्ये तु रम्योद्याने तु पूजयेत् ।
 आचार्यैर्विविधैर्भक्त्या पूजितव्यः प्रयत्नतः ॥
 वस्त्रहेमाक्षपानैश्च यथा शक्या तु भक्तितः ।
 पुमान् कामं त्वमाप्नोति सर्वस्यैव प्रियो भवेत् ॥
 सौभाग्यं प्राप्नुयाद्गारी इह लोके परत्र च ।
 मासि मासि यजेद्वापि यथानुक्रमयोगतः ॥
 एकस्मिन् वा दिने वक्ष्य वक्षरे वा समर्चयेत् ।

मदनं चित्तभवनं मन्मथस्तु रतिप्रियं ।
 अनङ्गं चैव कन्दर्पं संपूज्य मकरध्वजम् ॥
 कुसुमायुधसंज्ञञ्च तथा पूज्य मनोभवं ।
 तथा विषमवाणञ्च हादयं मालतीप्रियं ॥
 मासि भाद्रपदे यन्नादनङ्गं पूजयेत्तदा ।
 इत्येतन्नियमेनैव कामव्रतं समाचरेत् ॥

इति कालीनरोक्तमनङ्गव्रतम् ।

—000—

युधिष्ठिर उवाच ।

यमस्याराधनं ब्रूहि त्रीवत्सपुरुषोत्तमं ।
 यथा न गम्यते रौद्रवरकं नरकान्तकम् ॥

कृष्ण उवाच ।

हारवत्यां पुरे पार्थ स्नातोऽहं लवणाश्रसि ।
 दृष्टवान् मुनिमायातं मुद्गलं नामनामतः ॥
 प्रक्ष्वलन्तमिवादित्यं तपसा द्योतितं वरं ।
 स प्रणम्याथ सत्कारैरिदं पृष्टोयुधिष्ठिर ॥
 यमादर्शननामेदं व्रतं जन्तुभयापहं ।
 कथयामास स मुनिर्मुद्गलो विष्णयान्वितः ॥

मुद्गल उवाच ।

वृत्तान्तं कथयिष्यामि यदृष्टं स्वप्नरीरके ।
 अकस्माद्रोगरहितः पतितोऽस्मि धरातले ॥
 पश्यामि चण्डपुरुषैः समन्तादाहृतं वपुः ।

अङ्गुष्ठमात्रपुरुषो वलादाकृत्यते तु सः* ॥
 बद्धा यमभटैर्गाढं नीयते वेगवाहिभिः ।
 क्षणात्सभायां पश्यामि यमं पिङ्गललोचनं ॥
 क्षणावदातं रौद्रास्यं मृत्युव्याधिसमन्वितम् ।
 वातपित्तकफाद्यैश्च मूर्त्तिमद्भिरुपासितं ॥
 कामशोकज्वरछर्दिप्लीहानाहभगन्दरैः ।
 राजयक्ष्मप्रमेहदौर्बेरीरोगैरेकधा ॥
 निजाहन्तु त्रणै रौद्रैर्ज्वालागर्दभकादिभिः ।
 रोगैर्व्युद्भिः क्षणं नानारूपैर्भयावहैः ॥
 मूर्त्तिमद्भिश्च संग्रामे नरकैर्घोरदर्शनैः ।
 राक्षसैश्च पिशाचैश्च समन्तात्परिवारितः ॥
 विषारकैर्विशिष्टाद्यैश्चित्तगुप्तादिलेखकैः ।
 आदित्यादिकदिक्पालैः कर्मसाक्षिभिरावृतः ॥
 दूतेरौद्रमुखाद्यैश्च सिंहसर्पादिवाहनैः ।
 पाशाङ्कुशादिहस्तैश्च भ्रुकुटीकुटिलाननैः ॥
 वृहत्कायैर्महाघोरैः पापिष्ठानां नियामकैः ।
 असिपत्रवनाङ्गारक्षारगर्तास्त्रपूरकैः ॥
 अस्थिभङ्गामिषच्छेदकधिरस्तावकादिभिः ।
 तत्रस्थो वृकतोभाति यमीनान्यो जनोऽपरः ॥
 स ग्राह किङ्करान् सर्वान् धर्मराजोरुषान्वितः ।
 त्यज्यतां किं समानीतोयुष्माभिर्भान्तमानसैः ॥
 मुहलोनाम कुण्डिन्ये नगरे भीष्मकात्मजः ।

* वानदाकृत्यतेत्युया इति पुस्तकाकारः ।

क्षत्रियः समानीयतां क्षीणायुस्त्यज्यतां मुनिः ॥
इत्युक्तास्ते गतास्तस्मादायाता. पुनरेव ते ।
उच्यते मभटाः प्राज्ञा धर्मराजं सुविस्मयाः ॥
क्षीणायुस्तत्र चास्माभिर्न कश्चिन्नक्षितो गतैः ।
न जानीमो भ्रातृचित्ताः क्षमस्व जगतांपते ॥

यमउवाच ।

प्रायेण ते न दृश्यन्ते पुरुषे धर्मकिङ्करैः* ।
कृता त्रयोदशो यैस्तु नरकार्त्तविनाशनो ॥
उज्जयन्त्यां प्रयागे वा भैरवे वापि ये मृताः ।
तिलाग्रगोहिरण्यादि दत्तं यैस्तु गवाङ्गिकं ॥
किङ्कराजसुः ।

कौटुम्भं तद्धतं स्वामिज्यं नो भास्करात्मज ।
किं तत्र चैव† कर्त्तव्यं पुरुषार्थचतुष्टये ॥

यमउवाच ।

पूर्वाह्णे मार्गशीर्षादौ वर्षमेकं निरन्तरं ।
त्रयोदश्यां सौम्यादिने सूर्यागङ्गारकवर्जिते ॥
मम नाम्ना हिजानष्टौ पञ्च चैव समाह्वयेत् ।
पुराणवेदतत्त्वज्ञानं स्वाचारांस्तत्र दर्शनान् ॥
सूर्यैकशरणान् साधून् सर्वभूतहिते रतान् ।
शुचौ देशे शुभे पट्टे प्राङ्मुखानुपवेशयेत् ॥
अन्तर्वासोयतान् भक्त्या यत्नेनाभ्यङ्गयेत् तान् ।

* धर्मकिङ्करैरिति पुलकाकरे पाठः ।

† इवेति पुलकाकरे पाठः ।

आरभ्य उत्तमाङ्गांस्तु तिलतैलेन मर्दयेत् ॥
 स्नापयेद्भस्मकाषायैः सुखोष्णेन च वारिणा ।
 पृथक् पृथक् स्नापयित्वा सर्वानेव द्विजोत्तमान् ॥
 सुखस्नातान्मथाचान्स्तान् व्रती भक्तिपरायणः ।
 स्वयं सभृत्यः शूयूषां तेषां कुर्यात्समाहितः ॥
 प्राङ्मुखानुपदिष्टांश्च त्रयोदश पृथक् पृथक् ।
 संस्थापयेच्चामिसुखान् गुडपूपान् सुपूजितान् ॥
 सव्यञ्जनं सुपक्वान्नं भूयो भूयो निवेदयेत् ।
 यथासुखं यथादृष्टिं यथाकाममयाचितं ॥
 देयं भावं समालस्य हृच्छङ्किः श्रेय आत्मनः ।
 शुचिर्भूत्वा तथाचाञ्च दक्षयेत्तिलतण्डुलैः ॥
 प्रस्थमाचैरथैकैकं तान्मन्त्रपात्रसमन्वितैः ।
 सदक्षिणैश्च संछन्ने जलकुम्भैः पवित्रकैः ॥
 चर्मप्रावरणैः श्रेष्ठैर्वस्त्रपुष्पैश्च दूतकाः ।
 मन्त्रेणानेन विप्रेन्द्रान् दक्षयेत्तान् पृथक् पृथक् ॥
 ब्राह्मणान् समरूपांस्तान् पंक्तिभेदेन कारयेत् ।
 यमःशनैश्चरो मृत्युर्दण्डहस्तो विनायकः ॥
 अभावः प्रलयः शान्तिर्दुःस्वप्नश्चमनोऽन्तकः ।
 लोकपालो धनी क्रूरो रौद्रो घोराननः शिवः ॥
 मम प्रसादसुसुखोददात्वभयदक्षिणाम् ।
 इत्युक्त्वा म प्रयच्छेत् देयं दत्त्वा व्रती पुनः ॥
 द्विजानानुपजेत्तस्मात् स्वगृह्यविधिनाश्रितान् ।
 एवं यः पुरुषः कश्चित्सङ्गृह्यतमिदं चरेत् ॥

स मृतोऽपि नरो दूता न याति यममन्दिरं ।
 अट्टोसौ समायाति विमानेनार्कमण्डलम् ॥
 तस्माद्याति पुरीं विष्णोस्ततः शिवपुरीं व्रजेत् ।
 न्यूनं चूर्णं व्रतं तेन मुहुरेन यथोदितं ॥
 तेन नायात्यसौ लोकं मम क्षण्यपुङ्गव ।

मुहुरेन उवाच ।

यमस्यैतद्वचः श्रुत्वा कापि दूता गतास्तु मे ।
 अहञ्च सर्वमाकर्ण्य विस्मयाविष्टमानसः ॥
 स्वयरीरस्ततः प्राप्य सुप्तएवोत्थितो हरेः ।
 ततो हरत्वमाविष्टो त्वां द्रष्टुमिदमागतः ।
 श्रुतस्तु च मया तच्च कथितन्ते मया त्विह ।

कृष्ण उवाच ।

इत्युक्त्वा मुहुरो राजन् प्रयातः स्वाश्रमं प्रति ।
 इदं कुरुष्व कीर्त्तये त्वमप्यत्र महीतले ॥
 ततो यास्यस्यसन्दिग्धं परित्यज्यान्तकं दिवं ।
 एवं येऽन्येऽपि पुरुषाः स्त्रियोवापि युधिष्ठिर ॥
 त्रयोदश्यां त्रयोदश्यां ये करिष्यन्ति भूतले ।
 एकभक्तेन नक्तेन उपवासेन वा पुनः ॥
 यमादर्शननाम्ना वै व्रतं सर्वव्रतीक्ष्णम् ।
 ते सर्वपापनिर्मुक्ता विमानेनार्कवर्षसा ॥
 यास्यन्तीन्द्रपुरीं रम्यामप्सरीगणसंहतां ।
 दीधूयमाना वमरैस्तूयमानाः सुरासुरैः ।
 गीतवादित्रनिर्घोषैश्च त्रपङ्क्तिविराजिताः ।

अष्टा घोररूपैस्ते यमदूतैर्युधिष्ठिर ॥
 अनादिता व्याधिशतैः पिशाचाद्यैरगोचराः ।
 अताडिता महारौद्रेर्नानाप्रहरणाः क्षताः ॥
 यमदृष्टिपथान्मुक्ताः सर्वसौख्यसमन्विताः ।
 सर्वालङ्कारसंयुक्ताः स्वशिरःसौम्यदर्शनाः ॥
 स्वर्गं वसन्ति सुचिरं भाविताः स्वेन कर्मणा ।
 ज्ञाप्य त्रयोदशमुनीन् छतपायसेन
 सम्भोज्य पूज्य तिलतण्डुलसम्प्रदानैः ।
 कुर्वन्ति ये व्रतमिदं त्रिदशैः पार्थ
 पश्यन्ति ते यममुखं न कदाचिदेव ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं यमादर्शनत्रयोदशौव्रतम् ।

गुरुवारे त्रयोदश्यामपराह्णे जलप्लुतः ।
 तर्पयित्वा देवपितृन् ऋषींश्च तिलतण्डुलैः ॥
 नरसिंहं समभ्यर्च्य यः करोत्युपवासकं ।
 सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोके महीपते ॥

इति नरसिंहपुराणोक्तं नरसिंहत्रयोदशौव्रतम् ।

युधिष्ठिर उवाच ।

ब्रूहि मे यदुशार्दूल व्रतं गन्धविनाशभम् ।
 तिक्ताग्रहश्च देहस्य दीर्घायुनाशन तथा ॥

कृष्ण उवाच ।

इमं व्रतं पुरा पार्श्वं जातूकर्षीमहामुनिः ।
 पृष्टोराज्या महामत्स्या कालनन्दनया तथा ॥
 कथयामास तां वृष्ट उपविष्टा नृणोति सा ।
 देवी कृताञ्जलिपुटा जातूकर्षीऽवद्भुतं ॥
 न्यैष्ठेमासि सिते पद्मे त्रयोदश्यां बुधितिर ।
 स्नात्वा पुष्पनदीतीये पूजयेद्भुभदेशजम् ॥
 श्वेतमन्दारमर्कं वा करवीरञ्च रक्तकम् ।
 निम्बञ्च सूर्यदेवञ्च वज्रभं दुर्लभं तथा ॥
 दीप, नैवेद्य, पुष्पाद्यैर्मन्त्रेणानेन पाण्डव ।
 निरीक्ष्य गगने सूर्यं स्नात्वा हृदि समुच्चरेत् ॥
 सूर्यं त्वं श्वेतमन्दारश्वेताकार्कस्य सम्भव ।
 करवीरं नमस्तुभ्यं निम्बञ्च नमोऽस्तु ते ॥
 इत्थं योऽर्चयते भक्त्या वर्षे वर्षे पृथक् नरः ।
 दुर्मतयं नृपयेष्ठ नारी वा भक्तिसयुता ॥
 तस्याः शरीरे दुर्गन्धो दुर्भाग्यं वा न जायते ।
 न सापन्नभयं लोके न बन्ध्यादोषज्जन्वेत् ॥
 जायतेऽतीव सौभाग्यमन्यस्त्री दुर्लभं नृप ।
 कथितं यासरिष्यन्ति गन्धदोर्भाग्यनाशनं ॥
 सर्वदोषैर्विनिर्मुक्ताः सुखमग्रन्ति भारत ।
 निम्बं नवार्ककरवीरललासुपुष्पं ॥
 याः पूजयन्ति कुसुमाक्षतदीपदानैः ।

• श्रीमन्महावार्तावि पुस्तकालये पाठः ।

ताः सर्व्वकामसुखवृद्धिसमृद्धिभाजो
 दौर्भाग्यदोषरहिताः सुभगा भवन्ति ।
 इति भविष्योत्तरोक्तं दुर्गन्धदौर्भाग्यनाशन
 त्रयोदशीव्रतम् ।

युधिष्ठिर उवाच ।

कान्तारवनदुर्गेषु प्रविशन्नि नदीषु च ।
 समुद्रतरणे चैव संग्रामेषु वरार्दने ॥
 देवतां कां स्मरेत्तत्र परिचाणकरीं विभो ।
 कथञ्च देव कुरुते परित्राणकृते जनः ॥

कृष्ण उवाच ।

सर्व्वमङ्गलमाङ्गल्यां दुर्गां भगवतीं उमां ।
 नाप्नोति दुःखं पुरुषः संस्मरन् सर्व्वमङ्गलां ॥
 अलक्ष्म्यलक्षं भूतस्य सर्व्वस्य हृदये स्थितां ।
 न भयं समवाप्नोति संस्मरन्मृगदस्त्रिकां ॥
 यदा तु शास्त्रं विज्ञातुमवन्त्यामहमागतः ।
 गुरोः सन्दोषनेपार्श्वं त्रलेन सह भारत ॥
 प्राप्तविद्येन च मया प्रतिज्ञाताय दक्षिणाः ।
 दिव्यं भावं विदित्वा मे तेनाहं भाषितस्तदा ॥
 प्रभासतीर्थं पुत्रो मे सतोऽसौ दीयते त्वया ।
 मया ध्याता ततोदेवी सर्व्वापत्सु च तारणी ।

अङ्गावह्नेति विख्याता तदा देवी च मङ्गला ॥
 चित्तं योऽर्चयेत्पार्थ तस्य सर्वत्र मङ्गलं ।
 संहितान्तरक्तं वलभद्रमङ्गला वेति चयं ॥
 ततः प्रभृति तत्रस्थाः पूजयन्ति जनाः सदा ।
 माघे बलभद्रश्च मध्यस्थां सर्वमङ्गलां ॥
 वामे नारायणः सोऽहं कपादी भवतस्ततः ।
 त्रयोदश्यां सिते पक्षे मासि मासि धृतव्रतः ॥
 एकभक्तेन नक्तेन उपवासेन वा पुनः ।
 गन्धैः पुष्पैः सदीपैश्च मधुमीधुसुरासवैः ।
 पल्लोदरकैः क्षिप्रं वलिभक्तैश्च भक्तितः ॥
 योऽभ्यर्चयेत् राजेन्द्र सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
 सर्वपाप्मनस्तत्रैव चित्तं संस्मरेच्च यः ॥
 अथवा दूरदेशस्थः कारयेत् प्रतिमात्रयं ।
 मृगमयं काष्ठं चापि लिखितं चित्रकपापच ॥
 पूजयित्वा विधानेन सर्वं तत् फलमश्नुते ।
 एतच्चयं चिद्ब्रह्मेऽस्ति सिते सदैव
 यः पूजयेत् कुसुममांससुरोपहारेः ।
 नश्यन्ति तस्य भवनेष्वतिभीषणानि
 चीरारिजन्तुजनितानि भयानि सद्यः* ॥
 इति भविष्योत्तरोक्तं* सर्वमङ्गलात्रयोदशीव्रतम् ।

* मन्त्रारति पुस्तकालयेपाठः ।

। इति भविष्योत्तरोक्तं अङ्गावह्नामङ्गला त्रयोदशी व्रतं सिति पुस्तकालये पाठः ।

मार्कण्डेय उवाच ।

शुक्लपक्षे महाराज त्रयोदश्यामुपोषितः ।
 पूजयेत् कामदेवमु वैशाखात् प्रभृति प्रभो ॥
 गन्ध, माण्ड्य, नमस्कार, दीप, धूपान्नसम्पदा ।
 दद्याद्ब्रतान्ते विप्राय गन्धवस्त्रयुगं तथा ॥
 कृत्वा व्रतं वन्द्यरमितदिष्टं
 मासाद्य नाकं * सुचिरे मनुष्यः † ।
 मानुष्यमासाद्यं भवत्यरोगः
 सुखान्वितोरुपसमन्वितस्य ॥
 इति विष्णुधर्मोक्तं कामदेवव्रतं ।

मार्कण्डेय उवाच ।

शुक्लपक्षे महाराजं त्रयोदश्यामुपोषितः ।
 फाल्गुनात्सु समारभ्य नित्यं संपूजयेन्नरः ॥
 महाराजमु धनदं ।
 गन्धमाण्ड्यनमस्कार दीपधूपान्नसम्पदा ।
 सुवर्णं ब्राह्मणेन्द्राय व्रतान्ते प्रतिपादयेत् ॥
 कृत्वा व्रतं वन्द्यरमितदिष्टं
 पक्षेषु राजन् सुचिरं † उपोष्य ।

* • ब्राह्मणसन्दिग्धमिति पुस्तकालये पाठः ।

† मनुष्य इति पुस्तकालये पाठः ।

मातृव्यमासाद्य वनान्वितः स्वात्
सोमाप्यवुक्तश्च तदा विरोधः ॥
इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं नन्दव्रतं ।

व्यासउवाच ।

अथोद्दिष्टान्तवा रात्री सोपहारं त्रिलोचनं ।
उद्दिष्टं प्रथमे यामि मुच्यते सर्वपातकैः ॥
इति भविष्यपुराणोक्तं प्रदोष व्रतं ॥

सनत्कुमार उवाच ।

अथ स्वस्वयनं पुंसां शृण्वतामवनाशनं ।
अथोद्दिष्टां महाबुधे व्रतमितचिन्तामय ॥
नवनीतं नवङ्गम् रजताङ्गसमप्रभं ।
कपिलफलमात्रं यक्षमादायसुसंयतः ॥
रौप्यताम्रमयै पात्रे सौवर्णे वाच शृण्वये ।
सुवर्णरचिते तस्य निधिपेत् प्राप्नुयः शुचिः ॥
जातश्च क्षतजप्यश्च दुष्टाण्यरधरः क्षयः ।
मण्डलं पुष्पनिकरै रक्षतैर्वा प्रकल्पयेत् ॥
तस्मिन्नेष्टद्वयं पञ्चं कारयेत् कुसुमोत्करैः ।
तत्र सङ्कीर्णं देवं लज्जया युक्तान् दिव्यया ॥
कर्चिकायां समावाह्य दक्षिणावाहयेत्तदा ।
शक्तीरष्टौ तु तन्मन्त्रेर्दिशा पात्रांस्तु वाह्यतः ॥

विधाय देवयजनं स्नादुमूलफलानि च ।
तदये तत्समानीय नवनीतं नवं शुचिः ।
द्विधा कृत्वा तदेकैकं मन्त्रेणैवाभिमन्त्रयेत् ॥

मन्त्रः ।

पुरुषः पूर्णकामश्च हरिर्भद्रं करोतु नः ।
योषिर्भते सदा लक्ष्मीर्भक्तलं दिशतु स्वयं ॥
एवं कृत्वा ततः पत्नी दद्यादेकैकमद्यतः ।
पूर्वं पुंलक्षितं पिण्डमितरश्च तथापरम् ।
इतरं स्त्रीलक्षितं ।

प्राश्याचम्य स्थितां पत्नीं प्रयतामभिमन्त्रयेत् ।
यस्त्वत्परात्मा भूतानामनादिनिधनच्युतः ॥
स परः परया भक्त्या कुक्षि रक्षन्तु मे सदा ।
सर्वं पुष्टिप्रजननी सर्वार्त्तिशमनी तथा ॥
लक्ष्मीः कुक्षिगतं गर्भं रक्षतादच्युतप्रिया ।
सर्वार्त्तिक्षयदद्याणि दिव्यगक्तियुतान्यपि ॥
त्वा रक्षन्तु सदा विष्णोः सर्वप्रहरणान्यपि ।
तथा दिक्पतयः सर्वे रक्षन्तु ग्रहदेवताः ॥
पान्तु संसारसंयुक्ता सर्वे रक्षन्तु सर्वदा ।
इति कृत्वा ततः कुर्याद्वाङ्मनानाञ्च तर्पणम् ॥
गुरवे च वरं दत्त्वा नियमान् प्रतिपालयेत् ।
वध्वा सहोपवृत्तञ्च तद्दिनं प्रयतात्मना ॥
चतुर्दश्यान्तु सुस्नातः कृतपूजाविधिः शुचिः ।
ब्राह्मणान् भोजयित्वा तु दद्याच्च गुरुदक्षिणाम् ॥

भुञ्जीत वास्यैः साधं नियमानुत्सृजेत्ततः ॥
 एवं कुर्वन्वरः शुद्धो ब्रह्मपत्यश्च विन्दति ।
 वभ्यापि लभते पुत्रं मनोनयननन्दनम् ॥
 कन्यापि सुपतिं विन्देत् व्रतेनानेन सुव्रता ।
 माङ्गल्यं परमं प्राप्य दीर्घमायुश्च विन्दति ॥

इति वाराहपुराणोक्तं त्रयोदशीव्रतम् ।

कृष्ण उवाच ।

गौरीं विवाह्य जघाह हरः पाशुपतं व्रतम् ।
 उमापतिः पशुपतिर्ध्यानासक्तो बभूव ह ॥
 ब्रह्मादिभिश्च संमन्त्रा विशुद्धपुत्रलब्धये ।
 गौर्या मनोभिनवितप्रणाय प्रहर्षितेः ॥
 प्रह्वितः क्षोभणार्थाय समर्थ इति मन्त्रयः ।
 ततोमारो जगामाद्य आश्रमं रतिसंयुतः ॥
 ईश्वरस्य धनुःपाणिर्व्यमन्त्रासहायवान् ।
 सचेक्षुश्चापमाकृष्य मदनीम्नादनं शरम् ॥
 विल्लेप त्रिपुरघ्राये समाधिर्भङ्गहेतवे ।
 बद्धा तु तस्य सकल्पं रुद्रः क्रोधज्वलद्वपुः ॥
 ललाटे वक्त्रिमसृजत् दृतीयनयनाहरः ।
 कामीवलोकितस्तेन भस्मीभूतश्च तत्क्षणात् ॥
 दग्धं दृष्ट्वा स्मरं गीकाद्रतिप्रीत्यौस्थिते सदा ।

कश्चं विलपन्त्यो च सर्वमन्त्रदिशागते ॥
 ततः शोकार्द्रुदया गौरी वदन्मुवाच च ।
 भगवन् मदर्थे संरक्षः कामं निर्दग्धवानसि ॥
 तेनैते पश्यतांश्च हे कामस्य वदितः कथम् ।
 कुर्व प्रसादं देवेश रतिप्रीत्योष्ठं ध्वज ॥
 सञ्जीवय पुनः शब्धो मूर्त्तिमन्तं पुनः कुर्व ।
 तच्छ्रुत्वा तु महादेवो हृष्टः प्रोवाच पार्वतीं
 उपभूतं जगत्सर्वं मन्त्रधेन शरीरिणा ।
 मया दम्भस्य कामस्य पुनरागमनञ्च तः ॥
 किञ्च ते मानवहास्य करोमि सफलं प्रिये ।
 अस्मिन्वसन्तसमये शुक्लपक्षे त्रयोदशी ॥
 अस्यां मनोभवो देवी भविष्यति शरीरवान् ।
 एतेन वीजभूतेन जगद्वसिष्यतेऽखिलम् ॥
 एवं वरभिदं दत्त्वा मन्त्रधाय युधिष्ठिर ।
 जगाम ह्रिमवत्पृष्ठे कैलाशं पार्वतीप्रियः ।
 तदेतन्ने समाख्यातं करस्य चरितं नृप ॥
 पूजाविधानमपरं कथयामि शृणुष्व तत् ।
 अस्यां स्नात्वा त्रयोदश्यामशोकाख्यं नगं लिखेत् ॥
 सिन्दूररजनीरङ्गै रतिप्रीतिसमन्वितम् ।
 कामदेवं मत्तवाजिवक्त्रं तत्र त्र्यध्वजम् ॥
 सौवर्धं वा महाराजतृचक्षैवमथापि वा ।
 स्त्रीस्त्राविक्षासगमनगर्वितश्चानप्यरोगणं ॥

मन्थर्व गीतवादिनप्रेक्षणीय समाकुलम् ।
 मन्थावर्त्तकतुल्लोकाप्रीति विद्याधरीयुतं ॥
 मध्याह्ने पूजयेत् भक्त्या भक्षैर्धूपैः सुमन्थकैः ।
 मन्त्रेणानेन राजेन्द्र नरनारीसमन्वितं ।
 नमः कामाय देवाय देवदेवाय मूर्त्तये ॥
 मन्त्रविष्णुसुरेशानां* मनःसोभकराय वै ।
 सत्त्वैवमर्चयित्वा तु देवदेवं मनोभवं ॥
 ततस्तदयतो देया मोदकाः सुखमोदकाः ।
 नानाप्रकारान् भक्ष्यांश्च कामो मे प्रीयतामिति ॥
 ततो विसर्जयेद्दिपान् दत्त्वा युग्मं सदत्तिचं ।

युग्मं गोमिथुनं* ।

स्वपतिं पूजयेन्नारी वस्त्रमाख्यविभूषणैः ।
 कामोयमिति सखिस्थ प्रहृष्टेनान्तरात्मना ॥
 मन्त्रजाय महापूजां* यजमानः सुहृद्भूतः ।
 रात्रौ जागरणं कुर्यात् सुखरात्रिर्यथा भवेत् ॥
 कर्पूरं कुङ्कुमसोदगन्धताम्बूलसर्जनैः ।
 शूद्राणां मयदानैश्च कुर्याद्रास महोत्सवं ॥
 दोषप्रवृत्तनैर्द्वितीयैः नृत्यैः प्रेक्षककोशवेः* ।

-
- सुरेन्द्राणांमिति पुस्तकान्तरे ।
 - वस्त्र वस्त्रमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।
 - मन्त्रजाय महापूजांमौषा पुस्तकान्तरे पाठः ।

एवं यः कुरुते पार्थ वर्षे वर्षे महोत्सवं ॥
 वसन्तसमये प्राप्ते ऋष्टः पुष्टीनृपः पुरे ।
 तस्य संवत्सरं यावत् शोकरोगैर्विमुच्यते ॥
 सुभिद्यक्षेममारोग्य यशस्यौसौख्यमुत्तमं ।
 कामवर्षी च पर्जन्यः तस्मिन् राष्ट्रे प्रजायते ॥
 तुष्यते नात्र सन्देहोद्वादशाईर्वालोचनः ।
 तथा कामस्य विष्णुस्य वसन्तस्य प्रजापतिः ॥
 चन्द्रसूर्यादिकाः सर्वे ग्रहा ब्रह्मर्षयस्तथा ।
 सर्वेऽपि तस्य तुष्यन्ति यक्षगन्धर्वराक्षसाः ॥
 असुरा यातुधानाश्च सुपर्णः पद्मगा नगाः ।
 तुष्टाः प्रयच्छन्ति सुखं तस्य कर्तुर्न संशयः ॥
 चैत्रोत्सवे सकललोक मनो निवासे ।
 कामं वसन्तमलयाद्रिमरुत्सहायम्* ॥
 पद्मगा सृष्टार्थं पुरुषप्रवरीऽथ योषित् ।
 सौभाग्यरूपसुतसौख्ययुता सदा स्यात् ॥
 इति भविष्योत्तरोक्तमदनमहोत्सवः ।

व्यास उवाच ।

मन्दवारयुता पुण्या शुक्लपक्षे त्रयोदशी ।
 तस्यामुपोष्य विधिवत्सम्पूज्य गिरिजापतिं ॥
 ब्रह्महत्यादिभिः पापैर्मुक्तो भवति मानवः ॥

इति सौरपुराणोक्तं सर्व्वव्रतम् ।

* कामस्य वसन्तमलयाद्रिमरुत्सहायमिति पुलकान्तरे पाठः ।

पुष्पादितस्तयोदश्यां कृत्वा नक्तं मधौ पुनः ।
 अशोकं काञ्चनं दद्यादित्युक्तं दशाङ्गुलं ॥
 विप्राय वस्त्रसंयुक्तं प्रयुज्यः प्रीयतामिति ।
 कल्पं विष्णुपुरे स्थित्वा विशोकः स्वात् पुमान् नृपः ॥
 एतत् कामव्रतं नाम सदा शोकविनाशनं ॥
 इति पद्मपुराणोक्तं कामव्रतम् ।

मन्मथीवाच ।

कामं पूज्यः त्रयोदश्यां सुरुपो जायते भुवम् ।
 इष्टां रूपवतीं भार्यां लभेत् कामांश्च पुष्कलान् ॥
 मूलमन्त्राः स्तसंज्ञाभिरङ्गमन्त्राय कीर्त्तिताः ।
 पूर्व्वं च पद्मपत्रस्यः कर्त्तव्यं तृतीयेश्वरः ॥
 गन्धपुष्पोपहारैश्च यथागतिं विधीयते ।
 पूजाशोठेन शोठेन कृतापि तु फलप्रदा ॥
 आज्यधारा समिद्धिश्च दधिक्षीरान्नमाचिकैः ।
 पूर्व्वोक्तफलदेहोमः कृतः शास्त्रेण चेतसा ॥
 एतद्व्रतं वैष्णवाभरप्रतिपद्व्रतवत् व्याख्येयम् ।
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं कामत्रयोदशीव्रतम् ।
 इति श्रीमहाराजाधिराज श्रीमहादेवस्य समस्त
 करणाधीश्वर-सकल-विद्याविगारद् श्रीहेमाद्रि-
 विरचिते चतुर्व्वर्गचिन्तामणौ व्रतखण्डे
 त्रयोदशीव्रतानि ॥

* नररति पुष्पकान्तरे पाठः ।

• कामपुलकं पुष्पकान्तरे पाठः ॥

अथ षष्ठादशोऽध्यायः ॥

—000—

अथ चतुर्दशीव्रतानि ।

दिग्दन्ताबलकर्णतालपवन-प्रेङ्खोलभङ्गाङ्गना
सङ्गीतिश्रुति मिश्रितं सुमधुरं वैकुण्ठ-कुण्डलरैः ।
कीर्त्तिं किङ्करयोषितः प्रतिदिशङ्गायन्ति यस्यानिशं
हेमाद्रिः स चतुर्दशीव्रतगणं ब्रूते महासिद्धिदं ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

अनन्त व्रतमप्यन्यत्तिथा वस्यामनुत्तमं ।
सर्वपापहरं नृणां स्त्रीणां चैव युधिष्ठिर ॥
शुक्लपक्षे चतुर्दश्यामासि भाद्रपदे भवेत् ।
तस्यानुष्ठानमात्रेण सर्वपापाश्चपोहति ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

कृष्ण कीयमनन्तेति प्रोच्यते यस्तथा विभो ।
किं शेषनाग आहोस्त्रिदशस्तप्तकः स्मृतः ॥
परमात्मा तथानन्त उताहो ब्रह्म उच्यते ।
क एषोऽनन्तसंज्ञिवै तथ्यं मे ब्रूहि केशव ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

अनन्त इत्यहं पार्थ ममरूपं निबोध वै ।
आदित्यादिपञ्चा वारा यः काल उपपद्यते ॥

कला-काष्ठा-सुहृन्नादि दिनरात्रि शरीरवान् ।
 पञ्चमासर्तु-वर्षाणि युगकल्प-व्यवस्थया ॥
 योऽयं काशी मया ख्यातः सोऽनन्त इति कौत्स्यते ।
 सोऽहं कलावतीर्णोऽहं भुवी भारवतारणात् ॥
 दानवानां विनाशाय साधूनां पालनाय च ।
 अनादि मध्यमर्थ्यन्तकृष्णं विष्णुं हरिं शिवं ॥
 ब्रह्माणं भास्करं सोमं सर्वव्यापकमौष्करं ।
 विश्वरूपं महाकालं सृष्टि संहारकारकं ॥
 प्रत्ययार्थं मया रूपं फाल्गुनाय प्रदर्शितं ।
 सर्वमेव महाबाहो योगिध्येयमुत्तमं ॥
 विश्वरूपमनन्तञ्च यस्मिन्निन्द्राद्यतुर्ह्यश ।
 वसवोष्टौ द्वादशार्का रुद्रा एकादशामलाः ॥
 सप्तर्षयः समुद्राश्च पञ्चताः सरितोद्भवाः ।
 नक्षत्राणि दिशोभूमिः पातालं भूर्भुवः स्वह ।
 मा कुरुष्वान सन्देहं सोऽहं पार्थ न संशयः ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

अनन्तव्रतमाहात्म्यविधिं विधिविदाम्बर ।
 किं पुण्यं किं फलं यत्स्यादनुष्ठानवतां नृणां ॥
 केन वादौ पुरा चीर्णं मर्त्ये केन प्रकाशितं ।
 एवं सविस्तरं कृण्वन् ब्रूयन्नन्त व्रतं मम ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

आसीत् पुरा कृतयुगे सुमन्तुर्नाम वे बिज ।

वसिष्ठगोत्रेचोत्पन्नः सुसुरूपां भृगोःसुतां ॥
 दीक्षां नामोपयेमे तां वेदोक्तविधिना नृप ।
 तस्याः कालेन सञ्जाता दुहिता नन्ददायिनी ॥
 शीला नाम सुशीला सा न्यवसन्मातृसद्वनि ।
 ततः कालेन कियता ज्वरदाहेन पीडिता ॥
 विननाश नदीतीये ययौ स्वर्गं पतिव्रता ।
 समन्तस्तु ततो यज्ञे धर्मं पुंसः सतां पुनः ॥
 उपयेमे विधानेन कर्कशां नाम नामतः ।
 दुःशीलां कर्कशां चण्डीं नित्यं कलहकारिणीं ॥
 सापि शीला पितुर्गृहे गृहार्चनरता बभौ ।
 कुड्यस्तम्भाङ्गन-द्वार-देहली-तोरणादिषु ॥
 वर्णकैश्चिचमकरोत् नील-पीत-सिता-सितैः ।
 स्वस्तिकैः शङ्खपद्मैश्च अर्चयन्ती पुनः पुनः ॥
 ततः काले बहुतिथे गते मारदशानुगा ।
 पित्रा दृष्टा तदातेन स्त्रीचिह्ने यौवने स्थिता ॥
 कस्मै देया मया शीला विचार्य्य वंसुदुःखितः ।
 पिता ददौ द्विजेन्द्राय कौण्डिन्याय शुभे दिने ॥
 गृहोक्तविधिना पार्श्वे विवाहमकरोत्तदा ।
 निर्वस्त्रीहाहिकं सर्वं प्रोक्तवान् कर्कशां द्विजः ॥
 किञ्चिद्वायादिकं देयं जामातुः परितोषकं ।
 तत् श्रुत्वा कर्कशाकृष्टा प्रोच्छाय गृहमण्डनं ॥
 पटायां सुस्थितं कृत्वा स्वगृहं गम्यतामिति ।
 भोज्यावसिष्टचूर्णं पायेयच्च चकार सा ॥

कौण्डिन्याऽपि विवाद्येनां पथि गच्छन् शनैः शनैः ।
 ग्रीलां सुग्रीलामादाय नवीढां गौरथेन हि ॥
 मध्याह्ने भोग्यवेलायां समुत्तीर्य सरित्तटे ।
 ददर्श ग्रीला स्त्रीणां सा समूहं रक्तवाससां ॥
 चतुर्दश्यामर्चयन्तं भक्त्या देवं जनार्दनं ।
 उपगम्य शनैः साथ प्रपञ्चस्त्रीकदम्बकं ॥
 भार्या किमेतन्मे ब्रूत किं नाम व्रतमीदृशं ।
 ता जञ्चु र्योषितस्तां तु ग्रीलां ग्रीलविभूषणां ॥
 अनन्तव्रतमेतद्दि व्रतेऽनन्तस्तु पूज्यते ।
 सा ववीदहमेतत्ते करिष्ये व्रतसुखम् ॥
 विधानं कीदृशं तच्च किं दानं कीदृञ्च पूज्यते ।

स्त्रिय ऊषुः ।

शीले सदन्नप्रस्थस्य पुत्रामसंस्कृतस्य च ।
 अर्घं विप्राय दातव्यं अर्घमात्मनि भोजनं ॥
 शक्त्या च दक्षिणां दद्यादित्थयाऽथविवर्जितां ।
 कर्त्तव्यं स सरीक्षीरे विधिमानेन मानिनि ॥
 ज्ञात्वा नक्तं समभ्यर्च्य गन्धलेपनधूपनैः ।
 पुष्पैर्गन्धैः सुनैवेद्यैः पीतरत्नैश्चतुःसमैः ॥
 तस्याग्रतो दृढं सूतं कुक्षुमातुं सुहृत्कम् ।
 चतुर्दशग्रन्थियुतं वामे करतले न्यसेत् ॥
 मन्त्रेणानेन सुश्रोणिषावहर्षं समाप्यते ॥

अनन्त संसारमहासमुद्रे

मन्त्रान् समभ्युषर वासुदेव ।

अनन्तरूपी विनियोजयस्व

अनन्त सूत्राय नमोनमस्ते ॥

अनेन डोरकां वद्धा भोक्तव्यं स्वस्थमानसैः ।

ध्यात्वा नारायणं देवमनन्तं विश्वरूपिणं ।

भुक्त्वा चान्तो व्रजेद्देशे भद्रे उक्तं व्रतं तव ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

एवमाकर्ण्य राजेन्द्र प्रहृष्टेनान्तरात्मना ।

सापि चक्रे व्रतं शीला करे वद्धा सुडोरकम् ॥

पाथेयमर्घ्यं विप्राय दत्त्वा भक्तं स्वयं तथा ।

पुनर्जगाम संहृष्टा गोरथेन पतेर्गृहं ॥

भर्तासहैव शनकैः प्रत्ययस्तच्छणादभूत् ।

तेनानन्तव्रतेनास्या बालंगोरस-संकुलं ॥

गृहाश्रमं श्रियाकुष्टं धन-धान्य-समन्वितं ।

कुलमव्याकुलं रम्यं सर्वजातिधिपूजनं ॥

सापि माणिक्यकाञ्चीभिर्मुक्ताहारविभूषिता ।

देवाङ्गवस्त्रसंयुक्ता सावित्री प्रतिमाभवत् ॥

कदाचिदुपविष्टाया हृष्टो वदः सुडोरकः ।

शीलायाहस्तमूले तु भर्ता नेन द्विजन्मना ॥

स्त्रीमदान्धेन कौरव्य साक्षेपं द्रोणितं रुषा ।

कोऽनन्त इति मूढेन जल्पता पापकारिणा ॥

क्षिप्वा ज्वाला कुलेवह्नी हाहाकृत्वा प्रधाविता ।

शीला गृहीत्वा सूत्रञ्च चौरमध्ये समाक्षिपेत् ॥

तेन कर्णविपाकेन तस्य सा श्रीः चयं गता ।
गोधनं तस्करैर्नीतं गृहं सुष्टमकाचनं ॥
यस्यैवागतं तत्र तत्रैव च विनिर्गतम् ।
स्वजनैः कलहोमिषैर्वचनं भर्जनं तथा ॥
अनन्ताक्षेपदोषेषु दारिद्र्यं पतितं गृहे ।
न कश्चिद्दत्तो लोके तेन सार्धं युधिष्ठिर ॥
शरीरेणाति सन्तप्तो मायया प्यतिदुःखितः ।
निर्वेदं परमं प्राप्तः कैण्डिन्यः प्राह तां प्रियां ॥
शीले किमेतदुत्पन्नं सहस्रात्रीककारकं ।
येनातिदुःखतोऽस्माकं जातः सर्वधनक्षयं ॥
स्वजनैः कलहो गेहे न कश्चिन्नेप्रभाषते ।
शरीरे तीव्रसन्तापः चेद्वेत्तसि दारुणः ॥
जानासि दुर्गन्धः कोऽत्र किं कृतं दुष्कृतं भवितुम् ।
प्रत्युच्चाय तं शीला सुशीलाशीलमण्डना ॥
प्रायोऽनन्तकृताक्षेप पापसम्भवजं फलं ।
भविष्यति महामाग तदर्थं यत्नमाचर ॥
एवमुक्तः सविप्रर्षिर्जंगाम मनसा हरिं ।
निर्वेदोन्निर्जंगामाद्य कैण्डिन्यः प्रयतो वनं ॥
तपसे कृतसङ्कल्पो वायुभङ्गो द्विजोत्तमः ।
मनस्याध्याय चानन्तं कद्रुणामि ततो विभुं ॥
यस्याप्रसादात्सञ्जातमाक्षेपान्निर्धनं गतं ।
धनादिकं ममातीव सुखदुःखप्रदायकं ॥
एवं सञ्चिन्तयत् सोऽथ वभ्राम विजने वने ॥

तत्रापश्यत् महाचूतं फलितं पुष्पितं तथा ।
 वर्जितं पक्षिसङ्घातैः कीकटे विभवं यथा ॥
 तमपृच्छत्त्वयानन्तः कयिदृष्टो महातरो ।
 ब्रूहि सौम्य ममातीव दुःखं चेतसि वर्त्तते ॥
 सोऽप्रवीणद्र नानन्तं वेद्मि द्रक्ष्यामि वा हिज ।
 एवं निराकृतस्तेन जगामाथ हिजस्ततः ॥
 क्व द्रक्ष्यामिति गच्छन् स गामपश्यत्मवक्त्रकां ।
 तृणमध्ये प्रधावन्तीमितचेतस पाण्डव ॥
 अपृच्छत्वेनुके ब्रूहि यद्यनन्तस्त्वयेक्षितः ।
 साचीवाचाथ कीण्डिन्यं नानन्तं वेद्म्यहं हिजः ॥
 ततो व्रजन् ददर्शार्थं रम्यं पुष्करिणीद्वयं ।
 अन्योन्यजलकल्लोल-वीचिपर्यङ्कसङ्गमम् ॥
 पृच्छन् किञ्जल्ककङ्कार-कमलोत्पलमण्डलैः ।
 मेयितं भ्रमरैर्हंसैश्चक्रैः कारण्डवैर्वकैः ॥
 तेचापृच्छद्विजोऽनन्तो भवतीभ्यां न लक्षितः ।
 जपतस्तेहिजयेष्ठ नानन्तं वेद्मि हे किल ॥
 ददर्शार्थं वने तस्मिन् गर्हभं कुञ्जरं तथा ।
 तावथ्रातीहिजिनोक्ता जचतुर्नैव विग्रहे ॥
 एवं सम्यक् क्व द्रक्ष्यामि तत्रैव भूवि तादृशः ।
 कीण्डिन्यो विह्वलीभूतो निराशो जीविते नृप ॥
 दीर्घमुष्णञ्च निश्वस्य पपात भुवि भारत ।
 प्राप्य संज्ञामनन्तेतिजल्पन् तथाय स हिजः ॥
 नूनं पश्याम्यहं प्राणानिति सङ्कल्प्यचेतसि ।

उखायोदुष्य वृक्षेऽस्मिन् तावद्भारत सत्तम ॥
 क्षपयानन्तदेवोऽस्य प्रत्यक्षं समजायत ।
 वृक्षमाक्षय्यरूपेण एहोहीचेत्युवाच तं ॥
 प्रगृह्य दक्षिणे पाशौ गुह्यमावेक्ष्य तं स्वतः ।
 स्त्रां पुरीं दर्शयामास दिव्यनारीनरैर्युतं ॥
 तस्यां निविष्टमात्मानं दिव्यसिंहासने शुभे ।
 पार्श्वस्थं शङ्खचक्रञ्च गदागरुडयोभितं ॥
 दर्शयामास विप्राय विश्वरूपमनन्तकम् ।
 विभूतिभेदैश्चानन्तैरनन्तममितीजसं ।
 तं दृष्ट्वा तादृशं रूपमनन्तमपराजितम् ॥
 वेपमानो जगादोच्चैर्जयशब्दपुरःसरं ।
 जय क्षण्य जयानन्त विश्वमूर्ते जयाव्यय ॥
 जय सर्वैककर्त्तेति संहर्त्ते च जयाच्युत ।
 अनादि निधना, व्यक्त जय नित्य जयाक्षर ॥
 जय सर्वग सर्वान् सार्वभौम हृदयेभ्यः ।
 एवमादि प्रणम्याद्य पुनरप्याह तं द्विजं ॥
 पापोऽहं पापकर्माहं पापात्मा पापसम्भवः ।
 त्राहि मां पुण्डरीकाक्ष सर्वपापहरो भव ॥
 तच्छ्रुत्वा नन्तदेवश्च प्राह सुखिन्धया गिरा ।
 माभैस्त्वं ब्रूहि विप्रेन्द्र यत्ते मनसि वर्त्तते ॥
 कौण्डिन्य उवाच ।

मया भूत्वा बिलुप्तेन त्रोटितोऽनन्तकोरकः ।
 तेन पापविपाकेन भूतिर्मे प्रसूयं गता ॥

(५)

स्वजनैः कलहो गेहे न कश्चिन्मां प्रभाषते ।
 निर्वेदात् अमितोऽरुणो तव दर्शनकाङ्क्षया ॥
 कृपया देवदेव च त्वया आकां प्रदर्शितः ।
 तस्य पापस्य मे शान्तिं कारुण्याद्ब्रूमर्हसि ।

श्रीकृष्ण उवाच ।

तच्छ्रुत्वानन्तदेवेश उवाच द्विजसत्तमं ।
 भक्त्या माता पिता देवः किं न दद्याच्छुधिष्ठिर ॥

अनन्त उवाच ।

स्वगृहं गच्छ कौण्डिन्य मा विलम्बं करिष्यसि ।
 वरानन्तव्रतं कुर्यात् नववर्षाणि पञ्च च ॥
 ततः पापविशुद्धात्मा प्राप्स्यति ऋद्धिमुत्तमां ।
 पुत्रपौत्रान् समुत्पाद्य भुक्त्वा भोगान्मनोनुगान् ॥
 अन्ते च स्मरणं प्राप्य मामुपोष्यस्यसंशयम् ।
 अन्यच्च ते वरन्दद्भिः सर्व्वलोकोपकारकम् ॥
 इदमाख्यानकं श्रुत्वा शीलानन्तव्रतादिकम् ।
 करिष्यति नरोयस्तु कुर्व्वन् व्रतमिदं शुभम् ॥
 सोऽचिरात्पापनिर्मुक्तः प्राप्नोति परमां गतिं ।
 गच्छ विप्र गृहं शीघ्रं यथायेनागतोऽसि ॥

कौण्डिन्य उवाच ।

स्वामिन् पृच्छामि मे ब्रूहि किञ्चित् कीर्तुहलं मया ।
 अरुणो भक्त्या दृष्टं न तद्देहि जगद्गुरो ॥
 स चूतः पृथ्व्यास्मिन् गीरेका च पृथ्व्यास्तापः ।

कमलोत्पलकङ्कारैः शोभितं सुमनोहरं ॥
मया दृष्टं महारक्षे किं तत् पुष्करिणीद्वयं ।
कः खरः कुम्भरः कोऽसौ कोऽसौ वृक्षोद्भिजोत्तमः ॥

अनन्त उवाच ।

स चूतवृक्षोविप्रोऽसौ वेदार्थत्वविशारदः ।
सोर्धितोऽपि नभैः प्रादाच्छिष्येभ्यस्तदाज्ञतः ॥ १ ॥
सा गौ वसुन्धरा दृष्टा सुफला या त्वया हिज ।
वृक्षोर्ध्वस्तयादृष्टः शाहसं सत्यमाश्रितः ॥
धर्मव्यवस्थानं तच्च यस्तुपुष्करिणीद्वयं ।
ब्राह्मण्यो केचिद्व्यास्तां भगिन्यौ ते परस्परं ॥
धर्माधर्मादि यत्किञ्चित् तं निवेदयतोमिहः ।
विप्राय न कश्चिद्वत्तमतिबो दुर्बलोऽपि वा ॥
भिद्या दत्ता न चार्थिभ्यो तेन पापेन कर्मणा ॥
वीचीकल्लोलमालाभिर्मण्डितस्ते परस्परम् ॥
खरः क्रोधः स्तयादृष्टः कुम्भरो रोगउच्यते ।
ब्राह्मण्यो सावनन्तोऽहं गुहासंसारमङ्गरम् ॥
इत्युक्त्वा देवदेव्यस्तत्रैवान्तरधीयत ।
स्वप्नप्रायश्च तद्दृष्ट्वा ततः स्वगृहमागतः ॥ २ ॥
कृतवानन्तव्रतं सम्यक् नववर्षाणि पञ्च च ।
भुक्त्वासर्वमनन्तेन यद्योक्तं पाण्डुनन्दन ॥
अन्ते च स्मरणं प्राप्य गतोऽनन्तपुरे हिजः ।
तस्मा त्वमपि राजेन्द्र कदा नृशून् व्रतं कुरु ॥

कौत्सं ये तत्क्रियाकाले सप्तकृत्यः पुनः पुनः ।
 लक्ष्म्या समन्वितं देवमर्चयेत् जनार्दनं ॥
 सन्ध्याव्युपरमेचन्द्रस्वरूपं हरिमौल्यं ।
 रात्रिञ्च लक्ष्मीं सच्चित्त्य सस्वगर्भेण चिन्तयेत् ॥
 श्रीनिशा चन्द्ररूपा त्वं वासुदेवजगत्पते ।
 मनोभिलषितं देव पूरयस्व नमोनमः ॥
 मन्त्रे णानेन दत्त्वाध्यं देवदेवस्य भक्तितः ।
 नक्तं भुञ्जीत मीनेन तैलक्षारविवर्जितं ॥
 तथैव चैवैशास्त्रे ज्यैष्ठे च मुनिसत्तम ।
 अर्चयेच्च यथाप्रोक्तं मासि मासि च तद्दिने ॥
 निष्पादितं भवेदेकं पारणं दाल्भ्यभक्तितः * ।
 द्वितीयं तत्र वक्ष्यामि पारणस्तं निबोध मे ॥
 आषाढे यावणे मासि मासि भाद्रपदे तथा ।
 तथैवाश्वयुजेऽभ्यर्च्य श्रीधरञ्च त्रिधा सह ॥
 सम्यक्च्छन्दमसन्दत्त्वा भुञ्जीताश्च यथाविधि ।
 द्वितीयमेतदाख्यातं तृतीयं पारणं शृणु ।
 कार्तिकादिषु मासेषु तथैवाभ्यर्च्य केयवं ॥
 भूत्या समन्वितं दद्याच्छशाङ्कायार्हणं निशि ।
 भुञ्जीत च यथाख्यातं तृतीयमपि पारणं ॥
 प्रतिपूज्य ततोदद्यात् ब्राह्मणेभ्यार्च्य दक्षिणां ।
 प्रतिमासं च वक्ष्यामि प्राशनं कायशुद्धये ॥
 चतुरः प्रथमं मासान् पञ्चगव्यमुदाहृतं ।

* दक्षभक्तिता इति पुस्तकाकारे पाठः ।

कुशौदकं तथैवान्यदुक्तं मासचतुष्टयं ॥
 सूर्यास्ततः तद्वच्च जलं मासचतुष्टयं ।
 गीतवाद्यादिकं रात्रौ तथा क्षणकथाः शुभाः ॥
 कारयेद्देवदेवस्य पारण्ये पारण्ये गते ।
 जनार्दनं सप्तश्लोकमर्चयेत् प्रथमं तथा ॥
 सप्तश्लोकं त्रयोधरं तद्वत्तृतीयं भूतिकेशवं ।
 एवं संपूज्य विधिवत् सप्तश्लोकं जनार्दनं ॥
 नाप्रोतीष्टवियोगान्तिं पुमान्नाय्यपिवा पुनः ।
 यावदेतद्विधानेन पारण्यमर्चति प्रभुं ॥
 तावन्ति जन्मान्यसुखं नाप्रोतीष्ट वियोगजं ॥
 देवस्य च प्रसादेन मरणात्प्राप्स्यतेः स्मृतिं ।
 कुले सतां स्मृतधने भोगान् भुङ्क्ते पश्चिद्वान् ॥
 इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तलक्ष्मीनारायणं व्रतं ।

—on@no—

दाहभ्य उवाच ।

श्रुत्वा मिच्छाम्यहं तात यममार्गं सुदुर्गमं ।
 यथा सुखेन संयान्ति मानवा स्त्रहदस्व मे ॥

पुलस्त्य उवाच ।

प्रतिमासम् नामानि पञ्चदश्यां जगत्पतेः ।
 कृतोपवासः सुज्ञातः पूजयित्वा जगद्गुरुं ॥
 उच्चारयन्तरोयाति सुमुखेनैव गच्छति ।

ततो विप्राय वै दद्यादुदकुम्भं सदक्षिणं ॥
 उपानहस्तुग्मञ्च कृचं काननमेव च ।
 यद्वा मासगतं नाम प्रीयतामिति कीर्त्तयेत् ॥
 केशवं मार्गशीर्षे तु पोषे नारायणं तथा ।
 माधवं माघमासे तु गोविन्दमपि फासुगुने ॥
 चैत्रे विष्णुञ्च वैशाखे कीर्त्तयेन्मधुसूदनं ।
 ज्येष्ठे त्रिविक्रमं देवं तच्चाषाढे च वामनं ॥
 श्रीधरं श्रावणे मासि हृषीकेशं ततः परं ।
 नाम भाद्रपदे तद्वत् ज्ञायते पुण्यकाङ्क्षिभिः ॥
 तद्ददाश्चयुजे मासि पद्मनाभेति कीर्त्तयेत् ।
 दामोदरं कार्त्तिके च सर्वान्तरति दुर्गतिं ॥
 एवं मासक्रमेणैव यदि दातुं न शक्यते ।
 तदा संवत्सरस्यान्ते दद्याच्चैव समागतं ॥

विशेषश्चात्र कथित इत्यनेन विशेषादन्यत्र पूर्वव्रतसाम्यं गम्यते ।

कृतैवं सुखमाप्नोति मरणे स्मरणं हरेः ।
 याम्यं क्लेशं समं प्राप्य स्वर्गलोके महीयते ॥
 ततोमानुषतां प्राप्य निरातप्तो गतज्वरः ।
 धनधान्यवति स्फीते कुले महति जायते ॥
 इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं नरकपूर्णमाव्रतं ।

—०(१०)—

मृत उवाच ।

वैशाखां पौर्णमास्यान्तु सृष्टाः कमलयोनिना ।

तिलाः कृणाश्च गौराश्च द्रुमये सर्वदेहिनां ॥
 तस्मात् कार्यं तिलैः स्नानं तन्नाम्नो जुहुयात् तिलान् ॥
 निवेदितव्यं विधिवत् तिलपात्रं तु विष्णवे ।
 तिलतैलेन दीपाश्च देया देवेभ्य एव च ॥
 कूर्मपुराणेतु विशेषः ।

वैशाखपूर्णिमास्यान्तु ब्राह्मणान् पञ्च सप्त वा ।
 उपोष्य विधिना शान्ताच्छुचीन् प्रयतमानसः ॥

आदित्य पुराणे ।

मोदकैश्च तिलैः श्राद्धं कर्त्तव्यं पितृतर्पणं ।
 तिलैः समधुभिर्युक्तं ब्राह्मणेभ्यो जनार्दन ॥
 दातव्या दक्षिणा चापि तिलैर्मधुयुतैरपि ।
 मन्त्रं जपेच्च पौराणं पारंपर्याक्रमागतं ॥
 श्रीं तिला वै सोमदैवत्याः सुरसृष्टास्तु गोसवे ।
 स्वर्गप्रदाश्च तन्वाश्च ते मां रक्षन्ति नित्यशः ॥
 दद्यादनेन मन्त्रेण तिलपात्राणि तत्र च ।
 सप्तभ्यस्त्वथ पञ्चभ्यो ब्राह्मणेभ्यस्तु कीर्त्तयेत् ॥
 प्रीयतां धर्मराजश्च देवाद्यान्ये तथापि वा ॥

‘गृहीतो’ मन्त्रः ।

एवं कृते स सुक्तः स्यात्पापैर्जन्मशताज्जितैः ।
 इत्यादि पुराणोक्तो वैशाखो विधिः ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

मन्त्रेऽपि याः काश्चित्प्रियः पुण्यलक्षणाः ।

इता एव यदुच्येठ ज्ञाने दाने महाफलाः ॥

कृष्ण उवाच ।

वैशाखी कार्तिकी माघी तिथयोऽतीव पूजिताः ।

ज्ञान दान विहीनाश्च ननेकः पाण्डुनन्दन ॥

तीर्थज्ञानं तदा शस्तं दानं विज्ञानुसारतः ।

वैशाखां पाण्डवश्चेठ श्रेष्ठा शोभयन्ती मता ॥

कार्तिक्यां पुष्करं श्रेष्ठं माघ्यां वाराणसी मता ।

ज्ञानेनोदकदानेन तारयेदखिलान् पितॄन् ।

कुम्भान् स्वकजलैः पूर्णान् हिरण्याब्जैः समन्वितान् ।

वैशाखां ब्राह्मणे दत्त्वा न शोचति कृताकृते ॥

मधुराश्वरसैः पूर्णं भाजनं कनकोज्ज्वलं ।

वज्रनि धनधान्यानि भक्त्या परमया युतः ॥

गोभूहिरण्यवासांसि विप्राय विधिवन्नृप ।

माघ्यां स्नानं तथा सम्बक् सूर्यं पिष्टदेवताः ॥

तिलपात्राणि देयानि तिलाः सपल्लोदनाः ।

कार्या सदानमन्यैश्च धेनुदानं प्रशस्तते ।

कम्बलाजिनरत्नानि मोचकी पापमोचकः ॥

उपानहानमभैव तुल्यमश्वरश्चेन तु ॥

यत्र वा तत्र वा ज्ञानं दानं विज्ञानुसारतः ।

काले कालोद्भवं सर्वं शस्यते पाण्डुनन्दन ॥

कार्तिक्यां तु वृषोत्सर्गं विवाहं पुष्यलक्ष्मण ।

कुर्यात् कुबकुलश्चेठ हरेर्नीराजनं तथा ॥

मन्त्राक्षरदानानि हृतधेन्यादिकानि च ।

प्रदेयानि द्विजातिभ्यस्तास्ताः संस्मृत्य देवताः ।
 फलानि यानि विद्यन्ते सुगन्धान्यगदानि च ॥
 कङ्कालकफलं जात्या लवङ्गकदलीफलं ।
 खर्जूरं नारिकेलञ्च कदलीफलमेव च ॥
 दाडिमं मातुलिङ्गञ्च कर्कोटं च पुष्पन्तथा ।
 वृन्ताकङ्कारवेक्षञ्च चिञ्चा कुष्माण्डमेव च ॥
 फलानामप्रदानेन येषाम्नु तिथयो गताः ।
 ते व्याधिता दरिद्राश्च जायन्ते भुवि मानवाः ॥
 न केवलं ब्राह्मणानां दानमत्र प्रशस्यते ।
 भगिनी भागिन्यानां मातुलानां पितृष्वसुः ॥
 दरिद्राणाञ्च बन्धूनां दानं कोटिगुणोत्तरं ।
 मित्रं कुलीनघापन्नो बन्धुदरिद्रदुःखिताः ॥
 आशयाभ्यागतोदूरात्सीतिथिः सर्गसक्रमः ।
 वनं प्रस्थापिते रामे मशोते सहलक्ष्मणे ॥
 मातामह कुलादेत्य विशुद्धेनान्तरात्मना ।
 सपथैः आवितानिकैः कौशल्या भरतेन वै ॥
 यदा न प्रत्ययं याति कदाचित् कौशलात्मजा ।
 तदा विशुद्धभावेन शपथान् आविता पुनः ॥
 वैशाखी कार्तिकी माघो तिथयोऽमरपूजिताः ।
 अप्रदानवती यान्ति यस्याय्योनुमते गतः ॥
 एतत् श्रुत्वा तु कौशल्या सहसा प्रत्ययं गता ।
 अङ्गमानीय भरतं सान्त्वयामास दुःखितं ॥
 एतत्पिबीमां माहात्म्यामाख्यातं बहुविस्तरं ।

~~080~~

ण्यैष्ठे मासि सिते पक्षे पौर्णमास्यां यतव्रतः ।
 स्वापयेद्व्रतं कुम्भं शिततण्डुलपूरितं ॥
 नानाफलयुतं तद्वदिष्टदण्डसमन्वितं ।
 शितवस्त्रयुगच्छत्रं सितचन्दनचर्चितं ॥
 नाना भक्ष्य समोपेतं सहिरस्त्रयुगं यत्नितः ।
 ताम्रपात्रं गुह्योपेतं तस्मिन्निवेदयेत् ।
 तस्मादुपरि ब्रह्माणं सोवर्षं पद्मकीदरे ॥
 कुर्यात्प्रकार्योपेतां सावित्रीं तस्मै वामतः ॥
 गन्धधूपं ततो दद्याद्भूतवायश्च कारयेत् ॥
 तदभावे कथां कुर्यादथवा प्राङ् पितामहः ।
 ब्रह्मनाम्नीं च प्रतिमां कृत्वा गुह्यमयीं शुभां ॥
 शुक्लपुष्पाक्षततिलैरर्चयेत्पद्मसम्भवं ।
 ब्रह्मणे पादौ संपूज्य जङ्घे सौभाग्यदाय च ॥
 विरिञ्चयोरुभयम्भक्ष्यं मन्त्राच्चायेति वै कटिं ।
 स्वच्छोदरायेत्युदरमनङ्गायेत्युरोहरेः ॥
 मुखं पद्ममुखायेति वाङ् वै वेदपात्रये ।
 नमः सर्वान्मने मौलिमर्चयेन्नापि पङ्कजं ॥
 ततः प्रभाते तं कुम्भं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ।
 ब्राह्मणान् भोजयेद्भक्ष्या खयं तु खवचम्बिना ॥
 यत्न्या तु दक्षिणान्दद्यादिसं मन्त्रमुदाहरेत् ।
 प्रीयतामन् भगवान् सर्वं लोकपितामहः ॥
 हृदये सर्वलोकानां यस्त्वानन्दो विधीयते ।

अनेन विधिना सर्वं मासि मासि समाचरेत् ॥
 उपवासो पौर्णमास्यामव्ययं ब्रह्म पूजयेत् ।
 फलमेकन्तु संप्राश्य शर्व्यां भूतले स्वपेत् ॥
 तत्र त्रयोदशे मासि घृतधेनुसमन्विता ।
 शय्यां दद्यादिरिष्याय सर्वोपस्करसंयुता ॥
 ब्रह्माणं काश्चनं कृत्वा सावित्रीं राजतीत्यथा ।
 घास्मासिकः सृष्टिकर्त्ता सावित्री तु फलस्य तु ॥
 वस्त्रै द्विजं सपत्नीकं पूज्य शक्त्या विभूषणैः ।
 शक्त्या गवाङ्गिकं दद्यात् प्रीयतामित्युदीरयेत् ॥
 ह्रीमं शक्तैस्तिलैकुर्याद्ब्रह्मनामानि कीर्त्तयेत् ।
 गव्येन सर्पिषा तद्वत्पायसेनच कर्मवित् ॥
 विप्रेभ्यो भोजनं दत्त्वा वित्तशाठ्यविवर्जितः ।
 इक्षुदण्डन्ततोदद्यात्पुष्पमालाश्च शक्तितः ॥
 यो ब्रह्मा स स्मृतो विष्णुरानन्दात्मा महेश्वरः ।
 सुखार्थी कामरूपेण स्मरन्देवं पितामहं ॥
 कुर्याच्चैव विधानेन पौर्णमासं स्त्रियोऽपि वा ।
 सर्वपापविनिर्मुक्तः प्राप्नोति ब्रह्मशाश्वतं ॥
 इहलोके वरान् पुत्रान् सौभाग्यं ध्रुवमश्नुते ॥
 इति श्रीपद्मपुराणोक्तं पुत्रकामव्रतं ।

—000—
सुमन्तुर्वाच ।

सोमव्रतस्तथाप्यन्यच्छङ्करप्रोतये शृणु ।

● पद्मासन इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

ताम्रपात्रं पयःपूर्णं कृत्वा तत्स्थञ्च शङ्करं ॥
 प्रच्छाद्योपरिवस्त्रेण गन्धपुष्पार्चितं महत् ।
 शिवभक्ते हिजे दद्याद्भोजयित्वा विधानतः ॥
 प्राच्यां समुदिते सोमे प्रतीच्याञ्च रवौ गते ।
 पोर्णमास्यास्तु वैशाख्यां गृह्णपात्रं शिवाय तु ॥
 प्रीयतां मे महादेवः सोममूर्त्तिर्जगत्पतिः ।
 तस्मै विप्राय तत्पात्रमर्चयेद्भक्तिः शनैः ॥
 एवं सोमव्रतं नाम कृत्वा सोमाम्भिकं व्रजेत्
 रुद्रलोकात्परिभ्रष्टो भवेज्जातिस्मरौ नरः ॥
 पूर्वाभ्यासेन तेनैव पुनः शिवपुरं व्रजेत् ।
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं सोमव्रतं ।

भीष्म उवाच ।

दीर्घायुरारोग्यकुलाभिवृद्धि
 युक्तः पुमान् रूपगुणान्वितः स्यात् ।
 सुहृन्सुहृज्जनानि येन सम्यक्
 व्रतं समाचक्ष तदिन्दुमौलः ॥

पुलस्त्य उवाच ।

त्वयाष्टमिदं सम्यगुवाचयकारकं ।
 रहस्यं तव वक्ष्यामि यत् पुराणविदोविदुः ॥
 रोहिणीचन्द्रशयनं सोमव्रतमिहोत्तमं ।
 तस्मिन्नारायणस्यार्चनं ये दिन्दुनामभिः ॥

यदा सोमदिने युक्ता भवेत्पञ्चदशी क्वचित् !
 अथ वा ब्रह्मनक्षत्रं पौर्णमास्यां प्रजायते ॥
 तदा स्नानं नरः कुर्यात् पञ्चगव्येन सर्घपैः ।
 ब्रह्म नक्षत्रं रोहिणी ॥

आप्यायस्वेति च जपेद्दिहानथ शतं पुनः ।
 शूद्रोऽपि परया भक्त्या पाषण्डालापवर्जितः ॥
 सोमाय वरदायाश्च विष्णवे च नमोनमः ।
 कृतजाप्यः स्वभवनमागत्य मधुसूदनं ॥
 पूजयेत् फलपुष्पैस्तु सोमनामानि कीर्त्तयेत् ।

सोमाय शास्ताय नमोस्तु पादा
 वानन्ददात्रेऽपि च पूज्य जङ्गे ।
 ऊरुद्वयं वापि जलोदराय
 संपूजयेन्नेद्रमनङ्गराजं ॥
 नमोनमः काममुखप्रदाय
 कटिः शशाङ्कस्य समर्चनीया ।
 तथोदरश्चाप्यमृतोदराय
 नाभिस्तु पूज्यो विधिलोचनाय ॥
 नमोस्तु चन्द्राय मुखश्च पूज्यं
 दन्ता द्विजानामधिपाय पूज्याः ।
 आस्यं नमश्चन्द्रमसेऽभिपूज्यं
 पूज्यौतथीष्ठी कुमुदप्रियाय ॥
 नासा च नादाय वनौषधीनां
 आनन्दभूताय पुनर्भवांश्च ।

नेत्रद्वयं पद्मनिभस्तुन्दो
 रिन्दौवरश्मामकराय सोरे ॥
 नमः समस्तामरवन्दिताय
 कर्णद्वयं दैत्यनिषूदनाय ।
 ललाटमिन्दोरदधि प्रियाय
 केशाः सुषुम्नाधिपतेऽभिपूज्यं ।
 शिरः शशाङ्गाय नमोसुरारेः
 विश्वेश्वरायेति नमः किरौटं ।
 पद्मप्रिये रोहिणि नमः लक्ष्मि
 सोभाग्यसोख्यामृतचारुकायै ॥
 देवी च संपूज्य सुगन्धपुष्पै
 नैवेद्यधूपादिभिरिन्दुपत्नी ।
 सुखा तु भूमौ पुनरुत्थितेन
 स्नात्वा च विप्राय हविष्ययुक्तः ॥
 देवः प्रभाति स हिरण्यवारि
 कुम्भो नमः पापविनाशनाथ ।
 संप्राप्य गोमूत्रं ममांसमथ
 मक्षारवर्णानघविंशति च ॥
 ग्रासान् पयः सर्पियुतानुपोष्य
 भुङ्क्ते तिहासं शृणुयाद्भक्तैः ।
 कदम्बनीलोत्पलकेतकानि
 जाती सरोजः शतपत्रिका च ॥
 अस्त्रान् कुन्वान्यथ तिन्दुवार

(२१)

पुष्पं पुनर्भारसमज्ञिकायाः ।

शुक्लस्य बिम्बोः करवीरपुष्पं

श्रीचम्पकं चन्द्रमसः प्रदेयं* ॥

आवणादिषु मासेषु क्रमादेतानि सर्वदा ।

यस्मिन्मासे व्रतादिः स्यात्तत्पुष्पै रर्चयेद्भरिं ॥

एवं संवत्सरं यावदुपोष्य विधिवत्सरः ।

व्रताम्ने शयनन्द्याहर्षणोपस्करान्वितं ॥

रोहिणी चन्द्रमिथुनं कारयित्वा च काष्ठनं ।

चन्द्रः षडङ्गुलः कार्यो रोहिणी चतुरङ्गुला ॥

द्विचन्द्ररूपनिर्माणं चतुर्दशीस्थित महाराजोक्तं वेदितव्यं ।

मुक्ताफलाष्टकयुतं* शितनेत्रपटान्वितं ।

क्षीरकुम्भोपरि पुनः कांस्यपात्राक्षतैर्युतं ॥

दद्यान्मन्त्रेण पूर्वार्द्धे शकेषुफलसंयुतां ।

श्वेतामय सुवर्णास्यां खुरैरोप्यैः सुवर्णितां ॥

सवस्त्रभाजनां धेनुं तथा शङ्खस्य शोभनं ।

भूषणैर्हिजदम्पत्यमलंकृत्य गुणान्वितं ॥

चन्द्रोऽयं द्विजरूपेण सभार्य इति कल्पयेत्* ।

यथा न रोहिणी कृष्णशयनं त्यज्य गच्छति ॥

सोमरूपस्य ते तद्वत्तमे भेदोऽस्तु भूपते ।

यथात्वमेव सर्वेषां परमानन्दमुक्तिदः ॥

* श्रीचम्पकमिति पुस्तकाक्षरे पाठः ।

* मुक्ताफलाष्टकयुक्ता इति पुस्तकाक्षरे पाठः ।

* भावयोदिति पुस्तकाक्षरे पाठः ।

मुक्तिर्मुक्तिस्तथा भक्तिस्त्रयि चन्द्रेऽस्तु मे दृढा ।
 इति ससारभीतस्य मुक्तिकामस्य चानघ ॥
 रूपारोग्यायुषामेतद्विधायकमनुत्तमं ।
 इदमेव पितृणाञ्च सर्व्वदा वल्लभं मुने ॥
 त्रैलोक्याधिपति भूत्वा सप्तकल्पशतत्रयं ।
 चन्द्रलोकमवाप्नोति विष्णुर्भूत्वा विमुच्यते ॥
 नारी वा रोहिणीचन्द्र शयन वा समाचरेत् ।
 सापि तत्फलमाप्नोति पुनरावृत्तिदुर्लभं ॥
 इति पठति शृणोति वा य इत्थं
 मधुमथनाच्च न मिन्दुकीर्त्तनेन ।
 मतिमपि च ददाति सोऽपि शीरे
 भवनगतः परिपूज्यतेऽमरीयेः ॥

इति पद्मपुराणोक्तं चन्द्रोहिणी शयनव्रतं ।

—000(1,000)—

अनिसाद* उवाच ।

अथोपोष्य चतुर्दश्यां पोर्णमाभ्यां गुरादिने ।
 पूजयेद्विधिनानेन लिङ्गं सार्व्वं निबोध मे ॥
 ब्रह्माणः पश्चिमे भागे वामे लिङ्गस्य वै हरिं ।
 खखात्कं दक्षिणे रौद्रमौञ्जरं प्राग्दिशि स्थितं ॥

खखात्कः सूर्यः ।

ईशानं मध्यमे देशे पूर्व्वार्द्धे चैव पूजयेत् ।

* अनिसादन इति पुस्तकालये पाठः ।

विलिप्यागुरुचन्द्रे च कुसुमैश्च सुगन्धिभिः ॥

चन्द्रः कर्पूरं ।

गुग्गुलुश्चाज्यसंयुक्तमगरुं वासितं शुभं ।

दत्त्वा नीराजनं कुर्याद्दद्याद् वै युग्मपञ्चकं ॥

युग्मं गोमिथुनं ।

नैवेद्यान्तं वलिश्चैव पूर्ववत् स्वगृहं व्रजेत् ।

पञ्चगव्यं ततः प्राप्य आचार्य्यब्राह्मणांस्तथा ॥

व्रतिनोमिथुनान्येव भोजयेच्च स्वशक्तितः ।

हेमवस्त्रादिकश्चैव यज्ञात् कृत्वा यः कल्पयेत् ॥

ततोदेवः प्रपूज्यो वै नैवेद्याद्यं निवेद्य च ।

नत्वाग्निं पूजयित्वा तु पञ्चवक्त्रं शिवं स्मरेत् ॥

प्राप्तेऽष्टे पञ्चमे गावः पञ्च पञ्च नियोजयेत् ।

तेषामुद्दिश्यतेष्वेवं न्यूनश्चापि ततोऽधिकं ॥

पञ्चमे पञ्चपञ्चेति वचनाद्वितीये द्वे द्वे तृतीये तिस्रस्तिस्रः

चतुर्थे चतस्रश्चतस्रः पञ्चमे पञ्च पञ्च प्रथमादेकैकैव तेषां ब्रह्मा-

दीनां, पञ्चानां चन्द्ररूपानां पञ्चदेवतानां पञ्चवर्गानुद्दिश्य

न्यूनानाधिकं तेषु तेषु नियोजयेत्

निखिलं प्राग्विशेषश्च कर्त्तव्यं तत्पदे नृभिः ॥

सुखकीर्त्तिप्रियोऽर्थश्च इहैवविभवाय च ।

रहस्यमेतद्यत्प्रोक्तं न देयं यस्य कस्यचित् ॥

इति कालिकापुराणोक्तमीशान व्रतं ।

कृष्ण उवाच ।

अथातः शृणु भूपाल कृत्तिकाव्रतमुत्तमं ।
राज्ञी या लिङ्गभद्राख्या पुरा यस्य प्रभावतः ॥
अतौव महतीं लब्धा श्रियं जातिस्मरामवत् ।
योगेनान्ते तनुन्यक्ता परब्रह्मणि लीयते ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

कीदृशं तद्व्रतं कृष्ण मन्त्रो यन्त्रो हि कीदृशः ।
विधानं कृत्तिकानाञ्च तच्च कालं वदस्व मे ॥

कृष्ण उवाच ।

कार्तिक्यां पौर्णमास्यान्तु गृह्णीयात् कृत्तिका व्रतं ।
षट् मासांस्तु व्रतं यावद्विदं संचिन्त्य चेतसि ॥
पारणे पारणे चापि पुराणज्ञे द्विजोत्तमे ।
उदापनं प्रयच्छेत् यथा विभवसारतः ।
कृत्तिकाम् स्वयं सोमः कृत्तिकाम् ब्रह्मरूपिणः ॥
यदास्यात् सोमवारिण सा महाकार्तिकी स्मृता ।
इदृशी बहुभिर्वर्षे बहुपुण्येन लभ्यते ॥
लब्धापि न ह्यथा नेया यदीच्छेच्छेत् यन्मात्मनः ।
अन्यापि कार्तिकी पार्थ सम्पाद्या विधानतः ॥
तस्या विधानं राजेन्द्र शृणुष्वैकाग्रमानसः ।
कार्तिके शुक्लपक्षस्य पौर्णमास्यां दिनोदये ॥
नक्तेन नियमं कुर्याद्दत्तधावनपूर्वकं ।

उपवासेन वा शक्त्या ततः स्नात्वा जलाशये ॥
 कुशसेने प्रयागे वा पुष्करेनिमिषेऽथ वा ।
 शालग्रामे कुशावर्त्ते मूलस्थाने चरित्तके ॥
 गोकर्णे वावटे पुष्के प्यथवा नरकण्टके ।
 पुरेवा नगरे वापि ग्रामेऽथोषेऽथ पत्तने ॥
 यत्र वा तत्र वा स्नात्वा नारीवाप्यथ वा पुमान् ॥
 देवर्षिपितृपूजाञ्च कृत्वा होमं युधिष्ठिर ॥
 ततोऽस्तसमये प्राप्ते पार्श्वं गन्धस्य सर्पिषाः ।
 क्षीरस्य वाश्वसः पूर्णं कृत्वा गुडफलान्वितं ॥
 चकाराहधः ।

षट् प्रमाणं यथाव्योस्ति कृत्तिका शङ्करं न्यसेत्* ।
 षट् प्रमाणं षट् कृत्तिकानामाणीत्यर्थः ॥
 षट्कृत्तिका विमानानि खर्षं रौप्यमयानि च ॥
 रत्नगर्भाणि कुर्याच्च स्वशक्त्या पाण्डुनन्दन ।
 प्रथमा स्वर्णं निष्पन्ना द्वितीयारौप्यनिर्मिता ॥
 तृतीया रत्नघठिता चतुर्थी नवनीतजा ।
 पञ्चमीकणिकान्नेन षष्ठीपिष्टमयीकृता ॥
 कृत्वा षट्कृत्तिकां पार्श्वं गन्धालक्तक भूषिताः ।
 रत्नगर्भाः कुङ्कुमाक्ताः पिष्टास्तवकाश्चिताः ॥
 सिन्दूर चन्दनाभ्यक्ता—जातो पुष्पैस्तु पूजिता ।

मन्त्रेणानेन ताः पूज्य विप्राश्च प्रतिपादयेत् ॥

ॐ ससर्षिदारा अनलस्रवस्तभा

या ब्राह्मण्यक्तचभावेन युक्ताः ।

तुष्टा कुमारस्य च मातरो याः

ममापि सुप्रीततराः सन्तु स्वाहा ॥

एवमुच्चार्य विप्राश्च देयास्तु कृत्तिका नृप ।

ब्राह्मणोपि प्रतीच्छेत् मन्त्रेणानेन पाण्डव ॥

धर्षदाः कामदाः सन्तु इना नक्षत्रमातरः ।

कृत्तिका दुर्गसंमारात्तरयन्तु भयादपि ।

अनेन विधिना दत्त्वा दृष्ट्वाचैवान्तरे स्थिताः ॥

विस्तृत्य ब्राह्मणं भक्त्या अनुव्रज्य पदानि षट् ।

निर्वर्त्य च कृतार्थं च त्रियं सत्फलमाप्नुयात् ।

विमानेनार्कवर्णेन गत्वा नक्षत्रमण्डलं ॥

दिव्येन वपुषा तत्र स्रक्तन्दनविभूषितः ।

दिव्यनारीगणयुतः सुखमास्तेज्यनामयः ॥

देधूयमानश्चमरेः कृष्णपङ्क्त्याविराजितः ।

पारिजातकमन्दारपुष्पमालाविराजितः ॥

कृतार्थः परिपूर्णश्च तिष्ठेद्दृष्ट्वायुतद्वयं ।

नारी कृत्वा ततः चान्ते गत्वा स्तर्गं सभर्तृका ॥

क्रीडते सुभगा साध्वी सर्वभोगसमन्विता ।

यश्चैतच्छृणुयात्पाद्यं भक्तियुक्तः समाहितः ॥

नारी वा पुरुषो वापि मुच्यते सर्वकिल्बिषैः ।

सौवर्णरोप्य मणिकीनवनीतसिद्धा
 षट्कृत्तिकाः कणिकपिष्टमयीश्च कृत्वा ।
 पात्रे निधाय कुसुमाक्षतधूपदीपैः
 संपूज्य जन्मगहनं न विंशन्ति मर्त्याः ।
 इति भविष्यत्तरोक्तं कृत्तिकाव्रतं ।

—०००००—

युधिष्ठिर उवाच ।

किमर्थं फाल्गुनस्यान्ते पौर्णमास्यां जनार्दन ।
 उत्सवो जायते लोके ग्रामे ग्रामे पुरे पुरे ॥
 किमर्थं शिशवस्तस्याङ्गिहे गेहे निनादिताः ।
 होलाका दीप्यते कस्मात् फाल्गुन्यान्तु किमुच्यते ॥
 आङ्गाङ्गे जेतिकामंशा शीतोष्णेति किमुच्यते ।
 कीदृशस्याम्युच्यते देवः केनेयमवतारिता ॥
 किमस्यां क्रियते कृष्ण एतद्विस्तरतो वद ॥

कृष्ण उवाच ।

मृणु राजन् प्रवक्ष्यामि विस्तरेण पुरातनं ।
 चरितं होलिकायास्तु पारंपर्येण चागतं ॥
 आसीत् कृतयुगे पाथे रघुर्नाम नराधिपः ।
 शूरः सर्वगुणोपेतः प्रियवादी बहुश्रुतः ॥
 स सर्वां पृथिवीं जित्वा वशीकृत्य नराधिपान् ।
 धर्मतः पालयामास प्रजाः पुत्रानिवोरसान् ॥

न दुर्भिक्षं न च व्याधिर्नाकालमरणं नृणां ।
नाधर्मैरुचयः पापास्तस्मिन् शासति पार्थिवे ॥
तस्यैवं गामतो राज्यं क्षत्रधर्मरतस्य वै ।
सर्व्वलोकाः समागम्य चाहि व्राहीति चाब्रुवन् ॥

पीरा उवाच ।

अस्माकं तु गृहे का चित् ढोष्टानामेति राक्षसी ।
दिवाराचौ समागम्य वालान् पीडयते बह्वन् ॥
रक्षया चोदकेनापि भैषज्यैर्वा नराधिप ।
मन्त्रज्ञैः परमाचार्यैः सा नियन्तुं न शक्यते ॥
पीराणां वचनं श्रुत्वा रघुर्विस्मयमागतः ।
विस्मयाविष्टहृदयः पुरोहितमथाब्रवीत् ॥

रघुरुवाच ।

ढोष्टेति राक्षसो केयं किं प्रभावा दिज्ञोत्तम ।
कथमेषा नियन्तव्या मया दुष्कृतकारिणी ॥
रक्षणात् प्रोच्यते राजा पृथिवीपालनात्यतिः ।
अरक्षमाणः पृथिवीं राजा भवति किल्बिषो ॥

वशिष्ठ उवाच ।

शृणु राजन् परं गुह्यं यन्नाप्यातं मया क्वचित् ।
ढोष्टानामेति विख्याता राक्षसो मालिनः सुता ॥
तया वाराधितः शम्भुरुयेण तपसा पुरा ।
प्रीतस्तामाह भगवान् वरं वरय सुव्रते ॥

यज्ञे मनोभिलषितं तद्दाम्यविचारितं ।
 ढोण्डा प्राह महादेवं यदि तुष्टः स्वयं मम ॥
 तदवध्यां सुरादीनां मनुजानाञ्च शङ्कर ।
 मां कुरुष्व त्रिलोकेश शस्त्राणाञ्च तथैव च ॥
 शीतोष्णवर्षसमये दिवारात्रौ वह्निर्गृहे ।
 अभयं सर्वदा मे स्वास्वत्प्रसादान्नहेप्सव ॥
 एवमस्त्वित्यथोक्तान्तां पुनः प्रोवाच शूलभृत् ।
 उन्मत्तेभ्यः शिशुभ्यश्च भयस्ते संभविष्यति ॥
 ऋतुसन्धौ महाभागे मा व्यथा हृदये कृषाः ।
 एवं दत्त्वा वरं तस्या भगवान् भगनेत्रहा ॥
 स्वप्ने ह्यर्थोप्यथोलब्धस्तत्रैवान्तरधीयत ।
 एवं लब्ध्वा वरं सा तु राक्षसी कामरूपिणी ॥
 नित्यं पीडयते बालान् संस्मृत्य हरभाषितं ।
 अडाडया तु गृह्णाति सिद्धमम्बं कुटुम्बिनां ॥
 गृहेषु तेन सा लोके ह्यङ्गुलित्यभिधीयते ।
 पुंश्लीनाञ्च नारीणां नराणाञ्च विशेषतः ॥
 रुधिरं नासिकाच्छेदाद्गलितं सा पिवत्यलं ।
 एतत्ते सर्वमाख्यातं ढोण्डायाश्चरितं महत् ।
 साम्प्रतं कथयिष्यामि येनोपायेन हन्यते ॥
 अथ पञ्चदशी शुक्ला फाल्गुनस्य नराधिप ।
 शीतकालो विनिष्क्रान्तः प्रातर्योषो भविष्यति ॥
 अभयं सर्वलोकानां दीयतां पुरुषर्षभ ।
 तथा ह्यशङ्किता लोका हसन्तु च रमन्तु च ॥

दारुणानि च खड्गानि गृहीत्वा समरोक्षकः ।
 योधा इव विनिर्यान्तु शिशवः संप्रहर्षिताः ॥
 सञ्चयं शृङ्गकाष्ठानां पलासानाञ्च कारयेत् ।
 तत्राग्निं विधिवद्वत्सा रक्षोघ्नैर्भस्त्रविस्तरैः ॥
 ततः किलिकिलाशब्दैः स्तालीशब्दैर्मनोहरैः ।
 तमग्निं चिःपरिक्रम्य गायन्तु च वसन्तु च ॥
 जल्पन्तु खेच्छया लोकाः निशङ्का यस्य यक्षतं ।
 मगैर्वहुविधैः शब्दैः कीर्तयन् देशभाषया ॥
 विस्तारयन् गायन् च सहस्रं नाम तस्य वै ।
 तेन शब्देन सा पापा होमेन च निराकृता ॥
 अष्टादहासैर्दिग्भानां राक्षसो जयमेष्यति ।
 तस्यैर्वर्चनं श्रुत्वा स नृपः पाण्डुनन्दन ॥
 सर्वं अकार विधिवद्यदुक्तस्तेन धीमता ।
 गता सा राक्षसो नाशस्तेन चोद्येण कर्मणा ॥
 ततः प्रभृति लोकेऽस्त्रिवडाडास्यातिमागता ।
 सर्वदुष्टदमोहोमः सर्वरोगोपशान्तिदः ॥
 क्रियतेऽस्यां द्विजैः पार्थ तेन सा होजिका स्मृता ।
 सर्वसारा तिष्ठिये यं पौर्णमासी युधिष्ठिर ॥
 सारत्वाक् सर्वलोकानां परमानन्ददायिनी ।
 अस्यां निशागमे पार्थ संरक्ष्याः शिशवो गृहे ॥
 गोमयेनोपलिप्ते च सचतुष्के गृहाङ्गणे ।
 अकारवेच्छिशुपायान् खड्गव्यग्रकराक्षरान् ॥
 खड्गकाष्ठैश्च संस्पृश्य गीतैर्होस्यकरैः शिशून्

रक्षन्ति तेषां दातव्यं गुडपक्वाद्यमेव च ॥
 एवं ढोखेति राक्षसा दोषः प्रशमनं व्रजेत् ।
 बालानां रक्षणं कार्यं तस्मात्तस्मिन् स्वमालये ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

प्रभाते किं जनैर्देव कर्त्तव्यं सुखमीप्सुभिः ।
 प्रवृत्ते माधवे मासि प्रतिपद्युदिते रवौ ॥

कृष्ण उवाच ।

कृत्वावश्यककार्याणि सन्तर्प्यं पितृदेवताः ।
 बन्दयेद्दोलिकाभूतिं सच्चन्दुष्टोपशान्तये ॥
 मन्त्रेणानेन राजेन्द्र पठामानं निबोध मे ।
 वन्दितासि सुरेन्द्रेण ब्रह्मणा शङ्करेण च ।
 अतस्त्वं पाहि नो देवि विभूते भूतिदा भव ॥
 मण्डिते चर्चिते चैव उपलिप्ते गृहाजिरे ।
 चतुष्पङ्कारयेत् स्वच्छं वर्णकैश्चाक्षतैः शुभैः ॥
 तन्मध्ये स्थापयेत्पौठं शङ्खवस्तोत्तरङ्गदं ।
 अथतः पूर्णकलशं स्थापयेत्पल्लवैर्युतं ।
 साक्षतं सहिरण्यं च सितचन्दनचर्चितं ।
 आसने चोपविष्टस्य ब्रह्मदोषेण भारत ।
 चर्चयेच्चन्दनैर्नारौ अव्यङ्गाङ्गा सुलक्षणा ॥
 पञ्चरागोत्तरपटा ये स्त्रांशुकविभूषिता ।
 वपुराद्यं शिरोऽस्त्यश्च दधिदूर्वाक्षतान्वितं ॥
 वर्धयित्वा श्रीखण्डमायुरारोग्यवृद्धये ।

वपुराद्यं शिरोऽन्तमिति पादादारम्यमूर्धपर्यन्तं चन्दनेन
चर्चयेदित्यर्थः तच्चन्दनं वर्षाययित्वा किञ्चिदवशेष्य ।

पञ्चाक्ष प्राशयेद्द्विद्वान् चूतपुष्पं सचन्दनं ।
मनोभवस्य सा पूजा ऋषिभिः सम्प्रदर्शिता ॥
यत्पिबन्ति वसन्तादौ चूतपुष्पं सचन्दनम् ।
सत्यं सत्यस्य कामस्य पूजेयं क्रियते जनैः ॥

प्राशनमन्त्रश्च ।

इदमग्रं वसन्तस्य माकन्दकुसुमं तव ।
सचन्दनं पिबाम्यद्य सर्व्वं कामसमृद्धये ॥
अनन्तरं द्विजेन्द्राणां सूतमागधवन्दिनां ।
दद्याद्दानं वथाशक्त्या कामो मे प्रीयतामिति ॥
ततो भोजनवेलायां सूतपाकेन तेन हि ।
प्राशयेत् प्रथमं चाक्षं ततो भुञ्जीत कामतः ॥
य एवं कुरुते पार्थ शास्त्रोक्तं फाल्गुनोत्सवं ।
अनायासेन सिध्यन्ति तस्य सर्व्वे मनोरथाः ॥
आधयो व्याधयश्चैव यान्ति नाशं न संशयः ।
पुत्रपौत्रसमायुक्तः सुखं तिष्ठति मानवः ॥
पुण्या पवित्रा सर्व्वं च सर्व्वं विघ्नविनाशिनी ।
एवं ते कथिता पार्थ तिथीनामुत्तमा तिथिः ॥
वृत्ते तुषारसमये मितपञ्चदश्यां
प्रातर्व्वसन्तसमये समर्पस्यते च ।
सस्त्राण्य चूतकुसुमं सह चन्दनेन ।

सत्त्वं हि पार्ष्णि पुरुषोऽयं समां सुखी स्यात् ।

समां वर्षन्तु यावत् ।

इति भविष्योत्तरपुराणोक्तहोलिकोत्सवविधिः ।

—०००—

युधिष्ठिर उवाच ।

रक्षावन्धविधानं मे किञ्चित् कथय केशव ।

दुष्टप्रेतपिशाचानां येनाधृष्यो भवेन्नरः ॥

सर्वं रोगोपशमनं सर्वाशुभविनाशनं

सकृत्कृतेनान्दमेकं येन रक्षा कृता भवेत् ।

कृष्ण उवाच ।

शृणु पाण्डवशार्ङ्गं इतिहासं पुरातनं ।

इन्द्रास्या यत् कृतं पूर्वं शक्रस्य जयवृद्धये ॥

देवासुरमभ्यूहं पुरा द्वादशवार्षिकं ।

तत्रासुरैर्जितः शक्रः सह सर्वैः सुरोत्तमैः ॥

परित्यज्यामरैः स्वर्गं सर्वालङ्कारवर्जितः ।

प्राप्यामरावतीं तस्यौ प्राणव्याणपरायणः ॥

ततो दानवराजेन चैलोक्यं स्तवशीलतं ।

इदमुक्त्वाः समानास्य शृणुष्वसनरामराः ॥

मां यजध्वंस्तुविध्वञ्च भद्रं पूज्यः सुरासुरैः ।

यः शक्रः सम्यगातिष्ठे क्कगच्छेद्दध्यातां मया ॥

दानवैश्चरवाक्षेन नष्टाः सर्वाः क्रियास्ततः ।

स्वाहाकारस्वधाकारवषट्कारादिकायं याः ॥

नाधीयत तद्या वेदा नपूज्यन्तश्च देवताः ।
 उक्तवा न प्रवर्तन्ते सर्वमासीदसंभुतं ॥
 धर्मनाम्ने सुरेशस्य वक्तृहानिरजायत ।
 ज्ञात्वा हीनवत्सं सर्वं दानवाः समभिद्रवन् ॥
 सोऽभिद्रुतोऽसुरगणैः स्वक्तराज्योऽपि देवराट् ।
 ब्रह्मस्यतिमुपासन्त्य इदं वचनमब्रवीत् ॥
 न स्यात्तुमवग्रहीमि न गन्तुं तैरभिद्रुतः ।
 सर्वथा योद्धुमिच्छामि यद्वाप्यं तद्विष्यति ॥
 नश्यते युवतो वापि तावद्भवति जीवितं ।
 ताम्रहातास्तजत् पूर्वं न यावन्ननसीप्सितं ॥
 अयं मे शंसते ब्रह्मन् योक्तेऽहं दानवैः सह ।
 मुहूर्तञ्चलितं अयो येन धूमायितं चिरं ॥
 कर्मयत्तं सुरैश्चर्यं पौरुषं कर्मचोच्यते ॥
 तदद्याहं करिष्यामि ध्रुवं अयो भविष्यति ।
 श्रुत्वा सुरपतेर्वाक्यं ब्रह्मस्यतिरथाब्रवीत् ॥

ब्रह्मस्यतिरुवाच ।

न कालोविक्रमस्यास्य त्यजकोपं पुरन्दर ।
 देय काल विहीनानि कार्याणि विपरीतवद् ॥
 क्रियमाणानि दूष्यन्ति सोऽनर्थः सुमहान् भवेत् ।

इन्द्र उवाच ।

ब्रह्मन् किं बहुनोक्तेन योत्स्येऽहं सह दानवैः ।
 नृणां कार्यसमारम्भे अयसीत्येकचित्तता ॥
 गुणदोषावुभावेतावेकीकृत्य विचक्षते ।

कार्यमारभ्यते यत्तु तस्य दोषाः पराङ्मुखाः ॥

तयोः संवदतोरिवं शचीप्राह सुरेश्वरं ।

अद्य भूतदिनं देव प्रातः पर्वं भविष्यति ॥

अहं रक्षां विधास्यामि जयो येन भविष्यति ।

पौलम्यास्तु वचः सर्वं कृतवान् बलवृद्धा ॥

पौर्णमास्यां ततः प्रातः पौलोमीकृतमङ्गला ।

बवन् दक्षिणे पाणी रक्षापोठलिकां शुभां ॥

बह्वरक्षस्ततः शक्रः कृतस्वस्त्ययनो हिजैः ।

आरुह्यैरावतं नागं निर्ज्जगाम सुरारिहा ॥

संप्राप्य दानवानीकं नाम वित्राव्य चात्मनः ।

पातयामास गच्छूणां शिरांसि निशितैः शरैः ॥

तं दृष्ट्वा सहसायातं दानवाः संप्रहर्षिताः ।

अभिजग्मुः शितैर्बाणैः शक्रं बर्हिणवाजिनैः ॥

उवाच दानवान् सर्वान् प्रह्लादो दानवेश्वरः ।

दिष्टयाद्य भवतां प्राप्तिर्वृद्धा दृष्टिगोचरः ॥

* हृतेनमेकीकृत्याशु रथवंशेन दानवाः ।

रथवंशेन रथममुदायेन ॥

यावत् नश्यते पापस्तावद्यत्री विधीयतां ।

दानवेश्वरवाक्येन ततस्ते दनुनन्दनाः ॥

त्यक्त्वा मीनं महात्मानः शक्रमाहुरहं हताः ।

ततः शचीपतिः क्रुद्धो वज्रमुखस्य भासुरं ॥

जघान दानवानीकं क्षणात् कालश्च प्रजाः ।

वध्यमानाः सुरेशेन दानवास्ते महाबलाः ॥
 अत्यन्तभयसम्बन्धाः कालीयमिति मोहिताः ।
 केचित्समुद्रं विविशुर्गहनं केचिदाश्रिताः ॥
 केचित्क्षमितमूर्धनो नया भूत्वा वनेऽवसन् ।
 दयाधर्म्मं प्रमुवाणा निर्घन्वन्नतमाश्रिताः ॥
 हेतुवादपरा मूढा वक्ष्यन्तः प्रजागणान् ।
 एवं निर्जितदैतेयान् शक्रः स्वस्थानमागतः ॥
 त्रैलोक्यं पालयामास पूज्यमानः सुरासुरैः ।
 हतहर्षा सुरेन्द्रेण शुक्रं शरणमागताः ॥
 प्रणम्य कथयामासुर्जितोऽहं समरेऽरिणा ।
 ब्रह्मर्षे हीनवीर्येण शक्रेणापि जितो यतः ॥
 तस्माद्विक् पौरुषं लोके देवं हि बलवत्तरं ।

शुक्र उवाच ।

विषादं माकृषा दैत्याः कार्याणां गतिरीदृशी ।
 दैवाद्भवतो भूतानां काले जयपराजयौ ॥
 सन्धानं सह शक्रेण नेदानीमुचितं भवेत् ।
 भजेयः सर्वशत्रूणां कृतः शय्या शचीपतिः ॥
 रक्षावन्धप्रभावेण दानवेन्द्रो जितो महान् ।
 वर्षमेकं प्रतीक्षन् ततः श्रेयो भविष्यति ॥
 भार्गवेणैव मुक्तास्ते दानवा त्रिगतज्वराः ।
 तस्युः कालं प्रतीक्षन्तो यद्योक्तं गुरुणा तथा ॥
 एष प्रभावो रक्षायाः कथितस्ते युधिष्ठिर ।
 जयदः सुखदश्चैव पुत्रा, रोग्य, धनप्रदः ॥

(२५)

युधिष्ठिर उवाच ।*

क्रियते केन विधिना रक्षाबन्धः सुरोत्तम ।
कस्यां तिथौ कदा देव एतन्मे वक्तुमर्हसि ॥
यथा यथा हि भगवन् विचित्राणि प्रभाषसे ।
तथा तथा न मे तस्मिन्विद्वद्भ्याः शृणुतः कथाः ॥

कृष्ण उवाच ।

घनाहतेऽम्बरे पार्थ शाहले धरणीतले ।
संप्राप्ते आवणे मासि पौर्णमास्यां दिनोदये ॥
ज्ञानं कुर्वीत मतिमान् श्रुतिस्मृतिविधानतः ।
ततो देवान् पितॄन्धैव तर्पयेत्परमाश्रया ॥
उपाकर्मादिचैवोक्तमृषोणाञ्चैव तर्पणं ।
कुर्वीत ब्राह्मणः आद्यं वेदानुद्दिश्य सुव्रत ॥
शूद्राणां मन्त्ररहितं ज्ञानं दानञ्च शस्यते ।
ततोऽपराह्णसमये रक्षापोटलिकां शुभां ॥
कारयेदक्षतैः शस्यैः सिद्धार्थैर्हमभूषितां ।
वस्त्रैर्विचित्रैः कार्पासेः क्षौमैर्वी मलवर्जितैः ॥
विचित्रतन्तुपद्मितां स्थापयेद्राजतोपरि ।
कार्य्या गृहस्थ रक्षा, गोमयोपरचितैः सहस्रकुण्डलकैः ॥
दूर्वावर्णसहितैश्चित्रा दुरितोपशमनाय ।
उपलिप्ते गृहे देवे दत्तचतुष्के न्यसेत् कुम्भं ।
पीठं दक्षोपरि विधेत् राजामात्यैर्युतय समुहर्त्तैः ॥
वेश्याजनेन सहितो मङ्गलग्रहैः समुच्छितैर्युक्तेः ।
रक्षाबन्धः कार्य्यः शान्तिध्वनिना नरेन्द्रस्य ॥

देवदिजातिशस्त्राख्यस्त्रै रक्षातिरर्चयेत् प्रथमं ।
तदनु पुरोधा नृपतेः रक्षाम्भ्रीत मन्त्रेण ॥
येन बन्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबलः ।
तेन स्वामभिवभ्रामि रक्षे माचल माचल ॥
ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैः शूद्रैश्चान्यैश्च मानवैः ।
कर्त्तव्यो रक्षिकावन्धो द्विजान् संपूज्य शक्तितः ॥
अनेन विधिना यस्तु रक्षाबन्धनमाचरेत् ।
स सर्वदोषरहितः सुखी सम्यक्तरं भवेत् ॥
यः श्रावणे श्रवति शीतजलं सुरेन्द्रे
रक्षाविधानमिदमाचरते मनुजः ।
आस्ते सुखेन परमेश स वर्षमेकं
स पुत्रपौत्रसहितः ससुहृज्जनय ॥

इति भविष्योत्तरे रक्षाबन्धन पौर्णमासीव्रतं ।

—000—

कृष्ण उवाचेत्यनुव्रत्तौ ।

पञ्च पञ्चदशीः स्थित्वा एकभक्तेन मानवः ।
संपूज्य पूर्णिमां देवीं लिखितां चन्दनादिना ॥
पूर्णिमाप्रतिमा तु परिभाषायां द्रष्टव्या ।
ततः पञ्च घटान् पूर्णान् पयोदधिघृतेन च ॥
मधुना सितखण्डेन ब्राह्मणायोपपादयेत् ।
मनोरथान् पूरयस्व यथा त्वं पूर्णिमाद्यसि ॥
पञ्चकुम्भप्रदानेन भूतानां तुष्टिरस्तु मे ।

दानमग्नः ।

द्विजानेवं नमस्कृत्य सर्वान् कामानवाप्नुयात् ।

एतत् पञ्चघट नाम व्रतं तुष्टिप्रदायकं ॥

इति भविष्योत्तरे पञ्चघटपूर्णिमाव्रतं ।

—000—

कृष्ण उवाचेत्यनुवृत्तौ ।

त्रिंशत्पूर्व्य दम्पत्यान्युपवासी विभूषणैः ।

पौर्णमास्यामवाप्नोति मोक्षमिन्द्रव्रतादिह* ॥

इति भविष्योत्तरे इन्द्रपौर्णमासीव्रतं ।

— — — — —

शङ्कर उवाच ।

महत्पूर्व्या भवत्येषा पौर्णमासी द्विजोत्तम ।

प्रतिसंवत्सरं तस्याः सोपवासी जनार्दन ॥

यः पूजयति धर्मज्ञ तेन संवत्सरं हरिः ।

पूजितः पौर्णमासीषु भवतीति विनिश्चयः ॥

तस्यां दानं स्वल्पमपि महद्भवति भार्गव ।

दानं तप्तं जपो होमो यच्चान्यत्सकृतं भवेत् ॥

भार्गव उवाच ।

संवत्सरे पौर्णमासी महापूर्व्या वृषध्वज ।

कथं श्रेया जगन्नाथ तन्ममाचक्षु पृच्छतः ॥

शङ्कर उवाच ।

यस्यां पूर्वमुना योगं याति जीवो महाबलः ।
पौर्णमासीति सा ज्ञेया महापूर्वा हिजोत्तमैः ॥

जीवो हृदयतिः

इति भविष्यत्पुराणे महापौर्णमासीव्रतं ।

— ००० —

शृणु उवाच ।

श्रुतमेतत्स्वयाख्यातं पशुपाशविमोक्षणं ।
व्रतं पाशपतं लेङ्गं पुरा देवैरनुष्ठितं ॥
वक्तुमर्हसि चास्माकं यथापूर्वं त्वया श्रुतं ।

सूत उवाच ।

पुरा सनत्कुमारेण शैलादि सृष्टवान् प्रभुः ।
नन्दो प्राह च तस्मै यत् प्रवदामि समासतः ॥
देवैर्देवैस्तथायज्ञैर्गन्धर्वैः सिद्धचारणैः ।
ऋषिभिश्च महाभागैरनुष्ठितमनुत्तमम् ॥
व्रतं द्वादशल्लिङ्गाख्यं पशुपाशविमोक्षणं ।
भोगदृष्टैव भक्तानां कामदं मोक्षदं शुभम् ॥
अवियोगकरं पुण्यं भक्तानां भयनाशनं ।
देवैरनुष्ठितं पूर्वं ब्रह्मणा विष्णुना तथा ॥
कृत्वा कनौयसं लिङ्गं स्नाप्य चन्दनवारिणा ।
चैत्रमासादि विप्रेन्द्राः शिवलिङ्गव्रतं शुभम् ॥
कृत्वा हेमं शुभं पद्मं कर्षिकाकेसरान्वितम् ।

नवरत्नेषु खचितमष्टपत्रं यथाविधि ॥
 कर्णिकायां न्यसेल्लिङ्गं स्फाटिकं पीठसंयुतं ।
 तत्र भक्त्या यथान्यायमर्चयेदित्यथैकैः ॥
 सितैः सहस्रकमलैरक्तैर्नीलीतुलैरपि ।
 जातैरन्यैर्यथालाभं गायत्र्या स्नाप्य सुव्रत ॥
 संपूज्य चैव गन्धाद्यैर्धूपदीपैश्च मङ्गलैः ।
 नीराजनीयैश्चान्यैश्च लिङ्गमूर्त्तिं महेश्वरम् ॥
 अगुरुं दक्षिणे दद्यादघोरेण द्विजोत्तमः ।
 पश्चिमे सद्यमन्त्रेण दद्याच्चैव मनःशिलां ॥
 उत्तरे वामदेवाय चन्दनञ्चापि दापयेत् ।
 पुरुषेण मुनिश्रेष्ठ हरितालञ्च पूर्वतः ॥
 सितागुरुद्वयं विप्रा स्नाथा कृष्णागुरोर्भवम् ।
 तथा गुग्गुलुधूपञ्च दद्याद्रीगाय भक्तितः ॥
 महाचक्रं निवेद्यास्मादाटकाद्वमथापि वा ।
 एतद्भुजः कथितं पुण्यं शिवलिङ्गं महाव्रतं ॥
 सर्वमासेषु सामान्यं विशेषोऽपि च कीर्त्यते ।
 वैशाखे वज्रलिङ्गन्तु ज्येष्ठे मरकतं शुभम् ॥
 आषाढे मूर्त्तिकं लिङ्गं श्रावणे नीलनिर्मितं ।
 मासि भाद्रपदे लिङ्गं पद्मरागमयं शुभम् ॥
 आश्विने चैव विप्रेन्द्रा गोमेदकमयं शुभम् ।
 प्रवालेन च कार्तिक्यां तथा वै मार्गशीर्षके ॥
 माघे च सूर्यकान्तेन फाल्गुने स्फाटिकेन तु ।
 सर्वमासेषु कमलं हेममेकं विधीयते ॥

पलाभे राजतञ्चापि विल्वपत्रैः प्रपूजयेत् ।
 रत्नानामप्यलाभे तु हेम्ना वा रजतेन वा ॥
 रजतप्याप्यलाभे तु ताम्रलोहेन कारयेत् ।
 यैलं वा दाहजं वापि मृत्तयं वा सवेदिकम् ॥
 सर्वगन्धमयं वापि चण्डिकं परिकल्पयेत् ।
 हेमन्तिके महादेवं श्रीपत्रेणैव पूजयेत् ॥

श्रीपत्रं कमलं ।

सर्वाभाषेषु कमलं हेममेकमथापि वा ।
 राजतं वापि कमलं हेमकर्णिकमुत्तमम् ॥
 रजतप्याप्यलाभे तु विल्वपत्रैश्च पूजयेत् ।
 सहस्रकमलाभाभे तदर्धेनापि पूजयेत् ॥
 तदर्धार्धेन वा रुद्रमष्टोत्तरशतेन वा ।
 विल्वपत्रे स्त्रिया लक्ष्मीर्देवी लक्षणसंयुता ॥
 नीलोत्पले विशालाक्षी उत्पले वनमुखः स्वयं ।
 पादौर्गणैर्नृणां देवः सर्वदेवपतिः शिवः ॥
 तस्मात्सर्वप्रयत्नेन श्रीपत्रं न त्यजेद्दुधः ।
 नीलोत्पलं श्वेतपद्ममुत्पलञ्च विशेषतः ॥
 सर्ववश्यकरं वारः शिला सर्वार्थमिडिदा ।
 कृष्णागदसमुद्भूतं सर्वपापनिकृत्तनं ॥
 गुग्गुलुप्रभृतीनाञ्च धूपानाञ्च निवेदनं ।
 सर्वरोगक्षयकरञ्चन्दनं सर्वमिडिदं ॥
 सौगन्धिकं तथा धूपं सर्वकामप्रसाधनं ।
 श्वेतागुरुद्वयञ्चैव तथा कृष्णागुरुद्वयं ॥

सोम्यं सितारधूपञ्च साक्षाद्विर्वाणसिद्धिदं ।
 खेतार्ककुसुमे साक्षात्तुर्वक्त्रः प्रजापतिः ॥
 कर्णिकारस्य कुसुमे मेधा साक्षाद्वावस्थिता ।
 करवोरे गणाध्यक्षीबके नारायणः स्वयं ॥
 सुष्टुगन्धिषु सर्वेषु कुसुमेषु नगात्मजा ।
 तस्मादेतैर्यथा लाभपुष्पैर्धूपदिभिस्तथा ।
 पूजयेद्देवदेवेशं भक्त्या वित्तानुसारतः ।
 निवेदयेत्ततो भक्त्या पायसञ्च महाचरुं ॥
 सष्टतं सोपदंश्च सर्वद्रव्यसमन्वितं ।
 शुक्लान्नापि मुद्गाक्षं आढक्यवन्धकन्तु वा ॥
 उपहाराणि पुष्पाणि न्यायेनैवार्जितानि च ।
 नानाविधानि चास्त्रानि प्रोक्षितान्यश्वसा ततः ॥
 क्षीराज्यैः सर्वदेवानां स्थित्यर्थममृतं कृतं ।
 विष्णुना जिष्णुना साक्षात्तोयेषु सुप्रतिष्ठितं ॥
 तस्मात्संपूजयेद्देवमन्त्रे प्राणः प्रतिष्ठितः ।
 उपहारे तथा पुष्टिव्यजने पवनः स्वयं ॥
 सर्वात्मको महादेवो गन्धतोये ह्यपांपतिः ।
 पटे वै प्रकृतिः साक्षान्महादेवो व्यवस्थिता ॥
 तस्माद्देवं यजेद्भक्त्या प्रतिमासं यथाविधि ।
 पौर्णमास्यां पौर्णमास्यां सर्वकार्यार्थसिद्धये ॥
 सत्यं श्रीचन्द्राक्षान्तिः सन्तोषो दानमेव च ।
 पौर्णमास्यां तथा विप्रा उपवासञ्च कारयेत् ।
 सम्बत्सरान्ते गोदानं वृषोत्सर्गं विशेषतः ॥

भोजयेद्वाङ्मणान् भक्त्या त्रीत्रियान् वेदपारगान् ।
 तस्मिन् पूजितं तेन सर्वद्रव्यसमन्वितं ॥
 स्थापयेद्वा शिवस्ते दद्याद्वा* ब्राह्मणाय च ।
 एवं सर्वेषु मासेषु शिवलिङ्गं महाव्रतं ॥
 कुर्याद्भक्त्या मुनिश्रेष्ठास्तदेव तपसा परं ।
 सूर्यकोटिप्रतीकाशैर्विमानै रत्नभूषितैः ॥
 गत्वा शिवपुरं दिव्यं नेहायाति कदाचन ।
 अथ वा ह्येकमासे† च चरेदेवं व्रतोत्तमं ॥
 शिवलोकमवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ।
 अथवापि वित्तहीनस्तस्मिन् चिन्तयेन्नरः ॥
 वर्षमेकं वरं देवं स्थानं प्राप्य शिवं व्रजेत् ।
 देवत्वञ्च पितृत्वञ्च देवराजत्वमेव च ॥
 गाणपत्यं पदं वापि शक्तोऽपि लभते नरः ।
 विद्यार्थी लभते विद्यां भोगार्थी भोगमाप्नुयात् ॥
 द्रव्यार्थी च धनं पुण्यश्रयः कामांश्च नित्यजान् ।
 यान्याश्चिन्तयते कामांस्तान् प्राप्यैव मोदते ॥
 एकमासव्रतादेव चान्ते रुद्रमवाप्नुयात् ।
 इदं पवित्रं परमं रहस्यं
 व्रतोत्तमं विश्वसृजा च दृष्टं ।
 हिताय देवासुरमर्त्यैर्मिदं
 विद्याधराणां परमं शिवेन ॥

* दापयेदिति पुस्तकालये पाठः ।

† अथवाद्यं कथामेवेति पुस्तकालये पाठः ।

संपूज्य देवं विधिनैव मीशं
 प्रणम्य मूर्त्ती सह भृत्यपुत्रैः ।
 व्यपोहनं नाम जपस्तवस्र
 प्रदक्षिणीकृत्य शिवं प्रयत्नात् ॥
 पुरा कृतो विष्णुश्चा स्तवश्च
 हिताय देवेन जगत्त्रयस्य ।
 पितृमहेनैव सुरेन्द्रसार्धं
 महानुभावास्तु महार्हमेतत् ॥
 अधिष्ठत्वा स्तवं वक्ष्ये सर्वसिद्धिप्रदं शुभं ।
 नन्दिनश्च मुखात् श्रुत्वा कुमारेण महात्मना ॥
 व्यासेन कथितं तस्माद्बहुमानेन वा श्रुतं ।
 नमः शिवाय शुद्धाय निर्मलाय यशस्विने ॥
 हृषान्तकाय सर्वाय भवाय परमात्मने ।
 पञ्चवक्त्रो दशभुजो ह्यष्टिपञ्चदशैर्युतः ॥
 शुक्लस्फटिकसङ्काशः सर्वाभरणभूषितः ।
 सर्वज्ञः सर्वगः शान्तः सर्वोपरि सुसंस्थितः ।
 पद्मासनस्थः सोमोऽयं पापमाशु व्यपोहतु ॥
 ईशानः पुरुषश्चैव अघोरः सद्य एव च ।
 वामदेवश्च भगवान् पापमाशु व्यपोहतु ॥
 अनन्तः सर्वविद्येशः स मे पापं व्यपोहतु ।
 एको रूद्रो ह्येकगुरुस्त्रैलोक्यानुमितो विभुः ॥
 शिवध्यानैकसंपन्नः स मे पापं व्यपोहतु ।
 त्रिमुक्तिर्भगवानीशः शिवभक्तिप्रबोधकः ।

शिवध्यानैकसम्पन्नः स मे पापं व्यपोह तु ॥
 श्रीकण्ठः श्रीपतिः श्रीमाण्डूवध्यानरतः सदा ।
 शिवास्त्रनुरतः साक्षात् स मे पापं व्यपोह तु ॥
 शिखण्डी भगवान् शान्तः शिवभस्मानुलेपनात् ।
 शिवार्चनरतः श्रीमान् स मे पापं व्यपोह तु ॥
 त्रैलोक्यनामिता देवी श्रीकारा च पुरातनी ।
 दाक्षायणी महादेवो गौरी हैमवती शुभा ॥
 एकवर्णाया माया पाटलायास्तथैव च ।
 अपर्णा वरदा देवौ वरदानैकतत्परा ॥
 उमासुरहरी साक्षात् काशीस्था पापमर्हिनी ।
 खट्वाङ्गधारिणी देवी कराग्रतनुपल्लवे ।
 नैष्कर्मकादिभिर्द्विव्यैस्तनुभिः पुष्पकैर्हृता ॥
 मेनया नन्दया देवी कालिका वारिजेक्षणा ।
 अम्बा या वीतशोकस्य नन्दिनश्च महात्मनः ।
 शुभावत्या सुग्रीवा वा पञ्चचूडा वरप्रदा ॥
 सृष्टार्थं सर्वभूतानां प्रकृतिश्च गताव्यया ।
 त्रयोविंशतिभिस्तत्त्वैर्महदाद्यैर्विजृम्भिता ॥
 सत्त्वादिशक्तिभिर्नित्यं नमिता नगनन्दिनी ।
 मनोमयी महादेवो माया वा मण्डनप्रिया ।
 मायया हि जगत्सर्वं ब्रह्माद्य सचरत्तरं ॥
 शोभनी मोहनी नित्यं योगिनोद्दि संस्थिता ।
 एकादशे स्थिता लोके इन्दोवरनिभेक्षणा ॥
 भक्त्या वरमया नित्यं सर्वदेवैरभिष्टुता ।

गणेशाभोजगर्भेन्द्रयमवित्तेशपूर्वकैः ॥
 सम्भूता जननी तेषां सर्वोपद्रवनाशिनी ।
 भक्तानामार्तिहा भव्या भवभावविलासिनी ॥
 भुक्तिदा मुक्तिदा देवी भक्तानामभयप्रदा ।
 सा मे साक्षादुमा देवी पापमाशु व्यपोहतु ॥
 चण्डसर्वगणेशानो मुखाच्छोर्विनिःसृतः ।
 शिवार्चनरतः श्रीमान् स मे पापं व्यपोहतु ॥
 सालङ्कायनपात्रश्च हलमग्नौ स्थितः प्रभुः ।
 याम्यतां मनुतान्देवः सर्वभूतगणेश्वरः ॥
 सर्वदः सर्वगः सर्वप्रभवः प्रभुरीश्वरः ।
 सनारायणकैर्देवैः सेन्द्रचन्द्रदिवाकरैः ॥
 सर्वैश्च यज्ञगन्धर्वैर्भूतेर्भूतिविधायकैः ।
 उरगैर्ऋषिभिश्चैव ब्रह्मणा च महात्मना ॥
 स्तुतस्त्रैलोक्यनाथस्तु मुनिरन्तःपुरे स्थितः ।
 सर्वदा पूजितः सर्वैर्नन्दी पापं व्यपोहतु ॥
 महाकालो महातेजो महादेवश्च वापरः ।
 शिवार्चनरतः श्रीमान् स मे पापं व्यपोहतु ॥
 वृषभो मुनिशार्दूलः शिवध्यानपरायणः* ।
 शिवार्चनरतो नित्यं स मे पापं व्यपोहतु ॥
 मेरुमन्दरसङ्काशनवकोटिप्रमाणतः ।
 ऐरावतादिभिर्हिर्व्यैर्हिर्व्यैर्योगसमन्वितैः ॥
 वहा हृत्पुण्डरीकाक्षस्तम्बे वृत्तिनिबध्न च ।

गजेन्द्रवक्त्रो यः साक्षादा सप्तपाताल पादकः ॥

सप्तद्वीपोभुजङ्गकाः ।

सप्तार्णवकुप्यस्यैव सर्वतीर्थानुगः शिवः ।

आका वा देवो दिवो दिग्धातुः सोमसूर्याग्निलीचनः ॥

हतासुरा महाहृद्या महाविद्या महोत्कटाः ।

ब्रह्मोद्या धारणैर्हिष्ये र्योगपाशसमन्वितः ॥

हृद्यो हृत्पुण्डरीकाक्षस्तन्मे हृत्तिनिहृत्ति च ।

गजेन्द्रवक्त्रो यः साक्षाद्ब्रह्मकोटिशतैर्हृतः ॥

शिवध्यानैकसम्पन्नः स मे पापं व्यपोहतु ।

भृगीशः पिङ्गलाक्षोऽसौ भसितासितदेहयुक् ॥

शिवाञ्च नरतः श्रीयमान् स मे पापं व्यपोहतु ।

चतुर्भिस्तनुभिर्नित्यं सर्वारिविनिमर्द्दनः ॥

स्कन्दः शक्तिधरः शान्तः सेनानीर्गजवाहनः ।

शिवासेनापतिः श्रीयमान् स मेपापं व्यपोहतु ॥

मन्वागर्वस्तृषेणानो रुद्रः पशुपतिस्तथा ।

उद्यो भीमो महादेवः शिवाञ्च नरतः सदा ।

ये ते पापं व्यपोहन्तु मूर्त्तयः परमेष्ठिनः ॥

महादेवः शिवो रुद्रः शतमुनीललोहितः ।

ईशानी विजयी भीमो देवदेवोभवोद्भवः ॥

कपीशश्च दिवाकरः ।

एतेवै भैरवाद्यास्तु रुद्रारुद्रममा भवाः ।

शिवप्राणसमापन्ना व्यपोहन्तु मलं मम ॥

वैकर्त्तनो विवस्वाय मात्तण्डो भास्करो रविः ।

लोकप्रकाशकश्चैव लोकसाक्षी त्रिविक्रमः ॥
 आदित्यश्च तथा सूर्यः चंद्रमाश्च दिवाकरः ।
 एते वै द्वादशादित्या व्यपोहन्तु मलं मम ॥
 गगनःस्पर्शनस्तेजो रसश्च पृथिवीरुहा ।
 चन्द्रः सूर्यस्तथा चाक्का वसवः शिवभाविताः ॥
 पापं व्यपोहन्तु मलं भयं नानाविधं मम ।
 वसवः पावकश्चैव चयोनैर्कृति रेवच ॥
 वरुणो वायुः सोमश्च ईशानी भगवान् हरिः ।
 पितामहश्च भगवान् शिवध्यानपरायणः ॥
 एते पापं व्यपोहन्तु मनसा कर्मणा कृतं ।
 गभस्तिस्पर्शनो वायुरनिलो मरुतस्तथा ॥
 प्राणोपानश्च जीवेशो मरुतश्चैव भाविताः ॥
 शिवार्चनरतः सर्वो व्यपोहन्तु मलं मम ।
 खेचरी वसुचारी च ब्रह्महा ब्रह्मवित्सुधीः ॥
 सुषेणः शाश्वतः पुष्टः अपुष्टश्च महाबलः ।
 एते वै चारणाः शम्भोः पूजयातीव शोभिनः ॥
 व्यपोहन्तु मलं सर्वं पापश्चैव मया कृतं ।
 मन्मथो मन्मदित्प्राप्नो हंसराट् सिद्धपूजितः ॥
 सिद्धिवित्परमः सिद्धिः सर्वं सिद्धिप्रदायिनः ।
 व्यपोहन्तु मलं सर्वं सिद्धाः शिवपदार्चकाः ॥
 यक्षो यक्षेशधनदो जम्भनो मन्त्रिभट्टकैः ।
 पूर्यभट्टः स्त्रैरमालो शिविः पुण्ड्रलिखेव च ॥
 नरेन्द्रश्चैव वज्रेश व्यपोहन्तु मलं मम ।

अनन्तः कुलिकयैव वासुकिसप्तकस्तथा ॥
 कर्कोटकी महापद्मः शङ्खपीली महावलः ।
 शिवप्रणाममापन्नः शिवदेवप्रभूषणः ॥
 मलं पापं व्यपोहन्तु विघ्नं स्थावरजङ्गमं ।
 बीणाक्षः किन्नरक्षय शूरसेनः प्रमर्द्दनः ॥
 अतिशयः सुप्रभोगी गीतक्षयेति किन्नराः ।
 शिवप्रणामसम्पन्ना व्यपोहन्तु मलं मम ॥
 विद्या विनीतो विद्याक्षीराशिवर्द्धविदाम्बरः ।
 प्रबुद्धो विवर्धः श्रीमान् क्षतक्षय महायशः ॥
 एते विद्याधराः सर्वे शिवध्यानपरायणाः ।
 व्यपोहन्तु मलं सर्वं महादेवप्रसादतः ॥
 हयश्रीवो महाजृम्भः कालनेमिर्महायशः ।
 सुयोवो मर्द्दकयैव पिङ्गलो देवमर्द्दकः ॥
 प्रह्लादयानुक्तादय शिविर्वाक्कल एव च ।
 जृम्भकुम्भो च मायावी कार्तवीर्यः क्षतक्षयः ॥
 एते चुरा महाज्जानो महादेवपरायणाः ।
 व्यपोहन्तु महाघोरं पापभारं समैव च ॥
 महाकाय हरिचैव पश्चिराष्टीममर्द्दनः ।
 नागशङ्खचिह्नरक्षाभी वेनतेवः ब्रह्मक्षनः ।
 नागानां विषनाशक विष्णुवाहन एव च ॥
 एते हिरण्यवर्णाभा महाका विष्णुवाहनाः ।
 नानाभरणसम्पन्ना व्यपोहन्तु भवं मम ।
 अगस्त्यव वसिष्ठश्च अङ्गिरा भृगुरेव च ।

कश्यपो नारदश्च दधीचिश्चावनस्तथा ।
 उपमन्युस्तथान्ये च ऋषयः शिवभाविताः ।
 शिवार्चनरता हन्तु मनसा कर्मणा कृतं ।
 गभस्तिस्पर्शनी वायुरनिली मरुतस्तथा ।
 प्राणः प्राणेशजीवेशी जीवेशमरुत एव च ॥
 शिवार्चनरताः सर्वे व्यपोहन्तु मलं मम ।
 श्वेचरी वसुचारी च बृहन्नाहा बृहद्विक्रुधीः ॥
 पितरः पितामहाश्चैव तथैव प्रपितामहाः ।
 अग्निस्त्वत्ता वर्हिषदस्तथा मातामहादयः ॥
 व्यपोहन्तु भयं पापं शिवध्यानपरायणः ।
 लक्ष्मीश्च धरणी चैव मायस्त्री च सरस्वती ॥
 दुर्गा उमा शची ज्येष्ठा मातरः सुरपूजिताः ।
 देवतानां मताश्चैव गणा मातामहादयः ॥
 व्यपोहन्तु भयं पापं शिवध्यानपरायणाः ।
 लक्ष्मीश्च धरणी चैव गणानां मातरस्तथा ॥
 भूतानां मातरः सर्व्याः पद्मगा गणमातरः ।
 प्रसादाद्देवदेवस्य व्यपोहन्तु भयं मम ॥
 उर्वशी मेनका चैव रश्मा चैव तिलोत्तमा ।
 सुमुखी दुर्मुखी चैव कामुकी कामवर्हिनी ॥
 अथान्याः सर्वलोकेषु दिव्यायाप्सरसः शुभाः ।
 शिवाश्च तान्णवं नित्यं कुर्वन्ति शिवभाविताः ॥
 गेये शिवार्चनरता व्यपोहन्तु मलं मम ।
 अर्कः क्षीमोऽङ्गारकश्च ब्रुधश्चैव वृहस्पतिः ॥

शुक्रः शनैश्चरच्चैव राहुः केतुर्भीहाबलः ।
 व्यपोहन्तु भयं क्षीरं शिरःपीडां शिवार्चकाः ।
 मन्त्री हृषीकेश मिथुनं तथा कर्कटकाः शुभाः ॥
 सिंहश्च कन्या विपुला तुला वै वृश्चिकस्तथा ।
 धनुश्च मकरश्चैव कुम्भो मीनस्तथैव च ॥
 राशयो द्वादशाष्टैताः शिवपूजापरायणाः ।
 व्यपोहन्तु परं पापं प्रसादात्परमेष्ठिनः ।
 अश्विनी भरणी चैव ज्येष्ठा रोहिणी तथा ॥
 श्रीमाश्लेषशिराश्चार्द्रा पुनर्वसुपुष्यसर्पकाः ।
 मघा वैपूर्वफाल्गुन्या उत्तराफाल्गुनी तथा ॥
 हस्ता वित्रा तथा स्वाती विशाखा चानुराधका ।
 ज्येष्ठा मूलं महाभागा पूर्वाषाढा तथैव च ॥
 श्रवणश्च धनिष्ठा च तथा शतभिषापि च ।
 पूर्वभाद्रपदा चैव तथा प्रौष्ठपदा शुभाः ।
 पौष्ण्या च देव्या सततं व्यपोहन्तु मूलं मम ।
 ज्वरहृन्, गण्डोदकयैव शतकर्णोमहाबलः ॥
 महाकर्णः प्रभूतश्च प्रभुर्वा प्रोतिवर्चनाः ।
 कौटिकोऽतिशतैश्चैव भूता नो परिवारिताः ॥
 व्यपोहन्तु भयं पापं महादेवप्रसादतः ।
 शिवध्यानैकसम्पन्नाः शिशिरा इन्दुमूर्तिभाः ॥
 कुन्देन्दु सदृशाकाराः कुन्देदुवडवामुखः ।
 वडवामुख्यशत्रुग्यावडवामुखभेदनः ।
 वपुष्पांश्चैव सदुभक्तः क्षीरोद इव पाण्डुरः ॥

रुद्रलोके स्थितो नित्यं रौद्रैः सार्धं स्थितौ गच्छैः ।
 वृषेन्द्रो विस्मृतिर्होविश्वस्य जगतः पिता ॥
 वृत्तो नन्दादिभिर्नित्यं मातृभिर्मेषमर्हणः ।
 शिवार्चनरतो नित्यं मम पापं व्यपोहतु ॥
 गवां माता जगन्माता रुद्रलोके व्यवस्थिता ।
 माता मवां महाभागा समे पापं व्यपोहतु ।
 सुशीला शीलसम्पन्ना शिवभक्तिपरायणा ।
 शिवलोके स्थिता नित्यं सा मे पापं व्यपोहतु ।
 वेदशास्त्रार्थसर्वज्ञः सर्वशास्त्रार्थचिन्तकः ॥
 समस्तगुणसम्पन्नः सर्वदेवेश्वरोऽमरः ।
 ज्येष्ठः सर्वेश्वरः सौम्यो महाविष्णुचतुष्टयं ॥
 आद्यः सेनापतिः शास्त्रं मोदते मेषमर्हणः ।
 ऐरावतगजारूढः कृष्णकुक्षितमूर्धजः ॥
 कृष्णगौराक्षनयनः शशिपद्मगभूषणः ।
 एतैः प्रेतैः पिशाचैश्च कृष्णाण्डैश्चैव संवृतः ॥
 शिवार्चनरतः साक्षात्समे पापं व्यपोहतु ।
 ब्रह्माणी चैव माहेयो कौमारो वैष्णवो तथा ॥
 वाराही चैव माहेन्द्री चामुण्डाग्न्यायिका तथा ।
 एता वै मातरः सर्वाः सर्वलोकप्रपूजिताः ॥
 यो विनीभिर्महापापं व्यपोहन्तु समाहिताः ।
 वीरभद्रो महातेजा हिमकुन्देन्दुसचिभः ॥
 रुद्रस्य तनयो रौद्रः शूलशक्तमहाकरः ।
 सहस्रबाहुः सर्वज्ञः सर्वविधधरः स्वयं ॥

चेतायिनयनोपेतो त्रैलोक्याभयदः प्रभुः ।
 मातृषां रक्षको नित्यं महाहृषभवाहनः ।
 त्रैलोक्यनिर्भितः श्रीमान् शिवपादार्चने रतः ।
 यज्ञस्य च शिरश्चैता पूषदन्तविनाशनः ।
 वज्रे हन्तरातः साक्षाद्गनेचनिपातनः ।
 गणेश्वरो यशो नारी स मे पापं व्यपोहतु ।
 ज्येष्ठा वरिष्ठा वरदा सर्वभरणभूषिता ।
 महालक्ष्मीर्जगन्माता सा मे पापं व्यपोहतु ।
 महामोक्षा महाभागा महाभूतगैर्वृता ।
 शिवार्चनरता नित्यं सा मे पापं व्यपोहतु ॥
 लक्ष्मीः सर्वगुणोपेता सर्वलक्षणलक्षिता ।
 शर्मदा सर्वदा देवी सा मे पापं व्यपोहतु
 सिंहाङ्गदा महादेवी महिषासुरमर्दिनी ॥
 शिवार्चनरता ब्रह्मा मम पापं व्यपोहतु ।
 ब्रह्मणी ब्रह्मदयिता ब्रह्माण्डगणनायका ।
 कुष्माण्डधेति मे पापं व्यपोहतु समाहिताः ॥
 अनेन देवीं स्तुत्वा तु चान्ते सर्वं समापयेत् ।
 प्रणम्य शिरसा भूमौ प्रतिमासं द्विजोत्तमान्
 व्यपोहन स्वावसिमं वः पठेत् शृङ्गयादपि ।
 विधूय सर्वपापानि ब्रह्मलोके महीयते ।
 कन्यार्ची सभते कन्या जयकामो जयं लभेत् ॥
 अर्धकामो लभेद्द्वयं पुत्रकामो वज्रन् सुतान् ।
 विद्यार्ची लभते विद्यां भोगार्ची भोगमाप्नुयात् ॥

यान् यान् कामान् प्रार्थयते यन्नानाच्चैव यत्फलं ।
 दानानाच्चैव यत्पुण्यं व्रतानाच्च विशेषतः ॥
 तत्पुण्यं कीटिगुणितं जन्मा प्राप्नोति मानवः ।
 गोघ्नश्चैव कृतघ्नश्च वीरहा ब्रह्महा तथा ॥
 शरणागतघाती च मित्रविश्वासघातकः ।
 कुष्ठः पापसमाचारो मातृहा पित्रहा तथा ॥
 निहत्य सर्वपापानि शिवलोके महीयते ।
 इति लिङ्गपुराणोक्तं मलयपोदनं पाशुपतव्रतं ।

— ००० —

भगवन् योतुमिच्छामि व्रतं पाशुपतं वरं ।
 ब्रह्मादयोऽपि यत् कृत्वा सर्व पाशुपताः कृताः ॥

वायुरुवाच ।

रहस्यं यत् प्रवक्ष्यामि सर्वपापनिवृत्तनं ।
 व्रतं पाशुपतं श्रेष्ठं मया च शिरसि श्रुतं ॥
 कालश्चैत्रपौर्णमासी देशः शिवपरिग्रहः ।
 क्षेत्रारामादिरन्योवा प्रशस्तः शुभलक्षणः ॥
 तत्र पूर्ववर्षादृश्यां सुस्नातस्तु कृताङ्गिकः ।
 अतुल्यार्थं समाचार्यं संपूज्य प्रणिपत्य च ॥
 पूजां स्वशास्त्रिकीं कृत्वा शुक्लाम्बरधरः स्वयं ।
 शुक्लयज्ञोपवीती च शुक्लमाख्यानलेपनः ॥
 दर्भासने समासीनो दर्भमुष्टिं प्रगृह्य च ।
 प्राणायामत्रयं कृत्वा प्राञ्जलीवाप्यदक्षुषः ॥

ध्यात्वा देवञ्च देवीञ्च तद्विज्ञापनवर्त्मना ।
 व्रतमेतत् करोमीति भवेत्तद्वत्पुण्यं दीक्षितः ॥
 बाधत् शरीरपातञ्च द्वादशान्दशमथापि वा ।
 तदर्धं वा तदर्धं वा मासद्वादशकम् वा ।
 तदर्धं वा तदर्धं वा मासमेकं मथापि वा ।
 दिनद्वादशकं वाच्यं व्रतसङ्कल्पनं विधिः ॥
 समिद्धमग्निमाधाय विराजो होमकारणात् ।
 हुत्वाज्येन समिद्धिञ्च चरुणा च यथा क्रमं ॥
 पूर्णायाः पुरतो भूप तत्त्वानां शुद्धिमुद्दिशेत् ।
 शुद्धयामूलमन्त्रेण तारे च समिधादिभिः ॥
 तत्त्वान्येतानि महेशे शुद्धान्यन्यानि संस्मर ॥
 पञ्चभूतानि तत्त्वानि पञ्चपञ्चेन्द्रियाणि च ।
 ज्ञानकर्म्मविभेदेन पञ्च पञ्च विभागयः ॥
 त्वगादिधातवः सप्त पञ्चप्राणादिवायवः ।
 मनसाहं* कृतं तद्विर्गुणौ प्रकृतिपूरुषौ ॥
 रागोविद्या कला चैव नियतिः काल एव च ।
 अज्ञाञ्च शुद्धविद्याञ्च महेश्वरसदाशिवौ ।
 शक्तिश्च शिवतत्त्वानि तानि च क्रमशो विदुः ॥ ,
 मन्त्रैस्तु विराजो हुत्वा होतास्तैर्विर्गतो भवेत् ।
 अथ गोमयमादाय पिण्डीकृत्य निमन्त्रा च ॥
 व्यस्थाप्य तन्तु संरक्ष्य दिने तस्मिन् हविष्मभुक् ।
 प्रभाति च चतुर्दश्यां तच्च सत्त्वं ब्रह्मोदितं ॥

दिने तस्मिन् निराहारः कालशेषं समापयेत् ।

प्रातः पर्वणि वाप्येव हुत्वा होमश्च तत्पतः ।

उपसंहृत्य रुद्रायिं गृह्णीयाद्भस्म पात्रतः ॥

ततस्तु जटिलो मुण्डः शिष्यैश्च कजश्च च ।

हुत्वा ग्नी तु पुनर्व्वीतलज्जश्च स्याद्दिगम्बरः ।

अन्यः कषायवसनश्चर्म्मचोराम्बरी यथा ॥

रक्ताम्बरी वल्कली च भवेद्दण्डी च मूषली ।

प्रक्षाल्य चरणौ पश्चाद्दिराचम्यात्मनस्तनुं ॥

सकली कृत्य तद्भस्म विटजामलसम्भवं ।

अग्निरित्यादिभिर्भस्मैः षड्विराथर्व्वणैः क्रमात्

निर्भ्रथ्याङ्गानि मूर्त्तौदिचरणान्तश्च संस्पृशेत् ।

अग्निरिति भस्मवायुरिति भस्मजलमिति भस्मस्थलमिति
भस्मसर्व्वदं हुत्वा इदंभस्मणाङ्गएतानि चक्षुषि इत्याथर्व्वण
मन्त्राः षट् ॥

ततस्तेन क्रमेणैव समुन्मुल्य च भस्मनः ।

सर्व्वङ्गोदहनं कुर्यात् प्रणवेन शिवेति च ॥

तत स्त्रिपुण्ड्रं रचयेत्तिरायुषसमाह्वयं ।

शिवभाव समागम्य शिवयोगमथाचरे ॥

कुर्यातिसम्भामि येवमेतत्पाशुपतं व्रतं ।

भुक्तिमुक्तिप्रदश्चैतत् पशुत्वं विनिवर्त्तयेत् ॥

तत्पशुत्वं परित्यज्य कृत्वा पाशुपतं व्रतं ।

पूजनीयो महादेवो लिङ्गमूर्त्तिः सनातनः ॥

पद्ममष्टदलं हेमं नवरत्नैरलङ्कृतं ।

कर्णिकाकेशरोपेतमशनं परिकल्पयेत् ।
 श्वेतकृष्णनिभं भागुंसित रक्तमद्यापि वा ।
 पद्मं तस्याप्यभावे तु केवलं भावनामयं ।
 पद्मस्य कर्णिकामध्ये कृत्वा लिङ्गं कनीयसं ।
 स्फाटिकं पीठकोपेतं पूजयेदश्रितः क्रमात् ।
 प्रतिष्ठाप्य विधानेन लिङ्गं कृतसुशोभनं ।
 परिकल्पयासने मूर्तिपञ्चवक्त्रं प्रभाकरं ।
 पञ्चगव्यादिभिः पुण्यैर्यथाविभवसंभृतैः ॥
 स्नापयेत् कलशैः पूर्णैः सहस्राणि सुसन्धवैः ।
 गन्धद्रव्यैः सकूर्पैरेषन्दनादौ च कुङ्कुमैः ॥
 सवेदिकं समालिप्य लिङ्गं भूषणभूषितं ।
 विल्वपत्रैश्च पद्मैश्च वाच रक्तैस्तथोत्पलैः ॥
 उत्पलैर्नीलोत्पलैः ।

नीलोत्पलैस्तथान्यैश्च पुष्पैस्तैस्तैः मृगन्धिभिः ।
 पुष्पैः प्रशस्तैश्चेतैश्च पुष्पैर्दूर्वाद्युत्पादिभिः ॥
 समभ्यर्च्य यथा लाभं महाप्रजाविधानतः ।
 धूपं दीपं तथा चार्घ्यं नेवेद्यञ्च विशेषतः ॥
 निवेदयित्वा विधिवत् कल्याणञ्च समाचरेत् ।
 इष्टानि च विगिष्टानि न्यायेनोपायितानि च ॥
 सर्वद्रव्याणि देयानि व्रते त्वस्मिन्विशेषतः ।
 (श्रीपद्मोत्पलपद्मानां सहस्रगमाह चिकामता ॥)

प्रत्येकममणव्यापितमष्टोत्तरं द्विजाः ।
 तत्रापि च विशेषान् यद्विल्वपत्रकं परं प्राहुः ॥

परान् पद्मसहस्रकान् नीलोत्पलादिष्टोप्यतत्तमानं विस्मयनकं ॥

पुष्पान्तरे न नियमो यथालाभं प्रपूजयेत् ।

अष्टाङ्गमर्घ्यं मुत्तकष्टं धूपदीपौ विशेषतः ॥

कृष्णागररघोराख्ये रक्ता सद्यमनःशिली ।

चन्दनं वामदेवाख्ये मुखे कृष्णागुहः पुनः ॥

पौरपेगुग्मुलं सव्ये सौम्ये सौगन्धिके मुखे ।

ईशानेऽपि तु सीतादीन् दद्याद्धूपं विशेषतः ॥

शर्करा मधुकूर्पूरं कपिलाष्टतसंयुतं ।

चन्दनागुरुकुष्ठाश्च मात्स्यं वै सम्प्रचक्षते ।

कर्पूरवर्त्तिजोपाद्या देवी दीपावलिस्ततः ॥

अघोरचन्दनन्देयं प्रतिचक्रमतः परं ।

प्रथमावरणे पूज्य क्रमाद्विवस्वरामुखी ।

ब्रह्माङ्गानि ततश्चैवं प्रथमावरणे चर्चयेत् ।

द्वितीयावरणे पूज्या विद्येशास्त्रकवर्त्तिनः ॥

तृतीयावरणे पूज्या भवाद्याश्चाष्टमूर्त्तयः ।

महादेवादयस्तत्र तत्रैकादशमूर्त्तयः ॥

चतुर्थावरणे पूज्याः सर्व्वेऽपि गणेश्वराः ।

वह्निरेव तु पद्मस्य पञ्चमे ज्योतिष्पांगणः ॥

सर्व्वे देवाश्च देव्याश्च सर्व्वाः सर्व्वेऽपि खेचराः ।

यातास्तवाहिनाश्चैव सर्व्वे मुनिगणा अपि ॥

बीजिनी गुरवः सर्व्वे पञ्चगोमातरस्तथा ।

जेतवाश्च समन्ताः सर्व्वे वैतस्वराश्चर ॥

पञ्चावरण पूजान्ते संपूज्य परमेश्वरम् ।

शय्यासनं स्रजं हस्तं हविर्भक्त्या निवेदयेत् ॥
 मुखवासादिदत्तानां ताम्बूलं सोपदंशकं ।
 अलंकृत्य च भूपोपि नानागुणविभूषणैः ॥
 नीराजनान्तां निस्तूर्य्यं पूजाशेषं समापयेत् ।
 क्रमुकं सोपदंशं च शयनं च समापयेत् ॥
 यद्यत् यस्य हितं हस्तं तत्सर्वमनुरूपतः ।
 कृत्वा च कारयित्वा च खित्वा च प्रतिपूजनं ॥
 स्तोत्रव्यगोहनं जप्त्वा विद्यां पञ्चाक्षरीं जपेत् ।

(पञ्चाक्षरी विद्या च वायुसंहितोक्ता ।)

अस्याः परमविद्यायाः स्वरूपमधुनोच्यते ।
 आदौ नमः प्रयोक्तव्यं शिवायेति ततः परं ।
 सेवा पञ्चाक्षरी विद्या सर्वस्विति शिरोगता ।
 शब्दजो तस्य सर्वस्य बीजभूतः समासतः ॥
 प्रथमं तन्मृखाङ्गीर्णा मम मेवात्मवाचिका ।
 तप्तचामीकरप्रख्या पीनोन्नतपयोधरा ॥
 चतुर्भुजा त्रिनयना बालेन्दुकृतशेखरा ।
 पद्मोत्पलधरा सौम्या वरदाभयपालिका ॥
 सर्वलक्षणसम्पन्ना सर्वाभरणभूषिता ।
 सितपद्मासनासीना नीलकुक्षितमूर्धजा ॥
 अस्याः पञ्चविधावर्णा प्रस्फुरद्द्रविमण्डला ।
 पीतकणास्तावा धूम्रवर्णाभारतगव च ॥
 पृथक् प्रयुक्तायेवैता विन्दु नादविभूषिता ।
 अर्धचन्द्राकृति विन्दुनाददीपशिखाकृतिः ॥

वीजं द्वितीयबीजेषु मन्त्रस्यास्य वरानने ।
 दीर्घपूर्वतुरीयस्य पञ्चमं शक्तिमादिशेत् ॥
 वामदेवीनाम ऋषिः पङ्क्ति छन्दश्च आदितः ।
 देवताशिवएवाहं मन्त्रस्यास्य वरानने ॥
 उमाच वै वरारोहा विष्णामित्र स्तथाङ्गिराः ।
 भारद्वाजश्च वर्णानां क्रमश्च ऋषयः स्मृताः ॥
 गायत्र्यानुष्टुप्छन्दश्च च ऋन्दांसि वृहतीविराट् ।
 इन्द्रोत्तरोद्गिरिर्ब्रह्मास्कन्दस्तेषां च देवताः ॥
 मम पञ्च मुखान्याहुः स्थाने तेषां वरानने ।
 पूर्वादिर्वाहपूर्वं तं नकारादि यथा क्रमं ॥
 उदात्तः प्रथमोवर्णं चतुर्थश्च द्वितीयकः ।
 पञ्चमः स्वरिथैव मध्यमोनिहतः स्वयं ॥
 मूलविद्या शिवं शैवं सूक्तं पञ्चाक्षरं तथा ।
 नामान्यस्य विजानीयादेवं मे हृदयं मतं ॥
 नकारः शिव उच्येत मकारस्तु शिखीच्यते ।
 शकारः कवचं तद्वहाकारोनेत्र उच्यते ॥
 यकारोस्त्रं नमः स्वाहावषट्कुं वीषडित्यतः ।
 फडित्यपि च वर्णानामन्ते कृत्वं यदा तदा ॥
 तत्रापि मूलमन्त्रोऽयं किञ्चिद्भेदममन्वितं ।
 तत्रास्य पञ्चमोवर्णो ह्यदशस्वरभूषितः ॥
 तस्मादनेन मन्त्रेण मनोवाक्याभेदतः ।
 शिवयोरर्चनं कुर्यात् जपहोमादिकं तथा ॥
 प्रदक्षिणं प्रक्षामञ्च कृत्वा स्नानं समर्चयेत् ।

ततः पुरस्ताद्देवस्य सुविद्ये च प्रपूजयेत् ॥
 दत्तार्घ्यपुष्टो पुण्याणि देवमुद्दिष्टा लिङ्गतः ।
 अभिचाम्नि च संरक्ष्य यदा देवस्य नामतः ॥
 प्रत्यहं जनयत्वेवं कुर्यात् सर्वं पुरोहितः ।
 ततस्तस्याम्बुजं लिङ्गं सर्वोपकरणान्वितं ॥
 समर्पयेत्सगुरवे स्थापयेद्वा शिवालये ।
 संपूज्य च गुरुनन्यान् व्रतिनश्च विशेषतः ॥
 भक्तान् हिजानभुक्ताश्च दीनानाक्षांश्च तोषयेत् ।
 स्वयञ्ज्ञानशनप्रायः फलमूलाशनोऽथवा ॥
 पयोव्रतो वा भिक्षागो दिव्यैवैकाग्रनीभवे ।
 नक्तं मुक्ताग्रनं नित्यं भूशयोविरतः शुचिः ॥
 भस्मशायी शशाशायी वीरासनशयोऽथ वा ।
 ब्रह्मचर्यरतीनित्यं व्रतमेतत्समाचरेत् ॥
 अर्कवारे तथेन्दो वा पञ्चदश्याश्च पक्षयोः ।
 अष्टम्याश्च चतुर्दश्यां शक्त्वाष्टपवसेदपि ॥
 पाषण्डपतितोदक्या सतकास्थजपूर्विकान् ।
 वर्जयेत्सर्व्यद्वेन मनसा कर्मणा गिरा ॥
 क्षमा, दानं दया, सत्यं महिमा शीलता भवेद्वा ।
 सन्तुष्टश्च प्रशान्तश्च जपध्यानरतस्तथा ॥
 कुर्यान्निषवणं स्नानं भस्मस्नानमथापि वा ।
 पूजा वैशाखिकश्चैव मनसा कर्मणा गिरा ॥
 बहुनात्र किमुक्तेन नाचरेदशिव व्रती ।
 प्रसादात्तु सदाचारे निरूप्य गुरुलाघवं ॥

उच्छितां निष्कृतिं कुर्यात् पूजाहोमजपादिभिः ।
 आसमाप्तौ व्रतस्त्वैवमाचरेन्नृणादतः ।
 गोदानहोमोक्तं कुर्यात् पूजा च संसदः ॥
 सामान्यमैतत् कथितं व्रतस्यास्य विधानतः ।
 प्रतिमासं विशेषश्च प्रवदामि यथाक्रमं ॥
 वैशाखे वज्रसिङ्गान्तु ज्येष्ठे मारव्रतं शुभं ।
 आषाढे मौक्तिकं शिवात् आश्विने नीलनिर्जितं ॥
 माघे भाद्रपदे देवं वज्ररागमयं शुभं ।
 आश्वयुज्यान्तु विधिवद्गोमेदकमयं शुभं ॥
 कार्तिक्यान्तु द्रुमं लिङ्गं वैदूर्यं मार्गशीर्षके ।
 पुष्यरागमयं पुष्ये माघे तु मन्त्रिजोरयं ॥
 कालगुण्याश्चन्द्रमास्तोयं चैवेमासेऽथवा तथा ।
 सव्यं मासेषु राजानामज्ञाभे हेममेव वा ॥
 हेमालाभे राजते वा ताम्रजं सोममेव वा ।
 नृत्नयं वा यद्यालाभं चणिकं बान्धवेव वा ॥
 सव्यं गन्धमयं वाचं लिङ्गदुर्योधनवारुधि ।
 व्रतावसानसमये समाचरितमेत्थकं ॥
 कृत्वा वैशाखिकीं पूजां हुत्वा चैव यथावधि ।
 संपूज्य यजमाचार्यं व्रतिनश्च विशेषतः ॥
 देशिकेनाभ्यनुज्ञातः प्राङ्मुखो वाप्युदङ्मुखः ।
 दर्भासनो दर्भपाणिः प्राचापानी निवृत्तश्च
 जपित्वा शक्तितो मूलं ध्यात्वालिङ्गं पिबन्मकं ।
 अनुज्ञाप्य यथापूज्यं नमस्कृत्य कृताञ्जलिः ॥

वसुतृज्जानि भगवान् व्रतमेतत्त्वदाज्ञया ।
 इत्युक्तो दीर्घमूलान्तु दर्भानुत्तरतश्चजेत् ॥
 ततो दर्भकुटाधारमेखला अपिषीत्तृज्जयेत् ।
 पुनराचम्य विधिवत् पञ्चाक्षरसुदीरयेत् ।
 यः कुर्यात् व्रतिकोदीक्षामादेहान्तमनाःकिल ॥
 व्रतमेतत् प्रकुर्वीत स तु वै नैष्ठिकः कृतः ।
 सत्त्वः शमी च विज्ञेयो महापाशपतस्तथा ॥
 स एव तपसा ज्ञेयः स एव च महाव्रती ।
 न तेन सदृशः कश्चित् कृतकृत्योमुमुक्षुषु ॥
 यतियनैष्ठिकीयातः तमाहुर्नैष्ठिकीत्तमं ।
 या नार्थ्ये तद्वाद्वाहं व्रतमेतत् समाचरेत् ॥
 शीऽपि नैष्ठिकतुल्यः स्यात् शिवव्रतसमन्वयात् ।
 घृताक्तोयश्चरेदेतत् व्रतं व्रतपरायणः ॥
 द्विचैकदिवसस्यापि स च कथनं नैष्ठिकः ।
 कृतकृत्यश्च निष्कामोयश्चरेद्व्रतसुत्तमं ॥
 शिवार्पितात्मा सततं तेनान्तः सदृशः कश्चित् ।
 भवन्निमोहिजोविहान् महापातकसम्भवैः ॥
 पापैर्विमुच्यते सखी मुच्यते न च संशयः ।
 ब्रह्मणे पदवीं कीर्ये तद्वत् परिकीर्तितं ॥
 यस्मात् सर्वेषु लोकेषु वीर्यवान् कृतसंयतः ।
 भस्मनिष्ठश्च दहन्ते दामो भस्मानि सङ्गमात् ॥
 भस्मज्ञानं विशुद्धात्मा भस्मनिष्ठ इति स्मृतः ।
 भस्मसन्दिग्धसर्वाङ्गो भस्मनिष्ठ इति स्मृतः ॥

भूतप्रेतेषु सर्वेषु लोकेष्वन्येषु वा भवेत् ।
 अरोगः सर्वसिद्धार्थो भवेच्चाती वदुःसह ॥
 भस्मनिष्ठस्य सान्निध्याविद्रवौतिन संशयः ॥
 मासकम्भसिकं प्रोक्तं भक्षकल्पवभक्षणात् ।
 भूति भूति करं पुंसां रक्ष रक्ष पर परं ॥
 किमर्थं मिह वक्तव्यं भस्मसाहाय्यकारणं ।
 व्रती च भस्मना ज्ञातः स्वयं देवो महेश्वरः ॥
 परमास्त्रं शौचानां भस्मेतत्पारमेश्वरं ।
 धौम्ययजस्व तपसि व्यापादोयं निवारितः ॥
 यस्मात्सर्वे जयन्त्येनः कृत्वा पाशुपतं व्रतं ।
 जनवद्वत्संगृह्य भस्मज्ञानरतो भवेत् ॥

इति वायुसंहितोक्तं * पाशुपतं व्रतं ।

—000—

अथ गजपूजा ।

तत्र श्रीगजेश्वर प्रार्थनमधिकृत्याह पाशुकायः ।
 एवमस्त्विति देवेशस्तुवाच मतङ्गजं ॥
 आषाढ्यां पूर्णचन्द्रायां मामभ्यर्च्य नराधिपाः ।
 तवपूजां करिष्यन्ति दत्तोद्घोषवरस्तव ॥
 तच्छास्त्रवसमाराज पूजा कार्या नरोत्तमैः ।
 श्रीगजाय विधानेन शुचिभिस्तूपवासितैः ॥

* इति पुराणीकं पाशुपतव्रतमिति पुस्तकान्तरं पाठः ।

श्रीकामेश्वरं विशेषेण सदैवार्थकरी शुभा ।
 दत्त्वा तस्मै वरं देवो भगवान् भूतभावनः ।
 गतः स्वमालयं देवो गताः सर्वाश्च देवताः ॥
 त्रियं ददाति विपुलां यस्मात् पूजाविधानतः ।
 प्रख्यातः श्रीगजस्तम्भाज्जघदी नृपसत्तम ॥
 तेनैषा क्रियते पूजा हिरदानान्तु निखगः ।
 इदमन्तः प्रवक्ष्यामि कल्पमस्य नराधिप ॥
 चतुर्णां शीरहृन्नाणां द्रव्यमन्यतु बन्धुभिः ।
 उपोष्य ग्राहयेद्दिप्रो बलिं ह्योमांश्च कारयेत् ।
 एण्याहर्षोपेण ततः स्वस्ति वाच्यं हिजोत्तमान् ।
 पञ्चाङ्गप्रमाणं स्यादयन्तिकमकोटरं ॥
 यज्ञं चैवानुपूर्वञ्च भक्तैः साधुवर्जितं ।
 शायामातास्यच भवेत् कर्णिका हादगाङ्गला ॥
 विंगल्यङ्गुलनाहात् कार्या तु सममाहिता ।
 वेलागवाक्षनलिनीमग्निव्यञ्जनकं तथा ॥
 वैदलं याज्ञिकं भाण्डन्तथैवामनकङ्कतं ।
 सचन्दनाय कलशांश्चतुरः सोदकांस्तथा ।
 सामान्यं यज्ञवत्सर्वं शेषेन्द्रव्यमुपाहरेत् ॥
 ततो विप्रः शुचिर्भूत्वा नमस्कृत्य महेश्वरं ।
 सनत्कुमारं वरदं श्रीगजं च मद्रावलं ॥
 सर्वान् देवान् नमस्कृत्य दिगघाष्टौ समाहितः ।
 सर्वानुषिगणांश्चैव तथा नक्षत्रमण्डलं ॥

समुद्रानापगाः सर्वाः समहोरगराक्षसाः ।
 पर्वताः सर्वभूतानि जङ्गमाजङ्गमं जगत् ॥
 ऐरावतांयाथ पुनर्ममस्तस्य दिशाङ्गजान् ।
 उपोष्य सन्निभेद्राक्षौ वासाभिरहृतैर्द्विज ॥
 सेनान्याश्च नमस्तस्य ह्यचिभूत्वा कृताञ्जलिः ।
 कुशास्तरणसंघत्तेखड्गिणे प्रयतः ह्यचिः ॥
 स्वोभूते पुनस्तथाय खाती भूत्वा समाहितः ।
 तस्ये यस्त गजेन्द्रस्य नमस्तस्याधिरोहयेत् ॥
 सञ्छृतं तालव्यजनं मातृदामोपशोभितं ।
 नन्दितूय्यं च महताचोद्यमानेन शोभितं ॥
 सालङ्करणकैः पूरं हेमजालविभूषितं ।
 नानाकारैस्तथावस्त्रैः समन्तात् परिबेष्टितं ॥
 चन्दनागुरुभिश्चैव सर्वगन्धैरलङ्कृतं ।
 स्त्रीरूपवेशैः पुरुषैः परिचर्योपशोभितैः ।
 जल्पद्भिर्निष्ठुरं वाक्च प्रहसद्भिस्तथैव च ॥
 चतुष्पथे वीथिमार्गे तथैव चत्वरेषु च ।
 राजमार्गेषु च भृशं घोरवन्तस्ततस्ततः ॥
 अर्धविचलितं तन्मेवं राजानो विजयैषिणः ॥
 सेनापतिरमात्याश्च वे चान्ये तद्विजानतः ॥
 पूजयन्ति यथा न्यायं तथैव गजजीविनः ।

* चात्रचिकीर्ति पुरुषाकारे पाठः ।

† विषयेष्वेव इति पुरुषाकारे पाठः ।

अतीत्यथा तु कुर्वाणाः सप्तबलवाहनाः* ।
 ज्वराजालैर्विनश्यन्ति देवताविक्रमेण वै ॥
 प्रयुञ्जते च वै तस्मै सम्यक् पूजां नराधिप ।
 सपुत्रदारा बर्हन्ते सराष्ट्रबलवाहनाः ॥
 आर्घ्या माहेश्वरस्यैतां प्रतिगृह्णन्ति ये नृपाः ।
 संयामे शत्रुसंघाते भवन्ति च विदारिणः ॥
 काले बीजानि रोहन्ति सम्यग्वर्षति वासवः ।
 न भवत्यत्र मरको व्याधिहानिस्तथैव च ॥
 निरामयश्च भुञ्जीत राजा कृत्स्नां वसुधरां ।
 रत्नाकरवतीं देवीं सशैलवनकाननां ॥
 अरोगा बलवन्तश्च जायन्ते च मतङ्गजाः ।
 राजोपजीविनः सर्व्वे कामभोगैः समन्विताः ॥
 पुत्रैश्च पशुभिश्चैव जीवन्ति च शतं समाः ।
 अरोगा बलवन्तश्च जायन्ते च प्रजा भूष ॥
 पुत्रार्थी लभते पुत्रं धनार्थी लभते धनं ।
 यांश्च प्रार्थयते कामान् सर्वांस्तान् प्राप्नुयान्नरः ॥
 एवं तत्तं महाराज शश्वी भक्त्यान्वितं विभी ।
 श्रीगजस्य भयाद्विद्धि त्रिषु† लोकेषु विश्रुतं ॥
 मया ख्यातं महाबाहो विस्तरेण यथाक्रमं ॥
 इति पालकाप्रोक्तोगजपूजाविधिः ।

— (२८) —

* सराष्ट्र बलवाहना इति पुस्तकाकारे पाठः ।

† भयं विदिविषु लोकेषु पूजितमिति पुस्तकाकारे पाठः ।

अथार्वणगोपथब्राह्मणं ।

अथाश्वयुजे मासे पौर्णमास्या

मपराह्णे हस्तिनो नीराजनं कुर्यात् ।

प्रागुदक्प्लवने देशे यत्र दिशि वा मनोरमते गिरय

स्ते पर्वता इत्येतया हस्तशतमर्द्धम्वा मण्डलं

प्रगृह्य याभिर्यमिति संप्रोक्षयेत् तत्र श्लोकाः

दशहस्तसमुत्तेधं पञ्चहस्तं सुविस्तृतं ।

शान्तवृक्षमयं कुर्यात्तीरणं पुष्टिवर्धनं ॥

शुक्लैः शुक्ताम्बरधरैस्तन्माल्यैरपि भूषित ।

कारयेत् स्थण्डिले शुभ्रे रसैश्च परिपूरिते ॥

रसैस्त्वामभिषिञ्चामि भूमे मष्ट्यं शिवा भव ।

असपत्ना सपत्नाज्ञो मम यज्ञविवर्धनी ॥

इमौस्तम्भौ घृताभ्यक्तौ शुभौ भावसमावृतौ * ॥

योमा कथाभिदामेति तमिमौ स्तम्भौ निर्द्वहतामित्पुच्छयस्व
ब्राह्मणस्य त इत्युभाभ्यां सुवर्णमालापताकैस्तम्भौ संयोज्य तस्या
धस्तात्तुर्हस्तां वेदीं कृत्वा तन्त्रमित्युक्तदर्भैः पवित्रपाणिर्वलि
पुष्पाणि च दत्त्वा मधुलाजामिश्रैः स्वस्तिकं संयावदधिकृशर
रूपसंघृतविविधान्नपानभक्ष्यलक्षफलैरग्निं परिस्तीर्य आपो
अस्मान्मातरः शुभ्य† न्विति चतुरोऽङ्गुलान् कलशान् ऋदोदकेन
पूरयित्वा प्रतिदिशमवस्थाप्य दध्वाद्गुद्राग्नेयं वायव्यवारुणा
मन्त्रारक्षोघ्नं कृत्या दूषणं यशस्य चर्चस्यानि च हुत्वीषधिंसमादाय
दिहस्तमण्डलमित्युक्ता । तत्र श्लोकाः ।

* वायससम्बृतमित्ति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† सद्यन्निति पुस्तकान्तरे पाठः ।

सिंही व्याघ्री च हरिणी कृतता चापराजिता ।

इक्षिपरी च दूर्वा च पद्ममुत्पलमालिनी ॥

तामनुमन्त्रयेद्देवं कटकसदध्यापि वैसाप्रचनहुचर्च परि-
स्तीर्य, वैतस्वाहुभमनुमन्त्रा, ततोस्वाजादधिदेवता तस्यै च
बलिं दत्त्वा, पिण्डानि च दध्यात् ।

हस्तिनाम वाचयेद्यस्यां दिशि स रिपुर्भवति तां दिशं गत्वा
हस्तिनामानवेदिरस्त्रेण रजतेन वस्त्रे च मणिमुक्ताशङ्केन चन्दनेन
भद्रदारुचवा कुष्ठेन नलदेन रोचनयास्त्रेण मणिकुशिलवा
पद्मकुमुदीत्यलैर्माम्नेर्वर्चयति सूक्तं दक्षिणोत्तरप्रतिमुखं प्रति-
जपेच्छेषेण गात्रास्त्रभ्यंजयेत् जपेत् । तत्र स्तोत्राः । हस्तिनो-
रक्षणे दण्डः कर्तव्यो वैश्वीनवः । षोडशारजिमात्रस्तु चातुर्ध्वं
मनोहर । तेन वारचात्तारयते दण्डायै तु दण्डानि कृत्वा यस्यति
जातं जानं । जातवेदसमित्वम्निं प्रज्वालयेत् सजातं जातवेद-
समिति नीराजयित्वा निधिं विभ्रतीति शालास्तु प्रवेशयेद्येन-
प्रेक्षमाणाः स्वानि स्थानानि ब्रजन्ति दीर्घायुषीबलवन्तश्च भवति
गोसहस्रं कर्तुर्दक्षिणायामवरञ्च ।

इति गजनीराजन विधिः ।

—000—

सनत्कुमार उवाच ।

अथ पर्वणि यत्कृत्यं तच्छृणुष्व महामते ।

यज्ज्ञात्वा मनसः क्षान्तिं* सुसम्भूतिञ्च विन्दति ॥

यत्पर्वणि कृतन्तावत्^१ शुभम्वा यदि वा शुभं ।
 षष्ठिवर्षसहस्राणि तत्फलं भुञ्जते नराः ॥
 दयितं जीवितं पुंसां सर्वेषामपि सन्नतं ।
 यतस्त्वचयसंप्राप्तपरिक्लेशयुता नराः ॥
 अतस्तच्छान्तिजननमायुःप्रदमनाकुलं ।
 सर्वसौख्यप्रदं भद्रं तादृग्व्रतमिहोच्यते ॥
 चतुर्दश्यां शुचिः स्नात्वा दन्तधावनपूर्वकं ।
 चरितव्रतार्चयन् यतवाकायमानसः ॥
 पौर्णमास्यान्तथा कृत्वा देवपूजां समाचरेत् ।
 मण्डलं चतुरस्रन्तु कारयेत् कुसुमाक्षतैः ॥
 तस्मिन् त्रीशं त्रियं देवीमर्चयेत् सुसमाहितः ।
 सहस्रं पयमापूर्णं गव्येन स्थापयेदुषदं ॥
 चतुरस्तीक्ष्णं कलशांस्थापयेत् क्रमात् ।
 मध्ये वावाहयेत् पञ्च चक्रादीन्यायधान्यपि ॥
 इन्द्रियाणि तथा पञ्च बुद्धिप्राणं तथा मनः ।
 न्यसेद्वेद्यानि सर्वाणि कलशेषु चतुर्विधं ॥
 मर्वापद्भ्यस्तरेभ्यस्त्याधिव्याधिभयादपि ।
 रत्नान्तु सर्वदा मान्तु बुद्धिप्राणं मनसनः ॥
 श्रवन्तु सर्वदापङ्कजं मङ्गलानि दिशन्तु नः ।
 इति मन्त्रेण चाभ्यर्च्य समिद्धे जातवेदसि ॥
 षड्भिर्मन्त्रैस्तु जुहुयात् संस्कृते तु यथा विधि ।
 तिलेनाक्षतयुक्तेन त्रिमध्वक्तेन संयतः ॥

मन्त्राः ।

अनामयाय पूर्णाय विमलायाश्च, ताय च ।
 मृत्यवे कालरूपायैत्येते मन्त्रास्तथा च षट् ॥
 अथैवायुधमन्त्रे च प्राणेन करणैरपि ।
 हुत्वा तु करणायैतिः तच्छेषेण वलिस्त्यजेत् ॥
 अथासने स्थितं साध्यं कृत्वाचार्यस्तद्व्रतः ।
 अभिषेकं ततः कुर्यात् पयसा तज्जलेन च ॥
 कुटुम्बिने हरिद्राय निष्कमावश्च हाटकं ।
 तिलान्नलवणादीनि दद्याद्विप्रशताय च ॥
 पूर्णकुम्भांस्ततोवास्त्रै हरिद्राचूर्णसंयुतान् ।
 बीजपूर्णान्स्तु कलशान् लवणेन प्रपूरितान् ॥
 चतुरशतुरोदद्याद्योषिद्भाः परमायुषे ।
 गुरवे च वरंदत्त्वा कृत्वा ब्राह्मणतर्पणं ॥
 उपवासविधानेन दिनशेषं नयेत्तुषीः ।
 अनन्तरे च दिवसे कुर्याद्भगवदर्चनं ॥
 वान्धवैः सह भुञ्जीत नियमांश्च विमर्जयेत् ।
 एवं पर्वणि यः कुर्याच्चिरञ्जीवो भवेच्च सः ॥
 सर्व्वव्याधि समुत्थाने सर्व्वदुःखोदये सति ।
 स्नानं पर्व्वणि यः कुर्यात्तच्छान्तिं मोक्षं ते परां ॥

इति गारुडपुराणोक्तमायुर्व्रतं ।

अगस्त्य उवाच ।

सर्वेषाञ्चैव पात्राणामतिपात्रन्तु शङ्करी ।
 तान्तु पूजय विघ्नेशं दृष्टादृष्टप्रदायिकां ॥
 पात्राणान्तुपूज्यता विघ्नेशाम्बिघ्ने चरीं ।
 ब्रह्मणा यो विधिः शक्ते कथितो विजयावहः ।
 शक्तेण पूर्णिमा तातः* श्रावणस्य शुभावहा ॥

शक्र उवाच ।

विजया या समाख्याता सर्वकामप्रसिद्धये ।
 तामहं श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः सुरसत्तम ॥

ब्रह्मोवाच ।

पुत्रार्थं राज्यविद्यार्ज्यशःसौभाग्यतोऽपि वा ।
 विजयार्थं ग्रामकामो जयां कुर्वीत पूर्णिमां ॥
 हेमं वा राजतं वापि खड्गं वा अघपादुके ।
 प्रतिमां वापि कुर्वीत सर्वलक्षणसंयुतां ॥

शङ्कर्या इति शेषः ।

तामादाय शुभे ऋत्वे शक्तवस्त्रविभूषितां ।
 यवशाल्यङ्कुरोपेतां पानपात्रविभूषितां ॥
 दीर्घीसुशोभनां वस्त्रैः कल्पयेत्तत्र विन्यसेत् ।
 हुत्वा हुताशनं मन्त्रैः तत्र देवीन्तु विन्यसेत् ॥
 तत्र सयवाङ्कुरादियुक्तायां वेद्यां ।
 रोचनाचन्दनं चन्द्रेरुपलिप्याथ पूजयेत् ॥

* अथेति पूर्णिमातात इति पुस्तकाकारेपाठः ।

नानापुष्पविशेषैस्तु धूपगन्धाद्यभोजनैः ।
 पूजयेद्दिविषदेवीं तथा वीजानि चाहरेत् ॥
 यवगोधूममुद्गांश्च शालिषट्ठिकप्राटकीः ।
 तिलान्माषान् प्रसृतींश्च श्यामाकावेणरालकान् ॥
 विल्वाम्रदाडिमकपित्थर्माचकापिच्छनागरान् ।
 बदरान् वीजपूरांश्च उडुम्बर अपोडकान् ॥
 दापयेच्चेव देव्यास्तु नैविद्यान्यपराणि च ।

आवेणी आशुब्रीहिः ।

ऐरावतं नारिकेलं नारङ्गं कदलोफलं ।

नारङ्गं पानीयामलकं ।

फलार्घन्तु फलान्येव जपार्थं च यवाङ्गरान् ।
 पुष्पं सौभाग्यकामाय रत्नान्यायुर्धनानि च ॥
 धनुः शत्रुविनाशाय तत्कामाय तदेव हि ।
 अन्नं सर्वार्थकामाय यथालाभन्तु दापयेत् ॥
 ततः क्षमापयेद्देवीं विद्यां गृह्णे च पार्थितां ।

विद्याश्चक्ष्यमाणमन्त्रं ।

पुत्रार्थं पूजयेद्दालान्विजयाय म्लियो द्विजान् ।
 धर्मार्थं चैव भोज्येन मन्त्रितं विद्यया तथा ॥
 मन्त्रितं भोज्येत भोजयितव्यं व्रतिना ।
 दक्षिणा तददाचार्ये कन्यकां ब्राह्मणेपु च ।
 दापयेद्यास्वशक्त्या तु तथा त मनुगृह्येत् ॥

* चरककामिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† प्रार्थयते इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

भोज्याग्रं पुत्रकामेन ग्रासं विद्याभिमन्त्रितं ।

भोक्तव्यं पृथक् पात्रेण न च कुर्वीत सङ्करं ॥

अनया विधिपूर्वन्तु मन्त्रोप्यत्रैव लिख्यते ।

ओं यः पृथिव्यां रेततमेहादवतयोमामक्षितानि विद्याप्रयच्छ-
त्यष्टौपुत्रान् जनयति वेदवेदाङ्गपारगान् । योऽधीत्य न प्रयच्छत्य-
पुत्रो नपुंसको भवति । अहं वीर्येणाहं बलेन तु ओं नमो
भगवते अक्षीणरेतसे स्वाहा रतिकाले वा चिन्तयेद्देवतां
तान्निदशेखरी ।

यस्य रेतनेन लोकोऽयं भूषितः पावनो भुवि ।

ओं रेताय महारैताय सर्व्ववीर्य्यमहाबले ।

कामाय कामदेवाय मम कामान् प्रयच्छतु ।

अनयाभिमन्त्रितं शयनं भजेत् ।

प्रयच्छत्यष्टौ पुत्रान् यदिमोहं न गच्छति ॥

एवं विद्यां गृहीत्वा तु देवीं नित्यं प्रपूजयेत् ।

भवते सर्व्व कामानां सिद्धिरिष्टापराजिता ॥

यानीह फलपुष्पाणि उत्पद्यन्ते च प्रावृषि ।

तानि देव्याः सकन्यायागुरवेऽपि प्रदापयेत् ॥

यथालाभर्त्तुकं वत्स देयं पुष्पफलानि च ।

थावणो शुभदा या च आश्विनो कार्तिकोति वा ॥

स्थातव्येतेन विधिना अवश्यं सिद्धिमिच्छता ।

होमेन ब्रह्म चर्य्येण बहुमन्त्रोपसाधनात् ॥

अपुत्री लभते पुत्रान् धनं सौभाग्य जीवितं ।

अथवा अनयाविद्या लक्षणात्कृती मितः ॥

बीजपूरकबीजानि वटशृङ्गाणि नावनात् ॥
 नागकेशरपुष्पाणि कृत्वा बी लभतेफलं ।
 ब्रह्मतीसिता श्वेतब्रह्मती । वट शृङ्गाणि वटाङ्गुराः ।
 नावनात् नास्मेन
 फलसर्पिरपांपानात् फलं प्राप्नोति विद्यया ।
 अजेयो भवते लोके विद्याधरधनाधिपः ॥
 फलसर्पिरायुर्विदसिंहं ।
 एतत्तु सर्व्वमाख्यातं विजयार्थं व्रतोत्तमं ।
 सिद्धिदं सर्व्वलोकानां विधिनातूपसेवनात् ॥
 इति देवीपुराणोक्तं पुत्रप्राप्तिव्रतं ।

—000—

मार्कण्डेय उवाच ।

कार्तिक्यान्तु तथारभ्य संपूर्णशश्वलक्ष्णं ।
 पूजयेदुदये राजन् सदानन्ताशनीभवेत् ॥
 लावणं मण्डलं कृत्वा चन्दनेनानुलेपितं ।
 दशनक्षत्रसहितं ततः सोमन्तु पूजयेत् ॥
 (लावणं सैम्बलवणकृतं ।)
 कृत्तिकारोहिणीयुक्तं वार्त्तिके मासि पूजयेत् ।
 सौम्यार्द्रासहितं राजन् मासि सौम्ये तथैव च ॥
 आदित्यपुष्यसहितं मासि पौषे च यादव ।
 मघासर्पयुतं भाद्रफाल्गुणे शृणु पार्थिव ॥

(३०)

आर्यस्तोत्र सावित्रैः सहितं पूजयेद्भित्तुं ।
 चित्रास्वातिबुतश्चैत्रे वैशाखे मृगश्रिण्व ।
 विशाखया च मैत्रेण युतं संपूजयेत्तथा ।
 ज्येष्ठामूलयुतं ज्येष्ठे आषाढास्थानमुत्तरे ।
 आश्विने अवणोपेतं वारुणेन अविष्टया ॥
 तथाभाद्रपदे पौष्णे अजाद्विघ्नसंयुतं ।
 अश्लिनीभरणीयुक्तं तथाचाश्वयुजे विभुं ॥

(कार्त्तिकेऽदौ कृत्तिकादिक्रमेण फाल्गुनश्चावणभाद्रपदेषु
 द्वाविंशीति ।)

गन्धमाखनमस्कारदीपधूपान्नसंस्पृष्टा ।
 शुभ्रेण परमाग्नेन लवणेन घृतेन च ॥
 इक्षुणेक्षुविकारैश्च पयसा पायसेन च ।
 पूण्यान्नाविधवानार्यस्तथा तल्लक्षणेः शुभैः ॥
 ततोऽनन्तरमग्नौ यावद्विष्यं प्रयती नरः ।
 ब्राह्मणानां व्रतान्ते तु महारजतरञ्जितं ॥
 महारजतं कुशुभः ।

शक्त्या तु चासनं* दद्यान्मारी वा यदि वा नरः ।
 रूपसौभाग्यलावण्यधनयुक्तीभवेन्नरः ।
 व्रतेनाग्नेन चौर्येण स्वर्गलोकश्च गच्छति ॥
 सौपवासश्च यः कुर्याद्भूतमेतदनुत्तमं ।
 अश्वमेधस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोति मानवः ॥
 सौभाग्यादि च यत् प्रोक्तं तदाप्नोति विशेषतः ।

मनसा काङ्क्षितान् कामान् सर्वाणां प्रीत्यसंशयं ॥
 जनाभिरामश्च यशश्च तस्या
 जनाधिपतिश्च तथैव सत्तया ।
 शक्यश्च तुल्यश्च तथैव यत्तया
 मानुषमासाश्च भवेत्त राजा ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं* मनोरथपूर्णमा व्रतं ।

—000—

मार्कण्डेय उवाच ।

कार्तिके पौर्णमास्यान्तु पूर्णं शिगिरदीधितिं ।
 पद्मे बौद्धशपथे तु कर्णिकायान्तु पूजयेत् ॥
 केशरे पूजयेत्तच्च मत्स्यष्टविंशतिं ।
 पद्मेषु तिष्ठिरेवाचार्गाततोष्णीत्वाच्च पूजयेत् ॥
 अग्निबृह्माग्निकेभास्व नागस्कन्दविरीचनाः ।
 शिवदुर्गायमेन्द्राश्च विष्णुकामशिवेन्दुकाः ॥
 पितरश्चेत्यमौ प्रोक्ता मुनिभिस्तिष्ठिदेवताः ।
 गन्धमात्य नमस्कार दीपधूपाद्यसम्पदा ॥
 शुभ्रेण परमाग्नेन दद्याच्च सवर्णेन च ।
 अपूपैश्च महाभाग फलैः कालोद्भवेस्तथा ॥
 व्रतावसाने दद्याच्च वस्त्रमुग्मं विजातये ।
 ब्राह्मणाश्च महाभाग महारजतरङ्गितः ॥
 पुण्याद्याविधाः सम्यक् कालविद्याश्च तावुभौ ।

* श्रीमद्विष्णुधर्मोत्तरे इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

सोपवासस्य भक्ताशी* व्रतमेतत् समाचरेत् ।

नक्ताशनो वा धर्मज्ञस्तथैव च हविष्यभुक्* ॥

सौभाग्यदं रूपविवर्णञ्च

सावण्यदं स्त्रीरतिभोगदञ्च ।

कार्यं प्रयत्नेन नरेन्द्र पुंसा

कार्येन तया स्त्रीभिरदीनसत्त्वं ॥

इति विष्णु धर्मात्तरोक्तं* सौभाग्यव्रतं ।

—000—

मार्कण्डेय उवाच ।

मार्गशीर्षादथारभ्य चन्द्रमण्डलके नरः ।

सोपवासः पौर्णमास्यां पूज्य यज्ञफलं लभेत् ॥

यज्ञफलं सर्वयज्ञफलं ।

नक्ताशनस्तु संपूज्य वज्रिष्टोमफलं लभेत् ॥

सोपवासस्य नक्ताशी वाजिमेधफलं लवेत् ।

सोपवासः सुव्रतः ।

कृत्वा व्रतं वत्सरमेतदिष्टं

प्राप्नोति लोकांश्च निशाकरस्य ।

उपोष्य कालं सुचिरं सकालं

सायोज्यमायाति तमस्तशश्चोः ॥

इति विष्णु धर्मात्तरोक्तं चन्द्रव्रतं ।

* सोपवासस्य नक्ताशीति पुस्तकान्तरे पाठः ।

● नक्ताशी एक भक्तोक्तं सान्ना वा कायेव च इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

* भविष्योत्तरीयं सौभाग्य व्रत इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

मार्कण्डेय उवाच ।

प्रोष्ठपदान्तवारश्च संपूर्णं शशिसन्धे ।
 संपूज्य वरुणं देवं गन्धमाख्यातसंपदा ॥
 जलाशयजले ध्यात्वा एवं संवत्सरं बुधः ।
 दद्यात् व्रतावसाने तु जलधेनुं द्विजातये ॥
 हृत्वीपानहसंयुक्तां वासीयुग्मविभूषितां ।
 प्राप्नोति लोकं वरुणस्य राजं
 स्तुतृष्व कालं वृषिरं मनुजः ।
 मानुषमासाद्य भवत्यरोगो
 रूपाश्वितो वित्तवृत्तस्तथैव ॥
 इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं वरुणव्रतं ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

प्राश्नयुज्यां संपूर्णं तु पौर्णमास्यां नरो भुवि ।
 सोपवासः सुरेन्द्रश्च देवं संपूजयेत्तदा ॥
 शचीमैरावणम्वयं मातुलिङ्गं नराधिप ।
 गन्धमाख्यनमस्कार दीपधूपान्नसम्पदा ॥
 संवत्सरान्ते कनकच दत्त्वा
 प्राप्नोति लोकं सपुरन्दरस्य ।
 मानुषमासाद्य नरेन्द्रपूज्यो
 राजा भवेद्वा द्विजपुङ्गवो वा ॥
 इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं शक्रव्रतं ।

मार्कण्डे उवाच ।

उषोदितचतुर्दश्यां पौर्णमास्यां नरोत्तम ।
 पञ्चगव्यं पिबेत्पञ्चाङ्गविष्णोश्चैव तदा भवेत् ॥
 यज्ञव्रतमिदं कृत्वा* मासपादात् प्रमुच्यते ।
 तस्मात्सर्वप्रव्रजेन मासि मासि समाचरेत् ॥
 संवत्सरात् ब्राह्मणं सुरेन्द्र लोकं
 तत्रोच्च राजा ह्यचिरं मनुष्यः ।
 मानुष्यमासाच्च नरेन्द्रपूज्यो
 राजा भवेद्वा दिग्विजयो वा ॥
 इति विष्णु भर्तृरोक्तं ब्रह्मकूर्चं व्रतं ।

— ००० —

कार्तिक्यामुपवासी बः कन्यां दद्यात् स्वलङ्कृतां ।
 स्वकीयां परकीयां वा नदीसङ्गमके शुभे ॥
 एतत्सन्तानदं नाम व्रतं सुगतिदायकं ।
 इति भविष्योत्तरोक्तं सन्तानदव्रतं ।

— ००० —

कृष्ण उवाच ।

कार्तिक्यां नक्तभुक् दद्यान्मेषं हेमविनिर्मितं ।
 मार्गशीर्षे नृपं पश्येन्मिथुनं तद्देव हि ॥
 एवं क्रमेण यो दद्याद्दासीं वस्त्रविभूषितां ।
 पौर्णमास्यां पौर्णमास्यां कर्त्तव्यं ।

* भवत्युगमिदं कृत्वा इति पुस्तकाकरे पाठः ।

पौर्णमास्यां पौर्णमास्यां कोत्सेव बहुदक्षिणं ।
एतद्वाशिव्रतं नाम यद्द्वीपद्रवनाशनं ।
सर्वाशापूरकं तदहस्तीमलोकप्रदायकं ॥

इति भविष्यत् पुराणोक्तं राशिव्रतं ।

— ०१० —

पयोव्रतः पञ्चदशां व्रतान्ते गीयगप्रदः ।
लक्ष्मीलोकमवाप्नोति देवीव्रतमुदाहृतं ॥

इति पद्मपुराणोक्तं देवीव्रतं ।

— ००० —

कालोत्तरात् ।

माघशुक्ल चतुर्दश्यामुपोष्य नियमस्थितः ।
शिवाय पौर्णमास्यान्तु कर्त्तव्यं छृतकम्बलं ॥
कृष्णगोमिथुनं प्रघात सूरूपं विनिवेदयेत् ।
दिव्यं वर्षशतं सार्धं शिवलोके महीयते ॥

शिवधर्मः ।

आलिङ्गवेदिपर्यन्तं यो दद्याद्छृतकम्बलं ।
तस्यानन्तं भवेत्पुण्यं माघपूर्णिमपर्वणि ॥
जागरं गीतनृत्याद्यैः सकृत् कृत्वा तु पर्वणि ।
मन्वन्तरशतं सार्धं रुद्रलोके महीयते ॥
इति शिवधर्मोत्तरीको छृतकम्बलविधिः ।
पौर्णमास्यान्तु यः सोमं पूजयेद्भक्तिमाचरः ॥

सौभाग्यत्वं भवेत्तस्य इति मे निश्चिता मतिः ॥
 मूलमन्त्राः स्तुतं प्राभि रङ्गमन्त्राश्च कीर्त्तिताः ।
 पूर्व्ववत्पद्मपत्रस्यः कर्त्तव्यस्यातिथीश्वरः ॥
 तिथीश्वरः सोमः तद्रूपं च चतुर्दशीस्वित्तमहाराजव्रतोक्त
 विहितव्यं ।

गन्धपुष्पोपहारैश्च यथाशक्ति विधीयते ।
 पूजाश्राव्येन श्राव्येन कृतापि तु फलप्रदा ॥
 आग्न्यधारासमिद्धिश्च दधिघ्नीरासमाधिकैः* ।
 पूर्व्वोक्तफलदो होमः कृतः शान्तेन चेतसा ॥
 एतद्व्रतं वैष्णवानरप्रतिपत्तव्रतवद्ग्राह्यम् ।

इति भविष्यत्पुराणोक्तं सोमव्रतम् ।

—000—

भोजनं घृतसंयुक्तं मधुनीपरिशोभितं ।
 दद्यात् कृष्णतिलानाम्नु प्रस्थमेकन्तु मानधं ॥
 द्विगुणन्तगुलानाञ्च पृथक्प्रस्थं प्रकल्पयेत् ।
 अण्डजैर्वीण्डजैर्वापि विविधं परिबेष्टितं ॥
 अण्डजानि कौशेयानि वोण्डजानि कार्पासानि ।
 लिङ्गं संवेष्ट्य मन्त्रैश्च बलिमेतं निवेदयेत् ।
 अर्चयित्वा विधानेन पौर्णमास्यां समाहितः ॥
 युगकीटिसहस्राणि* शिवलोके महीयते ।

* पायसाञ्जनैर्वेष्टयेति पुस्तकाकरे पाठः ।

* पुराकीटि सप्तसप्तौति पुस्तकाकरे पाठः ।

पुण्यक्षयादिहागत्य समृद्धे जायते कुले ॥
मेधावी सुभगः श्रीमान्वेदवेदाङ्गपारगः ।
इति श्रीशिवधर्मीक्तं घृतभाजनव्रतं ॥

— ००० —

पौर्णमास्यामुपवसेद्वर्मेकं सुयन्त्रितः ।
वर्षांस्ते सर्वगन्धार्गीं प्रतिमांस्त्रिनिवेदयेत् ॥
सुविचित्रैर्महायानैर्हिंसागन्धविभूषितैः ।
युग कीटि शतं सायं शिवलोके महीयते ॥
यथेष्टमैश्वरे लोके भोगमासाद्य यत्नतः ।
क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् राजानं पतिमाप्नुयात् ॥

इति शिवधर्मीक्तं गन्धव्रतं ।

— on'ṭṭuo —

सनत्कुमार उवाच ।

उपोष्य च चतुर्दश्यां पौर्णमास्यां हरिं यजेत् ।
त्रैविमासि निकुम्भय पिशाचैः सहितो बली ॥
यातियोद्धुं पिशाचां च सिकतादीपवासिनः* ।
तदस्ते गच्छतां तेषां मध्याह्ने तु गृहे गृहे ॥ ,
पूजा कार्या ब्रह्मेण नित्यं शक्त्या यथाक्रमं ।
पिशाचं मन्त्रयं कृत्वा रम्यं दृश्यमयश्च वा ॥
गन्धैर्माल्यैस्तथा वस्त्रै रलङ्कारैर्भूषणैः ।
भक्ष्यैस्तु पूरिकापूपैर्भासैर्हव्यैश्च पानकैः ॥

* मिश्रदोपनिवासिन इति पुलकान्तरे पाठः ।

स्वजातिविहितैः पथैः नैवेद्यैश्च पृथग्विधिः ।
 आयुधैर्विविधाकारैश्च त्रीपानहयष्टिभिः ॥
 शुष्कान्नपूरिकायुक्तैस्त्रिरैर्भक्ष्यैश्च भक्षया ।
 शिखरहालपिष्टैर्व्या ठक्तावाद्यैश्च चर्चया ॥
 तन्मौवाद्यैर्नोन्नैश्च तथा पार्श्वोपयोगिभिः ।
 नध्याजे तन्तु संपूज्य प्राप्ते चन्द्रीदये पुनः ॥
 पूर्ववत् पूजयेत्तन्तु विसृष्टाठविर्वर्जितः ।
 ततः कृत सख्ययनो ब्राह्मणस्तं विसर्जयेत् ॥
 अनुव्रजेदथैतन्तु द्वितीये दिवसे सति ।
 गृहा ददूरं गीयस्य पर्वतस्तु महीरुहात् ॥
 पुनर्गृहे प्रविश्यैव कर्त्तव्यः सुमहोत्सवः ।
 गीतवादित्रनिर्घोषो जनकीलाहलस्तथा ॥
 कृत्वा तृणमयं मर्पं दृढैः काष्ठैस्तु वेष्टितं ।
 क्रोडितव्यं पुनर्ग्रामनगरेषु च सर्वदा ॥
 तत्रासौ दुष्टसर्पाणां तद्वृणादयेन जायते ।
 त्रिभिर्घृतभिर्हिंसेः कर्त्तव्यं खण्डखण्डकं ॥
 सर्वोपस्कारशमनं नवखण्डं गृहे गृहे ।
 पूजितव्यं सुगुप्ते तु रक्षितव्यञ्च वत्सरं ॥

इत्यादि पुरानोक्ता निकुम्भपूजा ।

— ००० —

कार्त्तिक्यां यो वृषोत्सर्गं कृत्वा नक्तं समाचरेत् ।

शैवं पद्मवाप्नोति वृषव्रतं मिदं स्मृतं ॥

इति पद्मपुराणोक्तं वृषव्रतं ।

या प्रेरयति कर्माणि लोकेषु द्विजसत्तम ।
 तस्याः संपूजनं कार्यं ह्यहंपञ्चदशीं सदा ॥
 मात्मानुलेपने ह्यहोपपेन च सुनन्दिना ।
 रत्नवस्त्रप्रदानेन दीपदानेन वाद्यवा ॥
 वैदलैश्च तवाभयैरपूरैश्चतुर्वै च ।
 पूजयित्वा च तां देवीं भोक्तव्यं निमि भार्यया ॥
 यदि पञ्चदशीं सर्वां न मज्झति कवचम् ।
 देव्याः संपूजनं कार्यं च वयमपि कार्तिके ॥
 उमान्तुः पूजयेद्व्यातु सातु नारी पतिव्रता ।
 सदा धर्मरता नारी लोके भवति भार्गव ॥
 नाहमे च मतिस्तस्याः कदाचिदपि जायते ॥
 इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं पूर्वोक्तमाप्तं ।

—०००(१०००)—

प्राप्य पञ्चदशीं राम तवा ह्यहोपपञ्चदशीं ।
 चारामपञ्चदशमिति वै उमे योच समाश्लिषेत् ॥
 तस्मिन्नादि गृहे वायु नामावर्षेत् नमिक् ।
 गृहोपकरणं यत्तवा तयोवैवाभितो लिखेत् ॥
 पीतं यदासमाप्यन्तु सप्तदशोत्तममिक् ।
 ततस्तौ पूजयेन्नागौ खात्वा भर्तृपरा हविः ॥
 गन्धमाख्यनमस्कारधूपदीपाद्यसम्पदा ।
 इच्छुषे च विकारैर्व्या विशेषेण च पूजयेत् ॥

तयोस्तु पूजनं कृत्वा पश्येत्तुसिकतामयं ।
 शुक्लांशुं न्यसेत् चीरं तच्चदद्याद्विजातये ॥
 ततश्च नक्तं भुञ्जीत तिलतैलविवर्जितं ।
 अग्नयोः पूजनादद्यात् तु गृहभङ्गस्तु नाप्नुयात् ॥
 पतिव्रता महाभागा दीर्घमाप्नोति जीवितं ।
 पूर्णमिन्दुं ततोभ्यर्च्य सौभाग्यं महदाप्नुयात् ॥
 इष्टग्रहमवाभ्यर्च्य नक्षत्रमथ वा नृप ।
 तस्याः क्षेममवाप्नोति कामश्च यदुनन्दन
 मासनामसुनक्षत्रं पूर्णमायोगपञ्च वा ।
 पूजयित्वा तदाराजन् सौभाग्यं महदाप्नुयात् ॥
 नृसिंहप्रतिवक्षन्तु पूर्णचन्द्रं समर्चयेत् ।
 नरोमाह्वयन् राजन् सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥
 एकां वा मातरं राजन् कामानाप्नोत्यभीष्टितान् ।
 वानस्पत्यमवाप्नोति पूजयित्वा वनस्पतीन् ॥
 इति विष्णुधर्मीकं नानाफलपूर्णमाव्रतं ।

आवृण्वन् पीर्णमास्याश्च सोपवासो जितेन्द्रियः ।
 प्राणायामशतं कृत्वा मुच्यते सर्वकिल्बिषैः ॥
 इति ब्रह्मपुराणोक्तं पूर्णमाव्रतं ।

चन्द्रव्रतं पञ्चदशां शुक्लायां नक्तभोजनं ॥
 दश पञ्च च वर्षाणि व्रतमेतत् समाचरेत् ।

अश्वमेधसहस्राणि राजसूय गतानि च ॥
इष्टानि तेन राजेन्द्र एतद्रुतं समाचरेत् ।
इति वाराहपराशीर्क्तं चन्द्रव्रतं ।

— (१०) —

ईश्वर उवाच ।

ज्यैष्ठ्यस्य पौर्णमास्यान्तु दम्पती यस्तु भोजयेत् ।
परिधाय यथा शक्त्या दौर्भाग्यैर्मुच्यते नरः ॥
गन्धपुष्पोपहारैश्च पौर्णमास्यान्तु योऽर्चयेत् ।
ब्राह्मण्यं जायते तस्य सप्तजन्मनि सुन्दरि ॥
इति प्रभासखण्डोक्तं ब्राह्मण्यावाप्तिव्रतं ।

इति श्रीमहाराजाधिराजश्रीमहादेवस्य सकलकरणा-
धीश्वरसकलविद्याविशारदश्रीहेमाद्रिविर-
चिते चतुर्वर्गचिन्तामणौ व्रतखण्डे
पूणिमाव्रतानि ।

—

अथ विंशोऽध्यायः ।

अध्यामावास्त्रावतानि ।

येनात्मनं बलिभिरनिग्रन्तर्पितो नागलोको*
राक्षसिष्टमिव शशिकलां नन्दमानो न भुङ्क्ते ।
सोऽयं साधुहिजपरिहृतः शूरिहेमाद्रिरस्मि-
न्नामावास्त्रावतसमुदयं स्वातन्त्र्यात्प्राप्तिकीर्त्तिः ॥

अगस्त्य उवाच ।

भगवंस्त्वत् प्रसादेन श्रुतोऽयं व्रतविस्तरः ।
अर्होदयन्तु मे ब्रूहि दुर्लभं गणराजरे ॥
जीवितं प्राणिनां पुण्यं यदिचेद्दत्तं प्रभो ।
कथं कार्यं कृते किं स्यात् फलं कथय वरमुख ॥
श्रूयतां पुण्ययोगोऽयं दुर्लभोऽर्होदयाजयः ।
तिर्थस्नान्यदेवानां दुष्प्राप्यं सर्व्वकामदं ॥
मघामायां व्यतीपात आदित्ये विष्णुदैवते ।
अर्होदयं तदित्याहुः सहस्रार्कयज्ञैः समं ॥
पुराकृतं वमिष्ठेन जामदग्नेन सुव्रत ।
सनकाद्यैर्मनुजैश्च बहुभिर्बहुभिः श्रुतैः ॥
अथैः शतसहस्रैश्च दृष्टं भवतु कुम्भजः ।
दानानां यज्ञ तीर्थानां फलं येन कृतं भवेत् ॥

* अथर्होदय इति पुस्तकाखरे पाठः ।

जसागराधरा तेन समहीपसमन्विता ।
 दत्ताष्टात् सत्त्वभावेन येन चर्हीदयं कृतं ॥
 मानसादिषु तीर्थेषु यत्पुण्यं कान्दानतः ।
 गङ्गामग्राप्रयागे च पुष्कराक्षीचये तथा ॥
 तत्सर्वं वा न वा विप्र व्रतेनानेन कुञ्जज ।
 अश्वमेधायुतं श्रेष्ठमिष्टार्णवमववेत् ॥
 अर्घोदयकृतं यैस्तु विधिदृष्टेन कर्कषा ।
 बाजि वज्रं गृहे लब्धौः सन्ततिशानपायिनी ॥
 आयुर्यशोहि विपुलं व्रतकर्ता फलं लभेत् ।
 इन्द्राग्नियमलोकेषु निर्गृहीतामपायतेः ॥
 वायोः कुवेरशेषस्य लोकेषु सुकृती प्रभुः ।
 वसेच्चन्द्रार्कलोकेषु लोकपालैश्च सेवितः ॥
 गोकोटिदानाद्यत् पुण्यं क्षेत्रतीर्थनिवासिनां ।
 अर्घोदयजपुण्यस्य कलां नार्हन्ति बौद्धर्षी ॥
 भूर्लोकधिपतिश्चैव भुवर्लोकधिपस्तुतः ।
 स्वर्लोकेगो जनानाञ्च तथोर्लोकस्यचेन्नरः ॥
 महर्लोके वसेन्नित्यं यावदिन्द्रायतुर्दश ।
 ततो हिरण्यगर्भस्य पुरुषो व्रतकारकः ॥
 तस्य लोकाधिपः साक्षी लोकानां पुरुषोव्ययः ।
 अर्घोदयप्रसादेन ब्रह्मलोके वसेत्ततः ॥
 तथा वानेन विष्णुत्वं ब्रह्म रुद्रस्तथा भवेत् ।
 शिव लोको गुह्यैः पूज्यो देवराजसमन्वितः ॥
 वसेच्छाक्तेषु मानेन व्रतस्यास्यप्रभावतः ।

ततो विष्णुस्वरूपेण त्रैलोक्याधिपतिर्भवेत् ॥
 शङ्खचक्रगदाधारी वनमाली हरिः स्वयं ।
 व्रतप्रभावाद्ब्रह्मीयो देवो नारायणी भवेत् ॥

अगस्त्य उवाच ।

स्कन्द केन विधानेन कर्त्तव्यं व्रतसुत्तमं ।
 अर्होदय मनुष्याणां जीवितं दुर्लभं भव ॥

स्कन्द उवाच ।

कृते कृतं वमिष्टेन चेतायां रघुणा कृतं ।
 हापरे धर्मराजेन कलौ पूर्णोदरेण च ॥
 अन्येर्देवमनुष्येयं दैत्यैश्च द्विजसत्तम ।
 कृतमर्होदयं सम्यक् पूर्णकामफलप्रदं ॥
 माघमासे कृष्णपक्षे पञ्चदश्यां रजोर्दिने ।
 वैष्णवेन च चतुर्क्षणे व्यतीपाते सुदुर्लभे ॥

वैष्णवर्चं श्रवणं ।

पूर्वाह्णे मङ्गले स्नात्वा शुचिर्भूत्वा समाहितः ।
 सर्वपापविशुद्ध्यर्थं नियमस्थो भवेन्नरः ॥
 त्रिदैतल्यव्रतं देवाः करिष्ये भक्तिमुक्तिदं ।
 भवन्तु सन्निधौ मे दय त्रयो देवास्तयो ग्नयः ॥

इति नियममग्नयः ।

ब्रह्मविष्णुमहेशानां सौवर्णपलसंख्यया ।
 कर्त्तव्यार्चा तदर्हं न तदर्थेन द्विजोत्तम ॥
 शाखं शतत्रयं शम्भोद्रीशानां तिलपर्वतः ।

यन्त्ररच व्रद्धा ।

कर्त्तव्यो विष्णुरुद्रावह्निरः पूर्वोक्तिसंस्थया ।
 शय्यात्रयं ततः कुर्यादुपस्करममन्वितं ॥
 देवानां त्रयमुद्दिश्य कर्त्तव्यं भक्तिशक्तितः ।
 ब्रह्मविष्णुशिवप्रीत्यै दातव्यन्तु गवां त्रयं ॥
 हिरण्यभूमिधान्यादिदानं विभवसारतः ।
 दातव्यं त्रयोपेतं^१ ब्राह्मणेभ्यः प्रयत्नतः ॥
 मध्याह्ने तु नरः स्नात्वा शुचिर्मूत्वा समाहितः ।
 तिलपर्वतमध्यस्थं पूजयेत् देवतात्रयं ॥

आदौ ब्रह्मपूजा ।

नमो विश्वसृजे तुभ्यं^२ सत्याय परमेष्ठिने ।
 देवाय देवपतये यज्ञानां पतये नमः ॥
 श्रीं ब्रह्मणे नमः पादौ हिरण्यगर्भाय नम ऊरुभ्यां ।
 धात्रे नमो जानुभ्यां जङ्घाभ्यां परमेष्ठिने नमः ।
 वेप्रसे नमो गुह्ये पद्माङ्गवाय वै नमो ऽस्ती ।
 हंसवाहनाय नमः कटिदेशे शतानन्दाय पञ्चमि नमः ।
 सावित्रीपतये नमोनमोस्तु वाङ्मय । श्रीं ऋग्वेदाय नमः पूर्व-
 वक्त्रे यजुर्वेदाय नमो दक्षिणवक्त्रे । सामवेदाय नमः बाधम-
 वक्त्रे । अथर्ववेदाय नमः उत्तरवक्त्रे । श्रीं तत्त्वत्रयाय नमः
 गिरसि । कपोलो श्रीं कपालाय नमः ।

१ त्रयोपेतमिति पुस्तकालये पाठः ।

२ पूर्वमिति पुस्तकालये पाठः ।

ततः कार्य्या लोकपालपूजा विप्रैः स्वमन्त्रतः ।

हिरण्यगर्भं पुरुषप्रधानाव्यक्तरूपवत् ॥

प्रसीद समुत्थो भूत्वा पूजां गृह्ण नमोऽस्तु ते ।

ब्रह्मप्रार्थनमन्त्रः ।

नारायण जगन्नाथ नमस्ते गरुडध्वज ।

पौताम्बर नमस्तुभ्यं जनादेन नमोऽस्तु ते ॥

अनन्ताय नमः पादौ विश्वरूपाय ते नमः मुकुन्दाय
नमो जानुभ्यां जरुभ्यां गोविन्दाय नमो जङ्घाभ्यां । गुह्ये
प्रदुम्नाय नमः पद्मनाभाय नमो नाभौ । भुवनीदराय नमः
उदरे वत्समि कोस्तुभवत्समे नमः । चतुर्भुजाय नमो बाह्वु
वदने विश्वतोमुखाय नमः । नमः सहस्रशिरसे देवायानन्ताय
मौलौ ।

आदित्य चन्द्रनयन दिग्वाहो दैत्यसूदन ।

पूजां दत्तां मया भक्त्या गृहाण करुणाकर ॥

इति विष्णुप्रार्थनामन्त्रः ।

महेश्वर महेशान नमस्ते त्रिपुरान्तक ।

नमो जीमूतकेयाय नमस्ते वृषभध्वज ॥

ईशानाय नमः पादौ जङ्घाभ्यां चन्द्रशेखरः ।

जानुभ्यां पशुपतिर्देव जरुभ्यां शङ्करः स्मृतः ॥

उमाकान्ताय गुह्ये तु नाभौ वै नीललोहितः ।

उदरे कृष्णवाससे वक्षो नागोपवीतिने ॥

भोगिरूपाय वै बाह्वौ नीलकण्ठस्तु कण्ठगः ।

मुखे वै पञ्चवक्त्राय मौली चैव कपर्दिने ॥
अन्धकारे प्रमियात्मन् नमो लोकान्तकाय च ।
पूजां दत्तां मया भक्त्या गृह्णाण हृषभध्वज ॥

इति महेश्वरप्रार्थनमन्त्रः ।

इति पूजाक्रमः प्रोक्तो मन्त्रैरेतेः प्रयत्नतः ॥
आचार्यं पूजयेद्भक्त्या वस्त्रालङ्कारभूषणैः ।
हस्तमात्रा कर्णमात्रा पीठद्वयं कमण्डलुः ॥
श्वेतवस्त्रयुगं देयं ब्रह्मणे सर्व्वभूतये ।
पीतवस्त्रयुगं विष्णोः लोहितं शङ्करस्य च ॥
पञ्चामृतेन स्नपनं पूजनं कुसुमैः स्तकैः ।
कमले स्तनमोपलेर्ज्ज्वलपत्रैरखण्डितैः ॥
तत्कालमश्वेर्वाद्ध्यै, पूज्या देवा यथाक्रमं ।
यथागक्त्या प्रकृत्यं व्रतमेतत् सुदर्भम् ॥
जीवितं प्राणिनामेतदनित्यं निवितं यतः ।
अथ व्रताद्ब्रह्मेभ्य विधानं शृणु तत्त्वतः ॥
देवतात्रयमुद्दिश्य यास्तदृष्टेन कर्मणा ।
प्रजापते विश्वरूपाय रुद्राय च नमो नमः ।
इत्यनेनैव मन्त्रेण तद्धिं संस्थाप्य भक्तितः ।
ततो होमं प्रकुर्व्वीत यथाविभवमश्वम् ॥

अग्नये प्रजापतये स्वाहा । अग्नये विष्णवे स्वाहा ।

अग्नये रुद्राय स्वाहा । एवं विष्णवे होमः १ । प्रजापते नत्वेदेतान्या-
न्येन मन्त्रेण प्रजापतये । इदं विश्वरिति विष्णवे । चाम्यकमिति
महादेवाय । इत्येतैर्मन्त्रैर्धृतहोमः २ ।

व्रतगणे विश्वे महादेवाय स्वाहेति पूर्णाहुत्या तत्त्वान् कामान्
वाप्नोति प्राप्नोति होमोव्रताङ्गहोमः ।

अथ होमावसानेषु गात्रं दद्यात्पयस्विनीं ।
स्वर्णशृङ्गीं रौप्यसुरां घण्टाभरणभूषितां ॥
ताम्रपृष्ठीं कांस्यदोहां सर्वोपस्कारसंयुतां ।
सदक्षिणां सुशीलाञ्च आचार्याय निवेदयेत् ॥
तेन दत्तं हुतं जप्तमिष्टं यज्ञैः सहस्रधा ।
कृतकृत्यो भवेदिष्टं व्रतस्यास्य प्रभावतः ॥
एतत्सर्वं मयाख्यातं दुर्लभं व्रतमुत्तमं ।
अर्होदयं यथा दृष्टं किमन्यत् श्रोतुमिच्छसि ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तमर्होदयव्रतं ।

—(०००)—

अमावस्यां निराहारः अष्टमेकं नियन्त्रितं ।
शूलपिष्टमयं कृत्वा वर्षान्ते विनिवेदयेत् ॥
शिवाय राजतं पद्मं सोवर्णं कृतवर्षिकं ।
भक्त्या च विन्यसेत् मूर्ध्नि शेषं पूर्ववदाचरेत् ॥

१ एवंविधव्रतहोम इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

२ चवहोम इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

३ परिपूज्यतीति पुस्तकान्तरे पाठः ।

४ शङ्खमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

कामतोऽपि छतं पापं भ्रूणहत्यादिकञ्च यत् ।
 तत्कर्म शूलदानेन हत्वा नारीर्न संशयः ॥
 महापद्मविमानेन नरो नारीसमन्वितः ।
 युगकोटिशतं साधुं शिवलोके महीयते ॥
 पूर्ववदिति अहिंसा ब्रह्मचर्यं भूगयन पाषण्डानालापादिक-
 माचरेदित्यर्थः ।

ईशलोकादिलोकेषु भुक्त्वा भोगाननेकवा ।
 इह लोके क्रमात्प्राप्य यद्येष्टं पतिमाप्नुयात् ॥
 इति शिवधर्मीकृतं शूलदानव्रतम् ।

—०००(D)०००—

अगस्त्य उवाच ।

सर्गादौ ब्रह्मणा कृष्टास्तनूचुः पितरस्तदा ।
 हृत्तिबो धेहि भगवान् ब्रह्मावहित्तदेवम् ॥

ब्रह्मीवाच ।

अमावास्यादिना बीजस्तु तस्यां तिलकुशोद्वेजैः ।
 तर्पिता मानुषैस्तृप्तिं परां गच्छन्तु नान्यथा ॥
 तिला देवास्तथैतज्जानुषोच पिबभक्षितः ।
 चिराय तस्य बन्धुष्टा परं बन्धुन्तु मा चिरम् ॥
 तस्मादस्मान्निबो विद्वानेतत्कर्म समाचरेत् ।

इति वराह पुराणोक्तं पितृव्रतम् ।

—०००—

ब्रह्मोवाच ।

पितरः स्तुदितैः पिण्डैरिष्टाः कुर्वन्ति सर्वदा ।
 प्रजावृद्धिं धनं रक्षामायुषं वलमेव च ॥
 मूलमन्त्राः स्वसंज्ञाभिरङ्गमन्त्राश्च कीर्त्तिताः ।
 नम्यपुष्पोपहारैश्च यज्ञाग्र्यं विधीयते ॥
 पूजाश्राद्धेन श्राद्धेन कृतापि तु फलप्रदा ।
 आज्यधारासमिद्धिश्च दधिघ्नीरान्नमाक्षिकैः ॥
 पूर्वोक्तफलदो होमः कृतः शान्तेन चेतसा १ ।
 एतद्व्रतं वैश्वानरप्रतिपद्व्रतवद्वाख्येयं ।
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं पितृव्रतं ।

—००११००—

पुलस्त्य उवाच ।

वर्षमेकं भवेद्युगं पञ्चदश्यां पयोव्रतः ।
 पञ्चदश्यामित्यमावास्यायां पुराणान्तरसंवादात् ॥
 समान्ते आहज्जह्यात् २ वयं पञ्च पयस्विनीः ।
 वासांसि च पिषङ्गानि जलकुम्भयुतानि च ॥
 स याति वैष्णवं लोकां पितॄणां तारयेच्छतं ।
 जन्मान्तरे भवेद्राजा पयोव्रतमिदं कृतं ॥
 इति पद्मपुराणोक्तममावस्यापयोव्रतं ।

—०—

१ परमाज्ञेन वेतयेति पुलकान्तरे पाठः ।

२ अहवाद्यादिति पुलकान्तरे पाठः ।

३ भावयति पुलकान्तरे पाठः ।

मार्कण्डेय उवाच ।

प्रभास्वरा वर्हिषद अग्निस्वाप्तास्तथैव च ।
 क्रव्यादाद्यैव भूताश्च आज्यपाच्य सुकालिनः ॥
 पूज्याः पितृगणा राजन् सोपवासेन नित्यशः ।
 चैत्रे कृष्णारक्षारभ्य पञ्चदश्यां नराधिप ॥
 श्राद्धन्तदङ्गि कुर्वीत यावत् संवत्सरं भवेत् ।
 गन्ध-मास्य-नमस्कार-धूप-दीपाश्चसम्पदा ॥
 संवत्सरान्ते दद्याच्च तथा धेनुं पयस्विनीं ।
 ब्राह्मणाय महाभाग पितृभक्ताय शक्तिः १ ॥

कृत्वा व्रतं वत्सरमेतदिष्टं

प्राप्नोति लोकान् स तथाच तेषां ।

तत्रोच्च कालं सुचिरं सुखी स्यात्

प्राप्नोति मोक्षं पुरुषप्रधानः २ ॥

इति विष्णुपुराणोक्तं पितृव्रतं ।

— ००० —

श्रीमार्कण्डेय उवाच ।

कृष्णपक्षे पञ्चदश्यां चैत्रादारभ्य यादव ।
 वङ्गिसंपूजनं कृत्वा गन्धमास्याश्चसम्पदा ॥
 तिलह्रीमन्तया कुर्यान्नान्धा वक्त्रेर्नराधिप ।
 संवत्सरान्ते दद्याच्च सुवर्णं ब्राह्मणाय च ॥

१ भक्ति इति पुस्तकालये पाठः ।

२ पुरुषप्रधान इति पुस्तकालये पाठः ।

कृत्वा व्रतं वत्सरमेतदिष्टं
 प्राप्नोति वित्तं सततं यशश्च ।
 धर्मं सतीरूपमनुत्तमञ्च
 कामान् यष्टेष्टान् पुण्यप्रधानः ॥
 इति विष्णुपुराणोक्तं बह्विव्रतं ।

— ००० —

मार्कण्डेय उवाच ।

अमावास्यान्तवेलायां सोपवासी नरोत्तम ।
 पद्मदये पूजयन्ति चन्द्रार्कविकराग्निगौ ॥
 आदित्यमष्टदलके शशिनं षोडशकरे ।
 आदित्यं सर्वरक्तेन चन्द्रं शुक्लेन यादव ॥
 मास्वादिना महाभाग होमयेत्तिलतण्डुलान् ।
 छतचीरयुतान् राजन् तद्यार्चयेद्यथाविधि ।
 व्रतान्ते ब्रह्मचन्द्राय कनकं२ प्रतिपादयेत् ॥
 रजतम्बा महाभाग य इच्छेद्भूतिमात्मनः ।
 कृत्वा व्रतं वत्सरमेतदिष्टं
 दद्याच्च दीपान् विधिवत् प्रभूतान्
 चान्द्रं पदं प्राप्य विवर्द्धतेसदः
 धनान्वितः स्यान्निदिवे इहैव ॥
 इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं चन्द्रव्रतं३ ।

१ तद्योर्मास्वादिना पुस्तकान्तरे पाठः ।

२ करकमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

३ चम्पकव्रतमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

भगवानुवाच ।

अमावस्यामनुप्राप्य ब्राह्मणाय कुटुम्बिने ।
यत् किञ्चित् वेदविदुषे दद्यादुद्दिश्य शङ्करं ॥
प्रोयतामीश्वरः सोमो महादेवः सनातनः ।
सप्तजन्मकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ॥
इति कूर्मपुराणोक्तममावास्याव्रतं ।

अमावस्यायां ब्रह्माणं समुद्दिश्य पितामहं ।
ब्राह्मणोक्षीन् समभ्यर्च्य मुच्यते सर्वपातकैः ॥

इति कूर्मपुराणोक्तममावास्याव्रतं ।
इति श्रीमहाराजाधिराज-श्रीमहादेवस्य-सकल-करणा-
धीश्वर-सकलविद्या-विशारद-श्रीहेमाद्रिविरचिते
चतुर्वर्गचिन्तामणौ व्रतखण्डे
अमावस्याव्रतानि ॥

अथ एकविंशोऽध्यायः ।



अथ नानातिथिव्रतानि ।
प्रत्येकमुक्तेषु तिथिव्रतेषु
सबद्धावकाशं पुनराददे तत् ।
हेमाद्रिरत्यन्तफलप्रदायि
नानातिथीनां व्रतवृन्दमाह ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

स्मरयामि ऋषीकेश यन्मोक्षं भवता मम ।
तत्सावित्रीव्रतं ब्रूहि प्रसादसुमुखो भव ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

कथयामि कुलस्त्रीणां महिम्नोर्वर्धनं परं ।
यथा चीर्णं व्रतं पूर्वं सावित्र्या राजकन्यया ॥
आसीन्महीन्द्रो धर्मात्मा सर्वभूतहिते रतः ।
पार्थिवोऽश्वपतिर्नाम पौरजानपदप्रियः ॥
सर्वशरोऽनपत्यश्च सत्यवाक् संयतेन्द्रियः ।
स सभार्यो व्रतमिदञ्चकारापत्यकाम्यया ॥
सावित्रीति प्रसिद्धं यत् सर्वकामप्रदायकं ।
तस्य तुष्टा तु सा देवी सावित्री ब्रह्मणः प्रिया ॥
भूर्भूवः स्वरितोत्पत्त्याः साक्षात्पुनिरिह स्थिता ।

कमण्डलुकरा देवी वरदा स्मितभाषिणी ॥
 उवाच दुहिता ह्येका तव राजन् भविष्यति ।
 तस्याः प्रसादादप्येतत्सर्वं तव समागतं ॥
 मन्त्राणां सा च वक्तव्या महाकीर्त्तिमती तु मा ।
 भविष्यति महाराज मा गोकं कर्तुमर्हसि ॥
 एवमुक्त्वा तु सा देवी जगामादर्शनं तदा ।
 कालेन बहुना जाता दुहिता देवरूपिणी ॥
 सावित्रीप्रीतये वृत्त्या सावित्रा पूजया तथा ।
 आदिष्टा चैव सावित्रा सावित्रीसदृशी यतः ॥
 सावित्रीत्येवनामास्याश्चक्रुः विप्रास्तथापि सा ॥
 सावित्री विग्रहवती१ व्यवर्द्धत पितुर्गृहे ।
 काले बहुतिथे याति यौवनस्था बभूव सा ॥
 सा सुमध्या पृथ्व्याणी प्रतिमां काञ्चनीमिव ।
 प्राप्तेयं देवकन्येति संभ्रमं मेनिरे जनाः ॥
 सा तु पद्मपलाशाक्षी प्रज्वलन्तीव तेजसा ।
 चचार सापि सावित्रीव्रतं तद्गुरुणोदितं ॥
 भयोपोष्य शिरः स्नाता सम्यक् सम्पूज्य देवताः ।
 हुत्वाग्निं विधिवद्विप्रान् वाचयित्वेन्दुपर्ष्वणि ॥
 तेभ्यः सुमनसो मूर्ध्ना प्रतिगृह्य नृपात्मजा ।
 सखीपरिवृताभ्येत्य२ देवश्रीरिव रूपिणी ॥

१ सात्रीकविप्रहवतीति पुस्तकान्तरे पाठः ।

२ भृत्यैरिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

साभिवाद्य पितुः पादौ विनीता चारुहासिनी ।
 कृताञ्जलिर्बरारोहा नृपतेः पार्श्वतः स्थिता ॥
 तां दृष्ट्वा यौवनप्राप्तां स्नां सुतां देवरूपिणीं
 उवाच राजा संमन्त्रा स्मृत्यर्थं मह मन्त्रिभिः ॥
 पुत्री प्रदानकालास्ते न च कथिदृणोति मां ।
 विचारयन् १ पश्यामि वरंतुल्यमिहात्मनः ॥
 तथापि देयामि मया दोषः स्यादन्यथा मम ।
 देवादीनां तथा वाच्यो न भवेयं तथा कुरु ॥
 पठ्यमानं मया पुत्रि धर्मगास्त्रिषु विद्युतं ।
 पितुर्गृहे तु या कन्या रजः पश्यत्यसंस्कृता ॥
 ब्रह्महत्या पितु स्तस्य सा कन्या वृषलो मृता ।
 अतोऽत्र प्रेषयामि त्वां कुरु पुत्रि स्वयम्बरं ॥
 इदं अनुमतामि त्वं शीघ्रं गच्छ च मा चिर ।
 देवादीनां यथा वाच्यो न भवेयं तथा कुरु ॥
 एवमस्त्विति सावित्री प्रोक्ता शीघ्रं विनिर्यगौ ।
 म्यन्दनेन महार्हेण मन्त्रिभिः परिवारिता ॥
 तपोवनानि रम्याणि राजर्षीणां जगाम सा ।
 मान्यानां तत्र ब्रह्मणो कृत्वा पादाभिवन्दनं ॥
 ततो बभ्राम तीर्थानि पर्वतांश्च वनानि च ।
 देशांश्च विविधान् रम्यानाश्च मान् सुमनोहरान् ॥
 एकस्मिन्नाश्रमपदे कृतकृत्या बभूव सा ।
 शरयित्वा वरं सा तु आजगाम स्वमालयं ॥

सावित्री मन्त्रिमहिता परितुष्टेन चेतसा ।
तत्र पश्यति देवर्षिं नारदं पुरतः पितुः ॥
आसीनमासने विप्रं प्रणम्य स्मितभाषिणी ।
कथयामास तत्तत्त्वं येनारण्यं गतागता ॥

सावित्र्यावाच ।

आमोक्षात्वेपु धर्मात्मा क्षत्रियः पृथिवीपतिः ।
द्युमत्सेन इति ख्यातो देवादम्भो बभूव मः ॥
तस्याप्यभवद्भार्या वै रुक्मिणी नाम सुन्दरी ।
तस्य प्रतिहृतं रान्यं वैरिभेदेन योगतः ॥
स बालया तया सार्धं भार्यया प्रस्थिता वनं ।
स तस्य बलसंयुक्तं पुत्रः परमभार्यामिकः ॥
सत्यवान् नामरूपाढ्यो भर्त्तति मतमा वृतः ।

नारद उवाच ।

अहो कष्टमहो कष्टं साविति किमिदं कृतं ।
कृतस्ते बालभावादयङ्गुणवान् सत्यवान् नृपः ॥
सत्यं वदत्यसौराजा सत्याश्रमेन स मृतः ।
नित्यमश्रवाः प्रियास्तस्य करोत्यश्वान् स मृगमयान् ।
चित्रेऽपि लिखयत्यश्वान् चित्राश्रमेन कथ्यते ॥
किं वर्ण्यो रन्ति देवस्य भक्त्या दानगुणैः समः ।
ब्राह्मणः सत्यवाग्दत्तः शिविगौशेनरो यथा ॥
ययातिरिव चोदारः सोमवत् प्रियदर्शनः ।
अश्विनाविव रूपेण द्युमत्सेनसुतो बभौ ॥

एको दीघोऽस्ति नान्योऽसावद्यप्रसृतिसत्यवान् ।

संवत्सरेण क्षीणायुर्देहत्यागं करिष्यति ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

नारदादेतदाकर्ण्य दुहितुःप्राह पार्थिवः ।

पुत्रि सावित्रि गच्छान्यं वरं वरय सत्पतिं ॥

संवत्सरेण सोऽल्पायुर्देहत्यागं करिष्यति ।

सावित्र्युवाच ।

सकृज्जल्पन्ति राजानः सकृज्जल्पन्ति पण्डिताः ।

सकृत्कन्या प्रदीयन्ते त्रीण्येतानि सकृत्सकृत् ॥

दीर्घायुरथवाल्पायुः सगुणो निर्गुणोऽपि वा ।

सकृद्भृतो मया भर्ता न द्वितीयं हृणोम्यहं ॥

मनसा निश्चयं कृत्वा ततो वाचाभिधीयते ।

क्रियते कर्मणा पश्चादेषधर्मैः सनातनः ॥

नारद उवाच ।

यद्येतदिष्टं दुहितुस्ततः शीघ्रं विधीयतां ।

अविघ्नमस्तु सावित्रि भद्रन्तव करिष्यति ॥

एवमुक्त्वा खमुत्पत्य नारदस्त्रिदिवं ययौ ।

उत्पाद्य दुःखमत्तुलं तस्य राज्ञो युधिष्ठिर ॥

राजापि दुःखसंविम्विशिरंध्यानपरोऽभवत् ।

अहोऽतिकष्टमुत्पन्नमपारं मादृगात्मनां ॥

एतत् दुःखमहो दृष्ट्वा वरमेषानपत्यता ।

सत्यमुक्तं पुराणैः कन्या दुःखैकभाजनं ॥

देवैर्यदुक्तं तत्सर्वं व्यलोकं प्रतिभाति मे ।
 एवं संशोष्य बहुधा दधावात्मानमात्मना ॥
 देवीं संस्मृत्य सावित्रीं यया दत्तो वरः पुरा ।
 जगौ स्वदुहितुः सर्वं वैवाहिकमथाकरोत् ॥
 स्वयं गत्वा तु सामग्रा वनं मुनिनिषेवितं ।
 शुभे मुहूर्ते पार्श्वस्थे ब्राह्मणेर्वेदपारगैः ॥
 समर्थयित्वा कन्यां तां दत्त्वा पूपांश्च पुष्कलान् ।
 उवाचेदं महाभागा व्यथितेनान्तरात्मना ।
 द्युमत्सेन महाभाग शृणु मे परमम्बचः ।
 इयं मे दुहितातीववक्त्रभा जीवितादपि ॥
 भर्ता समुचितो ह्यस्याः सत्यवान् सत्यवक्त्रभः ।
 त्वमप्यस्याः समुचितः श्वशुरो धर्मवक्त्रभः ॥
 अतोऽपराधाः क्षन्तव्याः वालेयं राज्यलाभिता ।
 यदाभीष्टं च जामातुर्युषयोर्दभीषितं ॥
 तत्तदाख्येयमस्माकं स्वस्ति तेऽतु व्रजाम्यहं ।

श्रीकृष्ण उवाच ।

इत्यामन्त्र्य गतो राजा नारदीक्षं व्यथान्वितः ।
 सावित्रापिच तज्जव्धा भर्तारं मनसेषितं ॥
 मुमुदेऽतीव तन्वक्त्री देयं प्राप्येव पुण्यकृत् ।
 एवं तत्राश्रमे तेषां तदा निवसतां सतां ॥
 कालस्तत्पश्यतां कश्चिदतिचक्राम भारत ।
 सावित्रास्तु शयानायाचिन्तयन्त्वा दिवानिशं ॥
 नारदेन यदुक्तमहृदयावापसर्पति ॥

ततः काले बहुतिथे व्यतिक्रान्ते कदाचन ।
 प्राप्तःकालोहि मर्त्तव्यं यच्च सत्यवता नृप ॥
 प्रीष्ठपदे सिते पक्षे हादृश्यां रजनौमुखे ।
 गणयन्त्यास्य सावित्रा नारदोक्तं वचो हृदि ॥
 चतुर्थेऽहनि मर्त्तव्यमिति सञ्चिन्त्य भामिनो ।
 व्रतं त्रिरात्रमुद्दिश्य सावित्रास्थं महाफलं ॥
 उपोष्य संस्थिता साध्वो सावित्री सा पतिव्रता ।
 ततस्त्रिरात्रं निर्वर्त्य स्नात्वा सन्तर्प्य देवताः ॥
 श्वय्यूश्वशुरयोः पादौ ववन्दे चारुहासिनी ।
 अथ प्रतस्थे परशुं गृहीत्वा सत्यवान्वनं ।
 सावित्रापि च भर्तारं गच्छन्तं पृष्ठतोऽन्वयात् ॥
 वार्यमाणापि सा भर्ता वृद्धाभ्याञ्चाभिभाषिता ।
 ऊचतु स्तौ च मा भद्रे गच्छ कण्टकिनं वनं ॥
 सुकुमारासि कल्याणि लालिता पृथिवीभृता ।
 श्वापदाश्वापदैर्यातु कथं शक्यसि तदनं ॥
 उपवासास्तयस्तेऽद्य तस्माद्गृहं सुमध्यमे ।

सावित्रावाच ।

नैष धर्मो वरस्त्रीणां यद्वर्त्तरि वृभुक्षिते ॥
 स्वयमेव च भोक्तव्यमित्याहर्हर्षदर्शनः ॥
 अपरं कौतुक मेऽस्ति वनस्यास्य प्रदर्शने ।
 भर्ता सह प्रयास्यामि सहाया स्वामिनोऽपि च ॥

युष्मत्पादप्रमदिन सा निषेधं करिष्यथ ।
 सती ज्ञात्वा च सा बाला जगामाथ पतिम्रवा ॥
 सावित्रानुपदं भर्तृर्वने तस्मिन् मनोरमे ।
 गत्वासी दूरमध्वानं जयाहाय फलादिकं ॥
 समिवकुण्डे कसुमं भार्यया स वदन् प्रियं ।
 काष्ठानि शुक्लान्यादाय काष्ठभारमकल्पयत् ॥
 काष्ठं कुठारेण तथा पाटयामास लीनपा ।
 अथ पाटयतस्तस्य जाता गिरसि वेदना ॥
 ततः संबल्य तत्सर्वं वटच्छायामुपाश्रितः ।
 सत्यवान् वेदनाक्रान्तः किञ्चिद्वर्णितुमानसः ॥
 वटपात्रामवष्टभ्य सत्यवान् प्राह गदगदं ।
 सावित्रि पश्य गिरसि वेदना मां प्रवाभते ।
 न च किञ्चित् प्रवक्ष्यामि भ्रमत्येव हि मे मनः ।
 तवीकङ्के सगन्तावत् स्वमुमिच्छामि सुन्दरि ॥
 स्थितमस्य महाबाहो सावित्री प्राह दुःखितः ।
 पश्चादपि गमिष्यावः साधम समनोहरं ॥
 यावदुत्सङ्गं कृत्वा गिरयास्ते महीतले ।
 तावत् करालवदनाः शतशोऽपि महस्रुः ॥
 आजग्मृमदताथ रौद्रायातिभयङ्कराः ।
 न शेकुर्दृष्टिपतेऽस्याः सावित्र्या ध्यातुमलिके ॥
 गत्वाचचक्षुस्तत्सर्वं सावित्र्यास्ते तु पश्यत ।
 दृष्टिपातेन नाम्नाभिः शक्यतेऽस्याः प्रवाधिनः ।
 दहतीव च नो देहं दृष्टिपातेन सा मलौ ।

तत् स्वयं याहि नोस्माऽभिः साध्यते सत्यवान् कश्चित् ॥
 इत्याकर्ण्य यमः कीपादुत्थायाथ वरासनात् ।
 आरुह्य महिषं रौद्रं रौद्रः प्राणहरो बली ॥
 आजगाम त्वरायुक्तो यत्रास्ते सा पतिव्रता ।
 सावित्रापि च सन्धस्ता वीक्ष्यमाणा इतस्ततः ॥
 सावधाना कथं कीऽद्य भर्तारं मम नेष्यति ।
 तावद्दर्शं सा वाला पुरुषं कृष्णपिङ्गलं ॥
 किरोटिनं पीतवस्त्रं साक्षात् सूर्यमिवोदितं ।
 तमुवाचाथ सावित्री प्रणम्य मधुराक्षरं ॥
 कस्वन्देवोऽथ दैत्यो वा मान्धर्षितुमुपागतः ।
 न चाहं केनचित्कृत्या स्वधर्मादवरोपितुं ॥
 प्रष्टुं वा पुरुषश्रेष्ठ दीप्ताम्बुजिगिखामिव ॥

यम उवाच ।

यमः संयमनयाहं सर्वभूतमयङ्कुरः ।
 क्षोणायुरेष ते भर्ता सन्निधौ ते पतिव्रते ॥
 न शक्तः किङ्करैर्जेतुं ततोऽहं स्वयमागतः ।
 एवमुक्ता सत्यवतः शरीरात् पाशसंयुतं ॥
 अङ्गुष्ठमात्रं पुरुषं निष्कर्ष्य यमो बलात् ।
 अथ प्रयातुमारभे पन्थानं पितृसेवितं ॥
 सावित्रापि वरारोहा कृत्वा पादेन मङ्गलं १ ।
 रक्षार्थं भर्तृकायस्य यथावनुपदन्ततः ॥

पतिव्रतत्वादशान्ता ध्यायमाना निजं पतिं ।

तच्चिन्ता तद्वतप्राणा तामुवाच यमस्तदा ॥

निवर्त्य गच्छ सावित्रि सुदूरं त्वमिहागता ।

एष मार्गो विशालान्ति न केनाप्यनुगम्यते ॥

सावित्र्यावाच ।

न श्रमो न च मे ग्लानिः कदाचिदपि जायते ।

भर्तारमनुगच्छन्तास्तव शिष्टस्य सन्निभौ ॥

सतां सन्तो गतिर्नान्या स्त्रीणां भर्ता सदा गतिः ।

वेदा वर्णाश्रमाणाञ्च शिष्याणाञ्च गतिर्गुरुः ॥

सर्वेषामेव जन्तूनां स्थानमस्ति महीतले ।

मुक्ता भर्तारमेकन्तु स्त्रीणां नान्यः समाश्रयः ॥

एभिरन्यैः समुचितैर्वीक्ष्यैर्धर्मार्थसंयुतैः ।

तोषितो धर्मराजस्तु सावित्रीमिदमब्रवीत् ॥

तृष्टोऽस्मि तव भद्रे ऽथ वरान् वरय सुव्रते ॥

सा च वव्रे वरान् पञ्च विनयावनता सती ।

चक्षुःप्राप्तिस्तथा राज्यं श्वशुरस्य महात्मनः ॥

जीवितञ्च तथा भर्तुर्धर्मप्राप्तिञ्च शाश्वती ।

पितुः पुत्रगतञ्चैव तथा च शतमात्मनः ॥

धर्मराजो वरं दत्त्वा प्रेषयामास तान्ततः ।

आजगामाथ सावित्री न्यग्रोधविटपस्तथा ॥

कृत्वोत्सङ्गं शिरस्तस्य पूर्व्ववन्निषमाद सा ।

गात्रसंवाहनं चक्रे भर्तुः गात्रस्य भारत ॥

उत्थितचेतनां प्राप्य नीरुक् प्राहेदमादरात् ।
 कथं न बोधितो भद्रे कालोऽतीव गतो मम ॥
 किं वक्ष्यति हि मे तातः किञ्च माता च दुःखिता ।
 विरुद्धं ह्यसंजातं कालोऽतीव गतो वने ॥
 विहाय मातापितरौ कालो न क्वापि मेऽत्यगात् ।
 इति मत्वा विरुध्येते कृतं नेह प्रबोधनं ॥

सावित्र्यावाच ।

कथं त्वां बोधयाम्यत्र पीडितन्तु शिरोरुजा ।
 मम नात्र विलम्बोऽभूदकार्येण तवामघ ॥
 प्रहस्योत्थाय सावित्री जग्राह शिरसेभ्यनं ।
 समित्कुशादिकं साथ जग्मतुस्तौ स्वमायमं ॥
 ततः पित्रा स्वनेत्राभ्यां दृष्टौ तौ परया मुदा ॥
 प्रालिङ्ग्य मूर्ध्नायात्राय पुत्रमङ्गे निवेश्य सः ।
 उवाच दिष्ट्या पश्यामि सभार्यस्त्वां समागत ॥
 विलम्बकारणं दृष्टः समाचष्टे यथातथा ।
 निदितावोऽलिसंक्षुब्धः पूजयामास तां सत्तो ॥
 अवाप २ पूर्वजैर्भक्तं राज्यं निहतकण्ठकं ।
 द्युमत्सेनो महाभाग इयाज क्रतुभिस्तदा ॥
 ततोऽनृपविरासाद्य पुत्रानात्मगुणाधिकान् ।
 सावित्र्या चेष्टितं ज्ञात्वा जामातुर्जीवित तथा ॥
 राज्यप्राप्तिं च विपुलां परां मुदमवाप सः ।

१ ज्ञात्वा नेह प्रबोधनमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

२ आवाप्येति पुस्तकान्तरे पाठः ।

सावित्र्याख्यानकमिदं सर्वपापप्रणाशनं ॥
 अवैधव्यप्रदं स्त्रीणां स्वर्गमीक्षप्रदायकं ।
 सुखसौभाग्यदं पार्थ प्रातर्जप्यमिदं सदा ॥
 भाद्रपदे पौर्णमास्यामाशु चीर्णं व्रतं त्विदं ।
 माहात्म्यमस्य नृपतेः कथितं सकलं मया ॥
 युधिष्ठिर उवाच ।

कौटुम्भं तद्धतं कृष्ण सावित्र्या यदनुष्ठितं ।
 तस्मिन् भाद्रपदे मासि विधानं तस्य शंस मे ॥
 का देवता व्रते तस्मिन् को मन्त्रः किं फलं विभो ।
 एतदाख्याहि मे नाथ न हि तृप्यामि माधव ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

श्रूयतां पाण्डवश्रेष्ठ सावित्रीव्रतमादरात् ।
 कथयामि यथा चीर्णं तथा सत्या युधिष्ठिर ॥
 त्रयोदश्यां भाद्रपदे दन्तधावनपूर्वकं ।
 त्रिरात्रं नियमं कुर्यादुपवासस्य भक्तितः ॥
 अगता च त्रयोदश्यां नक्तं कुर्याज्जितेन्द्रिया ।
 अयाचितं चतुर्दश्यां पौर्णमास्यामुपोषणम् ॥
 नित्यं स्नात्वा महानद्यां तडागे निर्भरेऽपि वा ।
 विशेषतः पूर्णमास्यां स्नानं सर्वपद्मज्जलैः ॥
 गृहीत्वा बालुकां पात्रे प्रस्थमात्रां युधिष्ठिर ।
 अथवा धान्यमादाय यवशालितिलादिक ॥
 ततोवंशमये पात्रे वस्तयुक्तेन वीष्टते ।
 सावित्रीप्रतिमां कृत्वा ब्रह्मणश्चैव शोधनं ॥

सौवर्णीं सृण्वीं वापि स्वशक्त्या रोष्यनिर्मितां ।

ब्रह्मणोरूपनिर्माणं पूर्वमभिहितं वेदितव्यं ।

रक्तवस्त्रयुगं दद्यात्सावित्र्या ब्रह्मणः सितं ॥

सावित्रीं ब्रह्मणासार्द्धमेवं भक्त्या प्रपूजयेत् ।

गन्धैः पुष्पैश्च नैवेद्यैर्दीपकैर्मोदकैः शुभैः ॥

पूर्णं कोशातकैः पक्कैः कूष्माण्डैः कर्कटीफलैः ।

नारिकेलैश्च खर्जूरैः कपित्थैर्दाडिमैस्तथा ॥

बीजपूरैः सनारङ्गशाखोटैः पनसैस्तथा ।

धान्यकैर्जीरकैश्च द्यौर्गुण्डेन लवणेन च ।

विरूढैः समधान्यैश्च वंगपात्रप्रकल्पितैः ॥

हरिद्रया कण्ठसूत्रैः शुभैः कुङ्कुमकेसरैः ।

अवतारं करोत्येव सावित्री ब्रह्मणः प्रिया ॥

तामर्चयितुं मन्त्रेण सावित्रीं ब्राह्मणीं स्वयं ।

इतरासां तथा स्त्रीणां पुराणां विधिः स्मृतः ॥

ओं कारपूर्वके देवि वीणापुस्तकधारिणी ।

वेदमातर्नमस्तुभ्यमवैधव्यं प्रयच्छ मे ॥

रूपं देहि यशोदेहि सौभाग्यं देहि देवि मे ।

यथा प्रसन्ना सावित्र्या स्तथा मां पाहि पाविनि ॥

एवं संपूज्य विधिवज्जागरं तत्र कारयेत् ।

गीतबादित्वनिर्घोषैर्हृष्टनारीकदम्बकैः ॥

पुण्याख्यानैश्च विविधैस्तान् रात्रिमतिवाहयेत् ।

उत्सवेन नयेद्रात्रिं सावित्र्याश्च कथानकैः ॥

ततः प्रभातसमये रवावनुदिते सति ।

सावित्रीं ब्राह्मणं श्रेष्ठं नैवेद्यानि निवेदयेत् ॥
 अथ सावित्रिकल्पज्ञे सावित्र्याऽस्थानवाचके ।
 वेदज्ञे तु स्वहस्तस्ये दरिद्रे वा कुटुम्बिनि ॥
 मन्त्रेणानेन कौन्तेय प्रणम्य विधिपूर्वकं ।
 दूर्वाक्षततिलैर्मिश्रां पूर्वाशाभिमुखस्थितां ॥
 शुचिवस्त्रधरो विप्रश्चोकारस्वस्तिपूर्वकं ।
 सावित्रीयं मया दत्ता सहिरण्या हिरण्मयी ॥
 ब्रह्मणः प्रीणनार्थाय ब्राह्मणं प्रतिगृह्यतां ।
 एवं दत्त्वा द्विजेन्द्राय सावित्रीं तां युधिष्ठिर ॥
 नैवेद्यादि च तत्सर्व्वं ब्राह्मणस्य गृहं नयेत् ।
 स्वयं दशपदं गच्छेत्स्ववेश्म तत आविशेत् ॥
 गौरिण्यो भोजयेद्भक्त्या हविष्यान्नेन शक्तितः ।
 पुष्पैः कुङ्कुमसिन्दूरैस्ताम्बूलैः कण्ठसूत्रकैः ॥
 वासोभिर्भूषणैः^१ शक्त्या वित्तशठाविवर्जिता ।
 विसर्जयेत्तत्सुतांश्च सावित्रीप्रीयतामिति ॥
 वक्तव्यं ब्राह्मणैः सर्वैस्तुष्टैर्भक्तोत्तरे भृशं ।
 सावित्री वरदा तुभ्यं भवतां भावसुव्रतार ॥
 पुत्रा अष्टौ तथा भर्ता परमायुरनामयः ।^२
 पुत्रैः पौत्रैश्च संवत्स्रं वर्धतान्तव सत्कुलं ।
 व्रतञ्च सुव्रतं तत्तद्विधिनानेन नियतं ॥
 पञ्चदश्यां तस्मा ज्यैष्ठ्ये वटमूले महासती ।

१ वासाभिर्भूषणैरिति पुस्तकालये पाठः ।

२ भवन्तु तव सुव्रते इति पुस्तकालये पाठः ।

त्रिरात्रोपोषिता नारी विधिनानेन पूजयेत् ॥
 सार्धं सत्यवता सार्धं फलनैवेद्यदीपकैः ।
 वटावलम्बिनं कृत्वा काष्ठभारं युधिष्ठिर ॥
 रात्रौ जागरणं कृत्वा गीतनृत्यपुरःसरं ।
 ततः प्रभाते विधिना पूर्वोक्तेन नरोत्तम ॥
 तामपि ब्राह्मणे दद्यात् प्रणिपत्य क्षमापयेत् ।
 एतद्गतवरं पार्थ कथितं विधिवन्मया ॥
 याश्चरिष्यन्ति लोकेऽस्मिन् पुत्रपौत्रसमन्विताः ।
 भुक्ता भोगांश्चिरं भूमौ यास्यन्ति ब्रह्मणः पदम् ॥
 एतत् पुण्यं पापहरं धन्यं दुःस्वप्ननाशनं ।
 जपतां शृण्वतां चैव सावित्री व्रतमादरात् ॥
 स्मृत्यर्थवेदजननीं सहभर्तृकां यां
 सम्पूजयेत् कृतदिनत्रितयोपवासा ।
 सावित्रिवत् पिष्टकुलञ्च तथैव भर्तुं
 रुद्धृत्यया भुवि भुनक्ति चिरं सुखानि ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं ब्रह्मसावित्री व्रतं ।

स्कन्दपुराणात् ।

धर्मराजवरप्रदानानन्तरं सावित्र्यावाच ।

मदीयन्तु व्रतं देय भक्त्या नारी करिष्यति ।

भर्तुः सानिहिता साधो समस्तफलभाजना ॥

धर्मराज उवाच ।

नारी वा विधवा वापि अपुत्रा पतिवर्जिता १ ।
 मभर्तृकार मपुत्रा वा कार्यं व्रतमिदं शृणु ॥
 ज्येष्ठमासे तु संप्राप्ते पौर्णमास्यां पतिव्रता ।
 स्नात्वा चैव शुचिर्भूत्वा वटं सिच्य बद्धदकः ॥
 सूत्रेण वेष्टयेद्भक्त्या गन्धपुष्पाक्षतैः शभैः ॥
 नमो वैवस्वतायेति भ्रमशन्तोप्रदक्षिणं ।
 रात्रौ कुर्वीत नक्तञ्च अष्टमेकं समाहिता ।
 तथैव वटवृक्षञ्च पक्षे पक्षे च पूजयेत् ॥
 संप्राप्ते च पुनर्ज्येष्ठे लघुभुक् द्वादशीर्हयेत् ।
 दत्तानां धावनं कृत्वा नियमं कारयेत्ततः ॥
 त्रिरात्रं लङ्घयित्वा च चतुर्थे दिवसे ह्यहं ।
 चन्द्रायार्घ्यं प्रदत्त्वा च पूजयित्वा च तां मतीं ॥
 मिष्टान्नानि यथाशक्त्या पूजयित्वा हिजोत्तमान ।
 भोक्षेऽहन्तु जगडात्रि निर्विघ्नं कुरु मे मुने ॥

नियममन्त्रः ।

कृत्वा वंशमये पात्रे वाल्मीकाप्रस्यमेव च ।
 सप्तधान्यधृतं पात्रं प्रस्यैकेन हिजोत्तम ॥
 वस्त्रहयोपरि स्थाप्य सावित्रीं ब्रह्मणा मरु ।
 हेमीं कृत्वा तयोः प्रोत्थ्य त्रिरात्रमुपवासयेत् ॥
 न्ययोधस्य तले तिष्ठेद्यावच्चैव दिनचर्यं ।

१ पतिवर्जिता इति पञ्चकान्तर पाठः ।

१ चपञ्चका इति पाठान्तरः ।

सौवर्णीञ्चैव सावित्रीं सत्येन सह कारयेत् ॥
 रौप्यपर्यङ्कमारोप्य रथोपरि निवेशयेत् ।
 पलादर्वं यथाशक्त्या रथं रौप्यमयं शुभं ॥
 तथा च काष्ठभारे च वटेचैव सुविस्तरं ।
 एवञ्च मिथुनं कृत्वा पूजयेद्गतमत्सरा ॥
 वर्सुलं मण्डलं कृत्वा गोमयेन तपोधनः ।
 पञ्चाशतेन स्त्रपनं गन्धपुष्पोदकेन च ॥
 चन्दनागुरुकर्पूरैर्गन्धैर्वस्त्रविभूषणैः ।
 संपूज्य तत्र सावित्रीं मण्डले स्थापयेद्बुधः ॥
 पीतपिष्टेन पद्मञ्च अथवा चन्दनेन च ।
 न्यसेच्चैव ततोदेवीं कमले कमलासनां १ ॥
 अनेन विधिना स्थाप्य पूजयेद्गतमत्सरा ।

अथ सावित्रीपूजा मन्त्रः ।

—०००—

नमः सावित्रैः पादौ तु प्रसवित्रैः च जानुनी ।

कटिं कमलपत्राक्ष्यै उदरं भूतधारिणी ॥

श्रीं गायत्रै नमः कण्ठे शिरसि ब्रह्मणः प्रिया ।

अथ ब्रह्मसत्यवतोः पूजा ॥

पादोधात्रे नमः पूज्यो जरुज्येष्ठाय वै नमः ।

परमेष्टी च मेढ्रश्च अग्निरूपाय वै कटिं ।

वेधसे चोदरं पूज्य पद्मनाभाय वै हृदि ॥

१ तपोधन इति पुस्तकाकारे पाठः ।

१ कमलासना इति पुस्तकाकारे पाठः ।

कण्ठन्तु विधये पूज्य हिरण्यगर्भाय वै मुखं ।
ब्रह्मणे वै शिरः पूज्य सर्वाङ्गे विष्णवे नमः ॥
अभ्यर्च्यैवं क्रमेणैव शास्त्रोक्तविधिना नृप ।
ततो रजतपात्रेण अर्घ्यं दद्याद्दशोरपि ॥

सावित्रेय अर्घ्यमन्त्रः ।

ओंकारपूर्वकं देवि वीणापुस्तकधारिणि ।
देवमातर्नमस्तुभ्यमवैधव्यं प्रयच्छ मे ॥
पतिव्रते महाभागे वङ्गिजाते शचिन्मते ।
दृढव्रते दृढमते भर्तुष प्रियवादिनी ॥
अवैधव्यन्तु सौभाग्यं देहि त्वं मम सुव्रते ।
पुत्रान् पौत्रांश्च सौख्यञ्च गृहाणार्घ्यं नमो नमः ॥

अथ ब्रह्मसत्यवतोरर्घ्यमन्त्रः ।

त्वया सृष्टं जगत्सर्वं सदेवासुरमानुष ।
सत्यव्रतधरो देव ब्रह्मरूप नमोऽस्तु ते ॥

अथ यमस्यार्चनमन्त्रः ।

त्वं कर्मसाक्षी लोकानां शुभाशुभर्षिवेचकः ।
वैवस्वत गृहाणार्घ्यं धर्मराज नमोऽस्तु ते ॥
धर्मराज पित्रपते शान्तिभूतेषु जन्तुषु ।
कालरूप गृहाणार्घ्यमवैधव्यञ्च देहि मे ॥
गन्धपुष्पैः सनेवद्यैः फलैः कुङ्कुमदीपकैः ।
रक्तवस्त्रै रत्नहारैः पूजयेद्भक्तमक्षरा ॥

अथ सावित्रीप्रार्थन मन्त्रः ।

सावित्री ब्रह्मगायत्री सर्व्वदा प्रियभाषिणी ।
 तेन सत्येन मां पाहि दुःखसंसारसागरात् ॥
 त्वं गौरी त्वं शची लक्ष्मीस्त्वं प्रभा चन्द्रमण्डले ।
 त्वमेव च जगन्माता त्वमुडर वरानने ।
 सौभाग्यं कुलवृद्धिञ्च देहि त्वं मम सुव्रते ॥
 यन्मया दुष्कृतं सर्व्वं कृतं जन्मशतैरपि ।
 भस्मीभवतु तत्सर्व्वमवैधव्यञ्च देहि मे ॥

अथ ब्रह्मसत्यवतीः प्रार्थनामन्त्रः ।

अवियोगी यथा देव सावित्रा सहितस्तव ।
 अवियोगस्तथास्माकं भूयाज्जन्मनि जन्मनि ॥

यम प्रार्थनामन्त्रः ।

कर्म्मसाक्षी जगत्पूज्य सर्व्ववन्द्य प्रसोद मे ।
 संवत्सरव्रतं सर्व्वं परिपूर्णं तदस्तु मे ॥
 सावित्री त्वं यथा देवी चतुर्वर्धशतायुषं ।
 पतिं प्राप्तासि गुणिनं मम देवि तथा कुरु ॥
 सावित्री प्रसवित्री च सतत ब्रह्मणः प्रिया ।
 पजितासि द्विजैः सर्व्वै स्त्रीभिर्मुनिगणैस्तथा ॥
 त्रिसन्ध्यं देवि भूतानां वन्दनीयासि सुव्रते ।
 मया दत्तैव पूज्यं त्वं गृह्हाण नमोऽस्तु ते ॥
 जागरन्तश्च कुर्व्वीत गीतनृत्यादिमङ्गलैः ।
 स्ववासिन्यस्ततः पूज्या दियसे दिवसे गते ॥

सिन्दूरं कुङ्कुमञ्चैव ताम्बूल सपवित्रकं ।
 तथा दद्याच्च सर्वाणि भैक्ष्य सोभाग्यमष्टकं ॥
 सतीष्वेव दिवारात्रौ कामक्रोधविषर्जिता ।
 दिनत्रयेऽपि कर्त्तव्यमेवं मार्जारपूजनं ॥
 ततश्चतुर्थदिवसे यत् कार्यस्तच्छृणुष्व मे ।
 मिथुनानि चतुर्विंश षोडश द्वादशाष्ट वा ॥
 पूजयेदस्त्रगोदानैर्भूषणाच्छादनासनैः ।
 अथवा गुरुमेकञ्च व्रतस्य विधिकारकं ॥
 सर्वलक्षणसम्पन्नं सर्वशास्त्रार्थपारगं ।
 वेदविद्याव्रतस्नातं शान्तञ्च विजितेन्द्रियं ॥
 सपत्नीकं समभ्यर्च्य वस्त्रालङ्कारभूषणैः ।
 शय्यां सोपस्करां दद्यात् गृहञ्चैवातिशोभनं ॥
 अगक्तस्तु यथागक्त्या स्ताकं स्तीकञ्च कल्पयेत् ।
 सौवर्णीं प्रतिमां पञ्च पतिना सह दापयेत् ॥

कल्पनामन्त्रः ।

सावित्रि त्वं यथा देवि चतुर्वर्धगतायुषं ।
 सत्यवन्तं पतिं लब्ध्वा मया दत्ता तथा कुरु ॥

प्रतिमादानमन्त्रः ।

सावित्री जगती माता सावित्री जगतः पिता ।
 मया दत्ता च सावित्री ब्राह्मण प्रतिगृह्यतां ॥

अथ प्रतिग्रहमन्त्रः ।

मया गृहीता सावित्री त्वया दत्ता सुशोभना ।

यावच्चन्द्रश्च सूर्यश्च सह भर्ता सुखी भव ।
 गुरुश्च गुरुपत्नीश्च ततो भक्त्या क्षमापयेत् ॥
 यन्मया कृतवैकल्यं^१ व्रतेऽस्मिन् दुरधिष्ठितं ।
 तत्सर्वं^२ पूर्णतां यातु युवयोर्वचनेन तु ॥
 प्रतिमासं वटसेचनमध्वः^३ ॥

धर्मराजो यमो धाता नीलः कालान्तकोऽव्ययः ॥
 वैवस्वतश्चित्रगुप्तो दध्नाभृत्युः क्षयोषटः ।
 मासि मासि तथाह्येतैर्नामभिः सेचयेद्वटं ॥
 न्यग्रोधोहं वसेत् पुत्रि तस्माद्यत्ने न सेचयेत् ।
 ततो गुरुं सपत्नीकं पूजयेद्गतविस्मया ॥
 भूषणैश्च सवस्त्रैश्च कुङ्कुमैश्च मनोहरैः ।
 न्यग्रोधस्य समीपे तु गृहे वा स्थण्डिले शुभे ॥
 सावित्राश्वेव मन्त्रेण घृतहोमन्तु कारयेत् ।
 पायसं जुहुयाद्भक्त्या घृतेन सह भाविनि ॥
 व्याहृत्याचैव मन्त्रेण तिलव्रीहियवं तथा ।
 होमान्ते दक्षिणां दद्याद्विजयाठयविवर्जिता ॥
 क्षमापयेत्ततो विप्रं^४ वन्द्य पादौ प्रयत्नतः ।
 भुञ्जीत वासरान्ते तु नक्तं शान्ता तपस्विनी ॥
 अर्घ्यं दत्त्वा त्वरुन्धत्या दृष्ट्वा चैव प्रणम्य च ।
 अरुन्धति नमस्तेऽस्तु वसिष्ठस्य प्रिये शुभे ॥
 सर्वदेवनमस्कार्यं पतिव्रते नमोस्तु ते ।
 सर्वं^५ गृहं मया दत्तं फलं पुष्पसमन्वितं ॥

१. कृतवैकल्यमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

पुत्रान् देहि सुखं देहि गृहाणार्थं नमीस्त ते ।
 सखीभिर्ब्राह्मणैः सार्धं भुञ्जीत विजितेन्द्रिया ॥
 एवं करोति या नारी व्रतमेतदनुत्तमं ।
 भ्रातरः पितरः पुत्राः श्वशुरः स्वजनास्तथा ॥
 चिरायुषस्तथारोगाः स्युः जन्मशतत्रयं ।
 भर्ता च सहिता साध्वी ब्रह्मलोके महीयते ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं बटसावित्रीव्रतं ।

—००@००—

इन्द्रायुवाच ।

दृष्ट्वा मां नहुषो ब्रह्मण कामेनातीवपौडितः ।
 मास्यर्षयितुमारब्ध स्तनस्त्वां शरणङ्गता ॥
 गुरो कश्चिदुपायोऽस्ति व्रतं वा दानमेव वा ।
 येन शोकादिमोक्ष्यामि तन्मे वद महामुने ॥
 तस्यास्तु वचनं श्रुत्वा गुरुर्वाक्यमथाब्रवीत् ।

वृहस्पतिरुवाच ।

अस्यशोकविराचाख्यं व्रतं शोके हरं परं ।
 चिरात् तच्च कर्त्तव्यं व्रतं शोकविनाशनं ॥
 पापघ्नञ्चागदघ्नञ्च पचपीतविषहर्त्तनं ।
 आयुःपदं कौर्त्तिकं धनधान्यपदं परं ॥
 भुक्तिमुक्तिपदं दिव्यं सर्व्व मायाविनाशनं ।
 तच्छृणु त्वमशोकाख्यं विराचव्रतमुत्तमं ॥
 मामि मार्गशिरे चैव ज्यैष्ठ्ये भाद्रपदे तथा ।

शुक्लपत्रे पञ्चदश्यामेकभक्तन्तु कारयेत् ॥

ततः प्रातःसमय्याय स्नानं कुर्यात्ततो व्रती ।

आचम्य तु शुचिर्भूत्वा प्रणम्य च पुनः पुनः ॥

अगोकं पूजयेद्भक्त्या ब्रह्मविष्णुस्वरूपिणं १ ।

क्रमेणानेन देवेशि पराणोक्तेन२ विस्तरात् ॥

अगोकं शोकनाशार्थं मन्मूतोसि३ जिताविह ।

अर्घ्यं गृह्णाण भो हृत्त ब्रह्मविष्णुशरूपभृत् ॥

अत्र ब्रह्मविष्णुरुद्राणां मशक्तिकानां मूर्त्तिकरणं । उत्त-
रत्र तद्दानदर्शनात् । तत्र ब्रह्ममावित्रोरूपं पुत्रकामपूर्णमा-
व्रते । लक्ष्मीनारायणरूपन्तु पूर्णिमास्थलक्ष्मीनारायणव्रते । उमा
महेशयोस्त्वविद्यागहादशीव्रतेऽभिहितं । परिभाषीकृतं वा प्रति-
मात्रयं वेदितव्यं ।

अर्घ्यमन्त्रः ।

इदं पाद्यं नमस्तुभ्यं कल्पितं पण्यवारिणा ।

पुष्पाक्षतः४ फलैर्मिश्रमशोकं प्रतिगृह्यतां ॥

पाद्यमन्त्रः ।

चन्दनं विविधं वृक्षमभाव देवनिर्मितं ।

तत्पृष्ठज्ञाणं द्रुमश्रेष्ठ कृपां कुरु ममोपरि ॥

१ व्रत विष्णु स्वरूपिणमिति पुस्तकाकारे पाठः ।

२ क्रमेणोक्तं न इति पुस्तकाकारे पाठः ।

३ त्वं भूतोसि इति पुस्तकाकारे पाठः ।

४ पुष्पाक्षत इति पुस्तकाकारे पाठः ।

गन्धमन्त्रः ।

पुष्पाणीमानि हृक्षेन्द्र मालत्यादीनि यानि च ।
गृहाणेमानि दिव्यानि मम सन्तु मनोरथाः ॥

पुष्पमन्त्रः ।

गुग्गुल्वाद्याद्यये धूपास्तथा चागुरुसन्निभाः ।
निवेदिता मया भक्त्या गृहाणैतान्महातरो ॥

धूपमन्त्रः ।

आरात्रिकं महावृक्षं कल्पितं दीपसंयुतं ।
उद्योतार्थं जगत्पूज्यं कुलस्य मम सोऽस्तु वै ॥

दीपमन्त्रः ।

अर्चितस्त्वं सुरैर्दिव्यैर्दानवैश्च महोरगे ।
अप्सरोभिश्च गन्धर्वैस्तत्स्त्वामर्चयाम्यहं ॥

अर्चनमन्त्रः ।

परमात्रं मयाशोक भक्ष्यभाज्यसमन्वितं ।
भक्त्या निवेदितं तुभ्यं षड्भिरभीरमैर्युतं ॥
एवं संपूज्य तं वृक्षं प्रणिपत्य पुनः पुनः ।
अशोकं प्रार्थयेत्पश्यान्मन्त्रेणानेन भक्तिमान् ॥
यदत्रोक्तं कृतं किञ्चिदतिरिक्तं कृतं व्रते ।
तत्सर्व्वं पूर्णतां यातु प्रसादात्ते ह्रुमोत्तम ॥

प्रार्थनामन्त्रः ।

अनेनैव विधानेन प्रतिमासञ्च पूजयेत् ।
यावद्वादश मासान्वै कुर्यादुद्यापनं ततः ॥

सम्यग्गृहीत्वा नियमं त्रिरात्रं समुपोषयेत् ।
 अशोकं कारयेद्द्विष्यं नानाशाखं फलान्वितं ॥
 वस्त्युग्मेन संस्थाय१ गन्धपुष्पैः सुधूपितं ।
 जानाफलसमायुक्तं पुष्पमाल्योपशोभितं ॥
 गीतवाद्यविनोदैश्च नानाभावकथानकैः ।
 पुराणश्रवणं कार्यं व्रतस्यास्य च यत् फलं ॥
 एवं जागरणं कृत्वा कुर्याद्दानान्यनेकशः ।
 मिथुनानि तु संपूज्य ब्राह्मणानान्तु षोडश ॥
 तेभ्यस्तु करका देयाः शूर्पाणि वसनानि च ।
 गुरोस्तु मिथुनं पूज्य वस्त्रैराभरणैः शुभैः ॥
 गोदानैर्भूमिदानैश्च वेश्मदानादिभिस्तथा ।
 प्रथमेऽङ्गि ततो दद्यात् सावित्रीं ब्रह्मणा सह ॥
 उमामहेश्वरं देयं द्वितीयेऽङ्गि वरानने ।
 लक्ष्मीनारायणश्चैव तृतीयेऽङ्गि सुशोभनं ॥
 सोपस्करमशोकान्तु दद्यात् सर्वं क्षमापयेत् ।
 ततोऽहं भोजयेद्दन्तून् दीनानायांश्च तर्पयेत् २ ॥
 पारणन्तु ततः कुर्यात् पारणन्तु ३ पुनः पुनः ।
 एवं कृते त्रिरात्रन्तु फलं यत् कथितं बुधैः ॥
 तच्छृणुष्व मङ्गलाभागे संक्षेपात् कथयामि ते ।
 अश्वमेधादिभिर्यच्चैरिष्टैर्यत्फलमश्रुते ॥

१ सवास्यदति पुलकान्तरे पाठः ।

२ दीनान्वाञ्छये पूजयेदिति पुलकान्तरे पाठः ।

३ प्राणमन्त्र इति पाठान्तरे ।

तत्फलं कीटिगुणितं त्रिरात्रेण न संशयः ।
गां दत्त्वा विविधैर्दानैर्गोमहिषादिभिस्तथा ॥
तथायज्जायते पुण्यं ३ तीर्थानुस्मरणे कृते ।
यत्प्रोक्तं ऋषिभिः पुण्यं तत्सर्वं सभते फलं ॥
इति श्रुत्वा वचस्तस्य गुरोरमिततेजसः ।
चकार सा तदा देवी पौलीमौ व्रतमुत्तमं ॥
सा तद्व्रतप्रभावेन शक्तेन सह सङ्गता ।
एतद्व्रतं कृतपूर्वं सावित्र्या राजकन्यया ॥
व्रतस्यास्य प्रभावेण प्राप्नोभर्ता त्रिधा सह ।
अरुन्धत्या वेदवत्या दमयन्त्या नसूयया ॥
रुक्मिण्यादिभिरन्याभिः प्राप्ताः सर्व्ये सनोरथाः ।
पठन्ति शृण्वन्ति च ये मनुष्याः
कुर्वन्ति भक्त्या भुविमद्व्रतं ये ४ ।
ते यान्ति नाकं सुचिरैर्विमानैः
विमुक्त पापाः सुखिनो भवन्ति ॥
इति भविष्योत्तरोक्तमशोकत्रिरात्रव्रतं ।

—on ii)uo—

नन्दिकेश्वर उवाच ।

अवैधव्यकरं ब्रूहि व्रतं किञ्चिन्महेश्वर ।
भर्तुर्दुःखमवाप्नोति पुत्रदुःखं तथैव च ॥
अपुत्रता महद्दुःखं दुःखञ्चापि कुपुत्रता ।

३ तथायत् क्रियते पुण्याभ्याम्, पुण्यकार्ये पाठः ।

४ संकृतं ये इति पुष्पकान्तरे पाठः ।

एतान्येव तु दुःखानि या चनारी वषध्वज ॥
 नाप्नोति मर्त्यलोकेऽस्मिन् वैधव्यं सुरसत्तम ।
 नारीणाञ्च हितार्थाय ब्रूहि यद्यस्ति शङ्कर ॥
 सौभाग्यमतुलं याति भर्तारं चाति पूजितं
 सर्वावयवसंपूर्णमनङ्गमिव चापरं ॥
 सदृत्तं वित्तसम्पन्नं सर्वशास्त्रविशारदं ।
 ज्ञातिश्रेष्ठं पूज्यतममेतन्मे ब्रूहि शङ्कर ॥
 ईश्वर उवाच ।

शृणुष्वैकमना भूत्वा रश्माख्यं व्रतमुत्तमं ।
 येन चीर्णेन नन्दोश्च कृतकृत्याश्च योषितः ॥
 न भवेद्बिधवा नन्दिवानपत्या कदाचन ।
 विधानं शृणु नन्दीश यथातत् क्रियते नृभिः ॥
 शुक्लपक्षे त्रयोदश्यां मासि ज्येष्ठे च सुव्रत ।
 त्रिरात्रं व्रतमुद्दिश्य भक्त्या तां कदलीं शुभां ॥
 स्नात्वा चैव शुचिर्भूत्वा व्रती सिञ्चेद्बह्वदकैः ॥
 सूत्रेण वेष्टयेद्भक्त्या गन्धपुष्पादि दापयेत् ।
 रात्रौ कुर्वीत नक्तं च अष्टमेकं समाहितः ॥
 तथैव कदलीवृक्षं नित्यमेव प्रसेचयेत् ।
 ज्येष्ठे मासि ततः प्राप्य द्वादश्याञ्चैव सुव्रत ॥
 नद्यां तथ तडागे वा शिवं संपूज्य चाक्षतैः ।
 स्नात्वा च पूजयेन्नन्दिसुमादेहाङ्गधारिणं ॥
 एकभक्तं ततः कृत्वा नियमं कारयेत् व्रते ।
 भोक्त्येऽहं त्रिदिनं लङ्घ्य सम्यगिष्ट्वा सुरेश्वरीं ॥

त्वत्प्रसादात् व्रतं मेऽस्तु निर्विघ्नं न महेश्वरि ।
 रत्नायाः स्थण्डिलं कृत्वा विचित्रं सुगोभनं ॥
 रत्नाया निकटे स्थित्वा गीतवाद्यसमन्वितं ।
 मण्डपं कारयेत्तत्र पुष्पमालाविभूषितं ॥
 वितानेन च संयुक्तं सर्वं शोभासमन्वितं ।
 मध्ये कुर्वीत कदलीं फलपुष्पादिसंयुतां ॥
 राजतीं शोभनाकारां जातरूपफलोचितां ।
 वस्त्रयुग्मस्ततो दद्यात् सर्वालङ्कारभूषितां ॥
 कदल्यै कामदायिन्यै मेधायै ते नमोनमः ।
 रत्नायै रतिसारायै सर्वसौख्यप्रदे नमः ॥
 कदल्यै कामदायिन्यै मोक्षायै ते नमोनमः ॥

पूजामन्त्रः ।

चिन्तिता त्वं हि कदली चिन्तितं कामदायिनी ।
 शरीरारोग्यमैश्वर्यं देदि देवि नमोस्तु ते ॥

प्रार्थनामन्त्रः ।

पूजयेत् कुसुमैर्मन्त्रैः कण्ठमुच्चैश्च सतत ।
 हरिद्रारक्षितैः मुञ्चैर्हृष्टनारीकदम्बकैः ॥
 सप्तधान्यैर्भृते पात्रे प्रस्थमात्रेण पूरिते ।
 उमामहेश्वरं शङ्खं कृत्वा तस्मिन्निवेदयेत् ॥
 रूप्यपथ्यङ्गमारुढं पूजयेत्कृष्णिनीं हरिं ।
 वस्त्रयुग्मेन संवेष्ट्य चन्दनेन विनिपयेत् ।
 पूजयेच्च सुगन्धैः पुष्पैः कालोद्भवैर्नृती ॥

मन्त्रैरेभिस्तु नन्दोश पादादारभ्य नामभिः ।
 त्रिपुरायै च इत्यङ्घ्रियुग्मङ्गौर्यास्तु पूजयेत् ॥
 जानुनी चन्द्रनेत्रायै१ अपर्णायै नमोनमः ।
 कटिं मन्मथनाशाय२ स्मरायै गिरिजां ततः ॥
 नाभिं सर्वेश्वरायेति गिरिजायै तथाम्बिकां ।
 हृदये हृदिवासिन्यै शूलिने च महेश्वरं ॥
 मुखं कामविनाशाय पार्ष्वत्यै परमेश्वरीं ।
 शिरः सौभाग्यदायिन्यै शूलिने तु कपर्दिने ॥
 एवं संपूज्य देवेशसुमया सहितं प्रभुं ।
 मृत्यवादिचण्डोपायैरुपोष्य कदलीं ततः ॥
 जागरस्तत्र कर्त्तव्यः पुराणाख्यानकैः शुभैः ।
 एवं चिरात् नन्दोशं नयेद्भक्त्यासुभावितः ॥
 दिनानि त्रीणि नन्दोशं प्रतिष्ठाप्य च सुव्रती ।
 मिथुनानि च संपूज्य यथाविभव सारतः ॥
 गुरुञ्चैव सपत्नीकञ्चोजयित्वा प्रपूजयेत् ।
 दिनसंज्ञैर्विष्वक्पञ्चैर्घृतहोमस्ततो भवेत् ॥
 पृषदान्धेन दध्ना वा पयसा वाथ वाग्यतः ।
 तत्सवितुरिति मन्त्रेण जुहुयादनले सुधीः ॥
 त्रयोदश्यां त्रयोदशं चतुर्दश्यां चतुर्दशं पञ्चदश्यां पञ्चदशं
 हुतय इति दिनसंख्यात्वं ॥

गुरवे पाण्डुरङ्गचं तस्य पत्नीं तथानघ ।

१ चन्द्रनेत्रायै इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

२ नाभाय इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

रक्तवस्त्रं प्रदातव्यं वाचमेतामुदीरयेत् ॥
गौर्या मे सहितो देवः प्रीयतां वृषभध्वज ॥

दानमन्त्रः ।

यथैवेन्द्रसमीपे तु शची तिष्ठति शोभने ।
अहमेव सदा रभे पत्युः पार्श्वे स्थिता भवे ॥
रूपं देहि धनं देहि यशः शोभाय मेव च ।
पुत्रान् देहि धनं देहि सर्वान् कामांश्च देहि मे ॥

प्रार्थनामन्त्रः ।

कपिला तत्र दातव्या सर्वोपस्करसंयुता ।
उमामहेश्वरं चैव कदल्या सहितं तथा ॥
गर्भिणी वालवत्सा च यथाकुर्यात्तथा शृणु ।
द्वादश्यामेकभक्तन्तु तयोद्दृष्ट्यां तथैव च ॥
नक्तं समाचरेन्नन्दिंश्चतुर्दश्यामयाचितं ।
पञ्चदश्याञ्चोपवासमेवञ्चैव व्रतं चरेत् ॥
एतद्व्रतन्तु नन्दीश पुत्रपौत्रप्रदायकं ॥
या करोति व्रतं नन्दिन् विधिनानेन सुव्रत ।
न तस्यास्ति कुले काचिदपुत्रा विधवा तथा ॥
अरुन्धतीव मोदेष यावदाभूतसंप्लवं ।
सदाकीर्तियुता साध्वी यावदिन्द्राश्चतुर्दश ।
व्रतमेतत् २ कृतं पूर्य देवपत्नीभिरादरात् ॥
ताभिर्भोगाश्च संप्राप्ता दिव्याद्यातिमनोरमाः ।

१ वासुदेवार्चा इति पुस्तकाकार पाठः ।

२ एवमेतदिति पाठान्तरं ।

विराजन्ते स्वर्गलोके रवेरिव च रश्मयः ॥
 व्रतस्यैव तु माहात्म्यादवाप्नोति न संशयः ।
 एवं प्रभावो नन्दीय व्रतस्यास्य महामते ॥
 यः पठेच्छृणुयाद्वापि सोऽपि स्वर्गं महीयते ।

इति स्कन्दपुराणोक्त रत्नाचिरात्रव्रतं ।

स्कन्द उवाच ।

देवदेव महादेव परब्रह्म महेश्वर ।
 आयुर्यशोर्थपुत्रयोधश्च मत्कुलकारक ॥
 व्रतं ब्रूहि महेशान सर्वयोगप्रणाशनं ।
 जाताः पुत्राश्च जायन्ते अरोगाः सुखिनस्तथा ॥
 तेषां पुत्राश्च वध्मश्च दृश्यन्ते च सुगोभनाः ।
 सौभाग्यचातुल्यं प्राप्य ममलो नैव जायते ॥
 येन सर्वं सुखं भुक्त्वा वैकुण्ठभवनं व्रजेत् ।

ईश्वर उवाच ।

व्रतानामुत्तमं स्कन्द तव वक्ष्ये सनातनं ।
 येनैव चीर्णमात्रेण सर्वं यज्ञफलं लभेत् ॥
 यत् कृत्वा सर्वदानस्य फलमाप्नोति मानवः ।
 गोत्रिरात्रमिति ख्यातं सर्वपापप्रणाशनं ॥
 नारी वाथ नरो वाथ त्रिरात्रव्रतमाचरेत् ।
 कृष्णपक्षे त्रयोदश्यां मामि चाश्वयुजे तथा ॥
 दोषात् वसमोपे तु व्रतमेतत् समाचरेत् ।

प्रातः स्नात्वा त्रयोदश्यां कृत्वा वै दन्तधावनं ॥
 विरात्रं नियमं कुर्याद्गोविन्दभक्तिभावितः ।
 गोविन्द जगतां नाथ गोवर्धनधरानघ ॥
 गोविरात्रं करिष्यामि शरणं मे भवाच्यत ।
 नियममन्त्रः ।

गोष्ठे वा गोपथे वाथ कृत्वा भूमिगृहं शुभं ।
 अष्टहस्तं चतुर्हस्तं चतुरस्रं सुगोभनं ॥
 वितानं पुष्पमालाभिः फलैर्नानाविधैरपि ।
 मध्ये वेदिं ततः कृत्वा मण्डलं तत्र कारयेत् ।
 सर्व्वतोभद्रनामाथ मवनालमथापि वा ॥
 तन्मध्ये विन्यसेद्देवं गोवर्धनधरं हरिं ।
 रुक्मिणीं मित्रविन्दा च शैव्यां जास्तवतीं तथा ॥
 तामभागे तु देवस्य पूज्या वै भक्तिभावतः ।
 सत्यभामा च राधा च वासुदेवाग्निजस्तथा ॥
 दक्षिणे चैव पूज्यास्तु नन्वस्य पुरतो यजेत् ।
 पलभद्रं यशोदाञ्च पृष्ठतः पूजयेत् शुभं ॥
 सुरभो च सुनन्दा च सुभद्रा नाम धेनवः ।
 एताश्चतस्त्रीं देव्यस्य लक्षणस्य पुरतो न्यसेत् ॥
 सुवर्णमाषकाः कार्याः षोडश प्रतिमाः शुभाः ।
 गोवर्धनस्य कर्णव्यो राजतः पलसंमितः ॥
 कृत्राकारैर्महावृक्षैः शोभितः पद्मिभिः शुभः ।
 गोपीगोपमम्राकीर्णो महावृक्षः समन्वितः ॥

१ महावर्षमिति पुस्तकाकारे पाठः ।

एवं संस्त्राप्य यत्नेन ततः पूजां समाचरेत् ।
 श्रीं आगच्छ भगवान् कृष्ण गोपगोपीसमन्वितः ॥
 रुक्मिण्यादिभीराञ्चीभिर्ममपूजां गृहाण च ।

आवाहनमन्त्रः ।

नमः कृष्णाय पादौ च हरये जानुनी नमः ।
 उदरं वलदेवाय मुकुन्दाय नमः कटिं ॥
 चक्रिणे च भुजौ पूज्यौ कण्ठं श्रीकण्ठधारिणे ।
 मुखं पद्ममुखायेति गोविन्दाय नमः शिरः ।
 प्रणवादिनमोस्तैश्च अष्टाङ्गं पूजयेद्दरेः ।
 रुक्मिण्यै नमः । मित्रविन्दायै नमः । शाल्यै नमः । जाम्ब-
 वत्यै नमः । सुरभ्यै नमः । सत्यभामायै नमः । राधायै नमः ।
 नामजिते नमः । यशोदायै नमः । बलभद्राय नमः । नन्दाय
 नमः । सुनन्दायै नमः । सुभद्रायै नमः । नामजिते नमः ।
 कामधेनवे नमः ।

गोवर्धनधराधार गोकुलताणकारक ।
 विष्णुबाहुकृतोदार पूजयामि नमोत्तम ॥
 एवं संपूज्य विधिवत्पञ्चादङ्घ्रिं प्रदापयेत् ।
 गवामाधार गोविन्द रुक्मिणीवल्लभ प्रभो ॥
 गोपगोपीसमीपे तमङ्घ्रिं गृह्य नमोस्तु ते ।
 एवं पूजां समाप्यैव भक्तिभावपुरःसरं ॥
 गवामङ्घ्रिं प्रदातव्यं सायाह्ने तु दिनपर्यं ।

मन्त्रेणानेन विधिवद्विशन्तोनां स्वशक्तितः ॥
 रुद्राणाञ्चैव या माता वसूनां दुहिता च या ।
 आदित्यानाञ्च भगिनी सा नः शान्तिं प्रयच्छतु ।
 अर्घ्यमन्त्रः ।

नमो गोभ्यः त्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च ।
 नमो धर्मसुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमोनमः ॥

पूजामन्त्रः ।

सुरभी वैष्णवी माता नित्यं विष्णुपदे स्थिता ।
 प्रतिगृह्णातु मे शासं सौरभी मे प्रसीदतु ॥

गोशामन्त्रः ।

गावो मे अग्रतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः ।
 गावो मे हृदये सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहं ॥
 मा वियोगोऽस्तु मे पुत्रैर्भर्त्ता च २ सह वात्सवैः ।
 त्वत्प्रसादेन मे भक्तिर्निश्चलास्तु सदा त्वयि ३ ॥

प्रार्थनामन्त्रः ।

एवं संपूज्य गास्यैव ४ गोविन्दश्च विशेषतः ।
 पुष्पैर्गन्धैश्च दीपैश्च धूपैर्नानाविधैरपि ॥

१ मन्त्रसुताभ्यश्चरति पुलकान्तरे पाठः ।

२ साश्वरेति पुलकान्तरे पाठः ।

३ निश्चला भौ सदात्वयिरिति पुलकान्तरे पाठः ।

४ गावश्चरति पुलकान्तरे पाठः ।

नैवेद्यैर्घृतपक्वैश्च फलेर्नानाविधैरपि ।
 समधान्यैर्व्विरुद्धैश्च वंशपात्रस्थितैः शुभैः ॥
 सुवासिन्यस्तथा पूज्या नित्यं ताम्बूलकुङ्कुमैः ।
 कण्ठसूत्रैस्तथा पुष्पैस्तथा च कनकादिभिः ॥
 एवं संपूज्य विधिवद्भोविन्दन्तु दिनत्रयं ।
 कृत्वापवासत्रयञ्चैव चतुर्थे दिवसे पुनः ॥
 ततः शुचिः समुत्थाय कृत्वा स्नानं प्रयत्नतः ।
 प्रणम्याचार्यमुख्येन ह्योमं तत्रैव कारयेत् ॥
 तिलैरष्टोत्तरशतं गायत्र्या ह्योममाचरेत् ।
 ततो विसृज्य देवेशं गुरवे प्रतिपाद्य च ॥
 गावः पुच्छे समालम्ब्य पुरस्कृत्य द्विजर्षभान् ।
 हृष्टेन मनसा स्कन्द गृहमागम्य यत्नतः ॥
 मिथुनानि द्वादशाष्टौ भूषणाच्छादनादिभिः ।
 संपूज्य भोजनं दत्त्वा गोदानानि च दापयेत् ॥
 गुरोर्दपत्यमर्चत्वा वासोभूषणसंयुतं ।
 भक्त्या गोवर्जनं कृण्वं गोपीगोपसमन्वितं ॥
 गृहोपकरणैर्युक्तं यथा शक्त्या च भक्तितः ।
 गुरोः सम्पादयेद्वोमान् दक्षिणामहृतं हरिं ॥
 क्षमाप्य च गुरुं तत्र भुञ्जीत शुचि संस्नतं ।
 इष्टे. १ शिष्टैः समासीनो वाग्यतो विष्णुतत्परः ॥
 दीपोत्सवेवैतमिदं शुचिमानसेन
 कृत्वा नरः सकलसन्ततिवृद्धिकारि ।

भुक्तोपभोगनिचयं सुखसंप्रयुक्तो
ह्यन्ते प्रयाति भवनं मनुजोमुरारिः ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं गोत्रिराचव्रतं १ ।

—०००(१०००)—

निवृत्ते भारते युद्धे कुरुसैन्ये क्षयं गते ।
राजा धर्मसुतः शोमान् भ्रातृभिः सह मोदितः ॥
मागधैस्तूयमानस्य स्वसैन्यगणशोभितः ।
श्रीकृष्णेन समायुक्तः प्रययौ हस्तिनापुरं ॥
अभिषेकं ततश्चक्रे पुरीधा मुनिसंगतः ।
दूर्वायवाङ्गुरैर्युक्तं चक्रुर्वृद्धापणं स्त्रियः ॥
रत्नैर्दूर्कलेहेर्मात्मा तोषयामास तान् गणान् ।
नृपांश्च स्वनरोपेतान् मागधांश्चावनीपकान् ॥
ऋषींश्च मर्त्यान् प्रस्थाप्य स्वे स्वे स्थाने नृपानपि ।
स्तुत्या सन्तोषयामास श्रीकृष्णं पाण्डुनन्दनः ॥
देवदेव जगन्नाथ भक्तानामभयपद ।
प्रसादात्तव गोविन्द कौरवा युधि निर्जिताः ॥
राज्यं निष्कण्टकं प्राप्तं भक्तियोगात्तवानघ ।
मत्सेवापरियुक्तानां प्रसादं कुरु केशव ॥
एवमुक्त्वा स्थिते पाण्डो पुत्रभ्रातृसमन्विते ।
पाञ्चाली परया भक्त्या प्रणम्य पुरुषोत्तमं ॥
वदन्तिलिपुटा साध्वो प्रीवाच परमेश्वरं ।

करुणाकारसंपूर्णं कंसासुरनिवृत्तन ॥
 दुकूलहरणादयच्च दुःखं त्वद्गतिभाविता ।
 न ज्ञातं देवदेवेश प्रसादं कुर्व केशव ॥
 किमपि श्रोतुमिच्छामि त्वत्तो व्रतमनुत्तमं ।
 येन श्रीर्देव नारीणां लोभाय पतिभक्तितः ॥

कृष्ण उवाच ।

गौर्या स्नानं पुरतः मन्थुना कथितं व्रतं ।
 गोचिरात्रमिदं स्नातं पवित्रं कथयामि ते ॥
 सावित्रीपुरतो धात्रा वसिष्ठेन महर्षिणा ।
 चतुर्विधा प्रागुद्धृतं तद्व्रतं मया वृत्तम् ॥

द्वीपद्युवाच ।

कलिआसे प्रकर्तव्यं यथा हानं तथा विधिः ।
 तत्सर्वं कथयाद्य त्वं यदि तुष्टोऽसि माधव ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

नभस्त्रे च सिते पद्मे च योदयीति वा तिथिः ।
 कार्तिके वा प्रकर्तव्यं सोभायधनवाञ्छया ॥
 सूर्योदये समुत्थाय दक्षधावनपूर्वकम् ।
 लक्ष्मीनारायणस्याग्रे त्रिरात्रोपोषणं कृते ॥
 कुर्यात् स्नानं ततश्चैव स्नापयेत् कमलापतिं ।
 पञ्चामृतेन श्रीखण्डैः कुसुमैरर्चयेत्ततः ॥
 शतपत्रैश्च पद्माद्यैः पुष्पैः पूजां प्रकल्पयेत् ।

वादी नमामि वसिदानवमर्हनाय
जानू नमामि सुवनवयपालनाय ।
स्नातो नमामि ६. १सारमनाय चित्ते
श्रीजीश्वराय करचक्रप्रभाप्रियाय ॥

पूजामन्त्रः ।

श्रीराशिस्तसन्मान वासुदेव जगत्प्रभो ।
यद्वाचां नमो दत्तं सोभाय देहि मे सदा ॥

चर्चामन्त्रः ।

कृष्णान्तेर्गारिकेसेव बीजपूरेव हाडिमैः ।
अथ दत्त्वा च संपूज्य कामधेनुं प्रसादयेत् ॥

कामधेनुपूजा ।

करसंपुटकं कृत्वा कामधेनोरथ इति वाचं ।

रोगाणि हन्तु मम कामदुषा प्रसन्ना
पापानि हन्तु मम कामदुषा प्रसन्ना ।
मोक्षं ददातु मम कामदुषा प्रसन्ना
पुमान् ददातु मम कामदुषा प्रसन्ना ॥

तृतीये दिवसे प्रातः वंशपात्रचयस्ततः ।

विदुषस्तसमापन्नं सम्यक् फलसमन्वितं ॥

दद्यात् कामदुषायै च तत्संपूर्णहेतवे ।

रात्रौ च तर्ज्यतोभङ्गं मण्डलं प्रकल्पयेत् ॥

मातृकया सुवर्णस्य सखीनारायणं प्रभुं ।

कृत्वा तत्र न्यसेद्देवं व्रतसंपूर्णहेतवे ॥
 रात्रौ जागरणं कुर्याद्भूतबादिभक्तिकैः ।
 ततः प्रभातसमये होमं कुर्यात्तथाविधि ॥
 दम्पत्याः परिधानाय शुभैर्बस्तैः स्वशक्तितः ।
 देया धेनुं च विप्राय निवेद्य पृष्ठतोत्रजेत् ॥
 पटे पटेश्वमेधस्य फलं प्राप्नोति निश्चितं ।
 अथान्यदपि ते वच्मि इतिहासं पुरातनं ॥
 व्याघ्रधेन्वोः सुसंवादं नीतिशास्त्रमयं शुभं ।
 वसिष्ठस्याश्रमात् काचिद्दिव्यगोवंशमश्रवा ॥
 स्वेच्छया प्रययौ धेनुं शरति गङ्गरे वने ।
 सिंहव्याघ्रादिजैर्बभूव निर्भया तपसो बलात् ॥
 मुनीश्वरस्य सा धेनुः प्रययौ गिरिगङ्गां ।
 शिवगापपरिभ्रष्टव्याघ्रव्यापी महाबलः ॥
 महादंष्ट्रा महाकायी नाम्नामो जलबर्हिनः ।
 प्रसारितकरो वीरो ययो वृत्तिं शुभाशुभां ॥

व्याघ्रउवाच ।

दिवसा बहवो जाताः क्षुधया पीडितस्य मे ।
 त्वं दृष्ट्वा दैववशत आहाराय प्रकल्पिता ॥

धेनुकवाच ।

वसिष्ठस्य प्रभावेन दृष्टजोवैर्महाबलैः ।
 न हिंस्याहमवश्यं हि जानीयाद्वाघ्रसत्तम ॥

वाक्यमेकं महावाही शृणुष्वैकाग्रमानसः ।
 स्वीयजीवाशया चाहं न ब्रवीमि तवाग्रतः ॥
 अध्रुवेण शरीरेण मलमूत्रयुतेन च ।
 परोपकृतिहीनेन किं कार्यं क्षत्रियेण च ॥
 वायनः कर्मणा ये वै शरीर नागनेऽपि वा ।
 उपकारं न कुर्वन्ति तेषां जन्म निरर्थकं ॥
 मरणे बान्धुचित्ता ये रणे दीनवर्चा भटाः ।
 ते यान्ति नरकं वीरमित्याहुः पूर्वसूरयः ॥
 कलत्रपुत्रबन्धूनां मायारहितमानसाः ।
 पुराणपुरुषे भक्तास्ते यान्ति परमाङ्गतिं ॥
 सोमवासरसञ्ज्ञातो बालो मम गृहे स्थितः ।
 ममागमनसंदृष्टिः स्नेहदुःखञ्च मे हृदि ॥
 मन्वी दुग्धेन तस्मालं स्वेच्छया परितोष्यति ।
 सखीमकथयित्वाशु आयामि तव सन्निधौ ॥

व्याघ्र उवाच ।

वेदशास्त्रपुराणेषु पठते पूर्वसूरिभिः ।
 स्त्री विप्रधेनुपौडासु विवाहे राजविग्रहे ॥
 प्राणालयेऽप्यसत्यं हि वाच्यमन्यत्र नैव हि ।
 आपद्रतश्च योजन्तुर्यस्य वैरिवशहतः ॥
 आत्मा वै रक्षितो येन तत् क्लेशात् न संग्रहः ।
 यस्यचाये स्थितं भक्ष्यमादिष्टं परमेश्वरिणा ॥
 न गृह्णाति च यो मूर्खोऽनन्दानकरं व्रजेत् ।
 सुरैर्न न मनुष्यैश्च न यक्षैर्न पिशाचकैः ॥

सत्यं हि निश्चितं वाक्यं प्राचिभिः प्राप्यचापहं ।

जलदण्डसमाहारकृतसन्तोषवर्तिनां ॥

आपन्नतानासृजतं तत् पशूनाञ्च का कथा ।

पृथिवी च तथादित्याः सत्ये तिष्ठन्ति देवताः ॥

तस्मात्सत्यं त्वपाकार्यं वाच्यं चैव वृषाङ्गणे ।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा वालकस्त्रिहपीडिता ॥

चक्रे तत्र प्रतिज्ञाम्बे व्याघ्रस्याग्ने पुनः पुनः ॥

धेनुववाच ।

द्विजोभूत्वा ततो व्याघ्र वेदभ्रष्टोऽभिजायते ।

स्वाध्यायसम्भारहितः सत्यगोचविवर्जितः ॥

अविक्रियाणां विक्रेता अयाज्यानाञ्च याजकः ।

तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ॥

दुष्टवृद्धौ शठे धूर्ते यत् पापं परवक्ष्यके ।

दाने दत्ते प्रदत्तञ्च प्रसक्तिं कुरुते नरः ॥

तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ।

वेदविक्रयणे चैव गवसूतकभोजने ॥

तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ।

मृतवत्सां ग्रहीता यो मातापित्रोरपोषकः ॥

देवद्रव्यं गुरुद्रव्यं ब्रह्मद्रव्यं हरेत्तु यः ।

तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ॥

स्वदत्तां परदत्ताभ्या यो हरेत्तु वसुधरां ।

अबैलुवे तु यत्पापं यत्पापं दम्भकर्तृके ॥

तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ।

सुतेन्द्रिये च धूर्ते च परदोषापवादके ।
 कृतघ्ने च कदर्ये च परद्रव्यरते षटे ॥
 तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ।
 सदाचारविहीने च परपीडाप्रदायके ॥
 तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ।
 परापवादसंस्तुटे सर्वधर्म्यं विवर्जिते ॥
 यत्पापं ब्रह्महत्यायां पितृमातृवधे तथा ।
 तेषाम्नु पातकं मद्यं पद्यहं नागमे पुनः ॥
 द्विभार्यः पुरुषोयस्तु यक्षादेकां विवर्जयेत् ।
 तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ॥
 यत् पापं सुखकानाञ्च स्वस्थानां विषदायिनां ।
 तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ॥
 यत्पापं नास्तिकानाञ्च पौराणां विषयेषिणां ।
 तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ॥
 यस्त्रीन् हस्ते बलीवर्दीन् विषमं बाहयेत्तु यः ।
 तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ॥
 गोरवध्नां प्रकुर्वन्ति दक्षेन ताडयन्ति ये ।
 तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ॥
 सकृत् कन्यान्तु योदत्त्वा द्वितीये दातुमिच्छति ।
 तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ॥
 कथायां कथ्यमानायामन्तरायं करोति यः ।
 तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ॥
 यतिनिन्दाकरोनित्यं वेदनिन्दापरस्तथा ।

तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ।
 यस्य संग्रहणी भार्या ब्राह्मणी च विशेषतः ॥
 तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ।
 अकर्मनिरते क्रूरे कुलधर्मविवर्जिते ॥
 तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ।
 मूर्खे पाषण्डके चैरे तिलविक्रयकारके ॥
 एकोमिष्टान्नमयाति भार्यापुत्रमपोषकः ।
 आत्मभरा दुराचारा देवद्रव्यविलोपकः ॥
 तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ।
 ब्रह्मघ्ना गुरुनिन्दायाः स्वामिनिन्दाकरास्तथा ॥
 तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ।
 कुरुक्षेत्रे महापर्वे यस्ते चन्द्रे दिवाकरे ॥
 ये यत्नन्ति महादानं हव्यकव्यविवर्जितं ।
 तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ॥
 कूटसाक्षी मृपावादी परद्रव्याभिनापकः ।
 तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ॥
 परदाराभिगामी च ये च विश्वासघातकाः ।
 भर्तारमर्थदीनश्च महाव्याधिप्रपीडितं ॥
 या न पूजयते नारी रूपयौवनगर्विता ।
 तेन पापेन लिम्पेऽहं यद्यहं नागमे पुनः ॥
 अथ किं वहुनोक्तेन मृगराज तवाग्रतः ।
 यदि नायामि शीघ्राहं मम सत्यं भवेन्न च ॥
 तेन वाक्येन सन्तुष्टो व्याघ्र आहारनिस्पृहः ।

प्रसारितकरं त्यक्त्वा गच्छ धेनो स्वकं गृहं ।
 व्याघ्रेण मुक्ता सा धेनुरागता च स्वमाश्रमं ॥
 उत्कर्षं तर्णकं दृष्ट्वा जात प्रस्रवती भृशं ।
 बालं पयसा सन्तर्प्य सखीषु च विनिक्षिपेत् ॥
 ता दृष्ट्वा दुःखिता गावो मातृस्नेहसमन्विताः ।
 दृष्ट्वा दुःखतरो बालो न जाने च तथास्तु मे ॥
 तत्तद्बालमुपादाय पप्रच्छुस्तत्र कारणं ।
 विश्राज्य तासु वृत्तान्तं बालकस्तमुवाच सा ॥
 अनुयाहि व्रज त्वं हि सत्यवाक्यममन्विता ।
 व्रजामि तद्वनं शीघ्रं व्याघ्रो वसति यत्र च ॥

सख्यवाच ।

कृतप्रतिभेमूढासि नन्दिनीवंश सम्भवे ।
 व्याघ्रधेन्वोः परं वैरम्विषु लोकेषु विश्रुतं ॥
 विप्र-स्त्री-बाल-कार्येषु संप्राप्ते वैरिमङ्गटे ।
 प्राणापहारे मुनिभिरसत्यं नैव दूषितं ॥
 देवेशेन पुरा जप्ते व्रतः सुररिपुर्बली ।
 शपथान् कृत्वा तथा विष्णुः शङ्कं विश्वासवर्जितं ॥
 तत्र त्वं स्वगृहे तिष्ठ परिवारेण सयुता ।
 मुनिप्रवरास्तिष्ठन्ति न दुष्टा जन्तवः कदा ॥

धेनुरुवाच ।

सत्येन तपते भानुः सत्येन तपते शशी ।
 चतुर्मुखोऽपि सत्येन सत्येन सकलं जगत् ॥

सत्यवाक्यपरिभ्रष्टो सोमो जीवेत् कदाचन ।
 सत्येन सत्यलोकोऽस्ति सत्यं वेदे प्रतिष्ठितं ॥
 व्रजामि सत्यवाक्येन तद्व्याघ्रं प्रप्तिं निर्भया
 तद्वने चैव मां दृष्टो व्याघ्रो यातामुपागतां ॥

व्याघ्र उवाच ।

अहो मे भाग्यमतुलं कामधेनुः समागता ।
 दुष्टयोनिविनिर्मुक्तो यास्यामि हरसन्निधौ ॥
 यावत् प्राप्ता कलिमलह्वरा पावनी कामधेनु
 स्तावद्व्याघ्रः । शशधरगणः सर्वं सम्पत्तिदेहः ।
 वद्धा पाणी विमलमणिभिर्दीप्यमाने किरीटे
 घेनुं भक्त्या मधुरवचनैराह संपूज्य सम्यक् ॥
 धन्योऽस्मि कृतकृत्योऽस्मि कामधेनोः प्रसादतः ।
 सर्वपापविनिर्मुक्तो याम्यहं हरसन्निधौ ॥
 गावो रक्षन्तु मे पुण्यं गावो रक्षन्तु मे यशः ।
 गावो रक्षन्तु मे वर्गं कलत्रपुत्रपौत्रकं ॥
 संपूजितास्त ता गावो मादृशां बहुसम्पदाः ।
 सर्वपापह्वरा गावः सर्वपुण्यफलप्रदाः ॥
 नमोऽस्तु कामधेनुभ्यो याः पुनन्ति जगज्जगं ।
 यदाधारस्थितं विष्णं नन्दादिभ्यो नमोनमः ॥

धेनु उवाच ।

महागण वरं ब्रूहि जगतां प्रीतिकारकं ।

यदिच्छसि वरं काम्यं ददामि तव भक्तितः ॥

गण उवाच ।

विश्वोपकारकरणे समर्थाः कामधेनवः ।
भवद्दर्शानु विद्यासात् सदास्तु सुखितं जगत् ॥
भवत्प्रजारता ये वा भवत्प्रजापरायणाः ।
तेषाञ्च सर्व्या सिद्धिः स्वाङ्गवदीयप्रसादतः ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

एवमस्त्विति साप्युक्ता व्याघ्रः शिवपुरं गयो ।
कामधेनुञ्च सन्नुष्टा वशिष्ठाञ्चममाययो ।
एवमुक्तं गोत्रिरात्रं कृत्वा नारी नरोऽपि वा ।
प्राप्नोति सकलान् कामान् सप्तजन्मानि सुवते ॥
इति श्रीकृष्णेनोक्ता गोत्रिरात्रव्रतकथा समाप्ता ॥

—000@000—

याम्योत्तरगता रेखा कुर्यादेकोनविंशतिं ।
खण्डेन्दुत्रिपदा कोणे मृद्वला पञ्चकोटिका ॥
एकादशपदा वाप्यो भद्रम् नवभिः पदं ।
चतुर्विंशत् पदा वाप्यो विंशत्या परिधिः स्मृता ॥
सितेन्दुमृद्वला कृष्णा वल्ली नीले च पूरयेत् ।
कृष्णं भद्रं सिता वापि परिधिः पीतवर्णिका ॥
सत्वरजस्तमोपेतं सर्वतो भद्रमण्डलं ॥

इति मण्डलविधिः

युधिष्ठिर उवाच ।

भगवन् त्वत्प्रसादेन ब्रह्मणि सुकृतानि मे ।
श्रुतानि बहुपुण्यानि कृतानि मधुसूदन ॥
सर्वपापहराणि स्यः सर्वकामप्रदानि च ।
साम्प्रतं श्रोतुमिच्छामि व्रतानामुत्तमं व्रतं ॥
किञ्चिद्योगव्रतं ब्रूहि यदि तुष्टोऽसि माधव ।
यत् कृत्वा सर्वपापेभ्यो नरो नारी विमुच्यते ॥

कृष्ण उवाच ।

कथयामि नृपश्रेष्ठ व्रतानामुत्तमं व्रतं ।
यत्र कस्यचित्प्राप्त्या तच्छृणुष्व नृपोत्तम ॥
यान्यान् कामान्वाञ्छयति लभते तांस्तथैव च ।
तत्तत्तत्तदेव मुच्यन्ते नरा नार्यश्च सर्वशः ॥
धेनो भगवति राजन् कामधेनोः प्रसादतः ।
सौभाग्यं सन्ततिं लक्ष्मीं प्राप्नोति सुखमुत्तमं ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

यदि तुष्टोऽसि भगवान् व्रतस्यास्य विधिं शृभं ।
ब्रूहि मे नरगर्दल करोमि त्वत्प्रसादतः ॥
के मन्त्राः के नमस्काराः देवताः काः प्रकीर्तिताः ।
किं दानमर्घ्यमन्त्रश्च कथयस्व सुरोत्तम ॥

कृष्ण उवाच ।

नारदेन पुरा राजन् यदुक्तं सगरादिषु ।

स्मारितस्तत्त्वया राजन् शृणुष्वैकमना व्रतं ॥
 मासि भाद्रपदे शुक्ले त्रयोदश्यां समारभेत् ।
 त्रयोदशीप्रभाते तु समुत्थाय शुचिर्भवेत् ॥
 गृह्णीयाद्विग्रहं पूर्वं दत्तधावनपूर्वकं ।
 आचम्यादकमादाय इमं मन्त्रमुदीरयेत् ॥
 गोत्रिरात्रव्रतस्यास्योपवासकरणे मम ।
 शरणं भव देवि त्वं नमस्ते धेनुरूपिणि ॥
 प्रसीदतु महादेवो लक्ष्मीनारायणः प्रभुः ।
 लक्ष्मीनारायणं देवं सौवर्ण्यं स्वशक्तितः ॥
 पञ्चाशृतेन गव्येन स्नापयेत् कमलापतिं ।
 स्थापयेत्सर्वतोभद्रमण्डलेऽष्टदलेऽपि वा ॥
 गन्धपुष्पैः सुनैवेद्यैस्तुतिगीतादिनर्त्तनैः ।
 नगरिकेलार्घ्यदानेन प्रीणयेद्वां हरिं तथा ॥
 लक्ष्मीकाम जगन्नाथ गोत्रिरात्रं व्रतं मम ।
 परिपूर्णं कुरुष्वेदं गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते ॥

इत्यर्घ्यमन्त्रः ।

आरात्रिकं ततः कुर्याद्वाक्या कृष्णम्य तुष्टये ।
 नवं कुम्भं जलभृतं हविष्याग्नेन परितं ॥
 कृत्वा दिनत्रयं पार्श्वं तथाच विनिवेशयेत् ।
 धेनुं पूज्य ततः कुर्यात् जलधारां प्रदक्षिणां ॥
 पुरा दत्त्वा कुण्डलकं कुम्भहस्तकमण्डलं ।
 अवाञ्छादनगन्धादिदिव्यपुष्पैः सदीपकैः ॥

(१८)

अहोरात्रमवक्रञ्च हृतदीपं दिनत्रयं ।
 प्रबोधयेद्भती धेनोरग्रे वा देवमण्डले ॥
 अर्घ्यदानस्ततः कुर्यात् नारिकेलादिभिः फलैः ॥

अर्घ्यमन्त्रः ।

पञ्च गावः समुत्पन्ना मध्यमाने महोदधौ ।
 तासां मध्ये तु या नन्दा तस्यै धेन्वै नमोनमः ॥
 प्रदक्षिणीकृतायेन धेनुमार्गानुसारिणी ।
 प्रदक्षिणीकृता तेन सप्तह्रीपा वसुन्धरा ॥
 गावोममायतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः ।
 गावोमे हृदये सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहं ॥
 आरात्रिकं सनैवेद्यङ्गीतवाद्यमहोत्सवं ।
 कुङ्कुमं कुम्भजलञ्च धेनोर्दद्याद्विषक्षणः ॥
 एवं संपूज्य तां धेनुं सम्यक् भक्त्या दिनत्रयं ।
 यवाञ्च यवसञ्चैव चारयेत्पाययेदपः ॥
 गोमयादक्षतैर्धान्यैः^१ कुर्यात्तेरेव पारणं ।
 तारयेदन्न देशकान् पतत्यनपि दुःखदम् ॥
 धेन्वग्रे जागरं कुर्यात्सर्वपापप्रणाशन ।
 त्रिविधाभुञ्जते पापात् प्रहराजैन पाण्डव ॥
 तस्योत्तरं कृतात्पापात् प्रहराजैन भुञ्जते ।
 चत्वारि वैष्णवात्राणि कारयित्वा प्रपूजयेत् ॥
 नारिकेलोदकद्राक्षाखजूरदाडिमैः शुभैः ।

^१ गोमयादाक्षतैर्धान्यैरिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

विरुद्धैः पुष्पसिन्दूरवस्त्रकुङ्कुमकज्जलैः ॥
 प्रथमे वीजपूरार्घ्यं द्वितीये दाडिमं शुभं ।
 तृतीये नारिकेलेन दद्यादर्घ्यं दिनत्रय ॥
 करकास्तु त्रयः कार्य्याः हविष्यान्नेन पूरिताः ।
 लक्ष्मीनारायणं देवं व्रज्याणं भार्यया सह ॥
 पूजयेत् कुसुमैर्वस्त्रैर्हर्मस्त्रैर्युधिष्ठिर ।
 दम्पत्योर्भोजनं देयं धेनुं भक्त्या दिनत्रयं ॥
 पारणे गौरिणी विप्रानिष्टवन्धूयं भोजयेत् ।
 गुरवे विष्णुरूपाय तां धेनुं प्रतिपादयेत् ॥
 सकुङ्कुमां सवस्त्रां च घण्टामुकुटभूषितां ।
 गीतवादितनृत्यादिशान्तिपाठपुरःसरां ॥
 पापादिप्रगृहं यावत् प्रापयेद्भक्त एव वा ।
 एवं या कुरुते पार्थ गोचिरात्रव्रतोत्तमं ॥
 दुर्लभं तु सदा स्त्रीणां नराणां नृपसत्तम ।
 अश्वमेधमहस्त्राणि वाजपेयगतानि च ॥
 कृत्वा यत् फलमाप्नोति गोतिरात्रव्रते कृते ।
 प्रभासे च कुरुक्षेत्रे चन्द्रसूर्यग्रहे तथा ॥
 हेमभारगतं दद्यात् तत् फलप्राप्तये नृप ।
 धेनुदानं कृतं येन सवस्त्रं सवेकामकं ॥
 सागराम्बरसंयुक्ता दत्ता तेन वसुधरा ।
 एवं या कुरुते पार्थ चिरात्रव्रतमुत्तमं ॥
 भवान्तरकृतात् पापात् त्रिविधान्मुच्यते नरः ।
 सा कदाचिन्नपश्येत् भर्त्तुः खं नराधिप ॥

पुत्रपौत्रसुखं तस्य भविष्यति न संशयः ॥
 जन्मान्तरे च सा नारी वैधव्यं न च पश्यति ।
 वैधव्यं न महादुःखं भविष्यति भवान्तरे ॥
 अपुत्रो लभते पुत्रान् धनहीनो धनं लभेत् ।
 कायेन मनसा चैव कर्मणायदुपार्जितं ॥
 तत्सर्वं पातकं याति गोत्रिराश्रते कृते ।
 इह भोगान् विपुलान् कृत्वा आयुः सम्पूर्णमेव च ॥
 व्रतस्यास्य प्रभावेन गोलोके च महीयते ।
 कीर्त्तिदम्बनदं चैव सौभाग्यकरणं नृप ॥
 आयुरारोग्यकरणं सर्वपापप्रणाशनं ।
 तच्च ज्ञात्वा दराद्राजन् सभार्यस्त्वं कुरु व्रतं ॥
 यदि राज्यं कुरु कीर्त्तिं नित्यं प्राप्यमिहेच्छसि ।
 तच्छ्रुत्वा पाण्डवश्रेष्ठो व्रतं चक्रे समाहितः ॥
 व्रतस्यास्य प्रभावेन लब्धं राज्यमकण्टकं ।

इति श्रीभविष्योत्तरोक्तं गोत्रिराश्रितं ।

—००७००—

ब्रह्मोवाच ।

ऋणुष्यावहितो भूत्वा यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।
 कथयामि व्रतं येन सर्वकामार्थसिद्धिदं ॥
 येन चोर्ध्वेन नारीणां वैधव्यमप्रजायते ।
 आयुष्यं वर्धते भर्तुः पुत्राश्च धनसंयुताः ॥
 तदहं संप्रवक्ष्यामि व्रतानामुत्तमं व्रतं ।

यत् प्रसादादुमा रुद्रं कृष्णं लक्ष्मीः शशी हरिं ॥
 सावित्री मां यथा प्राप्ता सीता रामं यथा मुने ।
 दक्षकोपादुमा देवी देहम्यक्ता स्वकं पुरा ॥
 जाता हिमवतीगेहे १ जटावस्त्रलधारिणी ।
 चचारोगं तपोऽनाथा निराङ्गारा जितेन्द्रिया ॥
 एकाङ्गुष्ठे स्थिता वाला पञ्चाग्निपरिसंयुता २ ।
 तपस्ये निश्चयं दृष्ट्वा गतः शम्भुस्ततः स्वयं ३ ॥
 कस्मादेवं त्वया कष्टं क्रियते गौरि साम्प्रतं ।

उमीवाच ।

महादेवी भवेदेव यथा मे पतिव्रतमः ।
 तदर्थं ४ क्रियते घोरतपस्तपनदुःसहम् ॥

ब्रह्मीवाच ।

शृणु वाली सुखोपायं व्रतानामुत्तमं व्रतं ।
 येन चीर्णेन ते शम्भुः स्वदेहार्घ्यं प्रदास्यति ॥
 सा त्वं कुरु व्रतं ५ भद्रे त्रिरात्रं विष्णुसंज्ञितं ६ ।
 तच्चौर्यमनया भक्त्या पतिर्लब्धो महेश्वरः ॥
 कार्तिकेयः सुतस्तस्माद्भवेश्वर महासुने ।

१ जातासाक्षिमरुद्देहेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

२ पञ्चाग्निपरिसमाप्यते इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

३ तस्याच निश्चयं दृष्ट्वा ततः सखोगतः स्वयमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

४ तच्चकुरुव्रतमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

५ त्रिरात्रं विष्णुं संज्ञितं इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

इत्युक्तो ब्रह्मणा पूर्व^१ अगस्तिमुनिसत्तम ॥
विस्मयाविष्टचेतासु विधिं प्रष्टुं^२ प्रचक्रमे ।

अगस्त्य उवाच ।

कस्मिन् काले दिने कस्मिन् स्थाने चैव नरोत्तम ।
विधिनाकेन कर्त्तव्यं कथं पूज्यो वनस्पतिः ॥

ब्रह्मोवाच ।

ज्यैष्ठे मासि च संप्राप्ते पूर्णमास्यां द्विजोत्तम ।
ज्यैष्ठाश्विदिने कुर्यात्सिद्धार्थः स्नानमुत्तमं ॥
ग्रीष्मं^३ मिक्षयेत्पशान्पुष्पैश्च पूजयेत् ।
वत्सरस्वेकभक्तान्तु हविष्याग्नेन कारयेत् ॥
श्वशूकरखरादीनां दर्शने भोजनं त्यजेत् ।
अनेन विधिना सम्यक् मासि मासि समाचरेत् ॥
ततः संवत्सरे पूर्णं गत्वा विष्णुसमीपतः^२ ।
गृहीत्वा वालुकां पात्रे प्रस्थमात्रं महामुने ॥
अथवा धान्यमादाय यवशालितिलादिकं^३ ।
ततो वंशमये पात्रे वस्त्रयुग्मेन वेष्टयेत् ॥
समामहेश्वरं हैमं गत्वा कुर्यात् सुभूषितं ।
रत्नवस्त्रयुगं दद्यान्नैवेद्यं फलसंयुतं ॥
पुष्पैश्च^३ हविषैश्चापि फलैर्नानाविधैस्तथा ।

१ विधिं दृष्टमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

२ विष्णुसमीपमूर्तिं पुस्तकान्तरे पाठः ।

३ यवशालि तिलोदकमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

गुह्येसुजौरकैर्धान्यैर्जवणेन विरुठकैः ।
 समधान्यैस्तथादीपैर्व्यंशपात्रप्रकल्पितैः ॥
 रजन्या कण्ठसूत्रैश्च शुभैः कुङ्कुमकेशरैः ।
 अश्वतारं करोत्येषा उमादेवो हरप्रिया ॥
 त्र्योनिकेत नमस्तुभ्यं शिवप्रिय नमोस्तु ते १ ।
 अवैधव्यञ्च मे देहि त्रियं वै जन्मजन्मनि ॥
 त्रियं धनं पतिपुत्रानारोग्यं कुलमन्सति ।
 सौभाग्यं रूपसम्पत्तिं पूजितस्त्वं प्रयच्छ मे ॥
 सहस्रं विल्वपत्राणां होमयेत्तु यथाविधि ।
 पायसं तत्र जुहुया द्विप्रः शान्तोऽग्न मन्त्रवित् ॥
 राजतं त्र्योतरुङ्गत्वा सुवर्णफलशोभितं ।
 अष्टोत्तरशतं यावत् पीतवस्त्रेण वेष्टयेत् ॥
 त्रयोदश्यां समारभ्य यावत्पूर्णं भवेत्त्रिभिः ।
 त्रिरात्रं जागरं कृत्वा उपवासैर्जितेन्द्रियः ॥
 रमापतेः पशुपते त्रैलोक्याधिपतिः प्रभो ।
 गृहाणार्घ्यं मया देव गौर्या सह महेश्वरः ॥
 ततः प्रभाते सञ्जाते स्नात्वा च तिलसर्षपैः ।
 वस्त्रालङ्कारपुष्पैश्च गुरोर्दम्पत्यमर्चयेत् ॥
 पादुकोपानहच्छत्रयय्या गाञ्च सुभूषिता ।
 गुरुं प्रपूज्य भक्त्या तु दद्यादेतत् प्रयत्नतः ॥
 षोडशाष्टौ चतस्रोवाहि जदम्पत्यो भूषिताः ।

१ वनस्पते इति पुस्तकालये पाठः ।

२ उमापते इति पुस्तकालये पाठः ।

वस्त्रालङ्कारगोदानैस्तस्मिन्नहनि पूजयेत् ।
 मिष्टान्नं भोजनं दद्यादात्मनः श्रेय इच्छता ॥
 या नारी कुरुते चैतद्धृतं पापप्रणाशनं ।
 सर्वसिद्धिकरं पुण्यं शिवलोके महीयते ॥
 कल्पकोटिशतं यावदाय्याय शिवसन्निधौ ।
 ततोरात्री भवेन्नर्त्यं पुत्रपौत्रसमन्विता ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं विल्वचिरात्रव्रतं ।

—000—

विल्वमूलं समाश्रित्य चिरात्रोपोषितः शुचिः ।
 हरनामं जपेन्नृचं भूणहत्यां व्यपोहति ॥

इति सौरपुराणोक्तं हरचिरात्रव्रतं २ ।

—000—

स्कन्द उवाच ।

अरुन्धतीव्रतं वक्ष्ये सदा सौभाग्यदायकं ।
 येन चीर्णेन वै सम्यक् नारी सौभाग्यभाजना ॥
 जायते रूपसम्पन्ना पुत्रपौत्रसमन्विता ।
 वसन्तर्तुं समासाद्य तृतीयायां सुरर्षभ ॥
 स्नानं कृत्वा तु विधिवच्चिरात्रोपोषिता सती ।
 भिक्षुनानि च चत्वारि समाह्वय यतवता ॥

१ हरिनाम इति पुस्तकालये पाठः ।

२ हरिव्रतमिति पुस्तकालये पाठः ।

पूजयेत् पुष्पताम्बूलैश्चन्दनैश्च तथाक्षतैः ।
कुङ्कुमागुरुकर्पूरसिन्दूरैर्मृगनाभिभिः ॥
शिलापट्टे च संस्थाप्य गुडायज्यलवणान्वितं ।
लोष्टकेन समायुक्तं वस्त्रगुग्मेन वेष्टितं ॥

लोष्टको नाम शिलापट्टोपरि स्थितपेषणोपलः एतदृशदुप-
लोपधानमभिहितं भवति ।

आवाहयेन्महादेवीं वमिष्ठप्राणमन्त्रितां ।
आवाहि वरदे देवि साविध्यं कुरु मुमते ॥
पतिव्रतानां सर्व्वीसां मुख्या त्वं देवि भामिनि ।
आवाह्याकम्बतीं देवीं पूजयेत् कुसुमैः शुभैः ॥
दिभुजाञ्चारुसर्व्वीङ्गीं सात्तसूतकमण्डलं ।
प्रतिमां काञ्चनीं कृत्वा नामभिः प्रतिपूजयेत् ॥
देववन्द्ये नमः पादौ जानुनी लोकवन्दिते ।
कटिं संपूजयेत्तस्या मन्त्रासती च सर्व्वदा ॥
नाभिं गन्धौरनाभोति ऋषिपत्नीं ततस्तनौ ।
जगद्वर्चीं तथा कण्ठवाङ्मयं शान्तौ नमः सदा ॥
हस्तौ तु वरदायै तु मुखं धृत्यै नमोनमः ।
अकम्बती तथा पूज्या शिरस्तु कमलप्रिया ॥
एवं संपूज्य तान्देवीं गन्धपुष्पे निवेदयेत् १ ।
पूजयित्वा सतीन्देवीं ततश्चार्घ्यं निवेदयेत् ॥
अकम्बति महाभागे वसिष्ठप्रियवादिनी ।
सौभाग्यं देहि मे देवि धनं पुत्रांश्च देहि मे ॥

१ गन्धपुष्पावधेदनीरिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

अर्घ्यमन्त्रः ।

अर्घ्यं दत्त्वा तु भक्त्या वै गृहीतकुसुमाञ्जलिः ।
प्रार्थयेत्तां महाभागां१ लोकवन्द्यां महासतीं ॥
पुत्रान् देहि धनं देहि सौभाग्यं देहि सुव्रते ।
पौत्रांश्च सर्वकामांश्च देहि देवि नमोऽस्तु ते ॥

प्रार्थना मन्त्रः ।

सुवामिन्योऽथ संपूज्या दिवसे दिवसे तथा ।
शुभगन्धाक्षतैस्तद्बद्ध्यात् सर्वेषु भक्तकान् ॥
होमांश्चैव तथा कुर्युः समिद्धिष तिलैः शुभैः ।
अष्टोत्तरशतं तद्वह्निनसंख्यामथापि वा ॥
मिथुनानि च संपूज्य भूषणाच्छादनादिभिः ।
चतुर्विंशतिसंख्याकान् यथा षोडशसंख्यया ॥
आचार्याय सभार्याय वस्त्राख्याभरणानि च ।
ग्रथ्यां सोपस्करां दद्यात् कांस्यपात्रं सदीपकं ॥
आदर्गश्चामरश्चैव धेनुं दद्यात् पयस्विनीं ।
दद्यात् भोजयित्वा च स्त्रियः शूर्पान् समोदकान् ॥
सोदकान् करकांस्तद्वह्नयोर्वस्त्रं यथाविधि ।
पोलिकां छतपूपांश्च पूरिकाश्च विशेषतः ।
सोमालिकाश्च दातव्या एकैकं द्विगुणं तथा ॥
द्विगुणं भोजनं दायपर्याप्तं ।

दीनानाथांश्च संपूज्य स्वयं नक्तं समाचरेत् ।

धर्ममिति शेषः ।

१ प्रार्थयेत्तां महाभागामिति पुस्तकान्तरेपाठः ।

२ दीनानाथांश्च संपूज्य इति पुस्तकान्तरेपाठः ।

अनेनैव विधानेन नारी वा कुरुते व्रतं ॥
 अवैधव्यं समाप्नोति तथा जन्ममहस्रकं ।
 पुत्रपौत्रसमायुक्ता धनधान्यसमन्विता ।
 जीवेद्वर्षशतं सायं भर्त्ता सह महासती ।
 एवमभ्यर्चयित्वा तु पदं गच्छत्यनामय ॥
 देवभार्या तथा स्वर्गं ऋषिभार्या तथैव च ।
 राजभार्या महाभागा सर्वकामप्रदं व्रतं ॥
 इति स्कन्दपुराणोक्तं अरुन्धतीव्रतं १ ।

पुनस्त्य उवाच ।

अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि दूर्वात्रिरात्रमुत्तम ।
 नारीणां सुखसम्पत्तिपुत्रपौत्रप्रदायकं ॥
 तनूरुहेभ्यः सम्भूता दूर्वा विष्णोरिष्टं पुरा ।
 तस्यामुपरिविन्त्यस्त मश्रितामृतमुत्तम ॥
 देवदानवगन्धर्वैर्द्यौतविद्याधरोरगैः ।
 तत्र येऽमृतकुम्भस्य पेतुं निस्सन्दधिन्दव ॥
 तैरियं स्पृष्ट्वा त्राभूत दूर्वा तेनाजरामरा ।
 वन्द्या पवित्रा देवेश वन्दितात्वर्जिता तथा ॥
 शृणु दूर्वात्रिरात्रस्य विधिं कात्स्न्यान सुव्रत ।
 मामि भाद्रपदे चैव शुक्लपक्षे त्रयोदशौ ॥
 त्रिरात्रं समुपोषन्तु यावत् पूर्णा तिथिर्भवेत् ।
 उमामहेश्वर देव सावित्री धर्ममेव च ॥

दूर्वामूले तु संस्थाप्य मण्डपं कारयेत्ततः ।

उमामहेश्वररूपन्तु प्रथमकृष्णाष्टमीव्रते, सावित्रीरूपं पुन-
कामपूर्णिमायां द्रष्टव्यं, धर्मरूपन्तु विष्णुधर्मोत्तरात् ।

चतुर्वर्गस्तुष्ट्यादष्टतुर्वर्गः सिताम्बरः ।

सर्वाभरणवान् श्वेतो धर्मः कार्य्यो विराजते ।

दक्षिणे चाक्षमाला च तस्य वामे तु पुस्तकं ॥

दूर्वासिञ्चनमन्त्रः ।

दूर्वासिञ्चामि ते मूलमुदकैरमृतोपमैः ।

अवैधव्यश्च मे देहि दूर्वायै ते नमो नमः ॥

दूर्वा ह्यमृतजन्मासि वन्दितासि सुरासुरैः ।

सौभाग्यं सन्ततिञ्चैव सर्व्वकार्य्यकरी भव ॥

वथा शाखाप्रशाखाभिर्विस्तृतासि महीतले ।

तथा ममापि सन्तानन्देहि त्वमजरामरे ॥

एवमुच्चार्य्य सिञ्चेत् भ्रमयस्व प्रदक्षिणं ।

देवतापूजनं कृत्वा पूर्व्वोक्तविधिना ततः ॥

सुवासिन्यः स्त्रियः पूज्या वंशपात्रैः सवाससैः ।

अनेन विधिना तिष्ठेद्यावच्चैव दिनत्रयं ॥

जागरं तत्र कुर्वीत नृत्यवादित्रनिस्तनैः ।

शान्तिपाठं पुराणञ्च सावित्रशाल्यामनुत्तमं ॥

ततः प्रभाते विमले प्रतिपद्दिने शुभे ।

होमं तत्र प्रकुर्वीत तिलाग्न्यसमिधादिभिः ॥

काण्डात् काण्डात्तु मन्त्रेण सहस्रेण तु संख्यया

वसीर्धारां ततो दद्यात्तत्क्रोधो विमत्सरः ॥

ब्राह्मणे दक्षिणां दद्याद्विज्ज्ञातां न कारयेत् ।
 आचार्यश्च तथा पूज्य उमामहेशरूपिणं ॥
 गावस्तत्रैव दातव्यानीलवर्णा विशिषतः ।
 अलाभे सर्ववर्णानां सवत्साङ्गा पयस्विनीं ॥
 ताम्रपृष्ठीं रोप्यखुरां शृङ्गे कनकसम्भृतां ।
 घण्टाभरणभूषाञ्च रत्नपुच्छां पयोमुचं ॥
 ईदृशीन्यास्तथा गाव दद्याद्दूर्वात्रिराचके ।
 आचार्यं वेदविद्वांसं हृदयैव कुटुम्बिनं ॥
 सर्वज्ञं शास्त्रविद्वांसं आचार्यं तत्र कारयेत् ।
 आचार्याय सभार्याय परिधानं२ प्रदापयेत् ॥
 हस्तमात्रा कर्णमात्रा स्त्रीणां भूषणमेव च ।
 मिथुनानि तथा पूज्य हादशं परिसंख्यया ॥
 भोजनान्ते प्रदातव्यं भूषणाच्छादनादिकं३ ।
 शयनं तेषु दातव्यं वंशपात्रं दृढं तथा ।
 सौभाग्याष्टकसंबुद्धं स्त्रीणां प्रीतिकरं परं ।
 दत्त्वा दानानि विप्रेभ्यः फलानां पायसानि च ॥
 भोजयित्वा सुहृन्निजं सर्वतः स्वजनं तथा ।
 या नारी ससुषोष्णैश्च व्रतमेतत् पुरातनं ।
 दूर्वात्रिराचं पवित्रं पुच्छं सन्तानदायकं ।
 ऐश्वर्यं सुखसौभाग्यं पुनसन्तानवृद्धिदं ॥

१ प्रभाते इति पुस्तकाकारे पाठः ।

२ पटीषान् भूषणञ्च इति पुस्तकाकारे पाठः ।

३ भोजनं तेषु दातव्यं दातव्यं भूषणादिकमिति पुस्तकाकारे पाठः ।

मर्त्यलोके चिरन्तिष्ठंस्ततः स्वर्गमवाप्नुयात् ।
 देवैरानन्दितास्तत्र पितृभिः सह गोत्रकैः ॥
 वसन्तिरममाणास्ता यावदाभूतसंप्लवं ।
 अर्घ्यं दद्यात्ततो रात्रावबन्धन्याः प्रयत्नतः ॥
 शङ्खे तीर्थं समादाय सपुष्पफलचदनं ।
 भूमौ जानुश्च विन्यस्य अर्घ्यं दद्यात् प्रयत्नतः ॥

अर्घ्यमन्त्रः ।

अरुन्धतो सती देवी वसिष्ठप्रियवादिनी ।
 अवैधव्यञ्च सौभाग्यं देहि त्वं वरदे सदा ॥

इति पद्मपुराणोक्तं दूर्वात्रिरात्रव्रतं ।

—080—

नारद उवाच ।

व्रतानां यत् परं पुण्यं जन्मदुःखक्षयङ्करं ।
 विष्णोराराधनायालं तद्वदस्व जगद्गुरो ॥

ब्रह्मोवाच ।

गर्भजन्मजरारोग्य दुःख संसारनाशनं ।
 परितुष्टिकरं विष्णोः शृणुष्व गदतो मम ॥
 दत्तं मुमुक्षुभिः शान्तैस्तपोनिष्टैस्तवायुजैः ।
 समुद्दिश्य हरिं भक्त्या मरीचिप्रमुखैः पुरा ॥
 यत्ते राजशताख्यं तु व्रतं पुंभिः सुदुष्करं ।

विधानं तस्य देवर्षे फलञ्च सुमहोदयं ॥
 यच्चिराच्च शतं कुर्यात् समुद्दिश्य जनार्दनं ।
 कुलानां शतमादाय स याति भवनं हरेः ॥
 नवम्यादिसिते पक्षे नरीमार्गशिरस्य च ।
 प्रारभेत त्रिरात्राणां सततं विधिवत् व्रती ॥
 ग्रहधानो जितक्रोधो नित्यस्त्रायी क्षमान्वितः ।
 अभ्यर्चयेत्सदा विष्णुं कर्मणा मनसा गिरा ॥
 अष्टोत्तरसहस्रन्तु गतं वानुदिनं जपेत् ।
 ॐ नमो वासुदेवेति समभ्यर्च्य जनार्दनं ॥
 असत्यस्तेयपारुष्यपापैश्च सह संकथा ।
 मधुमांसासवरसान् सदैव परिवर्जयेत् ॥
 ब्रह्मचर्यरतः शान्तः सर्वभूतहिते रतः ।
 वासुदेवपरी नित्यं भवेच्च विधिवद् व्रती ॥
 अष्टम्यासेकभक्ताशीः दिनत्रयमुपावसेत् ।
 एकादश्यां शुचिः स्नातो वासुदेवार्चने रतः ॥
 द्वादश्यां पूजयेद्देवं गन्धमाल्यविलेपनैः ।
 नैवेद्यधूपदीपाद्यैर्गीतनृत्यैश्च केशवम् ॥
 अनेन विधिना कृत्वा त्रिरात्राणां शतं नरः ।
 निर्व्यापयेत्ततो भक्त्या विशेषविधिना व्रतम् ।
 संप्राप्ते कार्तिके मासि व्रतमेतदनुत्तमम् ॥

प्रतिमासं त्रिरात्रहयमिति पञ्चाशता मासैः शतं तच्चाधि-
 मासहययोगाच्चतुर्भिवर्षेरिति कार्तिके समाप्तिः ।

एवं भोज्य द्विजातिभ्यो दद्यादस्त्रयुगानि च ॥

एवं प्रतिमासविधिना ।

तथोपवीतकृत्वाणि शृणु तान्यासनानि च२ ।

एवं विप्रान् समभ्यर्च्य गुरुश्चैव विशेषतः ॥

प्रणम्य गिरसा देव सर्वमुद्यापयेद्धतं ।

यथोक्ताद्विगुणं तस्य विप्रे भक्तिमतः फलं ॥

प्रलीयन्ते परे तत्त्वे वासुदेवेऽव्यये व्रतो ।

श्रुत्वाचैतद्धतं पुण्यं विमानं तद्विजोत्तमाः ।

सर्वपापैर्विनिर्मुक्ता प्रयान्ति परमाङ्गतिं ॥

इति विष्णुरहस्योक्तं त्रिविक्रमचिराच्चव्रतं ।

—०००—

युधिष्ठिर उवाच ।

अनुसूया शरीरे तु ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।

उत्पन्नाः केन तपसा कीतुं मम केशव ॥

अनुसूया सतीनान्तु त्रैलोक्ये विहिता किल ।

दानेन तपसा चैव तीर्थस्नानेन वा पुनः ॥

श्रेष्ठजातीं समुत्पन्ना सर्वलोकनमस्कृता ।

एतन्मे कथयस्वैह अत्रुत्पत्त्या महामते ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

तथा कृतेऽप्यर्थं महाव्रतं वै

परा चिरात्तत्त्वज्ञाति भद्रं ।

२ कुण्डलान्यासनानि चेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

३ तथोक्तमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

तस्य प्रभावात् सुतजातिरूपं
सतीत्यभावं विविदे त्रिलोकां ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

कस्मिन् काले दिने कस्मिन् स्थाने कस्मिन् सुरोत्तम ।
विधिना केन कर्त्तव्यं जातिः स्याप्या कथं वद ॥

नारायण उवाच ।

ज्येष्ठे मासि च कर्त्तव्यं त्रयोदश्यान्तु पाण्डव ।
नियमश्च यद्गोतव्यमाचार्यानुज्ञया ततः ॥
कृत्वेकभक्तं द्वादश्यामुपवासत्रयश्चरेत् ।
मण्डपं कारयेत्तत्र सपताकं मनोहरं ॥
तत्र जातिः प्रकर्त्तव्या स्वर्णाद्विभवसारतः ।
रीढ्यपुष्पाणि कार्याणि वंशपात्रे निधापयेत् ॥
तत्र देवास्त्रयः पूज्या ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।
सप्ततीकाः शुभैः पुष्पैः फलैश्च विविधैस्तथा ॥
अत्र विष्णुशिवमूर्त्तिकरणं अगोक्तत्रिरात्रवद्देदितव्यं ।
यवशालितिलाद्यैश्च वंशपात्रं प्रपूरयेत् ।
देवतात्रितयं पूज्यवंशपात्रे त्रिवस्तकैः १ ॥
पीतरक्तसितैश्चैव नानापुष्पैः फलैस्तथा ।
वस्त्रालङ्कारपुष्पैश्च गुरोर्दम्पत्यमर्चयेत् ॥
पादुकोपानहं शय्याच्छत्रं गौयसु भूषिता ।

१ त्रिवस्तकैतिति पुस्तकान्तरं पाठः ।

तिलतण्डुलमिश्रैश्च यवहीमं प्रकल्पयेत् ॥
 गुह्येष्वीरकैर्धान्यैर्लवणेन विरुढकैः ।
 सप्तधान्यैस्तथा दीपैर्व्यंशपात्रप्रकल्पितैः ॥
 रजत्या कण्ठसूत्रैश्च सुभैः किंशुककेसरैः ।
 कृतेनानेन भूपालव्रतेन शृणु यत् फलं ।
 जातिं१ धनपतिं पुत्रानारोग्यं कुलसंस्ततिं ॥
 सौभाग्यं२ रूपसम्पत्तिं पूजिता सा प्रयच्छति ।
 इति भविष्योक्तरोक्तं जातिचिरात्रव्रतं ।

—००७००—

त्रिरात्रोपोषितो३ दद्यात् फाल्गुन्यां भवनं शुभं ।
 आदित्यलोकमाप्नोति धामव्रतमिदं स्मृतं ॥
 सूर्योऽत्र देवता ।

इति पद्मपुराणोक्तं धामचिरात्रव्रतं ।

—०००—

मार्कण्डेय उवाच ।

अष्टसृक् दिवसं प्राप्य त्रिरात्रोपोषितो नरः ।
 मार्गशीर्षान्तथारभ्य पूजयेत्तु त्रिविक्रमं ॥
 त्रिवर्णैः कुसुमैर्ह्रिक् चिभिः प्रयतमानसः ।
 त्रिवर्णैः श्वेतपीतरक्तैः ॥

तत्र ये नुलेपना देया स्निमारं धूपमेव च ।

१ पुत्रानारोग्य भुजलतः इति पुस्तकालये पाठः ।

२ चागोम्यमिति पुस्तकालये पाठः ।

३ त्रिरात्रोपोषितादस्यादिति पाठालये ।

त्रिसारं गुग्गुलु कुटुकशीवेष्टिकाः ।
 वलिं त्रिमधुरं दद्यात् त्रींशु दोषाशरीरतम ।
 यवैस्तिलैस्तथा होमः कर्त्तव्यः सर्षपाश्वितैः ॥
 दद्यात्तिलोहञ्च तथा द्विजेभ्यः
 ताम्रं सुवर्णं रजतञ्च राजन् ।
 न केवलं स कुलदं व्रतस्तु
 यथेष्टकामाप्तिकरं प्रदिष्टं ॥
 इति विष्णुधर्मीत्तरोक्तं सुकुलत्रिरात्रव्रतं ।

—०००—

श्रीकृष्ण उवाच ।

चैत्रे तु कुमुदैर्देवं त्रिभिः प्रयतमानसः ।
 त्रिरात्रं तत्र नक्ताशौ नद्यां स्नात्वा द्विजातये ।
 अजाः पञ्च पयस्विन्यः प्रदद्यात् स सुवर्णकाः ॥
 न जायते पुनरसौ जीवलोके कदाचन ।
 एतद्व्रतं प्रोक्तं सर्वव्याधिविनाशनं ॥

सूर्याश्वि देवता ।

इति भविष्यीत्तरोक्तं वस्तत्रिरात्रव्रतं ।

—०००—

श्रीकृष्ण उवाच ।

पार्थ भाद्रपदे मामि शुक्लपक्षे द्वितीये ।
 तृतीयायां चतुर्थ्याञ्च अष्टया परिवत्सरं ॥

उपवासेन गृह्णीयाद्दत्तं नात्मा तु गोपदं ।
 स्नात्वा नरोऽथ नारी वा पुण्यवृषविलेपनैः ॥
 दध्ना च घृतमिश्रेण मिष्टकैर्धनमालया ।
 अभ्यञ्जयेद्गवां नृणां सपुच्छे चैव भारत ॥
 दद्याद्गवाङ्गिकं भक्त्या वासः पूर्वापराह्वयोः ।
 अनग्निपक्वं भुञ्जीयात् तैलाक्षारविवर्जितं ॥
 पूर्वापराह्वयोः द्वितीया पञ्चम्योः गवां पदेषु माता रुद्राणां
 दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः प्रगुषोचं चिकितुषे
 जनायमागामनागामदितिर्वदिष्ट यमावायुवेति ।

अर्घ्यमन्त्रः ।

गावो ममाग्रतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः ।
 गावो मे हृदये सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहं ॥

इति गोप्रार्थनामन्त्रः ।

व्रजस्तीनां गवां नित्यमायास्तीनां कुरुद्वह ।
 पुरेद्वारेऽथ वा गोष्ठे मन्त्रेणानेन भक्तिमान् ॥
 अर्घ्यं दद्यात्तथायासं तुष्टये पुष्टये गवां ।
 इत्थं संपूज्य दत्त्वाऽर्घ्यं ततो गच्छेद्गृहं प्रति ॥
 पञ्चम्यां क्रीधरहितो भुञ्जीयाद्गौरसन्दधि ।
 शालिपिष्टं फलं शाकं तिलपिष्टं विरूढकं ॥
 दिनावसाने राजेन्द्र संयतस्तां निशां स्वपेत् ।
 प्रभाते गोपदं दत्त्वा ब्राह्मणाय कुटुम्बिने ॥
 विप्राय वेदविदुषे यथा शक्त्या हिरस्मयीं ।

क्षमापयेद्गवां नाथ गोविन्दं गह्वरध्वजं ॥
 तथा गोवर्धनं ग्रैसं कृत्वा शुद्धमयं ह्रमं ।
 यथाशक्त्या समभ्यर्च्य पुष्पधूपदिभिः पुष्पम् ।
 यथैवं गोपदं पार्थ तदा गोवर्धनं गिरिं ॥
 दद्याद्भक्त्या द्विजेन्द्राय गोविन्दं प्रीयतामिति ।
 गोभक्तो गोव्रतं चीर्त्वा भक्त्या दत्त्वा च गोप्यदं ॥
 सौभाग्यं रूपसावय्यं प्राप्नोति विपुलां श्रियं ।
 गोवत्सलाकुलस्य हं गोभक्तिं समवाहयात् ॥
 भुक्त्वा भोगान् सुविपुलान् सतः स्वर्गपुरं व्रजेत् ।
 दिव्यान् भोगांस्ततो भुक्त्वा पुष्पशेषैश्च पार्थिव ॥
 धनधान्यजनोपेतग्रासीश्वरसङ्घट्टिमान् ।
 कुलञ्च निर्मलं सन्ध्या पुनर्गोप्यतिमान् भवेत् ॥
 एवं जप्त्वा च पार्थ व्रतस्यास्य प्रभावतः ।
 ततो गोलोकमासाद्य पुनरावृत्तिवर्जितं ॥
 तिष्ठते देववद्वत्त्वा यथावदाचन्द्रतारकं ।
 दिव्यरूपधरः सन्धी दिव्यालङ्कारभूषितः ॥
 गन्धर्वगीतवाद्येन सेव्यमानोऽप्यरोगचैः ।
 दिव्यं वृणोत्यतं स्निह्य ततोविष्णुपुरं व्रजेत् ॥
 श्रीगोप्यदव्रतमिदं कुरुते त्रिरात्रं
 मायया पूजयति गौरसभोजनवत् ।

१ प्राप्नोति वाचिष्ठप्रियामिति पुष्पकावरे पाठः ।

२ पुष्पं चर्चयति इति पुष्पकावरे पाठः ।

३ देववद्वत् इति पाठान्तरं ।

गोविन्दमादिपुरुषं प्रणिधाय चित्ते
लोकं स पुण्यमुपयाति गवां पवित्रं ॥
इति भविष्योत्तरोक्तं गोपदत्रिरात्रव्रतं ।

—000—

साधु भक्ताऽमि धर्मज्ञ कालरात्रिव्रतं मम ।
शृणु वक्ष्याम्यहस्तेऽद्य कर्त्तव्यं विधिवद्यथा ॥
मांसि चाश्वयुजेऽष्टम्यां शुक्लपक्षे त्रितेन्द्रियः ।
सत्यवाक् स्थिरचित्तात्मा नियमस्थो भवेत्सुधीः ॥
कृत्वा दौ मण्डपं त्रीमान् भूमिभागे १ समे शुभे ।
चतुरस्रं समं श्यन् पताकाध्वजशीभितं ॥
सूत्रेण सूत्रितं कृत्वा कुण्डं हस्तप्रमाणतः ।
धेन्वाकृतिसमं तत्र कारयेद्दिविच्छुभं ॥
ततो हरेत्समभारान् दर्भाद्यैव तिलांस्तथा ।
पालाशैः पिप्पलीशैश्च समिधः सप्तविंशतिं ॥
गर्गरीः कलशाद्यैव नवांश्चैवाहरेत् शुभान् ।

गर्गरी मन्यनी ।

सुवर्णपूर्णपात्राणि वैदलानि शुभानि च ।
नैवेद्यपुष्पतीशार्घ्यं हव्यानि च नवानि तु ॥
आहरेत् सर्वमेतद्भि व्यञ्जनञ्च सुशोभनं ।
सुरभीणि च पुष्पाणि जातीर्नीलोत्पलानि च ॥
अन्यानपि पवित्रांश्च फलादीनाहरेद्द्वन्द्वम् १ ।

१ नवभाज इति पुस्तकाकार पाठः ।

१ कुशादीनाहरेद्द्वयं इति पुस्तकाकार पाठः ।

गन्धानिचैव चित्राणि धूपं गुग्गुलुपूर्वकं ॥
 प्रणीतान् विष्टरांश्चैव स्रुचश्च स्रुचमेव च ।
 एवं सन्भृत्य सन्भारांश्चतुरस्रकुलीश्वरान् ॥
 अधिवासार्थमाचार्यान् समुद्दिश्य प्रकल्पयेत् ।
 ये शुद्धा विगतक्रोधा देवब्राह्मणपूजकाः ॥
 आह्वयित्वा सत्कुले जाताः सत्यग्रीवश्चमान्विताः ।
 चतुर्भिरोदृष्टैर्व्यक्त आचार्यैर्विधिमस्थितैः ॥
 समराचीषितैः पूज्य अष्टाहं नक्तभोजनैः ।

एवं पक्षसाध्यव्रतं ।

ततो नियममादाय तत्कण्ठे धनुषाक्ततो ।
 होमन्तु कारयेद्वत्स विप्रैः शाङ्करवंशजैः ॥
 शाङ्करवंशजाः शैवदीक्षावन्तः १ ।
 तदभावेन चैवह होमन्तुद्वूमिमिच्छताः २ ॥
 कारयेत् कुशलान् ज्ञात्वा ३ अव्यङ्गकुलजांस्तथा ।
 होमाभावे प्राप्तिशैवतुल्यानां विधानम् ॥
 गणानामधिपं मातृभूपालं तृपभध्वजं ।
 आदावेव च संपूज्य ततोहोमं समाचरेत् ॥

मातृभूपालः स्कन्दः ।

जातरूपेण देवेशं सर्वकर्मसुसिद्धये ।

१ शाङ्करंतिविजयवन्द्योचनमिति पुस्तकालये पाठः ।

२ शोचं कुश्यादिनिष्ठश्च इति पुस्तकालये पाठः ।

३ सत्कुलान्ज्ञात्वा इति पुस्तकालये पाठः ।

आग्नेयं मातृभिः सार्धं स्वरूपेण हरं यजेत् ॥

भूपालः क्षेत्रपालः आग्नेयः कार्तिकः । जातरूपः सुवर्णं
विनायकरूपं कृष्णचतुर्विंशते । स्कन्दरूपस्तु कार्तिकेयवष्टौ
व्रते वेदितव्यं । भातरूपस्तु विष्णुधर्मोत्तरे ।

जातस्य प्रादुर्भूतस्य रूपकृजमुद्रादि तेन देवेशादीन् पूजयेत् ।

हरस्वरूपेण लिङ्गरूपेण देवेशो गणेशः ।

जुहोति सप्तपालाशानुदिते जुहुयात्तदा ।

पुनश्चास्ते गते भानावाचतृषसमिधो हुनेत् ॥

अर्धरात्रे तिलैः कृष्णै राज्येनाहोस्तु भक्तितः ।

अष्टोत्तर शतं यावत् कारयेद्दोममुत्तमं ॥

मन्त्रेणानेन तत्रैव सर्वाशुभविनाशनात् ।

वरदेन सुसिद्धेन पुष्टिशीतविधायिना ॥

ओं ह्रीं नमः । कृष्णवाससा सप्तसहस्रकोटिसिंहवाहने
सहस्रवदने महाबलेऽपराजिते प्रसङ्गिरे सर्वसैन्यपरकर्म्मनिर्व्वा-
सिनि परममन्त्रच्छेदनि सर्वसत्त्वोन्मादनि सर्वभूतदमनि ।
सर्वदोषास्त्र्यम्बकवधय विद्याउच्छेदय निकृन्तय सर्वदुष्टान् भक्षय
भक्षय ज्वालाजिह्वेकरालवक्त्रे सर्वजन्तून् मयस्फोटय शृङ्खलान्
घोटय घोटय प्रत्यङ्गिरे नमोऽस्तु ते स्वाहा ।

होमं कृत्वा बलिन्दग्ध्राचरं सर्वदिशासु च ।

कशराज्येन रक्तेन पयसा योजितेन च ॥

कशराज्येः सुराचौरैः कृतञ्च सुवर्णिं द्रयात् ।

कुर्यात् सप्तदिनस्यैव सप्तमेऽङ्गे शृणुष्व वै ॥

आहुतौः पञ्च पञ्चत्रा बलिदशकं हुनेत् ।

व्रतखण्डे २१ अध्यायः । हेमाद्रिः ।

३२८

सप्ताह बलिहीमे तत्र सप्तमेऽहनि पञ्चपञ्चाशता निवन्नाव्यस्तमहा-
प्याहृतीः कृत्वा दशकं जुहुयात् दशपूर्णाहुत्यर्थः पृथक् सङ्ग्राहः ।

चतुर्भिः स कुलीत्पत्रैस्त्रिरेकसप्तशर्वरी ।

उषित्वावाय नक्तेन स्नातव्यं ह्यर्चनाय वै ॥

सप्तरात्रं विराजान्तमेकरात्रं यथा शक्त्युपवासेन बलिहीमो
कृत्वा पूजां कुर्वीत नक्तेन पक्षोधारणीयः ।

पञ्चमे पूजनं वत्स कर्त्तव्यं विधिवत्सदा ।

धर्मयज्ञोद्भवैः १ विप्रैस्तृतीयस्तत्त्वतः शृणु ॥

धर्मयज्ञोद्भवैः प्रैवैः ।

दिनानि सप्तमसैकं चन्दनागुरुणा तथा ।

देव्याः परमया भक्त्या जालयेन्मुखमण्डलं ॥

लेखेलेख्यस्य कर्त्तव्या जालनेयं मुखस्य तु ।

इयं चन्दनागरुवर्णा पूर्वकृता ॥

प्रतिमा मृगमयी या तु स्थाप्य तां पूजयेत्सदा ।

प्रक्षाल्य मन्त्रपूतेन प्रमृज्यामलवामसार ॥

मधुना मधुपर्कान्तु कारयेत् पूजयेत्ततः ॥

ततोमृतं पुनर्योज्यं मुखं शान्त्र्यै कारयेत् ।

प्रदक्षिणं ततोभूयोदण्डवत्प्रणिपत्य च ॥

धर्मपालोद्भवैतान्मन्त्रतव्या सुस्तवेन वै ।

१ सर्वयज्ञोद्भवैति पुलकान्तरं पाठः ।

२ मृगमयौमयालेख्यालेखाभ्यां मन्त्रपूतकं वारि मधुनेति क्वचित् पाठः ।

३ मुखमावमिति पाठान्तरम् ।

धर्मपालोभक्तस्यनामस्तोत्रं ।

स्तुत्वा च तत्रैव भक्त्या ब्राह्मणान् विधिवत्ततः ।

काञ्चनैरर्चयेद्वत्स समासैर्वर्ण्योजितैः ॥

पुनर्गीतं तथा नृत्यं वाद्यैश्चैव विशेषतः ।

देव्याश्च पुरतोत्यक्तयन्त्रादेवन्तु कारयेत् ॥

स्वास्थ्यमेव कृतं वत्स गृह्णाति भक्तितः सदा ।

सर्वस्वञ्चैव मे युक्तं मङ्गलाय ददाम्यहं ॥

प्रीत्यर्थं मममन्त्रेण शुचिः स्नात्वा जितेन्द्रियः ।

दान्यान्नान्या समायुक्तां तथाभक्तिं समाचरेत् ॥

न धारयेन्नलङ्कारे यतस्तस्यायमीरितं ।

न चैतं वैनयेत्स्वर्गे नतपोभोक्षमेव च ॥

एवं निष्पादयित्वा तु गृहं गच्छेन्नैस्ततः ।

गत्वा प्राश्य शुचिर्भूत्वा पञ्चगव्यं सुदान्वितः ॥

अष्टौ चैव कुमारीश्च अष्टौ च द्विजसत्तमान् ।

होमयेहिधिवदङ्गैरामासुद्दिश्य च मातरं ॥

मातरं मातृ गणानादिषाष्टौ ।

अष्टौचैव द्विजान् भोज्य व्रतस्थान् शिवधार्मिकान् ।

उद्दिश्य शङ्करं देवं तत्पत्नीं च विनायकं ॥

प्रत्येकमष्टौ सप्ताथ होतारश्च विशेषतः ।

ततः क्षमापयेत्पश्चात् प्रणिपत्य मुहुर्मुहुः ॥

एतत्सर्वं ससुद्दिष्टं भक्त्या विस्तरतो भवेत् ।

दीनान्धकृपणांश्चैव कारुण्यात्तत्र भोजयेत् ॥

यद्दत्तं वेद विप्रेभ्यो यद्दत्तं ब्रह्मचारिणे ॥

ततोऽतिथिषु१ यदत्तं कानन्याश्चैव तत्तथा ।
 तत्सर्वमन्नयं दानं वैमूल्येन विधानतः ॥
 नूनञ्चैवैश्वरे दत्तं सत्यमेतन्नसंगः ।
 अर्हानर्हान् सन्भोज्याः सर्वे चैवोत्सवे मम ॥
 आगया परया प्राप्ताः२ स्त्रीवालविकलाखिलं ।
 वन्धुभिश्च ततः सार्धमुदया परया युतः ।
 हुतमुग्यज्ञशेषन्तु भुञ्जीत प्रयतात्मवान् ॥
 अकाले कीमुदीं कुर्यात् कृष्णपक्षे च यः सदा ॥
 अकालकीमुदी दीपालिकोत्सवं ।
 मामि चाश्वयुजेऽभ्यामारभेत्पर्वणाचरेत् ।
 उषित्वा वाय नक्तेन एकभक्तेन वा पुनः ॥
 विहाय पापमङ्घातं स गच्छेत्परमां गतिं ।
 पर्वणा पञ्चदश्या, अथमुत्सवो व्रतस्योत्तराङ्गं, अतएव
 देवकीकार्यः ।
 ब्राह्मणाः क्षत्रियाः पार्थ वैया या शूद्रजातयः ।
 चरिष्यन्ति व्रतञ्चेदस्तेऽपि यास्यन्त्यनामयं ॥
 एवन्तु विधिवत् कुर्यात् पुत्रवान् सधनो भवेत्३ ॥
 नालिङ्गस्यापदीघोराः शत्रुभिर्न च बाध्यते ।४
 कालीव्रतमिदं ख्यातं कर्त्तव्यं सतकुलीद्वयेः ॥

१ निषिषु दत्त इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

२ आश्वया प्रवराविभा इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

३ धर्मतोभवेदिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

४ शत्रुभिस्तद्ववाधे इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

शान्तिं पुष्टिरमाकामैः विद्याकामैश्च यत्नतः ।
रमाकामैर्लक्ष्मीकामैः ।

मिहायुतमहस्त्रेण उद्यमानेन सञ्चरेत् ।
त्रिमानेनार्कवर्णेन दिवं गच्छेद्यथाचरेत् ॥
एतद्धतं तदा त्वं हि मयोक्तं पापनाशनं ।
भक्त्या च परया वत्स कर्तुमर्हस्यतन्द्रितः ॥
अतिजातिषु मस्वस्थं यः करिष्यति शङ्करं ।
हीनवर्णेन कृष्यं स्यादनेनापकारकः ॥

इति कालिकापुराणीक्तं कालरात्रिव्रतं ।

—o—o—o—o—o—o—

ब्रह्मीवाच ।

आश्विने वाश्र माघे वा चैत्रे वा यावणेऽपि च ।
कृष्णादारभ्य कर्त्तव्यं व्रतं शुक्लावधिं हरेत् ॥
शुक्लावधिर्भवति शुक्लपक्षावधिः ।
एतच्चोक्तमामेष्वेव वक्ष्यमाणेन प्रकारेण कृष्णाष्टम्यामारभ्य
शुक्लाष्टमीं यावत् कर्त्तव्यं ।

अष्टमीमाश्विनीं कृष्णा मेकभक्तेन कारयेत् ।
मङ्गलारूपिणीं देवीमथवा रुद्रवातिनीम् ॥
पूजयेन्नवभेदेन गन्धमान्यनिवन्दनैः ॥
नवभेदेन नवकृत्यो गन्धधूपणेन ।
कन्यका भीजगेहत्स देवीभक्तांश्च मानवान् ॥

नक्तो नवमी कार्या यावन्न दशमीं क्षिपेत् ।
 एकादश्यामुपवसेत् पुनरेष विधिर्भवेत् ॥
 पुनरेषविधिरिति यथा कृष्णाष्टम्यां दिनचतुष्कमेकं भक्तनक्ता
 याचितोपवामात्परमपि दिनचतुष्कतयं नेयमित्यर्थः ।
 याचच्छुक्ताष्टमीं शक्र उपोष्य तु विधानतः ।
 दानं होमी जपः पूजा कन्याभोज्यन्तु प्रत्यहं ॥
 कर्त्तव्यं जितरागेण देव्या भक्तिरतेन च ।
 नवधा पशुघातेन महिषाजाविकादिषु ॥
 कर्त्तव्यं भूतवैतालैर्न चैवात्मचिकीर्षया ॥
 कन्याच्छलङ्कृतास्तत्र^१ हिजा देवीपरायणाः ।
 नवधापशुघातेन नखण्डकरणे न च^२ ॥
 भूतवैतालैर्भूतवैतालार्थं आत्मचिकीर्षया आत्मभोगेच्छया ।
 अलङ्कृताः कार्या इति विशेषः ।
 नष्ट नर्त्तनं प्रक्षाय^३ रथयात्रा सजागरं ।
 दानं देयं यथाशक्त्या सर्वेषामपि शक्तितः ॥
 महाभैरवरूपेण अस्त्रिमालाधराय^४ से ।
 पूजनीया विशेषेण वस्त्रगोभाः पुरादिषु ।
 कर्त्तव्याः सर्वकामार्थप्रापणाय सुरीक्ष्म ॥
 अनेन विधिना शक्र यथेष्टं लभते फलं ॥

१ लङ् इति पुलकाकरे पाठः ।

२ नखण्डकरणेन इति पुलकाकरे पाठः ।

३ नष्ट नर्त्तनं मुख्याय इति पुलकाकरे पाठः ।

मङ्गला भैरवी दुर्गा वाराही त्रिदशेश्वरी ।
 उमा हैमवती कन्या कपाली कैटभेश्वरी ॥
 काली ब्राह्मी महेशो च कौमारी मधुसूदनी ।
 वाराही वामदेव्यो चर्चा नामान्येतानि वै जपेत् ।
 पूजयेद्भोजयेत् कन्याः शास्त्रदृष्टेन कर्मणा ॥
 वस्त्रालङ्कारकांस्यादिकरकाः कटिसूत्रकाः ।
 दातव्या चात्मनः शक्त्या देव्या भक्तेः सुखार्थिभिः ॥
 अथवा नवरात्रञ्च सप्तपञ्चत्रिकं हि वा ।
 एकभक्तेन नक्तेनायाचितोपोषितैः क्रमात् ॥

नवरात्रिकभक्तेन सप्त पञ्चनेन पञ्चायाचितेन तिस्र उप-
 वामेनेति क्रमः । अष्टमोमन्ते कृत्वा नवादिगणना । पूर्व-
 चासमर्थस्यैते पञ्चाः ।

क्षपयेतांश्विने शक्र यावच्छुक्ता तु अष्टमी ।
 पूजयेन्मङ्गलां तत्र मण्डले विधिवत्कृते ॥
 सर्वसम्भारसम्पन्ने सर्वमिदिविधायके ।
 सर्वकामप्रदे शक्र सर्वकामानवाप्नुयात् ॥
 अर्थकामस्य अर्थन्तु राज्यकामस्य राज्यदं ।
 आरोग्यं पुत्रदं वत्स महापातकनाशनं ॥
 सर्ववर्णैश्च कर्त्तव्यं पुंस्त्रोवालनपुंसकैः ।
 सर्वदा सर्वथा देवो यस्माच्छक्र महाफला ॥
 अनेन विधिना वत्स स ददाति विचारणा ।
 सर्वेषां व्रतयोनोनां सर्वव्रतमहाफलं ॥
 नवम्याख्यं महापुण्यं तव सम्यक्प्रकाशितं ।

नाख्येयं भक्तिहीनस्य मूर्खस्य हेतुवादिनः ॥
 देयं भक्ताय शान्ताय शिष्यविष्णुरताय च ।
 देवीभक्तः सदाचारः कन्यापूजारतो नरः ॥
 इहैव सर्वकामानि साधयेद्विचारणात् ।
 विप्रा यथा च पूज्यानां दानानां काञ्चनं यथा ॥
 भूर्लीकः सर्वलोकानां तीर्थानां जाङ्गवी तथा ।
 यथाश्वमेधीयज्ञानां मथुरा मुक्तिकाङ्क्षिणां ॥
 वीणां यथाहिभुक् श्रीश्री देवानामच्युतो यथा ।
 तथा सर्वव्रतानान्तु वरोक्तं भाषपञ्चकं ॥
 वसिष्ठभृगुगर्गादौशीर्णं कृतयुगादिषु ।
 नभोगंस्वरौषादौशीर्णं चैतायुगादिषु ॥
 वीरभद्रादिभिर्विप्रेः शूद्रैरन्यैः कलौ युगे ॥
 दिनानि पञ्च पूज्यानि चोर्णमेतन्महाव्रतं ।
 ब्राह्मणैर्वैद्यचर्य्येण जपहोमक्रियादिभिः ॥
 क्षत्रियैश्च तथा सत्यगौचव्रतपरायणैः ।
 नाभयो व्याधयस्तस्य न च शत्रुभयं भवेत् ॥
 संसारपूजितो नित्यं^१ महानेकापिजायते ।
 यवणात् सर्वकार्याणि मिष्यन्ति नात्र मंगयः ॥

इति देवीपुराणोक्तं मङ्गलाव्रतं ।

—(m 1710)—

अथ भीष्मपञ्चकव्रतं ।

नारदीयपुराणात् ।

नारद उवाच ।

यदेतदचलं पुण्यं व्रतानां परमं व्रतं ।
कर्त्तव्यं कार्तिके मासि प्रयत्नाद्भीष्मपञ्चकं ॥
विधानं तस्य विस्पष्टं^१ फलञ्च सुरसत्तम ।
कथयस्व प्रसादात्के मुनीनां हितकाम्यया ॥

ब्रह्मोवाच ।

प्रवक्ष्यामि महापुण्यं व्रतं व्रतवताम्बर ॥
भीष्मेणैतद्यतः प्राप्तं व्रत पञ्चदिनात्मकं ।
महाशङ्कादासुदेवस्य तेनोक्तं भीष्मपञ्चकं ॥
व्रतस्यास्य गुणान्वक्तुं कः शक्तः केन वादृते ।
व्रतञ्चैतन्महापुण्यं महापातकनाशनं ॥
अतो नरैः प्रयत्नेन कर्त्तव्यं भीष्मपञ्चकं ।
कार्तिकस्यामले पक्षे स्नात्वा सम्यग्यतव्रतः ॥
एकादश्यान्तु गृह्णीयाद्धतं पञ्चदिनात्मकं ॥
प्रातस्नात्वा विधानेन मध्याह्ने च तथाव्रती ।
नद्यां निभेरगर्त्ते वा समालभ्यञ्च गोमय ॥
यवव्रीहितिलैः सम्यक् पितृन् मन्त्रपूयेत् क्रमात् ।
स्नात्वा मौनं ततः कृत्वा धौतवामा दृढव्रतः ॥

^१ विधानं तस्य स्पष्टफलमिति । अकालं पाठः ।

ततः संपूजयेद्देवं सर्वपापहरं हरिं ।
 आपयेदक्षुतं भक्त्या मधुचौरघृतादिभिः ॥
 तथैवं पञ्चगव्येन मन्थचन्दनवारिणा ।
 चन्दनेन सुगन्धेन कुङ्कुमेनाथ केशवं ॥
 कर्पूरोशीरमिश्रेण लेपयेद्गरुडध्वजं ।
 अर्चयेदुचितैः पुष्पैर्गन्धधूपसमन्वितैः ॥
 गुग्गुलुं घृतसंयुक्तं दह्नेदक्षयभक्तिमान् १ ।
 दीपकान्तु दिवारात्रौ दद्यात् पञ्चदिनानि तु ॥
 नैवेद्यं देवदेवस्य परमाद्यं निवेदयेत् ।
 एवमभ्यर्च्य देशेन स्तुत्वाचैव प्रणम्य च ॥
 श्रीं नमोभगवते वासुदेवेति जपेदष्टोत्तरं शतं ।
 जुहुयाच्च घृताभ्यक्तं तिलव्रीहिगवं व्रती ॥
 धडचरेण मन्त्रेण स्वाहाकारान्वितेन च ॥
 श्रीं नमोविष्णवेति धडचरोमन्त्रः ।

सपास्य पश्चिमां सन्ध्यां प्रणम्य गरुडध्वजं ।
 जपित्वा पूर्ववन्मन्त्रं क्षितिगाथो भवेन्नरः ॥
 सर्वमेतद्विधानान्तु कार्यं पञ्चदिनेष्वपि ।
 विशोषोक्तं व्रते चास्मिन् यदन्यूनं २ शृणुष्व तत् ॥
 प्रथमेऽङ्गि हरेः पादौ पूजयेत् कमलैर्नरः ।
 द्वितीये विष्वक्पत्रेण जानुदेशं समर्चयेत् ॥
 पूजयेच्च तृतीयेऽङ्गि नाभिं भृङ्गारकेण त् ।

१ दह्नेदक्षुतभक्तिमानिति पुस्तकालये पाठः ।

२ यदन्यूनमिति पुस्तकालये पाठः ।

वाण-विस्व-जयाभिश्च ततः स्कन्धौ समर्चयेत् ।
 ततोऽनूपूजयेच्छीर्षं मालत्या चक्रपाणिनं ॥
 कार्त्तिक्यां देवदेवस्य भक्त्या तद्गतमानसः ।
 पूजयेज्जपमन्त्रेण गन्धधूपं निवेदयेत् ॥
 अर्चयित्वा हृषीकेशमेकादश्यां समाहितः ।
 त्रिःप्राश्य गोमयं सम्यक् एकादश्यामुपावसेत् ॥
 गोमूत्रं मन्त्रवद्भयो द्वादश्यां पूजयेद्धृती ।
 क्षीरञ्चैव त्रयोदश्यां चतुर्दश्यां तथा दधि ।
 संप्राश्य कायशुद्ध्यर्थं लङ्घनीयश्चतुर्द्दिनं १ ॥

प्राशनं, होममन्त्रेण ।

पञ्चमे तु दिने स्नात्वा विधिवत्पूज्य केशवं ।
 भोजयेद्वाह्मणान् भक्त्या तेभ्यो दद्याच्च दक्षिणां ॥
 तथोपदेशारमपि पूजयेद्वस्त्रभूषणैः ।
 ततो नक्तं समश्नीयात्पञ्चगव्यपूरःसरं ॥
 एवं सम्यक् समाप्यं स्यात् यथोक्तं व्रतमुत्तमं ।
 सर्वपापहरं पुण्यं प्रख्यातं भीष्मपञ्चकं ॥
 जन्मप्रभृति जन्मान्मन्यक्ता पुण्यमवाप्नुयात् ।
 तत्फलं समवाप्नोति सन्यक्ता भीष्मपञ्चके ॥
 मद्यपोयः पिवेन्मद्यं जन्मनोभरणान्तिकं ।
 तद्भीष्मपञ्चके त्यक्तसम्प्राप्त्यधिकं फलं ॥

भविष्योत्तरात् ।

कृष्ण उवाच ।

कार्तिके शुक्लपक्षस्य शृणु धर्मं पुरातनं ।
 एकादश्यां समारभ्य विज्ञेयं भीष्मपञ्चकं ॥
 दुष्करं सत्वहीनानामशक्यं बालचेतसां ।
 पापधीः परिहर्त्तव्या नञ्चार्येण निश्चया ॥
 मद्यं मांसमसत्यञ्च वर्ज्येत् पापभाषणं ।
 शाकाहारेण मुन्यन्तेः कृष्णार्चनपरैर्नरेः ॥
 स्त्रीभिर्व्याक्येन कर्त्तव्यं^१ स्वसत्यः पुण्यवर्धनं ।
 विधवाभिस्तु कर्त्तव्यं पुत्राणां शुभहृदये^२ ॥
 सर्वकामसमृद्ध्यर्थं मोक्षार्थञ्चैव पाण्डव ।
 नित्यं स्नानेन दानेन कार्तिकीं यावदेव तु ॥
 वैश्वदेवस्तु कर्त्तव्यो विष्णुध्यानपरायणैः ।
 वैश्वदेवः सर्वदेवताहीमः ताय विष्णुतिभूतित्वेन भावनीयाः ।
 या यस्य प्रतिमा कार्या रौद्रवक्रातिभीषणा^३ ।
 खड्गहस्तातिविक्रता तौ हि दंष्ट्राकरालिनी ॥
 तिलप्रस्थोपरि स्थाप्या कृष्णवस्त्रेण वेष्टिता ।
 रक्तपुष्पाकृतापीडां ज्वलत्काञ्चनकुण्डलां ॥
 संपूज्य परया भक्त्या धर्मराजस्य नामभिः ।

१ स्त्रीभिर्व्याक्येन कर्त्तव्यमिति पुष्पकालरे पाठः ।

२ विधवावैतु कर्त्तव्यः पुराण शुभहृदये इति पुष्पकालरे पाठः ।

३ रौद्रवक्रातिभीषणा इति पुष्पकालरे पाठः ।

इममुच्चारयेन्मन्त्रं गृहीतकुसुमाञ्जलिः ॥

यदन्यजन्मनि कृतमिह जन्मनि वा पुन ।

पापं प्रशममायातु तवपादप्रसादतः ।

एवं संपूज्य विधिवत् प्रतिमाञ्च सकाञ्चनां ॥

सकाञ्चना सुवर्णदक्षिणायुक्ता ।

वाचकाय प्रदातव्या धर्मीमे प्रीयतामिति ॥

तद्वच्च देवदेवस्य कृष्णस्याङ्गिष्ठकारिणः ॥

तद्वदिदिति हरिप्रतिमा देया ।

कृत्वा पूजां यथा शक्या विप्राणां वेदवेदिनां ।

दद्याद्विरण्यं गाञ्चैव कृष्णो मे प्रीयतामिति ॥

अन्येषामपि दातव्यं सत्कृत्य वसुवाञ्छितं ।

कृतकृत्यः स्थितोभूत्वा विरक्तः संयतोभवेत् ॥

शान्तचेता निराबाधः परम्यदमवाप्नुयात् ।

नीलोत्पलदलश्यामसुतुर्दृष्टुर्भुजः ॥

अष्टपादेकनयनः शङ्खकर्णो महास्वनः ।

जट्टी द्विजिह्वस्ताम्रास्यो मृगराजतनुच्छदः ॥

चिन्तनीयो महादेवा यस्य रूपं न विद्यते ।

व्रतदेवताया महाविष्णोरिदं रूपं चिन्त्यं पूजा देया च मृग-

राजतनुच्छदः सिंहत्वक् ।

इदं भीष्मेण कथितं शरतस्यगतेन मे ।

तदेतत्ते मया ख्यातं दुष्करं भीष्मपञ्चकं ॥

व्रतं तद्वाजयादूर्ध्वं प्रवरं भीष्मपञ्चकं ।

यस्तस्मिंस्तोषयेन्नृणां तस्मै मुक्तिप्रदोऽप्युतः ॥
 ब्रह्मचारौ गृहस्थौवा वानप्रस्थोऽथवा यतिः ।
 प्राप्नोति वैष्णवं स्थानं तत् कृत्वा भीष्मपञ्चकं ।
 ब्रह्महा मद्यपस्तेयो गुरुगामी सदावृत्तौ ।
 मुच्यते पातकात् सम्यक् कृत्वैकं भीष्मपञ्चकं ॥
 अथास्मिंस्तीक्ष्णतोषिणोऽनृणां मुक्तिप्रदोऽभवेत् ।
 शुत्वैतत् पठामानस्तु पवित्रं भीष्मपञ्चकम् ॥
 मुच्यते पातकान्मर्त्यः पाठकोविष्णुलोकभाक् ।
 धन्यं पुण्यं पापहरं युधिष्ठिर महाव्रतं ॥
 यच्चीर्त्वा ब्रह्महा गोघ्नः सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
 यद्भीष्मपञ्चकमिति प्रथितं पृथिव्या
 मेकादशीप्रभृति पञ्चदशीनिरुद्धं ।
 मुख्यभोजनपरस्य नरस्य तस्मिन्
 त्रिष्टुप् फलं दिशति पाण्डवगार्ङ्गधन्वा ॥

इति भीष्मपञ्चकव्रतं ।

— ००० —

व्यास उवाच ।

यदजर्माहानवा पूर्वं चार्चयित्वा जनार्दनं ।
 तां योगनिद्रामसृजन्नेवौ रक्षार्चमात्मनः ॥
 एकांशतोभगवती सिद्धिमिकां तदेव तु ।
 एकपदे तु संपन्वा कार्तिके केशवाग्रया ॥

चतुर्थ्यामथवाष्टम्यां नवम्यां वा सुसिद्धिदा ।
 चतुर्दश्यामथो स्त्रीभिः सुस्नाताभिर्यथाक्रमं ॥
 गृहाहास्ते तु यत्र स्यादेकान्ते तु फलद्रुमः ।
 तत्तथा पुण्यधूपान्नसम्पदा पूजयेच्च तां ॥
 एका पुत्रवती नारी मनोवाकायसंयुता ।
 सर्वोपकरणैर्युक्तं गृहीत्वा ग्राममुत्तमं ॥
 ततोददाति श्वेनाय सुप्रीता प्रीतिकामिनी ॥
 इममासनवस्त्राद्यं भगवत्यै निवेदय ।
 इत्युक्त्वा स्वगृहं याति ततः पूर्णामनोरथाः ॥
 कृते युगे प्रसिद्धोऽयं दामवधृतको यथा ।
 दामद्वयभृतक इव प्रेष्यत्वेन कृते युगे प्रसिद्ध इत्यर्थः ।
 अथोपरिवरी राजा ऋतुपर्णः पुरेस्वके ।
 निधाय प्रददौ नेतुं श्वेनाय स्वां प्रियां प्रति ॥
 युगेष्वन्येषु मन्त्रान्तु जपेत्वनल इत्यपि ।
 जह्वाति भूमौ संप्राप्ताः प्राप्नुस्वी याति वैश्वं च ॥
 ग्रामान्त्रणन्तु यस्यास्ति पक्षिणा निर्मितं पुरा ।
 स एव पक्षी गृह्णाति सग्रासमिति निश्चयः ॥
 आदौ गृहे ततो भुङ्क्ते सा नारी सुसमाहिता ।
 पश्चात् गृहपतिर्भुङ्क्ते समत्यज्ञातिवान्धवः ॥
 गृहदेवो तु तेनैव विधिना पूजयेत् पतिं ॥
 श्वेनघासो न देयश्च न च वृक्षं समाश्रये ।

किन्तु गुप्तं गृहेत्वार्था पूजयीत पतिव्रता ॥
 युगेष्वन्येषु सन्नातो दम्पत्योर्नो भवेद्यदा ।
 तदा स्वकुलधर्म्यन्तु तावन्मात्रं करोति सः ॥
 याश्चेनयापत्युरनुज्ञां विना तु श्येनया गृह एव देवी पूज-
 यितव्येत्यर्थः ।

इत्यादित्य पुराणोक्तं श्येनयासनविधिः ।

—000—

ईश्वर उवाच ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि व्रतानान्तु यथाक्रमं ।
 अष्टम्यान्तु चतुर्दश्यां पञ्चयोरुभयोस्तथा ॥
 उपोष्य संयतो मूत्वा त्रिविधेनान्तरात्मना ।
 ततोपराज्जे शुचिना विशेषात् पूजयेच्छिवं ॥
 पूर्वोक्तेन विधानेन जपहोमादिमाचरेत् ।
 पूजयेत्परया भक्त्या गुरुं वा साधनादिकैः ॥
 ततस्तु पञ्चगव्यैश्च प्राशयेच्छुक्लकथयं ।
 समानद्योपसंस्पृश्य हविष्याग्नेन वर्त्तनं ॥
 अग्नेन विधिना यद्वाद्यावज्जीवं व्रतं चरेत् ।
 पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः ॥
 वसन्ति शिवलोकेषु शिवव्रतप्रभावतः ।
 एतच्छिवव्रतं नाम व्रतानामुत्तमोत्तमं ॥

इति कालोत्तरोक्तं शिवव्रतं ।

—000—

मैत्रेय उवाच ।

कार्तिकः खलु मासो वै सर्वदेवमयोमहान् ।
 कृष्णपक्षे विशेषेण तत्र पञ्चदिनानि तु ॥
 पुण्यानि तेषु यद्दत्तमक्षयं सर्वकार्मिकं ।
 एकादश्यां परैर्दत्तं दीपं प्रज्वाल्य मृषिकां ॥
 मानुष्यं दुर्लभं पाप्य पराङ्गतिमवाप सा ।
 बुधकोऽपि चतुर्दश्यां पूजयित्वा जनार्दनं ॥
 निर्भक्तिः परसंगत्या विष्णुलोकं जगाम सः ।
 व्यापाकादित्रयोदश्यां दोषान् दत्त्वा परैः कृतान् ।
 वेश्या लीलावती भूत्वा जगाम स्वर्गमक्षयं ।
 कोपः कश्चिदमावास्यां पूजां दृष्ट्वा च ग्राह्णिणः ॥
 सुहृदयस्त्वजापालो राजराजेश्वरोभवेत् ।
 तस्याद्दीपाः प्रदातव्या रात्रावस्तमितेरवौ ॥
 गृहेषु सर्वगोष्ठेषु चैत्येऽथायतनेषु च ।
 देवानाञ्चैव रथ्यासु श्मशानेषु सरःसु च ।
 ब्रह्माग्निना शुभार्थाय यदा पञ्चदिनानि तु ॥
 वापिनः पितरो ये च क्षुत्पिण्डोदकक्रियाः ।
 चतुर्दश्याममावस्यां पिण्डदस्याप्नुवन्ति ते ॥
 कर्मणिमिति शेषः ।
 तत्र श्रीः पूजनीया तु मनुष्याणां प्रयत्नतः ॥
 श्रीकामैस्तत्रगर्वाणां क्रोडितव्यं प्रयत्नतः ।
 बन्धुभिः सहितैः पत्न्या नृत्यगौतमजागरैः ॥

यदि हर्षं प्रयातीह तस्य संवत्सरं जयं ।
 द्युते तु क्रीडिते हानौ हानिः स्याद्विजये ध्रुवं ॥
 सुखप्रोतिसुलाभः स्याद्वत्सरं मनुजस्य तु ।
 गौर्यां जिता पुरा शम्भुर्नमोद्युतैर्विसर्जितः ॥
 तेनाभी शङ्करो दुःखी मर्षदोमा सुखान्विता ।
 श्रिया सार्धं जगद्यानि श्रेते विष्णुः सुखान्वितः ।
 तस्यां रात्रौ जनानाम् पतोऽर्धं सुखसुप्तिका (१) ॥
 नन्दा सुनन्दा सुरभी सुखीना सुमना तथा ।
 निर्गता मथ्यमानाभ्यौ उषः स्नानं शुभप्रदं ॥
 कामधेनोरात्रिर्भावभावितस्वदेहात् उषः प्रशस्त इत्यर्थः ।
 तत्र स्नात्वा समभ्यर्च्य धेनुं पूज्य प्रयत्नतः (२) ।
 गोदानफलमाप्नोति नरो विगतकल्मषः ॥
 एकादश्यामुपोष्याथ नरो दिनचतुष्टयं ।
 छुतेन स्नापयेद्विष्णुं गव्येन पयसापि वा ॥
 नक्ताशी गोरसेर्हव्यैः पूजयेन्मधुसूदनं ।
 गन्धपुष्पैः सुनैवेद्यैर्वस्त्रालङ्कारकुण्डलैः ॥
 शङ्खमिचक्रौहतवाहुविष्णोः
 गदाचक्रस्तस्य तु शार्ङ्गपाणोः ।
 अर्घ्यं प्रयच्छामि जनार्दनस्य
 श्रिया युतस्यापि धराधरस्य ॥

(१) सुख पूजिका इति कश्चित् पाठः ।

(२) धेनुः पञ्च प्रशस्तत इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

श्रियःपतिं श्रीधरमेव कामान्

श्रियः सखायं हि श्रियोनुमूलं ।

नामान्यहं श्रीधरश्रीनिवासं

समर्चिती मे प्रददातु कामान् ॥

एवं पूज्य विधानेन श्रियायुक्तन्तु नामभिः ।

पृथक् जागरणं कुर्यात् श्रिया सार्धं जगत्पतेः ॥

या देवी भार्गवं तेजः कुलं सर्वत्र पूजिता ।

आयातु सा गृहे नन्दा सुप्रीता वरदा मम ॥

याङ्गिरसं सदा देवी सुनन्दा प्रत्युपस्थिता ।

आयातु मे गृहे सा तु सुप्रीता वरदा सती ॥

सुरभी या भरद्वाजं कामधेनुः सुकामदा ।

सदा भजेत् गृहं सा तु ममायातु सुरार्चिता ॥

सुशौला कश्यपं या तु भजे सर्वत्र कामदा ।

सा मे भवतु सुप्रीता कामधेनुर्गृहे सदा ॥

सुमना या वसिष्ठन्तु संप्राप्य मुमुदे शुभा ।

सा मे गृहं सदायातु कामदा सुरपूजिता ॥

एवं पूज्य विधानेन प्रभाते विमले शुभे(१) ।

शुक्लाम्बरधरः स्नातः शुक्लमास्थानुलेपनः ॥

कृतनित्यक्रियो हृष्टः कुण्डलाङ्गदभूषितः ।

प्रातःप्रतिपदि प्रीतः कामधेनुप्रदो भवेत् ॥

कामधेनुस्तु वज्रपुराणीता विज्ञेया सा च दानखण्डे एव
द्रष्टव्या ॥

वर्यं हरेः सर्वमिदं पवित्रं
तत्रापि वर्यां शरदेव तासां(१) ।
तस्मिञ्कुम्भः कार्तिकनाममास
स्तत्रापि पुण्यो हि बभूव दर्शः ॥
यस्यां हरोदैत्यभयाद्विमुक्तो
उरस्थलं प्राप्य सुखेन श्रिते ।
लक्ष्म्यां पुराद्यापि विनिर्मिता वै
कामप्रदा धेनव एव यत्र ॥
वर्हिर्गर्भे यत्र दिने समस्ताः
सुधेनवा भूमितले भ्रमन्ति ।
गृहेन यस्मिन् कथयन्ति लीला
हानिचयस्तत्र च सत्यमेतत् ॥
तस्मात्त्वमत्रैव च कामधेनुं
दद्याः समुद्दिश्य तु केन वन्तु ।
विप्राय वै सर्वगुणाय यत्र
कृत्वा व्रतं कृत्स्नमती हरेस्तु ॥

सप्तापरान् सप्तावरानात्मानञ्चैव मानवः ।
सप्तजन्मकृतात्पापात् मोक्षयत्यवनीपते ॥
पदे पदेऽष्टमेधस्य फलं प्राप्नोति मानवः ।
दानानामेव शृण्वन्नामुत्तमं परिकीर्त्तितम् ॥
सर्वकामप्रदं धन्यं पापघ्नं सर्वदं शुभम् ।

(१) वर्यां हरेः सर्वमिदं पवित्रं तत्रापि वर्यां शरदेव तामामिति वाङ्मनः ।

सर्वेषामेव पापानां पापानां(१) महतामपि ॥
 प्रायश्चित्तमिदं शस्तं कथितं ब्रह्मणा नृप ।
 ब्रह्मविट्चक्रशूद्राणां कर्त्तव्यञ्च व्रतं नृप ॥
 सर्वकाम फलार्थाय कामधेनुव्रतं सतां ।
 व्रतान्ते(२) तिलहोमश्च कामधेनीः प्रयत्नतः ॥

इति बह्मपुराणोक्तं कामधेनुव्रतं ।

—०००(१०००)—

सनत्कुमार उवाच ।

अमावास्यान्तु देवाय कार्तिके मासि केशवं ।
 अभयं प्राप्य सुप्तास्तु सुखाक्षीरोद(३) सानुषु ॥
 लक्ष्मीर्देव्यभयान्मुक्ता सुखं सुप्ता भुजोदरे ।
 चतुर्भुजस्य हस्तान्ते ब्रह्मा सुप्तस्त पङ्कजे ॥
 अतोऽर्थं विधिवत् कार्या मनुष्यैः सुखसुप्तिका ।
 दिवा तत्र न भोक्तव्यमृते वासातुरान् जनान् ॥
 प्रदोषसमये लक्ष्मीं पूजयित्वा ततः क्रमात् ।
 दीपवृक्षाश्च दातव्याः शक्त्या देवगृहेषु च ॥
 चतुष्यथे श्मशानेषु नदीपर्वतवैश्वसु ।
 वृक्षमूलेषु गोष्ठेषु चत्वरेषु गुहासु च ॥

(१) क्षाताक्षामिति पाठान्तरं ।

(१) वृक्षाश्चैव कश्चित् पाठः ।

(१) चोपैविति पाठान्तरं ।

वस्त्रैः पुष्पैः शोभितव्याः क्रयविक्रयभूमयः ।
 दीपमालापरिचिप्ते प्रदेशे तदनन्तरं ॥
 ब्राह्मणान् भोजयित्वादौ विभज्य च वृभुक्षितान् ।
 अलङ्कृतेन भोक्तव्यं नववस्त्रोपशोभिना ॥
 स्निग्धैर्गन्धैर्विदग्धैश्च वास्यैर्विभृतैः(१) सह ।
 शङ्करस्तु पुरा द्यूतं ससर्जं सुमनोहरं ॥
 कार्तिके शुक्लपक्षे तु प्रथमेऽहनि सत्यवत् ।
 जितश्च शङ्करस्तत्र जयं लेभे च पार्ष्वतो ॥
 अतोऽर्थं शङ्करो दुःखी उमा नित्यं सुखीपिता ।
 तस्माद्यूतं प्रवर्त्तव्यं प्रभाति तत्र मानवैः ॥
 तस्मिन् भवेज्जयोयस्य(२) तस्य संवत्सरं शुभं ।
 पराजये विरुद्धस्तु लब्धनाशस्ततोभवेत् ॥
 श्रोतव्यं गीतवाद्यादि स्वगुलितैः स्वलङ्कृतैः ।
 विशेषवच्च भोक्तव्यं प्रशस्तैर्वास्यैः सह ॥
 तस्यां निशायां कर्त्तव्यं शय्यास्थानं(३) सुशोभनं ॥
 गन्धपुष्पैस्तथा वस्त्रै रत्नैश्चात्थैरलङ्कृतं ।
 दीपमालापरिचिप्तं तथा धूपेन धूपितं ॥
 दयिताभिश्च सहितैर्नया सा च भवेन्निशा ।
 नवैर्वस्त्रैश्च संपूज्य द्विजसम्बन्धिवान् यान् ॥
 इत्यादित्यपुराणोक्तं सुखसुनिव्रतं ।

(१) स्निग्धतै इति पुलकान्तरे पाठः ।

(२) तस्मिन् द्यूते जयो यस्मैति पाठान्तरं ।

(३) शय्यास्थानमिति पाठान्तरं ।

अथ कौमुदीमहोत्सवः ।

पद्मपुराणे ।

कार्तिके मास्यमावास्या तस्यां दीपप्रदीपनं ।
 गालायां ब्रह्मणः कुर्यात् स गच्छेत्परमं पदं ॥
 प्रतिपदि ब्राह्मणस्य गुडमिश्रैः सदीपकैः ।
 वामोभिरहतेः पूज्या गच्छेद्ब्रह्मणः पुरं ॥
 गन्धैः पुष्पैर्नवैर्वस्त्रैः सम्मानं भूषयेत्तु यः ।
 तस्यां प्रतिपदा या तु स गच्छेद्ब्रह्मणः पदं ॥
 मन्त्रापुण्या तिथिरियं बलिरान्यप्रवर्त्तिनी ।
 ब्रह्मणस्तु प्रिया नित्यं वलेर्या परिकीर्त्तिता ॥
 ब्राह्मणान् भोजयेत् योऽस्यामात्मानञ्च विशेषतः ।
 स याति परमं स्थानं विष्णोरभिततेजसः ॥
 चेन्ने मामि महाबाहो पुण्या प्रतिपदा वरा ।
 तत्र यश्च तिलांसृष्ट्वा स्नानं कुर्यान्नरोत्तमः ॥
 न तस्य दुरितं किञ्चिन्नाधयो व्याधयोनृप ।
 भवन्ति कुरुगार्दूल तस्मात् स्नानं समाचरेत् ॥
 दिव्यनीराजनं तद्वत् सर्वरोग प्रणाशनं ।
 योमहिषादि यत्किञ्चित्तत्सार्धं भूषयेन्नृप ॥
 तैलवस्त्रादिभिः सर्वान्तीरणाधस्ततो नयेत् ।
 ब्राह्मणानां ततोभोज्यं कुर्यात् कुरुकुलोदह ॥
 तिस्र एताः पुरा प्रोक्ताः तिथयः कुरुनन्दन ।
 कार्तिकाश्वयुजे मासि चेन्ने वापि तथा नृप ॥

स्नानं दानं शतगुणं कार्तिकायां तथा नृप ।
वलिराज्येषु शुभदा पांशुनाशुभनाशनो ॥

वामनपुराणे ।

वलिनं प्रति त्रिविक्रम उवाच ।
तथा यदुद्भवं पुण्यं वृत्ते शक्र महीक्षवे ।
वीरप्रतिपदा नाम तव भावो महीक्षवः ।
तत्र त्वां नरगार्दूल हृष्टाः पुष्टाः स्तलङ्घिताः ॥
पुष्पधूपप्रदानेन अर्चयिष्यन्ति गत्ततः ।
ततोक्षवो मुख्यतमो भविष्यति दिवानिशं ॥
यथैव राज्ये भवतस्तु माम्पतं
तथैव भाविष्यति कौमुदी च ।

भविष्योत्तरात् ।

श्रीकृष्ण उवाच ।

पुरा वामनरूपेण प्रार्थयित्वा धरामिमां ।
वलियज्ञे हरिः पूर्वं क्रीतवान् विक्रमैस्त्रिभिः ॥
इन्द्राय दत्तवान् राज्यं वलिनं पातालवामिनं ।
कृत्वा दैत्यपतेर्दत्तमहोरात्रत्रयं नृप ॥
एकमेवार्थभोगार्थं वलिराज्यति चिह्नितं ।
मरुहस्यं तदेतत्ते कथयामि नरोत्तम ॥
कार्तिके कृष्णपक्षस्य पञ्चदश्यां निगागमे ।
यद्येष्टचेष्ट दैत्यानां राज्यन्तेषां महातले ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

विशेषेण हृषीकेश कौमुदीं ब्रूहि मे प्रभो ।
 किमर्थं दीयते दानं तस्यां का देवता भवेत् ॥
 किञ्च तत्र भवेद्देयं केभ्यो देयं जनार्दन ।
 प्रहर्षः कीदृश निर्दिष्टः क्रोडा कात्र प्रकीर्त्तिता ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

कार्तिके कृष्णपक्षे तु चतुर्दश्यां दिनोदये ।
 अवश्यमेव कर्त्तव्यं स्नानं नरकभीरुभिः ॥
 अपामार्गान् पङ्क्तवान् वा भ्रामयेच्छिरसोपरि ।
 शीतलोष्णसमायुक्त सकण्ठकदलान्वित ॥
 हर पापमपामार्गं भ्राम्यमाणः पुनः पुनः ।

ब्राह्मण मन्त्रः ।

पङ्क्तवान् क्षीरद्रुमाणां ।

ततश्च तर्पणं कार्यं धर्म्मराजस्य नामभिः ।
 यमाय धर्म्मराजाय मृत्युवै चान्तकाय च ॥
 वेवस्वताय कालाय सर्वभूतक्षयाय च ।
 औदुम्बराय दध्नाय नीलाय परमेष्ठिने ॥
 वृकोदराय चित्राय चित्रगुमाय वै नमः ।
 नरकाय प्रदातव्यो दीपः संपूज्य देवता ॥
 ततः प्रदीपसमये दीपान् दद्यात्क्षीरमान् ।
 ब्रह्मविष्णुगिवादीनां भवनेषु मठेषु च ॥

कूटागारेषु चैत्येषु सभासु च नदीषु च ।
 प्राकारोद्यानवापीषु प्रतोलीनिष्कटेषु च ॥
 सिद्धार्हबुद्ध चामुण्डाभैरवायतनेषु च ।
 मन्दरेषु विविक्तेषु हस्तिशालासु चैव हि ॥
 एवं प्रभातसमये ह्यमावास्यां नराधिप ।
 स्नात्वा देवान् पितॄन् भक्त्या संपूज्याथ प्रणम्य च ॥
 कृत्वा तु पार्व्याश्चन्द्रादीन् धीरष्टादिभिः ।
 भोज्यैर्नानाविधैर्विप्रान् भोजयित्वा क्षमापयेत् ॥
 ततोऽपराह्णसमये धोपयेन्नगरे नृपः ।
 स्वस्वराज्यं बलिर्होत्रं यथेष्टं चेष्टतामिति ॥
 लोकथापि पुरा हृष्टः सुधाधवलितार्जरे ।
 वृक्षचन्दनमालाभिस्त्वाचिरे च गृहे गृहे ॥
 द्यूतपानरतोद्रिक्तनरनारीमनीहरे ।
 नृत्यवादितमन्तुष्टमं प्रखलितदीपके ॥
 अन्योन्यप्रोतिसंज्ञं दत्ततालनके जने ।
 ताम्बूलहृष्टवदने कङ्कमलोदचर्चिरे ॥
 दुर्धूलपट्टनेपथ्यस्वर्णमाणिक्यभूषणे ।
 अद्भुतोद्भूतशृङ्गारप्रदर्शितकुतूहले ॥
 युवतीजनसङ्कीर्णं वस्त्रोज्ज्वलविहारिणि ।
 दीपमालाकुले रम्ये विध्वस्तध्वान्तवम्बने ॥
 प्रदीपपरहिते शस्त्रे दीपादिरहिते शुभे ।
 यात्राविहारमञ्चारजयजीवेति वादिभिः ॥

क्षुद्रोपसर्गं रहिते चौरजायाभयोदृते ।
 मित्रस्वजनसम्बन्धिसुहृत्प्रेमाभिरञ्जिते(१) ॥
 ततोऽर्द्धरात्रसमये स्वयं राजा व्रजेत्पुनः ।
 अवलोकयितूरम्यं पद्मासमेव शनैः शनैः ॥
 महता तूर्यघोषेण ज्वलद्भिर्हस्तदीपकैः ।
 हर्म्यशोभान्तु संपश्यन् क्षतरक्षैः स्वकैर्नरैः ॥
 संहृष्टा महदाश्चर्यं चिन्तयित्वात्मनः शुभं ।
 वलिराज्यप्रमोदञ्च ततः स्वगृहमाव्रजेत् ॥
 एवं गते निशीथे तु जने निद्राम्बलोचने ।
 तावन्न नरमारोभिः सूर्य्यङ्गिण्डिमचन्दनैः ॥
 निष्क्राम्यते प्रहृष्टाभिरलक्ष्मीः स्वगृहाङ्गणात् ।
 ततः प्रवृद्धे(२) सकले जने जातमहोत्सवे ॥
 मातुर्दीपकहस्ते च स्नेहनिर्भरवत्सले ।
 वेश्या विलासिनी स्वार्थं स्वस्तिमङ्गलचारिणी ॥
 गृह्णात् गृहं व्रजन्ती च पादाभ्यङ्गप्रदायिनि ।
 पिष्टकोद्वर्तनपरे गुरुशूषणा कुले ॥
 द्विजाभिवादनपरे सुखरात्रादिवदिनि ।
 सुवासिनीभ्यो दाने च दीयमाने यदृच्छया ॥
 राजा प्रभातसमये यथार्हं पूजयेज्जनं ।
 सद्भावेनैव सन्तोष्या देवाः सत्पुरुषा द्विजाः ॥
 इतरेवाक्षपानेन वाक्प्रदानेन पण्डिताः ॥

(१) प्रभृति रञ्जिते इति पाठान्तरं ।

(२) प्रसुप्त इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

वस्त्रैस्ताम्बूलदानैश्च पुष्पकर्पूरकुङ्कुमैः ।
 भक्ष्यैरुच्चावचैर्भोज्यैरन्तःपुरविस्त्रासिनी ॥
 ग्रामैर्विषय(१) दानैश्च पुष्पकर्पूरकुङ्कुमैः ।
 भक्ष्यैरुच्चावचैर्भोज्यैरन्तःपुरविस्त्रासिनी ॥
 ग्रामैर्विषमदानैश्च सामन्तनृपतीन् धनैः ।
 पदातिजनसंलग्नान् ग्रैवेयैः कण्ठकैः शुभैः ॥
 सनामाङ्कैः स्वयं राजा तोषयेत् स्वजनान् पृथक् ।
 यथाहं तोषयित्वा तु ततो मल्लान् भटान् नटान् ॥
 वृषभान् महिषांश्चैव बुध्यमानान् परैः सह ।
 गजानश्चांश्च योधांश्च पदातीन् समलंकृतान् ॥
 मञ्चारूढः स्वयं पश्येन्नटनर्तनचारणान्(२) ।
 क्रुधापयेन्नासयेच्च गोमहिष्यादिकं ततः ॥
 वृषान् दूर्घापयेद्गोभिरुक्तिप्रत्युक्तिवादितान् ।
 ततोऽपराहसमये पूर्वस्यां दिशि भारत ॥
 मार्गपालीं प्रवध्नीयाद्दुर्गे स्तम्भे च पादपे ।
 कुशकाशमयीं दिव्यां लम्बकैर्बहुभिर्नृप ॥
 दर्शयित्वा(३) गजानश्चान् सायमस्यस्तले नयेत् ।
 गावो वृषाः समहिषा मण्डिता(४) घण्टिकोत्कटाः ॥

(१) वृषभ इति पुस्तकालये पाठः ।

(२) वारङ्गानिति पुस्तकालये पाठः ।

(३) दीक्षयित्वेति पुस्तकालये पाठः ।

(४) मन्त्रैर्घण्टिकोत्कटा इति पुस्तकालये पाठः ।

कृते होमे द्विजेन्द्रैश्च वध्नीयाभ्यार्गपालिकान् ।
दुर्गामन्त्रेण होमस्तु सर्वलोकसुखप्रदः ॥
घृतेनाष्टोत्तरशतं ।

नमस्कारं ततः कुर्यात् मन्त्रेणानेन सुव्रत ।
मार्गपालि नमस्तेऽस्तु सर्वलोकसुखप्रदे ॥
विषयेः पुत्रदाराद्यैः पुनरेहि व्रतस्य मे ।
राष्ट्रभोज्येन वै राजा सहस्रेण शतेन वा ॥
स्वशक्त्यापेक्षया वापि गृह्णीयात् ग्राम्यभोजनैः ।
मातुःकुलं पित्रकुलं वालांश्च सह बन्धुभिः ॥
सन्तारयेत् ससकलं मार्गपालीं ददाति यः ॥

यथोत्तरे दानफलाधिक्यार्थं शतसहस्रायुतलक्षभोजनान्ये-
तानि प्रतिज्ञया मार्गपालीं स्वीकृत्य सर्वभ्यश्च तुष्टार्थं यो ददाति
तस्येदं फलं ।

ग्रामराष्ट्रशब्दावयुतलक्षोपलक्षणी ।

नीराजनश्च तत्रैव कार्य्यं राष्ट्रजयप्रदं ।
मार्गपालीतले नेत्थं यान्ति गावो गजा वृषाः ॥
राजानो राजपुत्राश्च ब्राह्मणाः शूद्रजातयः ।
मार्गपालीं समुलङ्घ्य नीरजः स्युः (१) सुखान्विताः ॥
कृत्वैतत्सर्वमेवेह रात्रौ दैत्यपतेर्बलीः ।
पूजां कृत्वा नृपः साक्षाद्भूमौ मण्डलके व्रते ॥
बलिमालिख्य दैत्येन्द्रं वर्णकैः पञ्चरङ्गकैः ।

सर्वाभरणसंपूर्णं विभ्यावत्वा सहासिनं ॥
 कूष्माण्डश्च जयोद्भोम उरुदानवसंहतं ।
 संपूर्णहृष्टवदनं किरीटोत्कटकुण्डलं ॥
 द्विभुजं दैत्यराजानं कारयित्वा नृपः स्वयं ।
 गृहमध्ये च शालायां विशालायाम् तोऽर्चयेत् ॥
 भ्रातृमातृजनैः सार्धं सन्तुष्टो वन्धुभिस्ततः ।
 कमलैः कुसुमैः पुष्पैः कङ्कारै रत्नकोत्पलैः ॥
 गन्धपुष्पाक्षनैर्वेद्यैरक्षतैर्गुडपूपकैः ।
 मद्यमांससुरालेह्यदीपवर्ष्यपहारकैः ॥
 मन्त्रेणानेन राजेन्द्र समन्वो सपुरोहितः ।
 बलिराजं नमस्तुभ्यं विरोचनमुत प्रभो ॥
 भविष्येन्द्र सुराराते पूजयेत् प्रतिगृह्यतां ।
 एवं पूजां नृपः कृत्वा राज्ञो जागरणं ततः ॥
 कारयेत् प्रेक्षणीयादिनटनृत्यकथानकैः ।
 लोकस्यापि गृहस्थान्तः शय्यायां शुक्लतण्डुलैः ॥
 संस्थाप्य बलिराजानं फलेः पुष्पैश्च पूजयेत् ।
 बलिमुद्दिश्य दीयन्ते दानानि कुरुनन्दन ॥
 यानि तान्यक्षयान्याहुर्भयैव संप्रदर्शितं ।
 यदस्यां दीयते दानं स्वल्पं वा यदि वा बहु ॥
 तदक्षयं भवेत्सर्वं विष्णोः प्रीतिकरं परं ।
 विष्णुना वसुधा लब्धा तुष्टेन बलये पुनः ॥
 उपकारकरं दत्तमसुराणां महीश्वरं ।
 ततः प्रभृति राजेन्द्र प्रवृत्ता कौमुदी शुभा ॥

सर्वोपद्रवविद्रावा सर्वविघ्नविनाशनी ।
 लोकशोकहरी काम्या धनपुष्टिसुखावहा ॥
 कुशब्देन मही ज्ञेया मुदहर्षं ततोदयं ।
 धातुज्ञैर्निर्गमज्ञैश्च तेनैषा कौमुदी स्मृता ॥
 कौ मुदन्ति जना यस्मान्नानाभावेः परस्परं ।
 हृष्टास्तुष्टाः सुखाया स्तास्तेनैषा कौमुदी स्मृता ॥
 कुमुदानि वलेर्यस्माद्दीयतेऽस्मै युधिष्ठिर ।
 अथार्घ्यः पार्थिवैः पार्थ तेनैषा कौमुदी स्मृता ॥
 एवमेकमहोरात्रं वर्षं वर्षे विशाम्पते ।
 दत्तं दानवराजस्य आदर्शमिव भूतले ॥
 यः करोति नरो(१)राष्ट्रे तस्य व्याधिभयङ्कृतः ।
 कुत इति तत्र भयं नास्ति मृत्युक्तं भयं ॥
 सुभिन्नं क्षेममारोग्यं सस्यसम्पदमुत्तमं ।
 नीरुजय जनः सर्वः सर्वोपद्रववर्जितः ॥
 कौमुदीकरणाद्राजन् भवतीह महीतले ।
 यो यादृशेन भावेन तिष्ठत्यस्यां युधिष्ठिर ॥
 हर्षदैत्यादिरूपेण तस्य वर्षं प्रयाति हि ।
 रुदितो रोदिति(२) वर्षं हृष्टो वर्षं प्रहृष्यति ॥
 भुक्ता भोक्ता भवेद्वर्षं स्वस्यः स्वस्यो भविष्यति ।
 तस्मात् प्रहृष्टैस्तुष्टैश्च कर्त्तव्या कौमुदी नरैः ॥

(१) नृप इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

(२) रुदितमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

वैष्णवी दानवी चैवं तिथिः (१) पैत्री युधिष्ठिरः ।
 दीपोत्सवेन जनित सर्वजनप्रमोदे
 कुर्वन्ति ये सुमनसो बलिराजपूजां ।
 दानोपभोगसुखवृद्धिश्चैव कुलानां
 राजन् प्रयान्ति सकलं प्रमुदैव हर्षं ॥
 इति भविष्योत्तरोक्तः कौमुदीमहोत्सवः ।

अथ भूतमहोत्सवः ।

स्कन्दपुराणात् ।

रतावसानं संप्राप्य निष्क्रान्ते पार्वतीपती ।
 उत्थाय शयनाद्देवी शीचंचक्रेति शीचदा ॥
 ततः सृगम्यां पार्वत्यां वारिधारासरः प्रभा ।
 अभवदिति शेषः । सरो निर्भरः ।
 चिन्ता समभवत्तस्या न पुत्री दुहितापि वा ।
 तस्यास्मिन्तयमानाया हृदयास्समुद्रवा ॥
 जप्ते कमलपद्माक्षी कन्या मृगमयपङ्क्तिता ।
 नीलवस्त्राभिवसना रक्तवस्त्रावगुण्ठिता ॥
 गिरिकन्यान्तु तां कन्यां हृदयास्समुद्रवा ।
 उवाच संपरित्यज्य मूर्ध्नि चाप्राय पार्वती ॥
 भूमिपङ्काङ्गलिमाङ्गी सम्भूतामि यदङ्गने ।

(१) निधिरिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

तस्मादुदकसेवेति(१) भविष्यति महीक्षवः ॥
 यस्मिन्निन्द्रमहीलोके दिनेपातमुपैष्यति ।
 तस्मिन् दिने तव जना अपाराध्यन्ते महीक्षवः ॥
 यः कामो भैरवस्यासीत् भगवत्या भवस्य च ।
 स महाभैरवी भूत्वा कन्यां गृह्य करे स्थितः ॥
 ततोऽम्बिका भगवती पत्नी भगवतः प्रिया ।
 पुमांसमव्रवीत् कस्त्वं किञ्च गृह्णासि मे सुतां ॥
 ततो दंष्ट्राकरालास्यो भैरवी भैरवाकृतिः ।
 उमां नीचेस्ततः प्राह विद्युन्मत्तइवाम्बुदः ॥
 योभवद्भैरवः कामो भगवत्या भवस्य च ।
 तत्सम्भूताविमौ चैषा भार्या मम भविष्यति ॥
 दम्पती विकृताङ्गी तौ कुपेयाच्छादनौ स्थितौ ।
 वीचां चक्रे सोमभूषः काविमाविति शङ्कितः ॥

तावुभावपि भवो भवपाल
 चन्द्रचिह्नितजटस्त्रिपुरारिः ।
 प्राह पादपतितः स्वसमीपे
 कौ युवां भवय किञ्च करोमि ॥
 अम्बिकाय च वदस्मि गिरीशं
 सूर्यकोटितडिदग्निसवर्णा ।
 हासपूर्णवदना वदमाना
 लोलयात्र भवती चलमाना ॥

योऽभवत्तव ममैह च कामो
भैरवो भयकरस्त्रिदशाना ।
एष ते किल पुमान् भवजातः
स्त्रीयमेव मम यो मदनाग्निः ॥

सोमलक्ष्मस्ततः प्रीतः उमया सोमभावनः ।
गोपवेषधरो देवो दम्पतीत्यब्रवीद्वचः ॥
यदैव हि त्वया ध्याने ध्यातेयं स्त्री वराङ्गणा ।
तदैव मत्प्रभावेन भैरवो ह्येष तेऽभवत् ॥
नाहं त्वया विना देवि त्वं वापि न मया विना ।
अत एव मया तेऽद्य दत्तो लम्बीदरेण च ॥
उत्सवस्तेषु भविता त्वया प्रीतो मम पिये ।
पूर्वागमोऽस्य भविता दत्तकामं महात्मनः ॥
अतस्तदात्मको लोकः सर्वः सुरवर्गार्जिते ।
सञ्जन्ते तेन चान्योन्यं नरा नार्य्य पात्विति ॥
लिङ्गेषु हृदयं स्त्रीणां भगेषु हृदयं नृणां ।
भगलिङ्गाङ्कितं सर्वं तदिदं जगदङ्गने ॥
भगलिङ्गसमुत्क्राणं कुर्वाणाः सामरा नराः ।
अन्योन्यं पातयिष्यन्ति प्रक्रीयन्तः परस्परं ॥
आरम्भेवावमाने न भविता भैरवोत्सवः ।
उदसेविकया(१) शेष कालश्च भवितात्सवः ॥
यत्परं नगरं ग्रामं भैरवीयं प्रवेक्ष्यति ।
उत्सवमिव तत् सर्वं सञ्जीव्यो भविष्यति ॥

(१) उत्सवमे विषयान्विति पाठान्तर ।

उन्मत्तवदनुमत्तं चातुवर्णं गिरेः सुते ।
 भविष्यति पुरं मत्तं भैरवागमहर्षितम् ॥
 यथा नियुक्ताः पित्र्ये विगन्ते देवता दिजान् ।
 एवं भैरवि माहात्म्याद्भैरवो विगते नरान् ॥
 ततो राससमारूढाः शक्तृकर्मलेपनाः ।
 कदुका ताम्बूलोभिः कृतवेशनभूषणाः ॥
 तत् फलावद्वकुचकाः प्रकटोत्कटनिस्वनाः ।
 भस्मभूषितसर्वाङ्गा विण्मूत्रमलपङ्किलाः ॥
 तालतालैर्काद्यमानैः क्रूरावद्वचोन्वितैः ।
 अवदमसंवदं पूर्वापरानन्वितं यद्वच इत्यर्थः ।
 सूच्यमाने(१) वरारोहे भैरवो भार्यया सह ॥
 प्रवेक्ष्यति पुरं ह्येष उत्सवं जनयन्त्रणां ।
 प्रविष्टे भैरवे भीरु पुरुहूतार्चितं पुरं ॥
 जनस्य रीचको घोरो भविष्यति तदोत्सवः ।
 रीचकः प्रियः । घोरोः उत्कटः ।
 येषां वर्षगतश्भीरु जरयाचैव जर्जराः ।
 तेऽपि वत्सकवत्सर्वे करिष्यन्तुत्सवं नराः ॥
 नानाभूषणसृष्टाङ्गाः कुङ्कुमागुरुभूषिताः ।
 पीतैरनेकैर्वस्त्रैश्च वासोभिः परिवेष्टिताः ॥
 कर्णपूरैः समाल्यैश्च सदामालाः सचूडिनः ।
 सदामालाः सयजः सचूडिनः सबाहुभूषणाः ।
 तद्वत्पुष्पैश्चम्पकाद्यैः रुक्षेपितु शिरोरुहाः ।

आस्फोटयन्तो गात्राणि आवयन्ति प्रियाणि च ॥
 रथ्यासु राजमार्गेषु आवयन्तो यतस्ततः ।
 कुलपुत्राः कुलस्त्रीणामनङ्गप्रकृतानि च ॥
 व्यङ्गानि यानि गुह्यानि कुलाङ्गनाकृतानि च ॥
 तेषां च सर्वसन्देहं दर्शयन्तः पदे पदे ॥
 गायन्तश्च प्रवृत्त्यन्तः कुर्वन्त्यन्तितानि च ।
 पूर्वं सलज्जा भूत्वा च निर्लज्जत्वमुपागताः ।
 लज्जनीयेष्वपि गुरुनाक्रोशन्तः परानपि(१) ॥
 उदासरुचयो मर्त्याः करिष्यन्ति यथा मनः ।
 न मातुर्लज्जते पुत्री न पुत्रस्य तथारणी ॥
 पितुर्न पुत्रः पुत्रस्य न पिता न पितामहः ।
 न मातुलस्य स्वस्त्रीयः स्वस्त्रीयस्य न मातुलः ॥
 मुहूर्तेनैव स्वजने निर्लज्जत्वमुपागते ।
 अन्योन्यरुक्ष्यचनैस्तर्जयिष्यन्ति मूढवत् ॥
 ब्रह्मरूपा(२) वचो रूपा श्वेताङ्गा मृदयापि च ।
 भक्तिर्देवलिमाङ्गायार्वज्रायारुचेष्टिताः ॥
 सारमेयानुदहन्त आरूढा गर्हभीषु च ।
 दाडिम्बवेषा गोपवेषा बहुवेषाविशः परे ॥
 राजवेषात्मवेषाय तरुणा वृक्षरूपिणः ।
 नापितानाञ्च वेषेण नयतामपि चापरे ॥
 पलाण्डुं सीधुवर्षञ्च स्वशक्त्युन्मिश्रितं भृशं ।

(१) नाक्रोशन्तपरस्परमिति कश्चित्पाठः ।

(२) भस्मरूपा इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

धूपं सञ्चारयिष्यन्ति घ्राणवैराग्यकारकं ॥
 जलेचरमलञ्चान्ये नरा नृणामजानतां ।
 नासिकायां प्रदास्यन्ति दुर्गन्धमशुभैः समं ॥
 अन्येषु पुरुषा देवि देववेशविभूषिताः ।
 काव्यानि आवयन्तो हि ते हृष्यन्ति यथा नराः ।
 अश्वानां क्रोशते तत्र यथा नाक्रोशते परं ।
 विभ्यति तस्य पितरो ब्रह्मणे तु यथा तथा ॥
 राजानो हि यथाश्वानां कुञ्जराणां यथा नराः ।
 हिताय जायते तद्वत् नराणां मुदसेविका ॥
 न तस्य देव अग्राति हविः पितर एव च ।
 मध्यस्य भावं कुरुते उदसेविकया हि यः ॥
 नत्वन्तुयति नैवाहन्तस्य तुष्यामि पार्ष्वति ।
 विरमेच्च महाशोका पुञ्जालाभे त्वया कृते ॥
 उदसेविकमात्विषं भवती भैरवागमे ।
 अतुला हर्षमम्पत्तिः पयादेति यथा तव ॥
 न भ्राजते यथाचेदं तच्छोकाद्भवन् तव ।
 उदसेविकया ह्रीनं यथा तद्भविता पुरं ॥
 नरानार्थय गिरिजे भस्मना कर्हमेन च ।
 निःस्पृहाणि करिष्यन्ति गृहाण्यायतनानि च ॥
 चौरैरुद्धासितमिव पुरं देवि भविष्यति ।
 मृत्पिण्डभस्मविण्मूत्रैर्नरैः प्रेतैरिवावृतं ।
 भैरवीयं मृतमिति घोषयन्तस्ततो नराः ॥
 तृणैश्च ततस्तत्र संवेश्याम्बरमवृतं ।

इति वाचा प्रकुर्वाणा भैरवीयं जहाति नः ॥
निर्हरिष्यन्ति तं मर्त्या मृतं गुप्तमृतं प्रियं ।
तडागकूले तं न्यस्य सरित्कूले तथापि वा ॥
स्नानान्निर्मलकलषा प्रयास्यन्ति ततो गृहं ।
संसाध्यं भैरवस्नाता उत्सवोत्कूलवेदिताः ॥
मुनिव्रता इव नरा भविष्यन्ति प्रियायुताः ।

यथैव ते पार्ष्णीति भैरवागमे
नराः सलज्जा मुचुरेव लज्जिताः ।
तथैव सम्भावितभैरवाः पुनः
वभूवुरेकान्ततपोधनावृताः ॥
इमन्तु यः सुन्दरि भैरवोत्सवं
पठेच्च विप्रो हिजदेवसंसदि ।
पुत्रप्रपौत्रः समये च वर्धते
महागणेशत्वमवाप्नुयात् शुभं ॥

इति भविष्योत्तरात् ।

युधिष्ठिर उवाच ।

भूतमातेति संहृष्टो ग्रामे ग्रामे पुरे पुरे ।
गायन् नृत्यन् हसन् लोकः सर्वतः परिधावति ॥
उन्मत्तवत् प्रलपति क्षिप्तो पतति मत्तवत् ।
क्रुद्धवद्भावतितरां मृतवत् क्रन्दते(१)बहिः ॥
सुखाङ्गभङ्गं कुरुते लोकीवायुगृहीतवत् ।

(१) क्रन्दते इति पुस्तकालये पाठः ।

भूतवद्भस्मवन्तु कर्हमानवगाहते ॥
 क्रिमेषशास्त्रनिर्दिष्टो मार्गः किमुत लौकिकः ।
 मुह्यति मे मनः कृष्ण त्वमेव वक्तुमर्हसि ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

शृणु पार्थ प्रवक्ष्यामि यत्ते किञ्चिन्मनोगतं ।
 आस्तिकः अदधानश्च भवानीति मतिर्मम ॥
 पार्वत्या सहितः पूर्वं मन्दरे चारुकन्दरे ।
 क्रीडन्नास्ते मुदायतो दिव्यक्रीडनकैर्हरः ॥
 पीनोन्नतनितम्बेन कुम्भभाजत्कुचद्वयां ।
 गीतांशुवदनां हृष्टां दृष्ट्वा गौरीं जगद्गुरुः ॥
 दग्धकामतरोः कन्दकदलीमिव विस्तृतां ॥
 कामयामास मुदितो महार्हशयने शिवः ।
 रममाणा महाकान्तं दिव्यवर्षशतं यदा ॥
 तदा देवी समुत्थाय निरोधान्निर्गता वह्निः ।
 मूत्रोत्सर्गात्समुत्तस्थी नारी निर्दारितोदरात् ॥
 कृष्णा करालवदना पिङ्गाक्षी रक्तमूर्धजा ।
 कपासमालाभरणा वह्नुमुण्डावपीडका ॥
 खट्वाङ्गकङ्कालधरा मुद्राङ्कितकरा शिवा ।
 ह्रीपिचर्म्भाम्बरधरा रणत्किङ्किणीमेखला ॥
 डमरुमरुकाराच फेत्कारापूरिताम्बरा ।
 तस्यास्तु पार्श्वं गायान्धा(१)गीतवाद्यलयानुगाः ॥

उत्तालतालमतुलं नृत्यन्ति च हसन्ति च ।
 कपालखट्टाङ्गधरा गजचर्मवगुण्डिता ॥
 तथैव शङ्कराज्जातस्तद्रूपाभरणः पुमान् ।
 अनुगम्यमानो बहुभिर्भूतैरतिभयङ्करैः ॥
 सिंहशार्दूलवदनै रदनोन्मिश्रिताम्बरैः ।
 एकीभूतो क्षणेनैव तौ भवानीभवोद्भवौ ॥
 दृष्टा हृष्टमनादेवः प्राह देवीं सविस्मितां ।
 कल्याणि पश्य पश्येती मत्त्वदङ्गसमुद्भवा ॥
 वीभत्साङ्गतशृङ्गारभयानकविदारिणी ।
 भ्रातृभाग्दौ यथा देवि तददेतौ मतौ मम ॥
 नानयोरन्तरं किञ्चित् सादृश्यात् प्रतिभासते ।
 भ्रातृभाग्दौ भूतमाता तथैवोदकमेविका ॥
 संज्ञात्रयं तयोः कृत्वा ततः प्रादाहरं हरः ।
 भग्नार्थावागताच्चैनां जगत्तरुतले स्थितां ॥
 सेवयिष्यन्ति ये भक्त्यः जलमम्पूर्णगण्डकैः ।
 चन्दनेन समालभ्य पुष्पधूपैरथार्चयेत् ॥
 भोजयेत् क्षिप्रं संघाव कृगरापूपपायसैः ।
 य एवं कुरुते देवि पुरुषो भक्तिभाविनः ॥
 स पुत्रपशुवृद्धिञ्च गरीरारोग्यमाप्नुयात् ।
 न शाकिन्यां गृहे तस्य न पिशाचा न राक्षसाः ॥
 क्रीडां कुर्वन्ति शिशवो यान्ति वृद्धिं निरामयाः ।

युधिष्ठिर उवाच ॥

कदा पूजा णकत्तव्या भूतमातुः सुखार्थिभिः ।

पुरुषैः पुरुषव्याघ्र एतन्मे वक्तुमर्हसि ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

सर्वदेवा भगवतो बालानां हितकारिणी ॥

नामभेदैः क्रियाभेदैः कालभेदैश्च पूज्यते ।

प्रतिपत्पञ्चति ज्येष्ठे यावत्पञ्चदशी तिथिः ॥

पौर्णमास्यान्तमासाभिप्रायेण ज्यैष्ठ्यव्युक्तिः ।

तावत् पूजा प्रकर्तव्या प्रेरणैः प्रेक्षणीयकैः ॥

विकर्मफलनिर्देशः पाषण्डानां विडम्बनं ।

प्रदर्शयते ह्यास्यपरैर्नरैरङ्गतचेष्टितैः ॥

विश्वस्य धनलोभेन स्वाध्यायी नियतः पथि ।

आरोप्यमाणं शूलाग्रं ते न पश्यन्ति पश्यतः ॥

दृष्टो भवद्भिः संहृष्टः परदारावमर्षकः ।

क्षित्वास्य हस्ती क्षिमोऽयं विभुना पुष्करोदके ॥

शीर्णः सूर्यातपत्रेण बालातालानुमादितः ।

शुक्लसिंहासनारूढः सुकृती यात्यसौ सुखं ॥ २८

हे जनाः किन्न पश्यध्वं स्वमिन्द्रत्वं करे परं ।

करपत्रैर्दृष्टिमानमुच्छलच्छीणितच्छटं ॥

चौरः किलासौ संप्राप्तः सर्वोद्देशाकरः परं ।

दण्डप्रहाराभिहतो नीयते दण्डपाशकैः ॥

प्रेक्षकैर्वेष्टितस्तेनो रटद्भिर्मण्डिण्डिमैः ।

संयम्य नीयते हन्तुं मुखमभ्यबलेक्षण ।

शितकेशं शितश्मश्रुं सिताम्बरधरं द्विजं ॥

विटवेश्याचपेटाभिर्हन्यमानश्च पश्यतः ।

गृहान्निष्क्रम्यतां रण्णा वृद्धिं नीत्वा यथोदरं ॥
 कस्मादसौ च कुर्वते मूढो भरणपोषणं ।
 भैरवाभैरवानेतान् बालान् बालोपजीविनः ॥
 प्रवृत्तताण्डवपदा न्यस्रध्वं घृतदीपकान् ।
 निर्वेदः कोऽस्य हृदये चेतस्त्रयीधनकारितः ॥
 गृहीतं यद्दनेनापि बालेनापि महाव्रतं ।
 रक्तोदक्काककण्ठाङ्गं स चरन् किमपश्यति ॥
 तरुकोटरान्तर्गतां विचित्रां शुक्रसारिकां ।
 बहुभिः कोष्ठकौकृत्य शरोधैः सवलीकृतां ॥
 विमुक्तहिकाङ्गद्वार सुप्रहारनिरीक्षितां ।
 इमां कृष्णार्धवदनां गृहीतामि दुहितृका ॥
 विमुक्तकेशां नृत्यस्तीं पश्यध्वं योगिनोमिव ।
 गन्भीर्यतूर्यध्वनिना प्रवृत्तोद्धतताण्डवा ॥
 उन्नतवेषाभरणा भाव्येषा ङिण्डिमण्डली ।
 कटीतटस्थपिटका कासकम्बलधारिणी ॥
 भारटस्थटतेङ्गोष्ठी तन्त्री सूर्यपङ्कान् गृहं ।
 इत्येवमेभिर्बहुभिः प्रेक्ष्यैः प्रेक्षणीयकैः ॥
 प्रेरयेत्तान् जहातीष्वं पुत्रभ्रातृसुहृदतं ।
 एकादश्यां नवम्यां वा दीपमग्न्यान् कुण्डके ॥
 रश्मिभिर्बहुभिर्गुप्तं तूर्यध्वनिपुरःसरं ।
 नयेत् प्रदीपसमये यत्र देवी जनैर्वृता ॥
 वीरचर्यासु कथिता दीपः सर्वार्थसाधकः ।
 एवं निष्क्रामयेद्दीपं यावत्पञ्चदशौ तिथिः ॥

पञ्चदश्यां प्रकुर्वीत भूतमातुर्गृहीत्स्व ।
 स्नापयेत् पूजयेद्दद्यान्नैवेद्यं पललोदनं ॥
 प्रणम्य स्वजनैः सार्धं क्षमयित्वा गृहं व्रजेत् ।
 य एवं कुरुते पार्थ वर्षे वर्षे महीत्स्व ॥
 तस्य संवत्सरं यावत् गृहे विघ्नं न जायते ।
 ये मानयन्ति जनहासकरैर्विलासैः
 राशेचयेदभयदां भूविभूतधारिणः ।
 ते भ्रातृभृत्यसुतबन्धुजनैः सहाय्यं
 सर्वोपसर्गरहिताः सुखिनो भवन्ति ॥

इति भूतमातृसुतः ।

—००७००—

पृथिव्युवाच ।

पितृमातृपतिभ्रातृपुत्रशोकविवर्जिता ।
 व्रतेन येन भवति नारी तद्वद केशव ॥

वराह उवाच ।

दक्षः प्रजापतिः पूर्वं तस्य कन्याभवत्सती ।
 महादेवाय सा दत्ता धर्मपत्नी शुभव्रता ॥
 दक्षेण यज्ञः प्रारब्धो देवाः सर्वे निमन्त्रिताः ।
 अर्चिताश्च यद्यान्यायं शङ्करो न निमन्त्रितः ॥
 तेनापमानिता देवो देहव्याप्ताभवत् पुनः ।
 हिमवत्पर्वतसुता जाता जाति स्मृता धरे ॥
 स्रग् नमो रुधरा तच्च वर्त्तमानाष्टवाषिंकी ।

वार्यमाणा पिब-भाह-माहभिस्तपसे गता ॥
 उग्रं तपः समाख्याय सखीभिः सहिताचले ।
 याते वर्षं सहस्रन्तु शुष्कपर्णमभुङ्क्त सा ॥
 अन्यवर्षसहस्रन्तु जलपानेन सा स्थिता ।
 तृतीयञ्च पुनस्तद्वदाहाराभायती महत् ॥
 एवं वर्षसहस्राणि दश तप्तं तथा तपः ।
 तथापि च न तुष्टोऽसौ देवेशो वृषशूलधृक् ॥
 तथा खिन्नापरा दीना कृपासावनिशस्ततः ।
 पुनरग्निप्रवेशाय मतिं चक्रे वृषान्विता ॥
 ततः काली समुत्थाय कृत्वा पूर्वार्द्धिकीं क्रिया ।
 कथा छानेकाश्च ततः सहसा चावदत् क्षिते ॥
 सखीभिर्भक्तियुक्ताभिर्वेष्टिता स्थानकाङ्क्षिणी ।
 देवर्षिनोरदः प्राप्तो लोकालोकविचारणः ॥
 हिमवद्दुहिता गौरी शिवाराधनतत्परा ।
 भर्तारं देवमिच्छन्ती तथा वर्षगणान् वदन् ॥
 देवो न तुष्यति यदा निर्विघ्नेयं तदामुने ।
 अग्निं प्रवेष्टुमुद्युक्तेत्याह गोर्ष्याः सखी मुनिं ॥
 तस्या वाक्यमिदं श्रुत्वा नारदः कथयान्वितः ।
 तत्त्वमीपे ततोऽगम्य वाक्यमाह वसुन्धरे ॥

नारद उवाच ।

हिमवद्दुहिता कामं नाम्निं प्राविश श्रीभने ।
 हरस्तुष्यति येनेह कर्षाया तत् शृणुष्व मे ।
 व्रतं सङ्घाटनं नाम तत् कुर्वन्वाचसाकजे ॥

व्रतं सङ्घाटकं कृत्वा ततः प्राप्नुयसि तं पतिं ।

देव्युवाच ।

तद्व्रतं मे कृपां कृत्वा कथयस्व मुने मम ।

प्राप्स्येऽह तेन चीर्त्वा वै भर्तारं तं महेष्वरं ॥

नारद उवाच ।

शृणुष्वैकमना भद्रे सङ्घाटकमिदं व्रतं ।

कथयामि महापूर्वं ब्रह्मणा कथितं मम ॥

मासस्य कार्तिकस्यापि शुक्लप्रतिपदि व्रतं ।

गृह्णीयादेकभक्तन्तु कृत्वा दत्तादिशोधनं ।

मायं सङ्कल्प्य मादाय द्वितीयायामुपावसेत् ॥

तृतीयायामपि तथा चतुर्थ्यां पारणं भवेत् ।

शिव संपूजयेद्भक्त्या उपवासद्वयेऽपि च ॥

यत्र विनोपचारेण(१) राज्ञो दद्यात्ततो भुवि ।

स्वपेत् प्रातः समुत्थाय स्मृत्वा देवं समर्चयेत् ॥

दध्नेन विना वरं पत्रं दध्नाक्षं ददते न रक्तं ।

भोजयेद्ब्राह्मणान् सप्त गन्तितो वापि भोजयेत् ॥

तेभ्योपि दक्षिणां दत्त्वा नमस्कृत्य विसर्जयेत् ।

पश्चाच्च पारणं कार्यं सप्तसंघाटके विधिः ॥

उपोष्य तु ततः सप्तमासैः सार्धं त्रिभिः शुभैः ।

उद्यापनं ततः कार्यं सङ्घाटे सप्तमे ततः ॥

(१) भक्तविनोपचारेणेति पुनश्चाक्षरे पाठः ।

एतच्च व्रतं शुक्लपक्षेऽपि कर्त्तव्यं(१) । एवं पक्षद्वये कुर्वन्
ततः सार्वस्त्रिभिर्मासैः सप्तसङ्घाटका भवन्ति ।

विधिवद्ब्रह्ममुख्यस्य(२) तदिहैकमनाः शृणु ।
स्त्रीपुंसौ काश्चनौ कार्यौ शक्तितो भक्तिपूर्वकं ॥
सर्वाभरणशोभाया मञ्चकस्योपरि स्थिती ।
पञ्चामृतेन संस्त्राप्य ततो गन्धोदकेन तु ॥
सर्व्वोषधिजलेनापि कुङ्कुमेन समालभेत् ।
कौसुमवस्त्रसंस्त्रैर्नानापुष्पस्रगन्धितैः ॥
मञ्चकोपरि विन्यस्य रात्रौ जागरमारभेत् ।
गीतवाद्यादिनृत्येस्तु जागरं कारयेन्निश ॥
महामाङ्गल्यनिर्घोषैर्मृदङ्गपटहादिकैः ।
निर्व्वर्त्य जागरं रात्रौ प्रभाते समुपस्थिते ।
विप्रादिमन्त्रा भक्त्या तु शक्तितो भोजनं ततः ॥
तेभ्योऽपि दक्षिणां दद्यात् स्त्रीपुंसौ मञ्चके स्थितौ ।
सर्व्वोपस्तरणैः सर्व्वमुपदेष्टुं निवेदयेत् ॥
भार्य्याया सहितायैव वस्त्राद्यैः पूजिताय च ।
निवेदयेत् स्वयं सर्व्वं ततो विप्रं क्षमापयेत् ॥
पूजामन्त्रैः प्रकर्त्तव्या चिभिर्भक्तिसमन्वितैः ।
त्रिभिर्होमस्तथा कार्य्यो व्रतमेवं समाप्यते ॥

ॐ शम्भवाय नमः । उमया भवाय नमः(३) । उं शङ्कराय नमः ।

(१) एतच्च व्रतं शुक्लपक्षे समारम्भ्य कृष्णपक्षेऽपि कर्त्तव्यमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

(२) विधिवद्ब्रह्ममुख्यमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

(३) काद्याभवाद्यनमस्तु पुस्तकान्तरे पाठः ।

इति पूजामन्त्रः ।

ॐ मयस्कराय नमः स्वाहा । ॐ शिवाय नमः स्वाहा
ॐ शिवतराय स्वाहा ।

इति होममन्त्राः ।

भार्यया सहितं विप्रं भोजयित्वा क्षमापयेत् ।
समर्पयित्वा तत्सर्वं नमस्कृत्य विसर्जयेत् ॥
समाप्यैवं व्रतं नारी समं प्राप्नोति यत्फलं ।
तत् शृणुष्व महाभागे कथयामि सुनिश्चितं ॥
यावत् कल्पशतं नारी भवेज्जन्मनि जन्मनि ।
पतिपुत्रवियोगीत्यथोगदुःखविवर्जितं ॥
तस्मिन् कुले स जायेत जन्मान्तरशतेष्वपि ।
धनधान्यसमापूर्णं तत्कुलं जायते ध्रुवं ॥
रूपसौभाग्यसंयुक्तं सुखं सम्पत्समायुतं (१) ।
माहात्म्येन व्रतस्यास्य भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥
पठामासं व्रतं नारी नरो वा शृणुयाद्यदि ।
सर्वदुःखविनिर्मुक्तः स्वर्गलोके महीयते ॥

बराह उवाच ।

नारदः कथयित्वा तु व्रतं सम्यग्विधानतः ।
मती अविष्टया गत्वा देवी व्रतपराभवत् ॥
सङ्घाटव्रतमाहात्म्याच्छ्रीमं तस्या पतिं शिवं ।
सञ्जाता सुखिनी वीरो ज्ञी तन्मायापि जायते ॥

(१) सर्वदुःख विवर्जितं इति ब्राह्मणम् ।

एतत् श्रुत्वा धरिणि त्वं व्रतमेतत् कुरु प्रिये ।
यथाभिलषितं सर्वं प्राप्स्यसे नात्र संशयः ॥
इति बराहपुराणोक्तं सङ्घाटकव्रतं ।

—०००—

पौर्णमास्याममावास्यामेकभक्तं समाचरेत् ।
तत्रैक भक्तं कुर्वाणो नरकं नोपसर्पति ॥
तत्र पुण्याहवाच्येन जयशब्दादिमङ्गलैः ।
हरिश्चैवार्चयेद्यन्नात् स्नाप्य सौवर्ण्यपङ्कजैः ॥
ततस्तु पात्रमादाय गीतवेदादिनिस्त्रनैः(१) ।
कुर्वात् प्रदक्षिणं तस्मै विष्णवे प्रभविष्णवे ॥
ततश्च मन्त्रं विधिवत् पूजयेत्तं विशेषतः ।
एकं प्रियन्तु(२) सन्धोष्य प्रणम्य च क्षमापयेत् ॥
एकं विप्राय संमन्त्र्य संपूज्य तत् प्रदक्षिणं ।
हृत्तुङ्गमक्षपात्रं सन्धोष्य च क्षमापयेत् ॥
ब्राह्मणान् परमान् भीष्य दक्षिणाभिश्च दक्षयेत् ।
व्रतिनश्चाश्वदानेन ब्रह्माद्येन च तर्पयेत् ॥
ये तु दीनान्धकृपणा अनिवाक्यो दिनं व्रजेत्(३) ।
इति नरसिंहपुराणोक्तं हरिव्रतं ।

—०—

(१) वाच्य मङ्गलकर्मैः कथयति पुण्यकालरे पाठः ।

(२) एवं विप्रमिति पुण्यकालरे पाठः ।

(३) अनिवाक्यो'इमं व्रजदिति पुण्यकालरे पाठः ।

अनिलाद् उवाच ।

नरसिंहमघो रोकं कृत्वा देवं चतुर्भुजं ।
ताम्रपात्रे प्रतिष्ठाप्य बहुदंष्ट्रं प्रकल्पयेत् ॥
बाहुभ्यां पद्मरागौ तु नखानां विद्रुमास्तथा ।
पुष्करागौ स्तनोद्देशे कर्णयोर्नीलकाकुभौ ॥
राजावर्त्तेष्वं कृत्वा(१) नीलवैदुर्यमस्तकं ।
कृत्वा रूपमिदं रम्यं तत्पात्रे मधुना युते ।
पूरयेद्धारिमिश्रेण पूरितम् पुनर्हृदेत् ॥

इदं रूपं तत्पात्रे मधुयुक्तेन कृत्वा संस्थाप्य वारिमिश्रेण
मधुना पात्रं पूरयेत् । पुनरन्यथा त्वं मधुवारिपूर्णं तदुपरि-
दद्यात् ।

वस्त्रयुग्मे नवाच्छास्त्रमासने विनिवेशयेत् ।
नम्रपुष्पैस्तथाधूपैः पूजनं चास्य कल्पयेत् ॥
नेत्रेभ्यः कल्पयेद्द्रव्यं भक्तैर्नानाविधैर्बुधैः ।
विश्रान्तोपरि संयुक्तं पुष्पदामभिरर्चयेत् ॥
कार्तिक्यां वाच वैशाख्यामाश्विन्य द्वादशीमग्न ।
कृत्वा निवेदयेत् सम्यक् यतस्तत्पदमयुते ॥

द्वादशीमाश्विन्य तदादिदिनचतुष्टयं हस्तिक्लीडा यतस्तत्सुत्तवं
कृत्वा कार्तिक्यां वैशाख्यां वा दानं कर्त्तव्यं ।

परस्मैवाच संयामे दस्युसंज्ञसमाकुले ।
नभयं जायते तस्य सकलव्यथिवदमाचरेत् ॥
नविशन्त्यापहो शीरा धनमाहुः प्रयच्छति ;

(१) मन्त्रिणाञ्चाचरी कृते इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

सन्ततिश्चैव रूपञ्च सौभाग्यं च मनोरमं ॥
 यतस्तै कथितं सम्यक् हरेः क्रीडायनं महत् ।
 तत्स्नानप्रापकश्चैव धर्माः संक्षेपतः क्रियाः ॥
 श्रुत्वा यातिपदं पुण्यं सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
 धनमायुर्विवर्द्धत आवश्यस्य विशेषतः ॥
 आवणे दक्षिणां दद्याच्छ्रद्धाशुभं विभूषयेत् ।
 श्रोतव्यस्तेन वर्षासु पुराणशापरेऽहनि ॥
 इति नरसिंहपुराणोक्तं चरिक्रीडायनं ।

—080—

यजिष्णुः पञ्चमीं षष्ठीं यमान् यो भोजयेद्विजान् ।
 अष्टमीमथ कौन्तेय शुक्लपक्षे चतुर्दशीं ॥
 उपोष्य व्याधिरहितो रूपवानिति जायते ।
 इति महाभारतोक्तं यमव्रतं ।

—000—

अनिलाद् उवाच ।

महाव्रतमहोवक्ष्ये येनारोहति तत्पदं ।
 सुरासुर सुनीनाञ्च दुर्लभं विधिना शृणु ॥
 पर्वस्याश्वयुजस्यान्ते पायसञ्च दृतभुतं ।
 नक्तं भुञ्जीत शुभाभा चन्दनैश्चवान्वितं ॥
 आश्वयुजस्यान्ते कर्त्तिके । पर्वणि अमावस्यायां कार्त्तिके-
 कान्त इत्यर्थः । ऐश्वर्यसुरसः ।
 आचम्याञ्च शशिर्भूत्वा विस्मयं हन्तधावनं ।

(४८)

भुक्त्वा चैतन्महादेवं नत्वा भक्तियुतो व्रती ॥
 अहं देव व्रतमिदं कर्तुमिच्छामि शाश्वतं ।
 तवाग्रया महादेव तन्ननिर्व्वहनं कुरु ॥
 उक्तेमन्नियमं गृह्णन् वर्षाण्येव तु षोडश ।
 तिथेः प्रतिपदायास्तु पारयिष्याम्यनुत्तमं ॥
 ततो मार्गशिरे मासि प्रतिपद्यपरेऽहनि ।
 उपवासेन गुरुं पृष्ट्वा महादेवं स्मरन् मुहुः ॥
 महादेवरतान्विप्रान् भस्मसंस्मृतविग्रहान् ।
 षोडाशष्टौ तदर्धं वा दम्पत्यश्च निमन्त्रयेत् ॥
 देवश्च भक्तमासाद्य दीपान् प्राञ्चय्य षोडश ।
 पशुनाथं महादेवं भक्त्या नत्वा निवेदयेत् ॥
 आमन्त्र्य च गृहं गत्वा महादेवं स्मरन् क्षितौ ।
 शुचिवस्त्रास्तृतायान्तु निराहारी निशि स्वपेत् ॥
 अथोदये सहस्रांशोः स्नात्वाषादाय दीपकान् ।
 नैवेद्यं स्नपनाद्यं वा सगच्छेत् शङ्करालयं ॥
 गत्वा वितानकं तत्र वस्त्रयुग्मश्च घण्टिकां ।
 धूपोत्क्षेपं पताकांश्च दत्त्वा स्नानन्तु कारयेत् ॥
 एवमभ्यर्च्यदेवेशं कशाक्षैरुजभयेद्वृतं ।
 स्नापयेत् पञ्चगव्येन हृतेन तदनन्तरं ॥
 मधुना च तथा दध्ना भूयश्च पयसा तथा ।
 रसेन वाद्य खण्डेन फलेषु स्नापयेत् पुनः(१) ॥
 तिलाम्बुना ततः स्नाप्य पञ्चादुष्णेन वारिणा ।

लेपयेत् सुधनं पश्चात् कर्पूरागुहचन्दनैः ॥
 एवं संपूज्य तं भक्त्या हेम न्यस्य व्रजेदृष्टं ।
 हेम न्यस्य भुजोपरि सुवर्णपुष्पं निधाय ॥
 नानावस्त्रफलैश्चैव दद्यात्तैवेवमिवहि ।
 गृहं गत्वा यन्मन्त्रायं हिरण्यरेतसम्भिभुं ॥
 जातवेदसमाधाय तर्पयेत्तिलसर्पिषा ।
 प्रतिनद्य तत्राचार्यं मिथुनानि च भोजयेत् ॥
 हेमवस्त्रादिदानेन यथाशक्त्या तु दक्षयेत् ।
 एवं विष्टव्यं तान् सर्वान् सार्धं वन्द्युजनैः स्वयं ॥
 बीजादौ पञ्चगव्यञ्च छटोभुञ्जीत वाग्यतः ।
 बन्धिसिद्धिदेतदुच्छिष्टं महादेवमुदीरयेत् ॥
 तमुद्दिश्य च तत्तत्त्वं कर्त्तव्यं येन इच्छता ।
 प्रारब्धे तु विधिं कुर्युर्हरिद्रोऽप्यश्वमेधरः ॥
 वित्तसामर्थ्यतश्चैव प्रतिमासञ्च छटस्रगः ।
 स्नानविष्णोऽथ वा कश्चित् पुण्यादौ कार्तिकावधी ॥
 कृत्वा नक्तन्वमावास्यां प्रागुक्तविधिना ततः ।
 प्रतिपदामुपोष्यैव पञ्चगव्यं पिबेच्छुचिः ॥
 महादेवं स्मरन् सार्धं भक्त्या भुञ्जीत मित्रिभिः ।
 मासस्य कार्तिकस्यान्ते छटस्रं प्राग्विधिमाचरेत् ॥
 प्रतिपदा द्वितीयाञ्च उभेतिथौ उपोषयेत् ।
 एवं पीबे तु संप्राप्ते प्रतिपक्षमाचरेत् ॥
 द्वितीयेऽन्ते द्वितीयायामुपवसेत् कार्तिकावधी ।
 चादहोत तिथिचैका मार्गमासे तत्रापरा ॥

पूर्ववत्सन्त्यजेत्यौषे प्रत्यब्दश्चैवमाचरेत् ।

अस्य श्लोकस्य फलितार्थः ।

अमावस्यायां नक्षत्रं प्रतिपद्युपवास इति प्रथमवर्षे प्रथमस्या-
ममावास्यायां नक्षत्रं प्रतिपदि द्वितीयायामुपवासः शेषेषु प्रतिपदि न
क्षत्रं द्वितीयायामुपवास इति द्वितीयं प्रथमे मासि प्रतिदि नक्षत्रं
द्वितीयातृतीययोरुपवासः शेषेषु द्वितीयायां नक्षत्रं तृतीयायामुप-
वास इति तृतीयं । एवं शेषेषु वर्षेषु कृत्वैवं षोडशवर्षं पीर्य-
मास्याः कार्त्तिक्याः समुहमे उदयकाले ।

पूर्ववद्देवमभ्यर्च्य कथानुं ध्यतव्ययेत् ।

ध्यक्षि अर्चिषः ।

महादेवाय गान्ध्याहीचिताय द्विजाय च ॥

हेममृगां सवत्साञ्च सघण्टां कांस्यदोहनां ।

शिवव्रत धरान् विप्रान् सहाचार्याञ्च षोडश ॥

सम्भोज्य हेमवस्त्राद्यैर्यथाशक्ति तु दद्यात् ।

कृत्रोपानहकुम्भाञ्च दद्यात्तैभ्यः पृथक् पृथक् ॥

भोजयेत्तान्विसृष्ट्वैव मिथुनानि तु षोडश ।

विसृष्ट्वा विसृज्य ।

ब्राह्मणाञ्च यथा शक्त्या भोजयेत् वेदपारगान् ।

अन्येषां च सुधार्त्तानां दद्यादन्नञ्चतद्दिने ॥

एवं महाव्रतश्चैतद्ब्रह्मघ्नोप्यचमर्षणं ।

भूर्भुवादिषु शेषेषु लोकेषु बहुभोगदं ॥

चतुर्णामपि वर्षाणां यत्तु सोपानवत्स्थितं -

तत् कुर्याद्योवनं प्राप्य समुद्दिष्टमिहैव हि ॥
 धन्यमायुःप्रदं निखं रूपसौभाग्यदं परं ,
 स्त्रीपुंसयोश्च निर्दिष्टं व्रतमेतत् पुरातनं ।
 विधवयापि कर्त्तव्यं भवेद्विधवा च या ॥
 सुगन्धयापि च कर्त्तव्यमविद्योगाय तद्धतं ।
 उपोष्य प्रतिमासन्तु मुञ्जीत व्रतिभिः सह ॥
 एतद्विचित्रतुर्भिर्व्या(१) सर्वेष्वप्येषु श्रुतितः ।
 यन्ते च भिन्नवर्षाणां प्रारम्भे विधिमाचरेत् ॥
 पुष्पसम्भारमन्त्रिच्छवनामयपदञ्च तत् ।
 अथारम्भव्रते कश्चिदसमाप्ते मृतो भवेत् ॥
 सोऽपि तत् फलमाप्नोति सत्प्रारम्भप्रभावतः ।
 वाचकः श्रावकश्चैव श्रोतारश्च व्रतस्य ये ॥
 भवन्ति पुण्यसंनिष्टास्तत्पदाभिमुख्याचये ।

इति कालिकापुराणोक्तं महाव्रतं ।

—000—

उपोष्यैकादशीं शुक्लां माघमासेऽथ पूर्णिमां ।
 कुर्याद्विधिमिमं सम्यक् सदा तस्य व्रजेत्पदं ॥
 तद्विरूपप्रदञ्चैतद्धतं(२) सौभाग्य दायकं ।
 पुत्रदं सुखदञ्चैव विधिना चरितं त्विदं ।
 व्रतस्यास्य प्रवक्तारं समयुक्तं गुणान्वितं ॥

(१) यन्त्रिचान्ति च रक्षाचान्ति पुष्पदाने पाठः ।

(२) तद्विरूपार्चदञ्चैतद्धतमिति पुष्पदाने पाठः ।

पूजयेद्भूमिकामोघ पादुकाद्यैः सुभावितः(१) ।
 रुक्ममाज्ययुतश्चाथ पात्रं नीलाञ्च गामपि ॥
 अभावे च तथा हेमः कर्षाच्चैनं तु राजतं ।
 वस्त्रयुग्मं नवं सूक्ष्मं पुष्पप्रकरचित्रितं ॥
 आश्रित्य तत्र तत्पात्रं शुचौ देशे निवेशयेत्(२) ।
 ततो जागरणं कुर्यात् गीतवाद्यादिमङ्गलैः ॥
 प्रभाते तु नयेत्पात्रं हरेरायतनं महत् ।
 स्नाप्य क्षीरादिभिर्होमं विष्णुं संपूज्य वै स्तयं ॥
 निवेदयेत्तु तत्पात्रं प्रीयतामित्युदीरयेत् ।
 ततो नानाविधैर्भक्ष्यैः सुगन्धैर्नोदकेन च ॥
 दधिसखण्डाज्य दुग्धाज्यं नैवेद्यञ्च वलिं हरेत् ।
 ततो नत्वा गृहं गच्छेदाचार्यं प्रीणयेत् पुनः ॥
 प्रणम्य भोजयेद्भक्त्या व्रतिनश्च द्विजैः सह ।
 कल्पयेद्भोजनं श्रेष्ठं सर्व्वेष्वपि वतपस्विषु ॥
 दीनान्धकृपणानाञ्च सर्व्वेष्वमनिवारितं ।
 अनेनापि व्रतेनैव सम्यक् प्राप्य पदं शुभं ॥
 मोदते सुचिरं कालमायुष्मान् धनवानिह ।
 इति नरसिंहपुराणोक्तं पाञ्चव्रतं ।

— ००० —

(१) पूजयेद्भूमिकाद्यैकं तत्र भक्त्या सुभावित इति पाठान्तरं ।

(२) निवेदयेदिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

युधिष्ठिर उवाच ।

जातिस्मरत्वं देवेश दुष्प्राप्यमिति मे मतिः ।
तदहं श्रोतुमिच्छामि प्राप्यते केन कर्मणा ॥

कृष्ण उवाच ।

ब्राह्मणस्यैव शुद्रोपि कुले महति जन्मवान् ।
दाता क्षमी धनी वाग्मी रूपवान् भद्रकैर्भवेत् ॥
चत्वारि राजन् भद्राणि चतुष्पादानि तानि वै ।
तान्येव बहुविधानि दुःप्राप्याण्य कृतात्मभिः ॥
मार्गशीर्षे तु प्रथमं द्वितीयं फाल्गुने तथा ।
ज्येष्ठे तृतीयं राजेन्द्र ख्यातं भाद्रपदे परं ॥
फाल्गुनामलपक्षादौ चोन् मासांस्त नरोत्तम ।
त्रिपुष्करं समाख्यातमीदार्थ्यकरणं परं ॥
ज्येष्ठस्य शुक्लपक्षादौ चोन्मासांश्च युधिष्ठिर ।
तन्त्रिपुष्ककमाख्यातं सत्वशीर्थपदायकं(१) ॥
तथा भाद्रपदस्यादौ चोन्मासान् पाण्डु नन्दन ।
वरदानेन देवानामृषीणां सेवनेन वा ।
तीर्थस्नानेन वा देव तपोहोमव्रतेन वा ॥

कृष्ण उवाच ।

चत्वारि राजन् भद्राणि समुपोष्याणि यत्नतः ।
तत् प्रभावाद्भवेन्नूनं राजन् जातिस्मरो नरः ॥
शुभोदयः पुरा वैश्यो बभूव यमुना तटे ।

(१) रूपैर्योग्युच्यन्ति मिति पुलकान्तरे पाठः ।

तेन व्रतपदक्षीर्णः सुतः कालकामादसौ ।
 सञ्जयस्य सुतो जातः स्वर्णहीवीति विश्रुतः ।
 व्रतप्रभावाज्जातिघ्नः स च चोदेर्निपातितः ॥
 नारदस्य प्रभावेन पुनरुज्जीवितोऽप्यसौ ।
 सस्मार पूर्ववृत्तान्तं सकलं व्रतधर्मतः ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

सञ्जयस्य कथं पुनः स्वर्णहीवीति वा कथं ।
 दस्युभिश्च कथं नीतो ब्रह्मणे जीवितः कथं ॥

कण्व उवाच ।

सञ्जयो नामराजासीत् कुशावल्यां नराधिप ।
 तस्य मित्रे च देवर्षी सदा नारदपर्वती ॥
 एकदा सञ्जयगृहं संप्राप्तौ तौ यदृच्छया ।
 स्वागतावब्रदानाद्यैरुपचारैरपूजयत् ।
 तेषामयोपविष्टानां पूर्ववृत्तान्तभाषिणः ।
 सञ्जयस्य सुता प्राप्ता वरुणी पितुरन्तिकं ॥
 पर्वतः प्राह राजानं कन्धेयं वरवर्णिनी ।
 गुप्तगुल्फा संहतोरुःपीनश्रीणिपयोधरा ॥
 पद्मपत्रेक्षणनखा पद्मकिञ्चल्कसन्निभा ।
 आकुक्षितमृदुस्निग्धैः केशैरतिततैर्घनैः ॥
 सविलासागजगता सुनाया कौशलस्ररा ।
 पद्मे रूपमहो धैर्यमहो लावण्यं सुभवं ॥
 तिलपुष्पस्फुटा नासा रूपं सं परिलम्बते ।

कस्येयं भद्रका भद्रा ममातिहृदयङ्गमा ॥
 एवं ब्रुवाणं तं विप्रं विश्रयोत्फुल्ललोचनं ।
 राजा प्राह ततो ब्रह्मन् दुहिता मम पर्वत ॥
 अथोवाच वचो धीमान्नारदः सुभितेन्द्रियः ।
 राजन्निर्वैद्यकामोऽहं कन्येयं दीयतां मम ॥
 ईप्सितन्ते प्रदास्यामि वरमत्यन्तदुर्लभं ।
 एवमुक्तो नारदेन प्रीताम्ना सञ्जयस्तदा ॥
 कृताञ्जलिर्वाचेदं प्रहर्षोत्फुल्ललोचनः ।
 पुत्रो मे दीयतां क्षिप्रमक्षीणकनकाकरः ॥
 यस्य मूत्रं पुरीषं वा ज्ञेयमात्रं क्षिपति क्षिती ।
 जातरूपं हि तत्सर्वं सुवर्णं भवतु स्थिरं ॥
 एवमस्त्विति तं राजा नारदं प्रत्यभाषत ।
 सुवर्णं विनं पुत्रं ददामि तव सुव्रत ॥
 एवमुक्त्वा सतीं कन्यां सालङ्कारां सुमध्यमां ।
 विवाहयामास तदा नारदो हृष्टमानसः ॥
 तत्तस्य चेष्टितं दृष्ट्वा पर्वतः क्रोधमूर्च्छितः ।
 उवाच नारदं रोषाहीनाच्चस्फुरिताधरः ॥
 मयेयं प्रार्थिता पूर्वं त्वया या स्याद्विवाहिता ।
 तस्मान्नया समं स्वर्गान्नगन्तासि कदाचन ॥
 दत्तस्त्वयास्य यः पुत्रो वरदानेन नारद ।
 सोऽपि क्षौरैरुपहतः पञ्चत्वमुपयास्यति ॥
 एवमुक्तः पर्वतेन नारदः प्राह दुर्भनाः ।
 न त्वं धर्मं विजानासि किञ्चिन्नूढासि दुर्भते ॥

सामान्या सर्वभूतानां कन्या भवति सुमत ।
 न तस्या वरणे दीप्तं पश्यन्तीह बहुमुताः ॥
 न सेविता त्वया ह्यहं तेन मां शपसे कृपा ।
 पाणिग्रहणमग्राणां निष्ठा स्यात् प्रथमे पदे(१) ॥
 यस्मादेतद्विज्ञाय शपसे मामनागसं ।
 तस्मात्त्वमप्यहो स्वर्गं न गन्तासि मया विना ॥
 सञ्जयस्य सुतः शपाद्यदि पञ्चत्वमेवति ।
 आनयिष्ये तथाप्येनं यमलोकात् संशयः ॥
 एवं शप्त्वा तदान्योऽन्यं देवर्षी तावभौ पुनः ।
 पूजितौ सञ्जये नाथ जग्मतुः स्वाश्रमं प्रति ॥
 अथास्य सप्तमे मासि जातः पुत्रो नृपस्य सः ।
 स्वर्णह्ठीवीति(२) नामास्य यथार्थमकरोत्पिता ॥
 जातिस्मरः स्मरवपुः सुवर्णोत्पत्तिकारणं ।
 सर्वभूतस्य तज्ज्ञोऽभूद्रुद्रतफलादिह ॥
 तत्र श्लेषपुरीषादि यत् किञ्चित् क्षिपते क्षिती ।
 जायते कनकं सर्वं यस्मादाचारदस्व च ॥
 तेनासौ यजते राजा विधिवद्भूरिदक्षिणैः ।
 राजसूयादिभिर्यज्ञैर्विविधैरधिपूजितः ॥
 वभार मृत्यानितरान् पुषोष स्वजनातिथीन् ।
 चकार देवतागारान् सरारामादिवापिकाः ।
 जातस्नेहस्रतं पुत्रं ररक्ष रक्षिभिर्हृतं ॥

(१) सप्तमे पदे इति पुस्तकालये पाठः ।

(२) भर्षाहीवीति पुस्तकालये पाठः ।

राशयः कनकानाञ्च वभूवुर्भूपतेः सुतात् ।
 अथास्य दस्यवः केचित् श्रुत्वा तं कनकाकरं ॥
 धनलोभेन तं जघ्नुर्दाक्षिणात्या महोदताः ।
 तस्मिन् विनष्टे तत्रष्टं वरदानसमुद्भवं ॥
 कनकं नश्यते राज्ञो जगामान्योऽन्यतः क्षयं ।
 घातितं दस्युभिः पुत्रं ज्ञात्वा राजा सुदुःखितः ॥
 विललापाकुलमतिः सम्मोहेन पपात च ।
 विलपन्तं तु तं दृष्ट्वा नारदः प्राह सत्वरं ॥
 राजन् विपादं माकार्षीः शृणुमाश्चरतीं कथां ।
 इत्युक्त्वा स समाचख्यौ चरितानि महीजसां ॥
 विनष्टानां नरेन्द्राणां यतीनां दक्षिणावतां ।
 श्रुत्वा राजा नरेन्द्राणां चरितानि महात्मनां ॥
 विनष्टशोकः सहसा प्रकृतिस्थो बभूव सः ।
 नारदोऽपि नरेन्द्रस्य मृतं पुत्रं यमालयात् ॥
 आनयामास तरसा यथारूपं यथाहृतं ।
 दृष्ट्वा स्मृष्ट्वा स पुत्रन्तं परितुष्टेन चेतसा ॥
 ब्रीडितो विस्मितश्चैव कृताञ्जलिश्चाप्रवीत् ।
 किमाश्चर्यं प्रसन्नेन भवता मम नारद ॥
 दत्तः पुत्रस्तथा भूतो दस्युभिर्निहतो यथा ।
 षण्मासान्ते पुनरसौ जीवितं सर्वमेव तत् ॥
 सम्भार पूर्ववत्तान्तं जातिस्मरणकारणं ।
 व्रतं व्रतयेष्टमिदं किमन्यत कथयामि ते ॥
 तथा भाद्रपदस्यादौ त्रीन्मामान् पाण्डुनन्दन ।

तन्निपुष्करमाख्यातं बहुविद्याप्रदायकं ॥
 तथा मार्गशिरस्यादौ त्रीन् मासांश्च नराधिप ।
 तद्विष्णुपदमित्युक्तं सर्वधर्मप्रदायकं ॥
 मुनिभिः कथितान्येवं भद्राख्येतानि भारत ।
 कर्त्तव्यानि नरैः स्त्रीभिर्ब्राह्मणानुमतेन वै ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

विस्तरेणैव मे ब्रूहि देवदेव जनार्दन ।
 भद्राणां नियमाधानं प्रधानं मधुसूदन(१) ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

शृणु राजन्नावहितो भद्राणां विस्तरं परं ।
 कथयिष्ये न कथितं यन्मया कस्यचित् पुरा ॥
 शुक्ला मार्गशिरस्यादौ चतस्रस्तिथयो वराः ।
 द्वितीया च तृतीया च चतुर्थी पञ्चमी तथा ॥
 एकभक्ताग्रनस्तिष्ठेत् प्रतिपदि जितेन्द्रियः ।
 प्रभाते तु द्वितीयायां कृत्वा यत् करणीयकं ॥
 प्रहरे वै समधिके गते स्नानं समाचरेत् ।
 मृद्धोमयं तु संगृह्य मन्त्रैरेभिर्विचक्षणः ॥
 अहन्ते प्रवदिष्यामि विप्राणां विधिमुत्तमं ।
 एतन्न देयं देयान् वा कथयिष्यामि तानपि ॥
 ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रा ये सुधियोऽमलाः ।
 तेषां मन्त्राः प्रदेया वै न तु सङ्कीर्णधर्मिणां ॥

या स्त्री भर्त्ता विमुक्तापि स्वाचारविरताः सदा ।
 सापि व्रतं प्रगृह्णीयात्सभर्त्ता शीलसंयुता(१) ॥
 स्नानं नद्यां तडागेषु वापीकूपगृहेषु च ।
 दशवारं फलं ज्ञेयमधिकं हि समन्त्रकं ॥
 मृदं मन्त्रेण संगृह्य सर्वगात्रेषु दापयेत् ।
 त्वं हि मृदन्दिता देवैः समला यिमलाः कृताः ॥
 मयापि वन्दिता भक्त्या मामद्यैवामलं कुरु ।
 एवं जपन् मृदं दत्त्वा स्वहस्त्राग्रे समन्त्रकं ॥
 जलावगाहनं कुर्यात् कुण्डमालिष्यधर्मवित् ।
 सिद्धार्थकैः कृष्णतिलैर्ब्रह्मासर्वविधैः क्रमात् ॥
 त्वमादिः सर्वदेवानां जगताञ्च जगन्मय ।
 भूतानाम् विशुद्धानां दसानां पतये नमः ॥
 गङ्गासागरजन्तोयं पीष्करं नार्घ्यदस्तथा ।
 यामुनं सन्निधातव्यं(२) सन्निधौ तदिहास्तु मे ॥
 शरीरालम्बनं कृत्वा पूर्वमृद्धोमयाम्बुभिः ।
 एवं स्नात्वा समाप्नुत्य त्रिराचम्य तटस्थितः ॥
 निवस्य वाससी शुभ्रे शुचिः प्रयतमानसः ।
 देवान् पितॄन् मनुष्याञ्च तर्पयेत् सुसमाहितः ॥
 एवं गृहीतनियमो गृहं गच्छेत् शुचिप्रतः ।
 न हसेन्न च संजल्पेत् यावच्चन्द्रस्य दर्शनं ॥
 स्नात्वा चैव ततो नाम द्वितीयादौ चतुर्दिने ॥

(१) सभर्त्ता इत्युच्यते इति पुस्तकालये पाठः ।

(२) यामुनं सन्निधातव्यं इति पुस्तकालये पाठः ।

नमः कृष्णाच्युतानन्तद्वशीकेशेति च क्रमात् ।
 चतुर्दिने द्वितीयादिदेवमभ्यर्चयेद्भक्तं ॥
 प्रथमेऽङ्गि स्मृता पूजा पादयोश्चक्रपाणिनः ।
 नाभिपूजा द्वितीयेऽङ्गि कर्त्तव्या विधिवन्नरैः ॥
 पुरद्विषस्तृतीयेऽङ्गि पूजां वक्षसि विन्यसेत् ।
 चतुर्थेऽङ्गि जगद्धातुः पूजां गिरसि विन्यसेत् ॥
 पुष्पैर्विलेपनैर्धूपैरर्घ्यं दद्याद्विभूषणैः ।
 प्रवरैर्भूरिनैवेद्ये दीपदानैश्च भक्तितः ॥
 पूजयित्वा विधानेन विष्णुं विश्वेश्वरं व्रती ।
 ततो दिनावसाने तु गुह्यं विमले सती ॥
 अर्घ्यं प्रदद्यात्सोमाय भक्त्या तद्भावभावितः ।
 स चार्घ्यं यादृशी देयं ऋग्भिर्मृद्भिस्तथेतरेः ॥
 तत्ते सम्यक् प्रवक्ष्यामि युधिष्ठिर निबोध मे ।
 चन्द्रनागुरुकर्पूरदधिदूर्वाश्रितादिभिः ॥
 रत्नैः समुद्रजैश्चान्यैर्बज्रवेदूर्ध्वमौक्तिकैः ।
 पुष्पैः फलेद्य कल्लोलैः खर्जूरैर्मरिचैरुक्कैः ॥
 वस्ताच्छादनगोवाजि भूमिहेमसमन्वितैः ।
 सत्त्व युक्तस्य कृत्स्नस्य विधिरेव प्रकीर्त्तिता ॥
 इतरस्य यथा शक्त्या फलपुष्पाद्यतीदृकैः ।
 लवणाज्यगुडैस्तैलपयःकुम्भतिलैः सह ॥
 शशित् चन्द्र शशाङ्गेन्दो नामानि क्रमशो नरः ।
 द्वितीयादिषु चन्द्रस्य सङ्कीर्त्ताः निवेदयेत् ॥
 अर्चयित्वा निगायान्तु शशिशङ्करा पिवर्कयेत् ।

प्रत्यहं वर्षे चोर्घ्यं शशिवृद्धा नृपोत्तम ॥
 एवमर्घ्यः प्रदातव्यः नृणु मन्त्रविधिक्रमं ।
 नवो नवोऽसि मासान्ते जायमानः पुनः पुनः ॥
 चिरग्निसमवेतान् वै देवानाग्यायसे हविः ।
 गगनाङ्गणसन्दीप दुग्धाश्विमलनीहव ॥
 भाभासितदिगाभोग रामागुज नमोऽस्तु ते ।
 दत्तार्घ्यं द्विजराजाय तद्विप्राय निवेदयेत् ॥
 निर्वर्त्यार्घ्यं क्रमेणैव ततो भुञ्जीत वाग्यतः ।
 भूमिन्तु भाजनं कृत्वा पद्मपत्रसमाश्रितं ॥
 पालाशैर्मधुपत्रैर्वा(१) सुधीते वा शिलातले(२) ।
 समालभ्य धरां देवीं मन्त्रेणानेन मन्त्रवित् ॥
 त्वत्तले भोक्तुकामोऽहं देवि सर्व्वरसोद्भव ।
 मदनुग्रहाय सुखादु कुर्व्वन्तीममृतोपमं ॥
 एवं जप्त्वा च भुक्त्वा च शाकपाकगुणोत्तरं ।
 आचम्य खान्यद्यालभ्य स्मृत्वा सीमं स्वपेक्षुवि ॥
 भोक्तव्यन्तु द्वितीयायां चतुर्थ्यां गौरमोत्तरं(३) ।
 छृताक्ताः सगुडा राजन् पञ्चम्यां कशरा भुवि ॥
 भोज्याः सर्व्वेषु भद्रेषु सदा श्यामाकतण्डुलाः ।
 प्रसाधितछृतं गण्यं फलं शाकमयान्वितं ॥
 प्रातः स्नानं ततः कृत्वा सन्तप्यं पिबदेवताः ।

(१) चर्मपदेष्वेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

(२) शिलातले इति पाठान्तरं ।

(३) चकारस्य चं भुवि इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

भोजयेद्वाङ्मयान् भक्त्या दत्त्वा दानं विसर्जयेत् ॥
 मृत्युवन्धुजनैः सार्धं पश्चाद्भुञ्जीत काम्यया ।
 एवं भद्रेषु सर्वेषु त्रिमासेषु यतव्रतः (१) ॥
 करोत्येषं नरो भक्त्या वर्षमेकममम्वरी ।
 तस्य श्रीर्विजयश्चैव नित्यं सोमः प्रसीदति ॥
 एतत्करोति या कन्या भव्यं प्राप्नोति सा पतिं ।
 दुर्भगा सुभगा साध्वी भवत्यविधवा सदा ॥
 राज्यार्थी लभते राज्यं धनार्थी धनमाप्नुयात् ।
 पुत्रार्थी प्राप्नुयात् पुत्रानित्याह भगवान् रविः ॥
 योषित्कुलाकुलविवाहमनोरमाणि
 शय्यान्नपान (२) शयनाशनशोभितानि ।
 भद्राण्यवाप्य धनपुत्रकलत्रजातौः
 जातिस्मरौ भवति भारतभद्रकर्ता ॥
 इति भविष्योत्तरोक्तं भद्रचतुष्टयव्रतं ।

— (Orn) —

सुमन्तुरुवाच ।

शृणु कौरव कर्माणि त्रिभिर्गुह्याश्रितानि तु ।
 श्रुत्वैव पापहानिः स्यात् कृत्वानन्तं फलं लभेत् ॥
 क्षीराशनः प्रतिपदि । पुष्पाहारो द्वितीयायां (३) ।

(१) एवं भद्रत्रिमासेषु नियताया यतव्रत इति पुस्तकाकारे पाठः ।

(२) शय्यान्नपान इति पुस्तकाकारे पाठः ।

(३) पुष्पप्राशनो द्वितीयायामिति पाठाकारः ।

लवणवर्जितं तृतीयायां । तिलान्नाशी(१) चतुर्थ्यां । क्षीरासनः
पञ्चम्यां । फलाशनः षष्ठ्यां । शाकाशनः सप्तम्यां । विष्वाहारोऽ-
ष्टम्यां । पिष्टाशनो नवम्यां । अग्निपक्वाहारो दशम्यां । एका-
दश्यामुपवासः । घृताशनो द्वादश्यां । पायसाहारस्त्रयोदश्यां ।
यवान्नाहारश्चतुर्दश्यां । गोमूत्राहारः कुशोदकप्राशनः पौर्ण-
मास्यां । एवं प्राशनविधिः ॥

उक्तानि प्राशनान्येवं विधिपूर्वमुदाहृतं ।

क्षीरप्रतिपदागन्तु स सर्वासु विधीयते ॥

स क्षीरप्रतिपदांशो विधिः कथ्यते ॥ तत्र व्रतदिनात् पूर्व-
दिने त्रिकालस्नानमुपवासश्च पवित्रः सूक्तजपः गिरमा सह
गायत्रीजपश्च तत्पूर्वदिने एकभक्तं विधायोपवासमङ्गल्यः
व्रतदिवसे द्विजैभ्यो दक्षिणादानमिति एष पूर्वः प्राशनविधि-
स्तिथीनां । एवमनेन विधिना पक्षमेकं यो वर्त्तयति अग्न-
मेधफलं दशगुणं प्राप्नोति स्वर्गं मन्वन्तरं यावत् प्रतिवसति
उपगोयमानाप्सरीगन्धर्वैः सह वासः । मासचतुष्टये तु सोऽप्समेध-
राजसूयानां शतगुणं फलमाप्नोति । स्वर्गे उपगोयमाना-
प्सरोभिर्गन्धर्वैश्चतुर्युगानां समतिं यावत् प्रववति । समैकः
संवत्सरः । य एवं नियमाद्राजन्नाश्वयुजनवस्यां वैशाखवृत्ती-
यायां कार्त्तिके पौर्णमास्यां वा तिथिव्रतानि गृह्णाति ।

(१) तिलान्नाशोति पुस्तकालये पाठः ।

ब्रह्मचारी गृहस्थो नारौ नरो वा शुचिः प्रयतमानसः पुष्प-
दन्तविभुसालोक्यं व्रजति ॥

पुष्पदन्तविभुः सूर्यः ।

इति भविष्यत्पुराणोक्तं महाफलव्रतं ।

—onduo—

ज्यैष्ठे पञ्चतपाः सायं हेमधेनुप्रदो दिवं ।

यात्यष्टमी चतुर्दश्यौ रुद्रव्रतमिदं स्मृतं ॥

अष्टमीचतुर्दश्याविति च । चत्वारि दिनानि पञ्चाम्नि-
साधनं तच्चतुर्थे दिने सायं सुवर्णधेनुं दद्यात् ।

इति पद्मपुराणोक्तं रुद्रव्रतं ।

—ooo—

हे पञ्चम्यो हि मासस्य हे च प्रतिपदौ नरः ।

सोपवामः सुगन्धाब्जः शयीत प्रियया सह ॥

खगनिश्चलचित्तस्तु रतिप्रीतिविवर्जितः ।

खगनिश्चलचित्तः सूर्यध्यानपरः ॥

ममस्य स्मृतिशीलस्य तस्य पुण्यं फलं शृणु ।

दिव्यं वर्षमहस्तं तु दिव्यं वर्षगतं तथा ॥

ततस्तु भावयत्येनं(१) महादेवं न संग्रहः ।

इति भविष्यत्पुराणोक्तं सम्भोगव्रतं ।

(१) तत्रैव वक्ष्यते इति पुलकान्तरे पाठः ।

पौर्णमास्याममावास्यां चतुर्दश्याष्टमीषु च ।
 नक्तमब्दन्तु कुर्वीति हविष्यैर्व्रजचारिणी ॥
 उमामहेशप्रतिमां हेन्ना कृत्वा सुशोभनां ।
 राजर्तौ वापि कर्षार्हे स्नापयित्वा घृतादिभिः ॥
 गन्धपुष्पैरलङ्कृत्य वस्त्रयुग्मैश्च शोभनैः ।
 भक्ष्यभोज्यैरशेषैश्च वितानध्वजचामरैः ॥
 भोजयेच्छिवभक्तांश्च दीनानाथान् प्रतर्पयेत् ।
 शक्त्या च दक्षिणां दद्याच्छिवमन्त्रैः समापयेत् ॥
 ताम्रकांस्यादिपात्रं वा सितवस्त्रावगुण्ठितं ।
 कृत्वा वायतनं मध्ये प्रतिमान्तूपकल्पयेत् ॥
 पात्रमेवायतनं उपकल्पयेत् स्थापयेत् ।

शिरस्थाधाय तत्पात्रं शोभितं पुष्पमालया ॥
 ध्वजगण्ड्यादिविभवैः शिवस्यायतनं नयेत् ।
 लिङ्गमूर्त्तिमहेशस्य व्रतस्यान्ते निवेदयेत् ॥
 तद्दिवा स्थापयेत्पात्रमुपशोभाममन्वितं ।
 शिवं प्रदक्षिणोक्त्य प्रणिपत्य समापयेत् ॥
 समाप्येतद्गतं पुण्यं शृणु यच्च फलं लभेत् ।
 द्वादशादित्यसंकाशैर्महायानैर्मनोहरैः ॥
 यथेष्टमैश्वरे लोके रुद्रेः सार्धं प्रमोदयेत् ।
 कल्पकोटिमहस्त्राणि कल्पकोटिगतानि च ॥
 तदन्ते स महाभागो विष्णुलोके महीवने ।
 इति शिवधर्मात्तमुमामहेश्वरव्रतं ।

अष्टम्याञ्च चतुर्दशी नियतव्रतचारिणी ॥
 वर्षमेकं न भुञ्जीत महीभोगजिगीषया ।
 वर्षान्ते प्रतिमां कृत्वा पूर्ववद्विधिमाचरेत् ॥
 स्नानार्घ्यैस्तद्धतं प्राप्य पूर्वीक्तांस्तु गुणान् लभेत् ।
 अत्रामुमामहेश्वर प्रतिमा कर्त्तव्या । पूर्ववदिति पूर्वव्रतीक्त
 वदित्यर्थः ।

जाम्बूनदमयैर्यानेष्वतुर्द्वारैरलङ्कृतैः ॥
 गत्वा शिवपुरन्दिव्यं अशेषं भोगमाप्नुयात् ।
 उमामहेश्वरं नाम व्रतमीश्वरभाषितं ॥
 कारुण्यात् सर्वानारीणां नरानाञ्च विशेषतः ।
 तस्मात् सर्वं प्रयत्नेन उमामहेश्वरव्रतं ॥
 कर्त्तव्यं नरनारीभिः सखमलयमाप्नुयात् ।
 उमादेवीप्रियार्थन्तु नष्टेन परमार्थतः ॥
 इति शिवधर्म्मोत्तरोक्तमपरमुमामहेश्वरव्रतं ।

—(००)—

बिल्वहृत्तं समामृत्य द्वादशाहमभोजनं ।
 यः कुर्याद भ्रूणहात् पापाशुक्तो भवति नारद ॥
 शिवोत्त देवता ।

इति सौगपुराणोक्तं पाषमोचनव्रतं ।

—(००)—

सूतउवाच ।

पौर्णमास्याममात्रास्यां वर्षमेकमतन्दिता ।
उपवासरता नारी नरो वा द्विजमत्तमाः ॥
वर्षान्ते सर्वगन्धाभ्यां प्रतिमासं निवेदेयेत् ।
साभवान्यास्तु सायोज्यं सारूप्यं वायुसुव्रता ॥
लभते नात्र सन्देहः सत्यं सत्यं सुनीश्वराः ।
इति लिङ्गपुराणोक्तं भवानीघ्ननं ।

— ००० —

हेधाष्टम्यौ तु मासस्य चतुर्दश्यौ तु हे तथा ।
अमावस्यापौर्णमास्यौ सममीदाद्रशीदयं ॥
संवत्सरमभुञ्जानः सततञ्च जितेन्द्रियः ।
ब्रह्मचर्यं फलं यच्च यत्फलं सत्रयाजिनः^(१) ॥
ऋतुगामिफलं^(२) यच्च तद्वाप्नोत्यभोजनात् ।
एषु तिथिस्त्रामिनो देवताः ।
इति यमस्मृत्युक्तं तिथियुगलव्रतपञ्चकं ।

— ०००(१,०००) —

चतुर्दश्यां तथाष्टम्यां पक्षयोः शुक्लकृष्णयोः ।
योऽष्टमेकं न भुञ्जीत शिवार्घ्यनरतः शुचिः ॥
यत्पुण्यमक्षयं पीतं सततं सत्रयाजिनः ।
तत् पुण्यं सकलं तस्यां शिवलीकञ्च गच्छति ॥
इति भविष्यत्पुराणोक्तं शैवोपवासव्रतं ।

(१) सत्रयाजिनमिति पुस्तकालय पाठः ।

(२) ऋतुगामिफलमिति पुस्तकालय पाठः ।

कृष्णाष्टम्यां तु नक्तेन कृत्वा कृष्णचतुर्दशीं ।
 इह भोगानवाप्नोति(१) परं च शिवमृच्छति ॥
 इति श्रीभविष्यपुराणोक्तं शिवनक्तव्रतं ।

— ००० —

सुत उवाच ।

अष्टम्याश्च चतुर्दश्यां पक्षयोरुभयोरपि ।
 वर्षमेकं ततो भुक्त्वा नक्तं यः पूजयेच्छिवं ॥
 सर्वयज्ञफलं प्राप्य स याति परमाङ्गतिं ।
 इति लिङ्गपुराणोक्तं महाव्रतं(२) ।

— ००० —

पौषमासे तु संप्राप्ते पक्षयोरुभयोः सुत ।
 चतुर्दश्यामथाष्टम्यां पौर्णमास्यामथापि वा ॥
 नित्यं निर्वर्त्य विधिवत् ततः काम्यं समाचरेत् ।
 विशेषपूजा तत्रैव कर्त्तव्या शुद्धचेतसा ॥
 नैवेद्यं यावकपस्थं खण्डं क्षीराज्यसंस्कृतं ।
 रुद्रसंख्यांस्तु वै विप्रान् भोजयेच्चैव दत्तयेत् ॥
 धितस्तिमात्रां प्रकृतिं यावपिष्टेन निर्निर्मितां(३) ।
 समृद्धस्वरलाङ्गलीकृतभूषान्तु कारयेत् ॥
 शिवाय तु प्रदातव्या कपिला गुरवे ततः ।
 स्ववाहनसमायुक्ता व्रतपुण्यमतः शृणु ॥

(१) इह लोकानवाप्नोति पुस्तकान्तरे पाठः ।

(२) मन्त्रश्रवणं व्रतासति पुस्तकान्तरे पाठः ।

(३) यवापिष्टं न निर्निर्मितासति पुस्तकान्तरे पाठः ।

सूर्यकोटिप्रतीकाशैर्विमानैः सर्वकामिकैः ।
 रुद्रहृन्दसमाकीर्णं रुद्रकन्यासमाहृतैः ॥
 वृषभस्यन्दनैर्युक्तो नानागीतरवाश्रितः ।
 त्रिःसप्तकुलसंयुक्तो यात्यसौ यत्र शङ्करः ।
 यावत्तद्ग्रीमसंस्थानं तत् प्रसूते कुलेषु च ॥
 तावद्युगसहस्राणि रुद्रलोके महीयते ।
 सामीप्यं तु समासाद्य सायोज्यं याति वा ततः ॥
 अनेन विधिमार्गेण खड्गं पिष्टमयं शिवे ।
 समर्प्य च विधानेन चक्रवर्त्तिपदं लभेत् ॥
 फाल्गुने तु तथा चक्रं निवेद्य तत्पदं लभेत् ।
 चैत्रे शिवं पिष्टमयं निवेद्य च शिवाग्रतः ॥
 स सुव्रति ब्रह्महत्यां शिवलोकमवाप्नुयात् ।
 वैशाखे मासि दण्डायं शिवस्याग्रे निवेदयेत् ॥
 हस्तार्धं (१) पिष्टजं कार्यं पूजान्ते तु निवेदयेत् ।
 मुच्यते सर्वपापेभ्यो रुद्रलोके महीयते ॥
 ज्येष्ठे पिष्टमयं खड्गं शिवाय विनिवेदयेत् ।
 मुच्यते तु कृतघ्नत्वाद्वद्रलोके तु गच्छति ॥
 आषाढे पिष्टजं पात्रं शिवाय विनिवेदयेत् ।
 मुच्यते दुष्कृतेः सर्वेरिषु जन्मनि सञ्चितैः ॥
 ध्वजं पिष्टमयं यस्तु शिवस्याग्रे निवेदयेत् ।
 श्रावणे तु विधानेन सोऽक्षय मीचमाप्नुयात् (२) ॥

(१) इक्ष्वापमिति पुस्तकालये पाठः ।

(२) मन्वस मीचमाप्नुयादिति पुस्तकालये पाठः ।

मासे भाद्रपदे यस्तु गदां पिष्टमयीं ददेत् ।
 निधीयत्वं तु सम्प्राप्य शिवलीके महीयते ॥
 मासि चाश्व युजे शूलं दत्त्वाऽपिष्टसम्भवं ॥
 शिवाय पुरतो देयं भूणहत्यां व्यपोहति ।
 कार्तिके तु गदाश्चक्रं शिवस्याग्रे निवेदयेत् ॥
 समजन्मकृतं पापं दहत्यग्निरिवेन्धनं ।
 मासे वै मार्गशीर्षे तु कमलं पिष्टसम्भवं ॥
 शिवाय विप्रिना देयं (१) सर्वैश्वर्यमवाप्नुयात् ।
 सर्वेषाञ्चैव नक्तन्तु व्रतानां कीर्तितं मया ॥
 नित्यपूजान्तु निर्व्वर्त्य काम्यपूजान्तु कारयेत् ।
 मासि मासि गुरोः पूजा कर्त्तव्यन्तु व्रतार्पणं ॥
 महापूजा (२) वत्सरान्ते कर्त्तव्या तु विधानतः ।
 गुरवो दक्षितव्यास्तु हेमवस्त्राभवाहनैः ॥
 ततः फलमिवात्तूर्णं यद्योक्तं कृत्तिकासु च ।
 वित्तशायान्महासेन दृष्टापूतेर्वियुज्यते ॥

इति कालोत्तरोक्तं शिवव्रतं ।

(१) पुरतो देयमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

(२) महापूजा इति पुस्तकान्तर पाठः ।

अथ शक्रध्वजोच्छ्रयविधिः ।

देवीपुराणे ।

शक्र उवाच ।

केन सा विधिना लब्धा मम वंशक्रमागतैः ।
ध्वजयष्टिर्द्विशेषेण तद्विधिं कथय प्रभो ॥

ब्रह्मोवाच ।

शङ्गायाः सिकतासंख्या क्रियते सुरसप्तम ।
न भवेद्दैत्यवंशस्य देवराज जिगीषतः ॥
विष्णुना घातिताः केचित् केचिद्देवेन शङ्गना ।
गुहेन निहताः केचित् मया केचिज्जिघांसिताः ॥
देवोभिर्व्वहवसान्ये न तथापि क्षयङ्गताः ।
सुबलीनाम दैत्येन्द्रो हंसकेतुर्महाबलः ॥
मम वंशसमुत्पन्नोदण्डघातश्च वामव ।
तेन पूर्व्वंक्षिता देवाः भानोर्भन्वन्तरे(१) विभी(२) ॥
समागताः समस्तास्तु सह शक्रेण वासव ।
यथा न शक्ताः समरेदैत्यान् योद्धुं पितामह ॥
शङ्कुणा परिभूताश्च शरणं त्वाङ्गता वयं ।
तदाहं चिन्तयन्(३) शक्त विष्णुरक्षां दिवौकसां ॥

(१) भौत्येभन्वन्तरे विभीरति पुण्ड्रकान्तरे पाठः ।

(२) मात्य भन्वन्तरे विभी रति पाण्डाकर्णः ।

(३) तदाहं चिन्तयन् तेषां वक्षोपायं परावृण्वति पुण्ड्रकान्तरे पाठः ।

केतुना शम्भुदत्तेन उच्छ्रितेन न संशयः ।
 उक्ता मया सुराः सेन्द्रा विष्णुराराध्यतां प्रभुः ॥
 स हास्यति महाकेतुं सर्वदैवविमोहनं ।
 तै मता भम चादेशात् क्षीरोदे यत्र केशवः ॥
 परापरस्वरूपस्य मज्ज-मव्यय-शाश्वतं ।
 श्रीवत्साङ्गं महाबाहुं कौस्तुभोरस्कभूषितं ॥
 स्तुवन्त्येते तदा सेन्द्रा देवाः शत्रुभयार्हिताः ।
 ततोऽपि केशवस्तेषां वरं ब्रूहि पुरन्दर ॥
 तदा तैर्याचितो देवः केतुर्देहि सुरारिहं ।
 तेना सौ भूषयित्वा तु दत्तो देवभयापहः ॥
 श्वेतकृचं महातेजः सुमालाकटकान्वितं ।
 सूर्यायुतसमप्रस्थं किङ्किणीरवकान्वितं ॥
 चामरव्यजनोपेतं शत्रुलक्षणलक्षितं (१) ।
 तं दृष्ट्वा सौ वलं सैन्यं भग्नं स च निपातितः ॥
 तदा प्रभृति हे शक्र केतुस्तव कुलागतः ।
 अन्येषाञ्चैव राज्ञां तदुच्छ्रायो विजयावहः ॥
 मया हरेण देवेन विष्णुना वासवेन च ।
 दत्तं यः कश्चिदेवेनं नृपतिस्तं अयिष्यति (२) ॥
 स समस्ताधिपिभूमौ भजेयञ्च भविष्यति ।
 एवं शक्रस्य ब्रह्मणा कथितं केतुकारणं ॥
 मयापि तव विद्येऽहं सर्वं तत्तच्च प्रकाशितं ।

(१) शम्भुलक्षणलक्षितमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

(२) दत्तं यः कश्चिदेवेनं नृपतिस्तद्विष्यतीति पाठान्तरं ।

नृपवाहन उवाच ।

भगवन् श्रोतुमिच्छामि तस्य चोक्त्वा यणं यथा ।
क्रियते दिनकृत्ते तु द्रव्यं मन्त्रविधिम्बद ॥

अगस्त्य उवाच ।

अध्याना कथितं शक्रे वृहस्पतिसमीपतः ।
यथा प्रवक्ष्यामि तथा विधिङ्कितोः समुच्छये ॥
शुभाहे कृत्तकरणे मुहूर्त्ते शुभमङ्गले ।
दैवज्ञः सूत्रधारश्च वनं गच्छेत् सहायवान् ॥
देवीप्रतिष्ठा विधिना यात्रा या च प्रचोदिता ।
पात्राविधिना च यनं गच्छेत् ।

गत्वा वृक्षं शुभं वीक्ष्य ध्वजार्जुनप्रियङ्गुकं ।
उडुम्बराश्वकर्णौ च पक्षैते शोभना नृप ॥
प्रियङ्गुकी वीजकः अश्वकर्णः सर्जः ।
ध्वजार्थं वर्जयेत् वत्स देवतोद्यानजान्द्रुमान् ।
कन्यमधोत्तमा यष्टीः करमामेन कल्पयेत् ॥
एकादशकरा वत्स नवपञ्चकरापरा ।
अवनङ्गां कमिचितां यथापक्षिनिकेतनां ॥
वल्लीकपिलवनजां सुशुष्कां कीटरान्तथा ।
कुलान्धषण्डसिक्ताश्च तथा स्त्रीनामगर्हितां ॥
विष्टुह्वहताश्चैव दग्धां च परिवर्जयेत् ।
अलाभे चन्दनं चाम्पं शालं शाकमयं तथा ।
कर्त्तव्यं शक्रचिह्नार्थं नान्य वृक्षोद्भवं क्वचित् ।

शुभभूमिभवं ग्राह्यं शुभतीयं शुभावहं ॥
 ततः संपूजयेद्बृहत् प्राप्नुवोदप्नुवोऽपि वा ॥
 नमो वृक्षपते वृक्ष त्वामाचरति पार्थिवः ।
 ध्वजार्थं तत्त्वतीनाथ(१) नान्यथा उपगम्यतां ॥

पूजा मन्त्रः ।

रात्रौ देयो वलिस्तत्र युगवृक्षे तथैव च ।
 वासवार्थं महावृक्षं कृत्वान्यत्र च गम्यतां ॥
 ध्वजार्थं देवराजस्य न क्लान्तिस्तत्र तत्र च ।

वलिमन्त्राः ।

वराह संहितोक्ताद्यात्र मन्त्राः ।

यानीह वृक्षे भूतानि तेभ्यः स्वस्ति नमोस्तु ते ।
 उपहारं गृहीत्वैमं त्रियतां वासमर्पय ॥
 पार्थिवस्त्वां वरयते श्वस्तितेस्तु नगोऽयम् ।
 ध्वजार्थं देवराजस्य पूज्यं प्रतिगृह्यतामिति ॥
 पूजयित्वा ततोवृक्षं वलिं भूतेषु दापयेत् ।
 प्रभाते ष्वेदयेद्बृक्षं सुभस्त्रप्रादिदर्शनैः ॥
 शुक्लाम्बरं नरश्चैव समुद्रतरणं नदी ।
 वृक्षान् ग्रामान् शुभान् कीरानारोहेद्देवतालयां ॥
 देवहिजास्तथा साधुलिङ्गं ब्रह्महरेरपि ।
 प्रतिमा पूजिता स्वप्ने क्षिप्रं सिद्धिप्रदायका ॥
 मत्स्यमांसं दधिलाभं रुधिरं मृतरोदनं ।
 अगम्यागमनं कृत्वा पाशसिद्धिफलप्रदा ॥

(१) ध्वजार्थं देवराजस्तेति पाठान्तर ।

द्रुमाद्रिलङ्घनं धन्यं शत्रुनाशं तथाशुभं ।
 फलं पुष्पं सितं दूर्वा स्वप्ने लब्ध्वा जयेन्महीं ॥
 शङ्खा गावस्तथादन्तिलाभो राज्यप्रदायकः ।
 गौः सवत्सा नवसूता दृष्ट्वा पुष्पफलप्रदा ॥
 पङ्के उत्तरणं कूपे व्याधिमोक्षकरश्चिरात् ।
 एवं स्वप्नान् शुभान् दृष्ट्वा ततश्छिन्देत पादपं ॥
 उदङ्मुखः प्राङ्मुखो वा मधुवत् प्राक् पशुं ददेत् (१) ।
 पूर्वोत्तरे पतन् शस्तो अशब्दो अत्रणः शुभः ॥
 अनन्यपादपेनान्ये अन्यथा तु परित्यजेत् ।
 अष्टाङ्गुलं त्यजेन्मूलमष्टाङ्गुलं जले क्षिपेत् ॥
 अर्धं चतुरङ्गुलं शेषद्वयं जले क्षिपेत् ।
 तथा तमानयेवक्ष्य शकटेन हवैरपि ॥
 तं जलक्षितं हृत् ॥
 प्रधानैर्लक्षसम्पत्तैर्नयेत पुरतः पुरं ।
 नीयमाना ब्रह्मा यष्टिः समा वा चतुरस्रका ॥
 हस्ता वा भङ्गमाधत्ते राज्ञः पुत्रपुरोहितान् ।
 चारभङ्गे बलिं भिक्षाद्यैर्म्यनाग्ने चयन्तथा ॥
 [भिक्षात् नाशयेत्] राजादीन् नैम्यत्रैर्मिसम्पत्तिं काष्ठं ।
 रवश्चअक्षभङ्गेन शान्तिस्तत्र तु कारयेत् ।
 इन्द्रश्चत्रैतिमन्त्रेण जातवेदसयापि वा ॥
 तथा नीत्वा शुभे क्षन्ने (२) पुरस्तादुपवेशयेत् ।

(१) मधुवत्प्राक्पशुं शना इति पुलकाकरे पाठः ।

(२) यथा क्षन्ने इति पुलकाकरे पाठः ।

द्वारशीभां पथिरप्यागृहे च देव कारयेत् ॥
 पदुपट्टहनिनदांश्च वेद्याः शङ्खहिजातयः ।
 मङ्गलैर्वेदघोषैश्च नयेयुर्यत्र चोच्छ्रयः ॥
 वस्त्रैरण्णजलोमोत्थैः (१) शुभैः स्रष्टव्यैश्चाक्रमं ।
 नन्दोपनन्दसंज्ञाश्च कुमार्यः प्रथमांशकाः ॥
 देव्यो जयविजयाख्या षोडशांशव्यवस्थिताः ।
 अधिके शक्रजननी जयन्तश्चैव देवताः ॥

षोडशेषु अधिके सति अयमर्थः । अथोत्तरं षोडशा-
 धिकाः । ध्वजभागात् ध्वज (२) स्तम्भस्तस्य भाव्याः । तत्र प्रथमे
 द्वितीये च भागे प्रतिदिशं द्वे कुमार्यो कार्ये तृतीये त्वेका ।
 तासामायामविस्तारौ भागाविमौ तत्र प्रथमांशकाः कुमार्यः
 प्रतियुग्मं नन्दोपनन्दावेति द्वितीयांशका जया विजया चेति ।
 तृतीयांशकाः प्रत्येकं शक्रजननी देव्यो ज्ञेयाः । ध्वजमस्तके
 दत्तोपदत्ताच्चेया देवताः ध्वजप्रमाणत्रयं शीघ्रं परिधिः प्रथमः
 (षोडशांशविहीनानि कुर्याच्छेषाणि बुद्धिमान् ।) वक्ष्यमाण
 भूषणानामिदं मानं । ध्वजं त्रिभागं कृत्वा एकस्य भागस्य
 द्वैर्घेण प्रथमभूषणपरिधिं निर्धार्य शेषाणि यथोत्तरं षोड-
 शांशहीनपरिधीनि कुर्यात् । अतएव भूषणप्रवेशयोग्यं ध्वजस्य-
 स्त्रीस्य कार्यमित्युक्तं भवति । भूषणानि विधितवर्णानि
 स्वयम्भूवे प्रथमे दद्यात् (३) ।

(१) वीक्ष्योत्थैरिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

(२) कवोभागादिति पाठान्तरं ।

(३) रचयतां विधितवर्णानि स्वयम्भूवे प्रथमीदद्यादिति पाठान्तरं ।

सुरतां चतुरस्राश्च विश्वकर्माद्वितीयकाः ।
 अष्टम्यान्तु स्वयं शक्री नीलरतां प्रदापयेत् ॥
 कणां यमस्य वृत्ताश्च वरुणस्य षड्स्त्रिकाः ।
 मन्त्रिष्ठाजस्तदाकारा वायुर्देवो मयूरकाः ॥
 नीलवर्णां च तां दद्यात् स्कन्दो बहुविचित्रितां ।
 वृत्तान्तु दहने दद्यात् स्वर्णाभां विष्णुमष्टमीं ।
 वैदूर्यसदृशमिन्दो रैवेयन्दापयेत् स्वयं ॥
 अर्धचन्द्राकृतिः सूर्यो विश्वेदेवास्तु पश्यवत् ।
 ऋषयो निवसन्त्या नीलनीलोपलोपमं ॥
 गुरुणा शुक्रेण ततो नक्षत्रेण समन्ततः ।
 न्यस्तं गृहे विचित्रं तथैव बहुमादृभिः ॥
 यद्यद्येनैव दत्तन्तु केतो यस्तस्य भूषणं ।
 तदैवतं विजानीयाद्यथाहनि समुच्छ्रयेत् ॥
 उच्छ्रयदिने तां तान्देवतां पूजयेदित्यर्थः ।

प्रथमं प्रविशति भूमौ यष्टिः साहस्य राष्ट्रस्य प्रथमं पुरुषं प्रयच्छान्
 पूर्वं उच्छ्रितमात्रैव । बालानां तास्तथैर्देशविघातं समा-
 चष्टे । नृपवन्धवकरीविशीर्षा शुभावहा सर्वशान्ता च शम्भुसूर्य-
 यमशक्रसीमधनदवारुणाः ।

वज्रीय ऋषिमन्त्रैश्च होतव्यादधिवाचताः ।
 शम्भुवज्राश्चरः दध्यक्षतैश्च मित्रा होतव्याः ॥
 शक्रस्कन्दगुरुशक्रपञ्चरादीन् प्रपूजयेत् ।
 हुत्वा तु विधिवद्भिज्ज्वालां लघेत बुद्धिमान् ॥
 सुतेजाः सुप्रभादीतः संहतो रविसप्रभः ।

रक्तांशुकसमाकारोरथभेरी स्वनशुभः ॥
 शङ्खदुन्दुभिमेघानां नादाः शस्तास्तु पावके ।
 ततः कदलीक्षुदण्डान् पताकांसं समुच्छयेत् ॥
 अन्याश्च विविधाः शोभाः शक्रकेतुसमुच्छये ।
 प्रोष्ठपदेतु अष्टम्यां शुक्लायां शोभनर्चके ॥
 आश्विने वाद्य शुक्लायां श्रावणे वा समुच्छयेत् ।
 पीरजननगमनैः पटुभेरौविनोदितं ॥
 वितानध्वज शोभायुग्मं पलाकाभिः समुज्ज्वलं ।
 विष्णुशक्रमन्त्रेण सिद्धरक्षाकृतेन च ॥
 सिद्धं जनितानि शयं रक्षा कृते न भयना प्रयुक्ते न ।
 दृढ मातृकदण्डस्य शुभतोरणमङ्गलं ॥
 मातृकदण्डी तोरणस्तम्भौ ।
 अविलम्बितमुत्थानमभग्नपीटकं समं ।
 पीटकं भूषणं ।
 ननुतं वा समुत्थाप्य केतुवासवयोर्विभौ ।
 वराह संहितायां ।
 कृतं ध्वजादर्शहलार्धचन्द्र
 विचित्रमालाकदलीक्षुदण्डकैः ।
 सव्यालिसिंहैः पिटकैर्गवाक्षै
 रलङ्कितो दिक्षु च लोकपालैः ॥
 अस्त्रिभ्ररज्जुं दृढकाष्ठमातृकं
 सुश्लिष्टयन्त्राग्रलयादतोरणं ।
 उत्थापयेत्तत्र सहस्रचक्षुषः

सारदुमा मन्मकुमारिकात्विति ॥

उच्छिन्नं लक्षयेत् प्राज्ञः काकीलूककपोतकैः ।

नक्षोपवेशनं दद्यादन्येषामपि पक्षिणां ॥

पयोहिमं ततः कुर्यान्नखण्डितैर्यथाविधि ।

उद्देशो भूभागः ।

तथास्तु संस्थितं पूज्यं सुखयन्त्रसुश्रितां ॥

रात्रौ जागरणं कुर्यादिन्द्रमन्त्रानुकीर्तनैः ।

पुरोहितः सदैवज्ञः शुभशान्तिरतः सदा ॥

यन्त्रपाते नृपं हन्यात्पातकान्महिषी बध् ।

पिटके गुवराजस्य सवितानानुकम्पने ॥

राष्ट्रे तोरण पातेन ध्वजे अन्नक्षयो भवेत् ।

ध्वजे ध्वजोत्सवे क्रियमाणे ।

पतने शक्रदण्डस्य नृप मन्युं समादिशेत् ।

कामिजालकउत्थानशस्त्रभातस्कराद्वयं ॥

ससमे संस्थिते शान्तिर्नृपस्य नगरस्य च ।

यावच्चोच्छ्रित आस्तेतावत्पौराः सदा हृष्टाः ॥

केतोर्निरतायजने भुञ्जीरन् विप्रकन्याश्च ।

भुञ्जीरन् भोजयेत् ।

विहृतस्त्रिकेतुस्तिष्ठति दिवमाष्टकं यावत् ।

घाते पाते कुर्यादुच्छ्रायणे यादृशी प्रजा ॥

रात्रौ शुभकल्पतनूदष्टं काककपोतिकाद्यैः ।

नृपं याति सहराष्ट्रं यस्त्वेवं कारयेत् केतुम् ॥

नगरे वा पुरे वा खेटे वा यद्येवं कुर्वन्ति पौराः ।

पुरनगरस्य द्वारे वृषसिंहखगसृष्टेत् पुनःकेतुं ॥
 समस्तु दोषाणां नाशनं जयदं परं ।
 एवं पूर्वं हरिः केतुं प्राप्तवान् वृषवाहनात् ।
 तदा ब्रह्माप्यनेनैव ब्राह्मणः शक्रमागतः ॥
 तेन सोमाय दत्तोऽसौ ततो दक्षं समागतः ।
 तदा प्रसूतिं कुर्वन्ति नृपा अप्यापि वीक्षवं ॥
 एवं यः कारयेद्राजा केतुर्विजयकारकः(१) ।
 तस्य पृथ्वी वनोपेता सहीपा वशगा भवेत्(२) ॥

विश्वधर्मोत्तरात् ।

पुष्कर उवाच ।

शिविरात् पूर्वदिग्भागे भूमिभागे तथा शुभे ।
 प्रागुदक् प्रवने कुर्याच्छक्रार्थं भवनं शुभं ॥
 वासीभिः शयनैः शुभैर्नानारागैस्तथैव च ।
 ततः शक्रध्वजस्थानं मध्ये संस्थाप्य यत्नतः ॥
 मघवन्तं पटेकुर्यात्(३) तस्य भागे तु दक्षिणे ।
 वामभागे पटेकुर्याच्छचीं देवीं तथैव च ॥
 प्रौष्ठपदे सितेपक्षे प्रतिपत्प्रभृति क्रमात् ।
 तयोस्तु पूजा कर्त्तव्या सततं वसुधाधिपैः ॥

(१) केतुं विजयकारकमिति पुष्पकान्तरे पाठः ।

(२) वज्रहीनारसामवेदिति पुष्पकान्तरे पाठः ।

(३) मघवन्तं पदे कुर्यादिति पुष्पकान्तरे पाठः ।

वनप्रवेशविधिना शक्तयष्टिं ततो वृषः ।
नानयेद्गोरक्षेनाथ नानयेत्(१) पुष्करैरथ ॥
पर्जनस्याजकार्यस्य प्रियकस्य वचस्य च ।

प्रियको वीजकः ।

सुरदासकस्य तथा(२) तथैवोदुम्बरस्य च ।
चन्दनस्याथ वा राम प्रपन्नकस्याथ वापहि ॥
अलाभे सर्व्वहृत्क्षणां यष्टिं कुर्वीत वैष्णवी(३) ।
सुवर्णवशां धर्म्यस्तथा च सम्यक् प्रवेशयेत् ॥
प्रौष्ठपदे सितेपक्षे षष्ट्यां रिपुसूदन ।
द्रुमप्रमाणा विज्ञेया शक्तयष्टिर्हिजोत्तम ॥
चतुर्भिरङ्गुलैर्हीना सापै भवति शर्मदा ।
अष्टाभिश्च तथा मूले ष्णित्वा तोये च संक्षिपेत् ॥
तोयादुद्धृत्य नगरं सम्यगेव प्रवेशयेत् ।
तोयादुद्धृत्य(४) नगरं पताकाङ्गजमालि च ॥
सितराजपथं कुर्यात्तथासङ्गत वासक ।
नटनर्त्तक सङ्गीर्णं तथा पूजितदैवतं ॥
संपूजितगृहंराम तथा पूजितवाङ्मयं ।
पौरैरनुगतोराजा सुवेशैः फलपाणिभिः ॥

(१) नवनैः पुष्करै रथ इति पुष्कालकरे पाठः ।

(२) दासकस्य तथाभिनेति पुष्कालकरे पाठः ।

(३) वैष्णवीमिति पुष्कालकरे पाठः ।

(४) वज्राः प्रवेश इति पुष्कालकरे पाठः ।

अष्टम्यां वाद्यघोषेण तान्त्तु यष्टिं प्रवेशयेत् ।
 ततस्तु पटयोर्मध्ये घन्तन्यस्तां तु कारयेत् ॥
 तस्मिन्नेवाङ्घ्रि धर्मश्च वस्त्रहस्तां निधापयेत् ।
 प्राक्क्ष्ण्वा तां ततः कुर्यादस्त्रैः संष्ठादितां शुभैः ॥
 पूजितां पूजयेत्तान्त्तु यावत्सा द्वादशी भवेत् ।
 एकादश्यां सोपवासो नृपः कुर्यात् प्रजागरं ।
 साम्बत्तरेण सहितो मन्त्रिणां सपुरोभसा ॥
 राजीजागरणं कार्यं नागरेण जनेन तु ।
 स्थाने स्थाने महाभागैर्देयाः प्रेक्षास्तथा मधु ॥
 प्रेक्षा हिन्दोलिका । मधु मद्यं ।
 पूजयेन्नृत्यगीतेन रात्रौ शक्रं नराधिपः ।
 द्वादश्यान्तु शिरसातो नृपतिः प्रयतस्ततः ॥
 मन्त्रे चोद्यापनं कुर्याच्छक्रकेतोः समाहितः ।
 देवीपुराणेत्वष्ट्यामुद्यापनमुक्तं तेनामयोर्विकल्पः ॥
 सुयन्त्रितं तु कुर्यात्तद्गृहस्तत्रचतुष्टयं ।
 पूजयेत्तं महाभाग गन्धमास्तावसम्पदा ॥
 नित्यञ्च पटयोः पूजां यष्टिपूजान्त्तु कारयेत् ।
 वलिभिस्तु विविचाभिस्तथा ब्राह्मणपूजनैः ॥
 नित्यञ्च लुहयान् मन्त्रान् स पुरोधांश्च वैष्णवान् ।
 नित्यं गीतेन नृत्येन तथा शक्रञ्च पूजयेत् ॥
 द्वादश्यां पूजयेद्वाजा ब्राह्मणान् धनसञ्चयैः ।
 विशेषेण च धर्मश्च साम्बत्तपुरोहितौ ॥

उत्थाने च प्रवेशे च शक्रं स्याच्चराधिपः ।
 वक्ष्यमाणेन मन्त्रेण कालविकपुरोहितः ॥
 प्रयतः पूजयेद्वाजा तदा दिनचतुष्टयं ।
 पञ्चमे दिवसे प्राप्ते शक्रकैतुं विसर्जयेत् ॥
 पूजयित्वा महाभाग वलेन च तुरङ्गिणा ।
 नीत्वा करीन्द्रेस्त्रितयस्तोमसां प्रवाहयेत् ॥
 पटद्वयं ध्वजश्चेति चितयं ।

वाद्यघोषेण महता सङ्गीतिस्तत्र कीर्तिता ॥
 पीरजानपदास्तत्र क्रीडां कुर्यात्स्थान्भसि ।
 उत्सवश्च तथा कार्यो जलतीरगतैर्नहान् ॥

एतद्विधानं नृपतिस्तु कृत्वा
 प्राप्नोति हविर्धनवाहनानां ।

नाशस्तथा शत्रुगणस्य राम

महत् प्रसादमिदं दशाधिनायात् ॥

इन्द्रध्वजशिरोभज्येत् पतेदिन्द्रध्वजो यदि ॥

भज्यते शक्रयष्टिर्वा नृपतेर्नियतम्बधः ।

यन्मभङ्गे तथाज्ञेयं रज्जुच्छेदे तथैव च ॥

मातृकायास्तथा भङ्गे परचक्रभयं हिज ।

मातृका तोरणस्तम्भः ।

दिव्यान्तरिक्षभौमाश्च उत्पातास्तत्र वै सदा ।

तेषां तीव्रभयाम्भेयं फलमत्यन्तदाहणं ॥

निलीयते च क्रव्यादाः शक्रयष्टौ तथा हिज ।

राजा वा म्रियते तत्र सर्वदेशो विनश्यति ॥

इन्द्रध्वजापकारं यत्किञ्चिद्विजसत्तम ।
 विनाशेऽन्धस्य विघ्नेया पीडा नगरवासिनां ॥
 अन्धस्य एकतमस्य ।
 इन्द्रध्वजनिमित्ते तु प्रायश्चित्तमिदं कृतं ।
 इन्द्रयागं पुनः कुर्यात् सौवर्चं मन्त्रके वने(१) ॥
 रात्र्यं दत्त्वा च गुरवे वस्त्रानि प्रमोचयेत् ।
 सप्ताहं पूजयित्वा च ध्वजं दद्याद्विजातिषु ॥
 शान्तिरैन्द्रीभवेत्(२) कार्या ब्राह्मणानां दिने दिने ।
 गावय देया विजयपुङ्गवेभ्यो
 हिरण्यवासीरजतैः समेताः ।
 एवं कृते शान्तिमुपैति पापं
 वृद्धिस्तथास्यान्मनुजाधिपस्य ॥

श्रीराम उवाच ।

शक्रोच्छ्रायेति ये मन्त्राः सोपवासो नृपः पठेत् ।
 तानहं श्रुतुमिच्छामि सर्वधर्मभृताम्बर ॥

पुष्कर उवाच ।

शृणु मन्त्रानिमान् सम्यक् सर्वकल्पाशानान् ।
 प्राप्ते शक्रध्वजोच्छ्राये यान् पठेत् प्रयतो नृपः ॥
 परस्वेन्द्रजितामित्रं वृषहत्याकनाशन(३) ।

(१) सौवर्चं मिश्रकेतुना इति पुस्तकालये पाठः ।

(२) मां करौद्री इति पाठालारं ।

(३) परस्वेन्द्रजितामित्रे वृषहत्याकनाशन इति पाठालारं ।

देव देव महाभाग त्वं हि भूयिष्ठताकृतः ॥
 त्वं प्रभुः शाश्वतश्चैव सर्वभूतहिते रतः ।
 अमन्ततेजा विरजा यशोविजयवर्धनः ॥
 प्रयतस्त्वं प्रभुर्नित्यमुत्तिष्ठ सुरपूजितः ।
 ब्रह्मा स्वयम्भूभगवान् सर्वलोकपितामहः (१) ॥
 रुद्रः पिनाकभृद्भृशः शतरुद्रियसंयुतः ।
 यज्ञस्य नेता कर्ता च तथाविष्णुश्चक्रमः ॥
 तेजस्तर्हयत्यर्को नित्यमेव महाबलः ।
 तेजो धारय देवेश जय शक्र सुवृष्टिद ॥
 विष्णुर्गदाधरः श्रीमान् शङ्खचक्रासिशार्ङ्गवान् ।
 स ते तेजोदधात्वथ जय शक्र महाबल ॥
 अनादिनिधनो देवो ब्रह्मकायः सनातनः ।
 अत्रितेजा महाभागी रुद्राणां पार्वतीसुतः ॥
 कार्तिकेयः शक्तिधरः पञ्चज्ञोऽसि गदाधरः ।
 स ते वरेष्णोवरदः तेजोवर्धयतां प्रभो ॥
 देवसेनापतिस्तनूः सुरप्रवरपूजितः ।
 आदित्या वसवो रुद्राः साध्या देवास्तवाग्निनो ।
 भार्गवोऽङ्गिरसश्चैव दिग्देवा मरुद्गणाः ॥
 लोकपालाक्षयश्चैव चन्द्रःसूर्योऽनिसोऽनलः ।
 देवाश्च ऋषयश्चैव यक्षगन्धर्वराक्षसाः ॥
 समुद्रा गिरयश्चैव नद्योभूतानि यानि च ।

तेजस्तु प्राप्तिः सत्यञ्च यच्छ्रीः श्रीः कीर्तिरेव च ॥
 प्रवर्त्तयन्तु ते तेजो जय शक्र शचीपते ।
 तवचापि जयं नित्यमिहसंपद्यते शुभं ॥
 प्रसीद राज्ञां विप्राणां पूजनादपि सर्व्वशः ।
 तव प्रसादात् पृथिवी नित्यं सस्यवती भवेत्(१) ॥
 शिवं भवतु निर्व्विघ्नं शाम्यन्तां मुनयोभृशं ।
 नमस्ते देवदेवेश नमस्ते बलसूदन ॥
 नमो विघ्ननमस्तेस्तु सहस्राक्ष शचीपते ।
 सर्व्वधामेवलोकानां त्वमेकः परमा गतिः ॥
 त्वमेव परमः प्राणः सर्व्वस्यास्य जगत्पते ।
 ईशो ह्यसि च संहृष्टः त्वमनन्तः पुरन्दरः ॥
 त्वमेव मेघस्त्वम्बायुस्त्वमग्निर्वैद्युतो रविः ।
 त्वमत घनविघ्नमा मेघवाहुः पुनर्घनः ॥
 त्वञ्च तेजः परङ्गीरं घोरघवांस्त्वम्बलाहक ।
 स्तृष्टा त्वमेव लोकानां संहर्त्ता चापराजितः ॥
 त्वं ज्योतिः सर्व्वलोकानां त्वमादित्यो विभावसुः ।
 त्वं महाभूतमाघर्ष्यं त्वं राजा त्वं सुरोत्तम ॥
 त्वं त्रिणुस्त्वं सहस्राक्षस्त्वं देवस्त्वं परायणः ।
 त्वमेवममृतन्देव त्वं मोक्षः परमार्चितः ॥
 मुहूर्त्तस्त्वं स्थितिः सर्व्वः नरस्त्वं वै पुनः क्षणः ।
 शुकस्त्व वङ्गलक्ष्मैव कलाः काष्ठास्त्रुटिस्तथा ॥
 संबत्सर्त्तवो मासा रजन्यथ दिनानि च ।

(१) सत्यवती भावेदिति पुलकाकरे पञ्चः ।

त्व मुहूर्त्तसगिरिवरा वसुन्धरा
स भास्करं वितिमिरमस्वरं तथा ।
महोदधिः सतिमिङ्गिलस्तथा
उन्मिमान् बहुकरमाकराकुलः ॥

महद्यशस्वमिह सदाभिपूज्यः
महर्षिभिर्मुदितमनोमहात्मभिः ।
अभिष्टुतः पिवसि च सोममध्वरे
वषट् कृतान्यपि च हविषि भूतये ॥
त्वं विप्रैः सततमिहेन्य मफलार्थं
वेदार्थेष्वतुल वलीयगीयसे च ।
त्वं वेदैर्यजन परायणा हिजेन्द्राः
वेदाङ्गान्यभियन्ति सर्ववेदैः ॥

यज्ञस्यहर्त्ता भुवनस्य गोप्ता
वृत्तस्य हन्ता नमुचेन्निहन्ता ।
क्षणेषमाने च सदा महात्मा
सत्यावृते यो विविनक्ति लोके ॥

यं वाजिनं गर्भमेवासुराणां
वैश्वानरं वाहनमभ्युपैति ।
नमः सदास्यै त्रिदशेश्वराय
लोकत्रयेयाय पुरन्दराय ॥

अजोऽव्ययः शाश्वत एकरूपो
विष्णुर्वराहः पुरुषः पुराणः ।

(५३)

त्वमध्वरः सर्व्वहरः कथानुः

सहस्रशौर्यः तमशन्युरिन्द्रः ॥

कविं सप्त जिह्वं चातारमिन्द्रं सवितारमिन्द्रं सुरेशं शशाङ्कं
शङ्करं शङ्कशत्रुं वृक्षहणं सुसेन मस्त्राकं वीरा उत्तरे भवन्तु ।

व्रातारमिन्द्रेन्द्रियकारणात्मा

जगत् प्रधानं च हिरण्यं गर्भं ।

लोकेश्वरं देववरं वरेण्य

मानन्दनित्यं प्रणतोस्मि नित्यं ॥

एवं देववरस्य कीर्त्तने

महात्मन स्त्रिदशपतेः सुसंयतः ।

अवाप्य कामान् मनसोभिरामान्

स्वर्गास्तीकामायाति च देह भेदैः ॥

वराह संज्ञितायां ॥

संपूरणे वोष्ण्यणे प्रवेशे

ज्ञानं यथा मात्स्यविधौ विसर्जं ।

पठेद्दिमानृपतिः सोपचासो

मन्त्राः शुभाः पुरुहूतस्यकेतोः ॥

संपूरणं पताकारोपणं तत्र विशेषमन्त्रय ।

हरार्कं वैवस्वतशक्रं सोमै

र्धनेशं वैष्णानरं पारशुभिः ॥

महर्षिसहैः सदिगच्छरोभिः

शक्राङ्गिरस्काण्डं मन्त्रं चैव ।

यथार्जपूज्य स्फुरतैक रूपैः
समर्थितया भरणैरुदारैः ॥

तथेहतान्याभरणानि देव
शुभानि संप्रीतमना गृह्णाण ।

इति शक्रध्वजो ह्यायविधिः ।

श्रीमार्कण्डेय उवाच ।

इदमन्यत् प्रवक्ष्यामि पञ्चमूर्त्तिव्रतं तव ।
संवत्सरः स्मृतो वज्रिस्तथार्कपरिवत्सरः ॥
इष्टापूर्त्तस्तथा सोमो अग्नपूर्वः प्रजापतिः ।
उत्पूर्व्य तथा प्रोक्तो देवदेवो महेश्वरः ॥
तेषां मण्डलविन्यासः प्राग्वदेवविधीयते ।
प्राग्वदिति नीलश्चेतरक्तश्चेत पीत कृष्णकैः ॥
मण्डल विन्यासाः कर्त्तव्याः ।

प्राग्वत् प्रपूजनं कार्यं होमः कार्यस्तथा विधिः ।
तिलैर्व्रीहियवैश्चैव घृतेन सितसर्षपैः ॥
तक्षिणै रथकामन्त्रै र्नामभिः प्रत्यहं क्रमात् ।
नक्ताशनस्तथा तिष्ठेत् प्राग्वहिवसपञ्चकं ॥
चैत्रशुक्लं समारभ्य पञ्चमीप्रभृतिक्रमात् ।
संवत्सराख्ये वर्षे तु व्रतमेतत् समाचरेत् ॥
पूजावसाने दातव्याः सुवर्णाः वस्त्र यादव ।
चतुर्विंशद्विदे देवं ग्राह्यं भिदेव यादव ॥
एकैकं पञ्चमं देयं तथा काल विदो भवेत् ।

यथेष्टं लोकमाप्नोति कामचारी विहङ्गमः ॥

व्रतेनानेन धर्म्यः पूज्यमानः सुरासुरैः ।

मानुस्य माषाद्य भवत्यरीगो

वरेण रूपेण बलेन युक्तः ।

नृपप्रतापान्वितश्च सङ्गो

द्विजोत्तमो वा यदुयञ्जयाजी ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं संवत्सरव्रतं ।

— ००० —

ब्रह्मोवाच ।

भूयस्ते सम्प्रवक्ष्यामि देव्याराधनमुत्तमं ।

यत् कृत्वा सर्वकामानां प्राप्तिस्तृप्तिर्भविष्यति ॥

दन्तिदन्तमयैर्दण्डैर्हर्मबन्धैः सुगोभनैः ।

विचित्र पद्मरागाद्यैर्मणिभिस्तु सुगोभितं ॥

तथातैः कारयेद्देव्याः सार्वभौमं मनोरमं ।

दुकूलवस्त्रसञ्चक्रं शर्वचन्द्रीपगोभितं ॥

घण्टाकिङ्किणिशोभाद्यं दर्पणैरुपगोभितं ।

तं रथं पूजयेच्छक्रजातीकुसुमस्रिकैः ॥

पारिजातकपुष्पैश्च यच्चकर्दमचन्दनैः ।

सुगन्धिधूपितं कृत्वा देवीं तत्र निवेदयेत् ॥

प्रतिमां शोभनां वत्स मङ्गादैस्त्यक्षयं करीं ।

पूजयेद्रथ विन्यस्तां विन्यस्तां सर्वमङ्गलां ॥

दुर्गा कात्यायनी देवी वरदा विन्ध्यवासिनी ।

निशुभशुभमथनी महिषासुरविमर्दिनी ॥
 उमा क्षमावती माता शङ्करस्यार्द्धकायिनी ।
 प्रसीदतु मदामेऽस्तु यच्च नो वाञ्छितं हृदि ।
 अनेन बलिपूर्वेण नमस्कारयुतेन च ।
 पूजयित्वा ततो राजासमन्ताद्ग्राह्य गीतकैः ॥
 पञ्चमीसप्तमीपर्णानवम्येकादशीषु च ।
 तृतीयाशिवविघ्नेशदिवसेषूत्सवेषु च ॥
 महानदीवनोत्सङ्गपर्वतश्रवणेषु च ।
 तत्र मण्डपविन्यासं महदिष्टकनिर्मितं ॥
 गैलं वा मृगमयं वापि कृत्वा वास्तुविभागवित् ।
 सर्वलक्षणसम्पूर्णां सर्वशीभासमन्वितां ।
 पूर्वं च कारयेच्छक्रं पञ्चाद्यानां समारभेत् ॥
 महाजनपदपेतां महास्त्रीसङ्घसङ्कुलां ।
 सर्वान्नपाननैवेद्यैः समस्तैरपि पूजयेत् ॥
 दद्याच्चदिग्वलिं शक्रं पूर्वदिक्षु समं ततः(१) ।
 भूतवेतालसङ्घस्य मन्त्रेणानेन सुव्रत ॥
 जयत्वं कालिका भूते सर्वभूतसमाहता ।
 रक्ष मां निज भूतेभ्यो बलिं गृह्ण सदा प्रियं ॥
 मातर्मातर्धरे दुर्गे सर्वकामप्रसाधनि ।
 अनेन बलिदानेन सर्वान् कामान् प्रयच्छ मे(२) ॥
 एवं दत्त्वा बलिं शक्रं तथा देव्यावतारयेत् ।

(१) सर्वदिक्षु समन्तत इति पाठान्तरं ।

(२) दिव्यान् लोकान् प्रयच्छेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

बिन्यसेद्द्रपोठे तु मण्डलैरुपशोभितां ॥
 तत्रस्थां प्रापयेद्देवीं हेमरूप्यैश्चताम्रजैः ।
 कलशैरष्टसहस्रेण गन्धोदकसुपूरितैः ॥
 समस्तफलसम्पूर्णैर्य्याघ्रियैरथ पङ्क्तवैः ।
 स्नापयेदेकभक्तेन रत्नगर्भैर्नवैर्द्वैः ॥
 वेदमङ्गलगन्धेन शङ्खवादिचनिस्त्रनैः ।
 वेशुवीणामृदङ्गैश्च घण्टाकिङ्किणिरावितैः ॥
 स्नापयित्वा ततो देवीं निर्घञ्छेद्वर्णकैः शुभैः ।
 निर्घञ्छेत्प्ररोयजेत् ।

गोमयादि कृतैः पद्मैः दीपवर्त्यादिवोधितैः ।
 स्वस्तिकैर्वन्दिकावर्तैः शङ्खैर्नीलोत्पलोद्जैः ॥
 यवगान्धदुरङ्गिणैर्यवचारैर्निमन्ययेत् ।

उद्जैः कमलैः ।

पवचारैर्यवलणैः ।

प्रत्येकं तु दहेद्वृषं प्रत्येकं कलशं स्रपेत् ।
 तथा कर्पूरक्षोदेन चन्दनं कुङ्कुमेन च ॥
 गोरोचना समे तेन देवीं मालिष्य पूजयेत् ।
 हेमजैर्जातिमाल्यैश्च रत्नन्यासैरनेकधा ॥
 वासोभिः सुमनोभिश्च पादद्वयं समुत्क्षिपेत् ।
 वस्त्र पुष्पोपरि चक्रमणं कारयेदित्यर्थः ॥
 दक्षयेच्च तथा कन्यादिजान् दीनान्मदुःखितान् ।
 भक्ष्य भोज्यान्नपानेन तच्च सर्व्यां प्रीक्षयेत् ॥
 भोजयित्वा स्नापयेद्देवीं मे प्रीयतामिति ।

तथा देवीं रथे कृत्वा पुनरेव गृहं नयेत् ॥
 महता जनसंघेन समस्तविभवान्वितैः ।
 सान्तरेण रथं सर्वं पुष्पदूर्वाक्षतैर्जलैः ।
 प्रक्षिप्यमाणैः कन्याभिस्त्रीभिर्मण्डलवादिभिः ॥
 सलिलेन पथे पांशुं कृत्वा पथः ततः क्रमात् ।
 पुरशोभां पथः शोभां द्वारशोभां गृहे गृहे ॥
 कारयेत् तथाशक्र सर्ववाधां निवारयेत् ।
 अच्छेद्यास्तरवस्तस्मिन् प्राणिहिंसां विवर्जयेत् ॥
 बन्धनस्याय मोक्तव्या वध्याः क्षोधादिशत्रवः ।
 अकाले कौमुदीं शक्ररथयात्रास्तु कारयेत् ॥
 अकालेकौमुदीं दीपोत्सवः । तस्मिन्नकाले कुर्यादित्यर्थः
 सर्वदा सर्वदेवैस्तु शङ्करायैः प्रतिष्ठिता ।
 रथयात्रा तथाशक्र सुरैः स्वर्गं सदा कृता ॥
 तथा किन्नरगन्धर्वभूपातालनिवासिभिः ।
 रथयात्रा प्रभावेन मोदते दिवि देवता ॥
 आदित्ये रथराजेन्द्र रथेन नभसः क्रमेत् ।
 देवादित्याविमानस्या रथयात्राप्रभावतः ॥
 क्रीडन्ते विविधैर्भोगैः सर्वातद्भुवि वर्जिताः ।
 तथात्वमपि देवेन्द्र रथमात्राकरो भव ॥
 शिवाया शिवदायास्तु परमेण समाधिना ।

अगस्त्य उवाच ।

रथपात्रा समं पुण्यं ब्रह्मणा वासवस्य तु ।

पूर्ववत् कथितं तात तत्ते सर्व्वमयाखिलं ॥
 स्थापित नात्र सन्देहो देवीमाहात्म्यमुत्तमं ।
 यः पठेच्छृणुयाद्वापि भक्तिमाश्रय सत्तम ॥
 स सुखं यशः सौभाग्यं पुत्रप्राप्तिमभीप्सिताम् ।
 लभते नात्र सन्देह इत्येव ब्राह्मणोऽब्रवीत् ॥
 सुवलेन दिते राज्ये पुराणकस्य कीर्त्तिता ।
 धनदस्य पुरीप्राप्तिर्विष्णुस्य च वायुना ॥
 हते स्थाने कृता तेन तथा श्रुत्वाच नैर्ऋते ।
 भुञ्जते परया तुष्टा पुरीं नागवतीं शुभां ॥

इति देवीपुराणोक्ता रथयात्रा ।

—(१००)—

रुद्र उवाच ।

रथयात्रा कथं कार्य्या भास्करस्येह मानवैः ।
 फलञ्च किं भवेत्तेषां यात्रां कुर्वन्ति यत वै ॥
 विधिना केन कच्चं व्या कस्मिन् काले सुरोत्तम ।
 कथञ्च भ्रामयेद्देवं रथारूढं दिवाकरं ॥
 देवस्थेमं रथं भक्त्या भ्रामयन्ति ददन्ति च ।
 तेषां किञ्च फलं प्रीतिं येच कृत्यकरा नराः ॥
 भ्रमन्तमर्चयन्त्येनं नृत्यगीतपरा नराः ।
 प्रज्ञागरञ्च कुर्वन्ति भक्त्या अदासमन्विताः ॥

तेषाञ्च किं फलं प्रोक्तं रथं यच्छन्ति ये रवेः ।
वर्षभक्तञ्च यो भक्त्या दंशकानिच भोजनं ॥
वर्षभक्तं धान्योदनं दंशकानि खाद्यानि ।
एतन्मे ब्रूहि निखिलं सुरश्रेष्ठ सुविस्तरं ॥
लोकानां श्रेयसे देव परं कीतूहलन्तु मे ।
ब्रह्मोवाच ।

साधु पृष्टोमि भूतेश गणेशेश त्रिलोचन ।
शृणुष्वैकमना वच्मि यथा पृष्ट सुविस्तरं ।
देवस्य रथगात्रैषा भास्करस्य महात्मनः ॥
इन्द्रोत्सवस्तथा रुद्र मतीह्येती ममो यतः ।
मर्त्यलोके शास्तिहेतोर्लोकालोक प्रपूजितौ ॥
प्रवर्त्तते इमौ तस्मिन् देशे देशे महोत्सवौ (१) ।
इमा इन्द्रध्वजरविरथौ ।

न तत्रोपद्रवाः सन्ति राजतस्करमग्नवाः ।
तस्मात् कार्याविमो भक्त्या दुर्भिक्षस्योपशान्तये ॥
शक्रपत्ने तु सप्तम्यां मामि मार्गशिरे हर ।
वृतेनाभ्यञ्जयेद्देवं पञ्च भूतान यजेत वै ॥
अभ्यञ्जयेत् ग्रहेण यः सर्पिषा शययान्वितः ।
दिने दिने जगन्नाथपविष्टं वर्णके रविं ॥

वर्णके उत्तर्त्तन गृहे ।

स गच्छेद्यानमारुह्य गैरिकं किङ्किणीवृतं ।

(१) दशोदवसन्तीत्यसौ इति पाठान्तरं ।

वैश्वानरपुरन्दियं गन्धर्वाक्षरशोभितं ॥
 ग्राह्योदनं खण्डमिश्रं बहुवक्षसमन्वितम् ।
 वक्षसमन्वितं प्राज्यसमन्वितमित्यर्थः (१) ।
 वर्णभक्तं प्रयच्छेत्तो भास्कराय दिने दिने ॥
 आरुढः सहिमानं तु ध्वजमासाकुलं शुभं ।
 गच्छेन्मम पुरन्देव स्तूयमानो महर्षिभिः ॥
 तस्मात् सर्वप्रयत्नेन भास्कराय नरैः सङ्ग ॥
 वर्णभक्तं प्रदातव्यं प्रतिष्ठयाप्येह वर्णकं ।
 घृतपूर्णं खण्डवेष्टं कासारं मोदकाद्ययः ॥
 दध्नीदनं पायसञ्च संयाचं गुह्यपूपकान् ।
 ये प्रयच्छन्ति देवस्य भास्करस्येह वर्णकं ॥
 ते गच्छन्ति न सन्देहो नरा वै मन्दिरं मम ।
 अहन्यहनि यो भक्त्या भास्कराय प्रयच्छति ॥
 अभ्यङ्गाय घृतं देव स याति परमां गतिं ।
 तथा यो वर्णभक्तञ्च अहन्यहनि भक्तितः ॥
 सम्प्राप्येह शुभान् कामान् गच्छेत्तोपि ममालयं ।
 चूर्णमुहर्त्तनं नित्यं यः प्रयच्छेच्छुभं रवेः ॥
 स याति परमं स्थानं यच्च देवोदिवाकरः ।
 ततस्तं तर्पयेद्देवं (२) पौषे मासि विधानतः ॥
 सप्तम्यां शुक्लपक्षस्य शृणुष्वैकमना यथा ।
 तीर्थोदकं समानीय अन्यद्वाथ जलं शुभं ॥

(१) वक्षः घृतमिति पाठान्तरं ।

(२) ततस्तं स्नापयेद्देवमिति पाठान्तरं ।

यथाशा विमलाः सव्वीः सूर्यभास्करभानुभिः ॥

तथाशा सकला मष्टां कुरु नित्यं मयार्चितः ।

अर्घ्यमन्त्रः ।

एवं तमर्चयेत्तावद्यावदर्थं समाप्यते ।

समाप्ते तु व्रते वत्स कुर्यादुद्यापने विधिं ॥

गोमयेनानुलिप्तायां भूमौ मण्डलमालिखेत् ।

रक्तचन्दनरेखाभिः कुङ्कुमेन विशेषतः ॥

तन्मध्ये द्वादशदलं पद्ममाकारयेद्बुधः ।

सिन्दूरपूरितदलं जवाकुसुमपूरितं ॥

तन्मध्ये स्थापयेत् कुम्भं प्रवालाङ्गु रसत्रिभं ।

शालितण्डुलसंपूर्णं शर्कराचन्दनान्वितं ॥

तस्योपरि न्यसेत्पात्रं ताम्रं शक्त्या विनिर्भितं ।

सौवर्णं भास्करं कृत्वा पद्महस्तं स्वशक्तितः ॥

आदित्यरूपन्तु निक्षभाभास्करसप्तमीव्रतीकृतं वेदितव्यं ।

रक्तवस्त्रयुगोपेतं पात्रोपरि निवेशयेत् ॥

स्नाप्य पञ्चामृतेनादौ जवाकुसुमलेपितं ।

रक्तपुष्पैस्तु नैवेद्यैः फलैः कालोद्भिस्तथा ॥

पूजयेज्जगतामीशं दीपघूपैस्तथोत्तमैः ।

सूर्याय नमः । वरुणाय नमः । माधवाय नमः । धात्रे

नमः । हरये नमः । भगाय नमः । सुवर्णरेतसे नमः । अर्धशे

नमः । दिवाकराय नमः । तपनाय नमः । भानवे नमः ।

हंसाय नमः । इति द्वादशभिः पूजा कार्या ।

नमोनमः पापविनाशनाथ
 विश्वात्मने सप्ततुरङ्गमाय ।
 सामर्ग्यजुर्धमनिधे विधात-
 र्भवाब्धिपोताय नमः सवित्रे ॥

प्रार्थनामन्त्रः ।

अनेन मन्त्रेणार्घ्यं ।

एवं संपूज्य मानन्तु नक्तं भुञ्जीत वाग्यतः !
 आचार्यं पूजयित्वा तु वस्त्रैराभरणैः शुभैः ॥
 तस्मै तां प्रतिमां कृत्वा महिरण्यं प्रदापयेत् ।
 प्रीयतां भगवान् देवी मम संसारतारक ॥
 ब्राह्मणान् भोजयेत्पञ्चाद्वाद्गान्नादिविस्तरेः ।
 तेभ्यस्तु कलशान् दद्याद्यथा शक्त्वा तु दक्षिणां ॥
 एवं यः कुरुते सम्यक् व्रतमेतदनुत्तमं ।
 आशादित्येति विख्यातं तस्य पुण्यफलं महत् ॥
 निर्व्याधिर्निपुनो(२) जस्यो पुत्र पौत्रसमन्वितः ।
 भुक्त्वा च भोगानमलानसरैरपि दुर्लभान् ॥
 देहास्ते रविमायुज्यं प्राप्नुयादुत्तमांत्तमं(१) ।
 प्राप्स्यसे परमासृतिं विमुक्तः कुष्टरीगतः ॥
 आशाभङ्गो न तस्यास्ति कदाचिज्जन्मजन्मनि ।
 एतस्मात् कारणादस्य कुरुष्व व्रतमुत्तमं ॥
 एतच्छ्रुत्वा वचः शम्भुः पित्रा कृष्णेन भाषितं ।

(१) प्राप्नुयाद्वाव सप्तय १ति पाठान्तर ।

(२) निरोधोऽस्तीति पाठान्तरं ।

व्रतं चरित्वा संप्राप्तः सर्वसिद्धिं सुदुर्लभां ॥
इदं यः शृणुयाद्भक्त्या आवयेद्वापि मानवः ।
तावुभौ पुण्यकर्माणौ रविलोकमवाप्नुतः ॥
इति स्कन्धपुराणोक्तं आशादित्यव्रतं ।

—000—

अथातः संप्रवक्ष्यामि रहस्यं ह्येतदुत्तमं ।
येन लक्ष्मीर्धृतिस्तुष्टिर्पुष्टिः कान्तिश्च जायते ॥
सर्वप्रदाः सदा सौम्या जायन्ते यत् प्रसादतः (१) ।
आदित्यवारहस्तेन पूर्वं संगृह्य भक्तितः ॥
मन्त्रोक्तविधिना सर्वं कुर्यात्पूजादिकं रवेः ।
प्रत्येकं समनक्तानि कृत्वा भक्तिपरो नरः ॥
ततस्तु मममं प्राप्ते कुर्याद्वाङ्मणवाचनं ।
भास्करं शुद्धसौवर्णं कृत्वा यत्नेन मानवः ॥
आदित्यरूपं, आशादित्यव्रतवदेदित्यं ।
ताम्रप्राचे स्थापयित्वा रक्तपुष्पैः प्रपूजयेत् ॥
रक्तवस्त्रयुगच्छत्रं कृत्रोपानयुगान्वितं ।
घृतेन स्थापयित्वा तु लङ्कान्निवेद्य च ॥
होमं घृततिलैः कुर्याद्रविनाम्ना तु मन्त्रवित् ।
समिधोष्टोत्तरशतमष्टाविंशतिरेव वा ॥
होतव्या मधुसार्पिभ्यां दध्ना चैव घृतेन वा ।
समिधोत्त, अर्कसमिधः ।

(१) येन वाङ्मण इति पाठान्तरं ।

मन्त्रेणानेन विदुषे ब्राह्मणाद्योपपादयेत् ।
 आदिदेव नमस्तुभ्यं सप्तसप्ते दिवाकर ॥
 त्वं रवे तारयस्वास्मानस्मात् संसारसागरात् ।
 व्रतेनानेन राजेन्द्र भवेदारोग्यमुत्तमं ॥
 द्रव्य-संपत्कृतप्राप्तिरिति पौराणिका विदुः ।
 अविस्मयादिनौ चैवं शान्तिः पुष्टिः सदा नृणां(१) ॥
 इति भविष्यपुराणोक्तमादित्यशान्तिव्रतम् ।

—००—

नारद उवाच ।

यदारोग्यकरं नृणां यदनन्तफलप्रदं ।
 व्रतं तत् ब्रूहि मे नन्दिन् सर्वपापप्रणाशनं ॥

नन्दिकेश्वर उवाच ।

यत्तद्विश्वात्मनो धाम परं ब्रह्म सनातनं ।
 सूर्याग्नि चन्द्ररूपेण त्रिधा जगति संस्थितं ॥
 तदाराध्य शुभं विप्र प्राप्नोति कुशलं सदा ।
 तस्मादादित्यवारेण सदा नक्ताशनो भवेत् ॥
 यदा हस्तेन संयुक्तमादित्यस्य च वासरं ।
 उत्पद्यते यदा भक्तिर्भानोरुपरि शाश्वती ।
 तदा दित्यदिने कुर्यादेकभक्तं विमत्सरः ॥
 तदारभ्य सदा कार्यं नक्तमादित्यवासरे ।
 नक्तमादित्यवारेण भोजयित्वा हिजोत्तमान् ॥
 ततोऽस्तसमये भानो रक्तचन्दनपङ्कजं ।

(१) सूर्यवीरा सुषोरासु कृता शान्तिः शुभप्रदा इति पुराणकारे पाठः ।

विलिख्य द्वादशदलं पूज्य सूर्येति पूर्वतः ॥
 दिवाकरं तथाम्नेये विवस्वन्तमतः परं ।
 भगन्तु नैऋते देवं वरुणं पश्चिमे दले ॥
 महेन्द्रं मारुतदले आदित्यन्तु तथोत्तरे ।
 शान्तमीशानभागे तु नमस्कारेण विन्यसेत् ।
 कर्णिका पूर्वभागे तु सूर्यस्य तुरगाग्रसेत् ॥
 दक्षिणे यमनामानं मार्त्तण्डं पश्चिमे दले ।
 उत्तरेण रविं देवं कर्णिकायान्तु भास्करं ॥
 अर्घ्यं दत्त्वा ततो विप्र सतिलारुणचन्दनं ।
 यवाक्षतसमायुक्तमिमं मन्त्रमुदीरयेत् ॥
 कालात्मा सर्वभूतात्मा सविता सर्व्वतोमुखः (१) ।
 यत्कादग्नीन्द्ररूपस्त्वमतः पाहि प्रभाकरः ॥
 अग्निमीले नमस्तभ्यमिषेत्वैर्जिति भास्करः ।
 अग्न आयाहि वरदं नमस्ते ज्योतिषाम्पते ॥
 अर्घ्यं दत्त्वा विसृज्याथ निग्रि तैलपित्रर्जितं ।
 भुञ्जीत भावितमना भास्करं संस्मरन् मुहुः ॥
 प्राक्तनेऽङ्गि शनी चैव तैलाभ्यङ्गं विवर्जयेत् ।
 वत्सरान्ते कारयित्वा काञ्चनं कमलात्तमं ॥
 पुरुषन्तु यथा शक्त्या कारयेद्भिभुजन्तथा (२) ।
 सुवर्णशृङ्गीं कपिलां महाध्यां
 रौप्यैः खुरैः कांस्यदीप्तां सबन्धां ।

(१) वेदात्मा सर्व्वतो मुख इति पाठाकारः ।

(२) कारयेद् द्विजोत्तममिति वा पाठः ।

पूर्णं गुडस्योपरि ताम्रपात्रे
 निधाय पद्मे पुरुषश्च दद्यात् ॥
 संपूज्य रक्ताम्बरमाल्यधूपैः
 विजश्च रक्तैरथवा पिण्डैः ।
 प्रक्षालयित्वा पुरुषं सपद्मं
 दद्यादनेकव्रतदानकाय ॥
 अव्यङ्गरूपाय जितेन्द्रियाय
 कुटुम्बिने शुद्धमनुव्रताय ।
 नमोनमः पापविनाशनाय
 विश्वात्मने सप्ततुरङ्गमाय ॥
 मामर्ग्यजुर्धामनिधे विधात्रे
 भवाब्धिपीताय जगत् सवित्रे ।
 त्रयोमगाय त्रिगुणात्मने नमः
 त्रिलोकनाथाय नमो नमस्ते ॥

इत्यनेन विधानेन वर्षमेकन्तु यो नरः ॥
 नक्तमादित्यवारेण कुर्यात् निरुजो भवेत् ।
 धनधान्यसमायुक्तः पुत्र-पौत्रसमन्वितः ॥
 मर्त्ये स्थित्वा चिरं कालं सूर्यलोकमवाप्नुयात् ।
 कर्मसंचयमवाप्य भूपति-
 दुःख-शोक-भय-रोगवर्जितः ।
 ह्रीपसप्तकपतिः पुनः पुन-
 र्धर्ममूर्तिरमितौजसा युतः ॥

या च देवगुरुभर्तृतत्परा
वेदमूर्त्तिदिननक्तमाचरेत् ।
सापि लोकममरेशपूजिता
याति नारद रवेर्न संशयः ॥
वेदमूर्त्तिः सूर्यस्तद्दिने नक्तमित्यर्थः ।
यः पठेदथ शृणोति वा नरः
पश्यतीदमथवानुमोदयेत् ।
सोपि शक्रमवने दिवोकासैः
कल्पकोटिशतमेव मोदते ॥
इति मत्स्यपुराणोक्तं सूर्यनक्तव्रतं ।

अथ वेश्याव्रतं ।

—000—

युधिष्ठिर उवाच ।

वर्णाश्रमाणां प्रभवः पुराणेषु मया श्रुतः ।
पण्यस्त्रीणां समाचारं श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः ॥
का ज्ञामां देवता कृणु किं व्रतं किमुपापितं ॥
केन धर्मेण चैवेताः स्वर्गमाप्स्यन्त्यनुत्तमं ।

कृष्ण उवाच ।

मम पत्नीमहस्त्राणि गतं पाण्डव षोडश ।
रूपौदार्यगुणोपेता मन्मथायतनाः शुभाः ॥
ताभिर्व्वसन्तसमये कीकिलालिकुलाकुले ।
पुष्पितीपवनेतत्फुल्लकल्हारसरमस्तटे ॥

निहरापानगोष्ठीभिरुद्यदानैरलङ्कृतः ।
 कुसुमानयनः शोभान् मालतीकृतशेखरः ॥
 गच्छेत् समीपमेतासां शम्भुः पुरपुरस्त्रयः ।
 साक्षात् कन्दर्परूपेण सर्वाभरणभूषितः ॥
 अनङ्गशरतप्ताभिः साभिलाषमवेक्षितः ।
 प्रहृष्टो मन्मथस्तासां सर्वाङ्गक्षीभदायकः ।
 तदीक्षितं मया सर्वं विकारं ध्यानचक्षुषा ।
 अगपं क्षितः सर्वा हरिष्यन्तीह दस्यवः ॥
 मयि स्वर्गमनुप्राप्ते भवतीः काममोहिताः ।
 एतद्वाक्यमुपाश्रुत्य वाष्पपर्याकुलेक्षणाः ॥
 मामूर्चुर्वद् गोविन्द कथमेतद्भविष्यति ।
 भर्तारं जगतामौशं त्यक्त्वा यामो परान्तिकं(१) ॥
 दिव्यानुभावश्च पुरीं रत्नवन्ति गृहाणि च ।
 द्वारकावासिनः सर्वे देवरूपाः कुमारकाः ।
 भगवन् सर्वलोकस्य कथं भोगं भजाम्यहं ॥
 दासभावमनुप्राप्ता भविष्यामः कथं पुनः ।
 को धर्मः कः समाचारः कथं हृत्तिर्मविष्यति ॥
 तथा लालयमानास्ता वाष्पपर्याकुलेक्षणाः ।
 मया प्रीक्ता युवतयः सन्तापं त्यजतामिमं ॥
 पद्मपुराणे दाल्भ्य गोपी सम्वादे ।

दाल्भ्य उवाच ।

जलक्रीड़ाविहारेषु पुरा सरसि मानसे ।

(१) तं वाक्ममापराधि तमिति कश्चित्पाठः ।

भवतीनाञ्च सर्वासां नारदीभ्यासमागतः ॥
 हुताशनसुताः सर्वा भवत्योप्सरसः पुरा ।
 अप्रणम्यावलेपेन परिपृष्टः स योगवित् ॥
 कथं नारायणोऽस्माकं भर्ता स्यादित्युपादिश ।
 तस्माद्वरप्रदानञ्च शापत्रायमभूत्पुरा ॥
 यस्मादेपा प्रधानैव मधुमाधव मासगोः ।
 सुवर्णीपस्करीत्सर्गं द्वादशी शुक्लपक्षतः ।
 भर्ता नारायणो नूनं भविष्यत्यन्यजन्मनि ॥
 यदकृत्वा प्रणामं मे रूपसीभाग्यमत्सरात् ।
 परिपृष्टोऽस्मि ते नाथवियोगो वो भविष्यति ॥
 चौरैरपहृताः सर्वा वेश्या त्वं समवाप्स्यथ ।
 एवं नारदशापिन केगवस्य च धीमतः ॥
 वेश्यात्वमागताः सर्वा भवत्यः शापमोहिताः ।
 इदानीमपि यदच्चे तच्छृणुष्वं वराङ्गनाः ।
 पुरा देवासुरे युञ्जे हतेषु गतशः सुरैः ॥
 देवतासुरसैन्येषु राक्षसेषु ततस्ततः ।
 तेषां नारी सहस्रेषु गतर्माऽथ सहस्रगः (१) ॥
 परिनीतानि यानि स्युः बलादुक्तानि यानि च ।
 तानि सर्वाणि देवश प्रोवाच यदताम्यर ॥
 वेश्याधर्मेण वर्त्तध्वमधुना नृपमन्दिरे ।
 भक्तिमत्यो वरारोहास्तथा देवकुलेषु च ॥
 राजानः स्वामिनस्तन्यं ब्राह्मणाय बहुयुताः ।

तेषां गृहेषु तिष्ठन् स्तुतकं वापि तत्समं ॥
 भविष्यति च सौभाग्यं सर्वासां मयि भक्तिः ।
 न कदाचिद्रतिः कार्या पुंसि धनविवर्जिते ॥
 अनुमानाः प्रसादयश्च शुल्कदो देववत्सदा ।
 स्वरूपो वा विरूपो वा द्रव्यं तत्र प्रयोजनं ॥
 द्रव्योपहार्यमेवात्र सर्वदम्भविवर्जितं ।
 यः कश्चित् मुनिकृष्टोपि गृहमेष्टति वः सदा ॥
 निष्कृद्भवेन सेव्यो वः स एवान्यत्र दाम्भिकान् ।
 द्वेषाचारोऽन कर्त्तव्यः स्वामिना सह कर्हिचित् ॥
 रूपयौवनदर्पण धनलोभेन वा सदा ।
 कामश्च कान्ते या काचित् व्यभिचारं करोति च ॥
 स्वामिना सह पापिष्ठा पापिष्ठो यात्वधोगतिं ।
 देवतानां पितृणाञ्च पुण्यैर्ज्ञेयं समुपस्थिते ॥
 गो भू हिरण्यदानानि(१) प्रदेयानि च शक्तिः ।
 ब्राह्मणेभ्यो वरारोहा कार्याणि सुव्रतानि च ॥
 यथाप्यन्यत् व्रतं सम्यक् उपदेश्यामि तत्त्वतः ।
 अविचारेण सर्वाभिरनुहेयञ्च तत्पुनः ॥
 संसारोत्तरणाय लभेत देविदो विदुः ।
 यदा सूर्यदिने हस्तः पुण्योवाथ पुनर्वसुः ॥
 भवेत्सर्वोपधीस्तानं सम्यङ्गारी समाचरेत् ।
 तदा पञ्चशरव्यापिसन्निधानत्वमिष्यते ॥

अर्चयेत् पुण्डरीकाक्षमनङ्गस्यापिकीर्त्तनं ।
 कामाय पादौ संपूज्य जरुवै मन्मथाय च(१) ॥
 मेढ्रे कन्दर्पनिधये कटिं प्रीतिपतयेनमः ।
 नाभिं सौख्यसमुद्राय वामनाय तथोदरं ॥
 हृदयं हृदयेगय स्तनावाङ्मादकारिणे ।
 उत्कण्ठायेति वै कण्ठमास्त्रमानन्दजाय च ॥
 वामांशं पुष्पचापाय पुष्पवानाय दक्षिणं ॥
 ललाटं पुष्पवाणेति शिरः पञ्चशराय वै ।
 नमोऽनङ्गाय वै मौलिं विलोमायेति जङ्घयोः(२) ॥
 सर्वात्मने शिरःपूज्यं देवदेवस्य पूजयेत् ।
 नमः श्रीपतये तार्क्ष्यजाङ्गुशधराय च ॥
 गदिने पद्महस्ताय(३) शङ्खिने चक्रपाणये ।
 नमोनारायणायैति कामदेवात्मने नमः ॥
 नमः शान्त्यै नमस्तुष्टै, नमो रत्यै नमः त्रियै(४) ।
 नमः स्तुष्टै, नमपुष्टै, नमः सर्वप्रदेति च ॥
 एवं संपूज्य गोविन्दमनङ्गात्मकमीश्वरं ।
 गन्धैर्घ्रातैस्तथा धूपैर्नैवेद्यैर्नवभामिनि(५) ॥
 तत आह्वयः धर्मज्ञं ब्राह्मणं वेद पारगं ।

(१) जरुः कामोदकारिणे इति क्वचित् पाठः ।

(२) ह्यङ्गमिति वा पाठः ।

(३) प्रीतिपताय इति वा पाठः ।

(४) नमः शान्त्यै नमः शान्त्यै इति क्वचित् पाठः ।

(५) श्रीभने इति वा पाठः ।

(६८)

अय्यंगावयवं पूज्य गन्धापुष्पादिभिस्तथा(१) ॥
 शालेयतण्डुलप्रस्थं घृतपात्रेण संयुतं ।
 तस्माद्विप्राय दातव्यं हृच्छयः प्रीयतामिति ।
 यथेच्छाहारभुम्भक्तं तमेव द्विजसत्तमं ॥
 रत्यर्थं कामदेवीयमिति चित्तेन धार्यतां(२) ।
 यद्यदिच्छति विप्रेन्द्रस्तत्तत् कुर्यात् विलासिनी ॥
 सर्वाभावेन चात्मानमर्पयेत् स्मितभाषिणी ।
 एवमादित्यवारेण सदा तद्व्रतमाचरेत्(३) ॥
 तण्डुलप्रस्थदानादियावन्मासास्त्रयोदश ।
 ततस्त्रयोदशे मासि संप्राप्ते तस्य कामिनी ॥
 विप्रस्योपस्करैर्युक्तां शय्यां दद्याद्विलम्बणां(४) ।
 सोपधानकविश्रामं स्वास्तरावरणां शुभां ॥
 दीपकोपानहृत्पादुकासनसंयुतां ।
 सपत्नीकमलंकृत्य हेमसुत्रांगुलीयकैः ॥
 सूक्ष्मवस्त्रैः सकटकः धूपमाल्यानुलेपनैः(५) ।
 कामदेवं सपत्नीकं गुडकुम्भोपरिस्थितं ॥
 कामदेवरूपन्तु मदनत्रयोदशीव्रतोक्तं विज्ञेयं ।
 तास्त्रपात्रासनगतं हेमनेत्रपटावृतं ।

(१) पुष्पतण्डुल चान्यैरिति वा पाठः ।

(२) यथाचित्तवशादथेदिति क्वचित् पाठः ।

(३) सर्वमेतत् समाचरेदिति वा पाठः ।

(४) विप्रभ्योक्तैर्युक्तां शय्यादद्याद्विलम्बणा इति वा पाठः ।

(५) गन्धमाल्यानुलेपनैरिति क्वचित् पाठः ।

सुकास्यभाजनोपेतमिच्छुदण्डसमन्वितं ॥
 दद्याद्यथोक्तविधिना (१) तच्चैकां गां पयस्विनीं ।
 यथान्तरं न पश्यामि कामकेशवयोः सदा ॥
 तथैव सर्वकामासिरस्तु विष्णोः सदा मम ।
 यथा न कमला देहात् प्रयाति मम केशवे ॥
 तथा ममापि देवेश शरीरस्य पतिं कुर्वन् (२) ॥
 तथैव काश्चनं देवं प्रतिगृह्य द्विजोत्तमः ।
 कीदादिति पठेन्मन्त्रं ध्यायेत्तसि माधवं ॥
 कीदादिति, यलुर्वेदशास्त्राप्रसिद्धो मन्त्रः ।
 ततः प्रदक्षिणीकृत्य विसृज्य द्विजपुङ्गवं ।
 शय्यासनादिकं सर्वं ब्राह्मणस्य गृहं नयेत् ।
 ततः प्रभृति योन्योऽपि (३) रत्नार्थं गृहमागतः ॥
 स सम्यक् सूर्यवारेण स सुपूज्यो यथेच्छया (४) ।
 एवं तयोद्दशं यावत् मासमेकं द्विजोत्तम ॥
 तर्पयेत् यथा कामं प्रीषितो रविमन्दिरे ।
 तदनुज्ञां निषेवेत यावदस्यागमो भवेत् ।
 एवमेकं द्विजं शान्तमाचारं विचक्षणं ॥
 संपूजयेच्चतुःप्राज्ञमपरं वरदाज्ञया ।
 आत्मनोऽपि यदा विघ्नं गर्भसूतकजन्मजं (५) ॥

(१) यथोक्तमन्त्रे चेति कश्चित् पाठः ।

(२) वप्रवं क' पतिं कुर्वन्ति कश्चित् पाठः ।

(३) यो विघ्ने इति वा पाठः ।

(४) समान्तः सूर्यवारे च स्नानजप्यादिभोजनैरिति वा पाठः ।

(५) गर्भसूतकराजकमिति वा पाठः ।

दैवं वा मानुषं वास्यादुपरागेण वा पुनः ।
 लक्ष्मीर्वियुज्यते देव न कदाचिद्यथा तव ॥
 शय्या ममापि शून्यास्तु तथैव मधुसूदन ।
 गीतवादित्रनिर्घोषं देवदेवस्य कारयेत् ॥
 एतच्च कथितं सम्यग्भवतीनां विशेषतः ।
 सुधर्मोयं परो भावो वेद्यानामिह सर्वथा ॥
 पुरुहतेन यत् प्रोक्तं दानवेषु पुरा मया ।
 तदिदं साम्प्रतं सर्वं भवतीष्वपि युज्यते ॥
 सर्वपापप्रशमनमनन्तफलदायकं ।
 साचारानष्टदश वा(१) यथा शक्त्या प्रपूजयेत् ॥
 एषप्रोक्तं मया राजन् दानवेषु ततो मया ।
 तदिदञ्च व्रतं सर्वं वेद्यानाञ्च प्रकाशितं ॥
 पुराणं धर्मसर्वस्वं वेद्याजनसुखप्रदं ।
 करोति वाशेषमखण्डमेतत्
 कल्याणिनी माधवस्य लोकसंस्था ।
 सा पूजिता देवगणैरशेषै-
 रानन्दकृतस्थानमुपैति विष्णोः ॥

इति श्रीभविष्योत्तरे कामदाने वेद्याव्रतं नाम(२) ।

—०००@०००—

(१) षडपञ्चाशदिति वा पाठः ।

(२) इति पञ्चपुराणोक्तं वेद्याव्रतमिति वा पाठः ।

सूत उवाच ।

मेरुपार्श्वे भद्रपीठे सुखाशीनं जगद्गुरुं ।
कश्यपं स्रष्टिकर्तारं तापसं शुद्धमानसं ॥
नारदो वैष्णवश्रेष्ठस्त्रैलोक्यभ्रमणप्रियः ।
कदाचिद्दुर्हयां प्राप्य कश्यपं शरणं ययौ ॥

नारद उवाच ।

देव-दानव-गन्धर्व-ऋषि-पन्नग-मानवाः ।
स्रष्टा त्वं सर्वभूतानां धर्माधर्मौ हि वेत्सि च ॥
दुष्टप्रहाभिभूतानां दुर्हयाहतचेतसां ।
उपायं वद तेषां त्वं शरणागतवत्सल ॥

कश्यप उवाच ।

तां ह्नेत्तुं ब्रूहि विप्रेन्द्र केन मुक्ता भवन्ति ते ।
साधु पृष्टं महाभाग जगदानन्दकारकः ॥
वक्ष्ये सौरव्रतं पुण्यं दुर्हयान्तकरं परं ।
दशाकरं हि भूतानां मनोरथकरं परं ॥
भानुवारे सिते पक्षे दशम्यां चैव नारद ।
प्रातः कालेऽथ मध्याह्ने ज्ञानं कुर्याद्यथाविधि ॥
भानुभ्यायेचिर्मूर्तिं हि सर्वदेव्यविनाशनं ।
सूर्यपूजा प्रकर्त्तव्या तथा गन्धानुलेपनैः ॥
उपचारैः षोडशभिर्नैवेद्यैस्तु फलान्वितैः ।
पूजयेद्दुर्हयां तच्च लिखित्वा दशपत्रिकाः ॥
दुर्मुखा दीनवदना मणिनाऽसत्यवादिनी ।

सुबुद्धिनाशिनी हिंसा बहुचिन्ताप्रदायिनी ॥
 उद्धाटकारिणी नाम दुश्चरित्रविरोधिनी ।
 एताः पूज्याः कृष्णवर्णा भक्ति बुद्धेन चेतसा ॥
 आदौ पूज्या प्रयत्नेन गोमयेनोपसेपयेत् ।
 नित्यं पापकरा पापा देवद्विजविरोधिनी ॥
 गच्छ त्वं दुर्हंशे देवि नित्यं शत्रुविवर्द्धिनि ।
 अनेन प्रार्थये स्त्रीहि प्रयत्नेन विसर्जयेत् ॥
 ततः पूजा प्रकर्त्तव्या डोररूपे च भास्करे ।
 दशग्रन्थिसमायुक्तं दशसूत्रोपशोभितं ॥
 डोरकं तु प्रतिष्ठाप्य पूजां कृत्वा करे न्यसेत् ।
 आवाहनादिदानान्तं पूजनं कारयेत्ततः ॥
 तत्र देवं क्षमाप्याद्य दशापूजां समारभेत् ।
 भूमिभागे च पीठे वा लिखित्वा दशपुत्रिकाः ।
 सुबुद्धिदा सुखकरी सर्वसम्पत्तिदायिनी ।
 इत्यष्टभोगप्रदा लक्ष्मीः कीर्त्तिदा दुःखनाशिनी ॥
 बुद्धिदात्री सुखकरा सर्वसम्पत्तिदायिनी ।
 पुत्रक्षेम्या च विजया दशमी धर्मदायिनी ॥
 एभिस्तु नामभिर्मन्त्रैः पूजनीयाः पृथक् पृथक् ।
 प्रतिष्ठापूजनं कार्यैकैवेद्यञ्च यथा विधि ॥
 विद्युच्चवसनां देवीं सर्वाभरणभूषितां ।
 ध्यायेद्दशदशादेवीं वरदाभयदायिनीं ॥
 इति ध्यानं प्रकुर्वीत दशाद्याः प्राप्तये रतः ।

फलस्तु दशसंख्याकैर्भुञ्जीयात्तैर्वापि ॥
एवं व्रतं प्रकर्त्तव्यं दशाप्राप्तिकरं परं ।

नारद उवाच ।

कश्यप त्वत्प्रसादेन श्रुतं हि व्रतमुत्तमं ।
दशाव्रतं कृतं केन कस्य तुष्टो हि भास्करः ॥

कश्यप उवाच ।

पुरा तु नलभूपालस्य कवर्त्तिषु धार्मिकः ।
राज्यभ्रष्टो दशाहीनो यूतेनैव हि नारद ॥
तेनापि पूजितः सूर्यो व्रतं कृत्वा प्रयत्नतः ।
दुर्दृशां नाशयित्वा तु राज्यं प्राप्तं स्त्रिया सह ।
ततश्च हापरे विप्राः पीडयन् दुर्दृशान्विताः ।
भ्रममाणा वने घोरे प्राप्ताः सत्यवतीसुतं ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

राज्यभ्रष्टो दशाहीनो राजाहं केन कर्मणा ।
इदानीं मे हितं ब्रूहि राज्यप्राप्तिकरं परं ॥
घृणिं ध्यात्वा मुनिश्रेष्ठो दृष्ट्वापि च दशाकरं ।
व्रतोपदेशनं चास्य चकार मुनिपुङ्गवः ॥
अस्य व्रतस्य सामर्थ्यात् प्राप्तं राज्यमकण्टकं ।
व्रतं कृत्वा च विधिना चतुर्भिर्भ्रातृभिः सह ॥
श्रुत्वेदं नारदो वाक्यं पुनः पप्रच्छ कश्यपं ।

नारद उवाच ।

केन कर्मविपाकेन दुर्दृशाभिहतो नरः ।
जायते मुनिशार्दूल तत्त्वं मे वक्तुमर्हसि ॥

कश्यप उवाच ।

शृणु नारद तत्त्वज्ञ दुर्दशा प्राप्यते नरैः ।
 तुष-भस्मा-स्थि-मुसलं कदाचिन्नष्टयेन्न तु ॥
 कुमारी रजकी वृद्धा पशुयोनिरताश्च ये ।
 अयोनिगुदगामी च ब्राह्मणी गमनेन च ॥
 सन्ध्यासु पर्वसमये रमते च रजस्वलाः ।
 पितृमातृपरित्यागी स्वामिनं रणसङ्कटे ॥
 त्यजेत् स्वधर्मपत्नीं यो दुर्दशा प्राप्यते नरैः ।
 तस्मात्सर्वप्रयत्नेन नान्यमार्गेण वर्त्तयेत् ॥
 तस्मात्तु तद्गतं कार्यं सर्वकामार्थसिद्धये ।

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे कश्यपनारदसम्वादे दशादित्यव्रतं ।

—००८१००—

सौरधर्मे मात्मातृवशिष्ठ संवादे मात्मातोवाच ।

भगवन् ज्ञानिनां श्रेष्ठ कथयस्व प्रसादतः ।
 त्वदक्लाच्छ्रोतुमिच्छामि व्रतं पापप्रणाशनम् ॥
 सर्वकामप्रदञ्चैव सर्वमयविनाशनं ।
 पूजार्घ्यदानसहितं नैवेद्यं प्रागनाचितं ॥
 एतत् कथय सर्वं त्वं प्रसन्नो यदि मे प्रभो ।

वसिष्ठ उवाच ।

शृणु राजन् प्रवक्ष्यामि यद्गुह्यं व्रतमुत्तमं ।
 सर्वकामप्रदं पुसां कुष्ठादिव्याधिनाशनं ।
 भानोस्तृष्टिकरं राजन् भुक्तिमुक्तिप्रदायकं ॥
 यस्योदये सुरगणा मुनिसंज्ञाः सचारणाः ।

देव दानव-यक्षाश्च कुर्वन्ति सततार्चनम् ॥
यस्योदये तु सर्वेषां प्रबोधो नृपसत्तम ।
तस्य देवस्य वक्ष्यामि व्रतं राजन् सविस्तरं ॥
पूजार्घ्यप्राशनं दानं नैवेद्यं शृणु तत्त्वतः ।
सर्व्वतीर्थेषु यत्पुण्यं सर्व्वयज्ञेषु यत्फलं ॥
सर्व्वदानेन तपसा यत्पुण्यं समवाप्यते ।
प्रातःस्नानेन यत्पुण्यं यत्पुण्यं रविवासरे ॥
मार्गशीर्षादिमासेषु द्वादशस्यपि भूपते ।
सूर्य्यव्रतं करिष्यामि यावद्वर्षं दिवाकर ॥
व्रतं संपूर्णतां यातु त्वत्पमादात् प्रभाकर ।

नियममन्त्रः ।

ततः प्रातः समुत्थाय नद्यादौ विमले जले ।
स्नात्वा सन्तर्पयेद्देवान् पितॄंश्च वसुधाधिप ॥
उपलिप्य शुनौ देशे सूर्य्यं तत्र समर्चयेत् ।
संलिखेत्तत्र पद्मन्तु द्वादशारं सकर्णिकं ॥
ताम्रपात्रे तथा नद्या रक्तचन्दनवारिणा ।
तत्र संपूजयेद्देवं दिननाथं सुरेश्वरं ॥
मासे मासे च ये राजन् विशेषास्तान् शृणुष्व वै ।
मार्गशीर्षे यजेन्मित्रं नालिकेरार्घ्यं मुत्तमं ॥
नैवेद्यं तण्डुला देयाः सत्राज्याः सगुडाः स्मृताः ।
पत्रत्रयं तुलस्यास्तु प्राश्य तिष्ठेज्जितेन्द्रियः ॥
दद्याद्विप्राय भोज्यन्तु दक्षिणामह्नि नृप ।
पौषे विष्णुं समम्यर्घ्यं नैवेद्यं कथं तथा ॥

बीजपूरेण चैवार्घ्यं प्राश्यं घृतपलत्रयं ।
 दद्यात् घृतन्तु विप्राय भोजनेन समन्वितं ॥
 माघे वरुणनामानं संपूज्य सतिलं गुडं ।
 भोजनं दक्षिणां दद्यान्नैवेद्यं कदलीफलं ॥
 अर्घ्यं तेनैव दत्त्वा तु प्राश्या मुष्टित्रयान्तिनाः ।
 फाल्गुने सूर्यमभ्यर्च्य जम्बोराघ्यं निर्वदयेत् ॥
 पलत्रयं दधि प्राश्यं नैवेद्यं सघृतं दधि ।
 दधितण्डुलदानञ्च भोजने समुदाहृतं ॥
 चैत्रे भानुन्तु संपूज्य नैवेद्यं घृतपूरिका ।
 फलं तु दाडिमं प्रोक्तं प्राश्यं दुग्धपलत्रयं ॥
 विप्राय भोजनं दद्यात् मिष्टानन्तु मदक्षिणं ।
 वैशाखे तपनः प्रोक्तो माषान्न सघृतं स्मृतं ॥
 अर्घ्यं दद्यात्तु द्राक्षाभिः प्राशनं गोमयस्य तु ।
 कुर्यान्मासानुमासन्तु सघृतं वै मदक्षिणं ॥
 इन्द्रं ज्यैष्ठे यजेद्राजन् नैवेद्यन्तु करभ्रकम् ।
 अर्घ्यं सहकारिण प्राश्यं जलाञ्जलित्रयं ॥
 दध्योदनसमायुक्तं भोजनं ब्राह्मणाय तु ।
 आषाढे रविमभ्यर्च्य पूजा विभीतकन्तथा ॥
 विप्राय भोजनं दद्यात् प्राशयेत् मरिचत्रयं ।
 गभस्तिमांश्छावणेऽर्घ्यं स्तपुषाफलमेव च ॥
 मुष्टित्रयञ्च शक्रूनां प्राशने समुदाहृतं ।
 विप्राय भोजनं दद्याद्दक्षिणा सहितं नृप ॥
 यदा भाद्रपदे पूज्यः कुष्माण्डं तण्डुलात्मकं ।

गोमूत्रं प्राशने युक्तं प्राञ्जणे भोजनं तथा ॥
 हिरण्यरेता आश्विने च नैवेद्यं शर्करा स्मृतं ।
 दाडिमे नार्घ्यदानन्तु प्राश्यं खण्डपलतयं ॥
 विप्राय परया भक्त्या भोजने शालिशर्करा ।
 कार्तिके चैवरश्मायाः प्राञ्जने फलमेव च ॥
 पायसञ्चैव नैवेद्यं पायसं प्राशने स्मृतं ।
 एवं व्रतं समाप्येतत्तत उद्यापनं चरेत् ॥
 ततो गुरुगृहं गत्वा गृह्णीयाच्चरणावभौ ।
 उद्यापनं करिष्येह मागच्छ मम वेश्मनि ॥
 माषकेन सुवर्णस्य प्रतिमाङ्कारयेद्भवेः ।
 रथो रूढमयः कार्यः सर्वोपस्करगंयुतः ॥
 कृत्वा द्वादशपत्रन्तु कमलं रक्ततण्डुलैः ।
 स्थापयेद्व्रणं कुम्भं पञ्चरत्नसमन्वितं ॥
 तस्योपरि न्यसेत्पात्रं ताम्रं तण्डुलपूरितं ।
 रक्तवस्त्रसमाच्छन्नं पुष्पमालाभिवेष्टितं ॥
 पञ्चामृतेन स्थापयेत् सत्पुष्पारणपूर्वकं ।
 प्रतिष्ठाप्य ततः कृत्वा पूजां देवस्य कारयेत् ॥
 चन्दनेः कुसुमैरन्यैर्विविधैः कालमश्ववेः ।
 अखण्डपट्टवस्त्रैश्च कमण्डलुमुपानह्नी ॥
 वर्धनीचितयं तत्र स्थापयेद्देवमाश्रयौ ।
 संप्रया वस्त्रयुग्मन्तु कौसुमन्तु महौपते ।
 प्रतिपदेषु संपूज्यः सूर्यद्वादशनामभिः ॥
 मित्रो विष्णुः शिवश्च सूर्यो भानुस्तथैव च ।

तपनेन्द्रो रविः पूज्यो गभस्तिः शमनः स्तथा ॥
 हिरण्यरेता दिनकृत् पूज्य एते प्रयत्नतः ।
 मध्ये सहस्रकिरणः संपूज्य संज्ञया सच्च ॥
 पूगीफलैर्धूपदीपैर्वस्त्र-नैवेद्यसंयुतैः ।
 नारिकेलैर्न चैवार्घ्यं दद्याद्देवस्य भक्तितः ॥
 मन्त्रेणानेन राजेन्द्र व्रतस्य परिपूर्णये ।
 नमः सहस्रकिरण सर्वव्याधिविनाशन ॥
 गृहाणार्घ्यं मया दत्तं संज्ञया सहितो रवे ।
 अर्घ्यमन्त्रः ।

आरातिकं ततः कृत्वा पूजा-सङ्कल्पमीव च ।
 संकल्पञ्च ततः श्राव्यं कार्यं वै सूर्यदेवतं ॥
 ब्राह्मणान् भोजयेद्ब्रह्म मिष्टान्नैर्हृदिश प्रभो ।
 दम्पत्याभोजनं देयं परमात्मसमन्वितं ॥
 ततस्तु दक्षिणां दद्यात् समभ्यर्च्य स्त्रगादिभिः ।
 उपहारादितत्सर्वं गुरुवे प्रतिपादयेत् ॥
 गुरुं तत्रैव सन्तीथ ब्राह्मणांश्च विसर्जयेत् ।
 मन्त्रहीनं क्रियाहीनं विधिहीनञ्च यत्कृतं ॥
 तत्सर्वं पूर्णतां यातु भूमिदेवप्रसादतः ।
 अनुव्रज्य गुरुं विप्रान् भोजनञ्च समाचरेत् ॥
 वृद्धांश्च वन्धुभिः सार्धं नत्वा देवं दिवाकरं ।
 एवं यः कुरुते मर्त्यो वित्तमाढ्यविवर्जितः ॥
 सूर्यव्रतं महाराज तस्य पुण्यफलं शृणु ।
 ब्राह्मणो लभते विद्यां क्षत्रियो राज्यमाप्नुयात् ॥

वैश्यो धनसंयुज्जि शूद्रः सुखमवाप्नुयात् ।
 अपुत्रो लभते पुत्रं कुमारो लभते पतिं ॥
 रोगार्तो मुच्यते रोगात् वदो मुच्येत वन्धनात् ।
 यं यश्चिन्तयते कामं स तस्य भवति ध्रुवं ॥
 य इदं शृणुयाद्भक्त्या ह्येकचित्तो नृपोत्तमः ।
 सर्वान् कामानवाप्नोति प्रसादाद्भास्वतो नृप ॥

इति सौरधर्माक्तं सूर्यव्रतं समाप्तं ।

—000—

अथ सोमवारव्रतानि ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि रहस्यं तदनुत्तमं (१) ।
 येन लक्ष्मीर्धृतिस्तुष्टिः पुष्टिः कान्तिश्च जायते ॥
 तद्विवासासु संगृह्य सोमवारं विचक्षणः ।
 नक्तोक्तविधिना सर्वं कुर्यात् पूजादिकं विधौ ॥
 सममे तु ततः प्राप्ते दत्त्वा ब्राह्मणभोजनं ।
 कांस्यपात्रे तु संस्थाप्य सोमं रजतसम्भवं ॥
 सोमरूपन्तु चतुर्दशीस्यमहाराजव्रतोक्तं वेदितव्यं ।
 पात्रे कृत्वा सोमराजं (२) श्वेतवस्त्रैः प्रपूजितं ॥
 पादुकी-पानह-छत्र-भाजना-सनसंयुतं ।
 होमं घृततिलैः कुर्यात्सोमनाम्ना तु मन्त्रवित् ॥
 समिधोष्टोत्तरशतमष्टाविंशतिरेव च ।
 होतव्या मधुमर्षिभ्यां दध्ना चैव घृतेन तु ॥

(१) होतदुत्तममिति कश्चित् पाठः ।

(२) श्वेतवस्त्रयुग्ममिति कश्चित् पाठः ।

पलाशसमिधो ज्ञातव्याः ।

दध्यन्नशिखरे कृत्वा ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥

मन्त्रेणानेन राजेन्द्र सम्यग्भक्त्या समन्वितः ।

महादेव जटावल्ली पुष्पगोक्षीरपाण्डुर ॥

सोम सोम्यो भवास्माकं सर्व्वदा ते नमोनमः ।

एवं कृते महासोम्य सोमतृष्टिकरो भवेत् ॥

सन्तुष्टेऽत्रिसुते तस्य सर्व्वं सन्तु ग्रहा ग्रहाः ।

इति भविष्योत्तरोक्त चन्द्रनक्षत्रशान्तिः ।

—000—

ईश्वर उवाच ।

अथ व्रतविधानं हि कथयामि समासतः ।

यथा चरन्ति मनुजाः सिद्धसर्व्वार्थं कामदं ।

व्युक्तास्ते(१) कार्तिके मासि शुक्लमार्गदिने भवेत् ॥

प्रथमः सोमवारस्तु तं नक्षत्रेण प्रपूजयेत् ।

यदा ग्रहा भवेत्कर्तुः सोमवारव्रतं प्रति ॥

तदा सर्व्वं कारयित्वा ब्राह्मणाद्यैः समारभेत् ।

मार्गमासे(२) तथा चैत्रे गृह्णीयात् सोमवारकं ॥

तस्मिन्मासे प्रारभेत तस्मिन्मासे प्रपारयेत्(३) ।

सुस्नातस्तु शुचिर्भुत्वा शुक्लाम्बरधरो नरः(४) ॥

काम-क्रोधाद्य-हृद्भार-द्वेष-शून्यविवर्जितः ।

(१) प्रकृतास्ते इति कश्चित् पाठः ।

(२) सर्व्वं शुक्लदिने भावदिति कश्चित् पाठः ।

(३) मासे मासोति कश्चित् पाठः ।

(४) तस्मिन् तत्प्रारभेद्व्रतमिति कश्चित् पाठः ।

आहरेत् श्वेतपुष्पाणि मल्लिकामालतीस्तथा ।
 श्वेतपद्मानि दिव्यानि चम्पकं विष्वपाटलाः ॥
 कुन्दमन्दारजैः पुष्पैः पुन्नागशतपत्रकैः ।
 चर्चयेन्मलयजेनाथ दिव्यधूपेन धूपयेत् ॥
 अन्नानि यान्यभीष्टानि तानि सर्वाणि दापयेत् ।
 पूजयेद्भक्तिभावेन सोमनाथं जगत्पतिं ॥
 कामिकेन तु मन्त्रेण (१) प्रायकेन महेश्वरं ।
 निवेदयेत् सर्वमेव शृणु मन्त्रवरं हितं ॥
 श्रीं नमो दशभुजाय त्रिनेत्राय पञ्चवदनाय शूलिने ।
 श्वेतवृषभरूपाय सर्वाभरण भूषिते (२) ॥
 उमादेहार्जसंस्थाय नमस्ते सर्वभूतार्त्तये ।
 अनेनैव तु मन्त्रेण पूजाहोमन्तु कारयेत् ॥
 मिथ्यन्ति सर्वकार्याणि मनसा चिन्तितानि च ।
 पूजयेन्नक्तवेलायामृच्छाणां दर्शनेन तु ॥
 प्रदाय भोजनं पूर्वं ब्राह्मणाय सुभक्तितः ।
 संयुक्तशक्तताम्बूल-दक्षिणाभिस्तथैव च ॥
 एतद्विधिसमागुक्तो रागद्वेषविवर्जितः (३) ॥
 एकभक्तस्य यत्पुण्यं कथयामि समासतः ।
 शतजन्मार्जितं पापमसह्यं (४) देवदानवैः ॥

-
- (१) कामिकेन सुमन्त्रेणेति वा पाठः ।
 (२) श्वेताभरणभूषिते इति कश्चित् पुस्तके पाठः ।
 (३) मङ्गलोद्देववर्जित इति कश्चित् पाठः ।
 (४) दानममयमिति कश्चित् पाठः ।

नश्यते ह्येकभक्तेन नात्रकार्या विचारणा ।
 मासस्यैकस्य यत्पुण्यं शृणु तत्वेन(१) सुन्दरि ॥
 अभाग्यं जायते भाग्यं दुर्भगं सुभगं भवेत् ।
 पुत्रार्थं लभते पुत्रान् दरिद्री धनवान् भवेत् ॥
 गृहे तस्य(२) वरारोहे सौख्याणि विविधानि च ।
 रुद्रांशो धनभागौ स्या(३) द्विघ्नहीनः स्थितिश्चरेत् ॥
 अश्वमेधसहस्रस्य फलं प्राप्नोति मानवः ।
 स्वर्गं भुक्त्वा खिलान् भोगान् जायते मानवोत्तमः ॥
 नक्तानि सोमवारस्य पौषमासे महेश्वरि ।
 तेषां पुण्यफलं वक्ष्ये संक्षेपेण तवाग्रतः ॥
 अग्निष्टोमस्य यज्ञस्य फलं शतगुणं भवेत् ।
 तत्फलं लभते देवि पूर्वदेषसमन्वितः ॥
 माघस्येव तु मासस्य सोमवारेण पूजयेत् ।
 स्नापयेन्मधुदुग्धाभ्यां तद्यैवेक्षुरसेन तु ॥
 द्विजहत्यादिपापानि तानि सर्वाणि नाशयेत् ।
 विशुद्धस्तेजसा युक्तो जायतेत्यन्तनिर्मलः ॥
 बहुस्वर्गस्य यत्पुण्यं दुर्लभं त्रिदशैरिह ।
 लभते नात्र सन्देहो ममभक्तिप्रचोदितः ॥
 फाल्गुने कथयिष्यामि सोमवारफलं शुभं ।
 कृते नक्तं तु कथाणि गुह्यं स्ते विस्तरेण तु ॥
 चतुर्दशसहस्राणि शतानि द्वापञ्च च ।

(१) माघमासं शृणुष्वनेति वा पाठः ।

(२) गृहस्थमिति कश्चित् पाठः ।

(३) अर्धमासेत्ये इति कश्चित् पाठः ।

यज्ञानां सर्वशास्त्रज्ञैर्नागायाज्ञिकसत्तमैः ॥
 गवां लक्ष्म्य दत्तस्य चन्द्रसूर्यग्रहे प्रिये ।
 फलमप्यधिकं तस्य लभते नात्र संशयः ॥
 चैत्रेऽपि शृणु कल्याणि नमैव ब्रूयतो वचः ।
 सोमवारेण नक्षत्रेण कृतेन सुरसुन्दरि ॥
 यत्फलं लभते नारी लक्ष्म्येन तु पार्वति ।
 गङ्गोदकस्य नीतस्य सोमनाद्यादिसङ्गमे ॥
 घृतस्य मधुना वापि शतधा हि कृतं फलं ।
 गुग्गुलुश्च तथा पञ्चसङ्ख्यं परमेश्वरि ।
 एवं पुण्यं भवेदस्य मानवस्य न संशयः ।
 वैशाखे कारयेन्नक्षत्रं सोमवारे न संशयः ॥
 पूजयेच्छ्रेष्ठतपुष्यं च यथा लब्धेः सुरेश्वरि ।
 अपूणं हि प्रदातव्याः कदलीफलसम्भवाः (१) ॥
 एकचित्तेन भावेन निर्मलेन यशस्विनि ।
 कल्पानां सुरयोग्यानां सहस्रेण वरानने ॥
 दानेन विधिवद्देवि नराणां रूपशालिनी ।
 एतद्दानेन यत्पुण्यं लभते मानवी भुवि (२) ॥
 तत्फलं लभते सद्यः सोमवारकृतेन तु ।
 ज्येष्ठमासे महादेवि सोमवारव्रतस्य तु ॥
 चीर्णम्य यज्ञवेत् पुण्यं तत्सर्वं कथयामि ते ।
 गवां सुवर्णशृङ्गीणां पश्वरे विधिवत् प्रिये ॥

(१) नक्षत्राणि प्रदातव्याः कदलीफलसम्भवाः इति वा पाठः ।

(२) पुण्यमिति वा पाठः ।

दत्तानां दशसाहस्रं फलं प्राप्नोति मानवः ।
 पदस्र लभते पुण्यं दुर्लभं देवदानवैः ॥
 ईशस्य कल्पमयुतं क्रीडते तत्र सुन्दरि ॥
 आषाढे सोमवारस्य भावितात्मा चरेद्धृतं ।
 विधिपूर्व्वस्तु कल्याणि श्रेयः शृणु वदामि ते ॥
 नरमेधशतैकेन(१) विधियुक्तेन यत्फलं ।
 तद्ववेन्मानवे देवि पुण्यं सर्वशुभान्वितं ॥
 साधितुं नैव शक्यन्ते देवि नक्तमिदं यतः ।
 तस्माद्धृतमिदं सारं यतः कष्टेन मिश्रति ॥
 आश्विने तु महादेवं सोमवारेण पूजयेत् ।
 रात्रौ तु मीजनं कुर्यान्मदकौटिल्यवर्जितः ॥
 भवेद्भणवरः प्राणी जिवमानो महेश्वरि ।
 इह त्वेतादृशी चेष्टा परत्र कथयामि ते ॥
 अश्वमेधशतं साग्रं पुण्यं प्राप्नोति मानवः ।
 मम लोके स वसति यावच्चन्द्रार्कतारकाः ॥
 भाद्रे च भावसंयुक्तः पूजयेत्परमेश्वरीं ।
 पुण्यं वानुत्तमं तस्य शृणु देवि विशेषतः ॥
 गवां कीटिप्रदानस्य सवत्सस्य सुशीलिनः ।
 यत्तत् फलमवाप्नोति मानवी नात्र संशयः ॥
 आश्विने कथयिष्यामि त्वग्निष्टोमफलं शतं ।
 रसधेनुसहस्रस्य गुडधेनुशतस्य च ॥
 सूर्य्यग्रहे कुरुक्षेत्रे ब्राह्मणे वेदपारगे ।

१) अश्वमेधशतैकेनेति कश्चिन् पाठः ।

दत्तस्य फलमाप्नोति मानवो नात्र संशयः ॥
 कार्तिके वरदं देवि कामिकं मोक्षदायकं ।
 स्मरणात्पापसंघानां भेदकं परमेश्वरि ॥
 सोमवारव्रतपरो विधिवत् पूजयेच्छिवं ।
 नक्ताग्नौ यज्यायुक्तो दद्यात्सप्तमन्त्रितः ॥
 दत्तस्य वेदपारक्षे (१) रथानाञ्च शतस्य च ।
 वाजिभिः शभनिज्ञैश्च युक्तानां वेदवादिभिः ॥
 चतुर्विदेषु विप्रेषु प्रदत्तस्य च यत्फलं ।
 तत्फलं लभते देवि मानवो भक्तिसंयुतः ॥
 व्रतान्ते प्रतिमां कुर्याद्दीप्यं सोमं चतुर्भुजं ।
 त्रयोदशघटान् श्वेतवस्त्रगुग्मसमन्वितान् (२) ॥
 संपूर्णानि सुभक्ष्येषु वंशपात्राणि पार्वति ।
 तेषामुपरि यत्नेन दद्यात्सर्वार्थसिद्धये ॥
 सुशुभेन सुगन्धेन सुस्निग्धेनोष्णलेन च ।
 सक्तेन घृतपक्वेय (३) सहशालिघृतैस्तथा ॥
 ब्राह्मणानथ संपूज्य भक्तियुक्तैः चेतसा ।
 त्रयोदशघटान् दद्याद्वायु श्वेता मनोरमाः ॥
 तथानेन विधानेन विप्रा वस्त्रविचित्रिमा (४) ।

(१) वेदशास्त्रज्ञ इति वा पाठः ।

(२) पयोन्वितानिति वा पाठः ।

(३) पूर्णपादाणीति वा पाठः ।

(४) श्वदिकाश्च पवित्रक इति वा पाठः ।

उपानहयुताः कार्याश्चित्तवित्तानुसारतः ॥
 दद्यात् स्वाचारसंपन्नब्राह्मणेषु मणीषिषु ।
 दक्षयेत् गृहसारेण पुनरेव क्षमापयेत् ॥
 ततो गुरुं भक्तिपूर्वमासने चोपवेशयेत् ।
 अर्चयेद्गन्धपुष्पाद्यैर्धूपदीपविलेपनैः ॥
 न गुरोः सदृशी माता न गुरोः सदृशः पिता ॥
 संसारादुद्धरेद्योहि व्रतदानोपदेशतः ।
 गोम्वामी पूजितो यस्मात्पार्ष्वत्या सहितः प्रभुः ॥
 तस्मात् संपूजयेद्भक्त्या गुरुं भार्यासमन्वितं ।
 अर्चयेत् प्रथमं तत्र पूजया पादसंस्थया ॥
 दद्याद्दस्ताणि दिव्यानि सुवर्णाभरणानि च ।
 अमूल्यानि तु रत्नानि(१) ग्रामस्तेत्रपुराणि च ॥
 नगराणि गृहं दिव्यं यच्चान्यत् सुरसुन्दरि ।
 वाहनानि विचित्राणि गजवाजिरथादिकं ॥
 अन्यानि यान्यभीष्टानि तानि सर्वाणि दापयेत् ।
 गौर्गुरोः संप्रदातव्या सुवस्त्राश्च सुरुपिणी ॥
 खर्गश्चूडनी रौप्यखुरा कांस्यदीहा पयस्विनी ।
 ताम्रपृष्ठा सुशीला च वस्त्रप्रावृतदेहिका ॥
 अभ्यर्च्य विधिना दद्याद्भूतसंपूर्णहेतवे ।
 समधान्यं यथाशक्त्या दापयेत् प्रयतो व्रती ॥
 दीपदानं प्रकर्त्तव्यं गुरवे ज्ञानदायिने ।
 एवं गुरुं प्रणम्याथ शक्त्या दक्षिणया यजेत् ॥

दीपदानं प्रकर्त्तव्यं गुरवे ज्ञानदायिने ।
 क्षमापयेच्च तत् सर्वं देवादिप्रतिमां ददेत् ॥
 ततस्तपस्विनां देवि मम दर्शनहेतुना ॥
 सुगन्धघृतसंमिश्रपूजेः कृशरपायसैः ।
 धारिकाशोकवल्लीभिः पूरिका मण्डकैस्तथा ॥
 दधिदुग्धसमीपेन भोजनं दापयेत् सुधीः ।
 तपस्विनो ब्राह्मणांश्च लिङ्गमूर्त्तिसत्तुर्विधा ॥
 मम रूपमिदं यस्मात् तस्मात् पूज्यं चतुष्टयं ।
 शिवाङ्कितैश्च शास्त्रज्ञैर्दशकैश्चैव चित्तकैः ॥
 जटासुद्रादिसंयुक्तैर्भस्मोच्छलितविषहैः ।
 ब्रह्मचर्यरतैः शान्तैर्लोममत्सरवर्जितैः ॥
 ईदृशैः शिवपात्रैश्च भुक्तैः फलमनुत्तमम् ।
 भोजनान्ते प्रदातव्यं ताम्बूलं सुखवासकम् ॥
 श्वेतचन्दनकौपीनं दत्त्वा तांश्च विसर्जयेत् ।
 शक्तितो भोजनं देयं यथा विभवविस्तरैः ॥
 कृपणानाथदीनानां सुहृदां याचतामपि ।
 एवं विधिसमायुक्तो गच्छते परमं पदं ॥
 भोगान् भुङ्क्ते सर्वलोके शतकोटियुगान्तरेत् ।
 कन्याभिर्वेष्टितो देवि रमते स्वेष्टया प्रिये ॥
 मम लोके वसेत्तावद्यावदाभूतसंश्रयं ।
 मम वीर्यवलोपेतस्त्रिनेत्रः शूलपाणिकः ॥
 माहात्म्यात् सोमवारश्च यन्ते मुक्तिमवाप्नुयात् ।
 पूर्वं कृच्छ्रेण सञ्जीर्णं तथा वै पञ्चमीनिना ॥
 देवदानवमन्त्रैः पिशाचोरगराक्षसैः ।

ऋषिभिः क्षितिपैस्तद्वत् शायभुवमुखैः प्रिये ॥
 अन्यैश्च मानवैः शुद्धैरास्ति कौर्द्धर्मतत्परैः ।
 न देयं दुष्टचित्ताय शुद्धिहीनाय न कश्चित् ॥
 शास्त्रधर्मादिषु नैव विडम्बकजनाय च ।
 आचार्यदेवविप्राणां व्रतिनां व्रतशौलिनां ॥
 वज्रवेदसुतीर्थानां निन्दकाय न वै कश्चित् ।
 आर्त्तार्थैर्नैव परित्याज्यं व्रतमेतत् सुदुर्लभं ॥
 व्रतत्यागान्महादोष इति ज्ञात्वा समारभेत् ॥
 गुरोः समीपे कुर्वीत व्रतमेतन्न संशयः ।
 अन्यथा गुरुहीनस्य निष्फलं जायते व्रतं ॥
 सन्देहः सर्वकार्येषु गुरुहीनस्य वै भवेत् ।
 तस्मात्सर्वं प्रयत्नेन गुरुमेव समाश्रयेत् ॥
 अथ संक्षेपतो वक्ष्ये व्रतमाहात्म्यमुत्तमम् ।
 ये चरन्ति नरा देवि स्त्रियश्चापि सुभाविताः ॥
 तेषां जन्ममहस्तेऽपि न शोको जायते कश्चित् ॥
 न दारिद्र्यं न रोगश्च सन्ततिच्छेद एव च ।
 कुलकीटिं समुहृत्य स्थापयेदिन्द्रसन्नि ॥
 इत्थं शृणोति माहात्म्यं पद्यमानं व्रतस्य च ।
 आवयेद्भक्तिसंयुक्तो रुद्रस्यानुचरो भवेत् ॥
 क्रियमाणं तथा पश्येन्नतमेतत् प्रियं मम ।
 भक्तियुक्तो नरः श्रुत्वा यथैवानुपमोदते ॥
 मतिं ददाति यथापि स याति शिवमन्दिरं ॥
 इति स्कन्दपुराणोक्तसीमव्रतं ।

अथ भौमव्रतं ।

—०००—

स्वात्मासङ्कारकं गृह्य क्षपयेन्नक्तभोजनः ।
 मममे त्वयसंप्राप्ते स्थापितं ताम्रभाजने ॥
 हेमं रक्ताम्बरच्छत्रं कुङ्कुमेनानुलेपनं ।
 नैवेद्यं शुभ्रकं मारं पूज्य पुष्पाक्षतादिभिः ॥
 मन्त्रेणानेन तं दद्यात् ब्राह्मणाय कुटुम्बिने ।
 कुजम्प्रभवोपि त्वं मङ्गलः पठति बधैः ॥
 अमङ्गलं निहिंस्याशु सर्वदा यच्छ मङ्गलम् ।

इति भविष्योत्तरोक्तं भौमव्रतं ।

—०००—

भौमोयमेश्वरः पुत्रः पृथिव्यां जनितो महान् ।
 रूपेणैव सदा रम्यो वरदानादिवीर्यवान् ॥
 अस्यैव दिवसे प्राप्ते ताम्रपात्रं सुशोभनं ।
 परिपूर्णं गुडैर्नैव वर्धमेकं प्रदापयेत् ॥
 व्रतान्ते दापयेत्तेनं यथोक्तफलसंयुता ।
 ब्राह्मणाय मरुपाय अव्यङ्गितशरीरिणे ॥
 एवं व्रतविधिं दिव्यं यः कथितं कुरुते नरः ।
 रूपवान् धनवान् चैव जायते नात्र संशयः ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं भौमवारव्रतं ।

—०००—

युधिष्ठिर उवाच ।

देवदेव जगन्नाथ पुराणपुरुषोत्तमः ।
सर्वार्थसाधनं पुण्यं व्रतं कथय मे प्रभो ॥
भौमीयमर्चनं ब्रूहि माहात्म्यं तस्य मे प्रभो ।
व्रतेन येन चीर्त्सेन नरो दुःखात् प्रमुच्यते ॥

श्रीभगवानुवाच ।

यदुक्तं कथयिष्यामि सर्वकामार्थसाधनं ।
ग्रहाणामधिपोभोमः पूजयेद्भोमवासरे ॥
मङ्गलो भूमिपुत्रश्च ऋणहर्त्ता धनप्रदः ।
स्थिरासनो महाकायः सर्वकामार्थसाधकः ॥
लोहितो लोहिताङ्गश्च सामगानां कृपाकरः ।
धरात्मजो कुजो भौमो भूतिदा भूमिनन्दनः ।
अङ्गारको यमश्चैव सर्वरागापहारकः ।
सृष्टिकर्त्ता प्रवृत्ता च सर्वकामफलप्रदः ॥
एतानि कुजनामानि प्रातस्तथाय यः पठेत् ।
ऋणं न जायते तस्य धनं प्राप्नोत्यसंशयं ॥
त्रिकोणश्च सदाकार्यं मध्ये छिद्रं प्रकल्पयेत् ।
कुङ्कुमेन सदा लेख्यं रक्तचन्दनमेव च ।
कोणे कोणे प्रकल्प्यानि त्रीणि नामानि भूमिज ॥
आरवक्त्रं भूमिजस्य रक्तगन्धैश्च पूजयेत् ।
स्वापयेद्गन्धे कुम्भे जलपूर्णं सवस्त्रके ॥
रक्तधाम्नेश्च नैवेद्ये रघ्यं रक्तफलैस्तथा ।
रक्तगन्धैश्च धूपैश्च पुष्पदीपादिभिस्तथा ॥

मङ्गलं पूजयेद्भक्त्या मङ्गलेऽहनि सर्वदा ।
 ऋणरेखा प्रकर्त्तव्या भङ्गारेण तदयतः ॥
 तान्तु प्रमार्जयेत्पञ्चाङ्गमपादेन संस्पृशन् ।
 एकविंशतिनामानि पठित्वा तु दिनान्तके ॥
 रूपवान् धनवान् चैव जायते नात्र संशयः ।
 एककालं द्विकालं वा यः पठेत् सुसमाहितः ॥
 एवं कृते न सन्देहो ऋणं हत्वा सुखी भवेत् ।
 पूजितो देवदेवेशो मङ्गलो मङ्गलप्रदः ॥
 उल्लयित्वा समुत्पन्नो भौमो भौमस्तुर्भुजः ।
 भरद्वाजकुले जातः शक्तिशूलगदाधरः ॥
 वरदो मेघमारुहः स्कन्दप्रायस्तद्वित् प्रभः ।
 स्थोनापृथिवी मन्त्रेण दले याम्ये प्रतिष्ठितः ।
 प्रतिष्ठामन्त्रः ।

भूमिपुत्री महातेजाः कुमारी रत्नवस्त्रकः ।
 ज्वलद्द्वारसदृशो भौमः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥
 पूजामन्त्रः ।

प्रसोद देवदेवेश विघ्नहर्त्ता धनप्रद ।
 गृहाचार्यं मया दत्तं मम शान्तिं प्रयच्छ वै (१) ॥
 भूमिपुत्रीमहातेजाः स्वेदोद्भवः पिशाकिनः ।
 धनार्थी त्वां प्रपन्नोऽस्मि गृहाचार्यं नमोऽस्तुते ॥
 अर्घ्यमन्त्रः ।

गौतमेन पूरा पृष्टी साहिताहो महायज्ञः ।

(१) प्रदोभवदति वा पाठः ।

कथय त्वं महाभाग गुह्यं पूजार्चने विधिम्(१) ॥

गौतम उवाच ।

मन्त्रमाराधनं ब्रूहि सर्वं प्राणिभयापहं ।
 सर्वपाप प्रशमनं सर्वोपद्रवनाशनं ॥
 सर्वयज्ञफलं येन सर्वदानफलं लभेत् ।
 तपोजप्याभ्यनेकानां फलं येनैव लभ्यते ॥
 रूपञ्च सकलं येन वाहनायुषसंयुतं ।
 येन पूजितमात्रेण जायते सुखमुत्तमं(२) ॥
 धर्मार्थकाममोक्षाणां कालेनैवफलप्रदं(३) ।
 सर्वपापप्रशमनं सर्वव्याधिविनाशनं(४) ॥
 सर्वसौख्यप्रदानानां फलं येन च लभ्यते ।
 तद्वत् ब्रूहि मे देव लोहिताक्षो महाग्रहः ॥

भीम उवाच ॥

शृणु साधो महाभाग धर्मशारद गौतम ।
 व्रतं पूजा परं दानं यज्ञोप्यं भुवनत्रये ॥
 आसीत् पूर्वं सुनन्दिको ब्राह्मणो वेदपारगः ।
 तस्य भार्या सुनन्दीका वन्ध्या तु बहुलोभिनी ॥

(१) शुभमिति पाठान्तरं ।

(१) प्राप्यते परमं सुखमिति वा पाठः ।

(१) कालेनैवाभयप्रदमिति वा पाठः ।

(४) सर्वोपद्रवनाशनमिति वा पाठः ।

तस्यापत्यं न सञ्जातं वृद्धत्ववन्धभावतः ।
 तेनान्यस्य सुता जातु सुशीला रूपसंयुता ॥
 ब्राह्मणस्य कुले जाता गृहीत्वा पोषिता स्वयं ।
 सर्वलक्षणसंपूर्णा मङ्गलेन तु गीतमा ॥
 पूर्वजन्मनि तेनाहं पूजितश्चैव भावितः ।
 तां पुत्रींश्च गृहे तस्य ब्राह्मणी साक्षात्पाकयेत् ॥
 नित्यं प्रसूयते(१) स्वर्णं अष्टाङ्गात् कनकवृत्तिः ।
 तेन स्वर्णेनासौ विप्रो धनाढ्यो वेदपारगः ॥
 कोटि कोटीश्वरो विप्रो राजते भूमिमण्डले ।
 वर्षैः कतिपयैर्विप्र सा कन्या यौवनीत्तमा ॥
 दृष्ट्वा नन्दीकविप्रेण दशवर्षां मनःस्विनीं ।
 विवाहार्थं तु विप्रस्य दत्त्वा सीमेश्वरस्य च ॥
 वेदोक्तविधिना तत्र विवाहमकरोत्तदा(२) ।
 वर्षैः कतिपयैर्विप्रस्तां कन्यां प्रौढयौवनां ॥
 आदाय स्वशूरगृहाविर्गता शुभवासरे ।
 स्वदेशोपरिमार्गेण गच्छमानस्वहर्निशम् ॥
 वनान्ते गङ्गरे घोरेऽरण्ये पञ्चतममध्ये ।
 सुनन्दी च वने तस्मिन् मन्दलोभप्रभावतः ॥ ,
 सर्वसुन्ये वने तस्मिन् महालोभेन भावितः ।
 मार्गे चलति विप्रोऽसौ घाति तु विवृतिं स्वकं ॥
 तेनासौ घातितो विप्रघोररूपेण सादरात् ।

(१) पुष्टीयते इति वा पाठः ।

(२) शुभवासरे इति वा पाठः ।

पतिं मृतञ्च तं हा सा नारी भयपीडिता(१) ॥
 यावत् प्रक्षिप्य काष्ठानां मध्ये चैव कृताशनं ।
 पतिदेहमुपादाय चिक्षेप चितिमध्वतः ॥
 पतिना सह विप्रेण मरणे कृतनियया ।
 पतिर्ब्रह्मत्वं देवं ध्यायन्मौ च पदेपदे ॥
 पतिं प्रदक्षिणी कृत्वा चितायाञ्च समीपतः ।
 चित्वा यावत् प्रविशति तदाहमवदञ्च तां ॥
 तस्मिन् काशे च तुष्टोहं याचयस्व मनोरथं ।

ब्राह्मणी उवाच ।

यदि तुष्टोसि मे देव तदा जीवतु मे पतिः ।

भीम उवाच ।

अजरोप्यमरो बल्ले त्वङ्गर्तीयं भविष्यति ।
 अन्यथा च महासाध्वि चिरां त्रिभुवनक्षमं ॥

ब्राह्मणी उवाच ।

यदि तुष्टोसि देवेश यद्वाचामधिप प्रभो ।
 ये त्वां घटे समालिख्य रक्तचन्दनचर्चितं ।
 रक्तपुष्पैश्च संपूज्य प्रत्युषे भीमवासरे ॥
 वैधव्यस्तु क्षणं तेषां व्याधिराजमयं तथा ।
 सर्पाम्निश्वसम्बादं वियोगं स्वजनस्य च ॥
 माकुलस्य महीपुत्र यदि तुष्टोसि मे प्रभो ॥

श्रीभीम उवाच ।

एकं त्रिशति भीमाश्च मङ्गलाञ्च जितेन्द्रियाः ।

एकादशैः सीतानैश्च चतुर्दशैः कौटुम्भैः ॥
 अर्घ्यैस्तु रुक्मैर्नर्मदैर्वन्द्यैराणिकैर्द्वैः ।
 स्वयत्नवा भोजनं विप्रे दातव्यं सहिरण्यकं ॥
 युवानं रत्नमनङ्गाहं सर्वोपस्कारसंयुतं ।
 तेषां पीडा कदा कस्य ग्रहस्य न भविष्यति ॥
 भूतवेतासशक्तिभ्यः प्रभवन्ति न हिंसकाः ।
 एवमस्तु तदा तस्य इत्युक्तान्तरधीयते ॥
 व्रतमात्रे तु ये लोकाः पीडिता विपदं गताः ।
 यः पठति इमं व्रतं स प्राप्नोति विष्णुपुरं ॥
 तत्प्राप्नोति नरः सम्यक् गतिः स्याच्च प्रभावतः ।
 उद्यापनं प्रकर्तव्यं मङ्गतस्य समाप्तये ॥
 उद्यापनं विना विप्र फलं पूर्णं न जायते ।
 एकविंशतिभौमाश्च कर्त्तव्या एकभावतः ॥
 आपदो विलयं यान्ति सुखश्चैव प्रवर्धते ।
 यः शृणोति व्रतं विप्र मानवः संयतेन्द्रियः ॥
 तस्य मासकृतं पापं विलयं यान्ति वर्धते (१) ।
 सदा नियमसंयुक्तः प्रत्यूषेसु समास्थितः (२) ।
 यावज्जीवं व्रतं पुण्यं करोति भुवनत्रये ॥
 सुसमृद्धो भवेच्चिप्रः पुत्रपौत्रैस्तु वर्धते ।
 अन्ते चापि परं स्थानं यच्च सूर्यादयो ग्रहाः ॥

(१) तत्तत्तदिति पाठाकारं ।

(२) सुसमाहित इति पाठाकारं ।

एवमुक्त्वा तदा तत्र मङ्गलोऽपि दिवङ्गतः ॥
 इदं व्रतं त्वया ख्यातं सर्वसौख्यप्रदायकं ।
 इदं व्रतं करिष्यन्ति तेषां पीडा न जायते ॥
 स्त्रीभिर्व्रतं प्रकर्त्तव्यं पुरुषैश्च विशेषतः ।
 तेषां मुक्तिर्नसन्देहः स्वर्गवासो न संशयः ॥

इति पद्मपुराणे भौमव्रतं ।

कनकमयशरीरस्तेजसादुर्निरीक्ष्यो
 चतुर्वहसमकान्तिर्भालवे लब्धजन्मा ।
 अवनितनय एष स्तूयते भारतेयो
 ददतु मम विभूतिं मङ्गलः सुप्रसन्नः ॥

गौतम उवाच(१) ।

उद्यापनविधिं तस्य सम्यग्ब्रूहि प्रसादतः ।
 येन ज्ञातेन जगत उपकारो महान् भवेत् ॥

मङ्गल उवाच ।

विज्ञे(२)योमण्डपं स्वस्मिंस्त्वष्टहस्तं प्रमाणतः ।
 स्थण्डिलं मध्यतः कार्यं हस्तैकस्य प्रमाणतः ॥
 मण्डलान्तु प्रकर्त्तव्यं मामकं रक्तशालिनं ।
 पूर्वोक्तानि च नामानि मण्डले पूजयेत्ततः ॥

(१) मङ्गल उवाच इति पाठान्तरं ।

(२) विधि इति पाठान्तरं ।

मण्डलान्तु प्रकर्त्तव्यं पञ्चैविंशतिभिर्युतं(१) ॥
 हारोपहारसहितं वीक्षिकाकरकैर्युतं ।
 पूजा तत्र प्रकर्त्तव्या रत्नचन्दनपूर्विका ॥
 जवापुष्पे स्तु पूज्यानि मम नामानि पूर्वतः ।
 सप्तकषा धूपदानञ्च नैवेद्यं पीलिकः स्मृतां ॥
 पूजाफलैर्नैवेद्याद्यं दातव्या नारिकेलयुक् ।
 जवापुष्पेण दातव्यो(२) व्रतोद्यापनसिद्धये ।
 कुम्भे मे प्रतिमां स्थाप्य सौवर्णीञ्च स्वशक्तितः ॥
 रत्नवस्त्रेण संस्त्राप्य पूजां पूर्वीक्तमन्त्रतः ।
 अष्टोत्तरशतं होमं पूजान्ते कारयेद्बुधः ॥
 जवायाः कुसुमानान्तु छतस्य तु यथाविधि ।
 तिलाक्षतानामाचार्यऋत्विग्भिर्वेदपारणैः ॥
 अग्निर्मूर्द्धातमन्त्रेण रत्नशालेयकस्तथा ।
 शान्तिकान्तु प्रकर्त्तव्यं यथोक्तेन(३) विधानतः ॥
 पद्ममध्ये कर्णिकायां मम सूक्तमन्त्रितः ।
 पूजयेद्ययमानस्तु शेषनामानि पूर्वतः ॥
 मङ्गलाय नमः पादौ भूमिपुत्राय जानुनी ॥
 ऋणहर्त्तृर्नमस्तूक कटिं धनप्रदाय च ।
 स्थिरासनाय गुह्ये तु महाकायय चौरसि ।
 सर्वकामप्रदात्रे तु वामबाहुं प्रपूजयेत् ॥

(१) पादकैरिति पाठाकारः ।

(१) पूर्वमन्त्रे च दातव्य इति पाठाकारः ।

(२) स्वशाखोक्त इति वा पाठः ।

लोहिताय दक्षवाहो लोहिताशाय कण्ठतः ।
 आस्ये संपूजयेन्नाञ्च सामगानां क्षपाकरं ॥
 धरात्मजं नासिकायां कूजञ्च नयनद्वये ।
 भीमं ललाटपटे च भूमिजाय नमो भ्रुवौ ॥
 मूर्ध्नि संपूजयेन्नाञ्च भूमिनन्दननामतः ।
 अङ्गारकं शिखायान्तु यमङ्गवचदेशतः ॥
 सर्वरोगापहारञ्च अस्त्रे संपूजयेत्कदा ।
 आकाशे सृष्टिकर्तारं प्रहृत्तोरमधस्तथा ॥
 सर्वाङ्गेषु प्रपूज्योक्तिं सर्वकामफलप्रदः ।
 एवं पञ्चोपचारेण पूजान्ते व्रतकारिणा ॥
 अष्टिद्रं याचनीयन्तु भक्तियुक्तेन चेतसा ।
 आचार्यं नृत्विजो ब्रूयुः संपूर्णं व्रतमस्त्विति ॥
 ब्रूयान्ते पूजयेद्दिपं गुहं पद्मीसमन्वितं ।
 रत्नवस्त्रं परोधाप्य पदं दद्याद्यद्योदितं ॥
 शय्यां सोपस्कराश्चैव भोजनं विविधं तथा ।
 भक्त्या दद्यादनङ्गाहं (१) व्रतान्ते मम तुष्टये ॥
 नृत्विजोऽपि तदा पूज्या मत्प्रीत्यर्थं स्वशक्तितः ।
 भोजनाच्छादनाद्यैश्च संस्कारैर्विविधैर्गिरा ॥
 इत्थमुद्यापनं ये तु कुर्वन्ति व्रतकारकाः ।
 तेषां पीडा कदा कस्य गृहस्य न भविष्यति ॥
 भूतवेतालशाकिन्यः प्रभवन्ति न हिंसकाः ।
 न ऋणश्च भवेत्तेषां धनं तेषां भवेद्भवं ॥

येषां सन्तानवाञ्छा स्यात् ते लभन्ते बहून् सुतान् ।
 इत्युक्त्वा गौतमस्याग्रे दिवं प्राप्नो महाग्रहः ॥
 व्रतमात्रे तु ये लोकाः पीडिता विपदाङ्गणेः (१) ।
 आपदो विलयं यान्ति सुखञ्चैव प्रवर्तेते (२) ॥
 यः स्तुवीति व्रतं भक्त्या मानवस्तु जितेन्द्रियः ।
 तस्य मासकृतं पापं विलयं याति तत्क्षणात् ॥
 सदा तु नियमारूढः प्रत्येषु सुसमाहितः ।
 यावज्जीवं व्रतं पुण्यं करोति भुवनत्रये ॥
 सुसमृद्धो भवेद्दिप्रः पुत्रपौत्रैः स वर्द्धते ।
 अस्ते याति परं स्थानं यत्र सूर्यादयो यहाः ॥
 अवाप्नोति नरः सम्यग् (३) व्रतस्यास्य प्रभावतः ।
 यावज्जीवं न शक्नोति व्रतं कर्तुं नरो यदि ॥
 उद्यापनं विधायैव मोक्षव्यं व्रतमुत्तमं ।
 उद्यापनन्तु शास्त्रोक्तं कर्त्तव्यं सुसमाहितैः ॥
 अशक्तो ब्राह्मणानुज्ञां गृहीत्वा तु विमर्जयेत् ।
 अन्यथा कुरुते यस्तु कुठ्ठीचान्ध (४) प्रजायते ॥
 तस्मात्सर्वप्रयत्नेन ब्राह्मणानुज्ञया व्रतं ।
 कर्त्तव्यन्तु सुसंपूर्णमुद्यापनममन्वितं ॥

(१) विपदागमे इति पाठाक्षर ।

(२) सर्वसंशयात् तत्क्षणादिति पाठाक्षर ।

(३) कृतस्य मतत सम्यगिति पुस्तकाक्षरे पाठः ।

(४) कुठ्ठी वन्धय जायते इति पाठाक्षर ।

धरामराणां वचनैरवस्थिता(१)
 दिवौकसस्तोर्मखेः समेताः(२) ।
 न लङ्घयेत्तापि वर्चोमतेषां
 त्रयोऽभिकामी पुरुषो विजानन् ॥
 इति पद्मपुराणोक्तं मङ्गलव्रतोदयापनं ।

अथ बुधव्रतं ।

कृष्ण उवाच ।

विशाखास बुधं प्राप्य सप्त नक्षत्रानि चाचरेत् ।
 बुधं हेममयं कृत्वा स्थापितं कांस्यभाजने ॥
 शुकुमान्याम्वरधरं शुकुगन्धानुलेपनं(३) ।
 गुडोदनोपहारन्तु ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥
 बुधस्त्वं बुद्धिजननी बोधदः सर्वदा नृणां ।
 तत्त्वावबोधं कुरुते राजपुत्राय ते नमः ॥

इति भविष्योत्तरे बुधव्रतं ।

(१) वचनैर्लवस्थिता इति पृथक्पाठः पाठः ।

(२) व्रतैः समेता इति पाठोऽस्ति ।

(३) शुकुवस्त्रयुगम्भस शुकुमान्यानुलेपनमिति पाठोऽस्ति ।

अथ गुरुव्रतं ।

—०—

अनुराधास्वयाचार्यं देवानां पूज्य भक्तितः ।
 पूर्वोक्तक्रमयोगेन सप्त नक्तान्यथाचरेत् ॥
 हेमं हेममये पात्रे स्थापयेत्तु हस्मति ।
 पीताम्बरयुगच्छत्रं पीतयज्ञोपवीतकं ॥
 पादुकाच्छत्रमद्वितं सदगदं सकमण्डलं ।
 संपूजा पुष्पनिकरैर्धूपदीपाक्षतादिभिः ।
 खण्डखाद्योपहारश्च द्विजाय प्रतिपादयेत् ॥
 धर्मशास्त्रार्थशास्त्रज्ञं ज्ञानविज्ञानपारगं ।
 प्रलब्धबुद्धिगाम्भीर्यं देवाचार्यं नमाऽस्तु ते ॥
 इति भविष्योत्तरोक्तं गुरुव्रतं ।

अथ शुक्रव्रतं ।

—०—

शुक्रं ज्येष्ठाम् संप्राप्य (१) पूजयेन्नक्तभोजनः ।
 पूर्वोक्तक्रमयोगेन द्विजमन्त्रपूजनेन तु ॥
 सप्तमं ज्येष्ठं संप्राप्ते मौनं कार्यं भूमि (२) ।
 रोषे वा कांस्यपात्रे वा स्थापयित्वा भृगोः सुतं ॥
 संपूज्य परया भक्त्या श्वेतवस्तानुलेपनः ।
 अग्रे तस्य प्रदातव्यं पाशमं द्रुतमयुतं ॥

(१) शुक्रं ज्येष्ठाम् संप्राप्य ज्येष्ठव्रतं भोजनं इति पुष्पकाम्बर पाठः ।

(२) कार्यं भूमि भूमि पाठः ।

दद्यादनेन मन्त्रेण ब्राह्मणाय विचक्षणः ।
 भार्गवो भृगुशिष्यो वा शुक्रः क्रमविशारदः ॥
 ज्ञत्वा यद्वक्तव्यं दोषान् आयुरारोग्यदी भव ॥
 इति भविष्योत्तरोक्तं शुक्रव्रतं ।

—०००—

विषमस्थे भृगुसुते महाशान्तिकरं व्रतं ।
 कर्त्तव्यं मनुजैर्ब्रह्महत्यापातकनाशनं ॥
 होतव्यं मधुसर्पिर्भ्यां दध्ना क्षीरैर्घृतेन च ।
 इति भविष्योत्तरोक्ता महाशान्तिः ।

—

अथ शनिव्रतं ।

—००—

भविष्य पुराणात् ।

श्रीकृष्ण उवाच ।

कदाचिदाश्रमपदं पिप्पलादस्य नारदः ।
 जगाम कामचारिणं पर्यटनवनोत्तलं ॥
 तमातिथेयः त्रयोऽर्थी पिप्पलादोऽथ नारदं ।
 विहितायां सपर्यायां योगज्ञानमथाब्रवीत् (१) ॥
 मुने वने चिरं कालमालम्ब्य स्थितवानहं ।
 अश्वत्थवृक्षमक्षीणच्छायमायतसत्फलं ॥

(१) पर्यायागतमब्रवीदिति पाठाकरः ।

क्व गती मां निधायेह मदीयो पितरौ मुने ।
 तं प्राह नारदः पूर्वं सर्वलोकाग्निः शनिः(१) ॥
 पीडयामास वसुधां सर्वेषामसुधारिणां(२) ।
 रोगांशकार देहेषु गेहेषु धनसंचयं ॥
 तदा पुण्यान्यरण्यानि परिभ्रम्य फलादिकं ।
 आदाय कायपोषाय सायमायाति ते पिता ॥
 क्लीवभावं पुरस्कृत्य शनेर्दुर्भिक्षाशितं ।
 त्वां विहाय सचापत्सु गतयेतस्ततः क्वचित् ॥
 एवमुक्तः शिशुक्रोधात् प्रज्वलन्निव पावकः ।
 आलोक्य गगनाद्भूमौ पातयामास वै शनिं ॥
 यतमानो गिरेः शृङ्गे लग्नः खञ्जो बभूव ह ।
 धरण्यां पतितं दृष्ट्वा भास्करात्मजमातुरं ॥
 ननर्त्त भृजमुत्क्षिप्य नारदो हृष्टमानसः ।
 हर्षाद्देवानग्राह्य दर्शयामास तं शनिं ॥
 अथ देवास्तदा प्राप्ता ब्रह्मरुद्रेन्द्रपावकाः ।
 गनिते सान्त्वयामासुः क्रोधमुग्धं मुनिञ्च तं ॥
 स्वस्ति तेऽस्तु, महाभाग पिप्पलाद महामुने ।
 भद्रन्तेऽत्र कृतं नाम नारदेन महर्षिणा ॥
 अन्वर्थयुक्तं तिप्रेन्द्र जीवितं पिप्पलादनात् ।

(१) सर्वलोकानल शनिरिति पाठान्तरं ।

(२) क्रीडया पीडयामास वसुधामसुधारिणामिति पाठान्तरं ।

अतस्त्वं पिप्पलादेति लोके ख्यातिं गमिष्यसि ॥
 ये च त्वां पूजयिष्यन्ति स्नात्वा पुष्पाक्षतादिभिः ।
 गृहाग्रमपदे रम्ये क्षिपेयुर्भक्तिभाविताः ॥
 सप्तजन्मान्तरं यावत् पुत्रपौत्रानुगामिनी ।
 तेषां लक्ष्मीर्न दूरस्था भविष्यति कदाचन ॥
 स्मरिष्यन्ति च येऽपि त्वां पिप्पलादेति नामतः ।
 तेषां शनैश्चरकृता न पीडापि भविष्यति ॥
 क्षमस्वाम्य महाभाग निर्दोषोऽयं ग्रहाग्रणीः ।
 चरन् वृक्ष(१) शनैरेष शुभाशुभफलप्रदः ॥
 हठमाध्या ग्रहाग्र्यते न भवन्ति कदाचन ।
 बलिहोमनमस्कारैः शान्ति यच्छन्ति प्रजिताः ॥
 अतोऽथेमस्य दिवसे स्नानमभ्यङ्गपूर्वकं ।
 कार्यं देयञ्च विप्राय तैलमभ्यङ्गहेतवे ॥
 यस्तु संवत्सरं यावत् प्राप्ते शनिदिने नरः(२) ।
 तैलं ददाति विप्राणां स्वशक्त्यान्यजनस्य तु ॥
 ततः संवत्सरस्यान्ते प्राप्ते तस्य दिने पुनः ।
 लोहघटार्पितं सौरि तैलकुम्भे विनिक्षिपेत् ॥
 लौहे वा मृण्मये वापि कृण्वस्तयुगान्वितं ॥

(१) चरन भक्तप्रति पाठाक्षर ।

(२) प्रतिदिन नर इति पुस्तकान्तर पाठः ।

शनिरूपन्तु भक्त्यपराणात् ।

इन्द्रनीलद्युतिः शूलो वरदो वृषवाहन (१) ।
 वाणवाणामनधरः किरीटार्कमतः सदा ॥
 कृष्णगोदक्षिणायुक्तं कृष्णकम्बलगायिनं ।
 अभ्यङ्गेन स्वयं स्नात्वा कृष्णपुष्पैश्च पूजयेत् ॥
 धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैः (२) कृष्णरात्रेऽस्ति लोदनेः (३) ।
 पूजयित्वा सूर्यपुत्रं क्षमस्वेति पुनः पुनः ॥
 कृष्णाय द्विजमुख्याय तदभावेतराय च (४) ।
 देवः शनैश्चरो भक्त्या मन्त्रेणानेन वै द्विज ॥
 शक्तीदेवीति विष्णोणामितरेषां शृणुष्व यः (५) ।
 कृष्णवलोकनवशाद्भुवनं नागमति यो यच्छी कष्टः ।
 तृष्टो धनयानकसुखं ददाति सोऽस्मान् शनैश्चरः पातु ॥
 यः पुरां नष्टराज्याय नलाय परितोषितः (६) ।
 स्वप्ने ददौ निजं (७) राज्यं स मे भौरिः प्रसीदतु ॥
 कीणं नीलाञ्जनपण्यं मन्दचेष्टाप्रसारिणं ।
 छायाभार्तगण्डमम्भूतं नमस्यामि शनैश्चरं ॥

-
- (१) गृध्रवाहन इति पुस्तकालये पाठः ।
 (२) सुगन्धगन्धपुष्पैश्च इति पाठालये ।
 (३) सरत्वं स्तिलमोदकमिति पाठालये ।
 (४) तं गदया च कम्बलमिति पाठालये ।
 (५) इतिरेषा च वणानां शृणु मन्त्रे दिओक्तम इति पुस्तकालये पाठः ।
 (६) नलाय पददौ किल इति पुस्तकालये पाठः ।
 (७) स्वप्ने मन्त्रे निजमिति पुस्तकालये पाठः ।

नमोऽर्कपुत्राय शनैश्चराय
नीहारवर्णाञ्जनमेचकाय ।
श्रुत्वा रहस्यं तव कामदस्त्वं
फलप्रदो मे भव सूर्यपुत्र ॥

नमोऽस्तु, प्रेतराजाय कृष्णदेहाय वै नमः(१) ।
शनैश्चराय क्लूराय शुद्धबुद्धिप्रदायिने ॥
य एभिर्नामभिस्तौति तस्य तुष्टो ददात्यसौ ।
तदोयन्तु भयं तस्य स्वप्नेऽपि न भविष्यति ॥
इत्यनेन विधानेन गतिं दत्वा विसर्जयेत् ।
एतद्व्रतन्तु ये विप्र चरिष्यन्तीह मानवाः ॥
शनैस्तु त्रामरे प्राप्ते वत्सर यावदेव तु ।
तेषां शनैश्चरो पीडा देगेऽपि न भविष्यति ॥

भवियोत्तरात् । कृष्ण उवाच ।

परा त्रेतायुगे पार्थ नावर्षत्याकशासनः ।
कथञ्चिद्दुर्णयाद्राजस्तस्य राष्ट्रे समन्ततः ॥
ततोऽराद्रं क्षुधाविष्टं बभूवातीव दारुणं ।
पतङ्गमृषकाकीर्णं चौरव्यालभयाकुल ॥
तस्मिन् घाराकुले काले सपत्न्योक्तः सञ्जालकः ।
कोशिकः छरुतं त्यक्त्वा परराष्ट्रमगाच्छनैः ॥
मार्गं च गच्छता तेन येन केन महर्षिणा ।
त्यक्तः स बानकस्त्वेको दुर्भरं हि कुटुम्बिकं ॥
तस्मिन् काले विशेषेण क्षीणे क्षीयधिमन्त्रये ।

(१) कृष्णदेहाय वै नम इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

कृत्वा तन्निर्घृणं कर्म ततोऽसौ कौशिको गतः ॥
 सोऽपि बालः क्षुधादीनो दिशो वोच्य दृग्मा अपि ।
 उत्थाय पिप्पलस्याधीमूलान्यक्षुं प्रचक्रमे ॥
 कूपे जलं पयो नित्यं तत्रैवाश्रममण्डले ।
 कृत्वा समाश्रितो रोद्रं तेषु च शिपुलं तपः ॥
 अथाजगाम भगवान्नारदो वेदपारगः ।
 तं दृष्ट्वा दीनवदनं क्षुधाक्तं द्विजपोतकं ॥
 तदासौ तस्य संस्कारं चक्रे मीमांसादिवन्धनं ।
 वेदानध्यापयामास सरहस्यपदक्रमात् ।
 ददौ च वैष्णवं मन्त्रं द्वादशाक्षरमाच्युतं ॥
 वेदाभ्यासरतस्यास्य विष्णुध्यानपरस्य च ।
 प्रत्यहं पिप्पलादस्य विष्णुः प्रत्यक्षतां ययौ ॥
 वेनतेयममारुहः नालीत्यवदलच्छविः ।
 चतुर्भुजः पोतवामाः शङ्खचक्रगदाधरः ॥
 स उवाच तदा तृतीयं वरं ब्रूहि यमिच्छसि ॥
 तच्छ्रुत्वा नारदमुखं समालोक्य गिणुस्तदा ।
 नारदेनाप्यनुज्ञातो योगविद्यामगप च ॥
 दत्त्वा ज्ञानं सापदेशं योगाभ्यासञ्च निर्मलं ।
 नागारिगमनो विष्णुस्तत्रैवान्तरधोयत ॥
 ततोऽभवन्महाज्ञानी महर्षिः स गिणुस्तदा ।
 नारदं परिपश्यन् केनाहं पीडितो मुने ॥
 ग्रहेण ग्रहरूपेण बानरूपोऽतिदुःखितः ॥
 न मे पिता न मे भ्राता जीवितोऽस्म्यस्य पीडया ॥

ब्राह्मण्यं भवता इत्तं मम देवादिजीवितम् ।
 एतच्छ्रुत्वा ततो वाक्यं कथयामास नारदः ॥
 शनैश्चरेण क्रूरेण ग्रहेण त्वं हि पीडितः ।
 पीडितश्च समस्तोऽपि देशोऽयं मन्दचारिणः ।
 तथैव च फलं प्राप्त एष सौरिः शनैश्चरः ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

एवमुक्त्वा सुराः सर्वे प्रतिजग्मुर्ग्रथागतं ।
 शनैश्चरोऽपि स्वे स्थाने ग्रहत्वेण प्रतिष्ठितः ॥
 पिप्पलादोऽपि ब्रह्मर्षिर्ब्रह्माज्ञां प्रतिपालयन् ।
 शनैश्चरन्तु संपूज्य तुष्टाव रचिताञ्जलिः ॥
 कोणस्थः पिङ्गलो वक्रः कृष्णो रौद्रोऽन्तर्कोपमः ।
 सौरिः शनैश्चरो मन्दः प्रोयतां मे ग्रहोत्तमः ॥
 शनैश्चरमिति स्तुत्वा पिप्पलादो महामुनिः ।
 रवेर्ज्वलन् विमानस्थो दृश्यतेऽद्यापि मानवैः ॥
 इदं शनैश्चराख्यानं ये पठिष्यन्ति मानवाः (१) ।
 तेषां कुरुकुलश्रेष्ठ पुनः पीडा न बाधते ॥

कृष्णायमेन घटितां ग्रहराजमूर्तिं
 लीहे निधाय कलशे तिलतैलपर्णम् ।
 यो ब्राह्मणाय रविजं प्रददाति भक्त्या
 पीडा शनैश्चरलता न हि बाधते तं ॥

(१) ये षोडशसमाहिताः इति पृथक्काण्डे पाठः ।

इति भविष्योत्तरे शनैश्चरव्रतं ।

—०००००—

श्रीकृष्ण उवाच ।

अघातः संप्रवक्ष्यामि रहस्यं ह्येतदुत्तमं ।
 येन लक्ष्मीर्धृतिस्तुष्टिः पुष्टिः कान्तिश्च जायते ॥
 मूलेन सूर्यतनयं गृहीत्वा भरतर्षभ ।
 तस्मिन्दिने पूजनीयं प्रहृतितयमादरात् ॥
 शनैश्चरश्च राहुश्च केतुश्चेति क्रमानुरूप ।
 होमं हृततिलैः कुर्याद्ब्रह्मनाम्ना च मन्त्रवित् ॥
 पृथगष्टोत्तरशतमष्टाविंशतिरेव वा ।
 हातव्या मधुसर्पिर्भ्यां दध्ना चैव हृतेन तु ।
 यथाक्रमं शमीदूर्वाकुशाश्च समिधस्तु ताः ॥
 सप्तमे चैव संप्राप्ते नक्तं सूर्यस्तस्य च ।
 महास्तयोऽपि कर्त्तव्या राजन् लोहमयाः शुभाः ॥
 लोहपात्रे स्थिताः सर्वे सोवर्णे वा कुरुद्वह ।
 कृष्णवस्त्रयुगं दद्यादेकैकस्य क्रमानुरूप ॥
 अत्र शनिरूपं निरन्तरव्रतोक्तं वेदितव्यं ।

राहुकेतोश्च, मन्त्रपुराणात् ।

करालवदनः खड्गचर्चशूलो वरप्रदः ।
 नीलसिंहासनयुतो राहुरल प्रशस्यते ॥
 धूम्रा द्विबाहुवः सर्व्वे गदिनो विक्रताननाः ।
 गृध्रासनगता नित्यं केतवस्यूर्ध्वरप्रदाः ॥
 मृगनाभ्या समालेप्य धूपं कृष्णागुरुस्तथा ।

दत्त्वा नैवेद्यकं सारं ब्राह्मणाद्योपपादयेत् ॥
 शनैश्चर नमस्तुभ्यं नमस्ते राहुवे तथा ।
 केतवेऽथ नमस्तुभ्यं सर्वशान्तिप्रदो भव ॥
 एवं कृते भवेद्यत्तु तन्निबोध द्विजोत्तम ॥
 यदि भीमो रविशुतो भास्करो राहुणा सह ।
 केतवो मूर्ध्नि तिष्ठन्ति सर्वे पीडाकारा ग्रहाः ॥
 अनेन कृतमात्रेण सर्वे शान्त्यन्युपद्रवाः ॥
 य एवं कुरुते राजन् सदा भक्तिसमन्वितः ।
 तस्य सानुग्रहाः सर्वे यच्छन्ति विजयं सुखं ॥
 य एतां शृणुयाच्छान्तिं ग्रहाणां पठतेऽपि वा ।
 तस्य सानुग्रहाः सर्वे शान्तिं यच्छन्ति भूपते ॥
 सूर्यं विधुं कुजबुधौ गुरुशुक्रसौरीन्
 हस्तादिष्टचसहितानुदितक्रमेण ।

संपूज्य हेमघटितान् द्विजपुङ्गवाय
 दत्त्वा पुमान् ग्रहगणेन न पीडयतेऽत्र ॥
 शनैश्चरं राहुकेतून् लौहपात्रे व्यवस्थितान् ।
 कृष्णागुरुः स्मृतो धूपो दक्षिणा चात्मशक्तिः ॥
 इति भविष्योत्तरोक्ता शनैश्चरादिशान्तिः (१) ।

—०००(१०००)—

नक्षत्रतिथियोगेन तिथीनां ग्रहयोगतः ।
 पुनरेव प्रवक्ष्यामि व्रतानि तु यथा स्थितं ॥
 रोहिण्याश्चाष्टमीयोगे यदा भवति मौम्यके ।

विशेषपूजा कक्षव्या पुष्पकामेन यत्नतः ॥
 पुष्ये शुक्लचतुर्दश्यां गुरुयोगो यदा भवेत् ।
 अथवा सोमसंयोगो विशेषात् पूज्य शङ्करम् ॥
 पायसं घृतसंयुक्तं शिवाय विनिवेदयेत् ।
 धूपदीपोपहाराद्यैः पूर्व्ववत् पूजयेच्छिवं ॥
 प्राशनन्तु घृतं कार्यं सर्व्वकामप्रदं व्रतम् ॥
 आदित्यरेवतीयोगश्चतुर्दश्यां यदा भवेत् ।
 अष्टम्यां वा मघायोगो शिवं संपूज्य पूर्व्ववत् ॥
 तिलास्तु प्राशने शस्ता आदित्यव्रतमीरितं ।
 आरोग्यं जायते तस्य पुत्रवशुगणैः सह ॥
 रोहिणीचन्द्रयोगश्च चतुर्दश्यां यदा भवेत् ।
 अष्टम्यां सोमसंयोगात्तदा चन्द्रव्रतं चरेत् ॥
 प्रागुक्तेन विधानेन शिवं संपूज्य यत्नतः ।
 दधि क्षीरन्तु नैवेद्यं प्राशनं क्षीरमेव च ।
 कीर्त्तिमारोग्यमैश्वर्य्यं प्राप्नुयात्प्रानृतं वचः ॥
 अश्विनीभौमसंयोगश्चतुर्दश्यां यदा भवेत् ।
 अष्टम्यां भरणीयोगस्तदा भौमव्रतं चरेत् ॥
 संपूज्य परया भक्त्या शिवं पञ्चापचारतः ।
 रक्तोत्पलप्राशनन्तु साम्राज्यं प्राप्नुयाच्छुभं ॥
 रोहिणीबुधसंयोगश्चतुर्दश्यां यदा भवेत् ।
 अष्टम्यां वा समासेन बुधव्रतं मया चरेत् ॥
 शिवः पूज्यो विधानेन महास्नानपुरःसरं ।
 महावर्त्तिसमीपेति प्राशनं पायसकृतम् ॥

पुत्रार्थदाराश्च यशो वर्धते तस्य नाम्बधा ॥
 रेवतीगुरुसंयोगस्तुर्द्दृशां यदा भवेत् ।
 अष्टम्यां तिष्यसंयोगाद्गुरुव्रतं तदा चरेत् ॥
 प्राशनं कपिलाज्यन्तु ब्राह्मीरससमन्वितं ।
 वागीशत्वमवाप्नोति व्रतस्यास्य प्रभावतः ॥
 अरण्यं भार्गवयुतं चतुर्द्दृशां यदा भवेत् ।
 शुक्रव्रतं तदा विधिं पुनर्व्यस्वष्टमी यदा ॥
 संपूज्य परमेशानं यथाविभवविस्तरेः ।
 प्राशनं मधु चैवात्र कर्त्तव्यं संयतात्मना ।
 महाफलमवाप्नोति व्रतस्यास्य प्रभावतः ॥
 भरणीशनियोगस्तु चतुर्द्दृशां यदा भवेत् ।
 आर्द्रायोगस्तथाष्टम्यां तदा शनिव्रतं चरेत् ॥
 शिवं संपूज्य विधिवत् प्राशनं मस्यमेव च ।
 शनिरेकादशस्थो हि फलं यच्छति शोभनं ॥
 विरुद्धं शोभते वत्स तदर्थं व्रतमाचरेत् ।
 हेमकुप्यप्रवालश्च कम्बलन्तु क्रमेण च ॥
 शङ्खश्च तीक्ष्णलीहश्च क्रमादुयत्नेन दापयेत् ।
 यथा सम्भवते वत्स आचार्याय प्रयत्नतः ॥
 इति कालोत्तरोक्ताणि तिथिनक्षत्रवारव्रतानि ।

— ००० —

इन्द्र उवाच ।

स्वल्पेनैव तु द्रव्येण महापुण्यं यथा भवेत् ।
 तदहं श्रोतुमिच्छामि प्रहयागं सुरेश्वर ॥

ब्रह्मोवाच ।

शृणु वत्स प्रवक्ष्यामि यथा त्वं परिपृच्छसि ।
 अल्पकेशाश्महापुण्यं ग्रहर्क्षतिथियौगिकं ॥
 भृगुपौष्पाष्टमीयोगं शिवयोगेषु चोत्तमं ।
 मृदुवर्गवसौ भाग्यं भद्रया भृगुवासरे ॥
 दैवयोगाद्यदा षष्ठी पुष्यर्क्षरविवासरे ।
 स्कन्दयागस्तदा कार्यः सर्वकामप्रसाधकः ॥
 वारे चैव यदा सूर्य सप्तमी विजया मता ।
 तदा तु शोभनी योगो भवेत् सर्वगुणावहः ॥
 शशिरिक्तासु संयोग आर्द्राक्ष्य सुरेश्वर ॥
 नवम्यां मङ्गलो योगो भानुभूतदिनं यदा ।
 षष्ठ्यां चाथ चन्द्रो हि अवणेन सुखावहः ॥
 अहिब्रमे कुजाहे तु गणनाथस्य चाहनि ॥
 पुनर्वसौ गुरोर्वारी ह्यादृश्यां अवणेन च ।
 सोमशुक्लं तदा यागं विष्णोः सर्वार्थमाधकं ॥
 द्वितीयायां यदा मौम्ये कृत्तिकर्क्षं भवेत् क्वचित् ।
 ग्रहयागस्तदा कार्यः सर्वशान्तिप्रदायकः ॥
 स्वात्यां शनिचतुर्थी च उमायागे वरा स्मृता ॥'
 उत्तरासु च पूर्व्यासु भानुपूर्णाष्टमीषु च ।
 ग्रहशान्त्यादिकं कृत्वा सर्वान कामानवाप्नुयात् ।
 गुरोरेकादशीपुष्ये रोहिण्यां वा शनैश्चरे ।
 सुतसौभाग्यकामाय यागो रौद्रविनायकः ॥
 पूर्णिमासु च सर्व्यासु षष्ठमीद्वादशीषु च ।

चतुर्दश्यां तृतीयासु ग्रहर्षेषु शुभेषु च ।
 सर्वेषां सम्भवेद्यागो भक्तिपूर्वी महामुने ॥
 मन्त्रसाधननिष्ठायू कृद्रयागादवाप्यते ॥
 श्रीमेषाज्ज्ञानमायुष्यममायागान्महामुने ।
 योगज्ञानं यशः सिद्धिं महादेवादवाप्नुयात् ॥
 आरोग्यं सुव्रतीयत्वं भास्करात् प्राप्यते ध्रुवं ।
 गतिमिष्टां यथाकामं प्रयच्छति त्रिविक्रमः ॥
 विज्ञानं सम्भवेत्तस्य यस्तु पश्येद्विनायकं ॥
 विगतारिर्भवेत् षष्ठ्यां दृष्ट्वा स्कन्दन्तु तत्क्षणात् ।
 मातृयागान्महामिद्विः सर्वेषामपि जायते ।
 भवेत्स धनवान् पुंसां प्रथमाहे हुताशनात् ॥
 स्वर्गापवर्गमसिद्धिर्द्गर्गायागात् प्रजायते ।
 मायाद्यैर्मङ्गलाद्यैश्च ज्येष्ठयायां ब्रह्मवित्तमैः ॥
 ईशादयैः कालिकाद्यास्तु यष्टव्या विधिना मुनेः ॥
 इत्याद्ये देवीपुराणे ग्रहतिथार्क्षयागमाहात्म्यकौत्सनम् ।

इति श्रीमहाराजाधिराजश्रीमहादेवस्य समस्तकरणाधीश्वर-

सकलविद्याविगारदश्रोहेमाद्रिविरचिते-

चतुर्वर्गचिन्तामणौ व्रतखण्डे

वारव्रतानि ।

अथ त्रयोविंशोऽध्यायः ।



अथ नक्षत्रतानि ।

मनीषी हेमाद्रिर्नयविनयसम्पत्तिभवनं
द्विजम्भा सन्मार्गप्रथितपदसञ्चारचतुरः ।
त्रिलोकोलोकानामविकलफलश्रेणिरचना
विचित्रं नक्षत्रव्रतगणमिदानीं वितनुते ॥

पुष्कर उवाच ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि काम्यं कर्म तवानघ ।
उपोषितौ सदा पुंणि यजमानपुरोहितौ ।
अश्विन्युक्ते शुभे स्नानं कुर्यातां तन्निबोधत ॥
अकीलेभूमौ हो कुम्भी मधूककुसुमान्वितौ ।
अश्वगन्धयुतौ कृत्वा स्थाप्यावथ सदा समौ ॥
ततः संपूजयेद्दिहाक्षामत्यौ शशिनस्तथा ।
अग्निनीं वरुणश्चैव शुचिवासास्तथा हरिं(१) ।
गन्धमाख्यनमस्कारैर्दीपधूपाद्यसम्पदा ॥
ततोऽश्वमिथुनं कार्यं सर्व्वीषधियुतं सृदा ।
प्रणतेन ततो मृष्टं नासत्याभ्यां निवेदयेत् ॥
धूपमष्टाङ्गकं दद्याद्देवानाम्नु द्विजोत्तम ॥
अश्वलीम तथाश्वात्थफलमूले च वा सदा ।

(१) शुक्रवामनाक्षरार्चामिति पाठान्तरं ।

एकत्र निभृतं कृत्वा मणिर्हार्थस्तु शोभनः ॥
 असं दधत्वाश्विनमेतदेव
 स्नानं प्रकुर्वन् प्रयतो मनुष्यः ।
 अश्वानवाप्नोति निरस्तसङ्गान्
 कुलीङ्गवान् वीर्यबलोपपन्नान् ॥
 इति विष्णुधर्मोत्तरोक्त'(१) अश्विनीस्नानं ।

—०००—

ब्रह्मोवाच ।

इत्येते कथिताः कृष्ण तिथियोगा मया तव ।
 नक्षत्रदेवताः सर्वाः नक्षत्रेषु व्यवस्थिताः ॥
 इष्टान् कामान् प्रयच्छन्ति यथास्थानं सुरेश्वर ।
 चन्द्रमा यत्र नक्षत्रे यदा समधितिष्ठति ।
 उक्तस्तु देवयज्ञस्तु तदा स सफलो भवेत् ॥
 देवताश्च प्रवक्ष्यामि नक्षत्राणां यथातथं ।
 नक्षत्राणि च सर्वाणि यज्ञश्चैव पृथक् पृथक् ॥
 अश्विन्यामाश्विनाविद्धा दीर्घायुर्जायते नरः ।
 व्याधिभिर्मुच्यते क्षिप्रं योऽत्यर्थं व्याधिपौडितः ॥
 भरण्यां यमराडिष्टः कुसुमैरसितैः शुभैः ।
 तथा गन्धादिभिः शुभैरपमृत्युं विमोचयेत् ॥
 अनलः क्षत्तिकायास्तु ऋहिं संपूजितः परां ।
 रक्तमाख्यादिभिर्हृद्यादष्टतहोमेन च ध्रुवं ॥
 प्रजाः प्रजापतिः प्रीत इष्टो(२) दद्यात्पशून्स्तथा ।

(१) भविष्योत्तरोक्तमिति पुस्तकालये पाठः ।

(२) पशूः प्रजापतिः प्रीत इष्टमिति पाठालयः ।

रोहिण्यां देवशार्दूल गोजन्माह जगत्पते ॥
 मृगशीर्षे तथा सोमं जातिमारोग्यमेव च ॥
 आर्द्रायान्तु शिवं पूज्य पशून् विजयमेव च ।
 सितैः पद्मादिभिर्हिर्व्यैर्हवत्वं पयसा च वै ।
 पुत्रान् पुनर्वसौ दद्याच्चरुणा तर्पिता दितिः ॥
 तिष्ये बृहस्पतिर्बुधं विपुलं सुखमेव तु ।
 भोगान् गन्धादिभिर्नागा अश्वेषायां प्रपूजिताः ॥
 तर्पिताश्च प्रयच्छन्ति भक्षाद्यैर्मधुरैः शुभैः ।
 मघासु पितरः पुष्टिं हृतपायसतपिताः ॥
 पूर्व्यायां विजयं दद्याद्भगो देवः सुतर्पितः ॥
 भक्त्या प्रपूजितो दद्यादुत्तरायां तथार्थमा ।
 भर्तारमीप्सितं नार्थ्याः पुंसश्च वरयोषितं ॥
 नीरोगत्वं तथायुष्यं सम्पदं चारुरूपतां ।
 पुष्पवस्त्रार्चितो हस्ते दद्यात्सेजोनिधिस्तथा ॥
 चित्रासु पूजितस्त्वष्टा दद्यादारोग्यमेव च(१) ।
 स्वात्यां संपूजितो वायुः पुत्रानिष्टान् प्रजच्छति(२) ॥
 इन्द्राग्नी तु विशाखायां पीतरक्तैः प्रपूज्य च ।
 धनं राज्यञ्च लब्ध्वैह तेजस्वी निवसेत्सदा ॥
 रत्नैर्मित्रमनूराधास्त्वेवं संपूज्य भक्तितः ।
 प्रियो जनानां सर्वेषां चिरञ्जीवति सर्व्वदा ॥
 ज्येष्ठायां पूर्व्ववत्स्विन्दमिष्टा पुष्टिमवाप्नुयात् ।

(१) राक्ष्यं मित्रञ्च चित्रायां नि मघम् प्रयच्छतीति पाठान्तरं ।

(२) इष्टस्त्वष्टार्चित पीतः स्वात्या वायुर्वायु परमिति पुलकान्तरे पाठः ।

गुणैः सर्वैस्तु संपूर्णः कर्मणा वचनेन च ।
 मूले निर्वर्ततिमिद्धा च भवैस्तु पल्लादिभिः ।
 पूर्व्वयत् फलमाप्नोति स्त्रस्थाने च भुवो भवेत् ॥
 अप इद्धा जलैरेतैर्हुत्वा तत्रैव पूर्व्ववत् ।
 सन्तापान्मुच्यते क्षिप्रं शारीरान्मानसास्तथा ॥
 आषाढासु तथाविश्वविरिञ्चुरतुरयोगतः ।
 संपूज्य त्रियमाप्नोति परं विजयमेव तु(१) ॥
 अश्विने पूजितो विष्णुः सर्व्वान् कामान् प्रयच्छति(२) ।
 धनिष्ठासु वसूनिद्धा न भयं प्राप्नुयात् क्वचित् ॥
 महतीऽपि भयात्तीर्णो गन्धपुष्पादिभिः शुभैः(३) ।
 वरुणं शतभिषास्त्र्यं व्याधिभिर्मुच्यते नरः ॥
 अजन्माद्रपदायान्तु शुद्धस्फटिकसन्निभं ।
 संपूज्य मुक्तिमाप्नोति नात्र कार्य्या विचारणा ॥
 उत्तरायामहिव्रध्नं परां शान्तिमवाप्नुयात् ॥
 रेत्यां पूजितः पूषा ददाति विविधान् पशून् ।
 सितैः पुण्यैस्तथा दीपैर्धूपैर्विजयवर्द्धनैः ॥
 य एते वै समाख्याता यन्त्राः संक्षेपतो मया ।
 नक्षत्रदेवतानां हि साधकानां हिताय वै ।
 तस्माद्विज्ञानुसारेण भवन्ति फलदायकाः ॥
 गन्तुमिच्छेद्दयदान्यत्र क्रियाप्रारम्भ एव च ।

(१) विशाखं परमं कृत्वा कर्ममाप्नोति मानव इति पाठान्तरं ।

(२) दीपैर्धूपैश्च भक्तिन इति पाठान्तरं ।

(३) रत्नैश्च कुसुमैः शुभैरिति पाठान्तरं ।

नक्षत्रदेवतायज्ञं कृत्वा तं सर्वमाचरेत् ॥
 एवं कृते हि तत्सर्वं याचाफलमवाप्नुयात् ।
 क्रियाफलान्तु संपूर्णमित्युक्तं भातुना स्वयं ॥
 इति भविष्यत्पुराणोक्तो नक्षत्रपूजाविधिः ।

—000—

श्रीराम उवाच ।

अम्यं दैवमवाप्नोति शत्रुनाशमथापि वा ।
 स्वेच्छया कर्मणा कोन सदा मनुजपुङ्गव ॥
 पूजयेद्वासुदेवन्तु कुङ्कुमेन सुगन्धिना ।
 श्वेतैश्च कुसुमैश्चैर्धूपं दद्याच्च गुग्गुलुं ॥
 घृतेन दीपं दद्याच्च रत्नवस्त्रं तथैव च ।
 निवेदनीयं देवाय तथा सर्वं निवेदयेत् ॥
 होतव्यञ्च समृद्धेऽग्नौ तथैव च सुरर्षभ ।
 आयुधानि च देयानि ब्राह्मणेभ्यस्तु दक्षिणा ॥
 कृत्वेतदम्यं रिपुनाशकरि
 काम्यं सदा शत्रुगणप्रमाधि ।
 कृत्वेतदम्यं रिपुनाशमाय
 प्राप्नोति मर्त्यो न हि संशयोऽत्र ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं शत्रुनाशनव्रतम् ।

—000—

श्रीराम उवाच ।

कर्माणि श्रोतुमिच्छामि काम्यानि यद्विज्ञामहं ।
 त्वत्तः सर्वञ्च धर्मञ्च याद्रीमन्तुपात्मज ।

पुष्कर उवाच ।

कृतोपवासो याम्यर्चं सोपवासस्य भागव ।
 पुरोधाः स्नपनं कुर्यात् कृत्तिकासु यथाविधि ॥
 प्रकीर्णमूलैः कलशैर्मृन्मयैरथ काञ्चनैः ।
 पूर्णैः सर्व्वीषधिगणैस्तथा तीर्थीदकैः शुभैः ॥
 अग्न्यश्वाद्यग्निरीषाणां व्योधानां फलैस्तथा ।
 पात्रपूर्णैस्तथा युक्तैस्तिलैः कृत्तयेर्द्विजोत्तम ॥
 रक्तमाख्येन सूत्रेण बद्धकण्ठैस्तथैव च ।
 आग्नेय्याशामुखः स्नाप्यो नीलवासा द्विजोत्तमः ॥
 बद्धिं कुमारं शशिनं खड्गं वदन्ममेव च ।
 पूजयेत् कृत्तिकास्त्रेण गन्धमाब्जसम्पदा ॥
 पीतरक्तैस्तथा वस्त्रैर्हृतदीपैस्तथैव च ।
 दध्ना गव्येन साजाभिरम्बिमन्त्रेण वाप्यथ ॥
 कशरापूपिकाभिश्च अपूपैश्च पृथग्विधैः ।
 देवतानां यथोक्तानां प्रियङ्गुं जुह्यात्ततः ॥
 गर्हभाश्चमयूराणां स्त्रीभानि मनुजोत्तम ।
 धारयेद्दक्षिणे सम्यक् शक्त्या कनकमेव च ।
 श्वेतवासास्ततः पश्चात्पूजयेन्मधुसूदनं ।
 कर्मतत्सततं कृत्वा गच्छेद्ब्रह्मेः पुरं सदा ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं कृत्तिकास्नानं ।

—000—

नन्दि उवाच ।

रोहिणी जन्मनक्षत्रं साक्षाद्देवस्य चक्रिणः

ताम्ररुक्ममयीं कृत्वा पञ्चरत्नेन संयुतां ॥
 स्यापयेदस्त्रयुग्मेन पुष्पधूपैः (१) प्रपूजयेत् ।
 कालोद्भवफलैर्हि व्यैनेवे द्यौर्दृष्टं तपाचितैः ॥
 द्वितीयेऽङ्गि समाप्यैतद्वाङ्मनायोपपादयेत् ।
 त्रीत्रियाय सुरुपाय भिक्षुकाय कुटुम्बिने ॥
 स्वयं नक्तेन भुञ्जीत रोहिण्या दर्शने कृते ।
 एवं विधं व्रतं दिव्यं दिवि देवाश्च चक्रिरे ॥
 वर्षे वर्षे समायाते देवाद्याद्यापि कुर्वन्ते ।
 यं यद्भाममभिधायन् तं तमाप्नोत्यसंशयं ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं रोहिणीव्रतं ।

—000—

पुष्कर उवाच ।

उपोषितो कृत्तिकासु यजमानपुरोहितौ ।
 रोहिण्यां स्नपनं कुर्याद्यजमानस्य भार्गव ॥
 क्षीरवृक्षप्ररोहाज्यसितमाख्यविभूषितान् ।
 प्रियङ्गुचन्दनोपेतान् पञ्च कुम्भान् प्रकल्पयेत् ॥
 प्राङ्मुखो व्रीहिराशिस्यं कुम्भैस्त्वेरभिषेचयेत् ।
 विष्णुं यशाङ्गं वरुणं रोहिणीं च प्रजापतिं ॥
 पूजयेत्संयतः सखी गन्धमाब्जानुलेपनैः ।
 धूपः प्रजापतेर्ह्यस्तथा विष्णुयशाङ्गयोः ॥

पञ्च पिष्टवृषान् दिव्यान् धूपञ्च विनिवेदयेत् ।
 पूजाभिदाय होमन्तु देवतानाञ्च कारयेत् ॥
 हृतेन सर्व्ववीजैश्च शुक्लवासा जितेन्द्रियः ।
 दक्षिणा मुरवे देया कास्यं गौर्वीससौ शुभे ॥
 सुवर्णञ्च महाभाग विप्राणामथ भक्तितः ।
 पांशुकर्द्दमसंयुक्तमश्वत्थलोम शर्फं तथा ॥
 शृङ्गञ्च त्रिवृतं कृत्वा मणिधैर्य्यैः शुभप्रदः ।
 अलं क्रियार्थं तदिदं सदैव
 स्नानन्तु कुर्व्वन् पुरुषोऽथवा स्त्री ।
 पुञ्चानवाप्नोति तथेप्सिताञ्च
 पुष्टिं तथायां विपुलाञ्च कीर्त्तिं ॥
 इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं रोहिणीस्नानं ।

— ००० —

मनुस्मृत्या च ।

ग्रहदीपोपशृङ्गस्य राज्ञो राजसुतस्य च ।
 महिष्यो वा सृतापत्या द्विजादिष्वथ वा जने ।
 विपद्यते फलं यत्र सुप्रयत्नकृतोद्यमे ।
 गजाश्वगोवृषाणाञ्च यत्र हानिः प्रजायते ॥
 यत्र भौमान्तरीक्षे च उपसर्गः प्रदृश्यते ।
 तत्र कुर्यात्तथाभागं यागं पुण्याभिवेचनं ॥
 मूलं राजा समाख्यातस्तस्य शाखा प्रजादिकं ।
 उपसंहारसंस्कारे शुभे वाप्यशुभेऽपि वा ॥

यज्ञः कार्यः सदा वक्ष मूले शाखादिकं भवेत् ।
 मूले विमष्टे नश्यन्ति शाखाद्याः फलसञ्चयाः ॥
 तदर्थं मूलरक्षायां यतितव्यं महामुने ।
 धर्मार्थकाममोक्षाणां स हि हेतुः प्रपद्यते ॥
 ब्रह्मणा या पुरा शान्तिर्महेन्द्रार्थं ब्रह्मस्यते ।
 व्याख्याता कीर्त्तयिष्यामि तान्ते शीनक मृणुष ॥
 पुण्यज्ञानं महापुण्यं सर्वपापप्रणाशनम् ।
 उत्पातशमनं दिव्यं यच्च कुत्रायधारय ॥
 वल्मीकतुषकेशस्थिकटकण्टकिवर्जिते ।
 शिग्रुस्त्रेष्मातदौर्गन्धिविगते च महीतले ।
 कङ्ककापोतष्टध्रोलूककाकपरिवर्जिते ॥
 सुप्रुते चम्पकाशोकवकुलाम्नातशाहले ।
 तरुणवल्गिवितते निरुपहतदन्तान्विते ।
 समधुरवृक्षप्राये(१) फलपल्लवगोभिते ।
 पक्षिगावगणाकीर्णे लक्षवाकूपगोभिते ।
 जीवजीवकहारीतशतपत्रशृङ्गाकुले ॥
 चकोरचाससंयुक्ते चक्रवाकोपगोभिते ।
 शिखिपारावताश्रीककोककोकिलनादिते ॥
 मधुपुष्पासवसुरामधूककुसुमाकुले ।
 यागं कुर्याद्वनोद्देशे क्षेत्रेऽरण्येऽथवा शुभे ॥
 हिमाद्रावुज्जयन्ते वा सद्यो विख्याचलेऽपि वा ।
 नदीनां पुञ्जिने वापि सङ्गमे वा मनोरमे ॥

(१) समधुरवृक्षप्राये इति पाठाकरं ।

गीरोचनालक्तकक्षशङ्कुङ्कुमशोभिते ।
 समुद्रतीरे कुर्याच्च आश्रमे वा गृहेऽपि वा ॥
 पूर्वोदक्प्लवभूभागे प्रदक्षिणपथे जले ।
 श्वाविमूषिकविरते कर्कटावासवर्जिते ॥
 वर्णगन्धरसोपेता घना स्निग्धा समा मही ।
 या कष्टबीजरोहोद्यौर्वहुशः सुपरीक्षिता ॥
 गत्वा तां समुहर्त्तेऽथ कौवेर्यामधिवासयेत् ।
 बलिपुष्पोपहारश्च मन्त्रयुक्तं निवेदयेत् ॥
 आगच्छन्तु सुराः सर्वे येऽत्र पूजाभिलासिनः ।
 दिशो नगा द्विजायैव ये चान्ये अंशभागिनः ॥
 आवाह्ये वन्ततः सर्वानेवं ब्रूयात्पुरोहितः ।
 स्वः पूजां प्राप्य यातारो दत्त्वा शान्तिं महोभूजे ॥
 कृत्वा पूजां ततस्तेषां राज्ञौ तस्यां व्रतौ वसेत् ।
 स्नात्वा शुभाश्वगोवत्सदधिगर्पपदर्शनं ॥
 पुष्पदूर्वाचतफललाजदर्शनमेव च ।
 कृत्वा चामरशङ्खाजगितवस्तादिदर्शनं ।
 लाभो वा सर्वकामानां पूरणाय प्रकीर्तितः ॥
 फलपुष्पयुता वृक्षाः क्षीरिणः शुभदा मताः ।
 तेषामारीहणं श्रेष्ठं प्रामादेभ्यश्चादिषु ॥
 चन्द्राकग्रहणं शस्तं पर्वताग्रीहणं शुभं ।
 निगडं बन्धनं स्वप्ने विहिषय जयावहः ।
 परिवर्त्तं गिरेः कुर्याच्छक्रं वाचावगूहति(१) ॥

(१) अथ वाचावगूहति इति पाठान्तरः ।

वेष्टयेद्यस्तु प्रासादं स्वप्ने तस्य जयो भवेत् ।
 लभते चेप्सितं सर्वं लाभो तस्य तु वै भवेत् ॥
 सृतरोदनहीनस्त्रीगमनञ्च शुभावहं (१) ।
 स्वप्ने तु कूपपङ्केषु गर्जेषु तरणं शुभम् ।
 नदीषु तरणं शस्तं समुद्रतरणं तथा ।
 निर्जित्य शत्रुसैन्यञ्च जयं प्राप्नोति मानवः ॥
 कटकाद्या अलङ्काराः पुत्रराज्यसुखप्रदाः ।
 सुहृदस्त्रनवैपक्षीलाभाः स्त्रीधनदायकाः ॥
 रुधिरारम्भः पिवेद्यस्तु तरते वा यदि क्वचित् ।
 मांसास्थिभक्षणे लाभो लभते वा हितं फलं ॥
 हास्यनृत्यचरोत्साहपतनाः कलिकारकाः ॥
 याम्ये यातागताकृष्टानयनं भयमृत्युदं ।
 पश्चिमे यानगामित्वं तथाकूपप्रवेशनं ।
 उत्तरे भयदः स्वप्ने रक्तमान्वास्वरागमः ॥
 खरोष्ट्रकपिकापोतवराहाहिनिगात्रान् ।
 दृष्ट्वाशुभान् जयः कार्यो घातपातफलप्रदान् ॥
 वातपित्तकफोत्थेषु यानाग्नितरणादिषु ।
 यीक्ष्यशरद्वसन्तेषु प्रपादानफलप्रदाः ॥
 शृतानुकोर्त्तणं दृष्टमनुभूतं विगर्हितं ।
 न चेष्टा यदि वा दृष्टाः प्रदोषप्रथमे तथा ॥
 मध्ये मध्यफलाः सर्वे चान्ते ग्रीष्मफलप्रदाः ।
 मोक्सिर्गच्छे दृष्टास्ते तथा परिकीर्तिताः ॥

(१) चन्द्रमामन इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

दृष्ट्वा स्वप्नान् शुभान् यागं कुर्यात्स्विष्टन्तु कारयेत् ।
 स्नानं देवार्चनं होमं जयं शान्तिं समारभेत् ॥
 कृत्वा सर्वान् लभेत् वत्स ततो मण्डलमालिखेत् ।
 चतुर्हस्तं समारभ्य यावच्चस्तनं भवेत् ॥
 मण्डलं तत्र कर्त्तव्यमत जह्वं न कारयेत् ।
 विमलं विजयं भद्रं विमानं शुभदं शिवं ॥
 वर्षमानश्च देवश्च लताख्यं कामदायकं ।
 सचक्रं स्वस्तिकाख्यश्च इति द्वादश मण्डलाः ॥
 सितादिहरितानाञ्च रजःकार्यैः सुशोभनः ॥
 शालिर्षष्टिककोसुभरजनीहरिपत्रजाः ।
 मणिविद्रुमरागाश्च भस्मना अभिमन्त्रिताः ।
 सितसर्पपधूपाढ्यं रजः कृत्वा तु पातयेत् ॥
 अस्तराजं न्यसेन्मन्त्री सन्भवन्ति पदानि वा ।
 सौम्यं स्थानं शुभङ्कृत्वा गोमयेनोपलेपितं ॥
 चन्दनागुरुकूर्पूरचोदधूणादिवासितं ।
 भूभागं सुमितं सिद्धं पूर्व्वं पश्चिममुत्तरं ।
 याम्यं स्वस्तिकशङ्कायैः सूत्रैः काण्डकमण्डितैः ।
 पद्मपत्राष्टकं मध्ये त्रिगुणं त्रिगुणीकृतं ॥
 द्वाराणि समसूत्राणि कलिकाकेशरोज्जलं ।
 पद्मं तथा च शेषाणि स्वस्तिकान्युत्पलानि च ॥
 सव्येऽवलम्ब्य हस्ते तु रजःपातं समारभेत् ।
 मध्यमानामिकाङ्गुष्ठैरुपरिष्टादुदयेच्छ्रया ॥
 अधोमुखाङ्गुली कृत्वा पातयेत्तु विचक्षणः ।

समा रेखा तु कर्त्तव्याविच्छिन्ना पुञ्जवर्जिता ॥
 अङ्गुष्ठपर्व्ववत्स्थूला समा कार्या विजानता ॥
 ससक्तं विषमं स्थूलं विच्छिन्नं कृशलावृतं ।
 पथ्यन्तमर्पितं क्लृप्तमालिखेन्न कदाचन ॥
 ससक्ते कलहं विद्यादकरेखे च विग्रहं ।
 अतिस्यूले भवेद्द्वयाधिर्नित्यं पीडा विमिश्रिते ॥
 विन्दुभिर्भयमाप्नोति शत्रुपक्षान्न संशयः ।
 कृशायाश्चार्थहानिः स्याद्विच्छिन्ने मरणं भ्रवं ।
 वियोगो वा भवेत्तस्य द्रष्टव्यसुतस्य च ॥
 अविदित्वा लिखेद्यस्तु मण्डलन्तु यथेच्छया ।
 सर्व्वदोषानवाप्नोति ये दोषाः पूर्व्वभाषिताः ॥
 चतुरस्त्रं चतुर्द्वारं लिखेन्मण्डलमुत्तमं ।
 मण्डलस्य प्रमाणेन पद्मं द्वारे समालिखेत् ॥
 हस्तीनं न च कर्त्तव्यं पद्मं विप्र कदाचन ।
 नाधिकं चतुरुर्द्वन्तु लिखितव्यं विजानता ॥
 प्रतापायुः त्रियं धर्म्मो राज्यस्तोरुपसम्पदः ।
 अवाप्यन्तेऽर्थलाभश्च पूर्व्वद्वारं च मण्डले ॥
 बुद्धिर्मेधा ययः सौख्यमार्वाग्यं जनवृद्धयः ।
 सर्व्वकामार्थसिद्धिश्च उत्तरद्वारं मण्डले ॥
 पुत्र आयुर्बलश्चैव सांभाग्यं रिपुसंहनं ।
 यज्ञकर्म्मभित्तिश्च पश्चिमद्वारं मण्डले ॥
 तस्य मध्ये पुनः पद्ममष्टपत्रं सकर्णिकं ।
 चतुर्विंशत्सक विप्रैः राजन्यं त्रिविंशत्सकं ।

प्रहृद्यन्तु वैश्वस्य स्त्रीशूद्रैर्हवितस्तिकं ॥
 पद्मस्यैवानुपूर्वण नालन्तदनुपूर्वशः ।
 वारुणीन्दिशमान्नित्य नालन्तु परिकल्पयेत् ॥
 सप्तपातालगतं नालं भुवनान्तं प्रकीर्तितं ।
 कर्णिका तु भवेन्मे रुर्वजैर्गृह्णैस्थिता ।
 केशरस्तु भवेन्नद्यः कर्णिकैः पर्वतास्थिताः
 अष्टौ दक्षा दिशः प्रोक्ता ऋषयः पद्मसंस्थिताः ॥
 सप्तपातालभूलीको नालन्तु परिकीर्तितं ।
 ईदृशं कल्पितं पद्मं देवदेवेन शम्भुना ॥
 ध्वजतीरणसंयुक्तं पताकाभिरलङ्कृतं ।
 भूर्लीकस्तु दक्षा प्रिया दिगात्मा शून्यगोचरः ॥
 स्वर्लोकः कर्णिका ख्यातस्त्रैलोक्यं पद्मसंस्थितं ।
 कर्णिकायां न्यसेद्देवं पूजाकाले महेश्वरं ॥
 मातरो ग्रहनागाय यत्नरक्षादिवाकराः ।
 वसवो सुनिलोकेशाः सरुद्रा भुवनाधिपाः ॥
 कलाः काष्ठाः (१) क्षणा यामा रात्राहः सप्तितासिताः ।
 पक्षा मासा ऋतुर्भागाः समा युगयुगान्तराः ।
 कल्पान्ताश्च महाकल्पाः पद्मे चैवं समालिखेत् ॥
 प्रथमे मण्डले देवं शिवं विघ्नेशसंयुतं ।
 गणनायकसंयुक्तं द्वितीये वरणे यजेत् ॥
 सप्तहं भास्करं प्राच्यां ऐशान्यान्तु पिनाकिनं ॥
 सौम्यास्यं केशवं रक्षेत् पथिमास्यं पितामहं ।

तृतीये वरणे चैवं मेदिन्यामुपकल्पयेत् ॥
 नानारत्नाकराकीर्णं भूयो देवान् समालिखेत् ।
 पुरोहिती यथास्थानं नागान् यक्षान् पितॄन् सुरान् ॥
 गन्धर्व्वाप्सरसश्चैव मुनीन् सिद्धान्निधापयेत् ।
 ग्रहांश्च सह नक्षत्रैः सरुद्राश्चैव मातरः ॥
 स्कन्दं विष्णुं विद्यानाथं लोकपालान् सुरस्त्रियः ।
 सुवर्णैर्विविधैः कृत्वा हृद्यैर्गन्धगुणान्वितैः ॥
 यथा संपूजयेद्विद्वान् गन्धमाल्यानुलेपनैः ।
 भक्ष्यैरन्यैश्च विविधैः फलमूलादिभिस्तथा ॥
 पानेयैश्च विविधैर्हृद्यैः सुराक्षीरासवादिभिः ।
 विगेषादिहिहिता पूजा ग्रहयज्ञे मया पुरा ॥
 मातृणाञ्च सुराणाञ्च साप्यत्रैवोपकल्प्यते ।
 पिशाचान् दानवान् रक्षान् मांसमद्यैः प्रपूजयेत् ॥
 अभ्यञ्जनाञ्जनतिलैर्मन्त्रैस्तिस्रधुरेण च ॥
 मुनयः सामर्गजभिर्मन्त्रैस्तिस्रधुरेण च ॥
 नागान्शेषैरक्षैश्च वर्णकैश्चैव पूजयेत् ।
 धूपान्नाहुतिदानैश्च देवान् रत्नैः प्रदक्षिणैः ॥
 गन्धर्व्वाप्सरसो गन्धैर्मन्त्रैः सुमनसा तथा ।
 शेषांस्तु सर्वान् बलिभिः पुष्पगन्धैश्च पूजयेत् ॥
 प्रतिनाम्ना पताकाय वस्त्राण्याभरणानि च ।
 सर्वेषाञ्च प्रदेयानि सुयज्ञोपहितानि च ॥
 दक्षिणे पश्चिमे वापि वायव्या मण्डलस्य च ।
 ग्रहयज्ञविधानेन होमं मातृमुखोदितं ॥

कृत्वा द्रव्यैरिमैर्वक्ष्यथोक्तैर्लक्षणान्वितैः ।
 लाजाक्षतघृतं क्षौद्रं दधि क्षीरं तु सर्षपाः ॥
 सिद्धार्थाः समनोगन्धा धूपाश्च ससितोत्कटाः ।
 गोरोचना तिला दर्भा मुहज्जातिफलानि च ॥
 घृतपायससम्पूर्णान् सरावान् विनिवेदयेत् ।
 पश्चिमायान्तु वै वेद्यां पूजायां स्नातको भवेत् ॥
 कलशान् सुदृढान् कुर्यात् लक्षणेन वदामि ते ।
 उत्पत्तिलक्षणं ज्ञानं कथयामि महामुने ।
 वाचकाः कलशाद्यैव येन लोके प्रकीर्त्तिताः ॥
 अमृते मथामाने तु सर्वे देवैः सदानवैः ।
 मन्यान् मन्दरं कृत्वा नेत्रं कृत्वा तु वासुकिं ॥
 उत्पन्नममृतं तच्च महावीर्यपराक्रमं ।
 तस्य संस्कारणार्थाय कलशः परिकीर्त्तितः ॥
 कलां कलां गृहीत्वा च देवानां विश्वकर्माणां ।
 निर्मितोऽयं सुरैर्यस्मात् कलशस्तेन उच्यते ॥
 कलशस्य मुखे ब्रह्मा योवायान्तु महेश्वरः ।
 मूले तु संस्थितो विष्णुर्मध्ये मातृगणाः स्थिताः ॥
 शेषास्तु देवताः सर्वा वदन्ति चतुर्दिशं ॥
 कुक्षौ तु सागराः सप्त सप्त ह्रीपास्तु मध्यतः ।
 नक्षत्राणि ग्रहाः सर्वे तथैव कुलपर्वताः ॥
 हिमवान् हेमकूटश्च निषधो मेरुरेव च ।
 रोहितो भास्ववाद्यैव सूर्यकान्तिश्च पर्वताः ॥
 गङ्गा सरस्वती सिन्धुसुभगा यमुना नदी ।

ऐरावती शतद्रुश्च तथा वैतरणी नदी ।
 गोदावरी नर्मदा च महौ नाम महामदी ॥
 कुरुक्षेत्रं प्रयागश्च एकहस्तं पृथूदकं ।
 अमरेशं पुण्डरीकं गङ्गा सागर एव च ॥
 पृथिव्यां यानि तीर्थानि कलशे निवसन्ति वै ।
 स्वाहा शान्तिश्च पुष्टिश्च प्रीतिर्गायत्रिरेव च ॥
 ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदस्तथैव च ।
 अथर्ववेदसंहिताः सर्व्वे कलशसंस्थिताः ॥
 नवैव कलशाः पुण्याः शम्भुमूर्तिसमुद्भवाः ।
 गोभ्योपगोभ्यो मरुतः सुमन्दश्च तथापरः ॥
 मनोहरः खलुभद्रः पञ्चमः परिकीर्त्तितः ।
 विरुजस्तनदूषश्च षष्ठसप्तमकावभौ ।
 अष्टमंस्त्रिन्द्रियातीतो नवमो विजयः स्मृतः ॥
 नवैव कलशाः ख्याता अधिदैवं निर्बोध मे ।
 शृणु वत्स यथा तेषांन्दिगोन्यासे व्यवस्थिताः ॥
 नवमो यः समाख्यातो विजयो नाम नामतः ।
 गिवस्तत्र स्थितः साक्षात्सर्व्वपापहरः शुभः ॥
 स तु पञ्चमुखः ख्यातो लोके सर्व्वार्थसाधकः ।
 पञ्चब्रह्मात्मको यस्मात्तेन पञ्चमुखः स्मृतः ॥
 पश्चिमे तु मुखे सद्यो वामदेवस्तथोत्तरे ।
 पूर्व्वे तत्पुरुषं विद्यादधोरश्चापि दक्षिणे ॥
 ईशानः पञ्चमो मध्ये सर्व्वेषामुपरिस्थितः ।
 एते पञ्च मुखा वत्स पापघ्ना ग्रहनाशनाः ॥

सद्योजातो भवेच्छक्ती वामदेवस्तु पीतकः ।
 रक्तस्तत्पुरुषो ज्यो अघोरः कृष्ण एव च ॥
 ईशानः पश्चिमे तेषां सर्व्वेर्षेः समन्वितः ।
 कामदः कामरूपौ स्यात् ज्ञानाधारः शिवात्मकः ॥
 क्षितीन्द्रो ज्येष्ठकलयो द्वितीयो जलसम्भवः ।
 तृतीयः पवनश्चैव चतुर्थस्तु हुताशनः ।
 पञ्चमो यजमानस्तु षष्ठश्चाकाशसम्भवः ॥
 सोमस्तु सप्तमः प्रोक्त आदित्यश्च तथाष्टमः ।
 एते चोत्पादिता दिव्याः शिविनाधिष्ठिताः पुरा ॥
 इन्द्रस्य मूर्त्तयथाष्टौ सूर्य्यस्य तु नव स्थिताः ।
 क्षितीन्द्रः पूर्व्वतो न्यस्यः पश्चिमे जलसम्भवः ॥
 वायव्ये वायवो न्यस्य आग्नेये अग्निसम्भवः ।
 नैऋते यजमानस्तु ऐशान्यां कामसम्भवः ॥
 सोम्य उत्तरतो योन्यः सौरं दक्षिणतो न्यसेत् ।
 न्यस्यैवं कलशानाम्त्तु पूर्व्वरूपं विचिन्तयेत् ॥
 कलशानां मुखे ब्रह्मा धीवायां विष्णुरेव हि ।
 मध्ये मातृगणाः सर्व्वे सेन्द्रा देवाश्च पद्मगाः (१) ॥
 कुक्षौ तु सागरास्तेषां सप्तद्वीपा च मेदिनी ।
 त्रिधा चैव तथोमा च गन्धर्वा ऋषयस्तथा ।
 पञ्चभूतास्तथा घोरास्तेषामधरतः स्थिताः ॥
 पूर्णाः पूतेन तोयेन सितास्ते कान्ततोज्ज्वलाः ।
 सरित्सरः स्वातजेन ताङ्गागेन जलेन वा ।

वापीकूपादितोयेन सामुद्रेण सुखावहाः ॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्याः सर्वकिल्बिषनाशकाः ।
अभिषेके सदा ग्राह्याः कलशा ईदृशाः शुभाः ॥
यात्राविवाहकाले वा प्रतिष्ठाशक्तकर्मणि ।
योजनीया विशेषेण सर्वकामप्रसाधकाः ॥
मृतापत्या तु या नारी या च वन्ध्या प्रकीर्तिता ।
मूढगर्भा त्वगर्भा च दुर्भगा व्याधिपीडिता ।
एताषाञ्च सदा कार्यं स्नापनं पुण्यमङ्गले ॥
सर्वरत्नौषधीगन्धफलपुष्पसमन्विताः ।
ग्रहदोषे प्रकर्तव्याः कल्याणे मङ्गले तथा ॥
ग्रहान् चारयते यस्मान्मातरो विविधास्तथा ।
दुरितांश्च महाघोरां स्तेन ते चारकाः स्मृताः ॥
एकैकान्तु कलां मूर्त्तैः क्षित्याद्यैश्च यथाक्रमं ।
संहृत्य संस्थिता यस्मान्तेन ते कलशाः स्मृताः ॥
हैमराजतताम्रा वा मृन्मया लक्षणांविताः ।
पञ्चाङ्गुलाश्च त्रिस्तौर्णा उत्सेधाः षोडशाङ्गुलाः ॥
कलशानां प्रमाणन्तु मुखमष्टाङ्गुलम्वेत् ।
अष्टमूर्त्तिस्थितो योऽसौ स शिवः पद्ममन्त्रवः ॥
मूर्त्तयोऽष्टौ गणास्तस्य कर्णिकायां शिवः स्थितः ।
ये गणास्ते दत्ता नागा ये नागाः कलशाश्च ते ॥
कलशाश्च ग्रहाः प्रीक्षा लोकपाला दिशश्च ते ।
एतैः सर्वमिदं व्याप्तमात्रमभुवनं जगत् ॥
दुराधर्मैर्महासत्त्वैः सर्वपापविशोधकैः ।

रत्नानि वीजपुष्पाणि फलानि कलशे क्षिपेत् ।
 पुष्पमालाय वस्त्राक्षं सितचन्दनचर्चिताः ॥
 वज्रभीतिकवैदूर्यमहापद्मैश्च स्फाटिकैः ।
 सर्वैः शुभैः फलैर्विल्वनारङ्गोडुम्बरैस्तथा ॥
 वीजप्रकजम्बीरआम्राम्रातकदाडिमैः ।
 धवशालिनिवारैश्च गोधूमसितशर्षपैः ॥
 कुङ्कुमागुरुकपूरमदरीचनचन्दनैः ।
 मांस्थेलाकुष्ठकपूरपत्रचण्डासुराजलं ॥
 निर्यासाम्बुदशैलेयसर्षपदेवदलं फलं ।
 जातीपत्रकनागाङ्गाः पृक्ता गौरी सपर्यिका ॥
 वचा रात्रिः समञ्जिष्ठा तुरष्कं मङ्गलाष्टकं ।
 दूर्वा मोहनभृङ्गारं शतमूली शतावरी ॥
 बाला नागबला देवी सहदेवीजयाक्षुमाः ।
 पुष्पागोमासितापाठा गुञ्जा सुरसिकालता ॥
 बालकं गजदन्तान् शतपुष्पा(१) पुनर्नवा ।
 ब्राह्मी देवी शिवा रुद्रा सर्वं यन्त्रानि काञ्चनं ।
 समाहृत्य शुभान्येवं कलशेषु निधापयेत् ॥
 कल्याणं विजयं धूपं चन्द्रं दद्यात् समङ्गलं ।
 सर्व्वरत्नमलङ्कारं रोचनाख्यन्तु पट्टकं ॥
 द्वादशं द्वादशं द्वादशं षट्त्रिंशदङ्गुलावधि ।
 वृत्तं वा चतुरस्रं वा पद्मकं त्रिकगार्भिकं ॥
 वासवं पद्ममध्ये तु भगवत्स्तिविनायकैः ।

(१) शतपत्रमिति पाठान्तरं ।

श्रीश्रीवृक्षसमारोहैः सर्वदेवैः शुभान्वितं ।
 सर्वरत्नसमोपेतं पद्मं कुर्याद्विहस्तकं ॥
 हस्तविस्तारमुच्छ्राये दशाङ्गुलसुशोभनं ।
 स्नानाख्यं सार्धं हस्तान्तु पञ्च वृत्तसमन्वितं ॥
 शय्याख्यं द्विगुणं दध्याहनुमार्त्तानं सपीठकं ।
 गजसिंहपदाकीर्णं हेमरत्नविभूषितं ॥
 सिंहाख्यं सार्धं विस्तारं दण्डासनमथापि वा ।
 समपादं महाख्यं वा हेमपत्रविभूषितं ॥
 वज्रचन्द्रनीलवर्णाख्यं महार्चमणिचर्चितं ।
 चतुष्पादोऽथवा कार्यस्त्रिमण्डलसमोऽपि वा ॥
 व्याघ्रचित्रकपट्टैर्वा उपधानानि कारयेत् ।
 अन्यैर्वा रक्षितैर्वस्त्रैर्मृदुतूलकपूरिता ॥
 शय्या देव्याथ विस्तीर्णा चतुर्हस्ता सुलक्षणा ।
 पद्मपादाश्लपादा वा गजसिंहपदाथ वा ॥
 दन्तिदन्तविचित्रा वा हेमरत्नविभूषिता ।
 शुभपत्रोर्णया कार्य्याः करिण्यो हस्तमुच्छ्रिताः ॥
 किन्नराद्याश्च कर्त्तव्याः सर्वशोभासमन्विताः ।
 शुभवस्त्रसमोपेताः सकुन्ता अथ संप्रज्ञाः ॥
 शिवोपलसमं स्थानं कार्य्यं वै शिरधारणं ।
 पद्मस्वस्तिकसन्धानसुत्पलं विहगान्वितं ॥
 पत्रवल्लीकृतापीडं हेमदन्तसुसञ्चितं ।
 वज्रपद्ममहापद्मरागवैदूर्यभूषितं ।
 गजकुम्भसमाकारमर्धचन्द्रात्ममेव वा ।

सहस्रकिमरीमानं समपचयतैरपि ॥
 नृपेशं सर्वलोकानां त्रिशतम्बिशतम्बरं ।
 तूला शय्यासभा कार्या मृदुकोष्ठकपूरकैः ।
 उपधानं विचित्रन्तु कर्त्तव्यं मृदु वर्तुलं ॥
 वृत्तं मृङ्गाटकाकारं श्रवणाख्यानसुत्तमं ।
 यानं शय्यासनं कार्यं वृत्तपादं सुशोभनं ।
 वितस्ति उच्छ्रितं कार्यं पादस्थानं सुशोभनं ॥
 एवं समस्तं प्रत्यग्रं कृत्वा शय्यासनादिकं ।
 वस्त्रालङ्कारशोभाढ्यमभिषेकं समारभेत् ॥
 ततो वृषस्य योधस्य चर्मरोहितमक्षयं ।
 सिंहस्याथ तृतीयस्य व्याघ्रस्य च ततः परं ॥
 चत्वारि तानि चर्माणि तस्यां वेद्यामुपस्तरेत् ।
 शुभे मूढर्त्तं सम्प्राप्ते पुण्ययुक्ते निशाकरे ॥
 हेमं वा राजतन्त्रास्त्रं क्षीरवृक्षमयं शुभं ।
 भद्रासनं प्रकर्त्तव्यं सार्द्धं हस्तं समुच्छ्रितं ॥
 सपादहस्तमानन्तु राक्षां मण्डलिकं तथा ।
 सुसहृष्टमना राजा होमान्ते चाद्य संविशेत् ॥
 दैवज्ञामात्यकञ्चूकिवन्दिपौरसुहृत्ततः ।
 हिजवेद्ध्वनिमुतः शुभवाद्यरवान्वितः ॥
 मृदङ्गशङ्खतुर्य्येष शब्दकौष शुभावहेः ।
 अहृतक्षीमनिवसं नृपं कम्बलशायिनं
 कलशैर्वर्लिपुष्पाद्यैः सर्पिःपूर्वेष स्नापयेत् ॥
 अष्टषोडशविंशतिशतमष्टाधिकं भवेत् ।

कलशानां समाख्यातमधिकन्तूत्तरीत्तरं ॥
 कल्याणेन तु मन्त्रेण मङ्गलेन जलेन वा ।
 देवीशङ्खसवेनाथ स्नायादाज्येन वा विभो ॥
 आज्यस्तेजः समुद्दिष्टं आज्यम्यापहरं शुभं ।
 आज्यं सुराणामाहारमाज्ये लोकाः प्रतिष्ठिताः ॥
 भीमान्तरिक्षं दिव्यं वा यत्किञ्चिदनाशनं ।
 सर्व्वान्तदाज्यसंस्पर्शात् प्रणाशमुपगच्छतु ॥
 कम्बलमुपनीय ततः पुष्पाब्जपूरितैः कलशैः स्नापयेद्राजा-
 नमाचार्योऽनेन मन्त्रेण ।

सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु ये च सिद्धाः पुरातनाः ।
 ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च साध्याश्च समरुद्रणाः ॥
 आदित्या वसवो रुद्रा अश्विनौ च निषहरी ।
 अदितिर्देवमाता च स्वाहा सिद्धिः सरस्वती ॥
 कीर्त्तिर्लक्ष्मीर्युतिः श्रीश्च सिनीवाली कुङ्कुमदा ।
 दितिश्च सुरसा चैव विनता कट्टरेव च ॥
 देवपत्न्यश्च पूर्व्वोक्ता देवमातर एव च ।
 सर्व्वस्त्वामभिषिञ्चन्तु शुभाद्याम्बरसाङ्गताः ॥
 नक्षत्राणि मूढकर्त्ताश्च पक्षाहोरात्रसन्धयः ।
 संवत्सरदिनेशश्च कलाःकाष्ठाः क्षणा लवाः ॥
 सर्व्वे त्वामभिषिञ्चन्तु कालस्यावयवाः शुभाः ।
 वैमानिकाः सुरमन्त्रा मनवः सागरैः सह ॥
 सरितश्च महाभागा नागाः क्षिप्रुषणास्तथा ।
 वैश्वानसा महाभागा वानप्रजह्विभैः सह ॥

हिजा वैहायसा क्षीरा ध्रुवस्थानानि यानि च ।
 मरीचिरत्रिपुलहः पुलस्त्यः क्रतुरङ्गिराः ॥
 भृगुः सनत्कुमारश्च सनकोऽथ सनन्दनः ॥
 सनातनश्च दक्षश्च तथा सनकनन्दनः ॥
 एकतश्च द्वितश्चैव त्रितो जावालिकश्चपौ ।
 दूर्वासा दुर्विनीतश्च कण्वः कात्यायनस्तथा ॥
 मार्कण्डेयो दीर्घतपाः शुनः शेषो विदूरथः ।
 अर्ष्यः सम्यक्त्तकश्चैव च्यवनोऽत्रिः पराशरः ।
 हैपायनो यवक्रीतो देवरातः सद्भागुजः ॥
 एते चान्ये च मुनयो वेदव्रतपरायणाः ।
 सशिष्यास्तेऽभिषिञ्चन्तु सद्गाराश्च तपोधनाः ॥
 पर्वतास्तरवो वल्गाः पुष्पान्यायतनानि च ।
 प्रजापतिर्हितश्चैव गावो विश्वस्य मातरः ॥
 बाहूनानि च दिव्यानि सर्व्वलोकाश्चराचराः ।
 अग्नयः पितरम्तारा जामूताः खन्दिगो जलं ॥
 एते चान्ये च बहवः पुण्यसङ्कीर्त्तनाः शुभाः ।
 तीर्थैस्त्वामभिषिञ्चन्तु सर्व्वोष्मातनिवर्हणेः ॥
 कल्याणन्ते प्रकुर्व्वन्तु आयुरारोग्यमेव च ।
 अथाभिषिक्तो मघवानेतैर्मुदितमानसैः ॥
 इत्येवं शुभदैरेतैर्मन्त्रैर्हिव्यैस्तथापरैः ।
 शैवैर्नारायणै रौद्रेर्ब्रह्मण्यकसमुद्भवैः ॥
 आपोहिष्टा हिरण्येति शम्भवेति तथैव च ।
 सर्व्वमङ्गलमाङ्गल्यैर्व्यस्तं कार्पासिकश्चियात् ॥

शङ्खवेणुरवैस्तूयैराचान्तो मङ्गलैर्नृपः ।
 ततः सम्पूजयेद्देवान् गुरुन् विप्रान् ध्वजायुधान् ॥
 छत्रं वाद्यङ्गजानश्वान् परिजप्तानि धारयेत् ।
 वेदेन च जयेनेति भलङ्काराणि पार्थिवः ॥
 द्वितीयायां ततो वेद्यां गत्वा ह्यथावृताशनं ।
 देवानां वन्दने स्थाने निमित्तानि तु लक्षयेत् ॥
 स्वाहा रुद्राय चन्द्राम(१) विष्णवे ब्रह्मणे शिवे ।
 ग्राजापत्ये कुमाराय विघ्नहाय विनायके ॥
 सूर्याय यहराजाय वराहाय त्रिविक्रमे ।
 मातृणां वरदे मन्त्रि चामुण्डायै स्वधेति च ॥
 नागराजअनन्ताय ततो राजा समाहरेत् ।
 क्रमेण संस्थिते चर्मण्युपविष्टो नराधिपः ॥
 वृषस्य वृषदंशस्य खुराश्वशृषतस्य च ।
 तेषामुपरि सिंहस्य व्याघ्रस्य च ततः परं ॥
 उपविष्टे पुनर्होमन्तेर्मन्त्रैः सष्टतैस्तिलैः ।
 कृत्वा शेषममासिं स प्राञ्जलिः संस्थितो वदेत् ॥
 यान्तु देवगणाः सर्व्य पूजामादाय पार्थिवात् ।
 सिद्धिन्दत्त्वा सुविपुलां पुनरागमनाय च ॥

आपोहिष्टा इति त्रुचं । हिरण्यवर्णा इति चतुर्भिर्ऋचैः । नमः
 शश्वे च मन्त्रो भवेत्यादिमन्त्रं स्नाप्यमानो जपेदिति शेषः ।

यदाह मन्त्रः ।

आपोहिष्टा त्रुचस्यैव हिरण्येति चतुर्ऋचं ।

(१) स्वाहा रुद्रावनेत्याय इति पुस्तकान्तरेपाठः ।

पुण्याहशङ्कनिनदैर्जपेत् स्नातो नराधिपः ।
 धृत्वा चैवाहते वस्त्रे युगवस्त्राभिमन्त्रिते ॥
 इति सर्वमङ्गलमाङ्गल्यैश्चन्दनादिसिः सह धीतं कार्पासयुतं
 विभ्रयात् ।

विष्णुधर्मोत्तरे ।

—०—

एवं स्नातो धृते दृष्ट्वा वदनं दर्पणे तथा ।
 मङ्गलालम्बनकुट्वा धीतवासाः समाहितः ॥
 अभ्यर्चनं ततः कुर्याद्देवादीनां पृथक् पृथक् ।
 आयुधाभ्यर्चनकुट्वा वाहनाभ्यर्चनस्तथा ॥
 राजचिह्नार्चनं कृत्वा ह्यलङ्कुर्यात्तनुं स्वकं ।
 अनुलेपनमादद्यात् श्रीसूक्तेनाभिमन्त्रितं ॥
 त्रियम्बातर्भयि धेहि मन्त्रः सुमनसां लभेत् ।
 आयुष्यं वर्चस्यमिति मन्त्रीऽलङ्करणे स्मृतः ॥
 ततोऽनुलिप्तसुरभिः स्रग्वी रुचिरभूषणः ।
 केशवाभ्यर्चनं कृत्वा वज्रस्थानं व्रजेदिति ॥
 अथर्वपरिशिष्टे ।

पुण्याहं वाचयित्वास्य प्रारम्भं कारयेद्बुधः ।
 तिथिनक्षत्रसंयुक्तमुहूर्त्तकरणे शुले ॥
 सच्चैर्घोष इति त्र्यम्बाभिमन्त्रा पुरोहितः ।
 सव्यं त्र्यम्बिनादेन ह्यभिषेके ह्यलङ्कृतः ॥
 ततः सम्पूजयेदिति शेषः ।

अभिषेकानन्तरं धीतवासाः स्नाचान्तो देवगुरुविप्रान्

सम्पूजयेत् । ध्वजायुधादीनि तु सम्पूज्य स्वस्वमन्त्राभिमन्त्रितानि
अपरस्मात् पुण्यस्नानाद्यध्याकालं धारयेत् । देवेनेत्यादिविजयाख्येन
देवीमन्त्रेण शैवागमप्रसिद्धेनालङ्कारधारणं ।

ध्वजादिमन्त्रास्तु । विष्णुधर्मोत्तरे ।

—००(a)००—

राम उवाच ।

कृत्वाश्वकेतुकरिणां पताकाखङ्गचर्मणां ।
तथा दुन्दुभिचापानां ब्रूहि मन्त्राश्चमानव ॥
पुष्कर उवाच ।

शृणु मन्त्रान् महाभाग भगवान् यान् पराशरः ।
गालवाय पुरोवाच सर्वधर्मभृताम्बरः ॥
यथास्वदृष्टादयति शिवायेमां वसुधराम् ।
तथाञ्छादय राजानं विजयारोम्यवृद्धये ॥

कृत्वा मन्त्रः ।

गन्धर्वपञ्चराजस्य माभूवाः कुलदूषकः ।
ब्रह्मणः सत्त्ववाक्येन सीमस्य वदन्त्यस्य च ॥
प्रभावाच्च हुताग्नस्य वदन्त्यं तुरङ्गम ।
तेजसा चैवसूर्यस्य मुनीनान्तपसा तथा ।
वृद्धस्य ब्रह्मचर्येण पवनस्य वसेन च ॥
स्मरन् त्वं राजपुत्रोऽसि कौस्तुभं च त्रिंशत् स्मर ।
यां गतिं ब्रह्मज्ञा गच्छेत् पित्रेण मातुष्येण च ॥
भूम्यर्धेऽनृतवादी च चतुर्युग पराङ्मुखः ।

सूर्याचन्द्रमसौ वायुर्यावत्पश्यति दुष्कृतं ।
 व्रजेतैताङ्गतिं क्षिप्रं तच्च पापं भवेत्तव ॥
 निष्कृतिं यदि गच्छेन्नो युष्ते तस्मिन् तुरङ्गम ।
 रिपून् विजित्वा समरे सह भर्षा सुखी भव ॥

अश्वमन्त्रः ।

शक्रकेतो महावीर सुपर्णस्वामुपाश्रितः ।
 पवित्रार्ह्येन ते यस्तु तथा नारायणध्वजः ॥
 कम्पमेयोऽमृताहर्ता नागारिर्विष्णुवाहनः ।
 आयामयो दुराधर्षो रणे देवारिसुदनः ॥
 गरुत्मान्मारुतगतिस्त्वयि सन्निहितः स्थितः ।
 साश्ववर्मायुधान् योधान् यत्रास्माकं रिपून् दह ॥

ध्वजमन्त्रः ।

कुमुदैरावणः पद्मः पुष्पदन्तोऽथऽवामनः ।
 सुप्रतीकोऽञ्जनो नील एतेऽष्टौ देवयोनयः ॥
 तेषां पुष्पाश्च पौष्पाश्च बलान्यष्टौ समाश्रिताः ।
 भद्रो मन्दो मृदुश्चैव गजः सङ्कीर्ण एव च ॥
 वने वंशे प्रसृतास्ते स्मर योनिं महागज ।
 पान्तु त्वां वसवो रुद्रा आदित्याः समरुहणाः ।
 भर्तारं रक्ष नागेन्द्र समयः प्रतिपाद्यतां ॥
 अवाप्नुहि जयं युष्ते गमने स्वस्ति नो व्रज ।
 त्रीस्ते सोमादबलं विष्णोस्तेजः सूर्याञ्जवोऽनिलात् ॥
 सूर्य्यं भिरोऽर्चयं रुद्राद्यशो देवात् पुरन्दरात् ।
 युष्ते रक्षन्तु नाग त्वां दिशश्च सहदेवतैः ।

अश्विनी सहगन्धर्वः पान्तु त्वां पर्वताः सदा ॥

हस्तिमन्त्राः ।

हुतभुग्वसवो रुद्रा वायुः सोमो महर्षयः ।

नागकिन्नरगन्धर्वा यक्षभूतगणग्रहाः ॥

प्रमथास्तु सहादित्यैर्भूतेशो मातृभिः सह ।

शक्रः सेनापतिस्तन्दो वरुणश्चाश्रितस्त्वयि ।

प्रदहन्तु रिपून् सर्वान् राजा विजयमृच्छतु ॥

यानि प्रयुक्तान्यरिभिर्भीषणानि समन्ततः ।

पतन्तूपरि शत्रूणां हतानि तव तेजसा ॥

कालनेमिबधे यद्वदयहत्त्रिपुरघातने ।

हिरण्यकशिपोर्यद्वद्वधे सर्वासुरेषु च ।

नीलां खेतामिमां दृष्ट्वा नश्यन्त्याशु नृपारयः ॥

व्याधिभिर्विविधैर्धोरैः शस्त्रैश्च युधि निर्णिताः ।

पूतना रेवतीनाम्ना कालरात्रीति पठ्यते ।

दहत्वाशु रिपून् सर्वान् पताके त्वामुपाश्रितः ॥

पताकामन्त्रः ।

असिर्विशसनः खड्गस्तीक्ष्णधारी दुरासदः(१) ।

त्रीगर्भो विजययैव धर्मपालो नमोऽस्तु ते(२) ॥

इत्यष्टौ तव नामानि स्वयमुक्तानि वेधसा ।

नक्षत्रं कृत्तिकाख्यं त्वं गुरुदेवो महेश्वरः ॥

रोहिण्यश्च शरीरन्ते दैवतन्तु जनाहनः ।

(१) तीक्ष्णधर्मी दुरासद इति पुलकान्तरे पाठः ।

(२) चर्मदारुणयैव च इति पाठान्तरं ।

पिता पितामही देवः स त्वं पालय सर्वदा ॥

खड्गमन्त्रः ।

चर्मप्रदस्त्रं समरे चर्मसैन्योपमो ह्यसि ।

रक्ष मां रक्षणीयोऽहन्तवानघ नमोऽस्तु ते ॥

चर्ममन्त्रः ।

दुन्दुभे त्वं सपत्नानान्तथा विजयवर्धनः ।

यथाजीमूतघोषेण ह्वयन्ति जलचारिणः ।

तथास्तु तव शब्देन हर्षोऽस्माकं सुदावह ॥

यथाजीमूतशब्देन योणान्त्रासोऽभिजायते ॥

तथा च तव शब्देन अस्यन्त्यस्मद्विधो रणे ॥

दुन्दुभिमन्त्रः ।

सर्वायुधमहामात्र सर्वदेवारिसूदन ।

चाप त्वं सर्वदा रक्ष साकं शरवरैः सदा ॥

चापमन्त्रः ।

द्वितीयायां वेद्याभिति पूर्वन्तावहेदित्रयं कार्यमित्युप-
पादितं । तत्र पश्चिमवेद्यां स्नानं । दक्षिणवेद्यां ग्रहयज्ञाः ।
इत्यन्तु ग्रहहोमापेक्षया वक्ष्यमाणद्वितीयहोमसम्बन्धितया वायव्य-
वेदी वस्तुगत्या तृतीयापि द्वितीयाशब्देनोच्यते । देवानां वदने
स्थान इति स्वर्गद्वयकल्पोक्तविधिना कृते अग्निमुखे रुद्रादिदेव-
ताभ्यः पूर्वपूजितमण्डलदेवताभ्यश्च प्रणवादिभिस्तुर्थ्यन्तैः स्वाहा-
युक्तैर्नामभिः प्रत्येकमष्टाविंशतिः अष्टोत्तरशतं वा वृताहुताहु-
तीर्जहुयात् ।

तदुक्तं विष्णुधर्मोत्तरे ।

—०४०—

तेषामेव ततो वक्त्रो चतुर्थस्तैः स्वनामभिः ।

ओंकारपूर्वं जुहुयादुष्टं बहु पुरोहित इति ॥

निमित्तानीत्यादि होमे क्रियमाणे प्रदक्षिणसिखत्वमुहामदी-
मित्वं शुभध्वनित्वमधूमत्वमित्यादीनि शुभसूचकानि निमित्तानि
वक्त्रो लयेत् ।

आह गार्ग्यः ॥

ततः पुरोहितो वक्त्रावन्वारब्धे नृपे यजेत् ।

व्रास्यकं यजामहे यत इन्द्रं भनामहे ॥

वृहस्पतेः परिदीयत इदं विष्णुर्धिचक्रमे ।

आवायो भूषणचिना मन्त्रैरेतैर्यथाक्रमं ॥

समित्तिलाज्यदूर्वाभिस्तथा विष्वक्फलैरपि ।

प्रत्येकं यतमष्टौ च होमो वा स्युर्होमावराः ॥

आथर्वणपरिशिष्टे ।

चतुर्होत्रविधानेन जुहुयाच्च पुरोहितः ।

चतुर्दिक्षु स्थितैर्विप्रैर्वेदवेदाङ्गपारगैः ॥

विष्वाहारः फलाहारः पयसा वापि वर्त्तयेत् ।

सप्तरात्रं घृताग्नी वा ततो होमं प्रयोजयेत् ॥

गव्येन पायसं कुर्यात् सोवर्णेन शुवेण तु ।

वेदानामादिभिर्मन्त्रैर्महाव्याहृतिपूर्वकैः ॥

शर्श्ववर्शगणचैव तथा स्यादपराजितः ।

आयुष्याद्याभयचैव तथास्त्रस्ययनो गणः ॥

एतान् पञ्च गणान् जुत्वा वाचयेत्तु द्विजोत्तमान् ॥

शर्मावर्माद्याः सपन्न इत्यादिः ।

अपराजितः विश्वरम्भ मान इत्यादिः । आयुष्याद्यः प्राणा-
पानादीत्यादिः । अभयः सस्त्रिदाविशामिमादिः । स्वस्वयनो
सूपारेपातमित्यादिः । ततो गृह्णीतविधिमा पुण्याहवाचनं ।
ततो राजासनमिति । ततो होमानन्तरं तस्यामेव वेद्यामग्नेरुत्तर-
भागे प्रागुक्तानङ्गहानि चर्माण्यास्तीर्थं तदुपरि राजासनं सिंहा-
सनमाहृत्य स्थापयेत् । तस्य तर्प्यापरिक्रमेण वृषदंशादिचर्मा-
ण्यास्तोत्रं राजोपवेशयेत् । उपविष्टे तु राजनि खञ्जमन्त्रैस्ताभ्य
एव देवताभ्यः पृथगुक्तैस्त्रिलैः पुनोहितो जुत्वा श्रेयस्य स्विष्टकृत्
प्रायश्चित्तपूर्णाहुत्यन्तस्यान्तरात्तरस्य समीपे कृत्वा यान्तु देवगणा
इत्यादिमन्त्रेण प्राञ्जलिर्देवताविसर्जनं कुर्यात् ।

तदुक्तं विष्णुधर्मात्तरे ।

—०००(११०००)—

वज्रे रुत्तरदिग्भागे तथा प्रागुक्तचर्माणा ।

सिंहासनं न्यसेत् पृष्ठे शुभास्तरणसंयुतं ॥

ततस्तु तत्र चर्माणि प्राग्ग्रीवाणि तु विन्यसेत् ॥

वृषस्य वृषदंशस्य कुरीय पृषतस्य च ।

तेषामुपरि सिंहस्य व्याघ्रस्य च ततः परं ॥

ध्रुवोसिऽद्योरसि मन्त्रेण नृपं तत्रोपवेशयेत् ।

वृषोबलीवर्हः । वृषदंशो मार्जारः । कुरुगौरिसृगः । पृषत-
शितसृगः ।

दर्भपाणिर्भवेद्राजा तथैव च पुरोहितः ।

तयोर्हस्तगतावन्यो दर्भौ संग्रहयेद्विजः ॥

तयोर्नृपपुरोहितयोः पाणिगतौ दर्भावन्यो द्विजो हीमकाले
ग्रहदेशे संग्रहयेत् ।

ततः पुरोधा जुहुयाद्वाह्मैर्मन्त्रैर्घृतं शुचिः ।

रीद्रवैष्णववायव्यशक्रसौम्यैः सवारुणैः ।

वार्हस्पत्यैस्ततः कुर्यात्तन्त्रमुत्तरमंजकं ।

वाह्मेर्वाह्मजज्ञानमित्यादयः । रीद्रा अश्वरुद्रा इत्यादयः ।
वैष्णवा विष्णोर्नृकमित्यादयः । वायव्या आपाया इत्यादयः ।
शक्रः तातारमिन्द्र इत्यादयः । सौम्या आप्यायस्त्रित्यादयः ।
वरुणा इमं मे वरुण इत्यादयः । वार्हस्पत्या एहसते अतोय
इत्यादयः ।

नृपतिस्त्वथ देवज्ञानं पुरोधसमन्त्रयेत् ।

गोभूहिरण्यरत्नैश्च अन्यानपि कृपागतान् ॥

स्थानदेवान् पुरोदेवान् नदीकुलं चतुष्पथं ।

अभयञ्च जने देयं गौगोक्षर्गं समाचरेत् ॥

अलङ्कृत्य यथान्यायं सितीती वस्त्रभूषितौ ।

देवन्देवोच्चं विज्ञाप्य व्रत्यनम्यांश्च मौचयेत् ॥

न मौचेद्राज्ञः सन्द्धानन्तः पुरकतागमः ।

विभवानुरूपभावेः पुरे पृज्ञं समारभेत् ॥

सिंहासनं समास्थाय चतुष्कोष्ठतयातिथेः ।

दीपे रजतपात्रस्यैस्तोत्रार्घ्याष्टतवन्दिताः ।

रोचनादि तत्राप्येहर्पणं मङ्गलानि च ॥

ततो ज्योतिषिकान् पुरोहितञ्च गोभूहिरण्यादिभिरभ्यर्च्य
अन्यानपि श्रोत्रियादीन् क्रमागतांश्च सम्पूज्य गृहदेवान् पूरो-
देवांश्च न दीकूलञ्च चतुष्पथञ्च पूजोपहारैरर्चयेत् । 'गोगोक्षर्गं
गोमिथुनमित्यर्थः' । तो च धेनुवृषभौ खेतवर्णा वस्त्रालङ्कारादि-
भूषितौ । देवं महेष्टरं देवीञ्च भगवतीं प्रीत्यर्थं चतुष्टजामीति
विज्ञाप्योत्सृजेत् । नृपशरीरे अन्तःपुरे च कृतापराधान्विहाय
बन्धनं मोचयित्वा पताकातोरणादिभिः पुरे पूजां कुर्यात् ।
चतुष्की रत्नवस्त्रोरचना सभाविशेषो वा । दीपैर्निराजित इति
शेषः । वन्दितं वन्दनं विशेषश्चेत्तृतीया । ततो गोरोचनादधि-
दूर्वादीनि च दपञ्चं मङ्गलानि च पश्येत् ।

आश्वर्षणपरिशिष्टे ।

प्रोक्तानि मङ्गलान्यष्टौ ब्राह्मणो गौर्हुताशनः ।
भूमिसिद्धार्थकाः सर्पिः शमी व्रीहियवो तथा(१) ॥
एतानि सततं पश्यन् सृष्ट्यर्चय्यर्चयन्नपि ।
न प्राप्नोत्यापदं राजा श्रियं प्राप्नोत्यनुत्तमां ॥
तथा सिंहासनं रुद्र पताका वा क्रमागता ।
चामरञ्च असंयुक्तां प्रतीहारविभूषितं ।
मत्तद्विभं चतुष्कञ्च चतुर्हिचूपकल्पयेत् ॥
उपविष्टस्ततो राजा प्रजानां कारयेद्वितं ।
आकरा ब्राह्मणा गावस्त्रीबालजडरोगिणः ॥
ततस्तु दर्शनं देयं ब्राह्मणानां नृपेण तु ।
अग्नीप्रभृतिमुखाणां स्त्रीजनञ्च नमस्करेत् ॥

(१) चिरणं सर्पिरादित्य चापोराजा तथाहम इति क्वचिन् पाठः ।

आश्विषस प्रदद्युस्ते तुष्टा जमपदा भुवि ।
 एवं प्रजानुरज्येत पृथ्वी च वशगा भवेत् ॥
 पुरोहितं मन्त्रिणञ्च सेनाध्यक्षं तथैव च ।
 अश्वत्थञ्च गवाध्यक्षं गोष्ठागारपतिं तथा ॥
 भाण्डागारपतिं वैद्यं दैवज्ञञ्च यथाक्रमं ।
 यथार्हेण तु योगेन सर्वान् संपूजयेत्तृपः ॥
 दूर्वासिद्धार्थकान् सर्पिः शमीर्मीहिग्रीवौ तथा ।
 शक्तानि चैव पुण्याणि मूर्ध्नि दद्यात् पुरोहितः ॥
 अथर्वविहितो ऋषि विधिः पुण्याभिषेचने ।
 राजा ज्ञातो मर्हो भुङ्क्ते शकलोकञ्च गच्छति ॥

देवीपुराणे ।

एवं पुण्ये भवाप्नोति कर्त्ता राज्यायुसम्पदः ।
 विनापि चार्धफलदं पुण्यं पुण्याभिषेचनं ॥
 राष्ट्रोत्पातोपसर्गेषु धूमकेतोष दर्शने ।
 ग्रहोपमर्हने चैव पुण्यस्नानं समाचरेत् ॥
 नास्ति लोके स उत्पातो यो ज्ञानेन न शाम्यति ।
 मङ्गलञ्च परं नास्ति यदस्मादतिरिच्यते ॥
 आधिराज्यार्थिनो राज्ञः पुत्रजन्माभिकाङ्क्षिनः ।
 तत्पूर्वमभिषेके च विधिरेष प्रशस्यते ॥
 देवेन मन्त्रये दत्तं तेनाप्यशनसे पुनः ।
 उशनसो गुरोः प्राप्तं ततो देवमभाङ्गतं ॥
 महेन्द्रार्थमुवाचेद् ब्रह्मकीर्त्तिर्वृक्षस्यतिः ।
 स्नानमायुःपजावृद्धिसौभाग्यकरसुखसमं ॥

अनेनैव च तीयेन हस्त्यक्षं स्नापयेन्नृपः ।
 तन्नामयविनिर्मुक्तं परां वृद्धिमवाप्नुयात् ॥
 प्रतिसंवत्सरं कार्यमभिषेकस्तु पार्थिव ।
 मण्डलीकनरेन्द्राणां सामन्ताधिपतेरपि ॥
 सामन्तानां सदा कार्यं विघ्नेश्वरमख्यं शुभं ।
 स्त्रियो लक्षणयुक्ताया यस्या न भवने सुखं ।
 तस्येदङ्कारयेत् स्नानं सर्वकामप्रसिद्धिदं ॥

इति पुण्यस्नानविधिः ।

उदगग्रन आपूर्यमाणपक्षस्यैकराजमवरार्द्धमुपोष्य तिथेन
 पुष्टिकामः स्थालीपाकं अपयित्वा महाराजमिष्ट्वा तेन सर्पिष्मता
 ब्राह्मणान् भोजयित्वा पुष्यार्धेण सिद्धिं वाचयेत् । एवमपरापर-
 स्नात्तिथ्यादौ द्वितीये त्रीस्तृतीये एवं संवत्सरमभ्युक्षयेन महान्त-
 म्योषं पुष्पाति आदित एवोपवासः । अवरार्द्धं अवरं । अवरता-
 चेकरात्रोपवासस्यापूतस्य पुंसो बह्वपवासपक्षापेक्षया 'महाराजः
 कुवेरः । तेन हुतगिष्टेन चरुणा पुष्यार्धेण सिद्धिं वाचयेत् पुष्टिः
 सिद्धिरस्त्विति वाचयेत् । एवं पूर्ववच्चरुणा महाराजेष्टिब्राह्मण-
 भोजनादि कार्यं । द्वौ द्वितीये द्वौ ब्राह्मणौ द्वितीये पुष्ये भोज-
 येदित्यर्थः । एवं संवत्सरमभ्युक्षयेन पूर्ववत्तृतीयं चतुर्थं
 तिथिपूर्वोत्तरेष्ट्या ब्राह्मणा भोजनीया इत्यर्थः । आदित
 एव प्रथमपुष्ये पूर्वोत्तरे चेत्यर्थः ।

इत्यापस्तम्बोक्तं पुण्यव्रतं ।

दारुभ उवाच ।

स्त्रिणां धर्मं द्विजश्रेष्ठ उपवाससमुद्भवं ।

कथयस्व यथातत्त्वमुपवासविधिं यः ॥
कुमार्थाः स्वगृहस्थाया विधवायाश्च सत्तम ।
धर्मं प्रब्रूह्य शेषेण भगवन् प्रीतिकारकं ॥

पुलस्त्य उवाच ।

श्रूयतामखिलं ब्रह्मन् यदेतदनुष्ठेयम् ।
उपकाराय च स्त्रीणां त्रिषु लोकेषु विश्रुतं ॥
प्रश्नमेतं पुरा देवी शैलराजसुता पतिं ।
पप्रच्छ शङ्करं ब्रह्मन् कैलासशिखरस्थितं ॥

देव्युवाच ।

कुमारीभिश्च देवेश गृहस्थाभिश्च केशवः ।
विधवाभिस्तथा स्त्रीभिः कथमाराध्यते वद ॥

ईश्वर उवाच ।

साधु साधु त्वया पृष्टमेतन्मारायणाश्रयं ।
उपवासादियत् कर्म श्रूयतामस्य यो विधिः ॥
यच्च परिसमासाद्य नारीह सुश्रमेधते ।
दुःशीलेऽपि हि कामार्थो नारी प्राप्नोति भर्त्सरि ॥
अनाधारा जगन्नाथं सर्व्वं लोकेश्वरं हरिं ।
कथमाप्नोति चेन्नारी सर्व्वं लोकगुणान्वितं ॥
सुकलत्रयुतन्मस्माद्भुतमश्नुतस्तुष्टिदं ।
कर्त्तव्यं लक्षणं तस्य श्रूयतां वरवर्ष्मिनि ॥
यच्चोर्त्वा सर्व्वं नारीणां येयः प्राप्नोत्यमंगलं ।
ऐहिकञ्च सुखं प्राप्य मृता स्वर्गसुखान्यपि ॥
अनुज्ञाप्य स्वपिष्टती माष्टतश्च कुमारिका ।

पूजयेत्तु जगन्नाथं भक्त्या पापहरं हरिं ॥
 शिषूत्तरेष्वथर्च्य पतिकामा कुमारिका ।
 माधवायेति वै नाम जपेन्नित्यमतन्द्रिता ॥
 प्रियङ्गुणा रक्तपुष्पैर्मधुकैः कुसुमैस्तथा ।
 समभ्यर्च्यार्च्यते दद्यात् कुङ्कुमेनानुलेपनं ॥
 सर्वोषधिभिः सुस्नाता तमाराध्य जगत्पतिं ।
 नमोऽस्तु माधवायेति होमयेन्मधुसर्पिषा ॥
 सदैवमुत्तरायोगे समभ्यर्च्य जनार्दनं ।
 श्रीभक्तं पतिमाप्नोति प्रेत्य स्वर्गं च गच्छति ॥
 अतिबाल्ये च यत्किञ्चित्तथा पापमनुष्ठितं ।
 तस्माद्विमुच्यते पापात् सुखिनौ चैव जायते ॥
 अष्टेनैकेन तन्वङ्गि व्रतं प्राप्ता यदिच्छति ।
 तदेव प्राप्नुयाद्भद्रे नारायणपरायणा ॥
 वस्त्रासप्रौढनं कार्यं यथाशक्त्या च वै हरेः ।
 पारशान्ते महाभागे भोजयेद्ब्राह्मणोत्तमान् ॥
 इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं सुकलनप्राप्तिव्रतं ।

— ००० —

अथ ज्येष्ठाव्रतं ।

तत्र लिङ्गपुराणात् ।

कृषयश्चतुः ।

मायावित्त्वं श्रुतं विष्णोर्देवदेवस्य चक्रिणः ।
 कथं ज्येष्ठासमुत्पत्तिर्देवदेवात्मनार्हनात् ।
 वक्तुमर्हसि चास्माकं रोमहर्ष च तत्त्वतः ॥

सुत उवाच ।

अनादिनिधनः श्रीमान् ध्यात्वा नारायणः प्रभुः ।
जगद्बिधमिदं शक्ते मोहनाय जगत्पतिः ॥
त्रिपूर्वैर्ब्राह्मणान् वेद वेदधर्मान् सनातनान् ।
त्रियं पद्मां तथा योज्य भागमेकमकारयत् ॥
ज्येष्ठामलक्ष्मीमशुभां वेदबाह्यां नराधमान् ।
अधर्माच्च महातेजा भागमेकमकारयत् ॥
अलक्ष्मीमयतः सृष्ट्वा पञ्चात्पद्मां जनार्दनः ।
ज्येष्ठा तेन समाख्याता ह्यलक्ष्मीर्द्विजसत्तमाः ॥
अमृतोद्भववेलायां सुधानन्तरमुत्थिता ।
अयतः सा समुत्पन्ना ज्येष्ठा इति च वैश्रुता ॥
श्रीरत्नन्तरमुत्पन्ना पद्मा विष्णुपरिग्रहा ॥
दुःसहो नाम विप्रर्षिरुपयेमिः शुभान्तदा ।
ज्येष्ठां तां परिपूर्णार्थी मनसा वीक्ष्य निष्ठिता ॥
लोके चचार हृष्टात्मा तथा सह मुनिस्तदा ॥
यस्मिन् घोषो हरेयैव हरस्य च महाजनः ।
वेदघोषस्तथा विप्रा होमधूमस्तथैव च ॥
ओषिथी वाच यत्रासीत् तत्र तत्र भयार्हिता ।
पिपास कर्षी संयाति चावमाना इतस्ततः ॥
ज्येष्ठामिव विधां हृष्टा दुःसहो मोहमागतः ।
तथा सह वनं गत्वा चचार स तदा मुनिः ॥
तत्रायानं महाजानं मार्कण्डेयमपश्यत् ।
प्रक्षिपत्य महाजानं दुःसहो मुनिमब्रवीत् ।

भार्य्यं भगवन् मद्यं न स्थास्यति कथञ्चन ॥

किं करिष्यामि विप्रर्षे ज्ञानया सह भार्य्यया ।

प्रविशाम्यनया कुच कुच न प्रविशामि वै ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

शृणु दुःसह सर्वं त्वमकीर्त्तिरशुभान्विता ।

अलक्ष्मीरतुला चेयं ज्येष्ठा इत्यभिगच्छिता ॥

नारायणपरा यत्र वेदमार्गानुसारिणः ।

रुद्रभक्ता महात्मानो भस्मीकूलितविग्रहाः ।

स्थिता यत्र जना नित्यं न विशेषाः कथञ्चन ॥

नारायण हृषीकेश पुण्डरीकाक्ष माधव ।

अच्युतानन्द गाविन्द वासुदेव जनार्दन ।

नृसिंह वामनाचिन्त्य राघवेति च ये जनाः ।

वक्ष्यन्ति सन्ततं हृष्टास्तेषां धनगृहादिषु ।

आरामे चैव गोष्ठेषु न विशेषाः कथञ्चन ॥

ज्वालाजालकरालं यत् सहसादित्यसन्निभं ।

चक्रं त्रिणोरतीवोपस्तेषां हन्ति सदाशुभं ॥

स्वाहाकारो वषट्कारो गृहे यस्मिन् प्रवर्त्तते ।

तद्विधा चान्यतो गच्छ सामघोषेऽथ यत्र वा ॥

वेदाभ्यासरता नित्यं नित्यकर्मपरायणाः ।

वासुदेवार्चनरता दूरतस्तान् विसर्जय ॥

अग्निहोत्र गृहे येषां लिङ्गार्चा वा गृहेषु च ।

वासुदेवतनुर्व्यापि चण्डिका यत्र तिष्ठति ॥

दूरतो व्रज तान् हित्वा सर्वपापविवर्जितान् ।

नित्यनैमित्तिकैर्यज्ञैर्यं यजन्ति महेश्वरं ।

तान् हित्वा व्रज वान्यत्र दुःसह त्वं सहानया ॥

श्रोत्रिया ब्राह्मणा गावो गुरवोऽतिथयः सदा ।

रुद्रभक्ताश्च पूज्यन्ते यैर्नित्यं तान् विसर्जय ॥

दुःसह उवाच ।

यस्मिन् प्रवेशो योग्यो मे तद्बुद्धिं मुनिसत्तम ।

त्वदाक्याद्भयनिर्मुक्तो विशाम्येषां गृहे सदा ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

यत्र भार्या च भर्ता च परस्परविरोधनौ ।

सभार्यस्त्वं गृहं तस्य विशेषा भयवर्जितः ॥

देवदेवो महादेवो रुद्रस्त्रिभुवनेश्वरः ।

विनिद्रो यत्र भगवान् विशेषा भयवर्जितः ॥

वासुदेवे रतिर्नास्ति यत्र नास्ति सदा हरिः ।

जपहोमादिकं नास्ति भस्म नास्ति गृहे नृणां ॥

पर्वण्यभ्यर्चनं नास्ति चतुर्दश्यां विशेषतः ।

कृष्णाष्टम्याश्च रुद्रस्य सन्ध्यायां भयवर्जितः ॥

चतुर्दश्यां महादेवं न यजन्ति च यत्र वै ।

विष्णोर्नामविहीनास्यैरशुभास्यैर्दुरात्मभिः ॥

नमस्कारश्च सर्वाय शिवाय परमेष्ठिने ।

ब्राह्मणे च नरा मूढा न वदन्ति दुरात्मकाः ।

तत्र वै सततं वक्ष्ये सभार्यस्त्वं समाविश ॥

वेदघोषो न यत्रास्ति गुरुपूजा न यत्र च ।

पितृकर्मविहीनाश्च सभार्यस्त्वं समाविश ॥

रात्रौ रात्रौ गृहे यस्मिन् कलहो वर्त्तते मिथः ।
 अनया सार्धमनिशं विश्वं त्वं भयवर्जितः ॥
 लिङ्गाङ्गी नास्ति यस्यैव यस्य नास्ति तपो दमः (१) ।
 रुद्रभक्तिविनिन्दा वा तत्रैव विश्वं निर्भयः ॥
 अतिथिः अतिथिो वापि गुरुर्वा वैष्णवोऽपि वा ।
 न सन्ति यद्गृहे गावः सभार्यस्त्वं समाविश ॥
 बालानां प्रेक्ष्यमाणानां यत्र वृद्धा हि भक्षकं ।
 भक्षन्ति तत्र संव्रष्टः सभार्यस्त्वं समाविश ॥
 अनभ्यर्च्य महादेवं वासुदेवमथापि वा ।
 अङ्गुत्वा विधिवद्भुज्यं यत्र तत्र समाविश ॥
 पापकर्म्मरता मूढा दयाहीनाः परस्परं ।
 गृहे यस्मिन् समासन्ने देशे तत्र समाविश ॥
 प्राकारागारभिदयाऽसावन्ववेष्टा कुटुम्बिनी ।
 तद्गृहं ननु समासाद्य वस नित्यमनन्यधीः ॥
 यत्र कण्टकिनी वृक्षा यत्र निष्पाववक्त्ररौ ।
 ब्रह्मवृक्षश्च यत्रास्ति सभार्यस्त्वं समाविश ॥
 अगस्त्यार्कादयो वापि बभ्रुजीवो गृहेषु वै ।
 करवीरं विशेषेण नन्द्यावर्त्तमत्रापि वा ।
 मल्लिका वा गृहे येषां सभार्यस्त्वं समाविश ॥
 कन्या च यत्र वै वल्लो रोहितोऽथ जटी गृहे ।
 वकुलः कदली यत्र सभार्यस्त्वं समाविश ॥
 ताक्षस्तमास्तो भङ्गातस्तिन्निङ्गीक्ष्यमेव च ।

(१) जपीरम इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

कदम्बः खदिरं वापि सभार्यस्त्वं समाविश ॥
 न्यग्रोधी वा गृहे वेषामश्वत्थस्य तथैव च ।
 उडुम्बरः सपनसः सभार्यस्त्वं समाविश ॥
 यस्य काकी गृहं विन्देदारामे वा गृहेऽपि वा ।
 द्विज्येन सुच्छितो वापि सभार्यस्त्वं समाविश ॥
 एकच्छागं हिरावेयं त्रिगणं पञ्चमाहिमं ।
 षडंशं सप्तमातङ्गं सभार्यस्त्वं समाविश ॥
 यस्य काली गृहे देवी प्रेतरूपा च डाकिनी ।
 चेचपातोऽथवा तत्र सभार्यस्त्वं समाविश ॥
 भिक्षविम्बश्च वै यस्य गृहे चपणकं तथा ।
 बीजं वा विम्बमाहृतं तत्र तूर्णं समाविश ॥
 शयनासनकासेषु भोजनासनवृत्तिषु ।
 येषां वदति वै वाची नामानि न हरेः सदा ।
 तद्गृहहन्ते समाख्यातं सभार्यस्थं समाविश ॥
 पाषण्डा वारनिरताः श्रौतधार्तरिहितकृताः ।
 विष्णुभक्तिविनिमुक्ता महादेवविनिन्दकाः ।
 नास्ति काच शवा यत्र सभार्यस्थं समाविश ॥
 नद्या च भगवान् विष्णुः शक्रः सर्व्वं सुरेश्वरः ।
 शिवप्रसादभावेति न वदन्ति दुरात्मकाः ॥
 नद्या च भगवान् विष्णुः शिवस्य सम एव च ।
 वदन्ति मूढाः खद्योतं भानोर्वा मूढचेतसः ॥
 तेषां गृहे तथा चेतरे चावासे वा सज्जनया ।
 विश्वं भुङ्क्ते तेषां मिष्टान्नं त्वमनन्धधीः ॥

अश्रयन्ति केवलं मृदाः पक्कमन्नं विचेतसः ।
 स्नानमङ्गलहीनाश्च तेषां त्वं गृहमाविश ॥
 या नारी शीघ्रविभ्रष्टा देहसंस्कारवर्जिता ।
 सर्वभक्षरता नित्यं तस्या स्नानं समाविश ॥
 मद्यपानरताः पापा मांसभक्षणतत्पराः ।
 परदाररता मर्त्याक्षेपां त्वं गृहमाविश ॥
 पर्वण्यनर्चनरता मैथुने वा दिवा रताः
 सन्ध्यायां मैथुने वापि गृहे तेषां समाविश ॥
 पृष्ठतो मैथुनं स्त्रीणां स्नानवन्मृगवच्च यः ।
 जले वा मैथुनं कुर्यात् सभार्यस्त्वं समाविश ॥
 रजस्वलाङ्गनां गच्छेच्चाण्डालीं वा नराधमः ।
 कन्यां वा गामजां वापि सभार्यस्त्वं समाविश ॥
 बहुना किं प्रलापेन नित्यकर्म्मवह्निष्कृताः ।
 रुद्रभक्तिविहीना ये गृहे तेषां समाविश ॥
 शृङ्गैर्हि व्योषधैः क्षौद्रैः शेषमालिष्य गच्छति ।
 भगद्रावं करोत्यस्य सभार्यस्त्वं समाविश ॥
 इत्युक्त्वा स मुनिः श्रोतुमान् निमील्य नयने तदा ।
 ब्रह्मर्षिर्ब्रह्मसङ्गाश्चैवान्तरधीयत ॥
 दुःसहोऽपि यथोक्तानि स्थानानि समुपेयिवान् ॥
 विशेषाद्देवदेवस्य विष्णोर्निन्दारतात्मनां ।
 सभार्यो मुनिशार्दूल सैषा ज्येष्ठा इति स्मृता ।
 दुःसहस्तामुवाचेदं तङ्गागाश्रयसंस्तरे ।
 आसन् त्वमपि चैवाहं प्रपश्यामि रसातलं ।

आवयोः स्थानमालोक्य निवासार्थं ततः पुनः ॥
 आगमिष्यामि ते पार्श्वमित्युक्ता तमुवाच सा ।
 किमग्राणि महाभाग की म दास्यति वै बलिं ॥
 इत्युक्तस्त्वां मुनिः प्राह यास्त्रियस्त्वां यजन्ति वै ।
 बलिभिः पुष्पधूपैश्च न तासांस्त्वं गृहं विश ॥
 इत्युक्ता प्राविशत्तत्र पातालनिलयङ्गतः ।
 अद्यापि स च नायातस्तेन सा जलसंस्तरे ।
 ग्रामे कर्कटवाह्ये तु नित्यमास्तेऽशुभा पुनः ॥
 प्रसङ्गाद्देवदेवेशी विष्णुस्त्रिभुवनेश्वरः ।
 लक्ष्मीजुष्टस्तथाऽलक्ष्मीः सा तमाह जनाहं न ॥
 भर्ता गतो महाबाहो बलिं त्यक्त्वा मम प्रभो ।
 अनाथाहं जगन्नाथ वृत्तिं देहि नमोऽस्तु ते ॥
 इत्युक्तो भगवान् विष्णुः प्रसङ्गाह जनाहं नः ।
 ज्येष्ठामलक्ष्मीं देवेशो माधवी मधुसूदनः ॥
 ये रुद्रमनघं सर्व्वं शङ्करं नीललाहितं ।
 अस्त्वां हेमततीं वापि जनित्रीं जगतामपि ॥
 मङ्गला निन्द्यस्थत्र तेषां वित्तस्तवैव च ॥
 एवमेव महादेवं विनिन्द्यैव यजन्ति मां ।
 मूढा ह्यभाग्या मङ्गला अपि तेषां धनस्तव ॥
 यस्याज्ञया ह्ययं ब्रह्मा प्रमादादसते सदा ।
 ये विनिन्द्य यजन्त्येनं मत्पदम्भंशकारकाः ॥
 मङ्गला नैव ते भक्ता एवं वर्त्तन्ति दुर्गदाः ।
 तेषां धनं गृहं चैव दृष्टापूतंस्तवैव च ॥

इत्युक्त्वा तां परित्यज्यालक्ष्मीं लक्ष्मीजनार्दनः ।
 अवाप भगवान् रुद्रमलक्ष्मीचयसिद्धये ।
 तस्मात् प्रदेयस्तस्यै च बलिर्निन्द्योनरेश्वरैः ।
 विष्णुभक्तैर्न सन्देहः सर्वं यत्नेन सर्वदा ।
 अङ्गनाभिः सदा पूज्या बलिभिर्विविधैर्हिजैः ॥

भविष्योत्तरात् ।

युधिष्ठिर उवाच ।

मृतवत्सा तु या नारी काकवन्ध्या तथाऽपरा ।
 गर्भस्त्रावा तृतीया च नानादोषैश्च दूषिता ॥
 निर्दनाश्च नराश्चैव दारिद्र्योपहता स्थिताः ।
 कर्मणा केन सुच्यन्ते तन्मे ब्रूहि जनार्दन ॥
 व्रतेन केन तत्सर्वं सुखं प्राप्नोति मानवः ।
 क्षीर्णेन च जगन्नाथ तत्सर्वं कथयस्व मे ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

मासे भाद्रपदे शुक्ले पक्षे ज्येष्ठा यदा भवेत् ।
 रात्रौ जागरणं कृत्वा गीतवादित्रनिःस्वनैः ।
 एवंविधविधानेन एभिर्मन्त्रैः सुपूजयेत् ॥
 एष्टेहि त्वं महाभागे सुरासुरनमस्कृते ।
 ज्येष्ठे त्वं सर्वदेवानां मन्त्रमीपा सदा भव ॥

आवाहनमन्त्रः ।

श्वेतसिंहासनस्था तु श्वेतवस्त्रैरलङ्कृता ।
 वरश्च पुस्तकं पाशं विभ्रत्यै ते नमोनमः ॥

आसनमन्त्रः ।

ज्येष्ठे अष्टे तपोनिष्ठे ब्रह्मिष्ठे ब्रह्मवादिनि ।
क्षीराब्धौ च समुद्रूते अर्घ्यं ज्येष्ठे नमोऽस्तु ते ॥

अर्घ्यमन्त्रः ।

शार्ङ्गवाणेषु खड्गैश्च तोरनारोहदर्पणैः ।
अन्यैरप्यायुधैर्युक्तां ज्येष्ठे त्वामर्चयाम्यह ॥

प्रार्थनामन्त्रः ।

सुरासुरनरैर्वन्द्या यक्षकिन्नरपूजिता ।
पूजितासि मया देवि ज्येष्ठे त्वामर्चयाम्यहं ॥
पुत्रदारसमृद्धार्थं लक्ष्म्यासैव विव्रहये ।
अलक्ष्म्याश्च विनाशाय ज्येष्ठे त्वामर्चयाम्यहं ॥

पूजामन्त्रः ।

मन्त्रेण पूजयेज्ज्येष्ठां स्त्रीं वाऽथ पुरुषोऽपि वा ।
लक्ष्मीः सन्तानवृद्धिश्च अणिमादिगुणो भवेत् ॥
अर्चिता चर्चिता ज्येष्ठा सदा काले नृपोत्तम ।
गुरुं संपूजयेद्भक्त्या वस्त्रैराभरणादिभिः ॥
हृदाद्यैव च वर्षाणि पूजनीया प्रयत्नतः ।
यावज्जन्म तथा पूज्या विधिनानेन मानवैः ॥
ददाति वित्तं पुत्राञ्च अर्चनीया सदा स्त्रिया ।
अनेन विधिना युक्तो यो हि पूजयते नरः ॥
नारी च पूजयेज्ज्येष्ठां तस्या लक्ष्मीर्विवर्धते ।
बन्ध्या च लभते पुत्रान् दुर्भगा सुभगा भवेत् ॥
मृतवत्सा जीववत्सा काकबन्ध्या प्रजावती ।

दुःखितो हि नरः कश्चित् सुखी वसते सदा ॥
 एवं विधिविधानेन ज्येष्ठां यस्त्वेष्टयेत्तदा ।
 विघ्नस्तस्य प्रणश्येत् यथाप्नु लवणं तथा ॥
 एतद्भूतं महाश्रेष्ठं पुण्यं पापविनाशनं ।
 तन्मया कथितं सर्वं ज्येष्ठायास्ते व्रतं महत् ॥
 यथा ग्राह्यं कुरुश्रेष्ठ ज्येष्ठाव्रतं सुशोभनं ।
 नीराजने कृते चैव दीपो ग्राह्यः सुभक्तितः ॥
 नैवेद्यसहितं प्राश्य व्रतस्याग्रे युधिष्ठिर ।
 गुरुहस्तात्सदा ग्राह्यो दीपः प्रज्वलितो महान् ॥
 व्रतस्थो भक्तियुक्तस्तु शुचिः प्रयतमानसः ।
 अनेन विधिना चैव व्रतं ग्राह्यं युधिष्ठिर ॥
 ज्येष्ठा नाम परा देवी भुक्तिमुक्तिफलप्रदा ।
 यस्तु पूजयते राजंस्तस्मै स्वर्गं प्रयच्छति ॥

स्कन्दपुराणे । ईश्वर उवाच ।

मासे भाद्रपदे पक्षे शुक्ले ज्येष्ठार्चसंयुते ।
 तस्मिन् काले दिने कुर्यात् ज्येष्ठायाः परिपूजनं ॥
 तत्राष्टम्यां यदा भानुदिनं ज्येष्ठर्चमेव च ।
 नीलज्येष्ठा तु सा प्रोक्ता दुर्लभा बहुकालिका ।
 कृतस्नानो नरः कुर्यात्तस्यामन्यत वा दिने ॥
 भक्तियुक्तः शुचिः कुर्यात् ज्येष्ठादेव्याः प्रपूजनं ।
 नद्याः पूर्व्वेद्यं ग्राह्यं सिकताः शुद्धदेयजाः ॥
 देवीरूपन्तु तत्रैव ध्यात्वा वै ब्राह्मणैः सह ।
 मण्डले तान्तु संस्थाप्य देवीं हेममयीमतः ॥

स्वापयेद्भ्राजतीन्ताम्रीं लेख्यां वा द्विजसत्तम(१) ।
 आवाहयेत्ततो देवीमथवा पुस्तकेऽपि वा ॥
 त्रिलोचनां शुक्लदन्तीं विभ्रती राजती तनुं ।
 विततां रक्तनयनां ज्येष्ठामावाहयाम्यहं ॥
 एष्टेहि त्वं महाभागे सुरासुरनमस्कृते ।
 ज्येष्ठा त्वं सर्वदेवानां मत्समीपगता भव ॥
 इति मन्त्रेण तां देवीमावाह्य सुकृतव्रती ।
 दद्याद्दन्तजलैः पाद्यं पादयोरुभयोर्द्विजः ॥
 श्रीखण्डकपूरयुतन्द्यादभस्तथार्चणं ।
 भक्त्या प्रयत्नेन मया यदत्र दीयते तव ।
 तद्गृहाण सुरेशानि ज्येष्ठे अष्टे नमोनमः ॥
 इत्युच्चार्य सुवर्णादिपात्रेणाञ्जलिनापि वा ।
 अर्घ्यं दत्त्वा स्मरेद्देवीं गन्धधूपैस्तथार्चयेत् ।
 गोधूमयवशाल्यादितद्द्वयैः सुपारयेत् ॥
 पञ्चप्रसृतिमात्रेस्तेः पूरिकादीनि सर्पिषा ।
 निवेदयेच्च तेरेव दद्याद्देव्यै यतव्रतः ॥
 ततः स्तुत्वा महादेवीं सर्वकामफलप्रदा ।
 ज्येष्ठायै ते नमस्तुभ्यं अष्टायै ते नमो नमः ॥
 ज्येष्ठे अष्टे तपोनिष्ठे वरिष्ठे सत्त्ववादिनि ।
 एष्टेहि त्वं महाभागे अर्घ्यं गृह्ण सरसति ॥
 अर्घ्यमग्नः ।

स्तुत्वा स्तोत्रकथानृत्यगीतानि पुरतस्ततः ।

(१) लेख्यां वा पटक्क ७ योरिति पुस्तकान्तरेपाठः ।

सौवीरे चैव संयुक्तां दद्याच्छुद्धेभ्य एव च ॥
 सुवासिनीभ्यः शक्त्या तत् प्रदद्यात् सुकृतव्रती ।
 देवीमनुजयार्चित्वा ततो भुञ्जीत वाग्यतः ॥
 सखिभिः सह चान्नानि स व्रती सुकृतव्रतः ।
 भुक्त्वा पीत्वा तदाचम्य देवीं नत्वा पुनः पुनः ।
 शयीत ब्रह्मचर्येण कुर्यात् प्रातर्विसर्जनं ॥
 एवमेव प्रकुर्याद्द्वै व्रतन्तु प्रतिवत्सरं ।
 विसर्जनान्ते तु ततः शिवां तां वारिणि क्षिपेत् ॥
 अमृपुष्पवटकान्दद्याद्ब्राह्मणेभ्यस्ततो द्विजः ।
 कुर्यादेवं प्रयत्नेन सायं वाथ विसर्जयेत् ॥
 विद्यार्थी प्राप्नुयाद्दिव्यां स्त्रीकामस्त्रियमाप्नुयात् ।
 शिरस्तरणकारी तु देव्यै दद्यादसंग्रहः ॥
 सौवर्णं राजतन्ताम्रं कृतकल्यो भवेत्तदा ।
 व्रतं स्वयञ्च कृतवान् मिष्टिं वाथ कृतार्हणः ॥

देव्या महत्त्वं कथितन्तवेदं

विधिश्च मन्त्रार्चनसंप्रयुक्तः ।

मन्त्रोऽपि सायुज्यकारी व्रतस्थ-

स्तस्यां सदाचारवतां सदैव ॥

यस्याः सिंही रश्मे युक्ता व्याघ्रश्चापि महाबलः ।

ज्जेष्टामहमिमाम्देवीं प्रपद्ये शरणं शुभा ॥

तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्मफलेषु जुष्टां दुर्ग
 देवीं शरणमहं प्रपद्ये । सुतरसितरासनाय नमः । इत्यावाहयत्

प्रापोद्दिष्टेति तिसृभिर्हिरण्यवर्णाः श्रवयः पावका इति तिसृ-
भिरभिषेकं कुर्यात् ।

नाम्नाथ विष्टरन्दत्त्वा पाद्यमर्घ्यमथासनं ।

वस्त्रमाचमनं(१) चैव मधुपर्कादि सर्व्वतः ॥

गन्धं पुष्पान्तथाधूपं दीपं नैवेद्यमेव च ।

पुनराचमनञ्चैव कारयित्वा विसर्जयेत् ॥

ओं ज्येष्ठायै नमः । ओं सत्यायै नमः । ओं काल्यै नमः ।

ओं कपालाय नमः । ओं कलिप्रियायै नमः । ओं विज्जायै नमः ।

ओं विनायकाय नमः । ओं भाग्यै नमः । ओं ताय्यै नमः ।

ओं त्र्यै नमः । ओं कृष्णायै नमः । ओं कृष्णपिङ्गलायै नमः ।

एभिर्नामभिस्तर्पणं ।

होमं दधिमधुक्षोरष्टतैः कुर्यात् सुसंयतः ।

हविष्यं स्वयमग्नौयादब्रह्मणांस्तेन भोजयेत् ॥

अनेन विधिना यस्तु वत्सराणाञ्चतुष्टयं ।

व्रतान्ते प्रतिमां कुर्यात् सौवर्णीं फलसन्नितां ।

कृष्णवस्त्रेण संयुक्तामाचार्याय निवेदयेत् ॥

वस्त्राभरणमाख्येस्तु लेपनैः पूजितं द्विजं ।

प्रणिपत्य ततः पश्चात्तस्मै सर्व्वं निवेदयेत् ॥

ब्राह्मणा भुक्तवन्तस्ते प्रकुर्य्युः स्वस्तिवाचनं ।

एवं कृते व्रते सम्यक् सर्व्वशान्तिः प्रजायते ।

धनधान्यसमृद्धिश्च पारोग्यञ्चैव जायते ॥

इति ज्येष्ठान्व्रतं ।

(१) स्नानमाचमनमिति पाठान्तरं ।

पुष्कर उवाच ।

शक्रे तूपोषितो विद्वान् यजमानमुपोषितं ।
 मूलेन स्नापयेन्नित्यन्तत्स्नाम्याशामुखस्थितं ॥
 तत्स्नाम्याशामुखं नेच्छेत्त्यभिमुखं ।
 पूर्वोक्ताशामुखं वा पूर्व्येन मुहुरेन च ।
 कुम्भहयेन स्नातस्तु पूजयेन्मधुसूदनं ।
 विरूपाक्षं सवरुणं चन्द्रं शूलस्तथैव च ।
 गन्धमाल्यनमस्कारदीपधूपान्नसम्पदा ॥
 एतेषामेव जुहुयात्तथा नाम्ना घृतं द्विजः ।
 पीतवासास्ततो भूत्वा मत्स्यं कूर्मं च शूकरं ॥
 सुराक्षशरसंयाधैः स्नानोक्ताशामुखस्थितः ।
 बलं नृपतये दद्याज्जानु कृत्वा ततः क्षितौ ॥
 ततोऽष्टादशभिः पुष्पैर्मूलैः पञ्चभिरेव च ।
 सुवर्णगर्भन्तु मणिं विद्वान् शिरसि धारयेत् ॥
 कृत्वैतत् सकलं कर्म कृषिं बहुफलां लभेत् ॥
 दक्षिणाञ्चात्र ये दद्यान्मूलानि च फलानि च ।
 सितानि चैव वस्त्राणि कनकं रजतं तथा ।
 भोजनञ्चात्र दातव्यं ब्राह्मणानामभीष्टितं ।
 अक्षय्यमूलमिदञ्च कुर्वन्
 स्नानं सदा भार्गववंशमुख्यः ।
 कृषिं सप्तमाप्नोति सदैव वृद्धिं
 यद्येषितं नात्र विचारमस्ति ।
 इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं मूलस्नानं ।

गर्गं मुनिवरश्रेष्ठं भार्गवः परिपृच्छति ।
नैर्ऋतेन तु ऋक्षेण शिशोज्जातस्य किं फलं ॥
पादे पादे तु यत् प्रोक्तं तन्ममाचक्ष्व सुव्रत ।
स्नानदानादिहोमाश्च दर्शनीयं कथं भवेत् ॥

गर्ग उवाच ।

प्रथमे पितरं हन्ति द्वितीये हन्ति मातरं ।
द्वितीये च धनं हन्ति चतुर्थे शोभनं भवेत् ॥
प्रथमे छेदनं कृत्वा रक्तस्त्रावी विधीयते ।
द्वितीये दीयते बालः परस्त्रीपुरुषस्य वा ॥
अथवास्य द्वितीये तु पश्चाच्छान्तिस्तु कारयेत् ।
चतुर्थे शस्यते स्नानं कृत्वा चैव शिशोः पिता ॥
स्वयमुत्पाटयेत् प्राज्ञो मूलानाञ्च शतं पिता ।
मङ्गल्याञ्च पवित्राञ्च ओषध्याः कथयाम्यहं ॥
लक्ष्म्याञ्च शतमूला च शिरीषो वेतसस्तथा ।
सिंहका श्वेतमूला च विष्णुकान्ता च यक्षिनी ।
सर्पाक्षी मीननेत्रा च पुत्रापरि कृताञ्जली ॥
पलाशो विष्वक्कक्षैव रोचना चन्दनद्वयं ।
कृष्णमांसी सुरीशीरं धवकाञ्च तथा मलं (१) ॥
गोमित्रा तुलसी दूर्वा शतपुष्पा शताङ्गुली ।
ब्रह्मदण्डी द्रोणपुष्पी प्रियङ्गुः श्वेतसर्षपाः ॥

(१) बाष्पाकञ्च तथा मलमिति पाठान्तरं ।

पिप्पलः काकजङ्घा च त्रायमाणा उडुस्तथा ।
 प्योतिष्ठती च गान्धारी निर्गन्धा पूर्णकौशिका ॥
 भगक्षुमा सुभद्रा च गुह्यची सेन्द्रवारुणी ।
 अलम्बुका च दन्ती च कदली केतकस्तथा ॥
 गोक्षुरः शतपत्री च अरिष्टकापराजिता ।
 चित्रपर्णी शतपत्रा च निकुम्भोऽथ सुवर्चला ॥
 अश्वगन्धा हस्तिकर्णी हरिद्राहितयं तथा ।
 उडुवी मधुकारश्च अश्वत्थो वकुलस्तथा ॥
 सर्जरजो अपामार्गो मन्दारश्चातिमुक्तकः ।
 मालती स्वर्णपुष्पी तु श्रीकर्णी श्रीफलस्तथा ॥
 दर्भमूलं करवीरं मदयन्ती विकङ्कतः ।
 पाटला सुरदारश्च अर्द्धसूदनिका तथा ॥
 फलं मन्मथवृक्षस्य पलाशस्य च पञ्चवं ।
 रास्ना नन्दीवृक्षमूलं सुरदारविदारिका ॥
 श्वेतवीथी श्वेतपाका नीलोत्पलं तथैव च ।
 नागकेशरसिन्दूरी कुमारी चैव निक्षिपेत् ॥
 तीर्थान्मुपपन्नगन्धश्च सर्व्वेष्वप्यथ काञ्चनं ।
 यथासम्भवतो वापि याज्ञं मूलौघतं शुभं ।
 वीरत्वचा समेतश्च शतच्छिद्रे घटे न्यसेत् ॥
 नद्या उभयकूलस्था गोमृङ्गखनिता च या ।
 वह्निर्मूलगता या च तथा मातृगृहीहवा ।
 वल्मीकपल्लवस्था च रजसा रक्तकाच ये ॥
 रजसा रक्तकाः, गोरजोरञ्जिता रथ्यामृत्तिका इत्यर्थः ।

स्नानकाले तु सा प्रोक्ता सृत्तिता पापनाशनो ।
तत्काले करकैः शान्तिन्ते चाष्टौ तीर्थपूरिताः ॥
चत्वारो वाय तां दत्त्वा गिरस्नाने त्रिवेष्टिताः ।
सबालायास्ततः कुर्याद्विलिप्ते मण्डले शुभे ॥
वेदमङ्गलघोषैव मन्त्रैः पुण्याभिषेचनैः ।
आचार्यैः कलशन्दिव्यं अभिमन्त्रा ततः क्षपेत् ॥
स्नानं कार्यमिदं दिव्यं सूतकान्ते ततः गिष्ठीः ।
मातरं आपयेत्पश्चाद्गृहपूजान्तु कारयेत् ॥
आचार्यं पूजयित्वा तु ब्राह्मणानाञ्च पूजनं ।
सौवर्णं पुरुषं दद्यादाचार्याय गुणान्वितः ॥
धेनुं दद्यात्तथा धान्यं यतमानञ्च दक्षिणा ।
प्रदक्षिणं ततः कृत्वा प्रणिपत्य तमापयेत् ॥
तैर्ब्रतैर्ननुजातस्य ग्रहरिष्टोद्भवस्य च ।
गण्डान्ते चैव भावस्य बालस्येति विधीयते ।
कृष्णतिलानाम्तु षष्ठ्या द्वैरस्य मानमुच्यते ॥

षष्टिकृष्णतिलमितं सुवर्णमानं । निकुम्भा दन्तीभेदः सुव-
र्चसा सूर्यसक्ता । हस्तिकर्णी एरण्डः । उट्टवः पीलुः । मधुकारी
मधुकः । सर्जराजो वीजकः । अषामार्गः घाटकः । अतिमुक्तं
माधवी । मालतिः जातिः । स्रग् पुष्पी सुषला । रीफलं दिव्यं ।
मदयन्ती पूतिका ।

अर्धसुदनिका पालङ्गी । मन्मथलयात्रः । सुरदाकः देव-
दाहभेदः । विदारिका कुम्भाङ्गी । श्वेतवीथो गिरिकर्णिका ।
श्वेतपाका गुप्ता । शेषाणि स्नानामप्रमिदानि ।

इन्द्राय स्वाहा । अग्नये स्वाहा । सोमाय स्वाहा । पवमानाय स्वाहा । मरुते स्वाहा । यमाय स्वाहा । मृत्यवे स्वाहा । अमृतकाय स्वाहा । अग्नये सिष्टकृते स्वाहा ॥ त्रातारमिन्द्र । त्वत्रो अग्ने । सुगन्धपत्यां । असुन्वत । तत्त्वायामि अनोनि युद्धिः । वयं सोम । तमोशनं । अस्मै रुद्रा । स्योना पृथिवी । इत्यादि मन्त्राः ।

इति मूलशान्तिः ।

—०००(०)०००—

राम उवाच ।

काम्यं कर्म समाचक्ष्व वाणिज्यं येन सिध्यति ।

कृषिञ्च बहुलाञ्चैव कर्मणा केन बाधते ॥

पुष्कर उवाच ।

मूलेषूपोषितः कुर्यादिदं कर्म पुरोहितः ।

उपोषितस्य धर्मज्ञ यजमानस्य नित्यशः ॥

प्राप्तासु पूर्वाषाढासु प्राज्ञास्त्रं स्रपयेत्तरं ।

युक्तेर्वै तममूलैश्च शङ्खमुक्ताफलैस्तथा ॥

मणिभिश्च यथा लाभं कनकेन तथैव च ।

अकालमूलैः कलशैश्चतुर्भिर्भृगुनन्दन ॥

अकालमूलैः, नवैः ।

ततस्तु पूजयेद्देवं शङ्खचक्रगदाधरं ।

प्राङ्मुखे तु तथैवात्र वरुचश्च निशाकरं ॥

गन्धमाब्धनमस्कारदीपधूपपात्रसम्पदा ।

एतेषामेव जुहुयात्तथा नाम्ना दृतं दिजः ।
नीलवासास्तथा भूत्वा क्षिपेदपु समाहितः ॥
नीलानि चैव वासांसि देयानि विविधानि च ।
चन्दनञ्च(१) सुरा चैव गैरेयं विविधस्तथा ॥
शुक्तानि चैव माल्यानि धूपं दद्याद्दत्तौ तथा ।
निष्पत्तिमकरस्यास्थि शङ्खमुक्ताफले तथा ।
सुवर्णान्तरितं कृत्वा धारयेच्च तथा मणिं ॥
कृत्वैतत् सिद्धिमाप्नोति वाणिज्यं नात्र संशयः ॥
समुद्रयाने च तथा कर्षणे च न सौदति ।
नीलानि सप्त वासांसि दक्षिणा चात्र शस्यते ॥
शङ्खं सुवर्णं कण्डूञ्च(२) तथा मुक्ताफलानि च ।
हर्षं कर्त्तुं दिजेभ्यस्तु सर्व्वं मेतद्विधीयते ।
ब्राह्मणान् भोजयेच्चात्र परमासं सुसंस्कृतं ॥
अभ्यर्च्य प्रत्येकमष्टाष्टमूर्त्तिः
करोति कर्मैतदनिन्दितात्मा ॥
न जातु लाभानि वर्त्ततेऽसौ
समुद्रयानादिव निम्नगा वै ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं वाणिज्यलाभव्रतम् ।

—000—

सूत उवाच ।

ब्रह्मणो मानसः पुत्रो वशिष्ठ इति विश्रुतः ।

(१) चोदनञ्च सुराचैवेति पुस्तकाकारे पाठः ।

(२) शङ्खं सुवर्णं कण्डूञ्च इति पाठान्तरः ।

तस्य शक्तिरभूत्पुत्रस्तस्य पुत्रः पराशरः ॥
 तपस्वकारः समहृष्टकारं देवदानवैः ।
 पूजार्थं ब्रह्मचारी च ततो लब्धवरो भवेत् ॥
 सुपुत्रं लप्सुसौख्यं भवैरुक्तोमहात्मभिः ।
 कुरु संवत्सरं ज्ञानं अवचे अवचे मुने ॥
 सोऽपि पुत्रानवापाष्टौ चकार अष्टयान्वितः ।
 पाराशर्यः सुतं लेभे व्रतस्यास्य प्रभावतः ॥
 एवमन्योऽपि राजेन्द्रस्तावत् सिद्धिमवाप्नुयात् ।
 पुत्रान् पोत्रांश्च लभते सुखञ्चात्यन्तमश्रुते ॥

इत्यादित्यपुराणोक्तं पुत्रोत्पत्तिव्रतं ।

श्रीराम उवाच ।

ज्ञानानामिह सर्वेषां यः ज्ञानमतिरिच्यते ।
 तन्ममाचक्ष्व सकलं सर्वकल्मषनाशनं ॥

पुष्कर उवाच ।

शृणु पादोदकज्ञानं सर्वकल्मषनाशनं ।
 चतुरास्मा हरिष्यन् भवत्यन्वागतो हिज ॥
 तत्र कार्यमिदं ज्ञानं सर्वकल्मषनाशनं ।
 ततः कार्यं प्रयत्नेन अवर्ण्यं विशेषतः ॥
 अघोत्तराषाढासु निराहारी जितेन्द्रियः ॥
 सर्वौषधैः सर्वगन्धैर्होषदेवस्य शक्तिः ।
 पादं प्रक्षालयेद्दिहान् क्रमेण चतुरात्मनः ॥
 ततः सुकलशान् कुर्व्याच्चतुरः सुदृढाक्षवान् ।

सौवर्णं राजतं ताम्रमद्यवापि महीशयान् ॥
 ततो निरुद्धचरणः कृपाङ्गिः चालयेत्ततः ॥
 ताभिस्तु कलशम्पूर्णं स्थापनीयं तदग्रतः ॥
 ततः प्रद्युम्नचरणौ चाल्यौ प्रश्रवणीदकैः ।
 तैस्तु संपूर्णकलशं भवेत् स्थाप्यस्तदग्रतः ॥
 संद्वर्षणस्य चरणौ चाल्यौ तोयेय सारसैः ।
 कलशं पुरितस्तैश्च स्थाप्यं तस्याग्रतो भवेत् ॥
 वासुदेवस्य चरणौ नादैर्यैः चालयेद्बुधः ।
 कलशं पुरितं तैश्च स्थापनीयं तदग्रतः ॥
 ततस्तु पूजा कर्त्तव्या तथा वै चतुरात्मनः ।
 कलशान् पूरयेत्तांश्च गन्धमाख्यफलाक्षतैः ॥
 ततः प्राप्ते द्वितीयेऽङ्गि स्नातः पूर्वमुपोषितः ।
 सम्मुखयानिबद्धश्च स्थाप्यद्योत्कटुको भवेत् ॥
 प्रद्युम्नस्य च देवस्य ततः संद्वर्षणस्य च ।
 ततश्च वासुदेवस्य सर्वावासस्य चक्रिणः ॥
 पवित्रमन्त्रैः सर्वेषां घटानामभिमन्त्रणं ।
 कर्त्तव्यं सान्वयेनाथ शुचिना भार्गवोत्तम ॥
 अथ मन्त्रान् प्रवक्ष्यामि चतुर्षु कलशेषु ते ।
 मङ्गल्यांश्च यशस्यांश्च सद्योऽवधिनिषूदनान् ॥
 अरुहमार्गः सर्वत्र सर्वगथापराजितः ।
 वायुमूर्त्तिरचिन्त्यात्मा सोऽनिरुद्धः स्वयं प्रभुः ॥
 पादोदकेन दिग्मेन शिवेनाध्विनाशन
 तथाद्यमुपहृत्वाथ स्वयं वर्द्धयति प्रभुः ॥

लोकान् प्रप्योतयति यः प्रप्यन्ती भास्करः प्रभुः ।
 हुताशनः स तेजस्वी मङ्गलं विदधातु ते ॥
 कामदेवो जगद्योनिः सर्वगः प्रमुरीक्षरः ।
 रोगहर्त्ता जगन्नाथो मङ्गलानि ददातु मे ॥
 जगतां कर्षणाद्देवो यः स संकर्षणः प्रभुः ।
 रुद्रमूर्त्तिरचिन्त्यात्मा सर्वगः सर्वदारकः ॥
 कामपालोऽरिदमनः सर्वभूतवशङ्करः ।
 विश्वयोनिर्महातेजा मङ्गलानि ददातु मे ॥
 सर्वावासो वासुदेवो भूतात्मा भूतभावनः ।
 सर्वगद्याप्रमेयश्च पुरुषः परमेश्वरः ॥
 अन्नस्तः सर्वदेवेशो जगत्तारणकारणः ।
 अघापहारी वरदी विदधातु म्रियं मम ॥
 एवं स्नातश्रुतिं कृत्वा परिधाप्य सुवाससी ।
 शुक्लवासा उपस्थं पूजां कुर्यात् क्रमेण तु ॥
 गन्धैः पुष्पैः फलैः पुष्पैर्दीपधूपैः सुगन्धिभिः ।
 नैवेद्यैर्विविधैश्चैव पायसान्नेस्तु पूजनैः ॥
 एवं देवार्चनं कृत्वा सन्नतशीर्गताशुभः ।
 भोजनं गोरसप्रायं कृत्वा तिष्ठेदतन्द्रितः ॥
 प्रादुर्भावानि सुखानि शृणुयात् केशवस्य च ।
 पाषण्डपतितानाञ्च वर्जयेद्दर्शनं तथा ॥
 इतिपादोदकस्नानं प्रोक्तं रक्षीकृत् तव ।
 मङ्गल्यम्पाषण्डमनमलक्ष्मीनाशनं परं ॥
 सर्वविघ्नप्रशमनं सर्वबाधाविनाशनं ।

सर्वदुष्टोपशमनं सर्वव्याधिहरं परं ॥
 यात्रासिद्धिकरं पुण्यं कर्मणां सिद्धिकारकं ।
 शत्रुघ्नं बुद्धिदं मध्ये बलायुःश्रुतिवर्धनं ।
 सौभाग्यदं कामपरं यशःपुत्रविवर्धनं ॥
 असौघवीर्यं पुरुषोत्तमस्य
 पादोदकस्नानमिदं प्रतिष्ठं ।
 स्नानोत्तमस्ते रणचन्द्रवैश-
 भुवस्तु ते किं करवाणि राम ॥
 इति विष्णु धर्म्मोत्तरक्तं पादोदकस्नानं ।

— ००० —

श्रीराम उवाच ।

आरोग्यकारकं स्नानं द्वितीया प्रतिपत्तया ।
 आरोग्यदं व्रतं चैव वैष्णवं कथयस्व मे ॥
 पुष्कर उवाच ।

धनिष्ठासु महाभाग यजमानपुरोहिती ।
 उपोष्य वारुणं स्नानं यजमानस्य कारयेत् ॥
 कृत्वा कुम्भशतं पूर्णं शङ्खमुक्ताफलोदकेः ।
 भद्रासनीपविष्टः सन् स्नातश्चैवाहताम्बरः ॥
 केशवं वारुणं चन्द्रं नक्षत्रं वारुणं तथा ।
 पूजयेत् प्रयतो राम गन्धमाल्यानुलेपनैः ॥
 दीपधूपनमस्कारैस्तथा चैवाबसम्पदा ।
 देवतानां यथोक्तानां कुर्वीतावाहनन्ततः ॥
 सर्वौषधैस्तथाग्नौ यथागन्धि विचक्षणः ।

गुरवे वाससी देये रसगोकुम्भकाञ्चनं ।
 ब्राह्मणानाम् दातव्याऽवित्तशठेन दक्षिणा ॥
 शमीशास्त्रलिङ्गैः पत्रैर्व्यंशाग्रैश्च तथैव च ।
 त्रिवृतस्तु मणिर्हार्दयः सर्व्व रोगविनाशनः ॥
 शाकानि हरितं माल्यं सर्व्वं शस्यानि वाञ्छसी ।
 वरुणाय विनिक्षिप्य गन्धधूपं निवेदयेत् ॥
 अलङ्कयानस्य हि वारुणं तत्
 स्नानेन दानेन क्षतेन सम्यक् ।
 रोगाः समग्राः प्रशमं प्रयान्ति
 वदस्तथा मोक्षमवाप्नुयाच्च ॥

इति विष्णुधर्म्मोत्तरोक्तं शतभिषास्नानं ।

—000—

अतः परं प्रवक्ष्यामि काम्यं कर्म तवानघ ।
 कर्त्ता त्वपसेत्तत्र कारकय तथैव च ॥
 पूर्व्व भाद्रपदायोगे अहिर्ब्रध्नगते तथा ।
 स्नानं निशान्ते कुर्वीत द्वितीये इति शास्त्रवित् ॥
 उडुम्बरस्य पत्राणि पञ्चगव्यं कुशीदकं ।
 रोचना चन्दनं वासः क्षिपेत् कुम्भद्वये बुधः ॥
 कुम्भद्वयं ततः कुर्याद्ब्रह्ममाल्याञ्जनैर्दृढं ।
 अकालमूलं संस्त्रायः कर्त्ता तेन तदा भवेत् ॥
 स्नात्वा गोबालवीराणि परिधानि समाहितः ।
 पूजयेच्चाप्यहिर्ब्रध्नमादित्यं च तथैव च ॥

वरुणश्च शशाङ्कश्च गन्धमात्यश्च सम्पदा ।
 दीपधूपनमस्कारैस्तथैव बलिकर्मणा ॥
 अक्षतानाम् तु पात्राणि ततो राम चतुर्दश ।
 अहिब्रध्नाय रुद्राय सफरीष निवेदयेत् ॥
 षडङ्गेन तु दद्याद्दे तद्या धूपं द्विजोत्तमः ।
 ततस्तु पूजा कर्त्तव्या देवदेवस्य चक्रिणः ॥
 ओंकारपूर्वमान्यन्तु सर्वासां जुहुयात्ततः ।
 देवतानां यथोक्तानामेकैकस्य शतं शतं ॥
 गोपालशफनृङ्गैस्तु तद्वतं कारयेन्मणिं ।
 धारणं तस्य कर्त्तव्यं करे मृध्नाय वा भजे ॥
 कर्त्तुं चैवोपदेष्टे तु शक्त्या देया च दक्षिणा ।
 ब्राह्मणानाञ्च सर्वेषां यथावदनुपूर्वशः ॥

अलङ्घयन्भाद्रपदामद्यान्वां
 करोति यः स्नानमिदं सदैव ।
 भवन्ति तस्यायुतशस्तु गावः
 परामवाप्नोति तथैव वृद्धिं ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं अहिब्रध्नस्नानं ।

— ००० —

वल्लगुहवाच ।

व्रतान्यन्यानि मे ब्रूहि काम्यानि द्विजपुङ्गव ।
 नारीणां पुरुषाणाञ्च सर्वं श्रुत्वा यतो मम ॥
 मार्कण्डेय उवाच ।
 कृत्तिकास्वर्चयेद्द वं कार्त्तिकीप्रभृतिक्रमात् ।

यावत्स्यात्कार्त्तिकी भूयो नरसिंहमुपोषितः ॥
 अनुलेपनपुष्पाद्यैः सर्व्वरत्नैः सदैव तु ।
 व्रतावसाने दद्यात्तां तथा खेतां द्विजातये ॥
 जेतवत्सयुताश्चैव (१) रजतञ्च तथा नृप ।
 उपोषितः सदा कुर्याद्भूतं स्याच्छुभजितः ।
 मार्गशीर्षमथारभ्य सृगर्ष पूजयेन्नरः ।
 अनन्तशयनासीनमनन्तं सर्व्वकामदं ॥
 अनन्तपुष्पोपचयमनन्तसुखसम्पदं ।
 यथाभिलषितावाप्तिः कुरु मे पुरुषोत्तम ॥
 इत्युदीर्याभिपूजैनमुपोषणपरो नरः ।
 विप्राय दक्षिणां दद्यादनन्तः प्रीयतामिति ॥
 पौषमासादथारभ्य पुष्टे नित्यमुपोषितः ।
 यावत्पौषो भवेद्भूयो बलदेवमथार्चयेत् ॥
 अनुलेपनपुष्पाद्यैः सर्व्वरत्नैस्तथैव च ।
 व्रतावसाने दातव्यं (२) कांक्ष्यं कनकमेव च ।
 भक्त्या विप्राय भवति नित्यं पुष्टियुतो नरः ॥
 माघमासादथारभ्य मघासु सततं नरः ।
 वराहमर्चयेद्देवं तथा नित्यमुपोषितः ॥
 छताभ्यङ्गेन विधिवच्चन्दनेन सुगन्धिना ।
 तथा च परमाग्नेन छतहोमेन वाप्यथ ॥
 दद्याद्व्रतावसाने तु छतधेनुं नराधिपः ।

(१) जेतवत्सयुताश्चैव इति पाठान्तरं ।

(२) सघुन कांक्ष्यमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

पितृप्रसादमाप्नोति कृत्वैतद्व्रतमुत्तमं ॥
 फल्गुनीतस्तथारभ्य फाल्गुनीषु समर्चयेत् ।
 नरनारायणो देवो यावत्स्यात् फाल्गुनी पुनः ।
 व्रतावसाने शयनं स्वास्तीर्णं प्रतिपादयेत् ॥
 व्रतेनानेन नारी स्यात् सभर्त्ता समलङ्कृता ।
 भार्या नरस्तथाप्नोति रूपद्रविणसंयुतां ॥
 भनुकूलां प्रियां नित्यं तदा पञ्चवर्ती नृप ।
 अविद्योगमवैधव्यं करोत्येतन्महाव्रतं ॥
 चैत्रमासादथारभ्य नित्यं चित्रास्वथार्चयेत् ।
 यावच्चैत्री भवेद्भूषो नित्यं विष्णुमुपोषितः ॥
 व्रतावसाने दद्याच्च चित्रं वस्त्रं द्विजम्बने ।
 व्रतेनानेन पुरुषः पुत्रानाप्नोत्यधोऽपि तान् ॥
 नारी वा पुरुषश्चाप्य नाव कार्या विचारणा ।
 वैशाखे च तथा विष्णुं विगात्रासु समर्चयेत् ॥
 यावद्भूयात्तु वैशाखो मोषवामः पृथुं विभुं ।
 दत्त्वा व्रतान्ते कनकं ज्ञातिभ्येष्टं नरोत्तमः ॥
 ज्यैष्ठ्यमासे तथा ज्येष्ठामूपोषिती नरः सदा ।
 कृष्णं च पूजयेद्देवं वस्त्रालङ्कारभूषणैः ॥
 व्रतावसाने दातव्यं गवां शतमनुत्तमं ।
 वस्त्राणि कनकं भूरि कृष्णमायुज्यमाप्नुयात् ॥
 आषाढीतस्तथारभ्य दिनहयमुपोषितः ।
 आषाढास्वर्चयेद्देवं प्रद्युम्नमपराजितं ॥
 भूयः स्यात्तु यदाषाढी दद्याच्च शयनं ततः ।

विस्तीर्णं तेन चाप्नोति नित्यं रूपयुता स्त्रियः ॥
 आवणीतस्त्वथारभ्य ग्रहेण संयुतं हरिं ।
 पूर्वधत्तोपवासस्तु यावत्स्यात् आवणौ पुनः ॥
 व्रतावसाने दद्याच्च ब्राह्मणाय हृतं बहु ।
 व्रतेनानेन चोर्ध्वेण दीर्घजीवितमाप्नुयात् ॥
 आरभ्य प्रोष्ठपादीतो नित्यम्भाद्रपदाद्वये ।
 सङ्कर्षणं पूजयेत्तु यावद्भाद्रपदौ पुनः ॥
 व्रतावसाने दद्याच्च गवां मिथुनमुत्तमं ।
 व्रतेनानेन भवति नित्यमाश्नायुतो नरः ॥
 आश्वयुज्यामथारभ्य नित्यमेषान्निनीपु च ।
 षष्ठयेताश्चानाभन्तु वासुदेवमपोषितः ।
 व्रतावसाने दद्याच्च काश्यं रौप्यं हृतं तथा ॥

क्लृप्तान्यथैतानि मया नरेन्द्र
 प्रोक्तानि ते पापहराणि नित्यं ।
 नाकप्रदान्युत्तमपूरुषाणां
 कामाप्तिदन्येव यथेष्टदानि ॥

यतद्रूपास्याह विश्वकर्मा ।
 बलभद्रो नीलवासा लाङ्गली मुषली शितः ।
 नरनारायणौ नीलो साक्षात् शुक्लजटाजिनी ॥
 रघुस्यैकैकचरणौ मध्यस्थौ सदृशीतनू ।
 बाणवाचासनयुतौ द्विचतुर्बाहुधारिणौ ॥
 धृष्टः सचापो द्विभुजो राजलक्ष्मणसहितः ।
 मङ्गकीर्मीदकीपद्मचक्री प्रद्युम्न उच्यते ।

प्रतुल्य २३ अध्यायः ।] हेमाद्रिः ।

सङ्कषणः शङ्खपद्मचक्रकौमोदकोधरः ॥

शेषाणि धरणीव्रते विनीकनीयानि ।

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं सर्वकामाप्तिव्रतम् ।

—000—

युधिष्ठिर उवाच ।

अप्राप्तेन यथा दुःखमैश्वर्यादेर्नरोत्तम ।

तथा मनोरथैर्कैश्चनाशाहुः खं भवेत्तृणां ॥

ऐश्वर्यादिच्युते वापि सन्तते वापि लोपतः ।

अभीष्टादन्यतो वापि स्वपदादयेन विच्युतिः ।

नरो नाप्नोति नारी वा व्रतं तद्दृष्ट्वा मे मुने ॥

कृष्ण उवाच ।

सत्यमेतन्महाभाग दुःखप्राप्तिषु संशयः ।

ऐश्वर्यस्यैव वित्तस्य बन्धुवग्रेसुतस्य च ॥

तदेव श्रूयतां पार्थ यथा नेष्टात्पदाच्युतिः ।

स्वर्गादिर्जायते सम्यगुपवासव्रते तृणां ॥

द्वादशर्चाणि राजेन्द्र प्रतिमासन्तु यानि वै ।

पुष्पैर्धूपैस्तथाशोभिरभीष्टैरपरैरपि ॥

आदितः कृतिकां कृत्वा कार्तिके नृपसत्तम ।

कशरामासनेवेद्यं पूर्वमासचतुष्टयं ॥

निवेदयेत् फाल्गुनादौ संयावन्तु ततः परं ॥

आषाढादिषु (१) देवाय पायसं विनिवेदयेत् ॥

(१) आषाढादिचतुर्णां व्रतमिति पुस्तकालये पाठः ।

तेन कृशरामात्रनैवेद्यं पूर्वमासचतुष्टये निवेदयेत् । फागुना-
दिषु संयावं ततः परं आषाढादिषु चतुष्टु मासेषु पायसं
विनिवेदयेत् ।

तेनैवाग्नेन राजेन्द्र ब्राह्मणान् भोजयेद्बुधः ।

पञ्चगव्यजले स्नातं तस्यैव प्राशनच्छुचिः ॥

सम्यक् संपूज्य राजेन्द्र तमेव पुरुषोत्तमं ।

प्रणम्य प्रार्थयेद्दिहान् शुचिज्ञातो यथाविधि ॥

नमो नमस्ते मम संशयोऽस्तु

पापस्य छिन्निं समुपैतु पुण्यं ।

ऐश्वर्यवित्तादि सदाश्रयं मेऽ

यथा च मे सन्ततिरच्युतास्तु ॥

तथाच्युत त्वं परतः परात्मा

ब्रह्मात्मभूतः परतः परात्मा ।

यथाच्युतं मे कुरु वाञ्छितं तत्

पापं हरे मे तु हराप्रमियं ॥

अच्युतानन्द गोविन्द प्रसीद यदभीप्सितं ।

तदक्षयममेयात्मन् कुरुष्व पुरुषोत्तम ॥

एवं देवं समभ्यर्च्य प्रार्थयित्वा यथाविधि ।

नैवेद्यं स्वयमग्रीयान्नित्यं अष्टासमन्वितः ॥

ततः संवत्सरस्यान्ते सुखं सुप्नोत्थितेऽच्युते ।

सहृतं तान्त्रपात्रन्तु ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥

शक्तितो दक्षिणां दद्यादच्युतः प्रीयतामिति ।

एवं त्रिसप्तमे वर्षे कुर्यादुदयापनस्ततः ॥

तदग्रे ब्राह्मणी स्थाप्या स्यविरा शाश्वरायणी ।
 महासती रौप्यमयी तन्मनार्हा सदैव सा ॥
 ततस्ते पूजयित्वा तु मास्यवस्त्रानुलेपनैः ।
 मन्त्रेणानेन राजेन्द्र प्रणिपत्य विधानतः ॥
 प्रतिसंवत्सरं दद्यादन्नपानं द्विजातये ।
 ब्राह्मणाय तिलान् दद्यात् सहिरस्याज्यसंयुतान् ।
 गावाथ दद्याद्विप्राय सवत्साः कांस्यदोहनाः ।
 शय्याश्च शक्तितो दद्याद्भक्त्या तिष्ठेत्तु केशवः ।
 घटसप्ताच निर्दिष्टाः स्थाप्याः पूर्णजलोच्छ्रिताः ॥
 छत्रोपानदयुगैः सार्धं दत्त्वा न च्यवते नरः ।
 तस्मात् सर्वं प्रयत्नेन दत्त्वा विप्रान् विसर्जयेत् ॥
 नृत्यगीतेन राजेन्द्र नरः प्राप्नोति वाञ्छितं ।
 सत्सतिं स्वर्गमौभाग्यमैश्वर्यञ्च तथैव च ॥
 तद्वत्तिमितमत्यन्तं ततो न च्यवते नरः ।
 तस्मात् सर्वं प्रयत्नेन चात्मना चैव पूजयेत् ।
 यतेताश्चयकामस्तु सदैव पुरुषोत्तम ॥

कृष्ण उवाच ।

अत्रापि श्रूयते काचित् सिद्धा स्वर्गे महाव्रता ।
 नारी तपस्विनी भूत्वा प्रख्याता शाश्वरायणी ॥
 समस्तसन्देहहरा सदा स्वर्गोक्तसां हिता ।
 कस्मिंश्चिदेव काले तु देवराजः शतक्रतुः ।
 पूर्वोद्भूतं राजन् पप्रच्छेदं वृहत्सतिं ॥
 पूर्वोद्भात्यरतः पूर्वो ये बभूवुः सुरेश्वराः ।

तेषां चरितमिच्छामि श्रोतुमङ्गिरसां वर ॥
 एवमुक्तस्तदा तेन देवेन्द्रेणामलक्षुतिः ।
 प्राह धर्मभृतां श्रेष्ठः परमर्षिर्हृदयतिः ॥
 आत्मनः समकाङ्क्षीनं मामवेहि सुरेश्वर ।
 ततः परमयं देवो हृदयतिसमन्वितः ॥
 ययौ यत्र महाभागा सम्यगास्ते तपस्विनौ ।
 सा तौ दृष्ट्वा समायातो देवराजहृदयतौ ॥
 सम्यग्धर्मेण संपूज्य प्रणिपत्याह सुव्रता ।
 नमोऽस्तु देवराजाय तथैवाङ्गिरसे नमः ॥
 यद्वा कार्यं महाभागेः सकलन्तर्दिहोच्यतां ।
 यदि कर्तुं मया शक्तं तत् करिष्येऽविमृश्य च ॥

हृदयतिरुवाच ।

आवाभ्यामागतौ भद्रे प्रष्टुमत्राभिकाङ्क्षिनौ ।
 यच्च कार्यं महाभागे तत्पृष्टं कथयस्व मां ॥
 यदि स्मरसि कथाणि पूर्वैर्नृचरितानि वै ।
 तदाख्याहि महाभागे देवेन्द्रस्य कुतूहलं ॥

शाश्वरायण्युवाच ।

वत्ते पूर्वसुरेन्द्रस्य ततश्च प्रथमे हि यः ।
 तज्ज्ञात् पूर्वतरा ये च तस्यापि प्रथमश्च यः ॥
 तेषां पूर्वतरा ये वै विद्मि तानखिलानहं ।
 तेषाञ्च चरितं कृतञ्च जानाम्यङ्गिरसां वर ॥
 मन्वन्तराण्यनेकानि सृष्टयस्त्रिदिवीकसः ।
 सप्तर्षीञ्च वज्रकूवेष्टि मन्मूनाञ्च सुताञ्च यान् ॥

एवमुक्त्वा सुरेन्द्राणां सा शक्रं शान्भरायणी ।
 कथयामास आचार्यं तदापि कथयामि ते ॥
 मृणु वत्स नकुक्कर्णो देवदेवतदुर्जयः ।
 स लोकपालान् समरे विजित्य सहदेवतैः ।
 इन्द्रस्यायतनं पश्चात् प्रविवेश सुनिर्भयः ॥
 तं दृष्ट्वा सहमा प्राप्तं शक्रः शय्यातले सुठन् ।
 जग्गीष सहमा श्रान्तं नकुक्कर्णभयाद्दिवं ।
 दानवं शक्रशयने प्रणिपातपुरःसरः ॥
 वासुदेवस्तु दुर्हत्तं दृष्ट्वा दैवतकण्टकं ।
 लकार कण्ठयज्ञं वामवस्त्रेन हर्षितः ॥
 ततः क्षणञ्च तरसा गृह्य दीर्घ्यां शनैः शनैः ।
 पीडयामास विह्वलं नदन्तं भेरवान् रवान् ॥
 समार दानवेन्द्रोऽसौ बलाद्भग्नार्त्तपञ्जरः ।
 निर्जंगाम ततः सोऽपि शय्यामूलमवाक् शिरः ॥
 तृष्टाव हरिमामीनः शङ्खचक्रगदाधरं ।
 एतद्दृष्टं मया शक्र उवाच सुरराट् प्रति ॥
 ततः कुरु तपो रौद्रं देवराजस्तपस्विनीं ।
 उवाच जानासि कथं त्वमेतत् शान्भरायणि ॥

शान्भरायण्युवाच ।

सर्व एव हि देवेन्द्र जगत्त्वा ये सुरेश्वराः ।
 बभूवुश्चरितं तेषां श्रुतं दृष्टन्तश्चैव च ।

इन्द्र उवाच ।

किन्दृष्टं वद धर्मज्ञे त्वयानघे गृह्यया ।
 स्वर्लोके वसतिं प्राप्ता यथान्यायेन केनचित् ॥
 अहो सर्वव्रतानाञ्च ह्युपोषितमयोद्धतं ।
 प्रधानतरमत्यन्तं स्वर्गवासप्रदं मतं ॥
 एवमुक्ता ततस्तेन देवेन्द्रेण तपस्विनी ।
 प्रत्युवाच महाभागा यथा तच्छाश्वरायणी ॥
 समर्थैरर्चितो देवः प्रतिमासं सुरेश्वर ।
 यथोक्तव्रतमासाद्य सप्तवर्षाणि पूजितः ॥
 तस्यैवं कर्मणोऽव्याप्तिरच्य, ताराधनस्य मे ।
 देवलोकादभिमतो देवराज यदच्युतिः ॥
 स्वर्गं द्रव्यमथैश्वर्यं सततं यानि वाञ्छति ।
 नरः प्राप्नोति तत्सर्वं तीक्ष्णवीर्यस्तनः प्रभुः ॥
 एतत्ते पूर्वं देवेन्द्रचरितं सकलं मया ।
 स्वर्गवासोत्पत्त्यञ्च मासादच्यत पूजनात् ॥
 यथा च कथितं देव पृच्छतस्त्रिदशेश्वर ।
 धर्मार्थकाममोक्षञ्च वाञ्छितं विबुधाधिपैः ।
 विष्णोराराधनायान्यत्परमं सिद्धिकारणं ॥
 तस्यास्तद्वचनं श्रुत्वा देवराजहृहस्पती ।
 तां तथेत्यूचतुः साध्वीं चैरतुष्टापितद्वतं ॥
 तस्मात्पार्थ प्रयत्नेन प्र तिमासं समाहितः ।
 मासि मास्यच्यतं पूज्य भवेथास्तस्मिन्नास्तदा ।
 ये शाश्वरायणि कथां चरितव्रतेन
 वर्षाणि सप्त विधिना सुधियो नयन्ति ।

ते खर्गलीकामभिसम्भ कृताधिवासाः

कल्पायुतं सुतशतैरपि न च्यवन्ति ॥

इति श्रीभविष्योत्तरे शास्त्ररायणीव्रतं ।

—०४०—

वशिष्ठ उवाच ।

शृणुष्व च महीपाल व्रतं विष्णुपदचयं ।

सर्वपापप्रशमनं सज्जगाद् पुरा हरिः ॥

दक्षः प्रजापतिः पूर्वं विष्णुमाराध्य पृष्ठवान् ।

बहुशच विपन्नायां स सृष्टावरिभूदनः ॥

दक्ष उवाच ।

भगवन् सर्वकर्तृत्वमादिष्टं मे स्वयम्भुवा ।

सम्पन्ना देवदेवेन तवादेशेन केगव ॥

विपन्नेन जगन्नाथ समसृष्टिः कृता तव ।

विषयासङ्गविशमात्तन्माचक्ष्व चाच्युत ॥

वशिष्ठ उवाच ।

इत्येवमुक्त्वा दक्षेण देवदेवो जनार्दनः ।

आचष्ट दुःखचयदं व्रतं विष्णुपदचयं ॥

सर्वारम्भविनिष्पत्तिकारकं पापनाशनं ।

संसारोच्छेदकौ धीरैर्यथेष्टं स्मिरबुद्धिभिः ॥

तदहं तव राजेन्द्र व्रतानामुत्तमोत्तमं ।

कथयामि समाचष्ट यथापूर्वं समासतः ॥

आधादे मासि राजेन्द्र पूर्वाषाढाषु पार्श्वे ।

(८४)

समभ्यर्च्य जगन्नाथमच्युतं नियतः शुचिः ।
 पुष्पैर्धूपैस्तथा हृद्यैर्गन्धैः सागुरुचन्दनैः ॥
 यथाविभवतथान्यैरक्षैर्वीक्ष्योभिरिव तु ।
 क्षीरक्षेहस्थितं तद्वद्व्यैर्विष्णुपदत्रयं ॥
 समभ्यर्च्य यथाशक्त्या केगवस्याग्रतो न्यसेत् ।
 यथांशं दद्याद्विषाय श्रीपतिः प्रीयतामिति ॥
 नक्तं भुञ्जीत राजेन्द्र हविष्यान्नं सुशोभनं ।
 तथैवोत्तरषाढासु श्रावणे मासि मानवः ॥
 तथैवाभ्यर्च्य गोविन्दं तथा विष्णुपदत्रयं ।
 विषाय च घृतं दत्त्वा प्रीणयित्वा भवःपतिं ॥
 भुञ्जीत गोरसप्रायं मानवो मौनमास्थितः ।
 स्त्री वा राजेन्द्र पूर्व्यासु तथा भाद्रपदासु वै ।
 फाल्गुने फाल्गुनी पूर्वा भवेदिति यदाष्टप ॥
 त्रिविक्रमं तदा देवं पूर्वोक्तविधिना र्चयेत् ।
 पदत्रयस्तु देवस्य समभ्यर्च्य तु पार्थिव ॥
 हिरण्यं दक्षिणां दद्यात् स्रज्जतिः प्रीयतामिति ।
 नक्तं भुञ्जीत राजेन्द्र आन्यपाकविवर्जितं ॥
 एष एवोत्तरायणे चैत्रे मासि विधिः स्मृतः ।
 अपुत्री लभते पुत्रमपतिर्लभते पतिं ॥
 समागमं प्रवासञ्च तथा प्राप्नोति बान्धवैः ।
 भद्रमैश्वर्यमारोग्यं सौभाग्यं वानुरूपतां ॥
 प्राप्नुयादक्षिलानेतान् पूजयित्वा पदत्रयं ।
 यान् यान् कामाकरः स्त्री वा हृदयेनाभिवाञ्छति ॥

तांस्तानाप्नोति निष्कामो विष्णुर्लोकं प्रपद्यते ॥
पूर्वं कृत्वापि पापानि नरः स्त्रो वा नराधिप ।
पदत्रयं व्रतञ्चात्र मुच्यते सर्वकिल्बिषैः ॥

इति विष्णुधर्मीतिरोक्तं विष्णुपदव्रतं ।

— ००० —

दत्त उवाच ।

अपुत्रता महादुःखमतिदुःखं कुपुत्रता ।
कुपुत्रः सर्वदुःखानां हेतुभूतो यतो मम ॥
धन्यास्तो तु सुतं प्राप्य सर्वदुःखविवर्जिताः ।
यत्तं प्रशान्तबलिनं भक्तं गुणविचक्षणं ॥
स्वकर्म्मनिरतं नित्यं देवद्विजपरायणं ।
अस्त्रज्ञं वेदधर्म्मज्ञं दोनानाथसमाश्रयं ॥
दैवानुकुलतायुक्तं युक्तं सम्यग्गुणेन तु ।
प्राप्नोति पुत्रं वै योऽस्मात्मान्यो धन्यतरो भुवि ॥
सोऽहमिच्छामि तत् श्रोतुं त्वत्तः कर्म्म महामुने ।
येन तज्जलपः पुत्रो लभ्यते मानवैरिह ॥

पुलस्त्य उवाच ।

एवमित्यहं भाग पित्रोः पुत्रसमुद्भवः ।
सर्वदुःखोपशमनं येनैतत् कथयामि ते ॥
कृतवीर्यो महीपातो हेहयानामभूत्परा ।
तस्य ग्रीष्मपतीनाम्नी बभूव वरवर्णिनी ॥
सा त्वपुत्रा महाभागा मन्त्रेयी पश्येदृच्छत ।

गुणांश्च पुत्रलाभस्य कृतासनपरिग्रहा ।

कथयामास मैत्रेयी नाम्ना नन्तव्रतं शुभं ॥

मैत्रेयुवाच ।

योऽयमिच्छेन्नरः कामं नारी वा वरवर्णिनी ।

स तं समाराध्य विभुं सम्यगाप्नोति केशवात् ॥

मार्गशीर्षे सृगशिरऋक्षं यस्मिन्दिने भवेत् ।

तस्मिन् सम्प्राश्य गोमूत्रं स्नात्वा नियतमानसः ॥

पुष्पैर्धूपैस्तथा गन्धैरुपहारैश्च श्रुतितः ।

वामपादमनन्तस्य पूजयेद्हरवर्चिनि ॥

अनन्तः सर्वकामाय जनन्तं भगवान् फलं ।

ददात्वानन्तश्च पुनस्तदिहैवान्यजन्मनि ॥

अनन्तपुण्योपचयश्चरोत्येतन्महाव्रतं ।

तद्याभिलषितावाप्तिं कुरु मे पुरुषोत्तम ॥

इत्युच्चार्यार्चनं तस्य यथाविधिविधानतः ।

समाहितमना भूत्वा प्रणिपातपुरःसरं ॥

विप्राय दक्षिणान्दद्यादनन्तः प्रीयतामिति ।

इत्युच्चार्य तथा नक्तं भुञ्जीयात्तैलवर्जितं ॥

तथैव पुरुषं पौषे पुष्पार्चं भगवत्कटिं ।

वामामभ्यर्च्य कर्त्तव्यं गोमूत्रप्राशनन्ततः ।

अनन्तः सर्वकामानामिति वोच्चारयेत् पुनः ॥

भुञ्जीत च तद्यान्यायं वाचयित्वा द्विजोत्तमान् ।

माघे मघासु तद्वहे वाङ्ग देवस्य पूजयेत् ॥

स्तन्यश्च फाल्गुनीयोगे फाल्गुने मासि भामिनि ।

चतुर्धेतेषु मासेषु गोमूत्रप्राशनं मतं ॥
 ब्राह्मणाय तथादद्यात्तिलान् धान्यकमेव च ।
 देवस्य दक्षिणं स्कन्धश्चैत्रे चित्रासु पूजयेत् ॥
 तथैव प्राशयेच्चात्र पञ्चगव्यं महीपते ।
 किञ्चित्तु कनकं दद्याद्दद्यावन्मासचतुष्टयं ॥
 वैशाखे तु विशाखायां वाहुं संपूज्य दक्षिणं ।
 तथैव दद्यात् कनकं नक्तं भुञ्जीत वाग्यतः ॥
 ज्येष्ठासु च कटिं पूज्य ज्यैष्ठे मासि शुभव्रत ।
 आषाढासु तथाषाढे कुर्यात् पादार्चनं विभोः ॥
 पादद्वयम्तु श्रवणे श्रावणे मासि पूजयेत् ।
 घृतं विप्राय दातव्यं प्राशयेत् यथाविधि ॥
 कार्तिकान्तेषु मासेषु प्राशनं दानमेव तु ।
 सुखं प्रीठपदायोगे मासि भाद्रपदेऽर्चयेत् ॥
 तद्देवाग्निने पूज्य हृदयश्चाग्निनीषु च ।
 कुर्यात्समाहितमना स्नानं प्राशनमर्चनं ॥
 अनन्तशिरसः पूजां कार्तिके कर्त्तिकासु च ।
 यस्मिन् यस्मिन् दिने पूजा तत्र तत्र दिने दिने ॥
 नाम तस्य तु जसव्यं श्रुतः प्रसूतलितादिषु ।
 घृतेनानन्तमुद्दिश्य पूर्वमासचतुष्टयं ।
 ततश्चतुर्थे मासेषु मधुना कुलनन्दन ।
 क्षीरेण श्रावणादौ च होमो मासचतुष्टयं ॥
 प्रशस्तं सर्वमासेषु हविष्याग्नेन भोजनं ।
 एवं द्वादशभिर्मासेः पारणचितयं भवेत् ॥

व्रतावसाने चानन्तं सौवर्णं कारयेच्छुभम् ॥
 राजतं मुषलञ्चैव तत्पार्श्वे विनिवेदयेत् ।
 पुष्पधूपदिनैवेद्यं पूजा कार्या यथाविधि ॥
 नाम्ना पीठोपरि हरिं मन्त्रैरेभिर्यथाक्रमम् ।
 नमोऽस्त्वनन्ताय शिरः पादौ सर्वात्मने नमः ॥
 शेषाय जानुयुगलं कामायेति कटिं नमः ।
 नमोऽस्तु वासुदेवाय पार्श्वे संपूजयेद्द्वरेः ॥
 सङ्कर्षणायेत्युदरं भुजौ सर्वास्त्रधारिणे ।
 कण्ठं श्रीकण्ठनाम्ना वै मुखमिन्दुमुखाय च ॥
 हस्तञ्च मुषलञ्चैव स्वनान्ना पूजयेद्बुधः ।
 एवं संपूज्य गोविन्दं सितवस्त्रविभूषितम् ।
 छत्रीपानत्समायुक्तं स्नग्दामालङ्कृतं तथा ॥
 नक्षत्रदेवताः पूज्या नक्षत्राणि च सर्वशः (१) ।
 सीमं नक्षत्रराजानं मासान् संवत्सरं तथा ॥
 नक्षत्रदेवतास्तु भविष्यत्पुराणात् ।
 अश्विनो यमराहुग्निर्धाता चन्द्र उमापतिः ।
 अदितिर्ष्याकपतिः सर्पः पितरश्च भगोऽय्यमा ॥
 रविस्त्वष्टा मरुच्चैव शक्राग्नी मित्र एव च ।
 भवन्ना निर्वृतिस्तीर्थं विश्वे देवाः त्रियः पतिः ॥
 वसवो वरुणस्तस्मादजोऽहिमघ्नपूषणौ ।
 नक्षत्रदेवता ह्येता कथितास्तत्र देवताः ॥
 षादशाश्च घटाः कार्याः सतीयाद्याश्चसंयुताः ॥

(१) नक्षत्राणि चतुर्दश इति पुरुषाकार पाठः ।

एवं संपूज्य विधिवद्देवदेवं जनार्दनं ।
 ब्राह्मणान् पूजयित्वा तु वस्त्रैराभरणैः शुभैः ॥
 एकं वा वेदवेदाङ्गपारगं संयतेन्द्रियं
 पुराणञ्च धर्मविदं अथ्यङ्गस्तु प्रियम्बदं ॥
 तस्य देयं समस्तं तदनन्तः प्रीयतामिति ।
 अन्येषां ब्राह्मणानास्तु देयं यित्तानुसारतः ॥
 अनेन विधिना भद्रे व्रतञ्चैतत् समाप्यते ।
 पारिते च समाप्नोति सर्वानिव मनोरथान् ॥
 पुत्रार्थिभिर्वित्तकामैर्भृत्यदारानभैः सुभिः ।
 पार्थिवश्चि मर्त्यैस्मिन्नारोग्यबलसम्पदः ।
 एतद्व्रतं महाभागे पण्यं क्लृप्त्स्वर्गं परं ॥
 अनन्तव्रतसंयुक्तं सर्वपापप्रणाशनं ।
 तत् कुरुष्वेतदेव त्वं व्रतं शीलधनप्रदं ।
 वरिष्ठं सर्वलोकस्य यदि पत्रमभोषसि ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तमनन्तव्रतं ।

—०००—

पुरूरवा उवाच ।

श्रोतुमिच्छामि भगवन् रूपमत्रं महाफलं ।
 यत्समाप्तौ भविष्यामि दिव्यरूपधरो मुने ॥

अत्रिरुवाच ।

तदेतद्भक्तकामेन अन्विष्यी ब्राह्मणो गुरुः ।
 ज्योतिषं योऽभिजानाति इतिहासांश्च कृतज्ञः ॥
 तत् प्रदिष्टेन विधिना पादाक्षपभृतिक्रमात् ।

फाल्गुन्यां समतीतायां कृष्णपक्षाष्टमी तु या ।
 समूलां तां तु संप्राप्य व्रतं गृह्णीत मानवः ॥
 उपोषितव्यं नक्षत्रं नक्षत्रस्य च दैवतं ।
 वरुणश्च तथा चन्द्रं पूजयेद्विधिना नरः ॥
 पूजयेद्देवदेवश्च भगवन्तं जनार्दनं ।
 उपोष्याङ्गानि देवस्य प्रयत्नेन च पूजयेत् ॥
 ततोऽग्निहवनं कृत्वा पूजयित्वा तथा गुरुं ।
 उपवासस्तु कर्त्तव्यो द्वितीयेऽहनि पार्थिव ॥
 उपोष्य ऋते विगते स्नात्वा संपूज्य केशवं ।
 कृत्वाग्निहवनं शक्त्या पूजयित्वा द्विजोत्तमान् ॥
 हविष्यान्नश्चभोक्तव्यं मृगु चाङ्गकर्म मम(१) ।
 पादयोः कथितं मूलं प्राजापत्यस्तु जङ्गयोः ॥
 अश्विनौ जानुयुगलं जरुयुग्मे च पार्थिव ।
 सहिते ह्ये तथाषाढे गुह्यश्च सहिते ऋते ॥
 पूर्वोत्तरे च फाल्गुन्यो कृत्तिका च कटिर्भवेत् ।
 पार्श्वयोः कुक्षियुतयोर्नक्षत्रचित्तयं समं ।
 उभे प्रोष्ठपदे राजन् रेवती च तथा भवेत् ॥
 उरोऽनुराधासु प्रष्ठं धनिष्ठासु प्रकीर्तितं ।
 भुजौ ज्येष्ठा विशाखासु हस्ते प्रोक्ता तथा करौ ॥
 अङ्गुल्यश्च तथा प्रोक्ता राजसिंह पुनर्वसु ।
 अश्लेषायां मखाः प्रोक्ता ज्येष्ठार्या नृप कम्बरः ॥
 अवने अवशौ ज्येष्ठा मुखं पुष्ये प्रकीर्तितं ।

(१) मृगु चाङ्गकर्म मम इति प. डा. कर ।

दत्ताः स्वाती शतभिषा हनुः प्रोक्ता तया नृप ॥
 मवाथां नासिके प्रोक्ते मृगशीर्षे च लोचने ।
 चित्रा ललाटे विज्ञेया भरण्याञ्च तथा शिरः ॥
 शिरोरुहाम्बुधारासु व्रतस्यान्ते नराधिप ।
 चैवशुक्लावसाने तु सत्रं परिममाप्यते ॥
 यद्यन्तरायं न भवेत् किञ्चिच्छीघ्रं निमित्ताज ।
 अङ्गक्रमेण सकलमृत्तवर्गमुपोषितः ॥
 ततान्ते प्रयतः स्नात्वा पूजयेत्तुभुसूदनं ।
 चन्दनागुरुकूर्पूरमृगदर्भैः सकुङ्कमैः ॥
 जातीफलैः सककौलैर्लवङ्गकुसुमैस्तथा ॥
 बालगुग्गुलुनिर्य्यासैः पुष्पैः कालोद्भवैः शुभैः ॥
 धूपी नरेन्द्रागुरुणा चन्दनेन सुगन्धिना ।
 दीपाञ्च देया राजेन्द्र तिलतैलेन पूरिताः ॥
 अग्रेषा वर्त्तयः कार्य्या महारजतरञ्जिताः ।
 नैवेद्याञ्च तथा कार्य्यं परमान्नंन पूरिणा ॥
 दध्ना क्षीरघृताभ्याञ्च मधुना च गुडैश्च च ।
 मितया च तथा भक्ष्यैः फलेर्मूलैर्यथाविधि ॥
 अपूपैः पानकैर्हृदयैः शीतलैश्च सुगन्धिभिः ॥
 लवणस्य च पात्राणि कृशरञ्च निवेदयेत् ।
 सर्व्वबीजानि राजेन्द्र भूषणानि च शक्तिः ।
 महार्हाणि च वस्त्राणि भक्त्या प्रयतमानसः ।
 तद्विष्णीः परमित्येवं होमः कार्य्यो ह्यनन्तरं ॥
 हादशाक्षरको मन्त्रस्त्रीशूद्रेषु विधीयते ।

घृतभाक्षिकसंयुक्तान् जडुयात्तिलतण्डुलान् ॥
 ततस्तु दक्षिणा देया गुरवे नृपसत्तम ॥
 नागानि च प्रदेयानि ग्रामाणि विविधानि च ।
 तुरगाणि च मुख्यानि रत्नानि विविधानि च ॥
 ब्राह्मणस्तु पिता ज्येष्ठो रूपसचप्रदर्शकः ।
 रूपसौभाग्यलावण्यजन्मारीग्यप्रदायकः ॥
 राज्यस्य वा द्विजत्वस्य बहुवित्तस्य दायकः ।
 न तस्य निष्कृतिः शक्या गन्तुं दानेन भूरिणा ॥
 गुरुप्रसाद एवात्र दक्षिणा न तु कारणं ।
 तस्मात् प्रसादमाकाङ्क्षेद्रूपसत्प्रदर्शकः ॥
 अवश्यं तस्य दातव्यं घृतपूर्णन्तु भाजनं ।
 चतुःपलन्तु कांस्यस्य सुवर्णं काञ्चनस्य च ॥
 ततः परं भोजनीयाः स्वशक्त्या द्विजपुङ्गवाः ।
 लवणक्षीरदध्याज्यगुडभक्षसितोद्वटं ॥
 भोजनं पानकीपेतं पश्चाद्देया च दक्षिणा ।
 वस्त्रयुग्मं प्रदातव्यं ब्राह्मणाय नवं शुभं ।
 बहुमूल्यं शुभश्चैव महारजतरङ्गितं ॥
 सप्त बीजानि देयानि लवणं कुप्यमेव च ।
 यच्चान्यदप्यभीष्टं स्याच्छोपानहमेव च ॥
 वित्तशाठ्यं न कर्त्तव्यं ह्यनदाने महीपते ।
 अवश्यदेयं सचेऽस्मिन् घृतपूर्णन्तु भाजनं ॥
 चतुःपलन्तु कांस्यस्य सुवर्णं काञ्चनस्य च ।
 व्रतेनानेन चीर्णेन देहत्यागे दिवं व्रजेत् ॥

तस्मास्ते सुखिरं कालं मानुष्येयदि जायते ।
 राजा भवति धर्मज्ञो ब्राह्मणो वा धनान्वितः ॥
 कुलं महति सम्भूतो रूपेणाप्रतिमो भुवि ।
 आरोग्यं महदाप्नोति सौभाग्यमपि चीत्तमं ॥
 लावण्यं बुद्धिमेधाश्च मतिं धर्मैः तिशास्वती ।
 संपूर्णचन्द्रप्रतिमः सर्व्वसत्त्ववशंकरः ॥
 नरा भवति राजेन्द्र नारी चाप्सरसां समा ।
 सुभगा दर्शनया च लावण्यगुणसंयुता ॥
 बहुधान्या बहुधना बहुभूषणसंयुता ।
 भर्तुं चात्स्वन्तदयिता लोके स्थाता च सद्गुणैः ।
 नित्यारोग्यवती कान्ता सर्व्वदोषविवर्जिता ॥
 चन्द्रानना नीलसरोजने च
 चैलोक्यकान्ता पतिव्रता च ।
 भवत्यवश्यं सुभगा सुशीला
 लावण्ययुक्ता यशसा त्रिधा च ।
 इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं रूपसत्त्वव्रतं ।

— ००० —

अथ नीराजनविधिः ।

राम उवाच ।

नीराजनं विधिस्त्वत्तः श्रोतुमिच्छामि सत्तम ।
 कथं कार्या नरेन्द्रस्य शान्तिर्नीराजनो प्रभो ॥
 पुष्कर उवाच ।

पृथ्वीक्षरे तु दिग्भागे नगरे च मनोहरे (१) ।
 विस्तीर्णं कारयेद्वाजन् सुमनोहरमाश्रमं ॥
 कटैर्गुप्तं कुशास्तीर्णं पताकाध्वज शोभितं ।
 तोरणत्रितयं तत्र प्राप्नुयुः कारयेच्छुभं ॥
 कार्यं षोडशहस्तान्तु तोरणान्तु समुच्छयेत् ।
 वैपुल्यं दशहस्तान्तु तथा कार्यं भृगूत्तम ॥
 तोरणादक्षिणे भागे तत्र कार्यमथाश्रमं ।
 देवतार्चा भवेत्तत्र तद्याग्निहवनक्रिया ॥
 अष्टहस्तायतोत्सेधमुत्सुकानान्तु वामतः ।
 कार्यं भवति शुष्काणां कूटं भृगुकुलोद्भवं ॥
 पञ्चरङ्गकसूत्रेण गतग्रन्थि मंनोरमा ।
 मध्यमे तोरणे कुर्याच्छतपाशान्तु मध्यगां ।
 कृदायित्वा कुशैस्तान्तु मृदा संक्रादयेत्पुनः ॥
 तस्याश्च लङ्घनं वर्ज्यं प्रपन्नात् सर्वजन्तुभिः ।
 न लङ्घिता च यावत्स्यात् प्रथमं राजहस्तिना ॥
 चित्रान्यक्ता यदा स्वातिं सविता प्रतिपद्यते ।
 ततः प्रभृतिकर्त्तव्या यावत् स्वाती रवि स्थितः ॥
 आश्रमे प्रत्यहं देवाः पूजनीया हिजोत्तम ।
 ब्रह्मा विष्णुश्च शम्भुश्च शक्रश्चैवानिलानलौ ॥
 विनायकः कुमारश्च वरुणो धनदो यमः ॥
 विश्वे देवा महाभागा उच्चैःश्रवस एव च ॥

(१) पृथ्वीक्षरे तु नगरे देशे तु सुमनोहरे इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

ऋष्टौ महागजाः पूज्यास्तेषां नामानि मे शृणु ।
 कुसुदैरावणः पद्मः पुष्पदन्तोऽथ वामनः ॥
 सुप्रतीकोऽञ्जनी नील एतेऽष्टौ देवयोनयः ॥
 पूजा कार्या ग्रहर्क्षाणां तथैव च पुरोधसा ।
 ततस्तु जुहुयाद्भक्तो पुरोधाः सुसमाहितः ।
 यथाभिहितदेवानां मन्त्रैस्तस्मिन्संज्ञकैः ॥
 तथा च मन्त्रहीनानां प्रणवेन महाभुज ॥
 समिधः क्षीरहस्ताणां तथासिद्धार्थकानि च ।
 हुत्वा च कलशान् कुर्यात् सोदकान् घनसंयुतान् ॥
 पूजिताभ्यान्वगन्धैश्च वनस्पतिविभूषितान् ।
 पञ्चरङ्गकसूत्रेण कुर्याद्वस्त्रयुगन्तथा ।
 भस्मातशालिसिद्धार्थवचाकुष्ठप्रिष्टङ्गवः ॥
 तीरणात् पश्चिमे भागे कलशैः पूर्वकल्पितैः ।
 स्नातः संस्त्रापनीयाः स्युर्ध्मन्त्रपूतैर्गजोत्तमाः ॥
 तुरगाश्च महाभाग अलङ्कृत्य ततस्तु तान् ।
 ततोऽभिषेकं नागस्य तथा तं तुरगस्य च ॥
 अन्नपिण्डं ततो देयमभिमन्त्र्य पुरोधसा ।
 तस्याभिनन्दने राज्ञो विजयः परिकीर्तितः ॥
 त्यागे च तस्य विजयेयं महद्भगमुपस्थितं ।
 निष्क्रामयेत्तीरणैस्तु ततोहि प्रथमं गजं ॥
 तत्रापि प्रथमं राम अभिषिक्तं गजोत्तमं ।
 तस्यादौ तुरगस्यैव राज्ञो मरणमादिशेत् ॥
 दुर्भिक्षं तच्च विजयेयं गोचरोद्भूतं सङ्घने ॥

लङ्घयेहामपादेन यदि तं नृप कुञ्जरं ।
 राज्ञीपुरोहितामात्यराजपुत्रादितं भवेत् ॥
 राज्ञस्तु मरणं ब्रूयादाक्रामेत्तं पदा यदा ।
 राज्ञी विजयमाचष्टे लङ्घयेद्विधिनेन तं ॥
 राजहस्तिनि निष्क्रान्ते सान्त्वयस्य क्षयो भवेत् ॥
 निष्क्रामेयुस्ततः सर्वं प्राप्नु स्वास्तोरणैर्गजाः ॥
 ततोऽग्राः सुमहाभाग ततस्तु नरसत्तम ।
 ततश्छत्रं ध्वजश्चैव राजलिङ्गानि यानि च ॥
 ततस्तु तानि संस्थाप्य पूजयेदायुधानि च ।
 पञ्चरङ्गकनूत्रेण यास्ताः प्रतिसराक्षताः ॥
 दूष्यादूष्येति मन्त्रेण निबध्नीयात् पुरोहितः ।
 सर्वेषां नृप नागानाम्पुरङ्गाणाञ्च भार्गव ॥
 स्वगृहेष्वथ ते नेयाः कुञ्जरास्तुरगैः सह ।
 स्वातिस्थः सविता यावत् तावच्छालासु संस्थितान् ॥
 पूजयेत् सततं राम माक्रोशेन च ताडयेत् ।
 राजचिह्नानि सर्वाणि पूजयेदाश्रमे सदा ॥
 पूजयेद्दक्षिणं नित्यं तथा सुविधिवद्भिजान् ।
 भूतेभ्यः च तदा कार्यं राज्ञी बलिभिरुत्तमैः ॥
 आश्रमो रक्षणीयः स्यात् पुरुषैः शस्त्रपात्रिभिः ।
 वसेतामाश्रमे नित्यं संवत्सरपुरोहिती ॥
 अश्ववैद्यप्रधानश्च तथा नागभिक्षुश्चरः ।
 दीक्षितैश्च तथा भाव्यं ब्रह्मचारिभिरेव च ॥
 स्वातिं त्यक्त्वा यदा सूर्यो विद्यायां प्रतिपद्यते ॥

अस्तदुर्व्याहिने तस्मिन् वाहनस्तु विशेषतः ।
 पूजिता राजलिङ्गाय कर्त्तव्या नरहस्ताः ॥
 हस्तिनस्तुरगं कृतं शङ्खचापश्च दुग्धभिः ।
 ध्वजं पताकां धर्मज्ञं चापस्तमभिमन्त्रयेत् ॥
 अभिमन्त्र्य ततः सर्वान् कुर्यात्कुञ्जरधूर्गतान् ।
 कुञ्जरोपरिगो स्यातां संवत्सरपुरोहितौ ॥
 अश्ववैद्यप्रधानश्च तथा नागभिषग्वरः ।
 ततोऽभिमन्त्रितं राजा समारुह्य तुरङ्गमम् ॥
 निष्क्रम्य तोरणैर्नागमभिमन्त्रितमारुहेत् ।
 तोरणेन विनिष्क्रम्य कुर्यात् सुरविवर्जितम् ॥
 बलिं विभज्य विधिवद्राजा कुञ्जरधूर्गतः ।
 रत्नैरलङ्कृतः सर्वैर्वीज्यमानश्च चामरैः ॥
 उन्मृकानास्तु निचयमदीपितमनन्तरम् ।
 राजा प्रदक्षिणीकुर्यात् त्रीनवारान् सुसमाहितः ॥
 चतुरङ्गबलोपेतः सर्वसैन्यसमन्वितः ।
 पौरैः क्लिलकिलाशब्देः सर्ववादिभनिस्वनैः ।
 बलितैश्च पदातीनां दृष्ट्वा तान् मनुजोत्तम ॥
 एवं कृत्वा गृहं गच्छेद्राजसैन्यपुरःसरः ।
 जनं संपूज्य च महत्सर्वमेव विसर्जयेत् ॥
 शान्तिर्नीराजनाख्येयं कर्त्तव्या वसुधाधिपैः ।
 चेमल्लङ्घिकरो राम नरकुञ्जरवाजिनाम् ॥

धन्या यशस्या रिपुनाशनी च
 सुखावहा शान्तिरनुत्तमा च ।

कार्थ्या नृपैराद्विद्वद्भिर्हेतोः

सर्वप्रशङ्गेन भृगुप्रवीर ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तो नीराजनविधिः ।

भीष्म उवाच ।

उपवासेष्वगस्तस्य तदेव फलमिच्छतः ।

अनभ्यासेन रोगाह। किमिष्टं व्रतमुच्यतां ॥

पुलस्त्य उवाच ।

उपवासेष्वगस्तानां नक्तं भाजनमिष्यते ।

यस्मिन् व्रते तदप्यत्र श्रूयतां वै व्रतं महत् ॥

आदित्यशयनं नाम यथावच्छङ्करार्चनं ।

येषु नक्षत्रयोगेषु पुराणज्ञा प्रचक्षते ॥

यदा हस्तेन सप्तम्यामादित्यस्य दिनं भवेत् ।

सूर्यस्य वायु संक्रान्ती सा तिथिः सर्वकामिकी ॥

उमामहेश्वरस्यार्चामर्चयेत् सूर्यनामभिः ।

सूर्यार्चां शिवलिङ्गं च उभयं पूजयेदतः ॥

उमापते रवेर्वापि न भेदः कचिदिष्यते ।

यस्मात्तस्मात्पृथगे ह गृहे शम्भुं समर्चयेत् ॥

अर्चा प्रतिमा । उमामहेश्वररूपस्तु प्रथमकृष्णाष्टमीव्रतोक्तं
वेदितव्यं ।

हस्तेन सूर्याय नमोऽस्तु पादा-

वर्काय चित्रासु च गुल्फदेशं ।

स्वातीषु जङ्घे च सुरोत्तमाय
 धात्रे विशाखासु च जानुदेशं ॥
 तथानुराधासु नमोऽस्तु पूज्य
 ऊरुद्वयं देवसहस्रभानोः ।
 ज्येष्ठास्त्रनङ्गाय नमोऽस्तु गुह्य-
 मिन्द्राय सोमाय कटिच मूले ॥
 पूर्वोत्तराषाढयुगे च नाभिं
 त्वष्ट्रे नमः सप्ततुरङ्गमाय ।
 तीक्ष्णांशवे तु श्रवणे च वक्षः
 कक्षे धनिष्ठासु विकर्त्तनाय ॥
 वक्षस्थलं ध्वान्तविनाशनाय
 जलाधिपर्चे प्रतिपूजनीयं ।

जलाधिपर्चं, शततारा ।

पूर्वोत्तराभाद्रपदद्वये च
 वाहू नमःसन्ध्याकराय पूज्यौ ॥
 साम्नामधीशाय करद्वये च
 संपूजनीयं नृप रेवतीषु ।
 नखानि पूज्यानि तथाऽग्निनीषु
 नमोऽस्तु सप्तार्द्धधुरन्धराय ॥
 कठोरधाम्निभरणीषु पृष्ठं
 दिवाकरायैत्यभिपूजनीया ।
 ग्रीवाम्निऋतेऽधरमम्बुजेषं
 संपूजयेद्भारतरोहिणीषु ॥

(८६)

अग्निष्टचत्तु क्षत्तिका ।

मृगोत्तमाङ्गे दशनाः पुरारे
संपूजनीया हरये नमस्ते ।
नमः सवित्रे इति शाङ्करे तु
नासाक्षिपूज्याथ पुनर्व्वसौ च ॥
शाङ्करमाद्रौ ।

ललाटमश्वोरुहवत्तभाय
पुण्येऽलकान्वेदसमीरणाय ।
साप्येऽथ मौलिं विबुधप्रियाय
मघासु कर्णाविति गोगणेशः ॥

साप्ये^१ अश्लेषा ।

पूर्व्वासु गीम्राङ्गणनन्दनाय
नेत्राणि संपूज्यतमानि शम्भोः ।
अथोत्तराफाल्गुनिषु भ्रुवौ च
विश्वेश्वरायेति च पूजनीयौ ॥
नमोऽस्तु पाशाङ्कुशपद्मशूल
कपालसर्पेन्दुधनुर्धराय ।
गजासुरानङ्गपुरान्धकारे
विनाशमूलाय नमः शिवाय ॥
इत्यादि चास्त्राणि च पूज्य नित्यं
विश्वेश्वरायेति शिरोऽभिपूज्यं ।
भोक्तव्यमत्रैव मतैकमक्ष-
ममाक्षमचारमभक्तशेषं ॥

इत्येवंविधनक्तानि कृत्वा दद्यात् पुनर्द्वयं ।

शालेयतण्डुलप्रस्थमुडम्बरमये घृतं ।

उडम्बरमये, ताम्रमये ।

संस्थाप्य पात्रे विप्राय सहिरष्णं निवेदयेत् ।

सप्तमे वस्त्रयुग्मश्च पारणे त्वधिकं भवेत् ॥

चतुर्थये तु संप्राप्ते पारणे भारताब्दिके ।

आब्दिके, सांवत्सरिके । सप्तविंशत्या द्विसेरे कैकम्पारणमिति-
संवत्सरे अष्टादशदिनाधिके चतुर्दशपारणानि भवन्ति ।

ब्राह्मणान् भीजयेद्भक्त्या गुह्यचौरघृतादिभिः ॥

कृत्वाथ काञ्चनं पद्ममष्टपत्रं सकर्षिकं ।

शुद्धमष्टाङ्गुलं तच्च पद्मरागदलान्वितं ॥

शय्यां विलक्षणां कृत्वा विरहयन्त्रिवर्जितां ।

सीपधानकविश्रामां स्वास्तीर्णां चरणाश्रयां ॥

पादुकोपानङ्गुलचामरासनदर्पणैः ।

भूषणैरपि संयुक्तां फलवस्त्रानुलेपनैः ॥

तस्यां निधाय तत्पद्ममलंकृत्य गुणान्वितं ।

कपिलां वस्त्रसंयुक्तामतिशीलां पयस्विनीं ॥

रौप्यचुरां हेमशृङ्गीं सवक्त्रां कांस्यदोहनो ।

दद्यान्मन्त्रेण पूर्वार्द्धे वज्रिनाभिविलम्बयेत् ॥

यथैवादित्यशयनमशून्यं तत्र सर्वदा ।

कान्ध्या धृत्या श्रिया रत्या तथा मे सन्तु मिदयः ॥

यथा न देवाः श्रेयांसि त्वदन्यमनघं विदुः ।

तथा मामुदराशेषदुःखसंसारसागरात् ।

ततः प्रदक्षिणीकृत्य प्रणम्य च विसर्जयेत् ॥

शय्यासनादि तत्सर्वं द्विजस्य भवनं नयेत् ।

इदं महापातकभित्तराना

मघत्तयं वेदविदो वदन्ति ।

न बन्धुपुत्रेण धनैर्वियुक्तः

पत्नीभिरानन्दकरःसुराणां ।

नाभ्येति रोगं न च दुःखशीलं

यावाप्य नारौ कुरुतेऽथ भक्त्या ॥

इति पठति शृणोति वा य इत्थं

हरिशयनं पुरुङ्गतवल्गुभः स्यात् ।

अपि नरकगतान् पितृनपेशेषा-

नपि दिव्यमानयतीह यः करोति ॥

इति पद्मपुराणोक्तमादित्यशयनव्रतं ।

—००(a)००—

अश्विन्यामहोरात्रं वा दिनानि तिः विंश रोगो जायते ।
अश्विनौ देव ते । क्षीरलब्धकनैवेद्यं । नीलोत्पलपुष्पं । छत-
गुग्गुक्षुधूपः । देवस्येति पूजामन्त्रः । क्षीरहृत्तस्य समिधो
होमद्रव्यं ॥ १ ॥

भरण्यां मृत्युः सन्देहो वा । दिनानि एकविंशतिः । यमो
देवता । गुडपूपार्कनैवेद्यं । कृष्णसुरभिपुष्पं । सुरभी तुलसी ।
पुत्रकेशगुडधूपः । त्र्यम्बकं यजामहे इति पूजामन्त्रः । छतमधु-
तिलान् जुहुयात् ॥ २ ॥

कस्तिकायां दिनानि सप्त । अग्निर्देवता । हृतीदनं नैवेद्यं ।
यूथिकापुष्पं । सर्पिर्धूपः । पुनस्तु मां देवजना इति पूजा-
मन्त्रः । हृतं प्रधानद्रव्यं ॥ ३ ॥

रोहिण्यां दिनान्यष्टौ । प्रजापतिर्देवता । क्षीरोदनं नैवेद्यं ।
कमलपुष्पं । सरस्वी धूपः । नमो ब्रह्मणे नमोऽगस्त्य इति मन्त्रेण
पूजा । सर्वधान्यानि जुहुयात् ॥ ४ ॥

मृगशिरसि पञ्चदिनानि । सोमो देवता । पायसनैवेद्यं ।
कुङ्कुमपुष्पं । दशाङ्गो धूपः । नवीनवो भवति इति पूजामन्त्रः ।
गव्यं पयः प्रधानद्रव्यं ॥ ५ ॥

आर्द्रायां मृतुः । रुद्रो देवता । मौहलिका नैवेद्यं । वीरि-
कापुष्पं जीवकः धूपः । नमः शम्भवायेति पूजामन्त्रः । मध्याह्नं
प्रधानद्रव्यं ॥ ६ ॥

पुनर्वसौ दिनानि सप्त । अदितिर्देवता । गुह्योदनं नैवेद्यं ।
मल्लिकापुष्पं । मलयजधूपः । अदितिर्यो रदितिरिति पूजामन्त्रः ।
हृततण्डुलं प्रधानद्रव्यं ॥ ७ ॥

पुष्ये दिनानि सप्त । गुरुर्देवता । खण्डमण्डका नैवेद्यं । मरीक-
पुष्पं । षठिकाधूपः । हृहस्पति अतीयेति मन्त्रेण पूजा । हृतपाय-
सम्प्रधानद्रव्यमिति ॥ ८ ॥

अश्लेषायां दिनानि दश नागादेवताः । हृतनैवेद्यं । अगस्ति-
पुष्पं । हृतगुडधूपः । नमोस्तु सर्पेभ्य इति पूजामन्त्रः । दधिहृत-
शालियवं प्रधानद्रव्यं ॥ ९ ॥

मघायां मृत्युः मन्देहोवा । दिनान्येकत्रिंशतिः । पितरो-
देवताः । हृतपुराणे नैवेद्यं । चम्पकपुष्पं । गुग्गुलुधूपः । पितु-

स्तुप्तीषमिति पूजामन्त्रः । तिलतण्डुलमधु घृतपात्राणि प्रधानद्रव्यं ॥ १० ॥

पूर्वफागुन्याम्दिनानि पञ्चदश । भगोदेवता । कृशरानैवेद्यं । श्वेतकरवीरपुष्पं । विष्णुफलधूपः । यन्मे गर्भेवसत इति पूजामन्त्रः । समव्रीहयः प्रधानद्रव्यं ॥ ११ ॥

उत्तरफल्गुन्याम्दिनान्येकविंशतिः । अर्यमा देवता । रक्तशाल्योदनं नैवेद्यं । रक्तोत्पलपुष्पं । घृतगुग्गुलुधूपः । अहं रुद्रे भिर्वसुभिरिति पूजामन्त्रः । प्रियङ्गवः प्रधानद्रव्यं ॥ १२ ॥

हस्ते मृत्युसन्देशो । दिनानि पञ्चदश । सविता देवता । अपूपनैवेद्यं । रक्तकरवीरपुष्पं । शङ्खकोधूपः । उदुत्यन्नातवेदः समिति पूजामन्त्रः । दधि प्रधानद्रव्यं ॥ १३ ॥

चित्रायां दिनानि दश । त्वष्टा देवता । मोदकानैवेद्यं जयापुष्पं । यूथिकापर्शकधूपः । चित्रं देवानामिति पूजामन्त्रः । चित्रोदनं प्रधानद्रव्यं ॥ १४ ॥

स्वात्यां मासा नवधा । वायुर्देवता । दध्योदनं नैवेद्यं । दमनकपुष्पं । कृष्णागुरुधूपः । सनः पितेव सूनव इति पूजामन्त्रः । घृतयवान्द्रव्यं ॥ १५ ॥

विशाखायां दिनानि पञ्चविंशतिः । इन्द्राग्नी देवते । घुणकोनैवेद्यं । तुम्बरिका पुष्पं । देवदारुधूपः । इन्द्राग्नी आगतमिति पूजामन्त्रः । दध्योदनं प्रधानद्रव्यं ॥ १६ ॥

अनुराधायां दिनानि दश । मित्रोदेवता । कृशरानैवेद्यं । पौण्डरीकपुष्पं । चन्दनसिङ्गरसधूपः । देव सवितः प्रसुव यज्ञमिति मन्त्रः । सूरणकन्दं प्रधानद्रव्यं ॥ १७ ॥

ज्येष्ठायां दिनानि पञ्चदश । इन्द्रोदेवता । चित्तोदननैवेद्यं ।
कर्पूरागुरुधूपः । पाटलिकापुष्पं । इन्द्रोमायाभिरिति पूजामन्त्रः ।
सुरसकन्दमूलं प्रधानद्रव्यं ॥ १८ ॥

मूले मृत्युः । राक्षसो देवता । सस्तमांससुरापोलिकानैवेद्यं ।
कृष्णसोम्यरिका पुष्पं । मेघशृङ्गधूपः । ब्राह्मणान्नसंविधान इति
पूजामन्त्रः । मूलकन्दः प्रधानद्रव्यं ॥ १९ ॥

पूर्वाषाढायां दिनानि सप्तविंशतिः । आपो देवता । मण्डको
नैवेद्यं । कङ्कारपुष्पं शैलजधूपः । किञ्चिदम्बरुणेति पूजामन्त्रः ।
रक्तशास्त्रयः प्रधानद्रव्यं ॥ २० ॥

उत्तराषाढायां दिनानि त्रिंशतिः । विश्वे देवा देवता ।
विश्वपञ्चकनैवेद्यं । पञ्चवर्णपुष्पं । बालकधूपः । विश्वे देवास
आगत इति पूजामन्त्रः । शङ्खकोखण्डानि प्रधानद्रव्यं ॥ २१ ॥

श्रवणे दिनानि नव । विष्णुर्देवता । क्षीरशर्कराघृतमण्डका-
नैवेद्यं । जातीपुष्पं । दशाङ्गधूपः । अतोदेवा अवन्तु न इति
पूजामन्त्रः । रक्ततण्डुलाः प्रधानद्रव्यं ॥ २२ ॥

धनिष्ठायां दिनानि पञ्चदश वसवो देवता । वटवटका-
नैवेद्यं । शतपत्रिका पुष्पं । घृतगुग्गुलधूपः । आयन्तामिह देवा
इति पूजामन्त्रः । उडुम्वरउदकोद्भवानि प्रधानद्रव्यं (२३) ।

शतभिषायां दिनानि दश । वरुणोदेवता । घृतवटका-
नैवेद्यं । उदकोद्भवानि पुष्पं । कर्पूरागुरुधूपः । इमं मेहेति
पूजामन्त्रः । उदकोद्भवानि पुष्पाणि प्रधानद्रव्याणि च (२४) ।

पूर्वभाद्रपदायां मृत्युः । अजैकपादेवता । दधिसर्पिषो
नैवेद्यं । शतपत्रपुष्पं । सर्वोषधिधूपः । शमन्निरन्निभिः

करदिति पूजामन्त्रः । ग्राम्यं पूतिकरञ्च कुष्माण्डखण्डानि च प्रधानद्रव्यं (२५) ।

उत्तरभाद्रपदायां दिनानि पञ्चदश । अहिबध्नो देवता । गुड-
पल्लशीतोदनं नैवेद्यं । कर्पूरपत्रिका पुष्पं । घृतनिम्बपत्र
भूपः । विष्णुर्योनिं कल्पयतु इति पूजामन्त्रः । आर्द्रमेषरुधिर-
दुग्धानि प्रधानद्रव्यं (२६) ।

रेवत्यां दिनान्यष्टौ । पूषा देवता । तिललङ्घुकपिन्याकं नैवेद्यं ।
मन्दारपुष्पं । गुग्गुलधूपः । हंसः शुचिषदिति पूजामन्त्रः ।
घृतदुग्धानि फलानि जुहुयात् ॥ २७ ॥

यथोक्तब्राह्मणेन यस्य नक्षत्रस्य यदुक्तं द्रव्यं तदष्टोत्तरशतं
जुहुयात् गायत्र्या ।

यथोक्तविधिरेवैषः सद्यः प्रत्ययकारकः ।

नक्षत्रतर्पणं यागस्तथारोग्यं प्रयच्छति ॥

पूर्वसमिद्धि (१) स्तिलैः क्षीराज्येनाष्टशतं जुहुयात् ।
द्वादशनामानि मण्डले लिख्य पूजयेत् । मध्ये नक्षत्रदेवतां प्रति-
ष्ठाप्य वस्त्रयुग्मे न वेष्टितां ब्राह्मणाय दद्यात् । रोगशान्तिर्भवति ।

इति गर्गोक्तो नक्षत्रहोमविधिः ।

—०—

मार्कण्डेय उवाच ।

यस्मिन् हि जननं यस्य जननस्तस्य तत् स्मृतं ।

चतुर्थमानसं तस्माद्दशमं कर्कसीकृतं ॥

साङ्गातिकं षोडशं स्याद्दिशं समुदयं स्मृतं ।
 वैनाशिकन्तु नक्षत्रं कर्मर्चाख्यं त्रयोदशं ॥
 षड् नक्षत्रस्तु पुरुषः सर्वप्रोक्तो महीपते ।
 राजा च नवनक्षत्रो नक्षत्रत्रितयं शृणु ॥
 नित्यमभ्यधिकं षड्भ्यः पार्थिवस्य नृपोत्तम ।
 देशोऽभिषेकनक्षत्रं जातिनक्षत्रमेव च ।
 जात्याश्रितानि वक्ष्यामि नक्षत्राणि तवानघ ॥
 पूर्वार्तयमथान्येयं ब्राह्मणानां प्रकीर्तितं ।
 पौष्णं मेवं तथा पितृं प्राजापत्यं तथा स्मृतं ॥
 आदित्यमाश्विनं हस्तं शूद्राणामभिजित्तथा ।
 सार्वं विशाखा याम्यश्च वैष्णवश्च नराधिप ॥
 प्रतिलोमोद्भवानाश्च सर्वेषां परिकीर्तितं ।
 इह देहार्थहानिः स्यात् जन्मर्त्तं तूपतापिते ॥
 कर्मर्त्तं कर्मणां हानिः षोडशं मनसि मानसे ।
 मूर्त्तिर्द्रविणवम्भूनां हानिः साङ्गातिके हृते ॥
 सन्तप्ते सामुद्रिके मित्रभृत्यार्थसंक्षयः ।
 वैनाशिके विनाशः स्याद्देहद्रविणसम्पदां ।
 षोडशे चाभिषेकर्त्ते राज्यभ्रंशं विनिर्द्दिशेत् ॥
 देशर्त्ते षोडशे षोडशं देशस्य च पुरस्य च ।
 षोडशे जातिनक्षत्रे राज्ञो व्याधिं विनिर्द्दिशेत् ॥

ग्रहर्त्तजातां समवाप्य षोडशं
 पूजा तु कार्या विधिना स्वकेन ।
 ततः शुभं विन्दति राजसिंह

(८७)

विधूतपापः पुरुषः सदैव ॥

शक्तम् च तु संगृह्य खेतस्य वृषभस्य तु ।
 खेतगोः पयसा सार्धं स्नातव्यं कुशवारिणा ॥
 जन्मनक्षत्रपीडायां तस्मात् क्लेशादिमुच्यते ।
 शिरीषचन्दनाश्वत्थनागदानाम्बुभिनेरः ॥
 स्नातस्तु मानसे तप्ते तस्माद्दीपादिमुच्यते ।
 सिद्धार्थं च प्रियङ्गुञ्च शतपुष्पां गतावरीं ॥
 स्नातव्यमम्भसि क्षिप्त्वा कर्मर्चे नृप पीडिते ।
 प्रियङ्गुविल्बसिद्धार्थश्वत्थसुराह्वया ॥

सुराह्वा, देवदारुः ।

चन्दनोदकसंयुक्तं स्नानं साङ्ग्रातिके हितं ।
 सर्वगन्धोदकैः स्नानं तथासिद्धार्थकैः शुभैः ॥
 पीडिते समुदायर्चे पुंषां कल्मषनाशनं ।
 वृषशृङ्गाहृतमृदा तथा विष्णोदकैः शुभैः ॥
 शतपुष्पासमीपेतैः स्नानं वैनाशिके भवेत् ।
 पीडिते चाभिषेकर्चे सर्वरत्नोदकैस्तथा ।
 पीडिते देशनक्षत्रे मृद्भिः स्नानं विधीयते ॥
 मृत्तिकाञ्च प्रवक्ष्यामि शृणुष्व गदतो मम ।
 नद्याः कूलद्वयान्मध्यात् सङ्गमात्सरसस्तटात् ॥
 अश्वस्थानाङ्गजस्थानाङ्गोस्थानाङ्गिरिमस्तकात् ।
 शक्रस्थानात् सवल्लीकाङ्गाजस्थानात्सुरालयात् ॥
 गङ्गाङ्गोद्भृताश्चैव वृषशृङ्गोद्भृतां तथा ।
 सर्व्वबीजोदकैः स्नातो जातिनक्षत्रपीडने ।

मुच्यते किंलिपाद्राजन् नात्र कार्या विचारणा ॥

इदमापः प्रवृत्तः स्नानमन्त्रः प्रकीर्तितः ॥

स्नातस्तथैवं नृपचन्द्रपद्मात्

स्नानम्यकुर्वीत जघोपदिष्टः ।

पीडाकरस्याथ ततस्तु कार्य्यं

नक्षत्रयागो विहितो यथावत् ॥

पीडाकरस्याथ ततस्तु कार्य्यं

पूजा ग्रहेन्द्रस्य नरन्द्रचन्द्र ।

तं पूजयेद्वाप्यथ चन्द्रयुक्तं

ततः स दीषान् सकलान् जहाति ।

इति विष्णुधर्मोत्तिरोक्ता नवनक्षत्रशान्तिः ।

—००(१)००—

मनुरुवाच ।

यदीच्छसि सुभर्तारमिह जन्मन्यथापरे ।

कन्या कुर्यान्नृपश्रेष्ठ विष्णुना कथितं व्रतं ॥

सर्वपापहरं पुण्यं सर्वकामफलप्रदं ।

उमामहेश्वरं नाम कर्त्तव्यं विधिना यथा ॥

प्रोष्ठाश्विने तथा मासे मृगे भाग्येऽथ वा मुने ।

मैत्रे शाक्तेऽथवा कार्य्यं षष्टम्याश्वाथ गाहरे ॥

प्रोष्ठो भाद्रपदो मासः । मृगो मृगशिरानक्षत्रं । भाग्यपूर्वं
फाल्गुनी । मैत्रं अनुराधा । गात्रं ज्येष्ठा । शाङ्करं आर्द्रा ।

पूर्वेऽहनि सप्तमीकं ब्राह्मणं शुभसङ्गतं ।

एकभार्य्यं नरं यत्स सर्वधर्मव्रतान्वितं ॥

आमन्त्र्य मम चोद्देशं प्रातः कार्यस्त्वनुग्रहः ।
 सुदान्वितस्तदा कुर्यात्कलिहन्धविवर्जितः ॥
 मधुरान्नेन भोज्यन्तु क्षीरेक्षुयवशालिभिः ।
 सितमूत्रे तथा रक्ते शुभे देये च वाससी ॥
 निर्मले सद्गते वत्स देवदेवीप्रसाधके ।
 स्नात्वा उमेश्वरं पूज्य स्थण्डिले प्रतिमासु च ॥
 उमामहेश्वरप्रतिमालक्षणप्रमाणन्तु अवियोगह
 वेदितव्यं ।

हुत्वा दिशां बलिं दत्त्वा वितानमवधारयेत् ।
 चतुरस्रं चतुर्द्वारं गोमयेनोपलिप्य च ॥
 चतुष्कं शालिगोधूमकर्णकैरुपशोभितं ।
 दीपमालान्वितं कृत्वा दाम्पत्यं भोजयेत्ततः ॥
 शङ्करोमं समाध्याय शक्रास्यं शुभचर्चितं ।
 मदचन्दनकाश्मीरकपूर्वरागरुधूपितं ।
 जातीपुष्पागमन्दारमितपत्रैस्तु कल्पितं ॥
 स्थाप्य युग्मं सुसंवीतं त्रिधा कृत्वा प्रदक्षिणं ।
 सुखलेपेन सम्भोज्य ध्यायेत्तु तमुमेश्वरं ॥
 आचम्य चार्घ्यपादौ दद्याद्द्वयोदकं तथा ।
 सहिरण्यं सरत्नान्तु पुनर्दत्त्वा क्षमापयेत् ॥
 प्रीयतां मे उमाभर्ता सर्वदेवपतिः पतिः ।
 उमामन्त्रेण चैवोमामीशमन्त्रेण शङ्करं ॥
 पूजितः सर्वकामान्वै प्रयच्छत्यविचारतः ।
 अनेन प्राप्नुयाद्वारी अवियोगं सुरेश्वर ॥

इह जन्मनि सौभाग्यं धनपुत्रसुखानि च ।
 मृता याति परं स्थानं शङ्करोमासमन्वितं ॥
 तत्र भुक्ता महाभोगान्देहावाप्तिर्महाकुले ।
 समृद्धिऋतिसम्पन्नं पतिं विन्दति शोभनं ॥
 लावण्यरूपसम्पन्ना भर्तुष्येष्टा सदा भवेत् ॥
 श्लाघनीया समस्तस्य विभवान्तःपुरस्य च ।
 सुपुत्रा जीववत्सा च आधिव्याधिविवर्जिता ॥
 भुक्ता यथेप्सितान् कामान् हृदये पतिपूर्विका ।
 दिवं याति नृपस्येष्ट शङ्करोमाश्चका च या ॥
 नरो वानेन विधिना नारीणां जायते पतिः ।
 समृद्धः सर्व्वभूतानां पतित्वमुपगच्छति ॥
 शङ्करोमाव्रतं शक्रलक्ष्म्या पूर्व्वमनुष्ठितं ।
 रत्या देव्या अरुन्धत्या रोहिण्या सुरमत्तम ॥
 कृतमासीत् सुखार्थस्तु ताय भुञ्जन्ति तत्फलं ॥
 इति देवीपुराणोक्तं उमामहेश्वरव्रतं ।

—०००(५,०००)—

इन्द्र उवाच ।

कथितं शङ्करोमाख्यं व्रतं मनसि तुष्टिदं ।
 श्रोतुमिच्छाम्यहन्तात विष्णुशङ्करसंज्ञितं ॥

मनुरुवाच ।

यथा उमेश्वरन्तात तथा कार्यमिदं व्रतं ।
 किन्तु पीतानि वासांसि केशवाय प्रकल्पयेत् ॥

गन्धपुष्पं तथा धूपं सुगन्धञ्च जनार्दने ।
 कार्यं पूजनसम्भारे लड्डुकादिरसं दधि ॥
 एतन्तो पूजयित्वा तु प्रतिमास्थण्डिलेऽपि वा ।
 आहुत्य ब्राह्मणौ वत्स वेदवेदाङ्गपारगौ ॥
 यती वा व्रतसम्पन्नौ जटाकापायधारिणौ ।
 तौ भोजयेद्विधानेन शूलपाणिजनार्दनौ ॥
 क्षमाप्य विधिना वत्स सर्व्वकामप्रसाधकौ ।
 हेमाच्च दक्षिणां विष्णोर्मूर्तिकं शङ्कराय च ॥
 दत्त्वानुव्रजतो लोकौ क्रमादेहचये ततः ।
 भुक्त्वा भोगांस्तथा शक्र इहायातो सुरेश्वरः ॥
 कुले भवति भूपानां सखो पुत्रादिसंयुतः ।
 पूर्व्वभावाद्भवेद्भक्तिः शिवे विष्णौ च शाश्वती ।
 योगं प्राप्य परं याति यत्र तत् स्थानमव्ययं ॥

इति देवीपुराणोक्तं शङ्करनारायणव्रतं ।

—०००(१०००)—

अनेनैव विधानेन लक्ष्मीनारायणव्रतं ।
 ब्रह्मगायत्रिजन्तात चन्द्रोद्दिष्टजन्तथा ।
 भाववित्तानुसारेण सत्यमेव फलं लभेत् ॥

इति पद्मपुराणोक्तं (१) ब्रह्मगायत्रिचन्द्रोद्दिष्टव्रतं ।

—०००—

वृषङ्गाश्च समादाय युवानौ लक्ष्णान्वितौ ।

(१) देवीपुराणोक्तमिति पुस्तकाकारे पाठः ।

हेमशृङ्गेः खुरै रौप्यैः सवस्त्रैः पूजयेन्मने ॥

शिवोमे पूजयित्वा तु तद्दिने सम्प्रयच्छति ।

शिवश्च उमा च शिवोमे ।

शिवभक्ताय विप्राय रोहिण्या वा मृगेण वा ॥

न वियोगो भवेत्तस्य सुतपस्वीपतेः क्वचित्(१) ।

विमानैर्वा समारुह्य गच्छेच्छिवपुरं द्विजः ॥

तत्र भोगांश्चिरं भुक्त्वा इह चागत्य जायते ।

समृद्धैर्धनधान्याद्यैः पुत्रमित्रसमाकुलैः ।

विगतारिर्भवेद्ब्रह्म व्रतस्यास्य प्रभावतः ॥

इति देवीपुराणोक्तं गोयुग्मव्रतं ।

— ०० —

यो ता रत्नममायुक्तं गोयुगं पूजयेन्मने ।

प्रयच्छति शिवोमा च प्रीयतां भावितात्मनः ॥

यो वारहवसायुक्तमिति पूर्वव्रतेन सह विकम्पाद्वापि
पूर्वव्रतोक्त एव कार्या विज्ञायते ।

स सर्वपापदुःखाभ्यां विमुक्तः क्रीडते सदा ।

इह लोके भवेन्न्यो देहान्ते परमं पदं ।'

इति देवीपुराणोक्तं गोरत्नव्रतं ।

— ० —

(१) सुतपस्यपञ्चात् क्वचिदिति पुस्तकान्तरेपाठः ।

मनुस्वाच ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि रूपसौभाग्यकारकं ।
नक्षत्रविधिना वत्स यथा तुष्यति शङ्करौ ॥
मृगादारभ्य मूलेन पादो जातिस्त्रिजा मुरा ।
पूजयेन्मोपवासस्तु, नक्षत्रान्ते तु पारणं ॥
यवाक्षं हविषा सिद्धं ब्राह्मेण जह्ने प्रपूजयेत् ।

नक्षत्रं रोहिणी ।

कङ्कारैर्भृङ्गराजैश्च तिलमासाक्षभोजनः ।
तेनैव प्रथमं विप्रानश्विभ्यां जानुनी यजेत् ॥
कुन्दैश्च गितपुष्पैश्च भोजनं दधि शर्करा ।
आषाढहितये चार्त्तं बिल्वपत्रैश्च पूजयेत् ॥
क्षीराक्षैर्भोजयेत्तत्र ब्राह्मणांस्तश्च पारणं ।
गुह्यन्तु फाल्गुनीयुग्मे पारयन्त्या प्रपूजयेत् ॥
पारयन्ती पुष्यविशेषः ।

दधिभक्तान्तु नैवेद्यं कृत्तिकासु कटिं यजेत् ।
दमनैःशितपुष्पैश्च लङ्कुर्दधिभोजनैः ।
पार्श्वे भाद्रपदायुग्मे पूजयेत् कुसुमैः शितैः ॥
क्षीराक्षदधि विप्राणां नक्षत्रान्ते तु भोजनं ।
पौष्णि कुक्षिद्वयं देव्याः सहकारस्त्रिजा यजेत् ॥
वृतमाषाक्षभोज्यन्तु अनुराधायुगे यजेत् ।
कर्णिकारैः शुभैः पौतैर्भोजनं वृतपाचितं ॥
पृष्ठदेशं धनिष्ठासु हेमपुष्पैः प्रपूजयेत् ।

हेमपुष्पैर्नागकेशरैः ।

कर्णपत्रा च नैवेद्यं दोर्विशालासु पूज्यते ।

मरुपत्रैः सुगन्धैश्च देयं भोज्यञ्च पायसं ॥

करौ करे पूजयेत् उशीरतगरादिभिः ।

गुडचीरञ्च नैवेद्यमङ्गुलीषु पुनर्व्वसौ ॥

कुङ्कुमेनार्चयेद्देव्या देयं भोज्यञ्च षष्टिकं ।

नखान् भुजङ्गदैवत्ये पुत्रागादिभिरर्चयेत् ॥

भोजान्तु मौक्तिकं देयं (१) ग्रीवां ज्येष्ठासु पूजयेत् ।

सितमालादिभिर्द्देव्या देयं भोज्यं घृतादिक ।

रश्मापुष्पदलैः कर्णौ पूजयेद्भोजयेद्दधि ॥

रश्मा कदली ।

पुण्ये मुखन्तु पद्माद्यैः शर्करात्रन्तु भोजयेत् ।

स्नात्यान्तु रदना देव्याः सुरक्तैः कमलैर्यजेत् ॥

हंसं शतभिषर्त्ते च नागकेशरचन्दनैः ।

खर्जूरशर्करा भोज्यं यजेन्नासां मघासु च ॥

जयापुष्पैस्तथा भोज्यं गोधूमं घृतसंस्कृतं ।

मृगे नेत्रद्वयं देव्याः सुगन्धैः कुसुमैर्यजेत् ।

घृतमाघात्रभोज्यन्तु विचित्रं परिकल्पयेत् ॥

चित्रां चित्रस्रजा पूज्यं ललाटं चित्रभोजनं ।

भरणेषु शिरो देव्याः पञ्चकादिस्रजा यजेत् ॥

क्षीराब्जं भोजनं देयं केशानाद्रासु पूजयेत् ।

जात्यादि कुसुमैर्द्देव्याः सर्व्वानि च भोजयेत् ॥

(१) भोज्यन्तु, सजिका देया । सजो शिखरिणो इति पुष्पकाले पाठः ।

नक्षत्रेणिति पूज्यार्थं रूपपुत्रार्थिभिः सदा ।
 शम्भुर्व्याप्यथवा विष्णुर्दृष्टहेमाक्षदक्षिणा ॥
 देयं वस्त्रयुगं विप्रे सपत्नीके जितेन्द्रिये ।
 देवीशास्त्रार्थकुशले शिवज्ञानविशारदे ॥
 संपूर्णचन्द्रवदना पद्मपत्रायतेक्षणा ।
 शोभना दशना शुभ्राः कर्णौ चापि सुमांसली ॥
 घट्पद्मौघनिभैः केशैर्युता कोकिलवादिनी ।
 ताम्रौष्ठो पद्मपत्राभा सुहस्ता स्तननामिता ॥
 नाभिः प्रदक्षिणावर्त्ता रश्मादण्डनिभोरुका ।
 सुशोणी तनुमध्या च सुस्निष्टाङ्गलिशोभना ।
 प्रमदा सुभगा भर्तु मनुष्योऽपि महाभुजः ।
 पीनललाः पृथुस्तम्भः पूर्णचन्द्रनिभाननः ॥
 सितदन्तो गजगामी महाबलपराक्रमः ।
 प्रियः सर्वस्य लोकस्य पद्मपत्रायतेक्षणाः ॥
 सर्वशास्त्रार्थवेत्ता च स्त्रीणां चेतोपहारकः ।
 कामतुल्यो महावीर्या व्रतेनानेन जायते ।
 अविद्योगश्च दृष्टानामर्थानाञ्च समागमः ।
 नक्षत्रार्थं महापुण्यं व्रतानामुत्तमं व्रतं ॥
 आपत्स्वपि न भेदस्तु स्त्रिया कार्यं न दुष्यते ।
 अपि दोषात्मकैर्भावैर्न त्याज्यं सुनिश्चितम् ॥

इति देवीपुराणोक्तं नक्षत्रार्थव्रतं ।

नारद उवाच ।

श्रीमदारोग्यरूपायुःसौभाग्यसर्वसम्पदा ।
संयुक्तस्तव विष्णोर्वा पुमानुद्र कथं भवेत् ॥
नारी वाविधवा सर्वगुणसौभाग्यसंयुता ।
कामान्मुक्तिपदं देव किञ्चिद्भूतमिहोच्यतां ॥

रुद्र उवाच ।

सम्यक् पृष्टत्त्वया ब्रह्मन् सर्वलोकहितावहं ।
श्रुतमप्यत्र यच्छान्त्यै तद्भूतं शृणु नारद ॥
नक्षत्रपुरुषं नाम परं नारायणार्चनं ।
पादौ हि (१) कुर्याद्विधिवद्विष्णुनामानि कीर्तयेत् ॥
प्रतिमां वासुदेवस्य मूलर्चायामभिपूजयेत् ।
चैवमासं समासाद्य कृत्वा ब्राह्मणवाधनं ॥

मूले नमो विष्णुधराय पादा-
वनन्तदेवाय च रोहिणीषु ।
जङ्घेऽभि पूज्ये वरदाय चैव
हे जानुनौ वाञ्छिकुमारकर्त्रे ॥
पूर्वोत्तराषाढयुगे च पादौ
नमः शिवायेत्यभिपूजनीयौ ।
पूर्वोत्तराषाढगुनियुग्मके च
मिथुं नमः पञ्चशराय पूजां ॥
कटिं नमः शार्ङ्गधराय विष्णोः
संपूजयेन्नारद कृत्तिकासु ।

(१) पदादि कुर्याद्विनि पुस्तकाकरे पाठः ।

तथार्चयेद्वाद्रपदादये च
 पार्श्वे नमः केशिनिसुदनाय ।
 कुक्षिद्वयं नारद रेवतीषु
 दामोदरायेत्यभिपूजनीयं ॥
 अक्षेऽनुराधासु च माधवाय
 नमस्तथोरण्यलमेव पूजयेत् ।
 पृष्ठं धनिष्ठासु च पूजनीयं
 मघासुविध्वंसकराय तद्धत् ॥
 योगङ्गचक्रासिगदाधराय
 नमो विशाखासु भुजाय पूज्याः ।
 हस्ते तु हस्ता मधुसूदनाय
 नमोऽभिपूज्या इति कैटभारेः ।
 पुनर्वसावङ्गुलिपर्वभागाः
 साम्नामधीशाय नमोऽभिपूज्याः ।
 भुजङ्गनक्षत्रदिने नखानि
 संपूजयेन्मन्त्रशरीरिणश्च ।
 कूर्मस्य पादौ शरणं व्रजाम्नि
 ज्येष्ठासु कर्मे हरिरर्चनीयः ॥
 श्रोत्रे वराहाय नमोऽभिपूज्ये
 जनाह्ननस्य अवणे च सम्यक् ॥
 पुण्ये मुखन्दानवसूदनाय
 नमो नृसिंहाय च पूजनीयं ॥
 सप्तमो नमः कारणवामनाय
 स्वातीषु दन्ताग्रमघार्चनीयं ।

आस्थं हरेः कौतुकभागवाय
संपूजनीयं द्विज वारुणे तु ।
नामोऽस्तु रामाय मघासु नासा
संपूजनीया रघुनन्दनस्य ॥
मृगोत्तमांगे नयने च पूज्ये
नमोऽस्तु ते राम विघूर्णिताक्ष ।

मृगोत्तमाङ्गं मृगशीर्षं

बुधाय शान्ताय नमो ललाटं
चित्रासु संपूज्यतमं सुरारेः ।
शिरोभिपूज्यं भरणीषु विष्णो
नमोऽस्तु विश्वेश्वर कल्किरूप ॥
आर्द्रासु केशाः पुरुषोत्तमस्य
संपूजनीया हरये नमस्ते ।
उदीषिते रुद्रदिनेषु शक्त्या
संपूजनीया द्विजपुङ्गवाः स्युः ॥
पूर्णे व्रते सर्वगुणान्विताय (१)
वाभूपशीलाय च शामगाय ।
हेमौ विशालायतबाहुदण्डां
मुक्ताफलेन्द्रोपलवजयुक्तां ।
गूढस्य पूर्णं कलशे निविष्टा

(१) ब्राह्मणपुङ्गवाय इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

मर्चां हरेर्व्यस्रयुतां सहैमीं ।
 शय्यां तथोपस्करभाजनादि-
 युक्तां प्रदद्याद्विजपुङ्गवाय ॥
 यद्यत् प्रियं किञ्चिदिहास्ति देयं
 ततद्विजायात्महिताय सर्व्वं ।
 मनोरथान्नः सफलीकुरुष्व
 हिरण्यगर्भाच्युतरुद्ररूप ॥

स लक्ष्मीकं सभार्याय काञ्चनं पुरुषोत्तमं ।
 शय्यां दद्याच्च मन्त्रेण ग्रन्थभेदविवर्जितां ॥
 यथा न विष्णुभक्तानां वृजिनं जायते कश्चित् ।
 तथा सुरुपतारम्ये केशवे भक्तिरुत्तमा ॥
 यथा लक्ष्म्या न शयनं तव शून्यं जनार्दन ।
 शय्या ममाप्यशून्यास्तु कृष्ण जन्मनि जन्मनि ॥
 एवं निवेद्य तत् सर्व्वं वस्त्रमाल्यानुजेपनैः ।
 नक्षत्रपुरुषज्ञाय विप्रायाश्च विसर्जयेत् ॥
 भुञ्जीतातैललवणं सर्व्वं चैष्वप्युपोषितः ।
 भोजयेच्च यथाशक्त्या विस्रग्नाठाविवर्जितः ॥
 इति तत्तत्पुरुषमुपोष्य विधिवत् स्वयं ।
 सर्व्वान् कामानवाप्नोति विष्णुलोके महीयते ॥
 ब्रह्महत्यादिकं किञ्चिदयदत्तामुच वा कृतं ।
 आत्मना चाथ पिबेभिस्तत् सर्व्वं नाशमाप्नुयात् ॥
 इति पठति शृणोति वातिभक्त्या
 पुरुषवरो व्रतमङ्गनाथ कुर्यात् ।

कलिकलुषविदारणं मुरारेः

सकलविभूतिफलदश्च पुंसः ॥

इति मत्स्यपुराणोक्तं नक्षत्रपुरुषव्रतं ।

—000—

युधिष्ठिर उवाच ।

उपवासेष्वशक्तस्य तदेव फलमिच्छतः ॥

अनभ्यासेन रोगाद्वा किमिष्टं व्रतमुच्यतां ।

शिवय्योपरि यस्य स्याद्वक्तिः सूर्यस्य वा विभी ।

नक्षत्राख्यं व्रतं तेन कथं कार्यमिहीच्यतां ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

उपवासेष्वशक्तानां नक्तं भोजनमिष्यते ।

यस्मिन् व्रते तदप्यत्र अयनामक्षयं महत् ॥

शिवनक्षत्रपुरुषं शिवभक्तिमतां नृणां ।

तस्मिन्नक्षत्रयोगे च पुराणज्ञाः प्रचक्षते ॥

फाल्गुनस्यामले पक्षे यदा हस्तः प्रजायते ।

तदा ग्राह्यं व्रतं चैतद्रक्तेनाभ्यर्च्य शूलिनं ॥

शिवायेति च हस्तेन पादौ संपूजयेद्दिभीः ।

शङ्कराय नमो गुल्फो पूज्यो चित्रासु पाण्डव ॥

भीमाय जङ्घे स्वातीषु देवदेवस्य पूजयेत् ।

ऊरुद्वयं विशाखासु विनेताय तु पूजयेत् ।

मेढ्रक्षेत्रानुराधासु अनङ्गाय हरेति च ॥

सदा ज्येष्ठासु च तथा सुरज्येष्ठेति चार्चयेत् ।

नादाख्याय नमो नाभिः पूज्या मूलेन शूलिनः ॥

आषाढयुगले पार्श्वे पार्वतीपतयेति च ॥

श्रवणेन ततः कुक्षौ पूज्यौ कापालिने नमः ।

वज्रस्थलं धनिष्ठासु सद्योजाताय वै नमः ॥

वामेति पूजयेत्पार्श्वं हृदयं शतभिषासु च ।

पूर्वोत्तरायुगे बाहू नमः खट्वाङ्गधारिणे ॥

पूज्यं रुद्राय च तथा रेवतीषु करद्वयं ।

नखाः पूज्याश्विनीयोगे नमस्कृत्य पिनाकिने ॥

भरणीषु ततः पृष्ठं वृषाङ्गाय नमोऽस्त्विति ।

कृत्तिवस्ताय वदनं कृत्तिकामुक्ताटिकां ॥

वाक् पूज्या रोहिणीयोगे नमो वाचस्पतेरपि ।

मृगोत्तमाङ्गे दशनान् भैरवायेति पूजयेत् ॥

आर्द्रास्वीठाधरी पूज्यौ म्याणवेति युधिष्ठिर ।

नामा पुनर्वसौ पूज्या पूष्णे दन्तविघातिने ॥

पुष्ये नेत्रद्वयं पूज्यं नमस्ते सर्वदर्शने ।

अश्लेषायां ललाटन्तु चाम्बकाय नमो नमः ॥

मघासु च जटाजूटं पूजयेदम्बकारये(१) ।

पूर्वफाल्गुनीयागे च श्रवणौ सीमधारिणे ॥

नमोऽस्तु पाशाङ्कशूलपद्म

कपालसर्पन्दुधतुर्द्धराय(२) ।

गजासुरानङ्गपुरान्वकादि-

(१) पूजयेदम्बकायचेति पुस्तकाक्षरे पाठः ।

(२) सर्पन्दुधतुर्द्धराय इति पुस्तकाक्षरे पाठः ।

विनाशमूलाय नमः शिवाय ॥

शिरः संपूजयेद्दद्यात्ततो धूपविलेपने ।
ततस्तु रात्रौ भोक्तव्यस्तैलचारविवर्जितं ॥
शालीयतण्डुलप्रस्थं घृतपात्रेण संयुतं ।
दद्यात्सर्वेषु नक्षत्रेषु ब्राह्मणानां नृपोत्तम ॥
शक्त्यभावेन दोषः स्यादधिके ह्यधिकं फलं ।
नक्षत्रयुगले प्राप्ते नक्षत्रयुग्मं समाचरेत् ॥
सूतकाशीचदोषेषु पुनरन्यः समाचरेत् ।
एवं क्रमेण संप्राप्ते व्रतस्यैवास्व पारणे ॥
ब्राह्मणान् भोजयेद्भक्त्या गुडक्षीरघृतादिभिः ।
काञ्चनं कारयेद्देवमुमया सह शङ्करं ॥
शय्यां सुलक्षणां कृत्वा विकृतग्रन्थिवर्जितां ।
सोपधानकविश्रामां स्वास्तराभरणां शुभां ॥
भाजनोपानहच्छत्रचामरामनदर्पणैः ।
भूषणैरपि संयुक्तां फलवस्तानुलेपनैः ॥
सप्तस्त्राङ्गास्यदोहनीं हेमशृङ्गिविभूषितां ।
दद्यात्पूर्वाङ्कसमये न किञ्चिदपि लङ्घयेत् ॥
मन्त्रेणानेन राजेन्द्र इति शब्दं निधाय वै ।
यथा न देव शयने तव पर्वतजानघ ।
शून्यं वर्त्तत मततं तथा मे मत्तु मिद्वयः ॥
यथा न देव श्रियांस्तु त्वद्वत्ते विद्यते क्वचित् ।
तथा मामुद्धराशेषदुःखसंसारमागरात् ॥
ततः प्रदक्षिणीकृत्य प्रणिपत्य विमर्जयेत् ।

(८८)

शयनादिकञ्च तत् सर्वं हिजस्य भवनं नयेत् ॥

नैतद्विशीलाय न नास्तिकाय

कुतर्कदृष्टाय विनिन्दकाय ।

प्रकाशनीयं व्रतसिन्दुमौलेः

पञ्चातिसौभ्योपहतान्तरात्मा ॥

भक्ताय दान्ताय गुणान्विताय

प्रदेयमेतच्छिवभक्तियुक्ते ।

इदं महापातकिनां नराणां

मघक्षयं वेदविदो वदन्ति ॥

या काचिदेतत् कुर्वतेऽथ भक्त्या

भर्त्सारमाश्रित्य शुभङ्गं वा ।

न बन्धुपुत्रादिधनैर्वियोग-

माप्नोति दुःखं न सुहृदसुखं ॥

इदं वसिष्ठेन पुराण्युक्तेन

कृतं कुवेरेण पुरन्दरेण ।

यत्कौर्त्तनादप्यस्त्रिसाम्यघानि

विध्यंसमायान्ति न संशयोऽत्र ॥

इति विष्णुधर्म्मोत्तरोक्तं शैवनचण्डपुरुषव्रतं ।

—००—

इति श्रीमहाराजाधिराजश्रीमहादेवस्य समस्तकरणाधीश्वर-

सकलविद्याविशारदश्रीचेमाद्रिविरचिते-

चतुर्व्यंशचिन्तामणौ व्रतचण्डे

नवव्रतानि ।

अथ चतुर्विंशीऽध्यायः ॥



स्वप्ना वैरं चिरपरिचितं मित्रभावं प्रपञ्चे
वाणी लक्ष्मीः किल विलसतो बभूव गेहेऽमुरागात् ॥
वेनापूर्वं प्रकटितमिदं वैभवं पुष्पभाजाम् ।
सोऽयं योगव्रतसमुद्भवं वक्ति हेमाद्रिरस्मिन् ॥

अथ योगव्रतानि ।



ब्रह्म उवाच ।

विष्णुश्चादिषु योगेषु भवेदेकादशी नरः ।
यो ददाति कमात्पार्थ हृततैलपलैश्च व ॥
यवगोधूमवरचं निष्पावाभ्यासितकुलान् ।
लवचं दधिदुग्धञ्च वस्त्रं कनकमेव च ॥
कम्बलं गोष्ठ्यं ह्यसुपानद्युगलन्तथा ।
कर्पूरं कुङ्कुमञ्चैव चन्दनं कुसुमानि च ॥
लोहं ताम्रञ्च कांस्यञ्च रौप्यञ्चेति यद्विहितम् ।
ज्ञातः स्वशक्त्या विधिवत् सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
न विद्योगमवाप्नोति योगव्रतमिदं श्रुतम् ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं योगव्रतम् ।



धरस्सुवाच ।

यस्त्वयोक्तो व्यतीपातः कौटुम्भः स स्वरूपतः ।
कस्य पुत्रः कस्य पूज्यः पूजिते तत्र ५ फलं ॥

बराह उवाच ।

यदा वृहस्पतेर्भार्या ताराक्षयाह गीतगुः ।
मित्रत्वात् प्राह तं सूर्यस्वज भार्या वृहस्पतेः ॥
चक्रे चन्द्रो न तद्वाक्यं हितं शिष्योऽपि तं यदा ।
वृष्टस्तदा किलादित्यो दीप्तदृष्ट्या तदैक्षत ॥
तावत् सोमोऽपि वृष्टोऽस्य ततोऽन्योऽन्यमवेक्षतां ।
उभयोर्दृष्टिसम्पत्तेः क्रुद्धयोः सोमसूर्ययोः ।
उद्यतास्यो भवेद्द्वोरः पुरुषः पिङ्गलेक्षणः ॥
दृष्टौ दीर्घदशनो भृकुटीकुटिलाननः ।
कपिलश्मश्रुकेशान्तो लम्बभ्रूः सुकशोदरः ॥
करालो दीर्घजिह्वश्च सूर्याग्नियमसन्निभः ।
सम्भोक्तुकामस्त्रैलोक्यं रवीन्दुभ्यां निवारितः ।
क्रोधक्षुधौ मां बाधेते पात्ये वै कुत्र ते मया ॥
सूर्यसोमावूचतुः ।

कोपदृष्टान्तो विविधादतिपाताद्भवानभूत् ।
व्यतीपातस्ततो नाम भवान्भुवि भविष्यति ॥
यस्मिन्काले त्वदुत्पत्तिस्तदा कल्याणकारिणः ।
व्यतीपाताय भद्रन्ते त्वयि यः पापकारकः ॥
तद्वत् क्षुधितो भुङ्क्ते तत्र कोपो निपात्यतां ।
व्यतीपातस्ततो नाम भवान् भुवि भविष्यति ॥

अतीपात उवाच ।

नमो वां पितरौ मेखः कोटपातः सभोजनः ।
दत्तो भवद्भ्यामधुना प्रसादः कियते चमा ॥

रवीन्द्र उवाच तु ।

ज्ञानदानजपहोमपूर्वकं
यस्त्वं दीयसमये समाचरेत् ।
तस्य पुण्यमिह ते प्रसादतो-
नन्तमस्तु सुतनीरनुपहात् ॥
तत्काले तव विदधाति पूजनं
यस्तस्येष्टं भवतु भवेत्तु भद्रभूयः ।
पुत्रायुर्जनसुखकीर्तिपुष्टि-
रूपारोग्याद्यङ्गुलिजनवत्तत्त्वपूर्व ॥

वराह उवाच ।

एतस्मात्कारणाद्भूमौ अतीपातोऽर्चितो नरैः ।
अर्चिते च फलं तस्य तदुक्तान्ते समाहितैः ॥
विस्तरेणाहितफलं गदितुं केन शक्यते ।
येनार्चते अतीपातः स विधिः श्रूयतामिति ॥
शुभे अतीपातदिने विगाहयेत्
स पञ्चगव्येन महानदीजलं ।
उपासयेद्देवपमानजापकी
जपेत्तु शुद्धो अतीपात ते नमः ॥
छादिते ताम्रपात्रे च शर्करापरिते षटे ।

काञ्चनाजे प्रतिष्ठाप्य हैममष्टभुजवरं ॥

अष्टभुजं अष्टादशभुजं । उत्पत्तिवाक्ये व्यतीपातमूर्तेरष्टाद
भुजत्वात् । उत्पत्तिवाक्यानुसारत्वाच्च विनियोगवाक्यस्य य
भगवद्भोतासु चत्वारो मनवस्तथेति चत्वारस्तुर्ह्ययम् ।

गन्धपुष्पाक्षतैर्धूपदीपवस्त्रनिवेदनैः ।

भक्षैर्भोज्यैः फलेष्विष्टैर्मार्गं शिरेऽर्चयेत् ॥

नमस्तोऽस्तु व्यतीपात सूर्यसोमस्तु प्रभो ।

यद्दानादिकृतं किञ्चित्तदनन्तमिहास्तु मे ॥

इतुङ्गा पञ्च रत्नाढ्यं सपुष्पाक्षतमञ्जलिं ।

प्रक्षिप्य तत्क्षणादेव सर्वपापक्षयो भवेत् ॥

यदि द्वितीयेऽपि दिने व्यतीपाता भवेन्नही ।

तदा पूर्वोपवासस्तु दद्यात्तत् सकलं गुरोः ॥

पारणं व्यतीपातान्ते कुर्यात् संप्राश गोमयं ।

अथै कस्मिन्नेव दिने व्यतीपातो भवेद्यदि ।

तत्रैवाङ्गि तदा दत्त्वा उपवासं समाचरेत् ॥

कुर्यादेवं मासि मासि व्यतीपातकरोदय ।

व्यतीपाते तु संप्राप्ते कुर्यादुद्यापनं बुधः ॥

व्यतीपाताय स्वाहेति जीरह्यसमन्वितं ।

आन्यधीरतिलानाञ्च होतव्यं वै यतं यतं ॥

शर्कराघटपूर्णेन सहसोपस्करैर्युता ।

प्रतिमां काञ्चनीकृत्वा प्रदद्याद्भक्तदेहिने ।

वन्दे व्यतीपातमहं महात्मा

रवीन्दुसूनुं सकलेष्टकम् ।

समस्तपापस्य मम क्षयोऽस्तु
पुण्यस्य चानन्तफलं ममास्तु ॥
इति समीप्य गुहः परिपूज्यते
कटक-कुण्डल काञ्चन-भूषणैः ।
सकलमेव समाप्य यद्योदित-
शुपलभ्यमिहानुते मही ।

गां वै पयस्विनीं दद्यात्सुवर्णोत्तमदक्षिणां ।
तस्मै शय्यां समासाद्य सारदारुमयीं दृढां ॥
दत्तपत्रवितानाभ्यां हेमपट्टैरलङ्कतां ।
हंसतूलीप्रतिष्ठायां हृत्पद्मोपधानकां ॥
प्रच्छादनपट्टीयुक्तां धूपगन्धादिवासितां ।
ताम्रलकुट्टुमञ्जीदकर्पूरागुरुसुन्दरां ।
दीपिकोपानहच्छायां प्रदद्याच्चामरासनां ।
देहान्ते सूर्यलीलाब्जविमाने रत्नसुप्रभैः ॥
अक्षरोगचसन्नाग्नेर्गीतमृत्युविलासिभिः ।
गत्वा कल्पार्कदशतं मोदते चिद्वार्चितः ॥
तदन्ते राजराजः स्वाद्रूपसौभाग्यभागभवेत् ।
कौर्त्याब्धौ गुह्यपुत्राबुरारोग्यधनधान्यवान् ।
प्रतापश्रीमहैश्वर्ययुक्तभावी बहुश्रुतः ॥
जनसौभाग्यसम्पत्को यावज्जन्माष्टकायुतः ।
दर्शयेत्तत्तुल्यं दानं तच्छतवर्षेन्दुनक्षत्रे ॥
यत्तत्तन्मन्त्रं संज्ञान्ती यत्तत्तं विष्णुमैततः ।
बुधादौ तच्छतगुह्यं यदने तच्छताहतं ॥

सोमग्रहे तच्छतघ्नं तच्छतघ्नं रविग्रहे ॥
 असंख्येयं व्यतीपाते दानं वेदविदो विदुः ।
 उत्पत्तौ तल्लक्षगुणं कोटिगुणं भ्रमणनाडिकायां ।
 अर्बुदगुणितं पतने जपदानाद्यक्षयं पतिते ॥
 जन्मदाविंशतिनाडी भ्रमणस्य कविंशतिः ।
 व्यतीपातस्य पतनं दशसप्तस्थितं विदुः ॥

समर्पितं यद्यतिपातकाले
 पुनः पुनस्तद्विशीतरश्मी ।
 प्रयच्छतः कल्पशतार्बुदानि
 विवर्द्धमानं नहि ह्रियते तत् ॥
 तस्मान्महि त्वं व्यतिपातपूजां
 कुरुष्व चेत् पुण्यमनन्तमिष्टं ।
 यदि स्थिरत्वं सततस्तवेष्टं
 समस्तधारित्वमभोषितञ्च ॥

गणयित्वा व्यतीपातकालं वा वेत्ति यो नरः ।
 सर्वपापहरो तस्य भवतो भानुभेश्वरो
 पठति लिखति यः शृणोति वै
 तत्कथयति पश्यति कारयत्यवश्यं ।
 रविशशिदिवमाप सोपि
 दिवैधिरसमयं परिपूज्यमान आप्ते ॥

इति वराहपुराणोक्तं व्यतीपातव्रतं ।

युधिष्ठिर उवाच ।

येन व्रतेन चीर्णेन नपश्येद्यमशासनं ।
परिपृच्छाम्यहं ब्रह्मन् पापघ्नं व्रतमुत्तमं ॥
तद्भूतं ब्रूहि विप्रर्षे कृत्वा जगति वै कृपां ।
मार्कण्डेय उवाच ।

शृणु राजन् व्रतमिदं हर्षस्त्रेन पुरातनं ।
तेनैव राज्ञा तद्भूतं शूकराय च दुःखिने ॥
एकदा तु मृषित्वा स हर्षस्त्रो राजसत्तमः ।
अन्तश्चरन् भवे राजन् दृष्ट्वा तत्रैव शूकरं ॥
दग्धपादकटिद्येन दग्धग्रीवमुखीदरं ॥
दृष्ट्वा तथा विधत्तन्तु कृपासूक्ते दयापरः ।
केन कर्मविपाकेन अवस्थां प्राप्नोत नयं ।
अहो कष्टमहो कष्टं सुकरेणोपभुज्यते ।
अवश्यमनुसर्त्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभं ॥
इत्युक्त्वा तत् स्वरूपेण राजा तं प्राह शूकरं ।
इयती किमवस्था वै तन्मम ब्रूहि शूकर ॥
तच्छ्रुत्वा नृपतेर्वीर्यं निःश्वसन् शूकरो मुहुः ।
स्मृत्वा पुराकृतं कर्म प्रत्युवाचाय तं नृपं ॥

शूकर उवाच ।

शृणु राजन् व्रतं पूर्वं वैश्यो विश्वमनुभवः ।
आशाकारी न दाताहमाश्रितेभ्यश्च किञ्चन ॥
श्रुताश्च बहवो धर्माः पुराणश्रुतिनोदिताः ।

तद्यापि पापबद्धाहं न करोम्यात्मनो हितं ॥
 आशापाशमनुप्राप्ता भस्माशास्त्रे विनिर्गताः ।
 कृतवान् पापमेवाहं न किञ्चित्सुकृतं कृतं ॥
 एकदा तु द्विजः कश्चिद्वातीपाते गृहं मम ।
 आगतो याचते माञ्च न किञ्चिद्वत्तवानहं ॥
 ततश्च कुपितो विप्रो मम शापमन्नाददत् ।
 आगामिर्दहते यद्वन्महाङ्गानि पृथक् पृथक् ॥
 तथैव तु तवाङ्गानि दावाग्निः पुरुषाधम ।
 अरण्ये निर्जने देशे निर्जले द्रुमवर्जिते ॥
 तत्र शूकरयोनौ त्वं प्रसूतिं समवाप्नुहि ।
 प्रसादितो मया विप्रः पुनरप्युक्तवांस्तदा ।
 ज्ञानित्वं शूकरत्वेऽपि इत्युक्ताथ जगाम सः ॥
 तेन शापेन राजेन्द्र शूकरत्वमवाप्नुयात् ।
 अहं दुःखी ह सञ्जातो निर्जने निर्जले वने ॥

राजोवाच ।

केन त्वं सुच्यते पापात् ममाचक्ष्वैह शूकर ।
 येन शक्यो मया कर्तुं तव शापस्य संशयः ॥

वराह उवाच ।

श्रूयतां मम राजेन्द्र सुक्तिः स्याद्येन कर्मणा ।
 अतीपातघ्नं नाम कृतं राजंस्त्वया पुरा ॥
 यथा माता पुत्रस्त्रेह सर्वस्य हितकारिणी ।
 तथा व्रतमिहं राजन्निह लोके परमं च ।

यथैवाभ्युदितः सूर्यो ज्ञेयं च तमो दहेत् ॥
 इदं व्रतं तथैवेह सर्वपापं व्यपोहति ॥
 सकृत् स्मृतो यथा विष्णुर्नृणां परमनिर्हतिं ।
 ददात्येव न सन्देहस्तथा व्रतमिदं शुभं ॥
 शतमिन्दुक्षये दानं सहस्रन्तु दिनक्षये ।
 विषुवे शतसाहस्रं व्यतीपाते त्वनन्तकं ॥
 व्यतीपातव्रतस्यास्य विधानं शृणु तत्स्वतः ।
 माघे वा फाल्गुने वापि अन्यस्मिन्मासि वा भवेत् ॥
 व्यतीपाती दिने यस्मिन् प्रारभेद्भुत सुत्तमं ।
 तिलैः पूर्णं शरावच्च सगुहं गुरवेऽर्पयेत् ॥
 एवं द्वितीये दातव्यं तृतीये तु समापयेत् ।
 सष्टतं पायसञ्चैव दातव्यं वीतरोत्तरं ॥
 एवं संवत्सरस्यान्ते देवस्वार्चान्तु कारयेत् ।
 शङ्खचक्रगदापाणिं पद्महस्तं हिरण्यधरं ॥
 वस्त्रयुग्मेन संवेष्ट्य पूजयेद्ब्रह्मध्वजं ।
 गोक्षीरेण च संपूर्णं कांस्यभाजनमुत्तमं ॥
 स्थापयेद्देवदेवस्य स्नानस्तत्रैव कल्पयेत् ।
 शय्या च सन्निधौ तस्य स्थाप्या देवमनुस्मरन् ॥
 अनन्तशायिनं देवमनन्तफलदं शुभं ।
 लक्ष्म्या सहान्वितं विष्णुं भक्त्या संपूजयेद्ब्रह्मं ॥
 वैदिकेनैव मन्त्रेण जातीपुष्पैः समर्चयेत् ।
 पायसेनैव नैवेद्यं शर्करामयुतेन च ॥
 दत्त्वा निवेद्यं देवस्य प्रार्थनं प्रार्थयेद्भुती ।

व्यतीपातव्रतं देव त्वयानन्त समर्पितं ॥
 भवत्वनन्तफलदं मम जन्मनि जन्मनि ।
 देवदेवं हृषीकेशं प्रार्थयित्वा ततो व्रती ॥
 तत्सर्वं गुरवे दद्याच्छ्रीत्रिषाय कुटुम्बिने ।
 व्रतीपदेष्ट्रे विप्राय ब्रह्मज्ञाय विशेषतः ॥
 भूमिर्वायु सुवर्षं वा दक्षिणा तु विधीयते ।
 ब्राह्मणान् भोजयित्वा तु व्रतमेतत् समापयेत् ॥
 इदं व्रतं त्वया देव गृहीतं पूर्वजन्मनि ।
 स्वर्गोपवर्गदं नृणामनन्तफलदं शुभं ॥
 मुञ्चेहं किल्बिषादस्मात्शूकरत्वाच्च संशयः ।
 तेनैव मुक्तो ह्यर्थश्वः शूकर वाक्यमब्रवीत् ॥
 मया कृतमिदं सर्वं तत्फलन्ते ददाम्यहं ।
 एवमुक्त्वा नृपञ्च ४ः शूकराय फलं ददौ ॥
 तत्क्षणोत्तेन पुण्येन शूकरो मुक्तकिल्बिषः ।
 मुक्तः शूकरदेहाच्च सर्वाभरणभूषितः ॥
 दिव्यं विमानमाख्याय वाक्यञ्चेदमुवाच ह ॥
 हेजनाः किञ्चजानौध्वं व्यतीपातव्रतोत्तमं ॥
 इहैव सुखदं नृणां परमं च पराङ्गतिं ।
 दृष्ट्वा मां पापानिमुक्तं व्रतस्यास्य प्रभावतः ।
 विश्वासः क्रियतामस्मिन् व्यतीपातव्रतोत्तमे ॥
 इत्युक्त्वा स्वर्गतः सोऽथ राज्ञो वै पश्यतस्तदा ।
 तं दृष्ट्वा विस्मितो भूत्वा राजापि ग्रह्ये व्रतं ॥
 ततो राजा पुरङ्गत्वा व्रतं बाकारयज्जनान् ।

सर्वं च कृतवांस्तत्र व्यतीपातव्रतं शुभं ॥
 ततो राज्यं चिरं कृत्वा देवदेवस्य चक्रिणः ॥
 हृद्यंश्चः प्राप्तवांस्तेन विष्णोस्तत्परमं पदं ।
 अतस्त्वं कुरु राजेन्द्र व्यतीपातव्रतीत्तमं ॥
 सर्वपापक्षयकरं नृणामिह सुखप्रदं ॥
 इदं यः कुरुते मर्त्यः श्रद्धाभावसमन्वितः ।
 सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुसायुज्यमाप्नुयात् ॥
 यया तु पुत्रकामिन्या कृतं सा लभते सुतान् ।
 स्त्रीकामेनेह तद्वत्स लभेयारीमनुत्तमां ॥
 व्यतीपातव्रतमिदं व्यतीपातदिने यजेत् ।
 ज्ञानवान् धनवान् श्रीमान् इहैव स सुखी भवेत् ।
 य इदं शृणुयाद्भक्त्या विष्णुलोके महीयते ॥

इति नारदीयपुराणोक्तं व्यतीपातव्रतं ।

इति श्रीमहाराजाधिराजश्रीमहादेवस्य समस्तकरणा
 धीश्वरमकलविद्याविगारहृश्रीहेमाद्रिविर-
 चिते चतुर्वर्गचिन्तामणौ व्रत-
 खण्डे योगव्रतानि ।

अथ पञ्चविंशोऽध्यायः ।

— ००० —

अथ करणव्रतानि ।

येनेदं निजगौरवे च दूरा-
दुत्कर्षच्च गदपि नीयते स एव ।
आचष्टे निखिलमनोषितार्थमिदं
हेमाद्रिः करणव्रतानि ॥

सनत्कुमार उवाच ।

शृणु राजन् प्रवक्ष्यामि करणव्रतमुत्तमं ।
ब्रवाख्यं बालवच्चैव कौलबन्धनैतिसङ्करं ।
वणिजं विष्टिरित्याहुः करणानि पुराविदः ॥
माघमासे तु सम्प्राप्ते शुक्लपक्षे यदा भवेत् ।
ववाभिधानकरणमुपवासस्तदा भवेत् ॥
पूजयेच्चाणु तं देवं गन्धमाख्यबिलेपनैः ।
सौवर्णीं प्रतिमां कार्पा विष्णोः कर्षमिता शुभा ॥
जपेदहर्निशं तत्र मन्त्रमष्टाक्षरं बुधः ।
कलशञ्च समानीय ताम्रपात्रं तद्गोपरि ॥
विन्यस्य पूजयेद्देवं सुवर्णकमलेन च ।
वितानं चामरं घण्टां देवाय प्रतिपादयेत् ॥

एवं सप्त विधेयानि बवाख्यान्यथ सप्तमे ।
 बवे तु करणे प्राप्ते पूर्व्वं पूर्व्वं समाचरेत् ॥
 ब्राह्मणान् भोजयेत्वात्र सप्तसंख्यान् सदक्षिणं ।
 अथैवं बालवादीनि बिष्टान्तानि यथा क्रमं ॥
 उषित्वा सप्त सप्तैव पूर्व्वोक्तविधिना नृप ।
 समापयेद्भूतं भूरिगोभूहेमादिदानतः ॥
 एवं कृते व्रते राजन् राजसूयाश्वमेधयोः ।
 समस्तं फलमाप्नोति सुखं कीर्तिं महत्क्रियं ।

इति ब्रह्माण्डपुराणीकं करणव्रतं ।

युधिष्ठिर उवाच ।

कृष्ण केयं जनैः सर्व्वैर्विष्टिभद्रेति चोच्यते ।
 कस्मात्तज्जयं का ज्येष्ठा कथं वा पूज्यते नरैः ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

सुता मार्त्तण्डदेवस्य क्रायया जनिता पुरा ।
 शनैश्चरस्य भगिनी सीदर्यातिभयङ्करा ॥
 सा जातमात्रा भुवनं ग्रस्तं समुपचक्रमे ॥
 निर्य्याति यदि कार्य्येण कथितस्य पुरस्मिता ।
 विघ्न करोति स्वपती भुञ्जानस्य स्थितस्य च ।
 यज्ञविघ्नकरी रौद्री समाजोत्सवनाशिनी ॥
 नित्योद्देशकरीपार्थ त्रिनाशयति सा जगत् ।
 तान्तु दुर्व्विनयां कृष्णे यच्छाम्ये नां सुमध्यमां

कन्यादुर्व्विनयाद्देहे पिता दोषेण गृह्यते ।
 तस्मात्सर्व्वप्रयत्नेन कन्या देया विजानता ॥
 चित्त्यैवमशुभां भद्रां यस्य यस्य प्रयच्छति ।
 तं तमेव क्षणेनैव सुरराजसकिन्नराः ।
 मण्डपं मण्डपारम्भे विनाशयन्ति तत्क्षणात् ।
 विवस्वान् विस्तयामास कस्येयं प्रतिपाद्यते ॥
 विरूपा दुष्टहृदया गर्हभास्या त्रिपादिका ॥
 जर्हरोममहादंष्ट्री स्नेच्छाचारविहारिणी ।
 दत्ता येषामसौख्याय भवतीह कथञ्चन ॥
 एवं वितर्कयन् देव आस्ते यावद्विवस्वतिः ।
 तावत्तया जगत्सर्व्वं दुष्टया समभिद्रुतं ॥
 अथाजगाम सवितुः पार्श्वे नृह्याण्डसम्भवः ।
 उपासन् ददौ चास्य विष्टेर्ह्यष्टमशेषतः ।
 भास्करस्तमुवाचेदं स्वयम्भुवनेश्वरं ॥
 भवान् कर्त्ता च हर्त्ता च कस्मादेवं प्रभाषसे ।
 एवमुक्तस्तदा ब्रह्मा भास्करेणामितदुक्तिः ॥
 तदीयाच विष्टिमात्र्यं शृणु भद्रे मयोदितं ।
 करणेः सह वर्त्तन्त ब्रवन्तलवकौलवैः ॥
 सप्तमेऽर्धदिने प्राप्ते यदभीष्टं कुरुष्व तत् ।
 यात्राप्रवेशमाङ्गल्यकृपिवाणिज्यकारकान् ॥
 भक्षयस्वाभिमुखगान् नरानुत्सार्गगामिनः ।
 नोद्वेजनीयो हि जनो भवन्त्या दिवसत्रयं ॥
 पूज्या सुरासुराणां त्वं दिवसार्धं भविष्यति ।

सलङ्का ये प्रवर्तन्ते भद्रे त्वां निर्भया नराः ।
 तेषां विनाशय शुभं कार्यमार्थं सुनिश्चितं ॥
 एवमेषा समुत्पन्ना विष्टिरिष्टिविनाशनी ।
 निवेदितेति कीर्त्तयेत्तस्मात्तां परिवर्जयेत् ॥
 सिंहग्रीव सप्तभुजा त्रिपादा पुच्छसंयुता ।
 खरोत्तमाङ्गवदना प्रेतहृदा कशोदरी ॥
 ज्वलच्चक्षुः दधती हस्ते पाशासिंहाक्षयः ।
 नरमुण्डाश्च मालाश्च मुद्रा सप्तविधा स्मृता ॥
 सजलजलदवर्णा दीर्घनासोरुदंष्ट्रा
 विपुलहनुकपोला पिण्डकोदण्डजङ्घा ।
 अनलशतसहस्रं चोद्गिरन्ती समन्तात्
 पतति भुवनमध्ये कार्यविनाशाय विष्टिः ॥
 भानोः सुता किन्तु शताग्रजाता
 लक्ष्णा कुमूर्तिः सततं कुचेला ।
 देवैर्नियुक्ता करणान्तसंस्था
 विष्टिस्तु सर्वत्र विवर्जनीया ॥
 मुखे तु घटिकाः पञ्च हेतुः कण्ठे सदा स्थिते ।
 हृदि चैकादश प्रोक्तास्तस्मै नाभिमण्डले ।
 पञ्च कट्यान्तु विज्ञेयास्तिस्रः पुच्छे जयावहाः ॥
 मुखे कार्यविनाशाय श्रीवायां धननाशनी ।
 हृदि प्राणहरा ज्ञेया नाभ्यान्तु कलहावहा ।
 कट्यामर्थपरिभ्रंशो विष्टिपुच्छे भुवन्नाथः ॥
 पृथिव्यां यानि कार्याणि चतुर्भानि शुभानि च ॥

तानि सर्वाणि सिध्यन्ति विष्टिपुच्छे नृपोत्तम ।
 जलानसेन्दुकूरेश याम्यवातेन्द्रदिक्क्रमात् ॥
 संख्यासमानैः प्रहरैर्विष्टिर्दुष्टामुखे येतः ।
 कराली मन्दिनी रौद्री समुखी दुर्मुखी तथा ॥
 त्रिशिवा वैष्णवी हंसी ह्यष्ट चेतास्तु विष्टयः ।
 धन्या दधिमुखी भद्रा महामारी खरानना ॥
 कालरात्रिमंहारौद्री विष्टयः कुलपुत्रिका ।
 भैरवी च महाकाली असुराणां क्षयङ्करी ॥
 द्वादशैतानि नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् ।
 न च व्याधिभयन्तस्य रोगी रोगात् प्रमुच्यते ॥
 यद्वाः सर्वेऽनुकूलाः स्युर्न च विघ्नादि जायते ।
 रणे राजकुले द्यूते सर्वत्र विजयी भवेत् ॥
 यस्य पूजयते नित्यं शास्त्रीकविधिना नरः ।
 तस्य सर्वार्थसिद्धिस्तु जायते नात्र संशयः ॥
 एतद्भद्राव्रतं पूर्वमेतत्तत् कथितं मया ।
 एवमेषा समुत्पन्ना विष्टिरिष्टविनाशनी ।
 तस्माच्चरेण कौन्तेय वर्जनीया फलार्थिना ॥
 येनोपवासविधिना व्रतेन च युधिष्ठिर ।
 पूजिता तोषमायाति तद्देव कथयामि ते ॥
 यस्मिन् दिने भवेद्भद्रा तस्मिन्नहनि भारत ।
 उपवासस्य नियमं कुर्यान्मारी नरोऽथ वा ॥
 यदि रात्रौ भवेद्विष्टिरेकभक्तं दिनद्वयं ।
 कार्यस्तेनोपवासः स्यादिति पौराणिको विधिः ॥

प्रहरस्योपरि यदा स्याद्विष्टिः प्रहरत्रयं ।
 उपवासस्तथा कार्यं एकभक्तमतोऽन्यथा ॥
 सर्व्वौषधिजलस्नानं सुगन्धामलकैरथ ।
 नद्यान्तङ्गागोऽथ गृहे स्नानं सर्व्वत्र शस्यते ॥
 देवान् पितॄन् समभ्यर्च्य ततो दर्भमयो शुभा ।
 विष्टिं कृत्वा पुष्पधूपैर्नैवेद्यादिभिरर्चयेत् ॥
 होमन्तु नामभिर्विष्टेः शतमष्टोत्तरं नृप ।
 भुञ्जीत दत्त्वा विप्राय तिलान् पायसमेव च ।
 सतैलं कशरं भुक्त्वा पथाङ्गुञ्जीत कामतः ॥
 कायासूर्य्यसुते देवि विष्टिरिष्टार्थनाशनि ।
 पूजितामि यथाशक्त्या भद्रे भद्रप्रदा भव ॥
 उपोष्य विधिनानेन दश सप्त यथाक्रमात् ।
 उद्यापनं ततः कुर्यात् पूर्व्वं च पूज्य भामिनी ॥
 स्थापयित्वागसे पीठे कशरात्रं निवेद्य च ।
 परिधाय कृष्णवस्त्रयुगं मन्त्रेण तं पुनः ॥
 ब्राह्मणाय पुनर्द्द्याक्षीहृतैलांस्तिलांस्तथा ।
 कृष्णां सवत्सां गामेकान्तथैव कृष्णकम्बलां ।
 दक्षिणाञ्च यथा शक्त्या दत्त्वा भद्रां विमर्जयेत् ।
 य एवं कुरुते पार्थ सम्यग्भद्राव्रतं नरः ।
 विघ्नं न जायते तस्य कार्य्यारम्भे कथञ्चन ॥
 राक्षसा वा पिशाचा वा पूतना शाकिनी यहाः ।
 न पीडयन्ति तं मर्त्यं यो भद्राव्रतमाचरेत् ॥
 न चैवेष्टवियोगः स्यान्नहानिस्तस्य जायते ।

देहान्ते याति सदनं भास्करस्य न संशयः ।

सूर्यात्मजातिभयदाभं गिनीं शनेर्या

मर्त्त्यै भ्रमत्यविरतं करणकृतेन ।

तां कृष्णभासुरमुखीं समुपोष्य विष्टि-

मिष्टार्थसिद्धिमनिशच्च पुमानुपैति ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं विष्टिव्रतं ।

— ००० —

कृष्ण उवाच ।

तथान्यदपि ते वच्मि विष्टिव्रतमनुत्तमं ।

यत्कृत्वा विष्टितो न साङ्गयद्वापि युधिष्ठिर ॥

सुकरं सुगुणं श्रेष्ठं सर्वकामार्थदं नृणां ।

परं प्रीतिकरं भानोः सर्वविघ्नोपशान्तिदं ॥

मार्गशीर्षामले पक्षे चतुर्थ्यामारभेद्बुधः ।

संपूज्य ब्राह्मणश्रेष्ठं विष्ट्यादौ भरतर्षभ ॥

प्रागुक्तां पूज्य तां देवीं मन्त्रमेतमुदीरयेत् ।

भद्रे भद्राय भद्रं हि चरिष्ये व्रतमेव ते ॥

निर्विघ्नां कुरु मे देवि कार्यसिद्धिञ्च भावय ।

सुस्नातः पूज्यतामेवं ब्राह्मणं च स्वशक्तितः ।

ततो भुञ्जीत राजेन्द्र यावद्बद्रा न जायते ॥

अथ वान्तेऽपि भद्रायाः कामतो वाग्यतः शुचिः ।

न किञ्चिद्व्रजेत्प्राज्ञो यावद्बद्रा प्रवर्तते ।

अनेन विधिना पार्थ प्रतिभद्रां समाचरेत् ।

नरो वा यदि वा नारी सर्वकामार्थसिद्धये ॥
 ततः संवत्सरे पूर्णे प्रतिमाङ्गारयेद्बुधः ।
 लौह्यं शैलमयीं वापि दारुजां वा स्वशक्तितः ॥
 शक्त्या चोद्यापनं कृत्वा स्थापयित्वा यथाविधि ।
 पूजयेद्भक्तिमान्विप्रो मन्त्रैरेभिरुदारधीः ॥
 पूजितासि यथा पूर्वमिन्द्रेण धनदेन च ।
 विष्णुना शङ्करेणाय तथाऽन्नः पूजयाम्यहं ॥
 निर्विघ्नेनार्थसंसिद्धिर्यथा तेषां कृता त्वया ।
 तथा ममापि भक्ताय भद्रे भद्रप्रदा भव ॥
 अज्ञानादथवा दर्पात्त्वामलङ्घ्यं कृतं हि यत् ।
 तत्क्षमस्वाशुभे मातर्हिनस्य शरणार्थिनः ॥
 इति कुर्याद्यथाशक्त्या वित्तशोठाविवर्जितः ।
 अशक्तः परकीयां वा पूजयित्वा नराधमः ।
 अभावे लेखजां कृत्वा विधिं निष्पादयेद्बुधः ॥
 एवं हि कुरुते यस्तु भक्त्या भद्राव्रतं नरः ।
 भद्रायामपि कार्याणि तस्य सिद्धयस्त्यसंग्रहः ॥
 इह लोके सुखं भुक्त्वा पुनैश्वर्य्यसमन्वितः ।
 अविघ्नेन नरव्याघ्र दीर्घायुर्व्याधिर्वर्जितः ।
 ततोऽन्ते स्वर्गतिं प्राप्य मोदते सुरराष्ट्रिव ॥
 एतत्पुरा महेंद्रेण श्रीर्णं वृत्रजिघांसया ।
 विमानार्थं कुबेरेण नीतं यन्निदगारिणा ॥
 शङ्भुना त्रिपुरान्ताय पाञ्चजस्याय विष्णुना ।
 भद्रं हि भद्रं भवतीह सदैव पुंसां

ये भक्तिपूर्वकमिदं व्रतमादरेण ।
 भद्राभिधानमभिधाय मनोनुगं ये
 कुर्वन्तु ते ह्यखिलमेव नृपाप्नुवन्ति ।

इति भविष्योत्तरोक्तं द्वितीयभद्राव्रतं ।

इति श्रीमहाराजाधिराज श्रीमहादेवस्य समस्त करणा-
 धीश्वरसकलविद्याविशारदश्रीहेमाद्रि
 विरचिते चतुर्वर्गचिन्तामणौ
 व्रतखण्डे करणव्रतानि ।

अथ षड्विंशोऽध्यायः ।

—००(१.००)—

अथ सङ्क्रान्तिव्रतानि ।

—०—

परो रजोभिचरितैर्यद्दीये-
रानन्दिती विष्मयमेति लोकः ।
स एष हेमाद्रिसुधीरिदानीं
प्रक्रान्ति सङ्क्रान्तिगतव्रतोऽयं ॥

वज्र उवाच ।

भगवन् कर्मणा केन तिथ्यग्योनी न जायते ।
क्लृप्तदेशे च पुरुषस्तन्मना चक्षुः पृच्छतः ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

मेषसंक्रमणे भानी. सोपवासेनरोत्तम(१) ।
पूजयेद्भार्गवं देवं रामं गङ्गाया स्रष्टाविधि ॥
वृषसंक्रमणे प्राप्ते तथा क्षणाच्च पूजयेत् ।
तथा मिथुनसंक्रान्तौ पूजयेद्भोगशायिनं ॥
तथा कुम्भीरसंक्रान्तौ त्रराजमपराजितं ।
नरसिंहं तथा देवं सिंहसंक्रमणे विभुं ॥
कन्यासंक्रमणे देवं तथाऽग्निरसं यजेत् ।

(१) सोम्वारे नरोत्तम इति पञ्चकान्तरे पाठः ।

तथा मकरसंक्रान्ती रामं दशरथात्मजं ॥
 कुम्भसंक्रमणे राजन् रामं यादवनन्दनं ।
 मौनसंक्रमणे मत्स्यं वासुदेवन्तु पूजयेत् ॥
 पटे वा यदि वार्चायां गन्धमाल्यावसम्पदा ।
 प्रादुर्भावस्य नाम्ना च होमं कुर्वीत पार्थिव ।
 व्रतान्ते जलधेतुन्तु क्षुत्पानक्षमन्वितां ॥
 वस्त्रयुग्मयुतां दद्यात् प्रतिमासं सकाञ्चनां ।
 रात्रौ तु दीपमालाभिर्देवदेवं प्रपूजयेत् ॥
 कृत्वा व्रतं वत्सरमेतदिष्टं
 स्वेच्छेत्पु तिर्यक्तु न चापि जन्म ।
 प्राप्नोत्यवाप्नोति चिरञ्च नाकं
 कामस्तथाप्नोति मनोऽभिरामं ॥

इति विष्णुधर्मोत्तिरोक्तं सुजन्मावाप्तिव्रतं ।

ब्रह्मोवाच ।

कुङ्कुमं रोचना मांसो मुराचन्दनबालकं ।
 हरिद्रासह संयुक्तं मेघे स्नानं ग्रहापहं ॥
 रोचना गोरोचना । ग्रहापहं ग्रहदीपापहं ।
 प्रियङ्गुः पद्मकं कुष्ठं त्वचं मांसी निशाकरं ॥
 रोचनागरुसंयुक्तं वृषस्नानं महाफलं ॥
 प्रियङ्गु फलिनी । निशाकरं कर्पूरं ॥
 उशीरं पद्मकं कुष्ठं रोचना यन्त्रिपर्णकं ।

कुङ्कुमागुरुसंयुक्तं मिथुने राज्यदं मतं ॥
उशीरं बालकं ।

रोचना बालकं मुस्तमुरागैलेयचलनं ।
सिंहस्रानं सुराध्यक्ष राज्यायुःपुत्रवहनं ।
हरिद्रा बालकं कुष्ठं मांसी चन्दनरोचना ।
कन्यास्रानं प्रकर्त्तव्यं मत्तानरतिवर्जनं ॥
रोचनारङ्गकुष्ठञ्च चन्दनीशीरपद्मकं ।
हरिद्रा बालसंयुक्तं तुले दुष्कृतनाशनं ॥
प्रियङ्गुस्फटिकं मांसी पद्मकं रोचनागुरुः ।
मुस्ताकुष्ठसमीपेतं हृदिके राज्यदं मतं ॥
प्रवालं मौक्तिकं कुष्ठं रोचनाघनपद्मकं ।
मुरामांसी समीपेतं धनुःसंक्रमणे शुभं ॥
घनो मुस्ता ।

रोचनातात्रकं कुष्ठं चन्दनागुरुकुङ्कुमं ।
उशीरं पद्मकेयुक्तं मकरे सर्वसौख्यदं ॥
ग्रन्थिपर्णं त्वचा बाला केसरं जातिपत्रकाः ॥
रोचनासह संयुक्तं कुष्ठे पुत्रासुराज्यदं ।
केसरो नागकेसरः ।

कर्पूरफलमूलेर्वा मांसीचन्दनपद्मकं ।
बालकं सघनोशीर त्वचा मीने शुभाबहं ॥
दादशैते समाख्याताः स्नाताः सुरवरार्चिताः ।
चक्रच्छीनाशना धन्या महापातकनाशनाः ॥
देवदारुमहाकुष्ठं चन्द्रशैलेयकुन्दरः ॥

पद्मकं पत्रकखोलं सुरसा गुग्गुलुस्तथा ।
 महिषाख्यमथान्यन्तु द्रव्याख्येकादशेति वै ॥
 चन्द्रं कर्पूरं । सुरमा तुलसी ।
 नक्षत्रे सोमदैवत्ये योजनीया नियम्बितः ॥
 सोमदैवत्ये सृगशिरसि ।
 विजयाविद्यया जप्तं कृतमङ्गेनयोजितं ।
 विजयं नाम विख्यातं सर्वोपद्रवनाशनं ॥
 अलक्ष्मीशयनं धन्यं यद्वक्तव्यदुरापहं ।
 बालानां रक्षणार्थाय राजकार्येण (१) सिद्धिदं ॥
 एतत् कथितं शक्त समामेन मया तव ।
 स्नानं संक्रान्तिधूपस्तु यथावत्परिपृच्छतः ॥

इति देवीपुराणोक्तानि संक्रान्तिव्रतानि ।

—000—

नन्दिकेश्वर उवाच ।

अद्यातः संप्रवक्ष्यामि धाम्यव्रतमनुत्तमं ।
 यत् कृत्वा हि नरो राजन् सर्वकामानवाप्नुयात् ॥
 अयने विषुवे चैव स्नानं कृत्वा विचक्षणः ।
 व्रतस्य नियमं कुर्याद्वात्वा देवं दिवाकरं ॥
 करिष्यामि व्रतं देव त्वत्तत्त्वत्परायणः ।
 तद्विघ्नेन मे जातु तव देव प्रसादतः ॥

(१) परबार्धेय इति वा पाठः ।

इत्युच्चार्य लिखित्पत्रं कुङ्कुमेनाष्टपत्रकं ।
 भास्करं पूर्वपत्रेषु आग्नेये च तथा रविं ॥
 विषम्वन्तं तथा याम्ये नैऋत्ये पूषणं तथा ।
 आदित्यं वारुणे पश्चे वायव्ये तपनन्तथा ॥
 मार्तण्डमिति कौबेरे ऐशाने भानुमेव च ।
 एवञ्च क्रमशोऽभ्यर्च्य विश्वात्मा मध्यदेशतः ॥
 कृताञ्जलिपुटी भूत्वा सर्व्वन्द्यात्ममन्त्रक ।
 कालात्मा सर्व्वभूतात्मा विदात्मा विश्वतोमुखः ।
 ध्याधिमृत्युञ्जरागोकुसंसारभयनाशनः ॥

इत्यर्घमन्त्रः ।

पुष्पधूपैः समभ्यर्च्य शिरसा प्रणिपत्य च ।
 रविभ्यात्वा ततो दद्याद्धान्यप्रस्थं द्विजातये ॥
 प्रतिमासं पुनस्तद्वत् पूज्यो देवः सहस्रपात् ।
 एवं सदा प्रदातव्यं धान्यप्रस्थं द्विजन्मने ॥
 एवं संवत्सरे पूर्णं कुर्व्यादुद्यापनक्रियां ।
 अर्घ्यपात्रं हि सौवर्णं कारयेन्मण्डल शुभं ॥
 द्विभुजं पूजयेद्भानुं रक्तवस्त्रयुगान्वितं ।
 धान्यद्रीणेन सहितं तद्वदनं स्वयन्कृतः ॥
 स्वर्णशृङ्गीं रोप्यक्षरां कांस्यलोही पयस्विनीं ।
 रविरूपं द्विजं ध्यात्वा तस्मै वेदविदे तथा ॥
 विद्यापात्राय विप्राय तत्सर्व्वं विनिवेदयेत् ।
 यन्निष्टोमसहस्राणां फलमाप्नोति मानवः ॥

सप्तजन्मसहस्राणि धनधान्यसमन्वितः ।

निर्व्याधिर्निरुजो धीमान् रूपवानपि जायते ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं धान्यसंक्रान्तिघ्नतं ।

—०००७०००—

नन्दिकेश्वर उवाच ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि लवणसंक्रान्तिमुत्तमं ।

संक्रान्तिवासरं प्राप्य स्नानं कृत्वा शुभैर्जलैः ॥

वस्त्रालङ्कारसम्बोते भक्तिभावसमन्विते ।

कुङ्कुमेन लिखेत्पद्ममष्टपत्रं सकर्णिकं ॥

भास्करं पूजयेद्भक्त्या यथोक्तक्रमयोगतः ।

तदग्रे लवणं पात्रं सगुडं स्थापयेद्बुधः ॥

पुष्पैर्धूपैः समभ्यर्च्य नैवेद्यैर्विविधैस्तथा ।

प्रदक्षिणं ततः कृत्वा उपविश्य यथाविधि ॥

ध्यायेद्बिजम्बने रूपं भास्करेण समन्वितं ।

पूजितस्तु यथा शक्त्या प्रसीद मम भास्कर ॥

लवणं सगुडं पात्रं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ।

एवं संवत्सरे पूर्णं भानुं कृत्वा हिरण्यं ॥

रत्नावस्त्रयुगच्छेत् रत्नचन्दनचर्चितं ।

कमलं लवणं पात्रं धेन्वा सर्षपं द्विजातये ॥

प्रदद्याद्भानुमुद्दिश्य विष्णुकाया प्रीयतामिति ।

एवं कृते तु यत्पुण्यं प्राप्यते भुवि मानवैः ॥

न केन गदितुं शक्यं वर्षकोटिशतैरपि ।

लवणाचलदानस्य फलं प्राप्नोति मानवः ॥
 सर्वकामसमृद्धात्मा विमानवरमध्यगः ।
 सूर्यलोके वसेत् कल्पं पूज्यमानः सुरासुरैः ।
 इति स्कन्दपुराणोक्तं लवणसंक्रान्तिव्रतं ।

नन्दिकेश्वर उवाच ।

वक्ष्ये ऽहं भोगसंक्रान्तिं सर्वलोकविवर्धनीं ।
 संक्रान्तिवासरं प्राप्य योषितस्तु समाह्वयेत् ॥
 कुङ्कुमं कज्जलञ्चैव सिन्दूरं कुसुमानि च ।
 सुगन्धीनि च सर्वाणि ताम्बूलं शशिसंयुतं ॥
 शशिसंयुतं कपूरसंयुतं ।
 तण्डुलान् फलसंयुक्तान् प्रदद्याच्च विचक्षणः ।
 अन्यान्यपि हि वस्तूनि भोगसाधनकानि च ॥
 दद्यात् प्रहृष्टमनसा मिथुनेभ्यः प्रयत्नतः ।
 भोजयित्वा यथा शक्त्या वस्तुयुग्मं प्रदापयेत् ॥
 एवं संवत्सरस्यान्ते रविं सम्पूज्य पूर्ववत् ।
 सुवर्णमृद्धौ रौप्यक्षरां सर्वोपस्कारसंयुतां ।
 धेनुं सदक्षिणां दद्यात्सपत्नीकदिजातये ॥
 एवं यः कुरुते भक्त्या भोगसंक्रान्तिमादरात् ।
 स्यात् सुखी सर्वमर्त्येषु भोगी जन्मनि जन्मनि ॥
 इति स्कन्धपुराणोक्तं भोगसंक्रान्तिव्रतं ।

नन्दिकेश्वर उवाच ।

अथान्यदपि ते वच्मि रूपसंक्रान्तिमुत्तमां ।
 संक्रान्तिवासरं स्नानं तैलं कृत्वा विचक्षणः ॥
 हैमपात्रे घृतं कृत्वा हिरण्येन समन्वितं ।
 सुरूपं वीक्ष्य तत्पात्रं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥
 एकभक्तं ततः कृत्वा भक्त्या चैव समन्वितं ।
 व्रतान्ते काश्चनं दद्यादुष्टतर्धुनसमन्वितं ॥
 अश्वमेधमहस्त्राणां फलमाप्नोति मानवः ।
 रूपयौवनसम्पत्त्या आयुरारोग्यसम्पदा ॥
 लक्ष्मीश्च विपुलात् भोगान् लभन्तीह न संशयः ।
 सर्वपापविनिर्मुक्तः स्वर्गलोकश्च गच्छति ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं रूपसंक्रान्तिव्रतं ।

—०३०—

नन्दिकेश्वर उवाच ।

अथान्यां संप्रवक्ष्यामि तेजःसंक्रान्तिमुत्तमां ।
 संक्रान्तिं वासरं प्राप्य स्नानं कृत्वा विचक्षणः ॥
 गालितण्डुलसंयुक्तं कारणं कारयेच्छुभं ।
 तन्मध्ये दीपकं स्थाप्य प्रज्वलन्तं स्वतेजसा ।
 तन्मुखे मोदकं स्थाप्य ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥
 अर्घ्यं च पूर्वं वत्कार्यमेकभक्तान्तु पूर्वं वत् ।
 संवत्सरे तु संपूर्णं कुर्यादुद्यापनं बुधः ॥
 शोभनं दीपकं कार्यं सुवर्णं न तु नारद ।

तास्मिन् करकं कार्यं तन्मध्ये दीपकं न्यसेत् ॥
 कपिला सह दातव्या करकेण द्विजातये ।
 सुवर्णकोटिदानस्य तत्फलं प्राप्यतेऽनघ ॥
 तेजसादिव्यमङ्गाशी वायोबलमवाप्नुयात् ॥
 संक्रान्तिव्रतमाहात्म्याल्लभते नात्र संशयः ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं तेजःसंक्रान्तिव्रतं ।

— ००० —

नन्दिकेश्वर उवाच ।

अथान्यां संप्रवक्ष्यामि सौभाग्यसंक्रान्तिमुत्तमां ।
 शृणु नारद यत्नेन धर्मैश्वर्यप्रदायिनीं ॥
 अयने विषुवे गुक्ते व्यतीपातेन भातुना ।
 संक्रान्तिदिवसे कुर्यादेकभक्तं विमत्सरः ॥
 पूर्ववद्भानुमभ्यर्च्य तथा चैव सुवासिने ।
 सौभाग्याष्टकसंयुक्तं वस्त्रयुग्मं सयोषिते ॥
 विप्राय वेदविदुषे भक्त्या तत् प्रतिपादयेत् ।
 एवं संवत्सरे पूर्णं कृत्वा ब्राह्मणभोजनं ।
 पर्वतं स्तवणं कृत्वा यथा विभवसारतः ॥
 काञ्चनं कमलं कृत्वा भास्करश्चैव कारयेत् ।
 गन्धपुष्पादिना पूज्य विप्राय प्रतिपादयेत् ॥
 पुष्करे च कुरुक्षेत्रे गोसहस्रफलं लभेत् ।
 सा प्रिया मर्त्यलोकेषु गा करोति व्रतं त्विदं ॥

गङ्गास्य यथा गौरी विष्णोर्लङ्घ्येयथा दिवि ।

मत्स्यलोके तथा सापि प्रियेण सह मोदते ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं सौभाग्यसंक्रान्तिव्रतं ।

—000—

स्कन्द उवाच ।

अथान्यामपि ते वच्मि फलसंक्रान्तिमुत्तमां ।

संक्रान्तिवासरं प्राप्य ज्ञानं कृत्वा तु पूर्व्ववत् ॥

सपूज्य पूर्व्ववद्भानुं पुष्पधूपादिना तथा ।

शर्करासहितं पात्रं फलाष्टकसमन्वितं ॥

संक्रान्तिवासरं प्राप्य ब्राह्मणाय निवेदयेत् ।

तदन्ते तु रविं कुर्यात्सुवर्णेन च नारद ॥

कुम्भस्योपरि सस्थाप्य गन्धद्वयेः प्रपूजयेत् ।

फलाष्टकं ततो दद्याद्भक्ष्यसमन्वितं ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तफलसंक्रान्तिव्रतं ।

—000—

नन्दिकेश्वर उवाच ।

धनसंक्रान्तिमाहात्म्यं शृणु स्कन्द विधानतः ।

यत्कृत्वा सर्व्वपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः ॥

संक्रान्तिवासरं प्राप्य शुचिर्भूत्वा समाहितः ।

कलशं निर्व्वणं गृह्य वारिपूष्पं निधापयेत् ॥

सुवर्णयुक्तं कृत्वा प्रतिमासन्तु दापयेत् ।

विधिनानेन वर्षान्ते प्रीयतां मे दिवाकरः ॥

पूजाविधानं सर्व्वं च धान्यसंक्रान्तिवद्भवेत् ॥
 उद्यापनञ्च वक्ष्यामि संपूर्णव्रतसुत्तमं ।
 सौवर्णं कमलं कृत्वा सूर्य्यक्षोपरि विन्यसेत् ॥
 हस्ते सुवर्णघटितं पद्मञ्च वै निवेदयेत् ।
 गोदानं तत्र दातव्यं एवं संपूर्णभावेन ॥
 एवं कृते तु यत्पुण्यं फलं स्यात्तुं न चोत्सहे ।
 जन्मनां गतसाहस्रं धनयुक्तो भवेन्नरः ॥
 आयुरारोग्यसम्यक् सूर्य्यक्षोके भक्ष्यते ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं धनसंक्रान्तिव्रतं ।

—000—

नन्दिकेश्वर उवाच ।

अथान्यां संप्रवक्ष्यामि आयुःसंक्रान्तिसुत्तमां ।
 नृणु वत्स विधानेन यथा पुण्यं प्रवर्धते ॥
 संक्रान्तिदिवसे पूज्य पूर्व्ववत्स दिवाकरं ।
 कांक्षं क्षीरघृतं दद्यात्क्षिरप्लवं स्वशक्तितः ॥
 मन्त्र एव पुनर्दाने पूजा सैव प्रकीर्तिता ।
 सक्षीरं सुरभीजातं पीयूषसमरूपपटम् ॥
 आयुरारोग्यमैश्वर्य्यं मनो देहि द्विजापितं ।
 अनेन विधिना सम्भक् सर्व्वं दद्याद्दत्तमित्रतः ॥
 उद्यापनादिकं सर्व्वं धान्यसङ्क्रान्तिवद्भवेत् ।
 एवं कृते तु यत्पुण्यं शक्यं तेदं मयोदितं ॥
 निर्व्वाधिरपि दीर्घायुस्तेजस्वी सर्व्वजन्मसु ।

(८३)

अपमृत्योर्भयं नास्ति जीवेच्च शरदः शतं ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तमायुःसंक्रान्तिव्रतं ।

—000@000—

ब्रह्मोवाच ।

आश्रासद्भ्रान्तिमाहात्म्यं शृणु स्कन्द विधानतः ।

यां कृत्वा सर्वं लोकेषु आश्रावान् जायते नरः ।

सद्भ्रान्तिदिवसे पुण्ये प्रारभेन्नियमं व्रते ।

पद्ममष्टदलं कृत्वा कुङ्कुमेन तु भास्करं ॥

पूजयेन्मन्त्रमुच्चार्य विधिवद्गुरुसन्निधौ ।

आश्रा तेजस्करी पृष्ठे प्रभादीप्तिग्रस्करी ॥

आश्रां सर्वं त्रिं गां देव मम देहि नामोऽस्तुते ।

पूज्यैव कुङ्कुमेनाद्य दद्याद्विप्राय भोजनं ।

उद्यापने तु चण्डांशुं सौवर्णं सरघं तत्रा ॥

एकचक्रं सप्ताश्वमश्वेन ममन्वितं ।

यः कुर्व्याद्विजिज्जानेन आश्रासद्भ्रान्तिमुत्तमां ॥

अथाश्राऽसकृत्किं लोके सूर्यतस्तस्य जायते ।

गोमन्त्रमित्रसुतेष्टे आश्रा सर्वं च जायते ।

रिपवः सङ्घं यान्ति सुखं प्राप्नोत्यनुत्तमं ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तमाश्रासंक्रान्ति व्रतं ।

—000—

नन्दिकेश्वर उवाच ।

कीर्तिसद्भ्रान्तिमाहात्म्यं शृणु स्कन्द विधानतः ।

सङ्क्रान्तिवासरं प्राप्य रविविम्बं लिखेद्भुवि ॥
 तस्य मध्ये स्थितं देवं पूजयेत्सर्वमन्त्रतः ।
 यथाविभवसारेण ततो विप्राय दक्षिणां ॥
 प्रतिमासं तु वै श्वेतं वस्त्रयुग्मं प्रदापयेत् ॥
 उद्यापने तु रौप्यं च सूर्यमन्त्रं प्रदापयेत् ।
 श्वेतवस्त्रयुग्मं च ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥
 एवं कृते पराकीर्त्तिर्जायते वापि वज्रिज ।
 फलं न शक्यते वक्तुं ह्यप्येतेरपि जिह्वा ॥
 विमला कीर्त्तिं राज्यं च जायते नात्र संशयः ।
 आयुरारोग्यसम्पत्तौ जीवेद्दुर्लभं नरः ॥
 इति स्कन्दपुराणोक्तं कीर्त्तिसंक्रान्तिव्रतं ।

—०००@०००—

नन्दिशेखर उवाच ।

वक्ष्याम्यपापसङ्क्रान्तिं शृणु स्कन्द विधानतः ।
 संक्रान्तां नियतो भूत्वा तिलैः श्वेतैः समन्वितैः ॥
 करकं वर्षमानं च प्रतिमासं निवेदयेत् ।

वर्षमान इति श्रावः

मन्त्रे चानेन तु क्षायाद्बलिभावसमन्वितः ॥
 तिलो माम्पातु पापेभ्यस्तव देव प्रसादतः ।
 त्वं मां रक्ष देवेश वायुनः कायकक्षाघात ।
 उद्यापने च देवस्य सौवर्षमाषकेण तु ।
 द्विभुजा प्रतिमा काव्यां रजतेनाथ कारयेत् ॥

तिलधेनुः प्रदातव्या व्रतेऽस्मिन्नात्र संशयः ।
 पूर्वपापप्रक्षायाय आयुरारोग्यहेतवे ॥
 एतत्सर्वं पुरा प्रोक्तं ब्रह्मणा विश्वे तदा ।
 विश्वरिन्द्राय जगदे तदा प्रोवाच शम्भवे ॥
 शम्भुश्चैव ममाचष्टे मया प्रोक्तं प्रभो तव ।
 सर्वसङ्क्रान्तिदिवसे प्रारभेद्भूतसुत्तमं ।
 दक्षिणोत्तरसङ्क्रान्तौ सर्वास्त्विति च केन च ॥
 अभुवत्वाच्छरीरस्य योगपद्यात् प्रशस्यते ।
 न चात्र विधिलोपः स्वात्सर्वत्रैकान्तु देवतं ॥
 नागादेवव्रतानान्तु नैककालः प्रशस्यते ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तमपापसंक्रान्तिव्रतं ।

—००@००—

मन्दिकेश्वर उवाच ।

अद्यान्यां संप्रवक्ष्यामि ताम्बूलाख्यामनुत्तमा ।
 विधानं पूर्वं वत्कुर्व्यान्नान्यसङ्क्रान्तियच्च तत् ॥
 ताम्बूलचन्दनाद्यश्च प्रगृह्यान्नां द्विजोत्तमात् ।
 यावत्सर्ववत्सरं पूर्णं रात्रौ रात्रौ ततः परं ॥
 याम्बूलं भक्षयेद्दिप्रान् कारयश्चैव नान्तरं ।
 वत्सरान्ते तु कमलं कृत्वा चैव तु काञ्चनं ॥
 पञ्चकोशश्च कुर्वीत तथा पूगीफलालयं ।
 पूर्वभाण्डं प्रकुर्वीत पूगप्रस्फोटनं तथा ।
 चण्डवासादिपूर्णां भाण्डानि च द्विजर्षभ ॥

द्विजदाम्पत्यमावाह्यं सर्वोपस्कारसंयुतैः ।
 द्रव्यैश्च पूजयेद्भक्त्या भोजयेत् वस्त्रसैर्हिजान् ॥
 उपकल्पितश्च यन्निश्चिद्ब्राह्मणाय निवेदयेत् ।
 एवं करोति वा नारी ताम्बूलसङ्घातं व्रतोत्तमं ॥
 सर्वकामानवाप्नोति सर्वं जातिकुलोद्भवे ।
 सौभाग्यमन्तेन चतुर्लोकं प्राप्नोति द्विजसत्तम ॥
 भर्ता पुत्रैश्च पौत्रैश्च मोदते च गृहे गृहे ।
 मृता कालान्तरे पश्चात् सूर्यलोके महीयते ॥
 पतिना देवबहिर्ग यावदावृतसंज्ञवं ।
 मृष्योति युषती काचित् सापि तत्फलमनुते ।
 मुच्यते सर्वपापेभ्यः स्वर्गलोके महीयते ॥
 इति स्कन्दपुराणोक्तं ताम्बूलसङ्घातव्रतम् ।

—०—
 मन्दिषोष्णर उवाच ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि सङ्घातव्रतं मनोरथा ।
 गुह्येन पूर्णकुम्भश्च सर्वस्वश्च स्वयत्नितः ।
 सङ्घातव्रतवासरे दद्याद्ब्राह्मणाय कुटुम्बिने ॥
 एवं संवत्सरे पूर्वं स्वयम्भोगोद्यापनं शुभम् ।
 गुह्येन पर्वतं कार्यं वस्त्ररत्नैश्च भूषितम् ॥
 अयने चोत्तरे दद्याद्विजगणैः न कारयेत् ।
 यं यं प्रार्थयते कामं तं तं प्राप्नोति पुष्कलम् ॥
 सर्वपापविनिर्मुक्तः सूर्यलोके महीयते ।
 इति स्कन्द पुराणोक्तं मनोरथमङ्गाव्रतम् ।

नन्दिकेश्वर उवाच ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि विशोकसङ्ग्राममुत्तमां ।
 अयने विषुवे पुष्के व्यतीपातो भवेद्यदि ॥
 एकभक्तं नरः कुर्व्यात्तिकैः खानन् कारयेत् ।
 काञ्चनं भास्करं कृत्वा यथा विभवशक्तितः ॥
 आपयेत्पुष्पगन्धेन गन्धपुष्पैः सुपूजयेत् ।
 वेष्टयेद्रत्नवस्त्राभ्यां ताम्रपात्रे निधापयेत् ॥
 भास्कराय नमः पादौ रवे जहति वै नमः ।
 आदित्याय नमो जगुः खरुः चैव दिवाकरः ॥
 अर्ध्यन्ते तु कटिं पूज्य भानुचैवोदरे तथा
 नमः पूज्ये तु बाहुभ्यां अर्ध्यन्ते तु पुनस्तनौ ॥
 विवस्त्रते नमः कण्ठे सहस्रांशो मुखे स्मृतं ।
 प्रभाकर नमो नेत्रे तेजोराशे नमः शिरः ॥
 वक्ष्याय नमः केशान् पादादौ पूजयेद्भविं ।
 अर्घ्यादि पूर्ववत्कार्यं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥
 एवं संवत्सरे पूर्णं काञ्चनेन दिवाकरं ।
 सपद्महस्तं सम्पूज्य यथाविभवशक्तितः ॥
 कारयेत्पूजयेद्रत्नैश्च रत्नवस्त्रैश्च वेष्टयेत् ।
 ततो होमं प्रकुर्वीत सूर्यमन्त्रेण नारद (१) ॥
 द्वादश कपिषा दद्याद्दद्यात्सङ्घारसंयुताः ।
 अशक्तः कपिसामिकां वित्तघाठाविवर्जितः ।

(१) सूर्यमन्त्रेण नारद इति पुस्तकाकारे बाह्यः ।

ग्रहणे च कुरुक्षेत्रे सत्पात्रे च प्रदीयते ॥
कोटि कोटिसुवर्णस्य दत्तस्य लभते फलं ।
आयुरारोग्यमैश्वर्यं भार्यापुत्रसमन्वितं ॥
इति स्कन्दपुराणोक्तं विशोकसद्गुणनिव्रतं ।

—००—

इति श्रीमहाराजाधिराजश्रीमहादेवस्य समस्तरणाधीश्व-
रसकलविद्याविशारदश्रीहेमाद्रिविरचिते
चतुर्वर्गचिन्तामणौ व्रतखण्डे
सद्गुणनिव्रतानि ।

—

अथ सप्तविंशोऽध्यायः ।

—000—

अथ मासव्रतानि ।

येन त्रिलोकी धरणी कृतेयं
कर्पूरतुल्यप्रतिमैर्विशोभिः ।
हेमाद्रिसूरिः समहाप्रभावं
मासव्रतं व्रातमिहव्रवीति ॥

वज्र उवाच ।

भगवन् कर्मणा केन रूपवान् जायते नरः ।
एतन्मे संशयं छिन्धि त्वं हि सर्वं विदुष्यते ॥
मार्कण्डेय उवाच ।

फाल्गुन्यां समतीतायां प्रतिपत्प्रभृति क्रमात् ।
यावच्चैषी महाराज तावत्स्नातो दिने दिने ॥
बहिः संपूजयेद्देवं केशवं भोगशायिनं ।
एकभक्ताशनो नित्यमधःशायी तथा भवेत् ॥
त्रिरात्रोपोषितः पूजाचैत्र्यां कुर्यात्तथैव च ।
स्वशक्त्या रजतन्दयाहस्त्रयुग्मं तथैव च ॥

रूपार्चिनी मासमिदं मयोक्त

व्रतोत्तमं नित्यमदीनसत्त्वं

कृत्वा तु नाकं मनुजस्त्ववाप

मानुष्यमासाद्य च रूपवान् स्वात् ॥

इति विष्णुधर्मीतरोक्तं रूपावाप्तिव्रतं ।

ब्रह्मवाच ।

धर्मराज निबोधेदं दमनादिमहोत्सवं ।
 प्रहृतवरनारीकं पञ्चमोच्चारसुन्दरं ॥
 संयुतो नन्दनवने भार्यया सह भार्यया ।
 विस्मयोत्फुल्लनयनी बभ्रामोक्षतर्वाच्छिवः ॥
 स ददर्श वने फुल्ले विद्याधरगणान् बल्लन् ।
 वसन्तर्त्तौ नत्तमानान् सुरासुरगणार्चितान् ॥
 सन्तानपारिजाताभ्यां बद्धा वै माधवीलता ।
 कदाचिद्दीलनञ्चक्रुः समालिङ्ग्य घनस्तनीं ॥
 भीतमान्दीलकारुढा अभ्यासन् परमस्त्रियः ।
 येनैवोत्पाटयन्ति स्म स्त्रियाद्यमपिमन्मथं ॥
 तद्दृष्ट्वा विस्मयाविष्टा भवानी प्राह शङ्करं ।
 कीतुकं मे समुत्पन्नं पञ्चगाभरण प्रभो ॥
 आन्दोलकं मम कृते कारयस्व स्वलङ्घनं ।
 यथा समन्दोलयेऽहं यथा चेने त्रिलोचन ॥
 तद्गोरीवचनं चारु श्रुत्वाऽसौ वृषभध्वजः ।
 आन्दोलहारयामास समाङ्गय महासुरं ॥
 स्तम्भवयहारयित्वा दृष्टकाष्टमयं दृढं ।
 सत्यञ्चैवोपरितनं श्रेष्ठं काष्ठमकल्पयत् ॥
 वासुकिं दण्डिकास्त्रानि बहूनिन सुसंघृतं ॥
 तत्पुरा सञ्चयं पीठं कृतवाक्त्रपिमण्डितं ॥
 भूरिकापीसकैशेयैः सहस्रैर्वैष्टितेन वै ।
 स्रग्दामालम्बितकरं मणिमोक्तकशेखरं ॥

चेरयित्वा विचित्रान्तां दीप्तां वैजालिनीत्तरां ।
 संसिद्धां सिंहगुरवे गौरवेण न्यवेदयत् ॥
 तथाकृदस्तु भगवान् सोमः सोमविभूषणः ।
 मण्डनान्दोलयामास पार्श्वस्थैः पार्श्वदैः सह ॥
 वामपार्श्वे तु विजया दक्षिणे तु जया भवेत् ॥
 चामराक्रान्तवाहं शसमाश्लिष्टकुचद्वयं ।
 आन्दोलयन्त्या पार्श्वस्था तद्गीतं गद्गदाक्षरं ॥
 येन देवासुरस्त्रीणामासीदानन्दनिर्भरः ।
 जगुर्गन्धर्वपतयो नन्दुषाप्सरोगणाः ॥
 उत्तालवाद्यानि तथा वादयन्ति स्म चारणाः ।
 चेलुः कुलाचलाः सर्वे चुक्षुभुः सप्त सागराः ॥
 वदुर्वाताः सनिर्घाता देवे दीप्तासमन्विते ।
 आलोक्य व्याकुलं लोकं देवाः शक्रपुरोगमाः ।
 उपेत्य प्रणिपत्योषुः सर्वपापहरं परं ॥
 उपारमस्व भगवन् भवतः क्रीडयानया ।
 जगद्दशघूर्णितं देव विचलज्जलसागरं ॥
 गीर्वाणगीर्भिः संहृष्टः शङ्करो लोकशङ्करः ।
 समुत्ततार दीप्तातः प्रहर्षोत्फुल्ललोचनः ॥
 उवाच वचनं शक्रः सुरसाधस्य पश्यतः ।
 सानुकम्पं सुललितं बिस्फुटार्धपदाक्षरं ॥
 श्रीमहेन्द्र उवाच ।
 अथ प्रवृत्तिं ये दीप्ताक्रीडां पुष्करिणीतटे ।
 वसन्ते कारयिष्यन्ति मन्त्रिते त्रिदशान्वये ॥

नेत्रपट्टपटौच्छ्रं पद्मरागविभूषितं ॥

छाद्यकैरुपसम्पन्नां विन्यस्तकनकादुकां ॥

अदुका मृदुला ।

विचित्राभरणां भूरिभाभासितदिगन्तरां ।

मालाविद्याधराक्रान्तां प्रान्तारोपितदर्पणां ॥

छत्रचामरसंछन्नां यथाशक्त्यथवा कृतां ।

अग्निकार्यं ततः कृत्वा दिक्षु दिक्षु दिशां बलिं ॥

तस्यामारोपयेद्देवमिष्टमिष्टजनावृतं ।

मूलमन्त्रेण देवाणां प्राप्तं दोलाधिरोहणं ॥

पार्श्वस्थो ब्रह्मणो विद्वान् पठेद्वा मन्त्रमुत्तमं ।

विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्त्रात् ।

संवाहुभ्यां धमति सम्पतत्रैर्यावाभूमौ जनयन् देव एकः ॥

गन्धीरतूर्यनिर्घोषैः कलहानास्रनिःस्वनैः ॥

स्तुतिमङ्गलशब्दैश्च पुष्पधूपादिवासितं ।

उद्धुमन्तीदताम्बूलपुष्पमालाकुली जनः ॥

तां विहाय जलक्रीडामन्यासां विदधीत च ।

पीतशीतजलाघातताडितो यज्जनः सुखं ॥

मन्यते नियतं कोऽपि प्रभावोऽयमनङ्गजः ।

एवं येऽनुगमिष्यन्ति नरो दोलामुपागतां ॥

निरुजस्ते भविष्यन्ति सुखिनः शान्तः शतं ।

पुष्पपौत्रसमायुक्ता धनधान्यसमायुताः ॥

विज्जिह्वेह सुखं मन्त्रेण ततो वास्यन्ति तत्परं ।

प्राप्ते वसन्तसमये सुरसत्तमाना-

मान्दोलनं सुरवराननु कुर्वते ये ।
 ते प्राप्नुवन्ति भुवि जन्मतरोः फलानि
 दुःखार्त्तितः कुलघटान्मपि तारयन्ति ॥
 इति भविष्योत्तरोक्त आन्दोलनविधिः ।

— . —
 महाभारते ।

चैत्रं नियतो मासमेकभक्तेन यः क्षिपेत् ।
 सुवर्णमणिमुक्ताढ्यो कुले महति जायते ॥
 विष्णुधर्म ।

चैत्रं विष्णुपरो मासमेकभक्तेन यः क्षिपेत् ।
 सुवर्णमणिमुक्ताढ्यं गार्हस्थ्यं समवाप्नुयात् ॥
 अहिंस्रः सर्वभूतेषु वासुदेवपरायणः ।
 नमोऽस्तु वासुदेवायेत्यहसाष्टशतं जपेत् ॥
 अतिरात्रस्य यज्ञस्य ततः फलमवाप्नुयात् ॥

इति एकभक्तव्रतं ।

— ००० —

अथ वैशाखव्रतानि ।

—
 श्रीकृष्ण उवाच ।

वैशाखे पुष्पलवणं वर्जयित्वा तु गोमहः ।
 विष्णुलोकमवाप्नोति ततो राजा भवेदिह ॥

एतत्कान्तिव्रतं नाम कान्तिसौभाग्यदायिनी ॥
विष्णुरत्र देवता ।

इति पद्मपुराणोक्तं कान्तिव्रतम् ।

— — —
महाभारते ।

निरन्तरैकभक्तेन वैशाखं यो जितेन्द्रियः ।
नरो वा यदि वा नारी ज्ञातीनां श्रेष्ठतां व्रजेत् ॥
विष्णुधर्मम् ।

यः क्षिपेदेकभक्तेन वैशाखं पूजयेद्धरिम् ।
नरो वा यदि वा नारी ज्ञातीनां श्रेष्ठतां व्रजेत् ॥
अश्विंस्रः सर्वभूतेषु वासुदेवपरायणः ।
नमोऽस्तु वासुदेवायैत्यहयाष्टशतं जपेत् ।
अतिरात्रस्य यच्चस्य ततः फलमवाप्नुयात् ॥

इति एकभक्तव्रतम् ।

— — —
वज्र उवाच ।

भगवन् कर्मणा केन बुद्धियुक्ता भवेन्नरः ।
एतदेव मनुष्याणां मनुष्यत्वमुपाहृतम् ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

चैत्र्यान्तु समतीतायां यावन्मासं दिने दिने ।
पूर्ववत् पूजयेद्देवं नृसिंहमपराजितम् ॥

पूर्ववदिति चतुर्मासोक्तरूपावाप्तिव्रतवदेकभक्तवह्निःज्ञान-
भूगव्यादिकं कर्त्तव्यमित्यर्थः ।

होमश्च प्रत्यहं कुर्यात्तथा सिद्धार्थकैर्नृप ।

ब्राह्मणान् भोजयेच्चात्र तथा त्रिमधुरं नृप ॥

त्रिमधुरं मधुष्टतशर्कराः(१) ।

वैशाख्यां कनकन्द्याचिराद्रीपीषितो नरः ।

ज्ञानावाप्तिप्रदस्त्वेतद्भूतं बुद्धिविवर्द्धनं ॥

कृत्वा व्रतं मासमिदं यथोक्त-

मासाय नाकं सुचिरं मनुष्यः ।

मानुष्यमासाय तु बुद्धियुक्तो

ज्ञानेन युक्तश्च तथा भवेच्च ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं ज्ञानावाप्तिव्रतं ।

अथ ज्यैष्ठ्यव्रतानि ।

महाभारते ।

ज्येष्ठामूलस्तु वै मासमेकभक्तस्तु यः क्षिपेत् ।

ऐश्वर्यं मतुलं श्रेष्ठं पुमान् स्त्री वाभिजायते ॥

विष्णुधर्मः ।

कृत्वाऽर्पितमना ज्येष्ठमेकभक्तेन यः क्षिपेत् ।

अहिंस्रः सम्भूतेषु वासुदेवपरायणः ॥

(१) दुग्धं वनशर्करा इति पाठान्तरं ।

नमोऽस्तु, वासुदेवायेत्यहयाष्टयत्नं जपेत् ।
अतिरात्रस्य यज्ञस्य समयं फलमाप्नुयात् ॥

इति एकभक्तव्रतं ।

— ००० —

वक्ष्ये उवाच ।

श्रीविहीनस्य लोकेऽस्मिन् जीवितस्यापि किं फलं ।
तस्माद्भूतं समाचक्ष्व येन स्याच्छीयुतो नरः ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

वैशाख्यां समतीतायां प्रतिपत्प्रभृतिक्रमात् ।
पूर्वं वत् पूजयेद्देवं श्रीमहायं दिने दिने ॥
पूर्वं वदिति चैत्रादिरूपावामित्रवत् ।
पुष्पमूलैः फलैश्चैव जुहुयादक्षतानि च ।
बिल्वाश्च वज्रौ सततं गोरसैर्भीजयेद्विजान् ॥
चिराच्चोपोषितो ज्येष्ठां कनकं प्रतिपादयेत् ।
वस्त्रयुग्मञ्च राजेन्द्र तेन साफल्यमश्नुते ॥

कृत्वा व्रतं मासमिदं यथोक्त-

मासाद्य मासं सुचिरं मनुष्यः ।

मानुष्यमासाद्य विवृण्वतेजाः

श्रिया युतः स्याज्जगति प्रधानं ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं श्रीप्राप्तिव्रतं ।

अथाष्टादशव्रतानि ।

महाभारते ।

आषाढमेकभक्तेन स्थित्वा मासमतन्द्रितः ।

बहुधान्यो बहुधनो बहुपुत्रश्च जायते

विष्णुधर्म्मा ।

आषाढमेकभक्तेन पूजयेद्विष्णुतत्परः ॥

इति एकभक्तव्रतं ।

—००—

वक्ष्ये उवाच ।

भगवन् कर्मणा केन भोगमाप्नोति मानवः ।

किन्तु भोगविहीनस्य कार्यमस्ति धनैर्द्विज ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

ज्यैष्ठ्यान्तु समतीतायां प्रतिपत्पञ्चमिक्रमात् ।

पूर्ववत् पूजयेद्देवं विश्वरूपधरं हरिं ॥

अत्रापि पूर्ववदिति रूपावाप्तिव्रतवदित्यर्थः ।

कृत्वा व्रतास्ते च तथा चिरात्

दत्त्वा सुयुक्तं शयनं द्विजाय ।

स्वर्लोकमामाद्य चिरं नरेन्द्र

मानुष्यमासाद्य च भोगवान् स्यात् ॥

इति विष्णुधर्मीकं भोगावाप्तिव्रतं ।

—०००—

अथ आवणव्रतानि ।

सञ्जय उवाच ।

कदाच यावन्ती पूज्या क्रियते तु कदा व्रतं ।
कथमेषा कृतेन्द्राण्या किं फलन्तद्ब्रवीहि मे ॥

विजय उवाच ।

प्राप्ते तु यावन्ते मासि शुक्लपक्षे मनीहरे ।
संस्थाप्य पार्वतीं देवीं पूजयेद्भक्तिशक्तितः ॥
मासं यावन्नियमतः संस्मरन् पार्वतीं हृदि ।
श्वेतार्घ्यैः श्वेतकुसुमैः श्वेतचन्दनकेन च ॥
गन्धैर्धूपैश्च नैवेद्यैर्यथाकालीद्वयैः फलैः ।
अर्घ्यं दद्यात् फलेनैव कुसुमाक्षतचन्दनैः ॥
नमोऽर्हयावन्ती देवी सर्वपापक्षयहारी ॥
गृहाणार्घ्यं हि देवेशि शङ्करेण समं मम ॥

अर्घ्यमन्त्रः ।

नमो नमस्ते देवेशि अर्हयावन्ति पार्वति ।
नमस्तेऽस्तु जगन्मातर्नमस्ते हरवत्सले ॥
नमो देवि नमस्तुभ्यं कात्यायनि नमोऽस्तु ते ॥
नमः कालि महाकालि शिवे दुर्गे नमोऽस्तु ते ।
नमो रुद्राणि सर्वाणि अपणै शङ्करप्रिये(१) ।
सर्वभूतहिते देवि त्राहि संसारसागरात् ।

पूजामन्त्रः ।

धूपोऽयं सर्वदेवानां आहारो ह्यमृतोपमः ।

(१) नवमे शङ्करप्रिये इति पुस्तकाक्षरी पाठः ।

धूपं गृह्णाच्च देवेशि अर्घ्यं श्रावणि नमोऽस्तु ते ॥
 हितवस्त्रं प्रदातव्यं धीतं वा निर्मले शुभे ।
 श्रावणान्ते ततः पञ्चाङ्गमाप्य नियमं शुचिः ॥
 गौरिणीभीजयेच्छक्त्या मिष्टाक्षेन जये शुभे ।
 द्विजांश्च भोजयेत्तत्र वस्त्राणि परिधापयेत् ॥
 एवंविधविधानेन कृत्वा र्घ्यं श्रावणीव्रतं ।
 न तस्य स्याच्च दारिद्र्यं न चैवेष्टविघोजनं ॥
 अष्ट पुत्राङ्गभेक्षारी भर्त्तारश्च गुणाधिकं ।
 सुखं गुणिनं कान्तं पण्डितं प्रियवादिनं ॥
 एकभक्तेन नक्तं कुर्यादेतद् व्रतं शुभं ।
 इदं कृत्वा पुरेन्द्राणीन्द्रं लेभे पतिमुत्तमं ॥
 रोहिणी पतिमालेभे चन्द्रं व्रतनिषेवणात् ।
 रक्ष्या देवी सुभर्त्तारं आदित्यं प्राप सत्यतिं ॥
 इदं कृत्वा कथितं भद्रे अर्घ्यं श्रावणिकाव्रतं ।
 कुरुते या च पूर्णानि व्रतान्यस्या भवन्ति हि ॥
 यदा ग्रहकृतैर्दोषैर्यदि देवो न वर्षति ।
 कथाश्रवणमात्रेण देवी वर्षति वासवः ॥
 दुर्भिक्षे ङामरे घारे सङ्ग्रामे राजविग्रहे ।
 कथामेतां निश्मयाश्च दोषैः सर्वैः प्रमुच्यते ॥

इति ब्रह्माण्डपुराणोक्तमर्घ्यश्रावणिकाव्रतं ।

— ००० —

युधिष्ठिर उवाच ।

स्वभर्त्ररति सम्बन्धे महास्नेहो यथा भवेत् ।
कुलस्त्रीणां तथाचक्ष्व व्रतं मम जगद्गुरो ॥

कृष्ण उवाच ।

यमुनायास्तटे पूर्वे मथुरास्ति पुरी शुभा ।
तस्यां शत्रुघ्ननामाभूद्राजा राघवनन्दनः ॥
तस्य भार्या कीर्त्तिमाला नाम्नासीत् प्रथिता भुवि ।
कदा प्रणम्य भगवान् वशिष्ठमुनिसत्तमः ॥
पृष्टः कथं मुनिश्रेष्ठ सौभाग्यमतुलं लभेत् ।
ब्रूहि मे तिलसम्बन्धं कारणं व्रतमुत्तमं ॥
एवमुक्तस्तथा ज्ञानी वशिष्ठः कीर्त्तिमालया ।
ध्यात्वा गुह्यतममाचख्यौ कोकिलाव्रतमुत्तमं ॥

वसिष्ठ उवाच ।

आषाढपौर्णमास्यान्तु सन्ध्याकाले ह्युपस्थिते ।
सङ्कल्पयेन्मासमिकं त्रावणीप्रभृति द्वादशं ।
स्नानं करिष्ये नियता ब्रह्मचर्ये स्थिता सती ।
भोक्ष्यामि नक्तं भूययाङ्करिष्ये प्राणिनान्दयां ॥
इति सङ्कल्प्य पुरुषो नारी वा ब्राह्मणान्तिके ।
प्राप्यानुष्ठान्ततः प्राङ्गे सर्व्वं सामगिसंयुतः ।
पुरुषः प्रतिपत्काले दन्तधावनपूर्व्वकं ॥
नद्याङ्गत्वाद्यवा वाप्यां ब्रह्मचर्ये स्थिता सती ।
तुलसीमृत्तिकां गृह्णन् तडागे गिरिनिर्भरे ॥
स्नानं कुर्याद्व्रती पार्थ सुगन्धामलकैस्तिलैः ।

दिनाष्टकं ततः पश्चात् सर्वाध्या पुनः पुनः ॥
 यत्रया पिष्टया चाष्टौ दिनानि पृथगाचरेत् ।
 स्नात्वा ध्यात्वा रविं सन्धान्तर्पयित्वा पितृंस्तथा ।
 तर्पयित्वा लिखेत् पिष्टैः कीकिलां पक्षिरूपिणीं ॥
 कलकम्बां शुभैः पुष्पैः पूजयेच्चम्पकीद्वयैः ।
 पात्रैर्वा धूपनैवेद्यैर्दीपालक्तकचन्दनैः ॥
 तिलतण्डुलैर्दूर्वाग्रैः पूजयेत्तां क्षमापयेत् ।
 नित्यं नित्यश्चरेद्भक्त्या मन्त्रेणानेन पाण्डव ॥
 तिलात्स्निहन्तिलात्स्नीयं तिलवर्णे तिलप्रिये ।
 सौभाग्यधनपुत्रांश्च देहि मे कीकिले नमः ।
 इत्युच्चार्य ततः पश्चाद्बृहमभ्येत्य संयतः ॥
 कृत्वाहारं स्वपेत्यार्थं यावन्मासं समाप्यते ।
 मासान्ते ताम्रपात्रे तु कीकिलां तिलपिष्टजां ॥
 रत्ननेत्रां स्वर्णपद्मां ब्राह्मणाय निवेदयेत् ।
 वस्त्रैरत्रैर्गुडैर्युक्तां श्रावण्यां कुण्डलेऽथवा ॥
 श्वश्रुश्वश्रुवरुणैः वा दैवज्ञे वा पुरोहिते ।
 व्यासे वा संप्रदातव्या व्रतिभिः शुभकाङ्क्षया ।
 एवं या कुरुते नारी कीकिलाव्रतमादरात् ।
 सप्तजन्मनि सौभाग्यं सा प्राप्नोति सुविस्तरं ॥
 निःसपत्नं पतिं भव्यं सस्नेहं प्राप्य भूतले ।
 मृता गौरीपुरं याति विमानेनार्कवर्षसा ॥
 एतद्भूतं वशिष्ठेन सुनिना गदितं पुरा ।
 तथा चानुष्ठितं पार्थ समयं कीर्त्तिमालया ॥

तयामं सर्वसम्पन्नं वशिष्ठ वचनादि ह ।
 पुत्रसौभाग्यसत्कारं भद्रस्य प्रसादतः ॥
 एवमन्यापि कौन्तेय कीकिलाव्रतमादरात् ।
 चरिष्यति ध्रुवं तस्याः सौभाग्यञ्च भविष्यति ॥
 ये कीकिलां कलरवाकुलकण्ठपीठां
 यच्छन्ति साज्यतिलपिष्टमयीं द्विजेभ्यः ।
 ते नन्दनादिषु वनेषु विहृत्य कामं
 मर्त्यं समेत्य मधुरध्वनयो भवन्ति ।
 इति भविष्योत्तरोक्तं कीकिलाव्रतम् ।

— ००० —

महाभारते ।

आयणं नियतो मासमेकभक्तेन यः जपेत् ।
 यत्र तत्राभिषेकेण युज्यते ज्ञातिवर्धनः ॥
 विष्णुधर्मः ।
 जपयेच्चैकभक्तेन आयणं विष्णुतत्परः ।
 जहिंस्तः सर्वभूतेषु वासुदेवपरायणः ।
 नमोऽस्तु वासुदेवायेत्यहंष्टशतं जपेत् ।
 वाजपेयस्य यज्ञस्य समयं फलमश्नुते ।

— ००० —

इति एकभक्तव्रतम् ।

वज्र उवाच ।

भगवन् कर्मणा केन नित्यं धर्मपरो भवेत् ।

धर्मवत्त्वं महाभाग जन्मसाफल्यकारणं ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

आषाढ्यां समतीतायां प्रतिपत्प्रभृति क्रमात् ।

पूर्व्ववत् पूजयेद्देवं धर्मविग्रहधारिणं ॥

पूर्व्ववदित्यनेन रूपावाप्तिव्रतानुक्तविशेषेण ग्रहणं ।

मासस्य चान्ते नृप पौर्णमास्यां

कुर्यान्निरात्रं कनकस्य दद्यात् ।

व्रतोत्तमं धर्मकरन्तवीक्षणं

सर्व्वार्थदं नात्र विचारमस्ति ।

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं धर्मावाप्तिव्रतं ।

—०००००००—

अथ भाद्रपदव्रतानि ।

—०१०—

महाभारते ।

प्रौष्ठपादन्तु यो मासमेकाहारो भवेन्नरः ।

धनाढ्यस्कीर्तमतुलमैश्वर्य्यं प्रतिपद्यते ॥

विष्णुधर्म ।

एकाहारो भाद्रपदे यद्य कृष्णव्रतं नयेत् ।

अहिंस्रः सर्व्वभूतेषु वासुदेवपरायणः ॥

नमोऽस्तु वासुदेवायेत्यहवाष्टयतं जपेत् ।

राजसूयस्य यज्ञस्य फलदशगुणं लभेत् ॥

इति एकभक्तव्रतम् ।

— ००० —

वक्ष्य उवाच ।

भगवन् कर्षणा केन धनवान् पुरुषो भवेत् ।

पुत्रवान् देवलोकेषु पूज्यो भवति मानवः ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

आवण्यां समतीतायां प्रतिपत्प्रभृति क्रमात् ।

पूर्ववत् पूजयेद्दिण्णं देवं सङ्घर्षणं विभुम् ॥

अनुक्तान् कृपावामिष्रतादिज्ञेयम् ।

नीलोत्पलदलैः पञ्चैर्भृङ्गराजस्य पार्थिव ।

घृतेन परमानेन तथा विष्णुं च पार्थिव ॥

त्रिरात्रोपोषितः सम्यक् प्रोष्ठपथां ततो नरः ।

गोघ्नं दद्याद्दिजेन्द्राय व्रतान्ते मनुजोत्तम ॥

कृत्वा व्रतं मासमिदं त्वयोक्त-

मासाय नाकं सुचिरं मनुष्यः । ,

मानुष्यमासाय धनान्वितः स्यात्

व्रतेन चोर्षेण नरेन्द्रसिंहः ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं धनावाप्तिव्रतम् ।



अथाश्विनव्रतानि ।

ब्रह्मोवाच ।

मासि चाययुजे शक्त एकादश्यामुपोषितः ।
 नृह्नीयात्तु व्रतं श्रेष्ठं कौमुदाख्यं महाफलं ॥
 अहिंसकः शुचिर्भूत्वा धीतवासा जितेन्द्रियः ।
 द्वादश्यामर्चयेत्स्नात्वा वासुदेवं जगद्गुरुं ॥
 विलिप्य तु सुगन्धैश्च चन्दनागुरुकुङ्कुमैः ।
 कमलोत्पलकङ्कारैरक्तोत्पलसुगन्धिभिः ॥
 अर्चयेदक्षुतं नित्यं मालत्या च सुगन्धया ।
 घृतेन पूरयेत्पात्रं न तु तैलेन पूरयेत् ॥
 दीपं दद्याद्दिवा नक्तं वर्त्या तु चिरया शुभं ।
 नेवेद्यं पायसापूपमोदकैर्विवेदयेत् ॥
 निवेद्य वासुदेवाय भक्त्या चैव जितेन्द्रियः ।
 व्रतमेतन्नरः कृत्वा धर्मं ध्यात्वा चमापयेत् ॥
 ओ नमो वासुदेवाय सततञ्च जपेद्बुधः ॥
 विप्रांश्च भोजयेद्भक्त्या दद्याच्चैव तु दक्षिणां ।
 अनेनैव विधानेन मासमेकं व्रतञ्चरेत् ॥
 यावद्बिभृष्यते देवः कात्तिके गरुडध्वजः ।
 व्रतमेतन्नृणां पुण्यं महापातकनाशनं ॥
 समं मासोपवासेन फलमस्याधिकं हि वा ।
 सर्वकामप्रदं पुण्यं पुत्रारोग्यधनावहं ॥
 व्रतमेतन्नरः कृत्वा विष्णुलोकमवाप्नुयात् ।

इति विष्णुरहस्योक्तं कौमुदीव्रतं ।

वञ्ज उवाच ।

भगवन् कर्मणा केन नरस्त्रारोग्यमाप्नुयात् ।

रूपसीमाग्न्यावर्ण्यं सरोमस्य निरर्थकं ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

प्रीष्ठपद्यामतीतायां प्रतिपत्प्रभृतिक्रमात् ।

यादवाय दिवार्चायामनिरुद्धं प्रपूजयेत् ।

पूर्वोक्तेन विधानेन यावदाश्वयुजौ भवेत् ॥

पूर्वोक्तेन रूपावामिव्रतोक्तेन ।

सारसेरर्चयेद्देवं जातीपुष्पेर्द्दिने दिने ।

सारसेः कमलैः ।

घृतेन जङ्घयादङ्गिं घृतं दद्याद्विजातये ।

भोजनं गोरसप्रायं तथा विप्राय भोजयेत् ॥

विराजोपोषितः सम्यगाश्वयुज्यास्ततो नरः ।

सघृतं ससुवर्णञ्च कांस्यपात्रं दिजातये ॥

दद्यान्नृपतिशार्दूलं नरस्त्रारोग्यव्रतये ।

व्रतमेतद्विनिर्दिष्टं स्वर्गलोकप्रदं शुभं ॥

न केशलं रोगहरं प्रदिष्टं

माञ्जाकरं रूपविवृद्धिदयम् ।

व्रतोत्तमं ते कथितं नृवीर

यथेष्टकामासिकरं नृलीके ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तमारोग्यव्रतम् ।

महाभारते ।

तथैवाश्वयुजं मासमेकभक्तेन यः क्षिपेत् ।
भृत्यवान् वाहनाढ्यश्च बहुपुत्रश्च जायते ॥

विष्णुधर्मोत्तरे ।

नयंशाश्वयुजं विष्णुं पूजयन्नभोजनः ।
अहिंस्रः सर्वभूतेषु वासुदेवपरायणः ॥
नमोऽस्तु वासुदेवायेत्यहयाष्टशतं जपेत् ।
अतिरात्रस्य यज्ञस्य ततः फलमवाप्नुयात् ॥

इति एकभक्तव्रतम् ।

अथ कार्तिकव्रतानि ।

कार्तिकीमासः सर्वदैवतोऽग्निसर्वदेवानां मुखं तस्मात्
कार्तिके मासि बहिः स्नायीत गायत्रीजपनिरतः ।
सर्वदैवहविष्याशी संवत्सरकृतात्पापात् पूतो भवति ॥

इति विष्णुस्मृत्युक्तः कार्तिकस्नानविधिः ।

मैत्रेय उवाच ।

कार्तिकः खलु मासो वै सर्वदेवमतीमहान् ।
यानि कृच्छ्राणि (१) चोक्तानि सर्वपापहराणि हि ॥
कृतानि मुनिभिस्तानि भवन्ति मनुजाधिप ।

(१) यानि कृच्छ्रानि इति पाठान्तरम् ।

देवप्रिलमसुखेभ्यो दत्तं दृतमधु मृतं ॥
 तत्रात्रमद्यं प्रीतं ब्रह्मणा लोककल्लं ॥
 समभ्यर्च्य हरिं भक्त्या दीपं दत्त्वा दिवानिशं ।
 सर्वपापविशुद्धात्मा नरो याति दिवं नृप ॥
 इति वज्रिपुराणोक्तं कार्तिकव्रतं ।

समत्कुमार उवाच ।

दामोदरस्य वाक्यं श्रुत्वा प्रपन्नश्चकार सः ।
 केनोपायेन भगवत्प्रपद्यते तन्महत्तमः ॥
 नाकलोकसमं सील्यं प्रेतलोके भवेत्कथं ।
 भगवन् देवकौपुत्रस्तद्वाक्यं श्रोत्तरं ददौ ॥
 उवाच परमं शुद्धं मनोरथफलप्रदं ।
 भो नृण्यन्महद्बुद्धे यत् प्रवक्ष्यामि ते वचः ॥
 पूर्णं चाद्युजे मासि पौर्णमास्यां समाहितः ॥
 प्रथमे च निशारम्भे मनोवाक्यसंगतः ।
 ब्रह्मः पिष्टभ्यः प्रेतभ्यो नमो धर्माय विष्णवे ।
 नमो यमाय रुद्राय कान्तारपतये नमः ॥
 दद्यादनेन मन्त्रेण दीपं ब्रह्मसमन्वितः ।
 यः कार्तिकं समधत्तु वर्त्तन्ते तस्य सम्यदः ॥
 दिवाकरेऽस्ताचक्ष्मौलिभृते
 गृहाददूरे पुनश्च पुराणं ।
 यूपान्तिं यज्ञीयहृत्तदा

मारोप्य भूमावथ तस्य मूर्ध्नि ॥

यवाङ्गुलच्छिद्र युतास्तु मध्ये

हिहस्तादीर्घाय सुपट्टिकासु ।

कृत्वा चतस्रोऽष्टदला कृतिस्तु

धाभिर्भवेदष्टदिगानुसारी ॥

यथैर्मितमङ्गुलं यवाङ्गुलं ।

तत्कर्णिकायान्तु महाप्रकाशो

दीपः प्रदेयो दलगास्तथाष्टौ ।

खदिस्रखा दीपवरास्तु तैल-

धृतादियुक्तास्तु यथोपलब्धं ॥

यनङ्गुलान्तवथ वस्त्रखण्डं

नवं सुरक्तस्वयवा सुशुद्धं ॥

गनङ्गुलान्नं अपरिहितं ॥

धन्यं प्रयोज्यं वसुकञ्च हृद्यं

स्निग्धं सुखत्वं सुसमं समस्तं ।

तच्छालिपिष्टोपरिसन्निधेयं

यथा न नश्येन्न च कम्पते वा ॥

सर्वं प्रकुर्याच्चिगुणप्रमाणं

मध्ये स्थितस्याप्यथ दीपराजः ।

दलेषु श्रीभाठामतीव कुर्यात्

मनोरथानामुपलब्धये च ॥

घण्टाष्टकं लम्बितपुष्पदाम

सुवस्त्रगोभान्वितमत्र पद्मात् ।

संयोज्य भूमिं त्वय गोमयेन
 सचन्दनाक्तेन जलेन लिप्तां ॥
 अनेकवर्णैरथ मण्डले तु
 कृत्वाष्टपत्रं कमलप्रमाणं ।
 फलानि मूलानि तथाक्षतानि
 लाजा दधित्तीरमथाक्षपानं ॥
 नानाविधं भक्तविशेषणञ्च
 सुतृत्यगीतं मधुरञ्च वाद्यं ।
 निवेद्य धर्माय हराय भूमौ
 दामोदरायाप्यय धर्मराजे ॥
 प्रजापतिभ्यस्त्वय सत्पितृभ्यः
 प्रेतेभ्य एवाथ तमस्थितेभ्यः ।
 नैऋत्यकोणादथ दक्षिणान्तं
 धर्मादिभ्यः प्रेतपर्यान्तिकेभ्यः ॥
 ततो जलं शीतलमानयित्वा
 मर्पिः समध्वक्तमतीव हृद्यं ।
 आपूर्य चाष्टौ कलगान् जलेन
 नैऋत्यकोणादथ सन्निधाय ॥
 हेमादिपात्रान्तिलमेव पूर्णं
 दद्यात्पिधानञ्च सदक्षिणञ्च ।
 गोभृष्टिरण्यं रजतञ्च वस्त्रं
 फलानि भृलानि ययञ्च धान्यं ॥
 गृहं रथं शयनं बाहुनञ्च

यहाथ किञ्चिद्दये मनोऽं ।
 निवेदयेद्ब्राह्मणसत्तमेभ्यो
 नैर्ऋत्यकोणादथ संस्थितेभ्यः ।
 एकैकशः प्रीणनश्चाथ कुर्यात्
 धर्मादिभ्यः प्रेतपुर्यान्तिकेभ्यः ।
 एतत्समग्रं विधिवच्च कुर्यात्
 स्वशक्तिमादौ स्वधनं विचार्य ॥
 दीपान् समग्रानथ वर्जयित्वा
 सर्वं नयेयुस्त्वपि विप्रमुख्यान् ।
 प्रदक्षिणीकृत्य वनाङ्गनान्तु
 ततोभवेत्संयतनक्तभोजी ॥
 वनाङ्गनां वनदेवतां दीपस्तभमूर्त्तिं ।
 इतीदमौदृग्व्यवहारयुक्तं
 निशागमे प्रत्यहमेव कुर्यात् ।
 मासं समग्रं परया च भक्त्या
 समाप्यते कार्तिकपौर्णमास्यां ॥
 दिनत्रयं दीपमहीत्सवं वा
 एकोऽथ वा दीपवरस्य देयः ।
 तथाश्च युज्यादिसमग्रमासं
 निशागमे प्रत्यहमेव भक्त्या ॥
 नमोऽस्तु काम्दारकदेवताभ्यः
 इतीव मुक्ता स्वगृहस्य शान्त्यै ।
 नार्या नरेणाथ सुसंयतेन

भक्त्या युतेनाद्य निशासु भोज्यं ॥
 सभ्यात्रये दीपवराद्य देयाः
 रात्र्यां समे कार्तिकपीर्णमास्यां ।
 दरिद्रपेश्मस्वथ गीकुलेषु
 श्मशानदेवायतनेषु चैत्रे
 नदीतटेषु स्वयङ्मान्तरे वा
 भयैकलिङ्गे पथि चैकवृक्षे ॥
 सहस्रमष्टाधिकमत्र तैल-
 पलस्य पात्रे सुशुभे शतं वा ॥
 ये नो तदर्द्धैरद्यवा तद्वैः
 प्रमाप्य रिक्तास्त्वथ पूरणीयाः ।
 हस्तान् स्वकीयांश्च चतुर्ह्रस्वैव
 प्रमाप्य वस्त्रं त्वथ सूत्रवर्त्ति ॥
 प्रज्वालयेत्ताश्च निरुध्य धीमान्
 स्त्रीणामलङ्कारगतैः प्रपूज्य ।
 देवी महावर्त्तिरतीव वन्द्या
 पुण्या च साद्या भुवनप्रकाशी ॥
 एतच्च कुर्यादथ यस्तु मन्द-
 स्तस्यान्धकारस्य कुतोऽपि शान्तिः ।
 अयं हि दीपः किलकल्पवृक्ष-
 चिन्तामणिर्भद्रघटोऽथ वेणुः ॥
 अनेन दीपेन मनोरथानां
 सम्प्राप्तिरस्तीति न संशयोऽत्र ।

एतानि उक्त्वा कतिचिद्वचांसि
दामोदरयान्तरितोबभूव ॥

इत्यादिपुराणोक्तः प्रदीपविधिः ।

वज्र उवाच ।

भगवन् कर्मणा केन सर्व्वं त्र जयमाप्नुयात् ।
व्यवहारे रते द्यूते विवादे च द्विजोत्तम ॥
जयावाप्तिः परन्नास्ति सौख्यं लोकेषु सत्तम ।
जयावाप्तिः परं सौख्यं तदपि व्रतमुच्यतां ।

मार्कण्डेय उवाच ।

आश्वयुज्यामतीतायां प्रतिपत्प्रभृतिक्रमात् ।
पूर्वं यत् पूजयेद्देवं लोकनाथं त्रिविक्रमं ॥
पूर्व्ववदिति रूपावाप्तिव्रतवत् ।
विराजन्ते तु कात्तिक्यां दद्याद्भक्षणमुत्तमं ।
सर्व्वं गन्धधरङ्गत्वा गन्धधारत्नैरलङ्कृतः ॥
कृत्वा व्रतं मासमिदं यथोक्तं
प्राप्नोति लोकं सुचिरं नृवीर ।
तत्रोच्य कालं सुचिरं मनुष्यः
प्राप्नोति सर्व्वं च जयन्तिलोके ॥

इति विष्णुधर्मीत्तरोक्तं जयावाप्तिव्रतं ।

महोवाच ।

सुपुण्ये कार्तिके मासि देवर्षिपितृसेविते ।
 क्रियमाणे व्रते नृणां स्वर्गेऽपि स्यान्महाफलं ॥
 कृत्स्नः संवत्सरः पुण्यस्तस्मादर्षीषु पूजितः ।
 वर्षायाः कार्तिकः पुण्यः कार्तिकाश्वीषपञ्चकं ॥
 नैवेद्यं पुण्यधूपञ्च अर्चनं सुविलेपनं ।
 दत्तैकं कार्तिकं विष्णोः फलं सांवत्सरं लभेत् ॥
 अतः कार्तिकमासाद्य सदैव शुभकार्त्तिकभिः ।
 हरिमुद्दिश्य कर्त्तव्यं सुशक्त्या सुकरं व्रतं ॥
 कार्तिकस्यासिते पक्षे वायुभक्षस्तुर्हृषी ।
 समुपोष्य नरो भक्त्या पूजयेद्भक्तध्वजं ॥
 उपवासस्तु कर्त्तव्यो वारिमध्ये स्थितेन च ।
 जलकृच्छ्रमिदं कृत्वा विष्णुलोकं व्रजेन्नरः ॥
 दशम्यां पञ्चगव्याशी एकादश्यामुपोषितः ।
 अर्चयेच्चाच्युतं देवं नियतस्य व्रतश्चरेत् ॥
 कार्तिकस्यासिते कृत्वा नरो देवव्रतश्चरेत् ।
 दामोदरं समभ्यर्च्य देवी येमानिकी भवेत् ॥
 अपः क्षीरं दधि घृतं समस्यादिचतुर्भिः ।
 कार्तिकस्यासिते पीत्वा एकादश्यामुपोषितः ॥
 कृष्णैतामहं नाम कुर्वन् संपूजयेद्भरिं ।
 प्राप्नोति परमं विष्णोः स्थानं त्रैलोक्यपूजितं ।
 त्रिरात्रं पयसः पानमुपवासपरस्य च ॥
 वय्यादौ कार्तिके शुक्ले कृष्णे माहेन्द्र उच्यते ।

(८७)

दामीदरं समभ्यर्च्यं कच्छं माहेन्द्रमाचरेत् ॥

प्रयात्यसुखभन्देव विष्णुलोकमनुत्तमं ।

अग्रहं मुन्यन्नमग्नीयादयावकञ्च अग्रहं ततः ॥

मुन्यन्नं नीवारान्नं ।

अग्रहञ्चोपवसेदन्त्यं कच्छोऽयं वैष्णवः स्मृतः ।

कार्तिकस्य तृतीयादावर्षयेद्विष्णुमव्ययं ।

शुक्लपक्षे नरो याति तद्विष्णोः परमं पदं ॥

पञ्चरात्रं पयः पीत्वा प्रतिपत्प्रभृतिक्रमात् ।

दध्याहारो भवेत्पञ्च एकादश्यामुपावसेत् ॥

कार्तिकस्य सिते कुर्वन् पूजयेद्भक्तुध्वजं ।

भास्कराख्यमिदं कृत्वा श्वेतक्षीपं व्रजेन्नरः ॥

यवागूं यावकं शाकं दधिक्षीरघृतक्षलं ।

पञ्चम्यादि सिते पक्षे कार्तिकस्य समाचरेत् ॥

कच्छं सप्तर्षिदक्षेदं कुर्वन्विष्णुर्चने रतः ।

वैष्णवं लोकमाप्नोति पुनरावृत्तिवर्जितं ॥

पलाशविल्वपत्रैश्च कुशपद्मैरुडुम्बरैः ।

सुशृतञ्च पिवेत् क्षीरं घष्ठामुपवसेद्दिनं ॥

कुर्वन् हि कार्तिके शुक्ले कच्छमाग्नेयमुत्तमं ।

विष्णुलोकमवाप्नोति भक्त्याभ्यर्च्यं जनार्दनं ॥

पयो विल्वानि पद्मानि मृणालकवलानि तु ।

सप्तम्यादौ नरः कृत्वा एकादश्यामुपावसेत् ॥

कार्तिकस्यामले पक्षे लक्ष्मीप्रदमिदं व्रतं ।

केशवञ्च समभ्यर्च्यं वैष्णवीं गतिमाप्नुयात् ॥

कृच्छ्राण्येतानि सर्वाणि सर्वपापहराणि च ।
 कर्त्तव्यानि नरैर्भक्त्या कार्तिके तु विशेषतः ॥
 गृहस्थो वा वनस्थो वा मुमुक्षुर्वाथ भिक्षुकः ।
 कृत्वा व्रतमवाप्नोति वैष्णवं पदमव्ययं ॥
 कृच्छ्राणि कुर्वन् सर्वाणि वाङ्मनोनियतेन्द्रियः ।
 धीतवासः शुचिस्रातः पूजयेद्देवमच्युतं ॥
 अहिंसको दानरतो जपहोमपरायणः ।
 अर्चयेद्देवरदं विष्णुं कृच्छ्राणि तु समाचरेत् ॥
 व्रतद्रव्याणि सर्वाणि क्षीरादीनि सदा व्रती ।
 विप्रदत्तानि चाग्नोयासेच्छया न प्रकामतः ॥
 यानि वै परकीयानि द्रव्याणि कथितानि तु ।
 तेषां पुण्यतमन्दानं यद्दाति हिजोत्तमे ।
 कुर्वन् कृच्छ्राणि पीडात्तं क्षुधया सुहृतेऽथ वा ॥
 अमृतम्बु गवां क्षीरं पाययेत् पोडितम्बरं ॥
 अष्टौ तान्यव्रतघ्नानि आपो मूलं फलं पयः ।
 हविर्ग्राह्यणकाम्या च गुरोर्वचनमोषधं ॥
 यथोक्तेन विधानेन कृच्छ्राणि समुपाचरेत् ।
 कार्तिके कृष्णमभ्यर्च्य याति यत्र जनाई नः ॥
 एवं नानाह्वयेर्नित्यं पूजितो गरुडध्वजः ।
 व्रतोपवासनियमैस्ते मुक्तिफलभागिनः ॥

इति विष्णुरक्षस्योक्तानि कृच्छ्रव्रतानि ।

मात्स्याता उवाच ।

संप्राप्य कार्त्तिकं मासं राजा रुक्माङ्गदो मुने ।
मोहिनीं मोहसंयुक्तां कथं सम्बुभुजे वद ॥
विष्णुभक्तस्तुतिपरः प्रवरः स महीचिता ।
तस्मिन् पुण्योत्तमे मासि तस्यां किमकरोन्मृपः ॥

वसिष्ठ उवाच ।

संप्राप्य कार्त्तिकं मासं प्रबोधकरणं हरेः ।
अतिमुग्धोऽप्यसौ राजा मोहिनीं वाक्यमब्रवीत् ॥
वत देवि त्वद्वा सार्धं बहून् संवत्सरान् मया ।
तवापमानस्य भयात् त्वं मुक्ता मया क्वचित् ॥
साम्प्रतं व्रतकामोऽहं तन्निबोध वरानने ।
त्वय्यासक्तस्य मे देवि बह्व्यः कार्त्तिका गताः ॥
न व्रतौ कार्त्तिके जातो मुक्तौकं हरिवासरं ।
सोऽहं कार्त्तिकमिच्छामि व्रतेन परिसर्पितुं ॥
अव्रतेन गतो येषां कार्त्तिको मर्त्यधर्मिणां ।
इष्टापूर्त्तं वृथा तेषां धर्मं पद्मोद्भवात्मजे ॥
मांसाग्निनी हि भूपाला अत्यर्थं मृगयागताः ।
ते मांसं कार्त्तिके त्यक्त्वा गता विष्णुालयं शुभं ॥
प्रवृत्तानां हि भक्षाणां कार्त्तिके नियमे कृते ।
अवश्यं विष्णुरुपत्वं प्राप्यते मुक्तिसाधनं ॥
हृदयाङ्गादकर्तृणि दीपदामादिवं व्रजेत् ।
तस्याप्यभावे सुभगे परदीपप्रबोधनं ॥
कर्त्तव्यं भूतिकामेन सर्वदानाधिकं यतः ।

एकतः सर्वदानानि दीपदानं हि चैकतः ॥
 कार्तिके न समं प्रोक्तं दीपको ह्यधिकः स्मृतः ।
 कार्तिके कार्तिकीं कृत्वा विष्णोर्नाभिर्भक्तैश्च ॥
 आजन्मनः कृतात् पापान्मुच्यते नात्र संशयः ।
 व्रतीपवासनियमैः कार्तिकी यस्य गच्छति ॥
 देवो वैमानिकी भूत्वा स याति परमं पदं ।
 तस्मान्मोहिनि मोहन्तु परित्यज्य समोपरि ॥
 भव भूधरपूजायां निरता नीरजेक्षणे ।
 अहं व्रतधरश्चैव भविष्ये हरिपूजने ॥

मोहिन्युवाच ।

विस्तरेण ममाख्याहि माहात्म्यं कार्तिकस्य च ।
 सर्वपुण्याधिकः प्रोक्तो मासोऽयं राजसत्तम ॥
 विशेषात् पुष्करे प्रोक्तो ह्यारावत्यान्तु सौकरे ।
 श्रुत्वा कार्तिकमाहात्म्यं करिष्येऽहं यथेप्सितं ॥

शुक्लाङ्गद उवाच ।

माहात्म्यमभिधास्यामि मासस्यास्य वरानने ।
 येन ते जायते भक्तिर्भक्त्या येनार्च्यते हरिः ॥
 कार्तिके कृष्णसेवी यः प्राजापत्यरतोऽपि वा ।
 षड्द्वादशाहं पञ्चमा मासं वा वरवर्णिनि ॥
 क्षपयित्वा नरो याति तद्विष्णोः परमं पदं ।
 एकभक्तेऽथवा नक्ते तथा सुभ्रु अयाचिते ॥
 कृते नरेन्द्रप्राप्तिर्भवेच्चै दीपमास्तया ।
 तस्मिन् हरिदिने पुष्कं तथा वै भीष्मपञ्चकं ॥

प्रबोधनीं नरः कृत्वा जागरेण समन्वितां ।
 न मातुर्जठरे याति अपि पापान्वितो नरः ॥
 तस्मिन्दिने वरारोहे मण्डलं यस्तु पश्यति ।
 विना सांख्येन योगेन स याति परमं पदं ॥
 कार्तिके मण्डलं दृष्ट्वा सौकरं शूकरं शुभे ।
 दृष्ट्वा कीकवराहस्तु न भूयस्तनपो भवेत् ॥
 त्रिविधस्य तु पापस्य दृष्ट्वा मुक्तिर्भवेन्नृणां ।
 मन्दारे चपलापाङ्गि कुञ्जके श्रीधरं तथा ॥
 कार्तिके वर्जयेत्तैलं कार्तिके वर्जयेन्मधु ।
 कार्तिके वर्जयेत्कांस्यं कार्तिके मांसं सन्धितं ॥
 तैलं राजिकादिसन्धानं ।

निष्पावान् कार्तिके देवि यो भुङ्क्ते विष्णुतत्परः ।
 संसत्सरकृतात्पुण्याहानिर्भवति तत्क्षणात् ॥
 प्राप्नोति राजकीं योनिं सकृद्वक्ष्येऽसम्भवात् ।
 कार्तिके सौकरं मांसं यस्तु भुङ्क्ते सुदुर्मतिः ॥
 षष्टिर्ध्वंसहस्त्राणि रौरवे परिपच्यते ।
 तन्मुक्तो जायते पापी विष्ठाशी ग्रामशूकरः ॥
 न मात्स्यं भक्षयेन्मांसं न कीर्मां नान्यदेव हि ।
 चण्डालो जायते राजन् कार्तिके मांसभक्षणात् ॥
 कार्तिकः सर्वपापघ्नः किञ्चिद्भूतधरस्य तु ।
 गच्छेद्यस्य तु धर्मात्मा न स शीघ्रः कृताकृते ॥
 कार्तिके तु कृता दीक्षा नृणां जन्मनिकृन्तनी ।
 तस्मात्सर्वप्रथमेन दीक्षादुर्वीत कार्ति के ॥

अदीक्षितस्य वामोरु कृतं सर्वं निरर्थकं ।
 पशुयोनिं समाप्नोति दीक्षया कुलजन्म च ॥
 न गृहे कार्तिकीं कुर्याद्विशेषेण तु कार्तिकीं ।
 तीर्थेषु कार्तिकीं कुर्यात्सर्वं यत्नेन भामिनि ॥
 कार्तिके शुक्लपक्षस्य कृत्वा द्वादशीं नरः ।
 प्रातर्हस्वा शुभान् कुम्भान् स याति हरिमन्दिरं ॥
 संवत्सरव्रतानां हि समाप्तिः कार्तिके स्मृता ।
 पञ्चाहा यच्च दृश्यन्ते विष्णोर्नाभिजसम्भवे ॥
 दिनानि यच्च चत्वारि तथैव वरवर्षिणि ।
 उत्तरायणहीनेऽपि शुद्धिर्लभ्यं विना शुभे ॥
 दृश्यन्ते यच्च सम्बन्धाः पुत्रपौत्रविवर्धनाः ।
 तस्मान्मोहिनि कर्त्तास्मि कार्तिकव्रतसेवया ।
 अशेषपापनाशाय तव प्रीतिविबुधये ॥

इति नारदीयोक्तं कार्तिकमासव्रतं ।

— ००० —

ब्रह्मोवाच ।

चीराशी कार्तिके यस्तु देव्या भक्तिरर्ता नरः ।
 शाकपाचकनक्ताशी प्रातस्त्रायी शिवारतः ॥
 पूजयेत्तिलहोमस्तु मधुक्षीरहृतादिभिः ।
 कार्यस्तु देवीमन्त्रं च ऋण पुण्यफलं हरेः ॥
 महापातकसंयुक्तो युक्तो वा तूपपातकैः ।
 मुच्यते नात्र सन्देहो यस्मान्नसर्वगता शिवा ॥

अन्यो वा भावनायुक्तो अनेन विधिना शिवा ।
 स्वयं वा अन्यतो वापि पूजयेत् पूजयेत वा ॥
 न तस्य भवति व्याधिर्न च शत्रुकृतं भयं ।
 नोत्पातं गृहदुःखं वा न च राष्ट्रं विनश्यति ॥
 महास्वभावसम्पन्ना ऋतवः शुभदायकाः ।
 निष्पत्तिः सर्वशस्यानां तस्करा न भवन्ति च ॥
 प्रभृतपयसो गावो ब्राह्मणाः सत्क्रियापराः ।
 स्त्रियः पतिव्रताः सर्व्या नृपा निर्हृतवैरिणः ॥
 फलपुष्पवती देवी वनस्पतिमती मही ।
 भवने नात्र सन्देहशङ्किताविधिपूजनात् ॥
 जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी ।
 दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वधा स्वाहा नमोऽस्तुते ॥
 अनेनैव तु मन्त्रेण जपहोमन्तु कारयेत् ।
 प्रातः सम्यक् स्मृता वत्स महिषघ्नो प्रपूजिता ॥
 अघं नाशयति क्षिप्रं यथा सूर्योदयस्तमः ।
 इति देवीपुराणोक्तं देवीव्रतम् ।

— ००० —

नारद उवाच ।

भगवन् श्रोतुमिच्छामि व्रतानामुत्तमस्य च ।
 विधिं मासीपवासस्य फलज्ञास्य यथोदितं ॥
 यथाविधा नरैः कार्या व्रतार्थं यथा भवेत् ।
 आरभ्यते यथापूर्वं समाप्यं हि यथाविधि ॥

यावत्संख्यन्तु कर्त्तव्यं तावद्ब्रूहि पितामह ।
व्रतमेतत् सुरश्रेष्ठ विस्तरेण ममानघ ॥

ब्रह्मोवाच ।

साधु नारद यच्चैतत् पृष्टश्चर तपोधन ।
यादृशतिमतां श्रेष्ठ तच्छृणुष्व ब्रवीमि ते ॥
सुराणाञ्च यथा विष्णुस्तपताञ्च यथा रविः ।
भेरुः शिखरिणां गङ्गहैनतेयस्त, पक्षिणां ॥
तीर्थानान्तु यथा गङ्गा प्रजानान्तु यथा वणिक् ।
श्रेष्ठं सर्व्वव्रतानान्तु तद्वन्मासोपवसनं ॥
सर्व्वव्रतेषु यत्पुण्यं सर्व्वतीर्थेषु यत्फलं ।
सर्व्वदानोद्भवं वापि लभेन्मासोपवासकृत् ॥
अग्निष्टोमादिभिर्द्युजैर्विधिवद्ब्रूहिदक्षिणैः ।
न तत्पुण्यमवाप्नोति यन्मासपरिलङ्घनात् ॥
तेन दत्तं कृतं जप्तं स्नानञ्चैव स्वधा कृता ।
यः करोति विधानेन नरो मासमुपोषणं ॥
प्रविश्य वैष्णवं यज्ञं तेनाभ्यर्च्य जनार्दन ।
गुरोराज्ञां ततो लब्ध्वा कुर्यान्मासोपवसनं ॥
वैष्णवानि यथोक्तानि कृत्वा सर्व्वव्रतानि तु ।
द्वादश्यादीनि पुण्यानि ततो मासमुपाचरेत् ॥
अतिकृच्छ्रं पराकृष्टं कृत्वा चान्द्रायणं ततः ।
मासोपवासकृत्स्वीति ज्ञात्वा देहवलाबलं ॥
वानप्रस्थो यतिर्व्यापि नारी वा विधवा मुने ।
मासोपवासं कुर्यात् गुरुविप्राज्ञया ततः ॥

आश्विनस्यामले पक्षे एकादश्यामुपोषितः ।
 व्रतभेतस्तु गृह्णीयाद्यावत् त्रिंशद्दिनानि तु ॥
 वासुदेवं समुद्दिश्य कार्त्तिकं सकलं नरः ।
 मासश्चोपवसेद्यस्तु स मुक्तिफलभागवित् ॥
 अच्युतस्यालये भक्त्या त्रिकालं कुसुमैः शुभैः ।
 मालतीन्दौवरैः पद्मैः कमलैः सुसुगन्धिभिः ॥
 कुङ्कुमोशीरकपूरैर्विलिप्य वरचन्दनैः ।
 नैवेद्यधूपदीपाद्यैरर्चयेत् जनाह्वितं ॥
 मनसा कर्मणा वाचा पूजयेत्तद्विध्वजं ।
 कुर्यान्नरस्त्रिसवनं बृहद्भक्तिजितेन्द्रियः ॥
 नाम्नामेव तथालापं विष्णोः कुर्यादहर्निशं ।
 भक्त्या विष्णोस्तुतिर्वाच्या मृषावादं विवर्जयेत् ॥
 सर्वसत्त्वदयायुक्तः शान्तवृत्तिरहिंसकः ।
 सुप्तो वासनसंस्थो वा वासुदेवं प्रकीर्त्तयेत् ॥
 स्मृत्यालोकनगन्धादिस्नादनं परिकीर्त्तनं ।
 अन्नस्य वर्जयेत् सर्वं आसानाद्याभिकाङ्क्षनं ॥
 गात्राभ्यङ्गं शिरोऽभ्यङ्गं ताम्बूलं सुविलेपनं ।
 व्रतस्थो वर्जयेत् सर्वं यच्चान्यत्र निराकृतं ॥
 व्रतस्थो न स्पृष्टेति कश्चिद्विकर्मस्थान्न चालयेत् ।
 देवतायतने तिष्ठेन्न गृहस्थश्चरेद्भूतं ॥
 कृत्वा मासोपवासस्तु सन्भृतात्मा जितेन्द्रियः ।
 ततोऽर्चयेत्ततः पुष्पं द्वादशाङ्गबृहध्वजं ॥
 पूजयेत्पुष्पमालाभिर्गन्धधूपविलेपनैः ।

वस्त्रालङ्कारवाद्यैश्च तीर्षयेद्व्युत्तं नरः ॥
 स्नापयेत् हरिं भक्त्या तीर्थचन्दनवारिणा ।
 चन्दनेनानुलिप्ताङ्गं पुष्पधूपैरलङ्कृतं ॥
 वस्त्रदानादिभिश्चैव भोजयेच्च द्विजोत्तमान् ।
 दद्याच्च दक्षिणां तेभ्यः प्रणिपत्य क्षमापयेत् ॥
 विप्रान् क्षमापयित्वा तु विसृज्याभ्यर्च्यं पूज्य च ।
 एवं वित्तानुसारेण भक्तियुक्तेन शक्तितः ॥
 एवं मासोपवासन्तु कृत्वाभ्यर्च्य जनार्दनं ।
 भोजयित्वा द्विजांश्चैव विष्णुलोके महीयते ॥
 एवं मासोपवासं हि सम्यक् कृत्वा त्रयोदश ।
 निर्य्यापयेत्ततस्तान् वै विधिनानेन तच्छृणु ॥
 कारयेद्द्वैष्णवं यज्ञमेकादश्यामुपोषितः ।
 पूजयित्वा च देवेशमाचार्यानुज्ञया हरिं ॥
 अर्चयित्वा हरिं भक्त्या अभिवाच्य गुरुस्तथा ।
 ततोऽनुभोजयेद्विप्रान् भोजयेत् यथाविधि ॥
 विष्णुङ्कुलचारिणान् विष्णुपूजनतत्परान् ।
 पूजयित्वा द्विजान् सम्यग्भोजयित्वा त्रयोदश ॥
 तावन्ति वस्त्रयुग्मानि भाजनान्यासनानि च ।
 योगपट्टानि शुभ्राणि ब्रह्मसूत्राणि चैव हि ॥
 दद्याच्चैव द्विजायेभ्यः पूजयित्वा प्रणम्य च ।
 ततोऽनुकल्पयेच्छ्रद्धां शस्तास्तरणसंस्कृतां ॥
 साक्षादनशुभां श्रेष्ठां सोपधानासलङ्कृतां ।
 कारयित्वाकनो मूर्तिं काञ्चनीन्तु स्वशक्तितः ॥

न्यसेत्तस्यान्तु शय्यायामर्चयित्वा स्रगादिभिः ।
 आसनं पादुके कृत्रं वस्त्रयुग्ममुपानहौ ॥
 पतिव्राणि च पुष्पाणि शय्यायामुपकल्पयेत् ।
 एवं शय्यान्तु सङ्कल्प्य प्रणिपत्य च तान् द्विजान् ॥
 प्रार्थयेच्चानुमीदार्थं विष्णुलोकं व्रजाम्यहं ।
 एवमभ्यर्चिता विप्रा वदेयुर्व्रतिनं सदा ॥
 व्रज व्रज नरश्रेष्ठ विष्णोस्थानमनामयं ।
 विमानं वैष्णवं दिव्यं सशय्यापरिकल्पितं ॥
 तेन विष्णुपदं याहि सदानन्दमनामयं ।
 ततो विसर्जयेद्विप्रान् प्रणिपत्यानुगम्य च ॥
 ततस्तु पूजयेद्भक्त्या गुरुं ज्ञानप्रदायकं ।
 तां शय्यां कल्पितां सम्यग्गुरुं व्रतसमापकं ॥
 प्रणम्य शिरसा शान्तो गुरवे प्रतिपादयेत् ।
 एवं पूज्य हरिं विप्रान् गुरुं ज्ञानप्रकाशकं ॥
 कृत्वा मासोपवासांश्च नरो विष्णुतनुं विशेत् ।
 स्रतमासोपवासश्च विष्णुपूजनतत्परः ॥
 नचेष्टेऽन्तमनाः कालं धर्मस्थः सुजितेन्द्रियः ।
 कृत्वा मासोपवासांश्च निर्व्याघ्रं विधिवन्मुने ॥
 कुलानां शतमुद्धृत्य विष्णुलोकं व्रजेन्नरः ।
 तस्मिन् जातो महापण्ये कुले मासोपवासकृत् ॥
 चर्चप्रापविनिर्मुक्तो विष्णुलोके महोयते ।
 नरो मासोपवासानां कर्त्ता पुण्यवतां नरः ॥
 पितृमातृकुलाभ्याश्च समं विष्णुपुरीं व्रजेत् ।

नारी वा सुमहाभागा यश्चोक्तं व्रतमास्थिता ।
कृत्वा मासोपवासांश्च व्रजेद्विष्णुं सनातनं ॥

नारद उवाच ।

सदुष्करमिदं देव मूर्च्छाग्लानिकरं नृणां ।
व्रतं मासोपवासाख्यं भक्तिं जनयतेऽच्युते ॥
पीडितस्य भृशन्देव मुमूर्षोर्व्रतितस्तदा ।
त्यागो वानुग्रहो वाथ किन्तु कार्यः पितामह ॥

ब्रह्मावाच ।

व्रतस्थं कथितं दृष्ट्वा मुमूर्षुं वा तपोधन ।
दृष्ट्वा तु ब्राह्मणस्तस्य कुर्यात्सम्यगनुग्रहं ॥
अमृतं पाययेत् क्षीरमिच्छमानं सकृन्निशि ।
यथेह न वियुज्येत प्राणैः क्षुत्पीडितो व्रतो ॥
अतिमूर्च्छान्वितं क्षीणं मुमूर्षुं क्षुत्प्रपीडितं ।
पाययित्वा शितं क्षीरं रचेद्दत्त्वा फलानि च ॥
अहोरात्रञ्च यो नित्यं व्रतस्थं परिपालयेत् ।
पयो मूलं फलं दत्त्वा विष्णुलोकं व्रजेत सः ॥
एवं मासोपवासस्थमारूढं प्राणसंग्रहे ।
अव्रतघ्नगुणैर्दिव्यैः परीप्सेद्ब्राह्मणाजया ॥
नेति व्रतं विनिघ्नन्ति हविर्विप्रानुमीदितं ।
क्षीरोपधं गुरोराजयापो मूलफलानि च ॥
एवं कृत्वाभिभजेत् (१) मगुडं पायसं तदा ।

(१) एव कृत्वाभिभजेति कश्चित् पाठः ।

पाययेद्रक्षितो यस्मात्समाप्नोति पुनर्व्रतं ॥
 अथ विष्णुव्रतं विष्णुर्दाता विष्णुर्व्रतौ तथा ।
 सर्वं विष्णुमयं ज्ञात्वा व्रतस्थं क्षीणमुद्धरेत् ॥
 यथा समूर्पुर्निधेष्टः परिग्लानोऽतिमूर्च्छितः ।
 तदा समुद्धरेत् क्षीणमिच्छन्तं विमुखस्थितं ॥
 परिपाल्य व्रतौ देहं व्रतशेषं समापयेत् ।
 यथोक्तं द्विगुणं तस्य फलं विप्रमुखोदितं ॥
 इन्द्रियार्थेष्वसंसक्ता सदैव विमला मतिः ।
 परितोषयते विष्णुं नोपवासोऽजितात्मनां ॥
 किं तस्य बहुभिस्तीर्थैः स्नानहोमजपव्रतैः ।
 येनेन्द्रियगणो घोरो निर्जितो हृष्टचेतसा ॥
 जितेन्द्रियः सदा शान्तः सर्वभूतहिते रतः ।
 वासुदेवपरो नित्यं न क्लेशं कर्तुं मर्हति ॥
 कृत्वा व्रतं (१) यथोक्तं वैष्णवं पुरुषोत्तमं ।
 विष्णुलोकमवाप्नोति पुनरावृत्तिदुर्लभं ॥
 ये स्मरन्ति सदा विष्णुं विशुद्धेनान्तरात्मना ।
 ते प्रयान्ति भयं त्यक्त्वा विष्णुलोकमनामयं ॥
 प्रभाते चार्द्धरात्रे च मध्याह्ने दिवसक्षये ।
 अच्युतं येऽनुकीर्त्तन्ति ते तरन्ति भवार्णवं ॥
 श्रानन्दितीऽथ दुःखार्त्तः क्रुद्धः गान्तीऽथवा ह्रिं ।
 यो हि कीर्त्तयते भक्त्या स गच्छेद्द्वैष्णवीं पुरीं ॥

गर्भजन्म-जरारोग-दुःखसंसारवन्धनैः ।
 न बाध्यते नरो नित्यं वासुदेवमनुष्मरन् ॥
 स्थावरे गङ्गमे सत्त्वे स्थूले सूक्ष्मे शुभाशुभे ।
 विष्णुं पश्यति सर्व्वत्र यः स विष्णुः स्वयं नरः ॥
 सर्व्वं विष्णुमयं ज्ञात्वा त्रैलोक्यं सचराचरं ।
 यस्य शान्ता मतिस्तेन पूजितो गरुडध्वजः ॥
 अतिकल्पानुकल्पानां व्रतानामुत्तमस्य च ।
 विष्णुलोकमवाप्नोति प्रसादाच्चक्रपाणिनः ॥
 विधिर्मासोपवासस्य यथावत् परिकीर्त्तितः ।
 सुतस्त्रेहोद्भिज्येष्ठ सर्व्वलोकहिताय च ॥
 कृत्वा श्रुत्वा च यं भक्त्या ततो विष्णुपुरीं व्रजेत् ।
 नाभक्ताय प्रदातव्यं न देयं दुष्टचेतसे ॥

इति विष्णुरहस्योक्त मासोपवासव्रतं ।

—००—

महाभारते ।

कार्तिके नरो मासं यः कुर्यादेकभोजनं ।
 शूरस्य बहुभाग्यस्य कीर्त्तिर्मासैव जायते ॥

विष्णुधर्मः ।

कार्तिके एकदा भुङ्क्ते यस्य विष्णुपुरी नरः ।
 शूरस्य कृतविद्यस्य बहुपुत्रस्य जायते ॥
 अहिंस्रः सर्व्वभूतेषु वासुदेवपरायणः ।

नमोऽस्तु वासुदेवायेत्यहृषाष्टशतं(१) जपेत् ।

अतिरात्रस्य यज्ञस्य ततः फलमवाप्नुयात् ॥

इत्येकभक्तव्रतं ।

—•—

अथ मार्गशीर्षव्रतानि ।

—०००—

महाभारते ।

मार्गशीर्षन्तु यो मासमेकभक्तेन संक्षिपेत् ।

भोजयेत्तु द्विजात् भक्त्या सुच्यते व्याधिकिस्त्रिषैः ॥

सर्वकल्याणसम्पूर्णः सर्वदुःखविवर्जितः ।

उपोष्य व्याधिरहितो वीर्यवानभिजायते ।

कृषिभागी बहुधनो बहुधान्यस्र जायते ॥

विष्णुधर्मे ।

मार्गशीर्षन्तु यो मासमेकभक्तेन संक्षिपेत् ।

कुर्वन् वै विष्णुश्रद्धां स देशे जायते शुभे ॥

अहिंस्रः सर्वभूतेषु वासुदेवपरायणः ।

नमोऽस्तु वासुदेवायेत्यहृषाष्टशतं जपेत्(२) ।

वाजपेयस्य यज्ञस्य ततः फलमवाप्नुयात् ॥

इति एकभक्तव्रतं ।

(१) वासुदेवाय अष्टाष्टशतमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

(२) वासुदेवाय अष्टाष्टशतं जपेति कश्चित् पाठः ।

वज्र उवाच ।

भगवन् कर्मणा केन नरो लावण्यमाप्नुयात् ।
लावण्यरहितं रूपं निष्फलं प्रतिभाति मे ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

कर्त्ति कथां समतीतायां प्रतिपत्प्रभृति क्रमात् ।
पटे वा यदि वार्त्तायां प्रद्युम्नं पूजयेद्दिभुम् ॥
बहिः स्नानं ततः कुर्यान्नक्तमश्रीत वाग्यतः ।
एकभक्तं महाराज हविष्यं प्रयतः सदा ॥
मार्गशीर्षं ततः प्राप्य चिरातोदीषितः शुचिः ।
सम्यक् देवप्रद्युम्नं हुत्वाग्नीष्टुतमेव च ॥
भोजयेद्भ्रातृणां चात्र भोजनं लवणोत्कटं ।
चूर्णितस्य ततः प्रस्थं लवणस्य द्विजातये ॥
महाराजतरक्तञ्च वस्त्रयुग्मं तच्चा गुरोः ।
दद्याच्च कनकं राजन् कांस्यपात्रं तथैव च ॥
मासेन लावण्यकरं प्रदिष्टं
व्रतोत्तमं नाकगतिप्रदञ्च ।
न केवलं यादव सत्त्वकामान्
नरस्य दद्यात्पुरुषप्रधानम् ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं लावण्यावाप्तिव्रतम् ।

—०—

(८८)

अथ पौषव्रतानि ।

— ००० —

महाभारते ।

पौषमासन्तु कौन्तेय भक्तेनैकेन यः क्षिपेत् ।
सुभगो दर्शनीयश्च यशोभागी च जायते ॥

विष्णुधर्म्यै ।

पौषमासं तथा दास्य्य एकभक्तेन यः क्षिपेत् ।
शुश्रूषणपरः शौरेररोगी जायते नरः ॥
अहिंस्रः सर्वभूतेषु वासुदेवपरायणः ।
नमोऽस्तु वासुदेवायेत्यहसाष्टशतं जपेत् ।
अश्वमेधस्य यज्ञस्य ततः फलमवाप्नुयात् ॥

इति एकभक्तव्रतं ।

— ००० —

वल्गु उवाच ।

भगवन् कर्मणा केन शीलवान् पुरुषो भवेत् ।
कुलजातिश्रुतेभ्यस्तु शीलमेव विशिष्यते ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

आयुहायण्यतीतायां मासमेकं दिने दिने ।
पूर्ववत्पूजयेद्देवं वराहमपराजितं ॥
वृतेन स्नापयेद्देवं वृतेन जुहुयाच्चरिं ।
वृतं द्विजेभ्यो दद्याच्च वृतमेव निवेदयेत् ॥
त्रिरात्रोपोषितः पौष्पां वृतपात्रेषु च द्विजं ।

पूजयेच्च सुवर्णं यथाशक्ति नराधिप ॥

कृत्वा व्रतं मासमिदं यद्योक्त-

मासाय नाकं सुचिरं मनुष्यः ।

मानुष्यमासाय च ग्रीलवान् स्यात्

प्राप्नोति पुष्टिं चिरजीवितञ्च ॥

इति विष्णुधर्मोक्तं श्रीलावाग्निव्रतं ।

—००@००—

अथ शुक्लचतुर्दश्यां पौषमासे समाहितः ।

चान्द्रायणव्रतं मासं ग्राहयेत्सर्वपापजित् ।

पूर्णेन्दुपौर्णमास्यान्तु पूजयेत्प्रत्यहं जलैः ॥

पौषइति सामीप्ये सप्तमी । चतुर्दशीपूर्वमास्योः पूर्वमासा-
वयवत्वात् ।

मनोरथाय स्वाहेति तथा सन्ते पर्यासि च ।

तर्पयेदग्निरेताभिस्त्रिष्टभिश्च सदैव हि ॥

अथाहुतिभिरष्टाभिर्द्विताभिश्च निशाकरं ।

यद्देवादेव इत्येतैश्चतुर्भिर्मन्त्रसप्तमैः ॥

आज्येन तर्पयेद्वाहुं सर्वपापपशान्तये ।

तथा देवकृतस्येति समिद्धिर्नित्यमेव हि ॥

चक्षुश्चैश्वर्यं तथा सक्तन्तकं यावकमेव च ।

ग्राह्यं चौरं दधि घृतं फलमूलीदकानि च ॥

पौर्णमास्यामारभ्य प्रत्यहं तर्पणं होमश्च कारयेदित्यर्थः ।

इतश्चिष्टञ्च वै पश्चात् प्राशयेद्ब्रह्मादरात् ॥

कुक्कुटाणीपमान् यासान् पौर्णमास्याञ्च भक्षयेत् ।
 कृत्वा पञ्चदशैवाथ ज्ञासयेत्तु दिने दिने ॥
 विंशत्या सहितं येन कृष्णपक्षे भवेच्छतं ।
 अमावस्यादिने चैव विप्रश्चीपवसेत्ततः ॥
 शुक्लप्रतिपदारभ्य चन्द्रवृद्धिक्रमेण तु ।
 विंशत्या सहितं भूयो यासानां स्याच्छतं यथा ॥
 मासेन द्वे शते येन भवेतां द्वे च विंशतौ ।
 एकस्य प्रणवो मन्त्रोभूद्भयोश्च भवेदऽपि ॥
 भुवस्त्रयाणां स्वस्यापि चतुर्णां मह एव च ।
 भवेदथ च पञ्चानां षष्ठाञ्जन उदाहृतः ॥
 सप्तानाम् तु तपः सत्यमष्टानां परिकीर्त्यते ।
 ॐ नवानामिडावाथ दशानां मन्त्र एव च ॥
 एकादशानां योजस्व विजयस्व परम्भवेत् ।
 तयोदशानां पुरुषस्ततो धर्मः प्रकीर्तितः ॥
 शिवः पञ्चदशानाम् तु यासानां मन्त्र उच्यते ।
 स्वाहाकारनमस्कारयुक्तैर्मन्त्रैः पृथक् पृथक् ।
 अभिमन्त्रा ग्रसेद्गासान् दिनसंख्याक्रमेण च ॥
 प्रो नमः स्वाहा भूर्नमः स्वाहेत्यादिमन्त्राः ।
 समाप्ते च व्रते दद्याद्गां वृषश्च द्विजातये ।
 चान्द्रायणेन चैकेन सर्वपापक्षयो भवेत् ॥
 एवं संवत्सरं कृत्वा चन्द्रलोकमवाप्नुयात् ।
 इह लोके धनारोग्यं सुखं सौभाग्यसम्पदं ॥

भवेदमरलोके च शक्रस्य सद्ने गतिः ।

भवेच्छिवन्तद्भ्यासाज्जन्म ब्राह्मणजन्मनि ॥

इति ब्रह्मपुराणोक्तं चान्द्रायणव्रतं ।

—००—

अथ माघमासव्रतानि ।

नारदीयपुराणे ।

काठकौल उवाच ।

सम्प्राप्ति माघमासोऽयं तपस्विजनवत्सलः ।

यस्मिन् क्रोशन्ति पापानि यन्नस्त्रानवतां सदा(१) ॥

कृतानि सर्वं देहेषु ब्रह्महत्यासमान्यपि ।

दुर्लभो माघमासस्तु बहुदानप्रदायकः ॥

देवैस्तेजः परिचिप्तं माघमासे जले सदा ।

न वज्रं सेवयेत् स्नातो ह्यस्नातोऽपि वरानने ॥

ह्यमार्थं सेवयेद्वज्रं शीतार्थं न कदाचन ।

यावत्प्रभा वरारोहे तावत् सूर्योदये स्मृता ॥

सरित्तीयाद्यभावे तु नवकुम्भस्थितं जलं ।

वायुना ताडितं रात्रौ गङ्गातीथसमं विदुः ॥

तन्नास्ति पातकं लोके यन्न स्नानाद्दिनश्रुति ।

अग्निप्रवेशादधिकं भाघस्नानं वरानने ॥

(१) अतिस्नानवतां सदेति पाठान्तरं ।

जीवता भुज्यते दुःखं मृतो दुःखं न पश्यति ।
 एतस्मात्कारणात् सुभ्रू माघस्नानं विशिष्यते ॥
 अह्न्यह्नि दातव्यास्तिलाः शर्करयान्विताः ।
 त्रिभागस्तु तिलानां हि चतुर्थः शर्करान्वितः ॥
 अनभ्यङ्गी वरारोहे सर्व मासं नयेद्भूती ।
 सूर्यो मे प्रीयतां देवो विष्णुमूर्तिर्निरञ्जनः ॥
 माघावसाने सुभगे षड्रसं संप्रदापयेत् ।
 दम्पत्योर्वाससी शुक्ले सप्तधान्यसमन्विते ॥
 त्रिंशत् मोदका देयाः कृतास्तिलमयाः शुभाः ।
 मरिचैर्निर्भिताः श्लक्ष्णाः नारङ्गाणि च दापयेत् ॥
 सरितः प्रभवस्त्वं हि परं धाम जले मम .
 त्वत्ते जसा परिभ्रष्टं पापं यातु सहस्रधा ॥
 दिवाकर जगन्नाथ प्रभाकर नमोऽस्तु ते ।
 परिपूर्णं कुरुष्वेह माघस्नानमुषःपते ॥
 एवं माघप्रवो याति भिक्षा विम्बं दिवाकरं ।
 परित्राङ् योगयुक्तश्च रणे वाभिसुखो हतः ।
 तृतीयोऽत्र वरारोहे माघस्नायो प्रकीर्तितः ॥

भविष्योत्तरात् ।

युधिष्ठिर उवाच ।

माघमासे मम ब्रूहि स्नानं यदुत्तमोदकम् ।
 येन दुःखाभ्युपहृतीषादुत्तरन्ति भवार्णवात् ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

ब्राह्मं कृतयुगं प्रोक्तम्येता तु चतुर्थं स्मृतं ।

वैश्वं द्वापरमित्याहुः शूद्रं कलियुगं तथा ॥
 कलौ राजन् मनुष्याणां शैथिल्यं ज्ञानकर्षणि ।
 तथापि माघव्याजेन कथयिष्यामि तच्छृणु ॥
 यस्य हस्तौ च पादौ च वाष्पनश्च सुसंयतं (१) ।
 विद्या तपश्च कीर्त्तिश्च स तीर्थफलमश्नुते ॥
 अश्वह्वानः पापात्मा नास्तिकोऽच्छिन्नसंशयः ।
 हेतुनिन्दारतश्चेते न तीर्थफलभागिनः ॥
 प्रयागं पुष्करं प्राप्य कुरुक्षेत्रमद्यापि वा ।
 यत्र वा तत्र वा स्नायान्नाघे नित्यमिति स्थितिः ॥
 त्रिरात्रफलदा नद्यो याः काश्चिदसमुद्रगाः ।
 समुद्रगास्तु पक्षस्य मासस्य सरितां पतिः ॥
 अर्पां समीपे यत्स्नानं सन्ध्यायामुदिते रवौ ।
 प्राजापत्येन तत्तुल्यं महापातकनाशनं ॥
 प्रातरुत्थाय यो विप्रः प्रातःस्नायी भवेत्तदा ।
 सर्वपापविनिर्मुक्तः परं ब्रह्माधिगच्छति ॥
 हृष्या चीणोदकस्नानं हृष्या आप्यमवैदिकं ।
 अश्रोत्रिये हृष्या श्रावं हृष्या भुक्तमसाक्षिकं ॥
 स्नानं चतुर्विधं प्रोक्तं स्नानविद्विर्युविद्विर ।
 वायव्यं वाक्वर्णं ब्राह्मणं दिव्यं चेति पृथक् शृणु ॥
 वायव्यं गौरजस्नानं वाक्वर्णं सागरादिभिः ।
 ब्राह्मणं ब्राह्मणमन्त्रोक्तं दिव्यं भेषाब्जभास्करात् ॥
 स्नानानामपि सर्वेषां वाक्वर्णं श्रेष्ठमुच्यते ।

(१) मन्त्रेषु दृश्यते इति पाठाकारः ।

ब्रह्मचारी गृहस्थो वा वानप्रस्थोऽथ भिक्षुकः ॥
 एते सर्वे प्रशंसन्ति सर्वदा माघमज्जनं ।
 बालवृद्धयुवानश्च नरनारीनपुंसकाः ॥
 स्नात्वा माघे शुभे तीर्थे प्राप्नुवन्तीप्सितं फलं ।
 ब्रह्मचरविशां चैव मन्त्रवत्स्नानमिष्यते ॥
 तुष्णीमेव हि शूद्राणां तथैव कुरुनन्दन ।
 नमस्कारेण वा कार्यं सर्वपापीघहानिदं ॥
 माघमासे रटन्त्यापः किञ्चिदभ्युदिते रवी ।
 ब्रह्मघ्नं वा सुरापं वा(१) कं पतन्तं पुनोमहे ॥
 प्रासादा यत्र सौवर्णाः स्तियथाप्सरसां समाः ।
 दधिदुग्धदद्या यत्र नद्यः पायसकर्दमाः ॥
 तत्र ते यान्ति भज्जन्ति ये माघे भास्करोदये ।
 यतिवत्पथि गच्छेत् मौनी पैशून्ववर्जितः ॥
 य इच्छेद्दिपुलान् भोगान् चन्द्रसूर्यग्रहोपमान् ।
 पुण्यपासगुणयोर्मध्ये प्रातः स्नायी भवेत्तु सः ॥
 योर्णमासीममावायां प्रारभ्य स्नानमाचरेत् ।
 त्रिंशद्दिनानि पुण्यानि मकरस्थे दिवाकरे ॥
 तत उत्थाय नियमं गृह्णीयादधिपूर्वकं ।
 माघमासमिमं पुण्यं स्नात्येऽहं देव माधव ॥
 तीर्थे शीतजले नित्यमिति सङ्कल्प्य चेतसि ।
 अप्रावृत्तशरीरस्तु यः साक्षात् स्नानमाचरेत् ॥
 पदे पदेऽश्वमेधस्य फलं प्राप्नोति मानवः ।

(१) ब्रह्मघ्नमपि चाप्याहमिति पाठान्तरं ।

ततः स्नात्वा शुभे तीर्थे दत्त्वा शिरसि वै मृदं ।
 वेदोक्तविधिना राजन् सूर्यागार्घ्यं निवेदयेत् ॥
 पितृन् सन्तर्प्य तत्रस्थः श्रवतीर्थं ततो जलात् ।
 इष्टदेवं नमस्कृत्य पूजयेत्पुरुषोत्तमं ॥
 शङ्खचक्रधरं देवं माधवं नाम पूजयेत् ।
 वङ्गं हुत्वा विधानेन ततस्त्रिकाशनी भवेत् ॥
 भूगय्याम्रद्वयार्घ्येण शक्तः स्नानं समाचरेत् ।
 अशक्तो म्रद्वयार्घ्यादौ स्वेच्छा तस्यैव कल्पते ॥
 अवश्यमिति कर्त्तव्यं माघस्नानमिति श्रुतिः ।
 ईश्वरेण यथाकामं बलं धर्मोऽनुवर्त्तते ॥
 तिलस्त्रायो तिलोद्वर्त्ती तिलहोमी तिलोदकी ।
 तिलभुक्तिलदाता च षट् तिलाः पापनाशनाः ॥
 तैलमामलकाश्चैव तीर्थे देयाश्च नित्यशः ।
 तथा प्रज्वालयेद्दह्निं निवातां कारयेत्कुटं ॥
 एवं माघवमासे तु शक्तो भोज्यमवारितं ।
 कारयेद्य शक्त्या वा वित्तगाठानि वर्जितं ॥
 दम्पत्यानि द्विजायाणां पूज्यवस्त्रविभूषणैः ।
 भूषयित्वा प्रदेयानि दानानि विविधानि च ॥
 कम्बलाजिनवस्त्राणि नानारत्नानि शक्तितः ।
 चोलकानि च देयानि प्रच्छादनपटानि च ॥
 उपानहो पादगुप्फौ माचको पापमाचको ।
 तथान्यहयितं किञ्चिन्माघस्नाने प्रदीयते ।

तस्माच्चस्त्रायिनान्देयं विप्राणां भूतिमिच्छता ॥
 स्त्रक्ष्येऽपि दाने वक्तव्यं माधव प्रीयतामिति ॥
 अगम्यागमनात्स्ते यात्वापेभ्यश्च प्रतिग्रहात् ।
 रहस्याचरितात्पापाभ्युच्यते स्नानमाचरन् ॥
 माघमासे विधानेन चेतस्याधाय माधवं ।
 पितुः पूर्वान् समुद्धृत्य मातुः पूर्वान्पितृनथ ।
 एकविंशकुलैः सार्धं भोगान् भुक्त्वा यथेष्टितान् ॥
 माघस्योषसि स्नात्वा वै विष्णुलोके महीयते ॥
 यो माघमास्युषसि सूर्यकराभिताम्ने
 स्नानं समाचरति चारुनदोप्रवाहे ।
 उद्धृत्य पूर्वपुरुषान् पितृमाहृत्य
 स्वर्गं प्रयात्यमरदेहधरो नरोऽमी ॥

इति माघस्नानविधिः ।

—०००—

माघमास्युषसि स्नानं कृत्वा दम्पत्यमर्चयेत् ।
 भोजयित्वा यथाशक्त्या बालवस्त्रविभूषणैः ॥
 सौभाग्यपदमाप्नोति शरीरारोग्यमुत्तमं ।
 सूर्यलोकप्रदं नूनं सूर्यव्रतमिदं स्मृतम् ॥

इति पद्मपुराणोक्तं सूर्यव्रतं ।

—०००—

ब्रह्मोवाच ।

कच्छैकभक्तं हेमन्ते माघमासमतन्द्रितः ।
 मासान्ते च रघं कुर्याच्चिचवस्त्रोपशोभितं ॥

श्वेतैश्चतुर्भिर्युक्तान् तरणैः समलङ्कृतं ।
 श्वेतध्वजपताकाभिः च चामरदर्पणं ॥
 तण्डुलादकपिष्टेन कृत्वा भानुवराधिप ।
 चिन्त्यस्य तं रत्नप्रसूते संज्ञया सह भूपते ॥
 तं रात्रौ राजमार्गे च ग्रहभेदादिभिः स्मृतैः ।
 आमयित्वा ग्रहैः पश्चात् सूर्यायतनमानयेत् ॥
 तत्र चागुरुपिष्टेन प्रदीपाद्युपशोभितं ।
 प्रेक्षणीयप्रदामैश्च क्षपयित्वा ग्रहैः ग्रहैः ॥
 प्रभाते क्षपणकृत्वा पयसा वा घृतेन वा ।
 दीनाम्यक्षपणानाञ्च यथाशक्त्या च दक्षिणां ।
 रत्नं सम्ब्राह्मणोपेतं भास्कराय निवेदयेत् ॥
 भुक्त्वा च ब्राह्मणैः सार्धं प्रक्षम्यार्कं गृहं व्रजेत् ॥
 सर्वव्रतानां परमं शक्रधर्मास्थितः सदा ।
 तत्र सूर्यव्रतं नाम सर्वकामार्थसाधकं ॥
 सर्वव्रतेषु दत्पुष्पं सर्वतीर्थेषु यत् फलं ।
 सर्वं सूर्यरथेनेह तत्पुष्पं लभते नृप ॥
 सूर्यायुतप्रतीकाग्रैर्विमानैः सार्वकाभिकैः ।
 चिसत्तकुलजैः सार्धं सूर्यलोके महीयते ॥
 भुक्त्वा तु विपुलान् भोगान् सर्वलोकेऽनुत्तमान् ।
 कल्यायुतव्रतं साधं ततो राजा भवेत् क्षितौ ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तं सूर्यव्रतं ।

—

माघमासि समुद्युक्तस्त्रिसन्ध्या योऽर्चयेद्भुवि ।
भवेत् पाण्डासिकं पुण्ड्रं मासेनैव न संशयः ।

इति भविष्यत्पुराणोक्तं रविव्रतं ।

—०००—

महाभारते ।

माघमासन्तु यो मासमेकभक्तेन यः क्षिपेत् ।
श्रीमान् कुलज्ञातिमांस्तु, स महत्त्वं प्रपद्यते ॥
विष्णुधर्म्ये ।

माघमासं द्विजश्रेष्ठ एकभक्तेन यः क्षिपेत् ।
विष्णुशुश्रूषणपरः सत्कुले जायते सतां ॥
अहिंस्रः सर्वभूतेषु वासुदेवपरायणः ।
नमोऽस्तु, वासुदेवायेत्यह्यष्टगतं जपेत् ।
प्रतिरात्रस्य यज्ञस्य ततः फलमवाप्नुयात् ॥

इति एकभक्तव्रतं ।

—०००—

वज्र उवाच ।

भगवन् कर्मणा केन विद्यावान् पुरुषो भवेत् ।
समिध एव विज्ञेयः पुरुषः पश्यन्त्यथा ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

पौण्यान्तु समतीतायां प्रतिपत्प्रभृतिक्रमात् ।
प्राग्वन्तु पूजयेद्देवमुरङ्गशिरसं हरिं ॥

प्राग्वदिति रूपावाप्तिप्रतीकविधिना तुरङ्गगिरसं हयग्रीवं ॥

तिलांश्च जुहुयाद्दक्षी तिलैर्द्वयं समर्चयेत् ।

त्रिरात्रोपोषितो माघं तिलान् कनकमेव च ॥

दद्याद्ब्राह्मणमुख्याय सम्यक् प्रयतमानसः ।

मुख्यान् यज्ञोपवीतांश्च प्रभूतगपि चन्दनं ॥

हात्वा व्रतं मासमिदं यथोक्तं

विद्यान्वितः स्यात्पुण्यः सदैव ।

स्वर्लोकमामाद्य सुखानि भुक्त्वा

कामानभीष्टान् पुरुषोऽश्रुते च ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं विद्यावाप्तिव्रतं ।

—०००(११०००)—

अथ फाल्गुनव्रतानि ।

महाभारते ।

भगदेवन्तु योमाममेकभक्तेन विक्षिपेत् ।

ऐश्वर्यमनुलं श्रेष्ठं पुमान् स्त्री वा पश्यते ।

स्त्रीषु वल्लभतां याति तस्याश्चैव भवन्ति ते ॥

विष्णुधर्मो ।

अपयेदेकभक्तेन शुश्रूष्यस्य फाल्गुने ।

शुश्रूषुः विष्णुशुश्रूषापरः ।

सोभाग्यं स्वजनानाञ्च सर्वेषामेव मोक्षति ।

अहिंस्रः सर्वभूतेषु वासुदेवपरायणः ॥
 नमोऽस्तु वासुदेवायेत्यहसाष्टशतं जपेत् ।
 अतिरात्रस्य यज्ञस्य ततः फलमवाप्नुयात् ॥

इति एकभक्तव्रतं ।

—००००००००—

वराह उवाच ।

फाल्गुनस्य तु मासस्य पुष्पाणि सुरभौणि च ।
 कर्मण्यानि शुभानीह गृहीत्वा भक्तिमाचरः ॥
 ततः वक्ष्यमाणोक्तोक्तादाचार्यात् ।
 यस्तु जानाति कर्माणि सर्वकर्माविनिश्चितः ।
 उदाहरति मन्त्रांश्च नक्तादिनियमस्थितः ॥
 जानुभ्यां धरणीकृत्वा कराभ्यामङ्गुलैः पुटं ।
 गृहीत्वेतिशेषः, पुटं पुष्पपूर्णपात्रपुटं ।
 नमो नारायणेत्युक्त्वा इमं मन्त्रमुदीरयेत् ॥
 नमोऽस्तु देवदेवेश चक्रनिर्मथनाय ते ।
 नमोऽस्तु लोकनाथाय सुप्रबोर नमोऽस्तु ते ॥
 आदिमध्यावसानान्ते न जानातीह कथन ॥
 वसन्तागमपुष्पाणि गृह्णाण पुरुषोत्तम ।
 य एतेन विधानेन कुर्यान्मासे तु फाल्गुने ।
 न च गच्छति संसारं परं लोकं च गच्छति ॥

इति वराहपुराणोक्तः फाल्गुनविधिः ।

—

वक्ष्य उवाच ।

भगवन् कर्मणा केन सौभाग्यं महदाप्नयात् ।

लावण्यरूपसौभाग्यं विना ज्ञेयं निरर्थकं ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

माघ्यान्तु समतीतायां प्रतिपत्प्रवृत्तिक्रमात् ।

पटे वा यदि वार्चायां कृष्ण संपूजयेत्तदा ।

पूर्वींशं सकलं कुर्याद्विधिं चात्र नराधिप ॥

पूर्वींशमिति चैवमाससम्बन्धिरुपावाप्तिव्रतोक्तमित्यर्थः ।

नित्यं समाचरेत् स्नानं तथा गन्धप्रियङ्गुना ।

चरुं प्रियङ्गुना कुर्याद्दोमं कुर्यात् प्रियङ्गुना ॥

गन्धः प्रियङ्गुसदृशगन्धद्रव्यं, प्रियङ्गुः कङ्कुसदृशगन्धद्रव्यं

प्रियङ्गुः कङ्कुः ।

फाल्गुन्यान्तु ततोदद्यात् चिराचोपोषितो नरः ।

वस्त्रे च देये नृप कुङ्कुमास्ते

क्षौद्रस्य पात्रस्य तथैव कांस्यं ।

सौभाग्यदं ह्येतदनुत्तममे

व्रतं ममैतत्कथितं नृवीर ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं सौभाग्यावाप्तिव्रतं ।

इति श्रीमहाराजाधिराज-श्रीमहादेवस्य समस्तकरणा-

धीश्वरसकलविद्याविशारद-श्रीहेमाद्रिविरचिते

चतुर्वर्गचिन्तामणौ व्रतखण्डे

मासव्रतानि ।

अथ अष्टादशोऽध्यायः ।

—०००॥०००—

अथ नानामासव्रतानि ।

अथान्तश्चारुचामीकर ००० (१)परिप्रीणितप्राणिवर्गः
स्वर्गङ्गासङ्गभूमीरुह्यतलविलमत्किन्नरीगीतकीर्त्तिः ।
हेमाद्रिः संपतीह स्फुरदुरुदुरितघातघातैकहेतुं
नानामासव्रतानां क्रमनमथ कलाकीविदः संविधत्ते ॥

तत्र चातुर्मासीव्रतानि ।

विष्णुधर्मोत्तरात् ।

मार्कण्डेय उवाच ।

अथ स्रपिति वस्मात्मन् देवदेवी जनार्दनः ।
लक्ष्मीसहायः सततं शेषपर्यङ्कमास्थितः ॥
एकादश्यामाषाढस्य शुक्लपक्षे जनार्दनं ।
देवाश्च ऋषयश्चैव स्तुवन्ति दिनपञ्चकं ॥
ततश्च चतुरीमामान् योगनिद्रामुपस्थितां ।
सप्त च तमुपासन्ति ऋषयो ब्रह्मसंमिताः ॥
कार्तिकस्य सिते पक्षे तदेव दिनपञ्चकं ।
विबोध्यन्ति देवेशं गत्वा सेन्द्रा दिवौकसः ॥
तस्मादेताश्चतुर्मासीनरः कुर्यात् महोत्सवं ।

भविष्योत्तरात् ।

युधिष्ठिर उवाच ।

गोविन्दगयनं किन्तु किमर्थं स्वपितीत्यसौ ।
कथन्तच्छयनं तस्य देवदेवस्य चक्रिणः ॥
के चात्र मन्त्राः पूजा च दानार्थं नियमाश्च के ।
किं ग्राह्यं किञ्च मोक्षाय सुप्ते देवजगत्पते ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

शृणु पार्थ प्रवक्ष्यामि गोविन्दगयनव्रतं ।
कर्त्तव्यं समुत्थानं चातुर्मासीव्रतक्रमं ॥
मिथुनस्थे सहस्रांगी स्थापयेन्मधुसूदनं ।
तुलां प्राप्ते (१) महाराज पुनरुत्थापयेच्च तं ॥
अधिप्रयत ते देव एष एव विधिक्रमः ।
नान्यथा स्थापयेत् कृष्ण नान्यथोत्थापयेत्तथा ॥
आषाढस्य सिते पक्षे एकादश्यामुपोषितः ।
स्थापयेत् प्रतिमा विष्णोः शङ्खचक्रगदाधरं ॥
काञ्चनीं राजतीं ताम्रमयीं पिप्पलज्जां तथा ।
पीताम्बरधरां सौम्यां पद्मे चार्चिते शुभे ।
शुक्लवस्त्रपटच्छत्रे सोपधानं संपूर्जितं ॥

ब्रह्मपुराणात् ।

एकादश्यान्तु शुक्लायां आषाढे भगवान् हरिः ।
भुजङ्गगयने गते यदा क्षीराणीव सदा ॥
तदा तत्प्रतिमा कार्या सर्वजलणमयुता ।
सुप्ता तु शेषपद्मे गेनमृद्विषट्कारिणिः ॥

(१) तुलाग्रस्थं इति पुस्तकाक्षरे पाठः ।

तान्मारकुटरजतैः कृता चित्रपटेषु वा ।
 लक्ष्म्या सहस्रविन्यस्तमनोन्नचरणाञ्जुजा ॥
 नानाविधोपकरणैः पूज्या तु विधिपूर्वकं ।
 उपवासश्च कर्त्तव्यो रात्रौ जागरणं तथा ॥
 तस्यां रात्रौ व्यतीतायां द्वादश्यां पूजयेच्च तां ।
 त्रयोदश्यां ततो गीतकृत्यवाद्यं निवेदयेत् ॥

भविष्योत्तरे (१) ।

इतिह्वासपुराणस्यो वेदवेत्ताथ वा पुमान् ।
 स्नापयित्वा दधिक्षीरप्लुतक्षौद्रसितादिभिः ॥
 समालभ्य शुभैर्गन्धैर्धूपैर्वस्त्रै रलङ्कृतां ।
 जातीकुसुममालाभिर्मन्त्रेणानेन पूजयेत् ॥
 सुप्ते त्वयि जगन्नाथे जगत्समं भवेदिदं ।
 विबुधे च विबुध्येत प्रसन्नो मे भवाण्युत ॥
 एवं तां प्रतिमां विष्णोः स्थापयित्वा स्वयं नरः ।
 प्रभाषेच्चाग्रतो विष्णोः कृताञ्जलिपुटस्तथा ॥
 चतुरो वार्षिकान् मासान् देवस्योत्थापनावधिः ।
 इमं करिष्ये नियमं निर्विघ्नं कुरु मेऽण्युत ॥
 स्त्री वा नरो वा मङ्गलो धर्मार्थं सुदृढप्रतः ।
 गृह्णीयाद्विग्रहानेतान् दन्तधावनपूर्वकान् ॥
 तेषां फलानि वक्ष्यामि तत्कर्त्तृणां पृथक् पृथक् ।
 मधुसूतो भवेद्राजा पुरुषो गुह्यवर्जनात् ॥
 तैलस्य वर्जनाद्देव सुन्दराङ्गः प्रजायते ।

(१) वृत्तान्तारते इति पुस्तकाकरे पाठः ।

कटुतैलपरित्यागाच्छत्रुनाशमवाप्नुयात् ॥
मधूकतैलत्यागेन सौभाग्यमतुलं लभेत् ।
योगाभ्यासी वेदतस्तु स ब्रह्मपदमाप्नुयात् ।

कटुकास्तु तित्तमधुञ्चारकषायसञ्चयः ॥
यो वर्जयेत् स वैरूप्यं दौर्गन्धं नाप्नुयात् क्वचित् ।
ताम्बूलं वर्जयेत् भोगौ रक्तकण्ठश्च जायते ॥
घृतत्यागाच्च लावण्यं सर्वस्त्रिगुणतनुर्भवेत् ।
फलत्यागाच्च मतिमान् बहुपुत्रश्च जायते ॥
शाकपत्राशनाद्भोगी अपक्वादमलो भवेत् ।
पादाभ्यङ्गपरित्यागाच्छिरोऽभ्यङ्गं विवर्जयेत् ॥
दोषिमान् दोषकायेन सोऽपि शौद्रपतिर्भवेत् ।
दधिदुग्धैकनियमौ गोभक्तौ गोपतिर्भवेत् ।
इन्द्रातिथित्वमाप्नोति स्थालीपाकस्य वर्जनात् ॥
लभते मङ्गतिन्धोर्घां तैलपक्तस्य वर्जनात् ।
भूमौ प्रस्तरशायी च विप्रो मुनिवरो भवेत् ॥
सदा मुनिः सदा योगी मधुमांसश्च वर्जयेत् ।
निर्व्याधिर्निर्दिग्गोजस्वी सुरामद्यं विवर्जयेत् ॥
एवमादिपरित्यागात् धर्मः स्यात् धर्मनन्दन ।
एकान्तरोपवासेन ब्रह्मलोके महीयते ।
धारणाद्यष्टयोगाङ्गं गङ्गास्नानफलं लभेत् ॥

धारणाद्यष्टयोगाङ्गं ।

मौनव्रती भवेद्यस्तु, तस्याज्ञा फलिता भवेत् ।
नमोनारायणायैति जपन्यन्नफलं लभेत् ॥

अयं चातुर्मास्यव्रतारम्भो गुर्व्यस्तमयादावपि कार्यः ।
 यदाह वृद्धगर्गः । न शैशवस्य मौढ्याच्च शुक्रगुर्व्योर्नवा तिथेः ।
 खण्डस्त्वं चिन्तयेच्चादौ चातुर्मास्यविधौ नरः ।
 पादाभिवन्दनादिष्णोर्लोभेद्गोदानजं फलं ।
 भूमौ भुङ्क्ते सदा यस्तु स पृथिव्याः पतिर्भवेत् ।
 नमो नारायणायेति जपन्यस्तु फलं लभेत् ॥
 विष्णुपादाब्जसंस्पर्शाद्दिनपापात् प्रमुच्यते ।
 पादोदकाभिषेकाच्चै गङ्गास्नानं दिने दिने ॥
 पर्णेषु यो नरो भुङ्क्ते कुरुक्षेत्रफलं लभेत् ।
 नित्यं शास्त्रसमाख्यानाम्नोकान् यस्तु प्रबोधयेत् ॥
 व्यासस्तुष्यति तस्याशु विष्णुलोकं स गच्छति ।
 कृत्वा प्रेक्षणकं विष्णोर्लोकमप्सरसां लभेत् ॥
 तीर्थेषु स्नापनादिष्णोर्निर्मलं देहमाप्नुयात् ।
 पञ्चगव्याशनात्पार्थ चान्द्रायणफलं लभेत् ॥
 अयाचितेन प्राप्नोति पुत्रान्धर्मान्निशेषतः ।
 षष्ठान्नकालभोक्ता यः कल्पस्थायी भवेद्दिवि ॥
 उपवासद्वयान्तरितैकभक्तः ।

शिलीच्छिखेन भुञ्जानः प्रयागस्नानमाप्नुयात् ।
 विष्णुदेवकुले कुर्यादुपलेपनमार्ज्जने ॥
 कल्पस्थायी भवेद्भ्राजा स नरो नात्र संग्रहः ।
 प्रदक्षिणशतं यस्तु करोति स्तुतिपाठकः ।
 हंसयुक्तविमानेन स तु विष्णुपुरं व्रजेत् ।
 गीतवाद्यकरो विष्णोर्गान्धर्व्यं लोकमाप्नुयात् ॥

यामद्वयं जलत्यागाक्षरोगैरभिभूयते ।
गुडवर्जं नरोदद्यादद्भुतं ताम्रभाजनं ।
सहिरण्यं नृपश्चेष्ट लवणस्याप्ययं विधिः ॥
ब्रह्मवैवर्ते ।

नारद उवाच ।

कथं सुप्ते तु गोविन्दे व्रतचर्या सुरोत्तम ।
कर्त्तव्या मानवैर्भक्त्या विष्णुपूजनतत्परेः ॥
तिथयः काय पुण्या वे निःशेषफलदायिकाः ।
सन्तुष्यते हरिर्यथासु स्वल्पेन तपसा नृणां ॥
दानहोमजपस्नानं व्रतचर्यार्चनं हरेः ।
समाचक्ष्य सुरश्चेष्ट उपवासविधिक्रियां ॥

ब्रह्मीवाच ।

शृणु वत्स प्रवक्ष्यामि चातुर्न्मास्यविधिक्रियां ।
यां निर्वर्त्य नरो भक्त्या प्रयाति परमाङ्गतिं ॥
अवगम्य विधानेन समर्चनविधिं हरेः ।
व्रतपूजादिकं कुर्यात्ततो भक्तिसमन्वितः ॥
अविज्ञाय विधानोक्तां हरेः पूजाविधिक्रियां ।
कुर्वन् भक्त्या समाप्नोति तद्विष्णोः परमं पदं ॥
यस्तु विष्णुपरो नित्यं दृढभक्तिर्जितेन्द्रियः ।
स गृहेऽपि वसन् याति तद्विष्णोः परमं पदं ॥
शिवे वा भक्तिसंयुक्तो भानो वा गणनायके ।
कृत्वा व्रतस्य नियमं यद्योक्तफलभागभवेत् ।
नरस्य जयमाप्नोति पापं जह्यशतोद्भवम् ॥

आषाढस्य क्षिते पक्षे एकादश्यामुपोषितः ।
 नक्तं कुर्याद्द्विजश्चेष्ट गृहीयान्नियमं व्रती ॥
 कुर्यादिति, नियमं नक्तं गृहीयादित्यन्वयः ।
 एकादश्यान्तु गृहीयात् संज्ञातो कर्कटस्य च ॥
 आषाढादौ नरो भक्त्या चातुर्मासीव्रतक्रिया ।
 चातुर्मासीव्रतानान्तु कुर्यात् परिकल्पनां ॥
 इदं व्रतं मया देव गृहीतं पुरतस्तव ।
 निर्विघ्नां सिद्धिमायातु प्रसादात्तव केयव ॥
 गृहीतेऽस्मिन् व्रते देव पञ्चत्वं यदि मे भवेत् ।
 तदा भवतु संपूर्णं त्वत्प्रसादाज्जनार्दन ॥
 गृहीतेऽस्मिन् व्रते देव यद्यपूर्णं म्रिये त्वहं ।
 तन्मे भवतु सम्पूर्णं त्वत्प्रसादाज्जनार्दन ॥
 एवमभ्यर्च्य गोविन्दं व्रतार्चनजपादिकं ।
 सर्व्वं त्वं परिगृहीयात्परिपूर्णं यथा भवेत् ॥
 व्रतानि त्रैणवानोह शैवानोह द्विजोत्तम ।
 एकभक्तं नरः कृत्वा नित्यस्त्रायी दृढव्रतः ॥
 बोऽर्चयेत्तुरोमासात्वासुदेवं स नाकभाक् ।
 समाप्तौ भोजयेद्द्विपान् भक्त्या दद्याच्च दक्षिणां ॥
 यस्तु सुप्ते हृषीकेशे नक्तमाचरेते व्रती ।
 वस्त्रयुग्मं नरो दत्वा शिवलाके महीयते ॥
 अपूपवर्जनं कृत्वा भोजने व्रतमाचरेत् ।
 कार्तिके स्वर्णगीधूमान् वस्त्रं दत्वाग्निमधकृत् ॥
 पक्षं दत्वा च विप्राय ब्रह्मसौकमवाप्नुयात् ।

रौप्यं दत्त्वा ब्राह्मणाय व्रती तद्गतमानसः ॥
 अन्नदानं व्रतं कुर्याद्रौप्यदानञ्च पारणं ।
 एकान्तरोपवासेन विष्णुपूजनतत्परः ॥
 गान्धत्वा वासुदेवस्य लोके संपूज्यते नरः ।
 यस्तु सुप्ते हृषीकेशे चित्तिशायी भवेन्नरः ॥
 शय्यां सोपस्करोत्त्वा इन्द्रलोके महीयते ।
 वार्षिकांश्चतुरोमासान् मघं मांसञ्च यस्त्वजेत् ॥
 स्वर्णादौ हरिमुद्दिश्य स भवेद्देविद्भुजः ।
 यः क्षिपेत् कृष्णपादेन पाषाढादिषट्पदं ॥
 विष्णुपूजनकर्त्तव्यं स लभेत्तत्रिकेतनं ।
 गोपदानाद्भवेत्कोऽहिः समाप्ते हिजसत्तम ॥
 यस्मिन्नात्रकृताहारो नित्यं जायते जितेन्द्रियः ।
 वासुदेवार्चने युक्तः स लोकं वैष्णवं व्रजेत् ॥

पूर्वोक्तद्रोदानपारणं ।

ब्रीहीं यो वर्जयित्वा तु कार्तिके मासि मानवः ।
 हिरण्यं शालिना दत्त्वा पदं प्राप्नोति वैष्णवं ॥
 यस्तु केशवभक्तो हि विष्णोः पादोदकं पिबेत् ।
 वर्षारात्रं नरो भक्त्या स विष्णोः मघं संविशेत् ॥
 रौप्यं चन्दनसंयुक्तं धेनुं दद्यात्पयस्विनोः ।
 वार्षिकांश्चतुरो मासान् प्राजापत्यश्चरेन्नरः ॥
 समाप्ते गोयुगं दद्याद्दत्त्वा ब्राह्मणभोजनं ।
 पराकेन नरो नित्यं यः क्षिपेत् वार्षिकीं सकृत् ॥
 वर्जयित्वाऽप्युतं भक्त्या स गच्छेद्दिण्डुलीकतां ।

पूर्वोक्तं पारणं ।

गोमूत्राचकाहारी योऽर्चयेच्च ऋतुद्वयं ॥
 विष्णुमभ्यर्च्य सङ्गत्या नरोविष्णुपुरं व्रजेत् ।
 समाप्तौ गोवृषं दद्याद्वस्त्रं काञ्चनसंयुतं ॥
 शकमूलफलैर्वापि वर्षारात्रं नयेन्नरः ।
 समाप्तौ गोप्रदो भूत्वा स याति विष्णुमन्दिरं ॥
 पयोव्रती तथाप्राति ब्रह्मलोकं सनातनं ।
 प्रतान्ते च तथा दद्याद्दामेकाश्च पयस्विनीं ॥
 वर्ज्जित्वा मधुं यस्तु दधिक्षीरघृतान्वितम् ।
 दद्याद्दस्ताणि सूक्ष्माणि कार्त्तिक्यां गोप्रदो भवेत् ॥
 संपूज्य विममिथुनं गोरी मे प्रीयतामिति ।
 दद्याच्च काञ्चनं शङ्खा गौरीलोके महोयते ॥
 ब्रह्मचर्येण यो मामां व्रतुरः क्षपयेन्नरः ।
 प्रतिमां काञ्चनीं दद्याद्दम्पत्योर्ब्रह्मलोकभाक् ॥
 ताभ्यूलवर्ज्जनाङ्गीरो रक्तकण्ठश्च जायते ।
 समाप्तौ वस्तयुग्मन्तु वस्त्रं दद्याद्भिजातये ॥
 मन्त्राभिनन्ततः कृत्वा समाप्तौ घृतकुम्भदः ।
 वस्तयुग्मं तिलान् घण्टां ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥
 सारस्ततं पदं याति विद्यावान् धनवान् भवेत् ।
 कृत्वा प्रलेपनं शम्भोरयतः केशवस्य च ॥
 शार्ङ्गिकांश्चतुरी मामान् धेनुं दद्यात्पयस्विनीं ।
 अश्वत्थं भास्करं गङ्गां प्रणम्येष्टश्च वाग्यतः ॥
 एकभक्तं नरः कुर्याच्चातुर्मास्यमतन्द्रितः ।

व्रतान्ते विप्रमिथुनं पूज्यं धेनुसमन्वितं ।
वृक्षान् हिरण्मयान् दद्यात् सोऽध्वमेधफलं लभेत् ॥

वृक्षान्मृगस्थान् ।

घृतेन स्नापनं कृत्वा शश्वोर्वै केशवस्य च ।
अक्षतैश्च समं कुर्यात् पशून् गोमयमण्डले ॥
समाप्नोति हेमकमलान्तिलघेनुसमन्वितं ।
ब्राह्मणाय व्रतो दद्याच्छिवलोके महीयते ॥
सन्ध्यादीपप्रदो यस्तु प्राङ्गणे द्विजसत्तम ।
समाप्नोति दीपिकां दद्याच्चकयतुरस्त्रे गृहाङ्गने ॥
वस्त्रयुग्मान्विते वत्स स तेऽस्त्रो भवेदिह ।
वैमानिको भवेद्देवो गन्धर्वाणां सेवितः ॥
भूमिस्तु भाजनं कृत्वा यो भुङ्क्ते तु षट्पदं हयं ।
कांस्यपात्रञ्च गां दत्त्वा पृथ्वीशो भवते नरः ॥
पर्णसंस्तरसम्भोजो समाप्नोति कांस्यभाजनं ।
दत्त्वा स्वर्गगतो ब्रह्मन् पूज्यते विदिवीक्षसा ॥
उत्प्रेषणफलं भुङ्क्ते रश्मापलाशवृक्षजैः ।
अन्धानि यान्यभीष्टानि वर्जयेद्विष्णुतत्परः ।
विशुद्धमानसो ब्रह्मन् सर्वमेवाक्षर्यो भवेत् ॥
पादाभिवन्दनं कृत्वा केशवस्य नरोत्तम ।
प्राप्नोत्यतुल्यमानस्य प्रसन्ने गरुडध्वजे ।
तच्छुद्धमनसः पुंसस्तीर्थं यान्ति तिमौकसः ॥
एवं व्रतानि पुष्पानि जलदुग्धहराणि च ।
हरिमुद्दिश्या चीर्ष्यानि भुक्तिमुक्तिप्रदानि तु ॥

अष्टम्याञ्च चतुर्दश्यां पञ्चयोऽभयोरपि ।
 नक्तं समाचरेद्यस्तु दीपं दद्याच्चतुष्पथे ॥
 प्राङ्गणे तु तथा दीपं दत्त्वा चैव गवाङ्गिकं ।
 चातुर्मास्यव्रतं कृत्वा व्रतान्ते गोष्ठ्यप्रदः ।
 स याति भवनं शम्भोः पूजितो देवसत्तमैः ।
 विष्णोः प्रदक्षिणां कृत्वा शम्भोर्वाथ द्विजोत्तम ॥
 व्रतान्ते वस्त्रदो भूत्वा दत्त्वा स्वर्गमवाप्नुयात् ।
 यस्तु वै चतुरो मासान् करोति च जगत्पतेः ॥
 केशवस्य सङ्घाभाग पादपूजां द्विजोत्तम ।
 स याति वैष्णवं लोकं शाश्वतं नात्र संशयः ॥
 यस्तु केशवमुद्दिश्य नित्यमेव तिलप्रदः ।
 तिलत्यागो भवेन्नित्यं चातुर्मास्यमन्त्रितः ॥
 समाप्ते तु व्रते विप्र तिलधेनुप्रदो भवेत् ।
 सर्व्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोके महीयते ।
 तदन्ते च भवेद्राजा भारते भूभृताम्बरः ॥
 गीतन्तु देवदेवस्य केशवस्य शिवस्य च ।
 करोति नित्यमाप्नोति नरो योगस्य वै फलं ॥
 व्रतान्ते स व्रतो दद्यात् षण्ढं देवाय सुधरां ।
 कटुतिक्तकषायं च वर्ज्जयेद्यस्तु मानवः ॥
 स भवेद्रूपमम्पन्नो व्याधिभर्ताभिभूयते ।
 व्रतान्ते च द्विजं पूज्यं शक्त्या दद्याच्च दक्षिणां ॥
 पतितालापमनृतं वर्ज्जयेच्च ऋतुद्वयं ।
 पादाभ्यङ्गकरो दद्याद्वाङ्मनानाञ्च भोजनं ।

दक्षिणाञ्च यथाशक्त्या स गच्छेद्विष्णुमन्दिरं ॥
 यस्तु वै चतुरो मासान् वर्जयेद्दत्तमुत्तमं ।
 महालावण्यमाप्नोति गात्रसौरभ्यमेव च ॥
 व्रतान्ते हरिमुद्दिश्य दत्त्वा ब्राह्मणभोजनं ।
 गन्धेन पूज्य गोविन्दं ब्राह्मणाय द्विजोत्तम ।
 वस्त्रयुग्मन्ततो दत्त्वा विष्णुलोके महीयते ॥
 तेजस्वी जायते विप्र तैलपक्कप्य वर्जनात् ।
 विप्रान् सम्भोज्य विप्रर्षे याति लोकश्च वैष्णवं ॥
 दस्यजे हरिमुद्दिश्य स्नानसुषो न वारिणा ।
 गङ्गास्नानं क्षतस्तेन नित्यमेव न संशयः ॥
 यस्तु संस्मरते नित्यं गङ्गां भागीरथीं शुभां ।
 स नित्यं स्नानमाप्नोति गङ्गायां नात्र संशयः ॥
 यस्तु सुप्ते हृषीकेशे पुष्पाणि च विवर्जयेत् ।
 व्रतान्ते तु भवेच्चातः स व्रती स्वर्णपुष्पदः ॥
 स याति भुवनं शुभ्रं विष्णोरमिततेजसः ।
 प्रसुप्ते तु जगन्नाथे शिवस्याङ्गणमर्चयेत् ।
 पञ्चवर्णैस्तु यो नित्यं स्वस्तिकैः पद्मकैस्तथा ।
 स याति रुद्रलोकं हि गाणपत्यमवाप्नुयात् ॥
 यस्तु सुप्ते हृषीकेशे पूजयेन्मधुसूदनं ।
 स्नायं प्रातस्तु भुक्त्वा वै प्राजापत्यपुरं व्रजेत् ॥
 यस्तु सुप्ते हृषीकेशे तृतीयायां नरोत्तमं ।
 प्रतिपद्यं गुहं दद्याद्गोरो मे प्रीयतामिति ॥
 समाप्ते विप्रमिथुने पूजयित्वा द्विजोत्तमं ।

वस्त्रैराभरणैश्चैव भोजयित्वा भवेत् सुखी ॥
 पञ्चम्यां प्रतिपन्नस्तु तण्डुलैः पूरितं घटं ।
 यः प्रदद्याद्भुतस्यान्ते पूजयित्वा द्विजोत्तमान् ॥
 वस्त्रैराभरणैश्चैव तण्डुलप्रस्थमेव च ।
 दत्त्वा सारस्वतं याति पदं गन्धर्वपूजितं ।
 विद्वान् स पूर्णविभवो धनधान्यसमन्वितः ॥
 रूपयान् गुणवांश्चैव रत्नकण्ठश्च जायते ।
 चतुर्हस्त्यान्तु संपूज्य उमामाहेश्वरं विभुं ॥
 प्रतिपन्नस्तु संपूज्य पुष्पैर्गन्धैर्निवेदनैः ।
 चातुर्मास्ये ततो वृक्षे रोप्यं कृत्वा हृषीकेशं ।
 ततोपरि च मौवर्णमुमामाहेश्वरं विभुं ॥
 पूजयित्वा द्विजश्चैव ब्राह्मणाय निवेदयेत् ।
 ततो स याति भुवनं विमानेन हि शार्ङ्गरं ।
 कल्पास्ते तत्र वै स्थित्वा पृथ्वीपालो भवेदिति ॥

भविष्योत्तरात् ।

एवमद्वित्रतेः पार्थ तोषमायाति तोषितः ।
 केशवः क्षेमहा लणः कंसकेशिनिसूदनः ॥
 सुप्ते यस्मिन्निवर्त्तन्ते क्रियाः सर्वाः शुभोदयाः ।
 पिवाहव्रतवन्धादिचूडासंस्कारवीक्षणं ।
 यज्ञगृहप्रवेशश्च प्रतिष्ठादेवभूभृतां ॥
 पुण्यानि याति कर्माणि न स्त्रुः सुप्ते जगत्पती ।
 असंक्रान्तस्तथा मासं देवे पैत्रे च कर्माणि ॥
 मलमासमुद्योच्यते वर्जयेच्चतिमाचरः ।

प्राप्ते भाद्रपदे मासि एकादश्यां सितेऽहनि ॥
 कटिदानं भवेद्विष्णोर्महापातकनाशनं ।
 कटिदानमिति शयितस्य विष्णोरङ्गपरिहृत्तिकारणं ।
 यदेतदेवशयनं तत्रेदङ्कारणं शृणु ॥
 पुरा तपःप्रभावेण तीक्ष्णतोऽहं महाभुज ।
 प्रार्थितः स्थानमङ्गेषु प्रीत्यर्थं योगनिद्रया ॥
 ततो मयात्मनो देहं तत् स्थानार्थं निरीक्षितं ।
 उरो लक्ष्म्या नम व्याप्तं हृदयं कौस्तुभेन तु ॥
 शङ्खचक्रगदाशङ्खं वीजवोयाहवक्षसाः ।
 अधो नाभिर्निरुद्धं मे वैनतेयेन पक्षिणा ।
 मुकुटेन शिरो रुद्धं कुण्डलाभ्यां श्रुतिद्वयं ॥
 ततो दत्तं मया पार्थ नेत्रयोः स्थानमादरात् ।
 चतुरो वार्षिकान्मासान् वसुः प्रीतो भविष्यति ॥
 योगनिद्रापि तद्वाक्यं श्रुत्वा प्रीताभवत्तु सा ।
 चकार लोचनावासमतोऽर्थं मे युधिष्ठिर ॥
 अहञ्च ताम्भावयित्वा मानयाम्यात्मसंस्थितां ।
 योगनिद्रां महानिद्रां शेषाह्निशयणे स्वपन् ।
 शीरोद्वेगोयवोच्योवैर्होतपादः समाहितः ॥
 लक्ष्म्याः कराभ्यां जैः स्रक्ष्यैर्मयमानपदद्वयः ।
 तस्मिन् काले च महती यो मामांश्चतुरः क्षिपेत् ॥
 व्रतैरनेकैर्नियमैः पाण्डव त्रैयसेनघ ।
 कल्पमेकं विष्णुलोके पूज्यमानो नरो वसेत् ॥
 ततो विबुध्यते देव शङ्खचक्रगदाधरः ।

ब्रह्मपुराणात् । एकादश्याञ्च शुक्लायां कार्तिके मासि केशवं ।

प्रसुप्तं बोधयेद्वाचो यथाभक्तिसमन्वितः ॥

नृत्यैर्गीतेस्तथा वाद्यैः ऋग्वज्रसाममङ्गलैः ।

वीणापटहशब्दैश्च पुराणश्रवणेन च ॥

वासुदेवकथाभिर्यस्तोत्रैरन्यैश्च वैष्णवैः ।

सुभासितैरिन्द्रजालैर्भूरिशोभाभिरेव च ॥

पुष्पैर्धूपैश्च नैवेद्यैर्दीपैश्चैः सुशोभनैः ।

ह्रीर्महेश्वरपूजैश्च फलैः शर्करपायतैः ॥

इक्षोर्विकारैर्मधुरैर्द्रोक्षाक्षुद्रैः सदाङ्गिमैः ।

कुठेरकस्य मञ्जर्या मालत्या कमलेन च ॥

कुठेरकः कृष्णतुलसी ।

हृद्याभ्यां श्वेतरक्ताभ्याश्चन्दनाभ्याश्च सर्वदा !

कुङ्कुमालङ्काराभ्याश्च रक्तमूत्रैः सकङ्कणैः ॥

तथा नानाविधैः पुष्पैर्द्रव्यैर्वैरिक्ताभ्याञ्चतैः ।

रक्तयुक्तेन प्रथमं माल्येन ग्रहणं तथा ॥

तस्यां राज्ञां व्यतीतायां द्वादश्यामवगोदये ।

आदौ घृतेनैश्वरेण मध्ना ज्ञापयेत्ततः ॥

दध्ना क्षीरेण च ततः पञ्चगव्येन शास्त्रवत् ।

उद्वर्त्तनं माषचूर्णं मसूरामलकानि च ॥

सर्षपाय पिशङ्गश्च सर्ववोजानि काश्चन ।

मङ्गलानि यथाकामं रत्नानि च कुशोदकं ॥

एव संगोध्य देवेशं दद्याद्भारोचनां शुभां ।

ततस्तु कलगा देया यथा प्राप्ताः स्वच्छताः ॥

जःतौपङ्कवसंयुक्ताः सफलाश्च सकाञ्चनाः ।
 पुण्याहवेणुगन्धेण वीणावेणुरवेण च ॥
 एवं संक्राम्य गोविन्दं स्वगुलितं खलङ्कृतं ।
 सुवासनस्तु मम्यन्तु संमनोभिः सुकुङ्कुमेः ।
 दीपेर्धूपैर्मनोज्ञैश्च पादसेन च मूरिणा ॥
 पात्रेभ्यश्चान्नदानैश्च होमैः दुग्धैः सदक्षिणैः ।
 वासीभिर्भूषणैरन्यैर्गोभिर्देव मनोज्ञैः ॥
 ब्राह्मणाः पूजनीयाश्च विष्णोर्हृदयाश्च मूर्त्तयः ।
 यत्तु शिष्टावृतं पराङ्मोक्तव्यं ब्राह्मणै सह ॥
 भविष्योत्तरात् ।

कार्तिके शुक्लपक्षस्य एकादश्यां समाहितः ॥
 मन्त्रेण चैव राजेन्द्र देवमुत्थापयेद्भिजः ।

मन्त्रास्तु वराहपुराणीकानि ।

श्रीं ब्रह्मेन्द्रहृद्गान्धिकुवेरकुर्य्य-
 सीमादिभिर्वन्दितवन्दनोदः ।
 बुध्यस्व देवेश जगत्सिवास
 मन्त्रप्रभावेण सुखेन देव ॥

इयं तु ह्यादगी देव प्रवाधार्थस्तु निर्मिता ।
 त्वयैव सर्वलोकानां हितार्थं शेषशानिना ॥
 त्वयि सुप्ते जगन्नाथ जगत्सुप्तं भयेदिदं ।
 उत्थिते चेत्यते सख्यमुत्तिष्ठोत्तिष्ठ माधव ॥
 गता मेघा त्रियचैव निर्मलं निर्मला दिशः ।
 शारदानि च पुण्यानि गृह्णाच्च मम केशव ॥

इदं विष्णुरिति प्रोक्ते मन्त्रमुत्थापने हरेः ।
 समुत्थिते ततो विष्णौ प्रवर्तन्ते शुभाः क्रियाः ॥
 तत्रैव देवदेवस्य स्नानम् पूर्ववद्भवेत् ।
 महातूर्यरवे रात्रौ भ्रामयेद्देवमुत्थितं ॥
 विमानाकारयानेन नगरे पार्थिवः स्वयं ।
 दीपोद्योतकरे मार्गं नृत्यगीतजनाकुले ॥
 यो यो दामीदरं पश्येदुत्थितं धरनीधरं ।
 स स प्राणो महाराज सत्त्वं स्वर्गाय कल्पयेत् ॥
 रात्रौ प्रजागरे देव एकादश्यां सुरालये ।
 प्रभाते विमले स्नात्वा द्वादश्यां विष्णुमर्चयेत् ॥
 ह्रीं सधे हव्यवाहस्य ह्रीं मद्रव्येष्टितादिभिः ।
 ततो विमानं नृपञ्चेष्ट भोजयेदन्नविस्तरेः ॥
 छतचीरदधिचौद्रकामारगुडमोदकैः ।
 यजमानयुतस्तुष्टस्वरां ह्यस्य विवर्जयेत् ॥
 एकादश्याष्टौ वा पञ्च द्वौ वा कुरुत्तम ।
 चर्चयेच्चन्दनैर्गन्धैस्त्रिमाल्यादिभिर्हिजान् ॥
 शास्त्रोक्तविधिना पार्थ यद्वया विधितत्परः ।
 पितरस्तापितास्ते न तीपितस्ते न केशवः ॥
 न हि कचिन्नमः साक्षादर्थः आद्वेन पाण्डव ।
 पितृनुद्दिश्य यत्किञ्चिद्दीयते यद्वयान्वितैः ।
 तत्प्राप्त्या भुज्यते देवैर्गन्धादिभिरसंग्रहं ॥
 अतः आद्वोक्तविधिना व्रतान्ते पूजयेद्दिजान् ।
 आचान्ते तु ततोदद्यात्पूजं यत्किञ्चिदेव हि ॥

स्ववाचा स्वमनोभीष्टं ज्ञेयधान्यफलादिकं ।
 चतुरो वाचिकान् मासान् नियमो येन यः कृतः ॥
 कथयित्वा हिजेभ्यस्तद्व्याख्यातया सदर्पणं ।
 दत्त्वा विसर्जयेद्विप्रान् ततो भुञ्जीत वाग्यतः ॥
 यत्पुण्यं चतुरो मासान् प्रवृत्तिं तस्य वाचयेत् ।
 य एनं कुरुते पार्थ सोऽनन्तफलभाग्भवेत् ॥
 प्रतिवर्षं च यः कुर्याद्देवं संस्मरते हरिं ॥
 देहान्तेऽतिप्रदोमे न विमानेनार्कवर्चसा ।
 मोदते बिम्बलोकेऽसौ यावदाहुतसंज्ञकं ॥
 यस्याविष्टैः समाप्येत चातुर्मासीव्रतं नृप ।
 स भवेत् कृतकृत्यस्तु तुष्टो बन्धुजनार्दनः ॥
 यो देवशयने भक्त्या चतुष्टयं समाचरेत् ।
 गङ्गादितीर्थयात्रायास्तत्त्वं फलमवाप्नुयात् ॥
 उत्थानं वापि कृण्वन् स हरेर्लोकमाप्नुयात् ।
 शृणोति ध्यायति स्तोति समाख्यात्यनुमोदते ।
 व्रतमेतन्नरो भक्त्या स गच्छेद्देणवं पुरं ॥
 दुग्धाब्धिभोगिशयने भगवाननन्तो ,
 यस्मिन् दिने स्वपिति वायुनिबध्यते वा ।
 तस्मिन्ननन्यमनसामुपवासभाजां
 पुंसान्ददाति सुगतिं ह्यरुडं ह्यमरं ।

इति देवशयनोत्थानविधिः ।

आषाढादिचतुर्मासान्भङ्गं वर्जयेन्नरः ।
 पारिते च पुनर्हस्तिसत्तैस्तयुगं चटं ।
 भोजनं पावसाज्ज्वलं स याति भवनं विभोः ।
 लोकप्रीतिकरं ज्ञेयं तत् खेदव्रतमिहोच्यते ॥

इति पद्मपुराणोक्तं खेदव्रतं ।

—०००—

आषाढादिचतुर्मासां वर्जयेन्नरः ।
 वृत्ताकभक्षयश्चैव मधुरधिर्विष्टाभितं ॥
 कार्तिकान्तात्पुनर्हस्तं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ।
 चद्रकोकमवाप्नोति शिवव्रतमनुत्तमं ॥

इति पद्मपुराणोक्तं शिवव्रतं ।

—०००—

महाफलानि वक्ष्यन्ता चतुर्मासां द्विजातये ।
 शैमानि कार्तिके दद्यात्तुभेन समं नरः ॥
 सितवस्त्रयुगेनाथ सम्पूर्णज्वहरेण च ।
 एतत् फलव्रतं नाम सर्वकामफलप्रदं ॥

इति पद्मपुराणोक्तं फलव्रतं ।

—००—

आषाढादिचतुर्मासान् प्रातः आसी भवेन्नरः ।
 विप्राय भोजनं दत्त्वा कार्तिकान्तोपदो भवेत् ॥
 घृतकुशभक्षया दद्यात् सर्वकामानवाप्नुयात् ।
 वैष्णवव्रतमित्युक्तं विष्णुलोकप्रदायकं ॥

इति पद्मपुराणोक्तं वैष्णवव्रतं ।

अथैवै मार्गशीर्षे तु यस्तु पिठमयन्ददेत् ।
 शिवं सम्यक् विधिवत् सूर्यलोके महीयते ॥
 दिव्यं वर्षसहस्रान्तु तदन्ते स्यान्महीपतिः ।
 पौर्णे पिठमयी दन्ती शिवस्याग्रे निवेदयेत् ॥
 त्रिःसप्तकुलसंयुक्तः शिवलोके महीयते ।
 दिव्यं वर्षसहस्रान्तु तदन्ते स्यान्महीपतिः ॥
 चक्रवर्ती महावीरः सर्वैश्वर्यसमन्वितः ।
 माघे चाक्षरघं यस्तु शिवाय विनिवेदयेत् ॥
 उदरेऽपि नरकात् स्वपितृन् रोरवादितः ।
 शिवलोके तु वसति दिव्यवर्षायुतययं ॥
 तदन्ते तु मही कर्त्तव्या न च खण्डा भुनक्ति सः ।
 फाल्गुने हवयूषान्तु पिष्टोत्थं रुद्रसंख्यया ॥
 निवेद्य तु शिवस्याग्रे त्रैलोक्याधिपतिर्भवेत् ।
 दिव्यं वर्षसहस्रान्तु तदन्ते स्यान्महीपतिः ॥
 चक्रवर्ती महावीरः सर्वैश्वर्यसमन्वितः ।
 चैत्रे गृहमिन्दमयं दासदासीसमन्वितं ॥
 गृहोपकरणैर्युक्तं विविचाङ्गवर्धितं ।
 पूजान्ते परया भक्त्या शिवाय विनिवेदयेत् ॥
 दिव्यवर्षगतान्यष्टौ रुद्रलोके महीयते ।
 जातिस्मरस्तदन्ते तु चक्रवर्तित्वमाप्नुयात् ।
 मासि वैशाखसंज्ञे तु सप्तवीरैश्चिरात्कान् ॥
 शिवाय पुरतो दद्यात् पूजान्ते प्रीतिचेतसा ।
 च याति शिवसाङ्गं बभ्रुभिः सहितो नरः ॥

फलानां वै शते यस्तु गुग्गुलन्तु दहेत्सुधीः ।
 ज्यैष्ठे मासि शिवस्याग्रे पूजान्ते भक्तिसंयुतः ॥
 त्रिःसप्तकुलसंयुक्तः शिवलोके महीयते ।
 तदन्ते पृथिवीं भुङ्क्ते न च खण्डां ससागरां ॥
 बलिमण्डलकं कार्यं प्रासादे शूलपाणिनः ।
 नानाभक्षैर्विरचितं नानाभक्षसमन्वितं ॥
 नानाचित्रसमाकीर्णं कर्तव्यं बलिमण्डलं ।
 संपूज्य परमेशानं ततस्तस्य निवेदयेत् ॥
 पितृन् पितामहांश्चैव उद्धृत्य प्रपितामहान् ।
 पुत्रपौत्रसमायुक्तः शिवलोके महीयते ॥
 दिव्यवर्षसहस्राणि तदन्ते पृथिवीपतिः ।
 श्रावणे मासि देवस्य विमानं पुष्पसम्भवं ॥
 पूजावसाने दातव्यं विचित्ररचनाकुलं ।
 वर्षायुतप्रमाणन्तु रुद्रलोके महीयते ॥
 योगीशो जायते शान्तो येन मोक्षं व्रजेत्तु सः ।
 मासि भाद्रपदे यस्तु रुद्रपूजां चरेत्तदा ॥
 गुग्गुलं प्रथमं धूपं सुरदाह ततो दहेत् ।
 विश्वभोजं घृतं तद्वत् तथा नानाघृतान्वितं ॥
 पञ्चमं द्वागुरुन्देयं धूपं सर्वात्मना विभोः ॥
 मासमेकन्दहेद्यस्तु नेरन्तर्येण भक्तितः ।
 याति सायुज्यतां शम्भोः सपुत्रः सहबान्धवः ॥
 यस्त्वर्कपत्रपुटकं पूरयेत्क्षीरसर्पिषा ।

मासमश्वयुजं शश्वीर्नैरन्तर्येष भक्षितः ॥
तस्य पुण्यफलं वक्तुं न शक्नोऽस्मि ब्रह्मानन ।
तत्कुलो पतिता ये तु छिन्नाछिन्नहता पुनः ॥
ते प्रयान्ति महाभागा ब्रह्मलोके यथावृत्तं ॥
वर्षायुतायुतं साधं तदन्ते तु नरेक्षराः ।
जायन्ते शिवभक्ताश्च ज्ञानिनो बीतकल्मषाः ॥
शिवदीक्षां समासाध्य ते यान्ति परमावृत्तिं ।
वस्त्राहतमिचुरसं पुटकन्तु शिवाग्रतः ।
पूजान्ते दापयेद्यस्तु मासि प्राप्ते च कार्तिके ॥
देहान्ते ब्रह्मलोके तु मोदते सह बान्धवैः ।
व्रतान्ते चैव संपूज्य शिवभक्तान् यथाविधि ॥
वैमवस्त्राग्रपानैश्च विसृज्याठ्य विना सुत ।

इति कालोत्तरोक्तं शिवव्रतं ।

—080—

एकभक्तेन या नारी कार्तिकन्तु चपेन्नृप ।
अमाहिसादिनियमैः सज्जाता ब्रह्मचारिणी ॥
गुह्याग्रमित्रं शाख्यं भास्कराय निवेदयेत् ।
पुण्याश्च करवीराणि गुग्गुलुं सान्ध्यमादरात् ॥
सप्तम्याश्चाववष्ट्या वा उपवासरतिर्भवेत् ।
पञ्चयोदशयोरेव अथवा परयाम्बितः ॥
इन्द्रलोक्तप्रतीकाग्रं विमानैः सार्वकामिकैः ।
नारीयुगयतं साधं सूर्यलोके महीयते ॥
तथा च सूर्यलोकेषु भोगानासाद्य व्रततः ।

तस्मादागत्य लोकेऽस्मिन् यथेष्टं विन्दते पतिं ॥

अथ सत्यं दानं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।

सूर्यपूजाम्निहवनं सन्तोषस्तेयवर्जनं ॥

सर्ववैश्वदेव्यं धर्मः सामान्येन सदा स्थितः ।

मार्गशीर्षे शुभे मासि व्योमपिष्टेन निष्पितं ॥

गन्धमाक्षैरलङ्कृत्य भास्कराय निवेदयेत् ।

गैरिकेयैर्महास्थानैरप्सरोगणसेवितैः ॥

सप्तैकादशसाहस्रं सूर्यलोके महीयते ।

गैरिकेयैः महास्वर्णैः ।

क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् राजानं पतिमाप्नुयात् ।

पौषे तु गरुडङ्गत्वा भानवे विनिवेदयेत् ॥

गन्धमाक्षैरलङ्कृत्य भास्करं विष्णुर्धामन्युः ।

ताम्रपात्रेऽथ काश्ये वा तत्तत्त्वं विनिवेदयेत् ।

महापद्मकदानेन दिव्यगन्धप्रवाहिना ॥

अथैकादशसाहस्रं सूर्यलोके महीयते ।

सम्प्राप्यैव क्रमाङ्गीकृत्य यथेष्टं विन्दते पतिं ॥

माघे रथक्षत्रयुतं दीपमाल्यविभूषितं ।

पैष्टभानुसमायुक्तं कृत्वा यतनमानयेत् ॥

विमानैः सूर्यसङ्घाशैर्गीतवाद्यसमाकुलैः ।

सप्तैकादशसाहस्रं सूर्यलोके महीयते ।

पुनरेत्येवमा लोकां यथेष्टं विन्दते पतिं ॥

देवार्चा फाल्गुने मासि कृत्वा पिष्टमर्थी रवेः ।

गन्धमाक्षैरलङ्कृत्य आपयेत् भास्कराक्षये ॥

विमानैः सूर्यग्रहाद्यैर्गीतवाद्यसमाकुलैः ।
 वर्षाद्युत्थतं सायं सूर्यलोके महीयते ॥
 क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् यद्येष्टं विन्दते पतिं ।
 कृत्वा च तत्रा चैत्रे गन्धमाब्धौपशोभितं ॥
 स्थाप्य पात्रे यथोक्तान् भस्कराय निवेदयेत् ।
 शरदिन्दुप्रतीकाद्यैर्विमानैः सार्वकामिकैः ॥
 वर्षाद्युत्थतं सायं सूर्यलोके महीयते ।
 कर्मचयादिहागत्य पुनर्पौत्रसमन्विता ॥
 अभीष्टं पतिमासाद्य तत्र भोगान् सुदुर्लभान् ।
 तद्भ्रातृकपिष्टेन कृत्वा वै मेघपर्वतान् ॥
 निचुभागं समायुक्तं सर्वधातुविभूषितं ॥
 नानासङ्कारसम्पन्नं नानामाण्डविभूषितं ।
 सर्वरत्नसमायुक्तं स्थापयेद्भस्करालये ॥
 महाब्धौनव्रतं ह्येतत् वैशाखे यः समाचरेत् ।
 नानाविधैर्विमानैश्च सूर्यलोके महीयते ॥
 क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् क्रीडते मानसेऽचले ।
 पिष्टेन पङ्कजं कृत्वा ज्येष्ठे मासि सवेदिकं ॥
 पङ्कजं पद्मं ।
 पात्रैः संपूज्य गन्धाद्यैर्नानामाण्डविभूषणैः ।
 शुद्धस्फटिकसङ्काशैर्विमानैः सार्वकामिकैः ।
 वर्षाद्युत्थितं सायं सूर्यलोके महीयते ॥
 क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् राजानं पतिमाप्नुयात् ।
 विज्ञातं च तत्रा पद्ममावाङ् पेटमुत्तमं ॥

सर्ववीजरसैः पूर्णं कृत्वा तु शुभलक्षणं ।

मानकेसरगन्धाद्यं सर्वरत्नसमन्वितं ॥

भास्कराय निवेदयेदिति शेषः ।

इंसवाहैर्महायानैः सर्वभोगान्वितैर्नृप ॥

वर्षकोटिगतं सायं ब्रह्मलोके महीयते ।

ब्रह्मलोके सूर्यलोके ।

क्रमाङ्गोक्तमिमं प्राप्य राजानं विन्दते पतिं ।

निवेदयेत्तु सूर्याय त्रावणे तिलपञ्चतं ॥

स्वच्छन्दगामिभिर्यानिर्नानारत्नविभूषितैः ।

वर्षकोटिगतं सायं सूर्यलोके महीयते ॥

सम्प्राप्य विविधान् भागान् ब्रह्मायसमन्वितान् ।

क्रमाङ्गोक्तमिमं प्राप्य राजानं विन्दते पतिं ॥

कृत्वा भाद्रपदे मामि व्योमशालिमवं नृप ।

वितानध्वजवस्त्राद्यं नानामालविभूषितं ॥

निशाकरकरप्रस्थैर्महायानैः शुभैर्भनैः ।

वर्षकोटिमहस्रणि सूर्यलोके महीयते ॥

क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् राजानं विन्दते पतिं ।

कृत्वा वाग्नयुजे मामि विपुलं धान्यपञ्चतं ।

सुवर्णवस्त्रगन्धर्व्यं सूर्यस्याग्रे निवेदयेत् ॥

सा विचित्रैर्महायानैर्वैरभोगसमन्वितैः ।

वर्षकोटिसहस्राणि सूर्यलोके महीयते ॥

अस्मिन् लोकमनुपान्ना राजानं विन्दते पतिं ।

इति भविष्यपुराणोक्तं स्त्रीपुष्कामावाप्तिव्रतं ।

पुलस्त्य उवाच ।

आषाढशुक्लपक्षान्ते भगवान् मधुसूदनः ।
 भोगिभोगे निजां मायां योगनिद्रान्तु मानयेत् ॥
 श्रैतेऽभी चतुरो मामान् यावद्भवति कार्तिकी ।
 विधिष्टास्तु प्रवर्तन्ते तदा यज्ञादिकाः क्रियाः ॥
 तत्राषाढसितान्ते तु यो नरो दिनपञ्चकं ।
 अधःशायी वहिःस्त्रायी माममभ्यङ्गवर्जितः ॥
 समस्तमन्दिरावर्जं सकलजायनो भवेत् ।
 ब्रह्मचारो जितक्रोधो जपहोमपरायणः ।
 चरिं संपूजयेन्नित्यं गन्धमाङ्गाद्यसम्पदा ॥
 गीतवाद्यैस्तथा नृत्यैर्होममालाभिरेव च ।
 सार्धनां जलधेनूनां प्रदानेन तथैव च ।
 तथा कार्तिक शुक्लान्ते तृतीये पारणं भवेत् ॥
 प्रस्वापे च प्रबोधे च दिनानि दश वै द्विज ।
 हिंसात्मकेस्तु जित्तस्य यज्ञैः कार्यं महात्मनः ॥
 प्रस्वापे च प्रबोधे च पूजितो येन केशव ।
 दशाहमेतत् कृत्वा तु व्रतं विष्णुपरो नरः ॥
 अस्मिष्टोममवाप्नोति कुलक्षैव समुद्धरेत् ।
 अग्निमुखं देवतानामग्निदेवश्च कृतिका ॥
 कार्तिकशान्तिदेवस्त्रो मासो देवमुखः स्मृतः ।
 आश्वयुज्यामतीतायां यावत्स्याद्विज कार्तिकी ॥
 व्रतं दशाहाभिहितं कृत्वा स्वर्गं महीयते ।
 पौष्करौकमवाप्नोति कुलमुद्धरति स्वकं ॥

प्रत्यहं दीपदानेन कार्तिकेऽभिसुखीभवेत् ।
 चतुषान् ब्राह्मण्येष्टस्तथा सर्वेषु पूजितः ॥
 एतावन्तं तथाकाशं सूर्यमासविवर्जकः ।
 स्वर्गलोकात्परिभ्रष्टो मानुषे सुखमाप्नुयात् ॥
 पारोग्यरूपसम्बन्धा युक्तश्च सुभगो भवेत् ।
 प्रसुप्ते देवदेवेशे दशरात्रोदितं व्रतं ॥
 कृत्वा तु चतुरो मासान् प्रसुप्ते मधुसूदने ।
 अश्वमेधफलं प्राप्य नाकपृष्ठे महीयते ॥
 असिधाराव्रतं कृत्वा तथा संवत्सरं नरः ।
 सर्वयज्ञानवाप्नोति विष्णुलोकाच्च गच्छति ॥
 येन येन तु कामेन खड्गधाराव्रतश्चरेत् ।
 तं तद्धाममवाप्स्याद्य विष्णुलोके महीयते ॥
 तथा समर्थो भवति दाने च वरदापयोः ।
 आदित्यतेजा भवति नाच कार्थ्या विचारणा ॥

दाशभ्य उवाच ।

असिधाराव्रतविधिं समाचक्ष्व महाश्रुते ।
 एतन्मे संशयं हृदि त्वं हि सर्वविदुष्यते ॥

पुलस्त्य उवाच ।

जातयाज्ञातसङ्गवी भुक्तवाक्सासवर्जितं ।
 हातदेवत्यपूजश्च स्त्रीसहायः स्वपेनिधिः ॥
 ब्रह्मचारी हिजयेष्ठ खड्गधाराव्रतं चरेत् ।
 अपूर्वञ्चात्र पूर्वञ्च समासिद्धं स्वपेनिधिः ॥
 ब्रह्मचारी यतस्तु च फलमाप्नोत्यसंशयं ।

अतीवदुष्करमिदं चतुर्विधं व्रतं ॥

कृत्वा व्रतं वादयवत्तराणि

वैसीश्वराणां भुवमाप्नुयात् ।

भुक्त्वा चिरन्ते द्विजसुखमन्ते

सायुज्यमायाति जनार्दनस्य ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तमसिधाराव्रतं ।

—०००००००—

मार्कण्डेय उवाच ।

इदमन्यत् प्रवक्ष्यामि चतुर्मुर्त्तिव्रतं तव ।

विद्याकामेन यत्कार्यं नरेण सुविपश्चिता ॥

बहिः स्नानं नरः कृत्वा कृतकृच्छ्रे दपूजनः ।

ऋग्वेदं शृणुयाच्चित्त्यं मासद्वयमतन्दिनः ॥

चैत्रादारभ्य धर्मं चैत्रं नित्यं नक्तागतो भवेत् ।

ततो नृपवर प्राप्ते ज्यैष्ठ्ये चरमेऽहनि ॥

वासोयुगं हिरण्यं च तथा धेनुं पयस्विनीं ।

वृत्तपूर्णं कांस्यपात्रं सहिरण्यं च दक्षिणं ॥

आषाढादिषु मासेषु यजुर्वेदव्रतं चरेत् ।

अश्विनादिषु मासेषु सामवेदव्रतं चरेत् ॥

तथाप्यथर्वव्रतं नाम पौषादिषु विधीयते ।

सर्वेषु मर्त्यकर्मण्यं ऋग्वेदव्रतकोर्त्तितं ॥

वेदात्मनो वासुदेवस्य पूजां

कृत्वा नरो वादयवत्तराणि ।

विष्णोर्लोकं याति लोकैर्विशिष्टं
यस्मिन् प्राप्ते सर्वदुःखं जहाति ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्त वेदव्रतं ।

— ००० —

मार्कण्डेय उवाच ।

इदमन्यत् प्रवक्ष्यामि चतुर्मुक्तिव्रतं तव ।
चैवस्यामलपक्षे तु सोपवासो जितेन्द्रियः ॥
वासुदेवन्तु संपूज्य ब्राह्मणाय विचक्षणः ।
दक्षिणार्थन्तु वै दद्याद्द्रव्यं यज्ञोपयोगिवित् ॥
सहस्रार्थन्तु संपूज्य वैशाखे धर्मवत्सल ।
चत्रियाय तथा दद्याद्द्रव्यं सांघातिकं शुभं ॥
प्रद्युम्नं पूजयित्वा तु ज्येष्ठे मासि द्विजोत्तम ।
वैश्याय दद्याद्वाणिज्ये द्रव्यं यदुपयुज्यते ॥
कृत्वानिरुद्धपूजान्तु मास्याषाढे यथाविधि ।
कर्णोपकरणं(१) द्रव्यं दद्याच्छूद्राय गार्गव ॥
मासैश्चतुर्भिर्भवति पारणं प्रथमं द्विज ।

कृत्वा मरस्त्रिष्वथ पारणानि
लोकं समाप्नोति पुरन्दरस्य ।
तत्रोष्य राजन् सविराज्यं कालं
मानुष्यमासाद्य भवेत् समृद्धः ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं वर्षव्रतं ।

(१) कामाय कारकमिति पुरुषाकारं पाठः ।

मार्कण्डेय उवाच ।

इदमन्यत् प्रवक्ष्यामि चतुर्भूतिव्रतन्तव ।
 नित्यश्चतुर्षु मासेषु यावणाद्येषु यादव ।
 चतुःसागरचिह्नानि पूर्णकुम्भास्त, पूजयेत् ।
 चतुरात्मा हरिर्ज्ञेयः सागरात्मा विचक्षणैः ॥
 ज्ञानं समाचरेन्नित्यं नदीतोयेन यादव ।
 होमश्च प्रत्यहं कुर्यात् शततं तेलवर्जितं ॥
 कार्तिकस्यावमानाङ्गि पूजयित्वा दिज्जीतमान् ।
 तैलं दत्त्वा तु विप्राय नाकपृष्ठे महीयते ।
 सर्वं कामं सगृह्यस्य यज्ञस्य लभते फलं ॥

मानुष्यमासाद्य महीपनिध
 भुक्त्वा महीं सागरमेखलास्तां ।
 तत्रापि धर्मस्य मनोनिविष्टो
 भवत्यारोग्यं बलेन युक्तः ॥

इति विष्णुधर्मोत्तिरोक्तं सागरव्रतं ।

— ००० (ii) ००० —

मार्कण्डेय उवाच ।

इदमन्यत् प्रवक्ष्यामि चतुर्भूतिव्रतन्तव ।
 वासुदेवस्य गङ्गुस्तालः सङ्घर्षणस्य च ॥
 प्रद्युम्नस्य तथा चिह्नं मकरो व्यादिताननः ।
 देवानिरुद्धो धर्मज्ञः ऋणकेतुः प्रकीर्तितः ॥
 पीतं नीलं तथा श्वेतं रक्तञ्च यदुनन्दन ।

तेजान्तु कथितं वासः पताका तादृगिष्यते ॥
 यस्य देवस्य यच्चिह्नं स चाकना प्रकीर्त्तितः ।
 पताका तादृशी तस्य बसनस्तस्य तादृशं ।
 चैत्रेषु प्रत्यहं मासि गरुडं पूजयेन्नरः ॥
 पीतेन गन्धनैवेद्यमाख्यवस्त्रादिना द्विज ।
 वैशाखे च तथा मासि तालं संपूजयेत्तदा ॥
 नीलेन गन्धनैवेद्यमाख्यवस्त्रादिना द्विज ।
 ज्येष्ठे च प्रत्यहं मासि मकरं पूजयेत्तदा ॥
 श्वेतेन गन्धनैवेद्यमाख्यवस्त्रादिभिर्द्विज ।
 ऋष्यं संपूजयेद्देवं मास्याषाढे यथाविधि ।
 रक्तेन गन्धनैवेद्यमाख्यवस्त्रादिना द्विज ॥
 बहिः स्नानं तथा कुर्यादक्षिसंपूजनं तथा ।
 नित्यञ्च कुर्याद्देर्मन्त्रं तथा ब्राह्मणभोजनं (१) ।
 पारनार्थं तथा कुर्यान्नक्तं तैलविवर्जितं ॥
 षडःशयी तथा च स्याद् ब्रह्मचारी सदा भवेत् ।
 व्रतमेतन्नरः कुर्यात् सम्यग्नामचतुष्टयं ॥
 ब्राह्मणान् पूजयेच्छतथा आषाढे चरमेऽहनि ।
 वस्त्राण्युक्तानि धर्मज्ञ दद्यादप्रेषु दक्षिणं ॥
 कृत्वेकं पारणं राजन् स्वर्गलोके महीयते ।
 द्वितीयं पारणं कृत्वा शक्रलोके महीयते ॥
 तृतीयं पारणं कृत्वा ब्रह्मलोके महीयते ।
 कृत्वा पारणष्टकम् रुद्रलोके महीयते ॥

(१) ब्राह्मणतर्पणमिति पुस्तकान्तरं पाठः ।

विष्णुलोकमवाप्नोति कृत्वा द्वादश पारणं ।

ध्वजव्रतं द्वादशवत्सराणि

कृत्वा नरो भार्गववंशसुख्य ।

सायुज्यमायाति जनार्दनस्य

देवस्य विष्णोः परमेश्वरस्य ॥

इति विष्णुधर्म्मोत्तिरोक्तं ध्वजव्रतं ।

—००७००—

मार्कण्डेय उवाच ।

इदमन्यत् प्रवक्ष्यामि चतुर्भूतिव्रतम् ।

शङ्खचक्रं गदापद्मं चतुराङ्गम् प्रकीर्तितः ॥

वासुदेवः स्मृतः शङ्खः चक्रः सङ्घर्षणस्तथा ।

प्रद्युम्नश्च गदापद्ममनिरुद्धो जगद्गुरुः ॥

श्यावणादिषु मासेषु वहिः क्वातस्तु, नक्तभाक् ।

तेषां तु पूजनं कुर्यात् प्रतिमासमनुकमात् ॥

गन्धमाल्यनमस्कारदीपधूपामृतसम्पदा ।

ततस्तु कार्तिकस्यान्ते समाप्ते तु तथा व्रते ॥

मार्कण्डेयान् भोजयेद्भक्त्या दद्याच्छ्रद्धया च दक्षिणां ।

कांस्यपात्रं सप्तत्वं ससुवर्णं तथैव च ।

कृत्वा व्रतं मासचतुष्टयं

प्राप्नोति लोकं विदग्धेश्वरस्य ।

मानुष्यमासाद्य तथैव पयात्

वसुधैरेवो भवतीह वीरः ॥

इति विष्णुधर्म्मोत्तिरोक्तं आयुधव्रतं ।

ब्रह्मीवाच ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि सर्वाभ्युदयवर्धनं ।
 यत्कृत्वा जायते राजा सार्वभौम इहानघ ॥
 मासे नभसि संप्राप्ते नक्ताहारी जितेन्द्रियः ।
 प्रातः स्नायी मदाध्यायी अग्निकार्यपरायणः ।
 देवीं संपूजयेद्दत्तं बिल्वपुष्पद्रागचम्पकैः ॥
 धूपस्तु गुग्गुलुं दद्यात्सैवेयं घृतपाचितं ।
 क्षीरान्नं दधिभक्तञ्च अथवा शाकयावकं ॥
 जपञ्च कुर्यान्मन्त्रस्य सहस्रमथवा शतं ।
 देव्यास्तत्र समर्प्यत यावत् पूर्णं व्रतश्रवेत् ॥
 पूर्णं व्रते ततोऽवत्स कन्याचार्यद्विजस्त्रियः ।
 भोजयेत् पूजयेच्छक्त्या हेमगीचरभूषणैः ॥
 अभावात्तन्त्रजप्यञ्च नित्यं कार्यं नृपोत्तम ।
 यः कुर्यात् शततं भक्त्या सापि तत्तुल्यतामियात् ॥
 न च व्याधिजरामृतान् भयश्चारिसम्भवं ।
 जायते देवि भक्तस्य अन्ते च फलमव्ययं ॥

अत्र मन्त्रपदानि भवन्ति । ओं नन्दने नन्दनि सर्वार्थसा-
 धनी नमः । मूलमन्त्रः । ओं नन्दने हृदयाय नमः, हृदयं ।
 नन्दिनो शिरसे नमः, शिरः । सर्वार्थे नमः । शिखा ।
 ओं प्रथमाधिनो नमः, कवचं । ओं नमः, ङ्ग फट्, अस्त्रं ।
 ओं नेत्राय नमः । ओं नन्दिनो उपचारहृदयं ।

तृतीयायाश्च पञ्चम्यां चतुर्थ्यामष्टमीषु च ।

नवम्यां पीर्णमास्थामेकादश्यां द्वादशीषु च ।
 षष्ठ्यां सा चैव विद्येया पूजनीया विशेषतः ॥
 नन्दामुद्दिश्य यो दद्याच्छ्रावणे गौतमं सितं ।
 स सभेदिष्टकामार्थं देवीलोकञ्च प्राप्नुतं ॥
 नभस्येतां समुद्दिश्य दद्याद्वा काञ्चनं पिवा ।
 स त्रजेद्भूतपापस्तु नन्दालोकञ्च निर्भयं ॥
 पाश्चिने नवरात्रञ्च उपवासमयाचितं ।
 कृत्वा देवीं प्रपूज्याथ षष्ठ्यामपरेऽहनि ॥
 हेमपुष्पमणिर्वस्त्रं नानाचित्रविभूषितं ।
 दानञ्च काञ्चनं देयं नन्दायै स्वार्थमिद्वये ॥
 विधूतपापसङ्घातः सर्व्वकामसमन्वितः ।
 गच्छन्ति तन्तु लोकं वै यच्च देवी सुरारिहा ।
 वसते कल्पकोटिस्तु षष्ठ्यरोगणसेवितः ॥
 नन्दतेप्यागतस्यात्र पृथिव्यामेकराष्ट्रं भवेत् ।
 कार्तिके पूजयित्वा तु देवीं जातीगजाङ्गये ॥
 अन्नदानं ददद्दिप्रे कन्यासु स्त्रीष्वथापि वा ।
 श्वेतानि चैव वस्त्राणि तथा देयानि दक्षिणा ॥
 सुच्यते सर्व्वपापैस्तु जन्मान्तरकृतैरपि ।
 इहैव जायते योगी परत्र पदमव्ययं ॥
 मार्गे तु विधिवत्स्नात्वा देवीं पूज्य च कुङ्कुमैः ।
 नैवेद्यं घृतपूपाद्य देयाः कन्यासु च द्विजे ॥
 भोजयेद्दद्यादेहस्य वस्त्रैः कीटकुलीद्वयैः ।
 प्राप्नुयात्सर्व्वकामांश्च सर्व्वपापैः प्रमुच्यते ॥

(१०५)

पीबे देवीं समाधाय जलजैरभिपूजयेत् ॥
 नैवेद्यं शालिभक्तञ्च कन्यां सञ्जीव्य दत्तयेत् ।
 पीतवस्त्रैस्तथा शय्या देव्या देयातिशोभना ॥
 अनेन विधिना वत्स साक्षाद्देवी प्रसीदति ।
 ददाति कामिकान् भोगान् अन्ते च स्वपुरं नयेत् ॥
 माघे तु पूजयेद्देवीं कुन्दजस्रग्भिरादरात् ।
 कुङ्कुमेन सदर्पेण तथा सप्तपलेपितं ॥

सदृश्येण कस्तुरिकासहितेन ।

आपितां विधिवत्पूर्वं ततः कन्यास्तु पूजयेत् ।
 दिजांश्च चण्डिकां भक्त्या विधिवत्तपायमेः ।
 दक्षिणां तिलहोमश्च यथाशक्त्या प्रदापयेत् ॥
 विधूतपापकलिकः सर्वभोगसमन्वितः ।
 विग्रहं बह्वपुत्रश्च जायते नरसत्तमः ॥
 देहात्ते नन्दिनीलोकं सर्वदेवनमस्कृतं ।
 प्रयाति नात्र मर्ये हो अनेन विधिना नृप ॥
 फाल्गुने पूजयेद्देवीं कुसुमैः सहकारकैः ।
 तथा निवेद्या भक्ष्याणि गर्करामधुना सह ॥
 भोजयेत्कन्यकान् यिषान् दक्षिणामितवासमी ।
 अनेन जायते भोगी देवीलोकश्च गच्छति ।
 सम्प्राप्ते चैवमामे तु देवी पूज्या दमानकैः ॥
 नैवेद्यं सहस्रं देया तथा कन्याश्च भोजयेत् ।
 स्त्रियश्च रक्तवस्त्रैश्च पूजितव्याः (१) यथाविधि ॥

(१) दक्षितया इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

अनेन सर्वकामान् वै प्राप्नुयादविचारणात् ।
 देवीलोकं व्रजेहत्स यत्र भोगा निरन्तराः ॥
 वैशाखे पूजयेद्देवीं पुष्पैर्वर्णकारजैः ।
 नैवेद्यं सक्तवः खण्डं कन्यां भोज्याय दत्तयेत् ।
 शुभानि हेमच्छाणि देयानि द्विजसत्तमैः ॥
 देवीन्तु प्रणमेहत्स सर्वदेवेष्वनूत्तमां ।
 ज्यैष्ठ्ये तु शङ्खरी पूज्या रक्तागोककरगटकैः ॥
 तथा देयञ्च नैवेद्यं छतपूरैश्च कन्यकाः ।
 भोजनीयास्तथा दत्त्वा गोभृदानादिभिः शुभैः ॥
 जलकुम्भास्तथा देयाः सम्पूर्णा वा सिताम्भसा ।
 अनिन मारुणान् भोगान् तेषां क्षिप्रं प्रयच्छति ॥
 आषाढे पूजयेद्देवीं पद्मैर्नीलोत्पलैर्हृलैः ।
 नैवेद्यं शर्करायुक्तं दधि भक्तञ्च पायसं ।
 कन्या द्विजा स्त्रियो भोज्या दत्तयेच्च तथार्चनात् ॥
 नामाहेमाङ्गरागाद्यैस्तिलभुग्यैः समौक्तिकैः ।
 पूज्या भगवती शक्त्या सर्वकामप्रसिद्धये ॥
 नन्दा सुनन्दा कनका उभा दुर्गा त्रिमूर्ती ।
 गौरी योगेश्वरी श्रिता नारायणी सुनामिका ॥
 अम्बिकेति च नामानि यावन्नादादशकृत्तमां ।
 सङ्कीर्त्तयन्ति उत्थाय ये नरा धीतकल्मषाः ॥
 भवन्ति नरशार्दूल पृथिव्यां धनसङ्गलाः ।
 एतानि पथि संग्रामे रिपुपीडासु नित्यशः ॥
 समुत्तरति दुर्गाणि चर्चिकेति सुशोभनम् ।

व्रतानां प्रवरं कार्यं चर्षं वा पादमेव वा ॥
मासं वापि प्रदातव्यं श्रावणादिक्रमेण तु ।

इति देवीपुराणोक्तं नन्दाव्रतं ।

—००(१,००)—

गौरमुख उवाच ।

देवकी नाम राजेन्द्र देवकस्याभवत् सुता ।
अनपत्या तपस्तेपे पुत्रार्थं किल भामिनौ ॥
भार्या सा वसुदेवस्य सत्यधर्मपरायणा ।
न च तुष्यति गोविन्द तपस्तामाह भार्गवः ॥

भार्गव उवाच ।

किमर्थन्तप्यते भद्रे तपः परमदुःष्करं ।
कीर्थस्तावभिलषितो वद कुत्र तवेप्सितं ॥

देव्युवाच ।

अपुत्राहं हिजयेष्ठ पतुर्मैनास्ति सन्ततिः ।
साहमाराध्य गोविन्दं पुत्रमिच्छामि शोभनं ॥
तपस्तावत्करिष्यामि परमेण समाधिना ।
यावदाराधितो विष्णुर्दास्यत्परिमतम्बरं ॥

भार्गव उवाच ।

गोविन्दाराधने यत्नो यदि ते कुलनन्दनि ।
तदिदं व्रतमास्याय तोषयस्व जनार्दनं ॥

प्रथमे कान्तिकस्याङ्गि सम्प्राप्ते देवकि स्वयं ।
 पञ्चगव्यकृतस्नानः पञ्चगव्यकृताशनः ॥
 बाणपुष्पैः समभ्यर्च्य वासुदेवमजस्विभुम् ।
 दत्त्वा च चन्दनं धूपं परमात्रं निवेदयेत् ॥
 घृतं निवेदयेद्विप्रे गृह्णीयाच्च ततो व्रतं ।
 अद्यप्रभृत्यहं मासं विरतः प्राणिनां बध्नात् ॥
 असत्यवचनात्स्तेयाश्वधुमांसादिभक्षणात् ।
 स्वपन् विबुध्यन् गच्छेत् स्मरिष्याम्यहमश्रुतं ॥
 परापवादं पैशून्यं परपीडाकरस्तथा ।
 सञ्छास्तदेवतायश्च निन्दामन्यस्य वा भुवि ॥
 न वक्ष्यामि जगत्कस्मिन् पश्यन् सर्वगतं हरिम् ।
 अत्यन्तो वाभिगन्तोऽपि यस्मिन् वोढुं शक्यमिति ॥
 कुर्वीत नियमस्तस्य त्यागो धर्मोऽपहृद्ये ।
 कृत्वैव पुरतो दिग्गो निर्हृतिं पापतः शुभे ।
 नैवेद्यं स्वयमश्रीयात्स्त्रीनो नित्यमुदङ्मुखः ॥
 मार्गशीर्षे तथा मामि जातीपुष्पैर्जनाहृतं ।
 समभ्यर्च्य पुनर्धूपं चन्दनञ्च निवेदयेत् ॥
 परमात्रञ्च देवाय विप्राय च पुनर्घृतं ।
 दत्त्वा तथैव गृह्णीयाद्विग्रहः योऽस्य रोचते ॥
 तथैव नक्तं भुञ्जीत नैवेद्यं कुलनन्दनि ।
 सर्वेष्वेव चतुर्मासं पञ्चगव्यादिकं समं ।
 पुष्पधूपपङ्कारेषु विगेषो दक्षिणासु च ॥
 स्नानप्राशनयोः साम्यन्तथैव नक्तभोजनं ।

अर्चयेत् प्रतिमासञ्च येः पुष्पीस्तानि मे शृणु ॥
 ये च धूपाः पदातव्या नैवेद्यान्नञ्च यत्तथा ।
 बाणस्य जातिकुसुमैः तथैव च मुकुन्दजैः ॥
 कुन्दातिमुक्तकै रक्तै रक्तवीरैश्च रक्तकैः ।
 श्वेतैः शुभ्रैर्मल्लिकायास्तथा मल्लिकया ततः ॥
 दधिपद्माभकेतव्याः पद्मरक्तोत्पलेन च ।
 क्रमेणाभ्यर्चितो विष्णुर्हृदाति मनसि स्थितं ॥
 कार्तिके मार्गशीर्षे च धूपं पीपे च चन्दनं ।
 माघफाल्गुनचैत्रेषु दद्याद्विष्णोस्तथा गुरुं ॥
 वैशाखादिषु मासेषु त्रिषु देवकि भक्तितः ।
 कर्पूरं देवदेवान् गुग्गुलुं श्यावणादिषु ॥
 कार्तिकादिषु मासेषु परमात्रं शुभे त्रिषु ।
 कामारं माघपूर्वेषु यवान्नञ्च ततस्त्रिषु ॥
 घृतस्तिलान् जलघटं हिमालयमथवा व्रतो ।
 प्रतिमासं तथा दद्याद्वाङ्मनाय शुभव्रते ॥
 यथोक्तनियमानाञ्च ग्रहण प्रतिमामिकं ।
 कुर्वन् जगत्पतिर्विष्णुः प्रीयतामिति मानवः ॥
 योषिदप्यमलप्रज्ञा व्रतमेतद्यथाविधि ।
 करोति मासान् सकलान् अवाप्नोति मनोरथान् ॥
 व्रतेनाराधितो विष्णुरनेन जगतःपतिः ।
 ददात्यभिमतान् कामान् क्षिप्रकालेन भामिनि ॥
 धान्यं यशस्यमायुष्यं सौभाग्यारोग्यदस्तथा ।
 व्रतमेतत् प्रियतरं व्रतेभ्योऽव्यक्तजन्मनः ॥

ब्रतेनानेन शुद्धात्मा पदेनैकेन साधवः ।
 सुखदृश्यो न मन्देहो दीपेन वाग्यतस्थितः ।
 कायवाङ्मनसा बर्हा करोत्येतन्महाव्रतं ।
 शुद्धानाममन्त्रो देवो दृश्य एव जनार्दनः ॥
 तस्मिन्नेकाग्रचित्तानां प्राणिनां वरवर्णिनि ।
 प्राप्नुवन्ति प्रशस्तेन मुक्तिभाजो विभूतयः ॥
 यथा कल्पतरुं प्राप्य यद्यदिच्छति चेतसा ।
 तत्तत्फलमवाप्नोति यथा सम्प्राप्य तं विभु ॥
 शुभव्रतमिदं तस्मात् महापातकनाशनं ।
 चाराधनाय कृष्णस्य कुरु देवकि पावनं ॥
 तस्मिंस्तीर्णं हृषीकेश नूनं यास्यति दर्शनं ।
 दृष्टे चाभिमतं यत्ने तदशेषं भविष्यति ॥
 इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं विष्णुदेवकीव्रतं ।

—000—

नारद उवाच ।

भगवन् श्रोतुमिच्छामि खानदानव्रतक्रियाः ।
 हेमन्ते गिरिरे चैव यथा पूज्यो जनार्दनः ॥
 मार्गशीर्षे तथा पुजे माघे चैवाथ कार्त्तिके ।
 यत्कलं प्राप्यते पुंभिः प्रचम्य मधुघातिनं ॥

ब्रह्मोवाच ।

नृसु वक्तुं महापुण्यं हेमन्तगिरिरावृभौ ।
 यत्र संपूजितः कृष्णः कल्पेनापि व्रतयति ॥

मार्गशीर्षे सिते पक्षे प्रतिपत्प्रभृतिक्रमात् ।
 व्रतचर्यां विष्टक्रीयाद्ये मन्ते शिशिरात्मिकां ॥
 स्नात्वाभ्यर्च्य हृषीकेशं प्रणिपत्य नरो व्रतौ ।
 वरश्च याचयेद्भक्त्या चराचरमुरुस्ततः ॥
 भगवन् चपला ह्येषा प्राणिनां प्राणसंस्थितिः ।
 ध्रुवं मृत्युर्मनुष्याणां दुर्विज्ञेयं कदा भवेत् ॥
 अतस्त्वां प्रार्थयाम्येव वरमेतदधीक्षज ।
 यथा खण्डं व्रतं न स्यात् प्रसन्ने त्वयि मे विभी ॥
 व्रतमेतन्मया देव गृहीतस्तत्र शासनात् ।
 जीवतोपि मृतस्यापि परिपूर्णं भवत्विति ॥
 एवमभ्यर्च्य लोकेशं चराचरगुरुं हरिं ।
 ततो नु ब्रूहिमान् कुर्यात् व्रतचर्यां च शेशिरीं ॥
 मार्गशीर्षस्य कृष्णादौ प्रतिपत्प्रभृतिं नरः ।
 अर्हिसकः क्रियायुक्तः प्रातःस्नाथी सदा भवेत् ॥
 अर्चयेद्देवदेवेशं मध्याह्ने केशवं सदा ।
 विलिप्य कुङ्कुमेशीरं चन्दनेनाथ शक्तितः ॥
 पूजयेन्मालतीपुष्पैर्भृङ्गबिल्वादिकेन च ।
 दीपं सद्दीप्कृतं दद्यात्सद्युतं गुग्गुलुमृहेत् ॥
 शाल्योदनं दधियुतं नैवेद्यां मयिवेदयेत् ।
 प्रथमेष्ट तया भक्त्या शिरसा केशवं मुहुः ॥
 अनेन विधिना चैव संपूज्य गरुडध्वजं ।
 ॐ नमः केशवायेति जपेदष्टोत्तरं शतं ॥
 एवं पञ्च सुराध्यक्षं मार्गशीर्षं ततो नरः ।

अर्कास्यपात्रे भुञ्जीत दत्त्वा भिक्षां दिजाय च ॥
 वर्जयेन्मधुमांसानि सदा ध्यानं कुभीजनं ।
 अमृतस्त्रेयपारुथं सम्पर्कं पतितैः सह ॥
 गवाङ्गिकं सदा दद्यात् क्षितिगायो भवेन्निशि ।
 सदाभिवन्दे दश्वत्थङ्गं, कं ज्ञानप्रदन्तथा ॥
 एव पृथे तथा माघे फाल्गुने च नरो व्रती ।
 व्रतं समापयेच्छक्त्या नच कर्षेत् कथञ्चन ॥
 हेमन्ताद्यतुरोमामान व्रतेनानेन नर्त्तयेत् ।
 विशेषोऽत्र विधिस्तत्र द्वादशी च पृथक् शृणु ॥
 मार्गशीर्षे शुभे पक्षे एकादश्यामुपिषितः ।
 पूजयेज्जगतामीशं केशवं कल्पपापहं ॥
 द्वादश्यां स्नापयेद्देवं क्षीरेण पुरुषोत्तमं ।
 रमेण सर्पिषा चैव पञ्चगव्येन च क्रमात् ॥
 द्वादश्यां स्नापयेद्देवं पृथे माघे च फाल्गुने ।
 नैवेद्यं पुष्पधूपपादैः पूजयेत्ततो हरिं ॥
 प्रणम्य गिरमा देवं केशवं केशिपातन ।
 भक्त्या कृताञ्जलिभूत्वा याचयेत् पशुं वरं ॥
 मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनञ्च केशव ।
 यत्पूजितं मया देव परिपूर्णतदस्तमे ॥
 एवमभ्यर्च्य देविशं पण्डित्य पुनः पुनः ।
 ततोऽनुभोजयेद्दिप्रान भक्त्या दद्याच्च दक्षिणां ॥
 अनेनेव विधानेन पृथे माघे च फाल्गुने ।
 समाप्ता प्रथमेदीशं प्रार्थयेत् पूज्य वै हरिं ॥

भोजसेषं द्विजान् भूयस्तेभ्योदद्याच्च दक्षिणां ।
 ग्रीहिवस्त्वितितान् माप्येदेद्यान्मासक्रमेण तु ॥
 द्वादश्यां देवमुद्दिश्य द्विजायेभ्यश्च भक्तिः ।
 समाप्येवं व्रतं भक्त्या नाम्ना त्वनरकत्रयः ॥
 न गच्छेन्नरकं याति यत्रास्ते गरुडध्वजः ।
 व्रतमेतन्महापुण्यं व्रतेभ्योऽभ्यधिकं मुने ॥
 दुःस्करञ्चलचित्तानां महापातकनाशनं ।
 सुरापी ब्रह्महृता स्तेयो गुरुगामो सदानृती ॥
 कृत्वा नरो व्रतं भक्त्या सद्यः पापात् प्रमुच्यते ।
 महर्षिभिः सदाचीर्णं भृगुतिभुजगोत्तमैः ॥
 ज्ञानार्थिभिर्महाभागैर्व्रतमेतत् प्रपूजितं ।
 स्वर्गन्ते ह्यनयं प्राप्तः सम्पूज्य गरुडध्वजं ॥
 व्रतेनानेन देवेगो दत्त्वाद्यैर्ऋषिभिस्तुतः ।
 भार्गवेणाश्विनिं प्राप्य अक्रूरेण ययातिना ॥
 परितोय सुगन्धेष्टं व्रतेनानेन केगवं ।
 सदा नमं परं स्थानं वैष्णवं मुक्तिलक्षणं ॥
 अनेनार्च्यविधिं भक्त्या सम्प्राप्ते सनकादिभिः ।
 सर्वकामपदं पुण्यं नाम्ना त्वनरकं व्रतं ॥
 कृत्वा श्रुत्वा तथा ध्यात्वा न गच्छेन्नरकं नरः ।

इति विष्णुरहस्योक्तमनरकव्रतं ।

—०००—

चैत्रादिचतुरो मासान् कृके बुध्यादयश्चितं ।

व्रतान्ते मणिकन्द्यान्नववस्त्रममन्दितं ॥
तिलपात्रं हिरण्यं च ब्रह्मलोके महीयते ।
कल्पात्ते भूपतिर्नीलमानन्दव्रतमुच्यते ॥

इति मत्स्यपुराणोक्तमानन्दव्रतं ।

पौर्णमास्यां तथापाङ्गणं शिवं संपूज्य यत्नतः ।
सपत्नीतं शिवे दद्याच्छिवभक्तांश्च भोजयेत् ॥
पुनरेव च कार्त्तिक्यां पूज्य गन्धं क्षमापयेत् ।
यतीनां दक्षिणां दत्त्वा सूत्रवस्त्रादिपूर्विकां ॥
यः कुर्यान्नक्तदण्डेन चातुर्मास्यां पवित्रकं ।
कल्पकोटिसहस्राणि रुद्रलोके महीयते ॥
पुण्यक्षयात्परिभ्रष्टः चतुर्वेदः प्रजायते ।
इच्छया तु भवेद्राजा गुरुरूपसमन्वितः ॥

इति शिवधर्मोक्तं शिवोपवीतव्रतं ।

— ००० (1000) —

प्रतिमासं प्रवक्ष्यामि शिवव्रतमनुत्तमं ।
धर्मकामार्थभोजनार्थं नरनार्यादिदेहिनां ॥
पुण्ये मासे तु सम्प्राप्ते यः कुर्यान्नक्तभोजनं ।
सत्यवादी जितक्रोधः शालिगाधूमगोरसैः ॥
पचयोरष्टमीं वज्रादुपवासेन यत्नयेत् ।
त्रिसंश्रमर्चयेद्दीपमम्बिकायै च भक्तितः ॥

भूमिशय्याश्च मासान्ते पौर्णमास्यां वृथादिभिः ।
 कृत्वा स्नानं महापूजां शिवे यज्ञात् प्रकल्पयेत् ॥
 नैवेद्यं यावत्प्रस्थं क्षीरमिदं निवेदयेत् ।
 भोजयित्वा द्विजानष्टौ शिवभक्तान् सदक्षिणान् ।
 शिवे गोमिथुनश्चैव कपिलश्च निवेदयेत् ॥
 अलङ्कृत्य सूरूपञ्च तस्य पुण्यफलं शृणु ।
 सूर्यकोटिप्रतीकाग्रैर्विमानैः सार्वकामिकैः ॥
 रुद्रकन्यासमाकीर्णमहावृषभसंयुतैः ।
 सद्गीतनृत्यवाद्यैश्च अम्बरीगणसेवितैः ।
 चामरैर्धूपमाल्यैश्च स्तूयमानः सुरासुरैः ॥
 त्रिनेत्रः शूलपाणिश्च शिवैश्वर्यसमन्वितः ।
 गच्छेच्छिवपुरं रम्यं यत्रास्ते शङ्करः स्वयं ॥
 यावत्तद्ग्रीमसङ्क्रान्तं तत्पशस्तिः कुलेषु च ।
 तावदयुगमहस्त्राणि सुखी शिवपुरं व्रजेत् ॥
 त्रिःसप्तकुलजैः सार्धं भोगान् भुङ्क्ते यथेष्टितान् ।
 ज्ञानयोगं समासाद्य स तत्रैव विमृश्यते ॥
 इत्येष वः समाख्यातः संसारार्णववर्तिनां ।
 शिवमोक्षक्रमोपायः शिवायमनिषेविणां ॥
 माघमासे तु संप्राप्ते यः कुर्यात्प्रक्तभोजनं ।
 कृशरां वृत्तसंयुक्तां भुञ्जानः सञ्चितेन्द्रियः ॥
 सोपवासश्चतुर्दश्यां भवेदुभयपक्षयोः ।
 शिवाय पौर्णमास्यान्तु प्रदद्याद्भृतकस्वल्पं ॥
 कृष्णं गोमिथुनश्चात्र सूरूपं विनिवेदयेत् ॥

शेषं कृत्वा यद्योद्दिष्टं पूर्वोक्तं फलं लभेत् ।
 इन्द्रनीलप्रतीकाशैर्विमानैः शिखिसंयुतैः ॥
 गत्वा शिवपुरं रम्यं भुक्त्वा भोगान् यथेष्टान् ।
 सम्प्राप्ते फाल्गुने मासे यः कुर्यान्नक्तभोजनं ॥
 श्यामाकक्षीरनीवारैर्जितकोधोजितेन्द्रियः ।
 चतुर्दश्यामष्टम्यामुपवासरतो भवेत् ॥
 पौर्णमास्यां महास्नानं पञ्चगव्यघृतादिभिः ।
 वस्त्रोक्तायादिमृद्भिश्च गोमूत्रगोमयादिभिः ॥
 त्वग्भिश्च क्षीरहृत्वाणां धातुगन्धादिभिस्तथा ।
 दद्याद्दोमिथुनं भक्त्या ताम्नाभं परमेष्ठिने ।
 शेषमन्यद्योद्दिष्टं प्राप्नोति सुमहत् फलं ।
 पुष्करागप्रतीकाशैर्विमानैर्गजसंयुतैः ॥
 गत्वा शिवपुरं रम्यं पूर्वोक्तं लभते फलं ।
 चैवमासे तु सम्प्राप्ते यः कुर्यान्नक्तभोजनं ।
 पिष्टकं पयसा युक्तं भुञ्जानः संयतेन्द्रियः ॥
 दद्याद्दोमिथुनञ्चात्र पाटलं समलङ्कृतं ।
 शिवायातिसुरूपञ्च शेषं पूर्ववद्वारेत् ॥
 पुष्करागप्रभैर्योनैर्दिव्यैश्च रथसंयुतैः ।
 गत्वा शिवपुरं रम्यं दुःस्मृतं त्रिदशेरपि ॥
 वैशाखे मासि सम्प्राप्ते यः कुर्यान्नक्तभोजनं ।
 पिष्टकं पयसा युक्तं भुञ्जानः सञ्जितेन्द्रियः ।
 गोष्ठशायी शिवध्यायी निशायां वस्त्रमेकधृक् ॥
 नियमञ्च यद्योद्दिष्टं सामान्यं सर्वमाचरेत् ।

वैशाखपौर्णमास्याञ्च कुर्यात् स्नानं घृतादिभिः ॥
 शिवायालङ्कृतं श्वेतं दद्याद्गोमिथुनं शुभं ।
 हंसकुन्देन्दुवर्णाभिर्महायानैरलङ्कृतैः ॥
 श्वेतवृषभसंयुक्तैः प्रयातोश्वरमन्दिरं ।
 सर्वाभिः सर्वरूपाभिः स स्त्रीभिः परिवारितः ॥
 नीलोत्पलसुगन्धाभिः क्रीडते कालमक्षयं ।
 ज्येष्ठे मासे तु सम्प्राप्ते यः कुर्यान्नक्तभोजनं ॥
 शाल्यत्रं पयसा युक्तमाज्यक्षीरेण संयुतं ।
 वीरामनो निगार्ह्यस्याद्दिना गामनुगच्छति ॥

अनुपविश्यावस्थानं वीरासनं ।

हितकारी गवां नित्यमहङ्कारविवर्जितः ।
 पौर्णमास्याञ्च पूर्वोक्तं कुर्यात् स्नानादिकं विधिं ॥
 देयं गोमिथुनञ्चात्र धूम्रवर्णमलङ्कृतं ।
 नीलोत्पलसमप्रख्यैर्महायानैर्मनीरमैः ॥
 महासिंहनिबद्धैश्च क्रीडते कालमक्षयं ।
 आषाढमासे सम्प्राप्ते यः कुर्यान्नक्तभोजनं ॥
 भूरिखण्डाभ्युसंमिश्रं सक्तुं दद्यात्सगौरमं ।
 दद्याद्गोमिथुनं गौरं शिवायालङ्कृतं शुभं ॥
 सामान्यञ्च विधिं कुर्यात् सर्वं वै प्रत्य चोदितं ।

इति पुष्यमामोदितं ।

शुद्धम्फटिकसङ्काशैर्यानैः सारमवाहनैः ।
 अग्निमादिगुणैर्युक्तः शिववद्विचरेत् स्वयं ॥
 सम्प्राप्ते श्रावणे मासि यः कुर्यान्नक्तभोजनं ।

क्षीरपशिकभक्तेन सर्व्वभूतहिते रतः ॥
 श्वेताम्बपादमोहद्वन्द्वदद्याद्वाहामिधुनं शिवे ।
 सामान्यमखिलं कृपादिभिना यत प्रकाशितं ॥
 सविनिवैमहायानैर्विचित्राश्वनिर्योजितैः ।
 गत्वा शिवपुरन्द्विष्य पूर्व्वीकं लभते फलं ॥
 प्राप्ते भाद्रपदे मासि यः कुर्याद्व्रतभोजनं ।
 हुतशेषत्वं भुञ्जानो व्रतसु ताशितो दिवा ॥
 रात्रौ वासतने वामे सर्व्वभूतान् कृष्णकः ।
 नीलस्कन्धं शृणुयात् शिवाय विनिवेदयेत् ॥
 निगमाकरकराग्र्यैश्चैद्व्यशोभनेः ।
 चक्रवाकमग्रायुते विमानैः सार्व्वकामिकैः ॥
 गत्वा शिवपुरं रम्यममरासरवन्दितम् ।
 प्रकीर्तयेत् महाभोगैर्यथादाहृतसंप्रवम् ॥
 श्र्यामानग्रायुते गामि यः कुर्याद्व्रतभोजनम् ।
 घृताशनपशुञ्जनपसदायामिदंन्दिवः ॥
 शृणुयात् नीलवर्णात्सरोदशं समन्वितम् ।
 विमुच्य भगवद्व्यग्रे गामि ता समलङ्कृतम् ।
 विभिषेपं हि पूर्व्वीकं तस्मै सम्पादयेत् ॥
 प्राणान्ति च परं स्थानं यथाशिवः शिवः ॥
 स्वच्छमौक्तिकसङ्गं शिवन्दोलपयामि ॥
 जीवं जीवकमयुते विमानैः सार्व्वकामिकैः ।
 प्रकीर्तयेत् महाभोगैर्यथादाहृतसंप्रवम् ॥
 एभे च कार्तिके मासि यः कुर्याद्व्रतभोजनम् ।

क्षीरोदनञ्च भुञ्जीत सत्यवादी जितेन्द्रियः ॥
 दद्याद्दोमिथुनञ्चात्र कपिलं कज्जलप्रभं ।
 पूर्वोक्तविधिवत् कृत्वा शिवतुल्यः प्रजायते ॥
 कल्पानलग्नित्वाप्रखैर्महायानैर्मनोरमैः ।
 महामिहकृताटोपैः शिववसेष्टे सुखे ॥
 मार्गगोर्षे शुभे मासे यः कुर्यान्नक्तभोजनं ।
 यवान्नं पयसा युक्तं भुञ्जानः सञ्जितेन्द्रियः ॥
 दद्याद्दोमिथुनं दिव्यपाण्डुरं समलङ्कृतं ।
 शिवाय शेषं पूर्वोक्तविधिना सम्पदमेतत् ॥
 सितपद्मनिभैर्युग्मैः श्वेताश्वरथसंयुतैः ।
 गत्वा शिवपुरं दिव्यं शिवतुल्यबली भवेत् ॥
 अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यं क्षमा दया ।
 द्भिस्त्रानञ्चाग्निहवनं भूयसा नक्तभोजनं ॥
 पक्षयोरुपवासेन चतुर्दश्यशमी क्षिपेत् ।
 इत्येवमादिनियमैराचरेत् शिवव्रतं ॥
 शिवभक्ता तु या नारी भवं मा पुरुषो भवेत् ।
 स्त्रीत्वमत्युत्तमं मा चेत् काङ्क्षति शृणुयाद्भूतं ॥

इति विश्वधर्मीकृतं शैवमहाव्रतं ।

— ००० —

कार्तिके तु शुभे मासे एकभक्तेन वर्त्तयेत् ।
 क्षमाऽहिंसादिनियमैः संयता व्रतचाङ्गिणी ॥
 गुडाल्यमिश्रपिष्टाक्षं मासान्ते विनिवेदयेत् ।

षष्ठ्याश्च चतुर्दश्यां उषवासरतो भवेत् ॥
 इन्द्रनीलप्रतीकाशैर्विमानैः सार्वकामिकैः ।
 वर्षाणामयुतं सायं रुद्रलोके महीयते ॥
 यथावत्सर्वलोकेषु भोगानासाद्य यत्नतः ।
 क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् यथेष्टं पतिमाप्नुयात् ॥
 इत्येवं सर्वमासेषु विधिस्तुल्यः प्रकीर्तितः ।
 एकभक्तोपवासस्य फलस्तु सदृशं विदुः ॥
 यमा सत्यव्या दानं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।
 शिवपूजाग्निहोमश्च सन्तोषश्चेहभाषन ॥
 सर्वव्रतेष्वयं धर्मः सामान्यो दशधाम्भृतः ।
 मार्गशीर्ष शुभे मासे षष्ठपृष्ठं सुनिर्भलं ।
 गन्धमाल्यैरलङ्कृत्य शिवाय विनिवेदयेत् ॥
 षष्ठयुक्तैर्महाया नैरम्परो गणसेवितैः ।
 वर्षायुतगतं सायं शिवलोके महीयते ॥
 पुष्ये मासि पिनाकश्च शूले कृत्वा पिनाकिने ।
 गन्धपुष्पैरलङ्कृत्य शिवाय विनिवेदयेत् ॥
 ताम्रकांस्यादिपात्रे वा दत्त्वा दद्यात्पिनाकिने ।
 महापुष्पकयानेन दिव्यगन्धप्रभावतः ।
 वर्षाणामयुतं सायं रुद्रलोके महीयते ॥
 रथश्चाश्वयुतं माघे दीपमालाप्रगोभितं ।
 पिष्टं लिङ्गममायुक्तं कृत्वा यतनमानयेत् ॥
 महारथोपमैर्यानैः रथेताश्वरथमयुतैः ।
 वर्षायुतं गतं सायं शिवलोके महीयते ॥

फाल्गुने प्रतिमां पैष्टीं कृत्वा चरुसमन्वितां ।
 गन्धमाल्यैरलङ्कृत्य स्थापयेद्दीश्वरालयं ।
 यानैरप्रतिमैर्द्दिव्यैर्गायनाद्यसमाकुलैः ॥
 वर्षायुतशतं सायं शिवलोके महीयते ।
 चैत्रे भवकुमारश्च कृत्वा पुष्पैरलङ्कृतं ।
 स्नाप्य पात्रे यथोक्ते च आनयेच्छिवमन्दिरं ॥
 शरदिन्दुप्रतीकाशैर्विमानैः सार्वकामिकैः ।
 वर्षायुतशतं सायं रुद्रलोके महीयते ।
 तन्दुलादृक्पिष्टेन कृत्वा कैलासपर्वतं ।
 ईश्वरीमासमायुक्तं सर्वधातुविभूषितं ॥
 कन्दरैर्विविधं चित्रं लक्षणप्रस्यसंयुतं ।
 सर्वरत्नसमायुक्तं स्थापयेद्दीश्वरालये ॥
 कैलासव्रतमित्येवं वैशाख्यां यः समाचरेत् ।
 कैलासकल्पयानैः स शिवलोके महीयते ॥
 लिङ्गपिष्टमयङ्कृत्वा ज्येष्ठमासे सवेदिकं ।
 भक्त्या संपूज्य गन्धाद्यैर्वस्त्रयुग्मे न वेष्टयेत् ।
 उपशीभाविशेषैश्च तत्र जागरमाचरेत् ॥
 प्रभाते ध्वजशङ्खाद्यैः शिवाय विनिवेदयेत् ।
 शुक्लस्फटिकसङ्काशैर्विमानैः सार्वकामिकैः ।
 वर्षकोटिशतं सायं शिवलोके महीयते ।
 षष्ठं पिष्टमयङ्कृत्वा आषाढे पिष्टभूमिकं ॥
 सर्वबीजरसैश्चापि संपूर्णं शुभलक्षणं ।
 गृहोपकरणैर्युक्तं सुगन्धोदूखलादिभिः ।

सर्वरत्नसमायुक्तं दासीशय्याद्यलङ्कृतं ।
 एतैः पिष्टमयैः साद्यैः प्रदीपाद्युपशोभितं ॥
 सर्वभक्तसमाकीर्णं गन्धमाल्यैरलङ्कृतं ।
 श्वेतरत्नामितैः पीतैर्ध्वजवस्त्रैः सुशोभितं ॥
 चतुर्विधेनसंयुक्तचरुणा सर्षपेण तु ।
 आषाढे पीर्णमास्यान्तु गृहं स्थाप्य शिवायतः ॥
 सर्वोपकरणोपेतं प्रणिपत्य निवेदयेत् ।
 शतभूमैर्महायानैर्विमानैः सार्वकामिकैः ॥
 वर्षकोटिशतं सायं रुद्रलोके महीयते ॥
 सुधाधातुसमाकीर्णं विचित्रध्वजशोभितं ।
 निवेदयीत सर्वाय आवाये तिलपर्वतं ॥
 स्वच्छेन्द्रनीलसङ्काशैर्धानैरपतिमैः शुभैः ।
 वर्षकोटिशतं सायं रुद्रलोके महीयते ॥
 कृत्वा भाद्रपदे मासे शोभितं धान्यपर्वतं ।
 वितानध्वजच्छत्राद्यैः शिवाय विनिवेदयेत् ॥
 दिवाकरकरप्रख्यैर्महायानैः सुशोभनैः ।
 वर्षकोटिसहस्राणि रुद्रलोके महीयते ॥
 कृत्वा जाययुजे मासि विपुलं शिखिपर्वतं ।
 सुवर्णवस्त्रसंयुक्तं शिवाय विनिवेदयेत् ।
 सुविचित्रैर्महायानैर्वैभोगसमन्वितैः ॥
 वर्षकोटिशतं सायं रुद्रलोके महीयते ।
 सर्वधान्यसमायुक्तं सर्वबीजरमादिभिः ॥
 सर्वधातुसमायुक्तं सर्वरत्नोपशोभितं ।

शृङ्गैःसुभिः संयुक्तं वितानच्छतशोभितं ॥
 गन्धमाल्यैस्तथा धूपैः प्रदीपैश्चातिशोभितं ।
 विचित्रैर्नृत्यगीतैश्च शङ्खवीणादिभिस्तथा ॥
 ब्रह्मघोषैस्तथा पुण्यैर्मङ्गल्यैश्च विशेषतः ।
 महाध्वजाष्टकयुतं विचित्रकुसुमोज्ज्वलं ॥
 मगेन्द्रमेरुनामानं त्रैलोक्याधारमुत्तमं ।
 तस्य मूर्ध्नि शिवं कुर्यात्सर्वदेवसमायुतं ॥
 दैत्यगन्धर्वभूताश्च सिद्धयक्षगणास्तथा ।
 विद्याधराःसरोनागा ऋषयश्च विशेषतः ॥
 शालिपिष्टमयं लिङ्गं रूपह्वत्वा विचक्षणः ।
 देयश्च दक्षिणे हस्ते शूलं त्रिदशपूजितं ॥
 एवं सर्वेषु देवेषु कुर्यादस्त्रं यथाक्रमं ।
 शिवस्य महतीं पूजां कृत्वा चरुसमन्वितं ॥
 पूजयेत्सर्वदेवांश्च दशदिक्षु बलिं हरेत् ।
 व्रतास्ते भोजयेत्पश्चात् शिवभक्तान् सदक्षिणान् ॥
 सव्वीरम्भसमायुक्तं यथाविभवकल्पितं ।
 निवेदयेत् रुद्राय कार्तिके नगमुत्तमं ॥
 यः कुर्यात्सकृदप्येवं तस्य पुण्यफलं शृणु ।
 देवतुल्यगणो भूत्वा गुणरूपसमन्वितः ॥
 शिववद्विचरेन्नित्यं नित्यं भुवनं सदा ।
 सदागमेषु यत्पुण्यं कथितं मुनिभिः पुरा ।
 तत्पुण्यं कीटिगुणितं प्राप्नुयात्तत्र संशयः
 महारत्नप्रभैर्यानैः सव्वीरत्नसमन्वितैः ॥

गीतनृत्यादिवाद्यैश्च अप्सरोभिः समन्वितैः
 सूर्यकोटिसमप्रख्यैर्विमानैर्मरुसम्भवेः ॥
 नरनारीसमाकीर्णैर्गन्धवाहैः शुभेस्तथा ।
 देवदानवगन्धर्वैस्तूयमाना गणादिभिः ॥
 स्वच्छन्दा सर्वगा भूत्वा प्रयातीश्वरमन्दिरं ।
 कल्पकोटिशतं दिव्यं मोदते सा महातपाः ॥
 एवं सर्वेषु देवेषु भोगान् भुक्त्वा यथेष्टितान् ।
 पुण्यक्षयादिहागत्य राजानं पतिमाप्नुयात् ॥
 सुररूपा सुभगा नित्यं भवतीश्वरभाविता ।

इति शिवधर्मीक्ष्णमपरशैवमहाव्रतं ।

— ००० —

श्रीकृष्ण उवाच ।

चैत्रारभ्य पितृस्तीर्थक्षलधारां प्रपातयेत् ।
 वर्षान्ते घृतसंपूर्णान्द्राहर्कनिकां नवां ॥
 एतद्वाराव्रतं नाम सर्वोद्दिगहरं परं ।
 कान्तिमौभाग्यजननं सपत्नीदर्प्यनाशनं ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं धाराव्रतं ।

—
 देवीपुराणे ।

मार्गे रसोत्तमं दद्याद्घृतं पीबे महाफलं ।
 रसोत्तमं जपेत् ॥

तिलाग्राघे मुनिश्रेष्ठ सप्तधान्यानि फाल्गुने ।
 विचित्राणि च वस्त्राणि चैत्रे दद्याद्बिजातये ॥
 वैशाखे द्विज गोधूमान् ज्येष्ठे तोयभृतं घटं ।
 आषाढे चन्दनं देयं सकपूर्वं महाफलं ॥
 नवनीतं नभोमासि कृत्वं प्रौष्ठपदे मतं ।
 गुडगर्करवर्णाढ्यान् लड्डुकानाश्विने मुने ।
 दीपदानं महापुण्यं कार्तिके यः प्रयच्छति ॥
 सत्त्विकामानवाप्नोति क्रमेण तु उदाहृतं ।
 व्रतान्ते गां शुभां दद्यात् सवत्सां कांस्यदीहनीं ॥
 मयुगां सस्रजं वत्स दापयेद्विधिना मुने ।
 देवीं विरञ्चिमादित्यं यिष्णुं वाथ यथाविधि ॥
 स्वभावशुद्धो विधिवत् पूजयित्वा द्विजोत्तम ।
 दातव्या वोतरागे तु कामक्रोधविवर्जिते ॥
 अयाचके सदाचारे विनीते विनयान्विते ।
 गीदानाप्तभते कामान् गोलोकेषु मनोरमान् ॥

इति देवीपुराणोक्तं मासव्रतं ।

वसिष्ठ उवाच ।

शृणु भूपाल यैर्विष्णुर्वतेरागध्यते नरैः ।
 नारीभिश्चापि घोरेऽस्मिन् पतिताभिर्भवार्णवे ।
 समभ्यर्थ्य जगन्नाथं वासुदेवं समाधिना ॥
 एकमश्रति यो भक्तं द्वितीयं ब्राह्मणार्प्य च ॥

करोति केशवप्रीत्यै कीर्तिकं मासमसवान् ॥
 पूर्व्वं वयसि यत्तेन जानता जानतापि वा ।
 पापमाचरितं तस्मान्मुच्यते नात्र संशयः ॥
 अनेनैव विधानेन मार्गशोषं, पि माधवं ।
 समभ्यर्च्यैकभक्तं वै वर्णिभ्यो यः प्रयच्छति ।
 भगवत् प्रीणनार्थाय फलन्तस्य शृणुष्व मे ॥
 मध्ये वयसि यत्पापं योपिता पुरुषेण वा ।
 कृतं तस्माच्च तेनोक्तो विमोक्षः परमात्मना ॥
 तथा चैकैकभक्तं वै यस्तु, गोभ्यः प्रयच्छति ।
 पुण्डुरोकाक्षमभ्यर्च्यै पीषमासे महीयते ॥
 तत् प्रीणनाय यत्पापं वार्षिके तेन वै कृतं ।
 स तस्मान् मुच्यते राजन् पुमान् गोपिदथापि वा ।
 चैमासिकं व्रतमिदं यः करोति नरेश्वर ॥
 स विष्णुप्रीणनात् पापैर्लघुभिः परिमुच्यते ।
 द्वितीये वत्सरे राजन् मुच्यते चोपपातकैः ॥
 तद्वत्तृतीयेपि कृतं महापातकनाशनं ।
 व्रतमेतन्नरेः स्त्रीभिस्त्रिभिर्मसैरनुष्ठितं ॥
 त्रिभिः संवत्सरैर्यैव प्रददाति फलं शृणां ।
 त्रिभिर्मसैस्त्वगोवस्यास्त्रियधात्पातकानृप ॥
 त्रीणि नामानि देवस्य सोचयन्ति त्रिवार्षिकैः ॥
 यतस्ततो व्रतमिदं त्रिविक्रममुदाहृतं ।
 सर्व्वपापप्रशमनं केशवाराधनं परं ॥

इति विष्णुधर्मोक्तं त्रिविक्रमव्रतम् ।

सुमन्तुर्वाच ।

समभ्यर्च्य जगन्नाथं देवमर्कमथापि वा ।
 एकमश्नाति यो भक्तं द्वितीयं ब्राह्मणार्पणं ॥
 करोति भास्करप्रीत्यै कार्तिक मासमाप्तवान् ।
 पूर्व्वं वयमि यत्नेन जानता जानतापि वा ॥
 पापमाचरितं तस्मान् मुच्यते नात्र संग्रहः ।
 अनेनैव विधानेन मार्गगोष्ठे विभाकर ॥
 समभ्यर्च्य एकभक्तं विप्रेभ्यो यः प्रयच्छति ।
 भगवत्प्रीणनार्थाय फलन्तस्य शृणुष्व मे ॥
 मध्ये वयमि यत्पापं शोधिता पुरुषेण च ।
 कृतं तस्माच्च तेनोक्तो विमोक्षः परमात्मना ॥
 तथाचै वैकभक्तश्च यथ विप्राय यच्छति ।
 दिवाकरं समभ्यर्च्य षोडश मासि महोपते ॥
 तद्वत् तृतीयेपि कृतं महापातकनाशन ।
 व्रतमेतन्नरैस्त्रोभिस्त्रिभिर्मर्मासैरनुष्ठित ॥
 त्रिभिः संवत्सरैरेव प्रददाति फलं नृणां ।
 त्रिभिर्मर्मासैस्त्रायस्यास्तु त्रिविधात्पातकानृप ॥
 त्रोग्णि नामानि देवस्य मीचयन्ति त्रिवार्षिकान् ।
 यतस्ततो व्रतमिदं त्रिविक्रममुदाहृतं ।
 सर्व्वभूतप्रशमनं भास्कराराधनं परं ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं सौरत्रिविक्रमव्रतं ।

चेत्रादिचतुरी मासात् जले कुर्यादथाचितं ।
ज्यैष्ठाषाढे तथा माघे पौषे वा राजसत्तम ॥
व्रतान्ते मणिकं दद्यादन्नवस्त्रसमन्वितं ।
तिलपात्रं हिरण्यञ्च ब्रह्मलोके महोयते ।
तदन्ते राजराजः स्याद्वारिव्रतमिहोच्यते ॥

इति पञ्चपुराणे वारिव्रतं ।

—०००—

इति श्रीमहाराजाधिराजश्रीमहादेवस्य समस्तकरणा
धीश्वरसकलविद्याविशारदश्रीहेमाद्रिवि-
रचिते चतुर्वर्गचिन्तामणौ
व्रतखण्डे मासव्रतानि ।

—

अथोन्नतिशोऽध्यायः ।

—०००—

अथ ऋतुव्रतानि ।

—०—

उपक्रियायै सुहृदामिदानीं
हेमाद्रिभूरिः प्रकटीकरोति ।
ऋतुव्रतत्रये निमग्नसम्पत्-
संपादयित्रीं दुरितापहन्त्रीं ॥
मार्कण्डेय उवाच ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि वरमूर्त्तिरश्चनं परं ।
वसन्तं पूजयेन्नित्यं द्वौ मासौ सुनिपुंगव ॥
फलेः पुष्पैः कषायैस्तु, योषे योषश्च पूजयेत् ।
मधुरेण मद्याराजं प्रावृट्काले ऋतुचरेत् ॥
अग्नेन पूजयेन्नित्यं शरदं लवणेन च ।
फट्फलेन च हेमन्तं तिक्तेन शिशिरं तथा ॥
नक्ताशनस्तथा तिष्ठेत्पञ्चकं वर्जयेद्रतं ।
ब्राह्मणान् भोजयेत्तपि प्रभूतवसनादिभिः ॥
संवत्सरमिदं कृत्वा व्रतं परमपावनं ।
अश्वमेधमवाप्नोति राजसूयश्च विन्दति ॥
सर्वान् कामानवाप्नोति नात्र कार्त्तया विचारणा ।
फलमद्यमाप्नोति व्रतस्यास्य करोत्तम ॥

चेत्त्रे समारभ्य सिते तु षष्ठीं
संपूजयेद्यस्त्वृषट्कमेकं ।
कृतोपवासः स नरो यथोक्तं
लभेत् फलं शाश्वतमेव शीघ्रं ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं षण्मूर्तिव्रतं ।

—००—

कृतैकभक्तं हेमन्ते माघमासे तु यन्मित्रः ।
माघमासे च रथं कुर्याच्चित्रवस्त्रोपशोभितं ॥
श्वेतैस्तुर्भिः संयुक्तं वृषभैः समलङ्कृतं ।
शोभितं ध्वजमालाभिद्युच्चामरदर्पणैः ॥
तण्डुलाटकपिष्टेन लिङ्गं कृत्वा सर्वेदिकं ।
विन्यस्य रथमध्ये तु पूजयेत् कृतलक्षणं ॥
तद्वाजौ राजमार्गे च शङ्खभेर्यादिभिः स्वनैः ।
भ्रामयित्वा ततः पश्चाच्छिष्यायतनमानयेत् ॥
तत्र जागरपूजाभिः प्रदीपाद्युपशोभितैः ।
प्रेक्षणीयप्रदानेन च क्षपयेत् शनैर्निशां ।
प्रभाते स्नापनं कृत्वा तत्तत्तामांश्च भोजनं ॥
दीनान्धकृपणानां च यथाशक्त्वा च दक्षिणां ।
रथं शोभासमायुक्तं शिवाय विनिवेदयेत् ॥
भुक्त्वा च बान्धवैः सार्धं प्रणम्येकं गृहं व्रजेत् ।
प्रवरः सर्वदानानामस्मिन् धर्मः समाप्यते ॥
व्रतं शिवरथं नाम सर्वकामार्थसाधकं ।

सर्व्वव्रतषु यत्पुण्यं (१) सर्व्वयज्ञेषु यत्फलं ॥

सर्व्वं शिवरथेनैव तत्पुण्यं सकलं भवेत् ।

सूर्यायुतप्रतीकाशैर्विमानैः सार्व्वकामिकैः ।

त्रिःसप्तकुलजैः सार्धं शिवलोके महीयते ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्त्वं शिवरथव्रतं ।

—०००—

पुलस्त्य उवाच ।

वर्जयेद्यस्तु पुष्पाणि हेमन्तशिगिरे व्रती ।

पञ्चमयञ्च फाल्गुन्यां कृत्वा शक्त्या 'व काञ्चनं ॥

दद्याद्द्वै कालवेलायां (२) प्रीयेतां शिवकेशेवौ ।

शिरःसौगन्धजननं सदानन्दप्रदं नृणां ॥

कृत्वा परं पदं याति सौगन्धव्रतमुत्तमं ।

इति पद्मपुराणोक्तं सौगन्धव्रतं ।

—००—

पुलस्त्य उवाच ।

यद्येभ्यनन्ददेहिमे वर्षादिचतुर स्मृतून् ।

ष्टतधेनुप्रदोऽन्ति च स परं ब्रह्म गच्छति ॥

वैश्वानरव्रतं नाम सर्व्वपापप्रणाशन ।

इति पद्मपुराणोक्तं वैश्वानरव्रतं ।

(१) सर्व्वप्रायेषु यत् पुष्पमिति पुस्तकालये पाठः ।

(२) दद्याद्द्वि काशवेलायामिति पुस्तकालये पाठः ।

व्रतखण्डं २८ अध्यायः ।] हेमाद्रिः ।

८६१

पवित्रतोययुक्तैर्यः कुम्भैः यीष्णे शिवोपरि ।

गालयेद्यः पयोधारां स ब्राह्मपदमश्नुते ॥

इति शिवरहस्योक्तज्जलतिकाव्रतम् ।

— • —

इति श्रीमहाराजाधिराज-श्रीमहादेवस्य समस्तकरणा-

धीश्वरसकलविद्याविशारद-श्रीहेमाद्रिविरचिते

चतुर्वर्गचिन्तामणौ व्रतखण्डे

अष्टतुव्रतानि ।

—

अथ त्रिंशोऽध्यायः ।

—000@000—

अथ संवत्सरव्रतानि ।

—000—

विहङ्गमः कौरव कौरकाणां
शशाङ्कसन्धोधितिरुद्धतो यः ।
हेमाद्रिणा प्राणभृतां हिताय
वितन्यते तेन समाव्रतोऽथ ॥

पुलस्त्य उवाच ।

शक्तमष्टश्रित्वा तु गवां सार्धं कुटुम्बिने ।
हैमश्वकं विशूलश्च दद्याद्विप्राय वाससी ॥
प्रणम्य भक्त्या शक्तश्च प्रीयतां शिवकेशवौ ।
एतदेवव्रतं नाम महापातकनाशनं ॥

इति पद्मपुराणोक्तं दशव्रतं ।

—0—

पुलस्त्य उवाच ।

सन्ध्यामौनं नरः कृत्वा समान्ते हृतकुम्भकं ।
वस्त्रयुग्मं तिलान् घण्टां ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥
शोकं सारस्वतं याति पुनरत्रैव जायते ।
एतत्सारस्वतं नाम रूपविद्याप्रदायकं ॥

इति पद्मपुराणोक्तं सारस्वतव्रतं ।

यस्तु संवत्सरं पूर्णमेकभक्तो भवेन्नरः ।
 अहिंसः सर्वभूतेषु वासुदेवपरायणः ॥
 नमोऽस्तु, वासुदेवायेत्यहसाष्टगतं जपेत् ।
 पौण्डरीकस्य यज्ञस्य ततः फलमवाप्नुयात् ॥
 दशवर्षसहस्राणि स्वर्गलोके सहीयते ।
 तत् क्रियादिह वागत्य माहात्म्यं प्रतिपद्यते ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तमेकभक्तव्रतं ।

—००(१)००—

पुलस्त्य उवाच ।

कल्पोपलेपनं शम्भोरपतः केशवस्य च ।
 यावदष्टं पुनर्दद्याच्चेनं जलघृतस्य च ॥
 स सर्वपापनिर्मुक्तः शिवलोके महीयते ।
 राजा भवति सम्भूतः सर्वभीमो महेश्वरः ।
 एतत् अष्टाव्रतं नाम बहुकल्याणकारकं ॥

इति पद्मपुराणोक्तं अष्टाव्रतं ।

—०००(१,०००)—

पुलस्त्य उवाच ।

अष्टाव्रतं भास्करं गङ्गां प्रणम्यैकत्र वाग्यतः ।
 एकभक्तं नरः कुर्यादष्टमेकं विमल्वरः ॥
 व्रतान्ते विप्रमिथुनं पूज्य घेनुचयान्वितं ।
 तत्र हिरण्यं दद्यात्सोऽश्वमेधफलं लभेत् ॥

दिवि देवविमानस्थो गीयतेऽप्सरसाङ्गणैः ।
 एतत्कीर्त्तिव्रतं नाम भूमिकीर्त्तिप्रदायकं ॥
 इति पद्मपुराणोक्तं कीर्त्तिव्रतं ।

घृतेन स्नापनं कृत्वा केशवस्य शिवस्य च ।
 ब्राह्मणो भास्करस्यापि गौर्या लम्बोदरस्य च ॥
 अक्षतैश्च शुभं कुर्यात्पद्मं गोमयमण्डले ।
 समान्ते हेमकमलं तिलधेनुसमन्वितं ॥
 समा वर्षं ।

शुद्धमष्टाङ्गुलं दद्याच्छिवलोके महीयत ।
 सामगाययतश्चेत् सामव्रतमिहीच्यते ॥
 इति पद्मपुराणोक्तं सामव्रतं ।

ताम्बूलभक्षणादौ या गौरीपत्रं ददाति च ।
 गौरीपत्रं ताम्बूलपत्रं ।
 पूगचूर्णसमायुक्तं स्त्रियो वा पुरुषस्य वा ॥
 वर्षस्यान्ते तु सौवर्णं फलपत्रम् राजतं ।
 मुक्ताफलमयं चूर्णं सम्पूर्णं वा प्रयच्छति ॥
 न सा प्राप्नोति दौर्भाग्यं न दीर्गन्ध्यां सुखस्य वा ।
 एतत्पत्रव्रतं नाम गौरीलोकप्रदायकं ॥
 इति भविष्योत्तरोक्तं पत्रव्रतं ।

पञ्चामृतेन स्नापनं कृत्वा विष्णोः शिवस्य वा ।
वक्त्ररान्ते पुनर्दद्याद्देव्यं पञ्चामृतैर्युतं ॥
विप्राय कनकं शङ्खं वस्त्रयुग्मञ्च पाण्डुरं ।
स्वर्गलोकप्रदं दिव्यं धृतिव्रतमिदं स्मृतं ॥

इति विष्णुपुराणोक्तं धृतिव्रतं ।

—000—

पुलस्त्य उवाच ।

वर्जयित्वा पुमाणांसमब्दान्ते गोप्रदो भवेत् ।
तद्दधेममृगं दत्त्वा सोऽश्वमेधफलं लभेत् ।
अहिंसाव्रतमितुप्रक्तं कल्पान्ते भूपतिर्भवेत् ॥

इति पद्मपुराणोक्तमहिंसाव्रतं ।

—

मुखवासं परित्यज्य समान्ते गोप्रदो भवेत् ।
यच्चाधिपत्यमाप्नोति मुखव्रतमिहोच्यते ॥

इति पद्मपुराणोक्तं मुखव्रतं ।

—

यस्य नीलोत्पलं ज्वलं शर्करापात्रसंयुतं ।
एकान्तरितनक्ताग्नी समान्ते हवसंयुतं ।
दद्यादिति शेषः ।

स वैष्णवं पदं याति नीलव्रतमिदं स्मृतं ॥

इति पद्मपुराणोक्तं नीलव्रतं ।

(१०८)

वत्सरं त्वेकभक्ताशी सभक्ष्यफलकुम्भदः ।
 शिवलोके वसेत्कल्पं प्राप्तिव्रतमिदं स्मृतं ॥
 इति पद्मपुराणोक्तं प्राप्तिव्रतं ।

—०००—

सन्ध्यादीपप्रदी यस्तु समां तैलञ्च वर्जयेत् ।
 समान्ते दीपकान् दद्याच्चक्रं शूलञ्च काञ्चनं ॥
 वस्त्रयुग्मञ्च विप्राय स तेजस्वी भवेदिह ।
 रुद्रलोकमवाप्नोति दीप्तिव्रतमिदं स्मृतं ॥
 इति पद्मपुराणोक्तं दीप्तिव्रतं ।

—०००—

प्राकाशाशी समां दद्याच्चैतुमन्ते पयस्विनी ।
 एकलोकमवाप्नोति शक्रव्रतमिदं स्मृतं ॥
 इति पद्मपुराणोक्तं शक्रव्रतं ।

—०००—

यस्त्वेकभक्तेन समां क्षिपेच्चैतुं वृषान्विता ।
 धेनुं तिलमयीं दद्यात्स पदं याति शाङ्करं ।
 एतद्गुह्यव्रतं नाम पापशोकविनाशनं ॥
 इति पद्मपुराणोक्तं रुद्रव्रतं ।

—००००००—

हे सङ्क्षेपलानाम् माहिषाख्यम् यो दहेत् ।
 देवि संवत्सरं पूर्णं स मे नन्दितनोभवेत् ।

फलं नव समारभ्य पयः प्रतिदिनं दहेत् ॥

इति पद्मपुराणोक्तं शम्भुव्रतं ।

—०००—

दक्षिणायाञ्च यो मूर्त्तौ पायसं सधृतञ्च वै ।

निवेद्येदर्घमेकं सीऽपि नन्दिसमी भवेत् ॥

ततः संवत्सरे पूर्णं सीपवासोऽथ जागरं ।

कृत्वाभ्यर्च्य महेशानं महास्नानादिभिर्हृतं ॥

इत्यादिप्राय पृथिवीं शय्यां गाञ्च पयस्विनीं ।

नन्दिना चरितं पुण्यं व्रतं पातकनाशकं ।

कृतं संवत्सरं भक्त्या तावदेव निवेदितं ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं महेश्वरव्रतं ।

—०००(१५००)—

संवत्सरस्तु यो भुङ्क्ते नित्यमेव ह्यतन्द्रितः ।

निवेद्य पित्रदेवेभ्यः पृथिव्यामेकरात्रयेत् ॥

यो भुङ्क्ते पृथिव्यामित्यन्वयः ।

इति पद्मपुराणोक्तं भुभाजनव्रतं ।

—

इति श्रीमहाराजाधिराज-श्रीमहादेवस्य समस्तकरणा-

धीश्वरमकलविद्याविशारद-श्रीहेमाद्रिविरचिते

चतुर्वर्गचिन्तामणौ व्रतखण्डे

संवत्सरव्रतानि ।

—

अथ एकत्रिंशोऽध्यायः ।

—०००००—

अथ प्रकीर्णकप्रतानि ।

—०००—

हेमाद्रिरुचिद्रमुरारिभक्ति-

रधीतवेदास्त्रिसधर्मवेदः ।

अग्नेषलोकोत्तरणावतीर्थः

प्रकीर्णकं वर्णयति क्रमेष ॥

श्वेतद्वीपे सुखासीनं देवदेवं जगद्गुरुं ।

वासुदेवं जगन्नाथं स्थितिसंहारकारकं ॥

प्रणिपत्य महादेवं चराचरगुरुं हरिं ।

शरीरारोग्यमैश्वर्यं कामदेवसमः पतिः ॥

सुखावबोधने नित्यमवियोगश्च तेन वै ।

तद्दानं वा व्रतं वापि पूजामाराधनादिकं ॥

सत्कृपः प्रोवाच शनकैर्भर्तारमसितेजसा ।

भगवन् देवदेवेश लोकानामनुकम्पया ।

प्रष्टुं त्वां किञ्चिदिच्छामि दयां कुर्वन्ममोपरि ॥

व्रतं कथय मे किञ्चिद्रूपसौभाग्यदायकं ।

कृतेन येन देवेश सर्व्वतीर्थफलं लभेत् ॥

येन पुत्राश्च पौत्राश्च गृहं सर्व्वसमृद्धिदं ।

शरीरारोग्यमैश्वर्यं कामदेवसमः पतिः ॥

सुखावबोधने नित्यमवियोगश्च तेन वै ।

तद्दानं वा व्रतं वापि तीर्थमाहात्म्यमिव च ॥

येनानुष्ठितमात्रेण सर्वसिद्धिर्भवेत् ध्रुव ।

कक्षयस्व सुरश्रेष्ठ गुह्याद्गुह्यतरं मम ॥

विष्णुरुवाच ।

कक्षयामि न सन्देहो व्रतानामुत्तमं व्रतं ।

प्रद्युम्नायापि नाख्यातं पुत्रप्रीत्या व्रतं त्विदं ॥

तेजस्विना यथादित्यः पक्षिणाङ्गरुडो यथा ।

यथा नदीनां गङ्गा च वर्षाणां ब्राह्मणो यथा ।

तथा व्रतमिदं श्रेष्ठं कथ्यते तव भामिनि ॥

न गङ्गा न कुरुक्षेत्रं न काशी न च पुष्करं ।

पावनानि महाभागे यथेदं व्रतमुत्तमं ॥

गौर्या देव्या कृतं पूर्वं शङ्करेण महात्मना ।

रामेण सीतया सार्धं दमयन्त्या नलेन च ।

कृष्णेन पाण्डवैः सर्वैः कृतं व्रतमुत्तमं ॥

रत्नया मेनया चापि पीलोम्या सत्यभामया ।

शाण्डिल्याप्यरुन्धत्या उर्वश्या देवदत्तया ॥

गायत्र्या चैव सावित्र्या व्रतं श्रेष्ठमुत्तमं ।

अन्याभिश्चैव नारीभिर्हवि व्रतमिदं कृतं ॥

तस्मात्तेऽहं करिष्यामि सर्वपापप्रणाशनं ।

विष्णुप्रीतिकरं रम्यं व्रतानां प्रवरं शृणु ॥

ब्रह्मज्ञा मुच्यते पापात्सुगणो रुक्महारकः ।

गुरुभार्याभिगामी च एतेषां सङ्गमोऽयं यः ॥

मानकूटस्तुलाकूटः कन्याशृङ्गविक्रयी ।

अगम्यागमनो यस्तु मांसाशी वृषलीपतिः ॥
 भूमिहर्ता कूटसाक्षी कन्यारूपयिता च यः ।
 एभिः सर्वैर्महापापैर्मुच्यते नात्र संशयः ।
 तस्मात्सर्वप्रयत्नेन कर्त्तव्यं व्रतमुत्तमं ॥
 काञ्चनाख्या पुरी नाम व्रतं त्रैलोक्यपावनं ।
 शुक्लतृतीया कृष्णा च एकादश्यश्च पूर्णिमा ॥
 संक्रान्तिर्वा महाभागे कुहुर्वा चाष्टमी तिथिः ।
 पर्वस्वेतेषु दातव्या काञ्चनाख्या पुरी शुभा ॥
 व्रती स्नात्वा तु पूर्वार्द्धे नद्यादौ विमले जले ।
 मृत्तिकाभक्षणं कार्यं विधिनानेन तत् प्रिये ॥
 उद्धृतासि धरे पूर्वं विष्णुना क्रोडरूपिणा ।
 लोकानामुपकाराय वन्दिता सिद्धिकामदा ।
 तस्मात्त्वं वन्दिता पापं हर मेऽनेकजन्मजं ॥

मृत्तिकाभक्षणमन्त्रः ।

आपोयूयं सर्वं योनिर्विष्णुना निर्मिताः स्वयं ।
 सान्निध्यं तीर्थसहिताः कुरुष्वं साम्प्रतं मम ॥

उद्धृताभिमन्त्रणं ।

अनेन विधिना स्नात्वा गृहमागत्य सङ्गृहीतौ ।
 नालपेत् पिशुनान् चण्डान् पापिनः पापसङ्गिनः ॥
 पाषाण्डिनो विकर्म्मस्थान् देवब्राह्मणनिन्दकान् ।
 प्रक्षाल्य पाणिपादश्च कुर्याद् वै दन्तधावनं ॥
 उपवासस्य नियमं कुर्यान्नक्तस्य वा पुनः ।
 शङ्खप्रवरमादाय हेमयुक्तं ततो जलं ॥

नमो भगवते वासुदेवायेत्यभिमन्त्र्य च ।
 वन्दे तीर्थं शुचिर्भूत्वा हरिरित्यक्षरं जपन् ॥
 शमीवृक्षमयी वेदी चतुःस्तम्भैः समन्विता ।
 चतुर्हस्तप्रामाणा तु कार्य्या चैव सुशोभना ॥
 वस्त्रेणावेष्टितास्तम्भा वितानवरमण्डिताः ।
 पुष्पमालान्विताः कार्य्या दिव्यरूपाधिवासिताः ॥
 मध्ये तु मण्डलं कार्य्यं पद्माख्यं वर्णकैः शुभैः ।
 मण्डलस्य तु मध्ये तु भद्रपीठं सुशोभनं ॥
 आसनं तत्र विन्यस्य कमलं तत्र विन्यसेत् ।
 तस्योपरि न्यसेद्देवं लक्ष्म्या युक्तं जनार्दनं ॥
 अग्रे तु स्थापयेत् कुम्भं जलपूर्णं सुशोभनं ।
 क्षीरसागरनामास्य कल्पितव्यं प्रयत्नतः ।
 सामान्यैकपक्षाः कार्य्या आत्मवित्तानुसारतः ॥

चत्वारिपलान्यस्यामिति वीष्मायां बहुव्रीहिः समवर्णवत् ।
 वीष्मायाञ्च गृहाणां गृहाणि च पततः षोडशमध्य एकमिति
 सप्तदशतावद्वाङ्मणविधानात् । मध्यगृहञ्चाष्टमाचार्य्यगृहत्वात् ।
 तत्प्रकारस्तद्वत् । बहिःप्रकारो बहिर्गृहवत् । एवं चतुश्च-
 त्वारिंशदधिकशतपलं हेम । तावच्च रूप्यं(१) ।

रौप्या ऋष्या अधोभूमिः शिखरं काञ्चनं तथा ।

(१) आदर्शपुस्तकेषु सप्तदशमसृङ्गात् रूप्यं कतिचित् पाठाः पतिताः प्रतिभा-
 नि, अन्यथा सप्तदशमसृङ्गात् रूप्यं यावत् प्रथमसृङ्गं आदर्शपुस्तकेषु दृष्टं तन्मध्ये
 चतुष्पला इति मत्स्याभावात् चत्वारि पलान्यस्यामिति सृत्पतिशरच्च न समोचोक्तं
 न वित्तमर्हति ।

स्तम्भा रत्नमयाः कार्या दशैरसमन्विताः(१) ।

प्राकारं कारयेद्द्वैमं रौप्यं पैष्टमथापि वा ॥

पैष्टं सीसं ।

मोदकान् स्थापयेद्दिहान् प्रासादशिखरेषु च ।

समन्ताद्दिष्टयेत्तान् पुरीं वस्त्रैः सुशोभनैः ॥

तदग्रे कदलीस्तम्भैस्तोरणं परिकल्पयेत् ।

पुष्पशोभानुकर्त्तव्या विभवादिस्तरेण च ॥

चतुश्चरणिकैर्विप्रैः प्रतिष्ठाप्या पुरी शुभा ।

तस्या मध्ये न्यसेद्दिणुं द्वैमलक्ष्मणा समन्वितं ॥

नेत्रे रत्नमये कार्ये दशनाय सुभूषिताः ।

सुक्ताफलमयं तत्र भूषणं परिकल्पयेत् ॥

अङ्गं स्वर्णमयं कार्यं शङ्खचक्रगदायुतं ।

पञ्चामृतेन संस्त्राप्य गन्धपुष्पैः प्रपूजयेत् ॥

ब्राह्मणो वैदिकैर्मन्त्रैः पुराणोक्तैस्तथोत्तरैः ।

वासुदेवाय पादौ तु गुल्फी संकर्षणाय च ॥

त्रैलोक्यजननायेति जानुनौ पूजयेद्धरेः ।

जानु त्रैलोक्यनाथाय गुह्यं ज्ञानमयाय च ॥

कटिं दामोदरायेति उदरं विष्णुरूपिणे ।

पद्मनाभाय नाभिस्तु उरः श्रीवत्सधारिणे ॥

कण्ठं कीस्तुभनाभाय आस्यं यक्षसुखाय च ।

दैत्यान्तकारिणे वाङ्मस्त्रनाम्ने चायुधानि च ॥

शिखाश्चैशाणमन्त्रेण देवदेवस्य पूजयेत् ।

(१) पादोऽवनादर्धं दीपे च न चमोचिनः ।

त्रियं स्वमन्त्रैः संपूज्य लोकपालांस्ततोऽर्चयेत् ॥
 नवग्रहाश्च पूज्या वै होमं तेषान्तु कारयेत् ।
 दुर्गागणपतौ पूज्यौ तयोर्होमं प्रकल्पयेत् ॥
 अग्रे नैवेद्यमतुलं द्युपयेदृतपाचितं ।
 पायसं दृतपूरांश्च मोदकान् पूषकांस्तथा ॥
 देशकालीहवन्यत्र फलादीनि प्रकल्पयेत् ।
 दीपान् दशदिशं दद्यात् पार्श्वतः पुष्पचर्चितान् ॥
 हृतेन तु विशालाक्षि मूलमन्त्रेण दापयेत् ।
 कुम्भाः षोडश कर्तव्याः श्वेतवस्त्रैर्विभूषिताः ॥
 मिष्टान्नेन समायुक्ताः सहिरण्याः पृथक् पृथक् ।
 पक्वानानि तु हव्यानि षोडशैव प्रदापयेत् ॥
 फलानि तत्र देयानि नानारूपाणि सुन्दरि ।
 दीपांस्तस्मिन्मयांश्चैव तेषु कुम्भेषु विन्यसेत् ॥
 ब्राह्मणान् भूषयेत्तैस्तैरलङ्कारैर्यथाविधि ।
 सपत्नीकान् प्रयत्नेन जपं कुर्यात्तु षोडश ॥
 सहस्रशीर्षा इत्यादि कक्षिकाभिस्तु मन्त्रयेत् ।
 विष्णुं मत्वा ब्राह्मणस्तु लक्ष्मीरूपा स्त्रियांऽर्चयेत् ॥
 छत्रचोपानहौ चैव वस्त्राण्याभरणानि च ।
 फलानि सप्तधान्यश्च भोजनश्च पथेष्ठितं ।
 दातव्यस्तु सभाष्याणां विष्णुर्म प्रीयतामिति ॥
 तत्र आचार्य उच्यते प्रवृत्ते गीतमङ्गले ।
 धृत्वा बाहू यजमानं देवसमीपमानयेत् ॥
 श्वेतवस्त्रेण नेत्रे तु यजमानस्य ग्रेयसे ।

आचार्यः सर्वविद्याज्ञो बन्धयेत्तदस्मिन् च ॥
 आबद्धनेत्रे सुप्राञ्च आचार्यस्तु इदं वदेत् ।
 सर्वकामप्रदां पश्य काञ्चनाख्यां पुरीमिमां ॥
 वरवस्त्रयुतां रम्यां दुःखदौर्भाग्यनाशनीं ।
 एवमुक्त्वा महाभागे वस्त्रमुत्सर्जयेत्ततः ॥
 पुष्पाञ्जलिं ततः क्षिप्वा स पश्येन्नगरीं शुभां ।
 दृष्ट्वा तां नगरीं देवि यजमानः पुरोहितः ॥
 सौवर्णपात्रमादाय रीप्यन्ताम्रमथापि वा ।
 अथवा शङ्खमादाय पात्रालाभे तु सुन्दरि ॥
 पञ्चरत्नं क्षिपेत्तत्र जलगन्धांस्तथा फलं ।
 सिद्धार्थञ्चाक्षतं दूर्वां रोचनाञ्च दधि प्रिये ॥
 ततस्त्वर्घाः प्रदातव्या मन्त्रेणानेन सुव्रते ।
 लक्ष्मीनारायणी देवी भक्तिपूतेन चेतसा ॥
 जानुभ्यां धरणीं गत्वा मन्त्रमेनमुदीरयेत् ।
 स्वर्णस्य निर्मिता देवी विष्णुना शङ्करेण च ॥
 पार्वत्या चैव गायत्र्या स्कन्दवैश्वण्येन च ।
 यमेन पूजिता देवी धर्मस्य विजिगीषया ॥
 सौभाग्यं देहि पुत्रांश्च धनं रूपञ्च पूजिता ।
 गृह्णाणार्घ्यं मया दत्तं देवि सौख्यं प्रयच्छ मे ।
 एवमर्घ्यं तदा दत्त्वा दीपान् प्रज्वलायेत्ततः ॥
 जागरं तत्र कुर्वीत गीतनृत्यादिना तथा ।
 विष्णोर्जागरणे पुण्ये शतयज्ञफलं लभेत् ॥
 प्रभाते विमले जाते कृत्वा नित्यादिपूजनं ।

आचार्यं पूजयेत्तद्वस्त्रै राभणैस्तथा ॥
 सपत्नीकं सपुत्रं यत्नात् सम्भोज्य पूजयेत् ।
 शय्या सोपस्करा तस्मै वस्त्रचन्दनसंयुता ॥
 प्रदेया गुरवे तच्च सर्वोपस्करसंयुता ।
 तां पुरीं काञ्चनीं दद्यान्मन्त्रेणानेन सत्रती ॥
 लक्ष्मीनारायणी देवी सर्वं कामफलप्रदी ।
 रुक्मपूर्याः प्रदानेन यच्छतां मम वाञ्छितं ॥
 नारायण हृषीकेश ज्ञानज्ञेय निरञ्जन ।
 रुक्मपूर्याः प्रदानेन यच्छ मे मुक्तिदं परं ॥
 दत्त्वा त्वनेन मन्त्रेण गौर्देया गुरवे ततः ।
 तेभ्यस्तु दक्षिणां दद्यात्सन्तुष्ट्या यद्वदन्ति ते ॥
 एवं क्षमापयित्वा तान् प्रणम्य च पुनः पुनः ।
 अनाथान् बधिरान् पङ्गूनभ्यांश्चैव विशेषतः ॥
 गवाङ्गिकश्च दातव्यं गोभ्यः सकृत् प्रयत्नतः ।
 एवमुच्चारयेत्तत्र विष्णुर्मे प्रीयतामिति ॥
 एवं कृत्वा तु तत्सर्वं पारणं तच्च कारयेत् ।
 इष्टैर्मित्रैः कुटुम्बैश्च पुत्रपौत्रैः समन्वितः ॥
 एवं कृते तु यत्पुण्यं अशक्यं कथितं मया ।
 कल्पकीटिसहस्राणि कल्पकीटिगतानि च ॥
 ब्रह्मलोकं समासाद्य व्रती मोदति ब्रह्मवत् ।
 ब्रह्मलोकाद्ब्रह्मलोकमिन्द्रलोकमतः परं ॥
 क्षीणलोकस्ततो देवि मदीयं लोकमाप्नुयात् ।
 तत्र भुक्त्वा तु विस्तीर्णान् भोगान् लोकासुन्दरि ॥

मद्देहे लीयते चैव पुमानमृततां व्रजेत् ।
 सार्वभौमस्तु राजा वै जायते विपुले कुले ॥
 य इदं शृणुयान्नित्यं वाच्यमानं व्रतम्विद्वद् ।
 सहस्रकुलसुदृत्य विष्णुलोके महीयते ॥
 त्वया काञ्चनपुर्याख्यं व्रतमेतत् कृतं पुरा ।
 व्रतप्रसादाद्ब्रह्माहं लब्धस्मै लोकपूजितः ॥

इति गारुडपुराणोक्तं काञ्चनपुरीव्रतम् ।

— ००० —

युधिष्ठिर उवाच ।

संपूर्णतां मनुष्याणां व्रतानाञ्च जनार्दन ।
 कुरु प्रसादङ्गु शार्ङ्गमेतन्मे वक्तुमर्हसि ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

साधु साधु महाबाहो कुरुराज युधिष्ठिर ।
 रहस्यानां रहस्यं ते कथयामि व्रतोत्तमम् ॥
 संपूर्णं नाम तच्चापि व्रतं सम्यक् फलप्रदम् ।
 यश्चीर्णं नरनारीभिर्घातयत् संपूर्णकालकम् ॥
 अवश्यं तस्य कर्तव्यं संपूर्णफलकाङ्क्षिभिः ।
 किञ्चिद्भग्नं प्रमादतः बद्धं व्रतिनां भवेत् ॥
 तत् संपूर्णं भवेत् सर्वं व्रतेनानेन पाण्डव ।
 उपद्रवैर्बहुभिर्मेहामोहाच्च पार्थिव ॥
 यद्भग्नं किञ्चिदेव स्यात् व्रतं विघ्नविनायकैः ।
 तत् संपूर्णं भवेत् सर्वं सत्यं सत्यं न संशयः ॥
 काञ्चनं रौप्यकं रूपं शिल्पिना तु घटापयेत् ।

भग्नव्रतस्य सोदेवस्तत् स्वरूपं सुनिर्मितं ॥
रूपं स्त्रीपुंसयोर्वापि प्रारब्धं तद्व्रतं किल ।
नच निष्पादितं किञ्चिद्देवात् सर्वं तथा स्मितं ॥
द्विभुजं पद्मजाकटं सौम्यं प्रहसिताननं ।

द्विभुजादीनि स्त्रीपुंसयोरूपस्य विशेषणं ॥
तच्च रूपमन्त्रातेषु व्रतेषु, जन्मान्तरकृतानां विस्मृतानाञ्च
व्रतत्वं तेष्वपीदं प्रायश्चित्तमिति ।

निष्पादितं शिल्पिना च तस्मिन्नेव दिने पुनः ।
तस्मान्मासे पुनः प्राप्ते ब्राह्मणो विधिना गृह्णे ॥
स्नापयेत्पयसा दध्ना घृतक्षीररसाग्नयिभिः ।
गन्धचन्दनपुष्पैस्तु पूजयेत् कुसुमादिना ॥
तीर्थपूर्णस्य कुम्भस्य मुखे विन्यस्य चन्दनैः ।
धूपदीपाक्षतैर्वस्त्रैरक्षौ बन्धुपहारकैः ॥
अर्घ्यं दद्याच्च तन्नाम्ना मन्त्रेणानेन पाण्डुरम् ।
उपवासेन ह्येनस्य प्रायश्चित्तं कृताञ्जलिः ॥
शरणञ्च प्रपन्नस्य कुरुष्वाय दयां पुनः ।
परञ्च भयभीतस्य भग्नवर्ण्यव्रतस्य च ॥
कुरु प्रसादं संपूर्णं व्रतं संपूर्णमस्तु मे ।
तपस्त्रिद्वं व्रतद्विद्वं यद्विद्वं भग्नके व्रते ।
तच्च प्रसादात्तद्देव सर्वमद्विद्वमस्तु मे ॥

स्वाहा अमुकदेवाय नमः ।

पूर्वतो दक्षिणत उत्तरतो विधिं कुर्यात् ।

उपर्यधस्ताद्विष्णुपालेभ्यो नमः ।

इदमर्घ्यमिदं पाद्यं नैवेद्यं ते नमोनमः ।
 एवं प्रीक्षा ततः पादौ जानुनी कटिशोर्ध्वं के ॥
 वक्षःकुक्षी च हृदयं पृष्ठं वास्यशिरोरुहान् ।
 ततो ह्रिजाय क्रीन्तेय विधिवत् प्रतिपादयेत् ॥
 पुजयेत्तस्य देवस्य ततः पश्चात् क्षमापयेत् ।
 पूजितस्त्वं यथाशक्त्या नमस्तेऽस्तु सुरोत्तम ॥
 ऐहिकामुष्यिकीं नाथ कार्यसिद्धिं दिशस्व मे ।
 एवं क्षमापयित्वा तां देवमूर्त्तीं विधानतः ॥
 स्थित्वा पूर्वमुखो विप्रो गृह्णीयाद्दर्भपाणिना ।
 विप्रस्य हस्ते यच्छेत्तु दाता चैवोत्तरामुखः ॥
 ब्राह्मणोऽपि प्रयच्छेत् मन्त्रेणानेन तद्भूतं ।
 वाक्यं पूर्णं मनः पूर्णं काया पूर्णं व्रतेन ते ।
 संपूर्णस्य प्रसादेन तव पूर्णो मनोरथः ॥
 ब्राह्मणा यानि भाषन्ते अनुमोदन्ति देवताः ।
 सर्वदेवमया विप्रा न तद्वचनमन्यथा ॥
 जलस्य क्षीरतां नोतः पावकः सर्वभक्षतां ।
 सहस्रनेत्रः शक्नोति कृतोविप्रैर्महात्मभिः ॥
 ब्राह्मणानान्तु वचनात् ब्रह्महत्या प्रणश्यति ।
 अश्वमेधफलं साधुं प्राप्यते नात्र संशयः ॥
 व्यासवाल्मीकिरचनात्परासरवसिष्ठयोः ।
 गर्गगौतमधौम्यात्रिवसिष्ठाङ्गिरसां तथा ।
 वचनान्नारदादीनां पूर्णं भवतु मे व्रतं ॥
 एवंविधविधानेन गृहीत्वा ब्राह्मणो व्रजेत् ।

दाता तत् प्रेरयेत् सर्वं ब्राह्मणस्य गृहे स्वयं ॥
 ततः पञ्चमहायज्ञान्निर्वपेद्भोजनादिभिः ।
 एवं यः कुरुते भक्त्या व्रतमेतत्सकृद्विधः ॥
 तस्य संपूर्णतां याति तद्भूतं यत्पुरास्थितं ।
 स्रष्टुं संपूर्णतां याति प्रसन्ने व्रतदैवते ॥
 संपूर्णं च ततः कर्त्ता संपूर्णाङ्गोभवेद्भूतः ।
 भोगी भव्योक्तसत्कीर्त्तिः स संपूर्णमनोरथः ॥
 स्थित्वा वर्षगतं मर्त्यं ततः स्वर्गोऽमरो भवेत् ।
 यथेष्टचेष्टाचारौ च ब्रह्मविष्णोश्च पूजितः ॥
 स्वर्गलोके चिरं स्थित्वा पुनर्मोक्षमवाप्नुयात् ।
 प्रायश्चित्तमिदं प्रोक्तं पुरा गर्गेण मे प्रभो ॥
 गोकुले गोकुलाकीर्णे मया बाल्ये ह्युपोषितं ।
 एवं त्वमपि कौन्तेय चर संपूर्णकं व्रतं ॥
 भक्त्या यानि मद्मोक्षवशाद्गृहीत्वा ।
 जन्मान्तरेष्वपि नरेण समत्सरेण ॥
 संपूर्णपूजनपरस्य पुरी भवन्ति ।
 सर्व्वं व्रतानि परिपूर्णफलप्रदाणि ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं संपूर्णव्रतं

—०००—

नन्दिकेश्वर उवाच ।

साधु साधु महाविप्र शिवभक्तोऽसि सुव्रत ।
 मौनं वक्ष्यामि तत्त्वज्ञ देवैरपि निषेवितं ॥

मृणु वक्ष प्रवक्ष्यामि मौनं सर्वार्थसाधकं ।
 मौनव्रतं महापुण्यं हुं हुं तत्र विवर्जयेत् ॥
 पुंसां भोजनकाले तु ब्रुह्मारी यदि निर्गतः ।
 सर्वमेव सुरामांसं तस्मान्मौने विवर्जयेत् ॥
 कर्मणा मनसा वाचा तत्र हिंसां विवर्जयेत् ।
 मौनस्यास्य प्रभावेन देवाश्च त्रिदिवं गताः ॥
 अहिंसकः क्षमी भुङ्क्ते शान्तो मौनव्रते स्थितः ।
 अष्टमासं चरेन्मौनं यः षण्मासमथापि वा ॥
 मासत्रयसमायुक्तो मासमेकस्तथैव च ।
 मासाश्चैतु पुनः कुर्याद्विवसान् द्वादशाथ वा ॥
 षट्पञ्च त्रीणि एकं वा मौनी भुञ्जीत यत्नतः ।
 समाप्ते तु व्रते तस्मिन् मौनव्रतसमाहितः ॥
 लिङ्गं चन्दनजं कृत्वा षडङ्गैः तु प्रोक्षयेत् ।
 गोरोचनां समारभ्य गन्धैः पुष्पैस्तु पूजयेत् ॥
 धूपश्चागुरुकं दद्यान्नमस्कारं ततः पुनः ।
 करपादशिरोभिस्तु प्रणिपत्य निवेदयेत् ॥
 आत्मवित्तानुसारेण हेमघण्टां प्रदापयेत् ।
 शिवायतो निबध्नीयाच्छिवस्यातीव वल्लभं ॥
 शोभितां ध्वजमालाभिः पञ्चरत्नैः सुशोभनैः ।
 पुष्पदामविलम्बैश्च बहुवर्णैरनेकधा ॥
 विदिशासु विमानस्य कांस्यघण्टां निबन्धयेत् ।
 बध्नीयाच्चतुरस्त्रीणि देवैकां शक्तितस्तथा ॥
 कांस्यलोहमयीं वापि सुशोभां च निवेदयेत् ।

शिवस्य पुरतो विप्रांश्चिवभक्तांश्च भोजयेत् ॥
 पायसं घृतसंमिश्रं मधुमासंपरिप्लुतं ।
 अनेकभक्तभोग्याद्यैर्लोहपेयसपिण्डैः ॥
 मञ्जुलक्ष्मीरसंमिश्रैर्मण्डकैः सुसमाहितैः ।
 भुक्त्वा प्रव्रजितानांश्च निरुच्छेषं समापयेत् ॥
 शक्त्या च दक्षिणां दद्याद्विस्तृतां विवर्जयेत् ।
 कर्मण जायते विप्र यस्य यस्य तु तद्ववेत् ॥
 शिवभक्तायतो नित्यं शान्तिवाक्यं पुनः पुनः ।
 तान्नपात्रे तु तक्षिणं स्थाप्य पुष्पैरलङ्कृतं ॥
 शिरसाधार्यं तत्पात्रं स्वयं मौनी समाहितः ।
 स गच्छेत् नृपमार्गेण यावत्तु शिवगोचरं ॥
 प्रदक्षिणीकृत्य शिवे चीन् वारांश्च समन्ततः ।
 प्रविशेन्नर्भगृहकं स्थापयेद्देवदक्षिणे ॥
 पुनः पुनः समभ्यर्च्य गन्धपुष्पैश्च सर्व्वतः ।
 नमस्कारैस्ततः पश्चात् प्रणम्य शिरसा भुवि ॥
 मौनस्यैव विधिः प्रोक्तोमया तव महासुने ।
 अस्य मौनस्य साक्षाद्देवताः शिवतां गताः ॥
 दिव्यवर्षसहस्राणि दिव्यवर्षगतानि च ।
 दिव्यवर्षगतं कोटि रुद्रकन्यासमावृतः ॥
 कोटिकोटिविमानानामसंख्याकोटिसङ्ख्यैः ।
 वज्रस्कटिकसोपानैस्तथैर्मरकतप्रभैः ॥
 सर्व्वैर्ममयैर्ह्रिदयैर्वनमाहाविभूषितैः ।
 चामरामलहस्ताद्यैः कोटिकोटिनरैर्हतैः ॥

(१११)

दिव्यगन्धसुसंपूर्णैर्युक्तमालाफलान्वितैः ।
 एवं विधैर्विमानैस्तु आस्ते शिवपुरे सुखी ॥
 कालक्षयादिहागत्य राजा क्षमिति विक्रमः ।
 वक्ता च सुभगः श्रीमान् सुरूपः प्रियदर्शनः ॥
 धर्मबुद्धियुतश्चैव सर्वशास्त्रविशारदः ।
 एवं मौनव्रतं प्रोक्तं सर्वकामार्थसाधकं ।
 भुवि सर्वसमर्थानां सुकरं प्रकटीकृतं ॥

ज्ञानमधर्मविनाशनमाद्यं
 मोक्षमनादिमनन्तरमेकं ।
 शिवं सर्वजगत्प्रभुं शान्तिकरं
 प्रभुमव्ययसूक्ष्मसूक्ष्मतनुं ॥
 तनुलम्बितनरमुखमालधरं
 परिपिङ्गजटार्क्षशशाङ्कधरं ।
 दशबाहुनिलोचनपापहृत्
 श्रवणोज्ज्वलकुण्डलनागधरं ।
 वरनूपुरसुष्टुसुपादधरं
 कमलोपरि संस्थितपादतलं ॥

सुरासुरशिरश्रेणीमणिनीराजितं हृद्ये ।
 नमः शिवाय शान्ताय कारणत्रयहेतवे ॥
 पठ्यते सर्वशास्त्रेषु वेदैश्चैव विशेषतः ।
 ध्यानधारणयोगात्मा परापरविभूतये ॥
 य इदं पठते स्तोत्रं भक्त्या चैव तु पूजयेत् ।

न तस्य पीडा कुर्वन्ति ग्रहाद्यापि ग्रहोत्तमाः ॥
 वाचिकं मानसं पापं (१) नश्यते नात्र संशयः ।
 इति मौनव्रतं पुष्पं यस्तनोति महेश्वरं ।
 मुच्यते सर्वपापेभ्यो रुद्रलोकं स गच्छति ॥
 इति शिवधर्म्मोक्तं मौनव्रतं ।

—०००@०००—

श्रुतिस्मृतिपुराणेभ्यो यन्मया व्यवधारितं ।
 तत्ते वणिम सुरश्रेष्ठ कस्यान्यस्योपदिश्यते ॥
 ज्ञात्वा प्रभातसन्ध्यायामुपसृश्य च पिप्पलं ।
 तिस्रपात्रान्तु यो दद्यात् स न शोच्यः कृताकृते ॥
 व्रतानामुत्तमं ह्येतत् सर्वपापप्रणाशनं ।
 पुत्रव्रतमितिख्यातं नाख्यातं कस्यचिन्मया ॥
 इति भविष्योक्तरोक्तं पुत्रव्रतं ।

—००@००—

कच्छ्रान्ते गीयुगं दद्यात् भोजनं शक्तितः पदं ।
 विप्राणां शाङ्करं याति प्राजापत्यमिदं स्मृतं ॥
 शाङ्करं पदं यातीत्यन्वयः ।
 इति पद्मपुराणोक्तं प्राजापत्यव्रतं ।

—०—

त्रिसन्ध्यां पूज्य दम्पत्यमुपवामी विभूषणैः ।
 दद्याद्वा धनमाप्नोति मोक्षमिन्द्रव्रतादिह ॥
 इति पद्मपुराणोक्तमिन्द्रव्रतं ।

गौरीसमन्वितं शम्भुं लक्ष्म्या सह जनार्दनं ।
 राक्षीसमन्वितं सूर्यं प्रतिष्ठाप्य यथाविधि ।
 धूपोष्पयेण सहितं(१) घण्टां पात्रेण संयुतां ॥
 पात्रं, दीपपात्रं ।
 यो ददाति द्विजेन्द्राणां पुण्यै रभ्यर्च्य पाण्डुरैः ।
 दक्षिणासहितं दत्त्वा प्रणम्य च पुनः पुनः ॥
 द्विजेन्द्राणामिति बहुवचनादेव युग्मानां पृथग्दानं धूपादित्रयञ्च
 प्रतियुग्मं ।

एतद्देवीव्रतं नाम दिव्यदेहप्रदायकं ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं देवीव्रतं ।

—०—

मासोपवासी यो दद्याद्देवैः विप्राय शोभनां ।

सर्वेश्वरपदं याति भीमव्रतमिदं स्मृतं ॥

इति पद्मपुराणोक्तं भीमव्रतं ।

—०—

चान्द्रायणञ्च यः कृत्वा चैमचन्द्रं निवेदयेत् ।

चन्द्रव्रतमिदं प्रोक्तं चन्द्रलोकप्रदायकं ॥

इति पद्मपुराणोक्तं चन्द्रव्रतं ।

—००—

पक्षोपवासी यो दद्याद्विप्राय कपिलाक्ष्यं ।

ब्रह्मलोकमवाप्नोति देवासुरसृष्टजितः ।

(१) धूपोष्पयेण सहितमिति पुस्तकाकारे पाठः ।

तदन्ते राजराजः स्यात् प्रभात्रतमिदं स्मृतं ॥

इति पद्मपुराणोक्तं प्रभात्रतं ।

ब्रह्माण्डं काश्चनं कृत्वा तिलराशिसमन्वितं ।
चाहं तिलप्रदो भूत्वा वक्तिं सन्तर्प्य च द्विजान् ॥
संपूज्य विप्रदम्पत्यं मातृवस्त्रविभूषितं (१) ।
शक्तितस्त्रिपसादूर्ध्वं विश्वात्मा प्रीयतामिति ॥
पुण्येतिह दद्यात्स परं ब्रह्म यात्यपुनर्भवं ।
एतद्ब्रह्मव्रतं नाम निर्वाणफलदं नृणां ॥

इति पद्मपुराणोक्तं ब्रह्मव्रतं ।

—ooo@ooo—

यद्योभयमुखीं दद्यात् प्रभूतकनकान्वितां ।
दिनं पयोव्रती तिष्ठेत् सयाति परमं पदं ।
एतद्वसुव्रतं नाम पुनरावृत्तिदुर्लभं ॥

इति पद्मपुराणोक्तं वसुव्रतं ।

—•—

अतः परं प्रवक्ष्यामि नन्दादेव्याः पदद्वयं ।
येन सा प्रीयते वक्ष्ये चचिरेण महाव्रतात् ॥
हेमोत्थे पादुके कार्ये यथाशक्त्यनुसारतः ।

(१) चादरेच दृष्टोपितमिति पुस्तकात् पाठः ।

चाम्बदुर्वाचतैर्विष्वपत्रैः पूज्ये तु मन्त्रतः ॥
 देवीं संपूज्य भक्त्या तु स्थण्डिले प्रतिमासु च ।
 तद्गताय च विप्राय कन्यकासु निवेदयेत् ।
 मुच्यते सर्वपापेभ्यो दुर्गालोकसु गच्छति ॥
 ततः क्षये महाप्राप्नो विद्याधरपतिर्भवेत् ।
 कालेनैवमिहायातः पृथिव्यां नृपसत्तमः ॥

इति पद्मपुराणोक्तं नन्दापदद्वयव्रतं ।

—000—

सप्तराशोषिती दद्यात् छतकुम्भं द्विजातये ।
 वरव्रतमिदं प्रोक्तं ब्रह्मलोकप्रदायकं ॥

इति पद्मपुराणोक्तं वरव्रतं ।

—

एकभक्ता च सप्ताहं गौरिणीरत्र भोजयेत् ।
 संपूज्य पार्वतीं भक्त्या गन्धपुष्पविलेपनैः ॥
 ताम्बूलसिन्दूरपरैर्नारिकेलफलेन च ।
 प्रीयतां कुसुदा देवीं प्रणिपत्य विसर्जयेत् ॥
 एकैकां पूजयेद्देवीं सप्ताहं यावदेव तु ।
 पुनश्च सममे प्राप्ते ताः समैव निमज्जयेत् ।
 नङ्गैः सम्भोजयित्वा च यथाशक्त्वा बिभूषणैः ।
 भूषयित्वा माख्यवस्त्रैः कर्चवेष्टाङ्गुलीयकैः ॥
 कुसुदा माधवी गौरी भवानी पार्वती समा ।
 प्रम्विका चेति संपूज्या दर्पणं दापयेत् पृथक् ॥

ब्राह्मणं पूजयेत्त्वेकं वाच्यं सम्पन्नमस्तु मे ।
 सप्तसुन्दरकं नाम व्रतं पापहरं शुभम् ।
 कृत्वा प्राप्नोति सौन्दर्यं सोभाग्यमतुलं तथा ॥
 इति भविष्योत्तरोक्तं सप्तसुन्दरकव्रतम् ।

नन्दिकेश्वर उवाच ।

अतः परमिदं गुह्यं वक्ष्यामि मुनिसत्तम ।
 पुण्यातिशयसंयुक्तं सर्वदेवैरनुष्ठितम् ॥
 ब्रह्मणा विष्णुना देव्या स्कन्देन्द्रेण यमेन च ।
 वरुणादित्यसोमाम्निमरुत्तनदनारदैः ॥
 धर्मेस्त्रीशुकनक्षत्रैर्विस्तोहितशनैश्चरैः ।
 विश्वामित्रवसिष्ठात्रिहहस्पतिबुधादिभिः ॥
 श्वेतागस्त्यदधीचाद्यैः सर्वैश्च मुनिसत्तमैः ।
 भार्गवात्रिमहाकालैश्चण्डेश्वरगणाधिपैः ॥
 हयवासुम्निकर्कोटकुलिकानन्ततप्तकैः ।
 शङ्खपद्ममहापद्मैरन्यैश्चापि महोरगैः ॥
 सिद्धैर्यक्षैः किंपुरुषैर्वसुभिश्च महात्मभिः ।
 अक्षरोदैत्यगन्धर्वैश्चोभूतगणैरपि ॥
 शिवा गतिर्यथा प्राप्ता सर्वगत्यतिशायिनी ।
 मया शिवप्रसादेन तथा विधिपरं शृणु ॥
 सितचन्दनतोयेन स्नाप्य लिङ्गं विसेष्य च ।
 श्वेतैर्विकसितैः पद्मैः संपूज्य प्रक्षिपत्य च ।

पङ्कजे विमले सोमे निष्छिद्रे पुष्पिते घने ॥

सोमे रम्ये ।

मध्ये केसरजालस्य स्वाप्य लिङ्गं कनौयसं ।

चङ्ग, उमात्रं विधिवत्सर्व्वं गन्धमयं शुभं ।

स्वाप्य दक्षिणामूर्त्तिं तु विश्वपत्रैः समर्चयेत् ॥

दक्षिणामूर्त्तिसमीपे ।

अगुहं दक्षिणे पार्श्वे पश्चिमेन मनःशिलं ।

उत्तरे चन्दनं दद्याद्दरितालञ्च पूर्व्वतः ॥

शुभगन्धैश्च कुसुमैर्विचित्रैश्चैव पूजयेत् ।

धूपं कण्ठागुहं दद्यात्सृष्टश्चापि गुग्गुलुं ॥

बासांसि चापि सूक्ष्माणि विकाशानि नवानि च ।

पायसं घृतसंयुक्तं घृतदीपांश्च कारयेत् (१) ॥

सर्व्वं निवेद्य मन्त्रेण ततो गच्छेत् प्रदक्षिणं ।

प्रणम्य भक्त्या देवेशं स्तुत्वा चान्ते क्षमापयेत् ॥

सर्व्वोपहारसंयुक्तं तच्च लिङ्गं निवेदयेत् ।

शिवाय शिवमन्त्रेण दक्षिणामूर्त्तिमाश्रितः ॥

दक्षिणामूर्त्तिमाश्रितो यस्तस्मै शिवाय ।

अनेन विधिना देवाः सर्व्वदेवत्वमागताः ।

देवी देवीत्वमापन्ना स्कन्दः स्वामित्वमागतः ॥

इन्द्रश्च देवराजत्वं गच्छाच्च गणताङ्गताः ।

एवं योऽर्चयते लिङ्गं पद्मे गन्धमयं शुभं ॥

सर्व्वपापविनिर्मुक्तः शिवमेवाभिगच्छति ।

(१) दापयेदिति कश्चित् पाठः ।

एतद्व्रतोत्तमं गुह्यं शिवलिङ्गं महाव्रतं ।
भक्तस्य ते मयाख्यातं न देयं यस्य कस्यचित् ॥

इति शिवधर्मात्तरोक्तं शिवलिङ्गव्रतं ।

— ००० —

युधिष्ठिर उवाच ।

देवदेव महाभाग बालानां हितकाम्यया ।
वर्षापनविधिं ब्रूहि राज्ञामपि विशेषतः ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

पितृकर्मसमुद्भूतः पाराशर्यो महामुनिः ।
गत्वा प्रयागं सत्तोर्थं गङ्गायमुनयोस्तटे ॥
कृत्वा स्नानञ्च विधिवत् कृत्वापि पितृतर्पणं ।
नत्वा तु माधवं देवं दृष्ट्वा तत्र महामुनिं ॥
सनत्कुमारं योगीन्द्रं सत्यलोकनिवासिनं ।
तं प्रणम्य यथान्यायं मुनिः कालोसमुद्भवः ॥
पूजितस्तेन विधिवत् कथायुक्ते मनोहराः ।
कथान्ते तु महाभाग मुनिः पप्रच्छ मादरं ।
व्यासः सत्यवतीसुतः सर्वलोकहिताय वै ॥

सनत्कुमार उवाच ।

मासि मासि प्रहृष्टन्तु बालवर्हापनं ब्रूयैः ।
प्रासमान्तात्मन्ताश्च समात्तात् सविधीयते ॥
कुमुदा माधवी गौरी रुद्राणी पार्वती उमा ।
काली सरस्वती चैव सावित्री ब्रह्मणः प्रिया ॥

सती संज्ञा तथा मेधा पुष्टितुष्टिसमन्विता ।
 नृपतिभ्यपरित्रासा जयन्ती नाम षोडशी ॥
 पूजनीयाः प्रयत्नेन सूर्यमध्ये विलिख्य ताः ।
 रजनीपिष्टतो वापि लिखेद्वा कुङ्कुमेन वा ॥
 गन्धपुष्पैः सगन्धैश्च दीपवस्त्रनिवेदनैः ।
 फलैर्मनोहरैर्भक्षैः पक्वान्नैर्विविधैरपि ॥
 तूर्य्यघोषैर्ब्रह्मघोषैः कुर्यात्तत्र महीक्षवं ।
 सोपलिप्ते शुची देशे स्थाप्य सूर्य्यं विधानतः ॥
 अक्षतैश्चन्दनैः स्थाप्य कुमुदाद्याः पृथक् पृथक् ।
 नामभिः पूजनीयास्ताः स्नापयित्वा च बालकं ॥
 भूपतिं वा मुनिञ्चैव सर्व्वालङ्कारभूषितं ।
 पूजेतां मातृपितरौ बालवर्द्धापने सति ॥
 पुरोधां पूजयेद्ब्रह्मन् राजवर्द्धापने विधी ।
 कुमुदाद्याः समुद्दिश्य वंशपात्राणि कल्पयेत् ॥
 एकैकस्यै धनाढ्यान्तु दद्यात् षोडश षोडश ।
 तदर्क्षानि तदर्क्षानि वै चैकैकमद्यापि वा ॥
 बहुपक्वान्नयुक्तानि फलपुष्पयुतानि च ।
 सुवासिनीभ्यो विपाशां दद्याद्भक्तिपुरःसरं ॥
 प्रीयतां कुमुदाद्या मे बालत्राणविवर्द्धनो ।
 बालेन यशसा पुष्ट्या बालं मे वर्द्धयन्तु वै ॥
 प्रयच्छन्तु सदारोग्यं सौख्यं सौभाग्यमेव च ।
 श्रीच ते इतिमन्त्रेण अर्घ्यन्ताभ्यः प्रकल्पयेत् ॥
 एवं कृत्वा नमस्कृत्य विप्राग्नीर्वादे पर्व्वकं ।

भुञ्जीत गोत्रजैः सार्धं हृष्टतुष्टमना नृप ॥
वस्त्रताम्बूलपुष्पादि दिने तस्मिन् प्रकल्पयेत् ।
सुवासिनीनां विप्राणां कुमुदा प्रीयतामिति ॥
अथाथर्वणगोपथब्राह्मणे ।

अथ वर्षशतं प्रवर्द्धमाने(१)संवत्सरे राजानमभिवर्द्धयिष्यन्नायुषा-
वर्द्धसा तेजसा यशसा प्रजया श्रिया विजयेन कोर्त्योपचितैर्मङ्गलै-
रभ्युक्ष्य रुक्मैरर्चयित्वा माहेन्द्रं हविर्निरूप्य लोकपालेभ्यः आप-
येत् । माहेन्द्रो यत्तुजसेति लोकपालांश्चेष्टा राजानमन्वालय-
जुहुयात् । अर्ष्वाचमिन्द्र तारामिन्द्र वर्षय क्षत्रियं मरुतिमितं
जीव शरदोवर्द्धमानोऽभिवर्द्धस्व प्रजया वातुधानेतिहाभ्यां, रक्षन्तु-
त्वागिरयः(२) इति चतसृभोरक्षां कृत्वा सगुण आसत इति
रोचनेनालङ्घ्यार्थात् । ना वै स तन्तुमिति मृत्तं सम्पातयितुं कृत्वा
धाता ते यन्त्रिमित्युक्तमभिवर्द्धस्वेत्यसपत्नी भवेदित्येतत् कर्म सौर-
लपुत्रः पैठीनसिः ।

स्कन्द पुराणे ।

एवं वर्षापनक्षैव जन्म वा प्राप्तवासरे ।
मासे मासे व्यतीते तु बालानां वृद्धिर्हेतवे ॥
न बालरोगाः प्रभवन्ति तस्य
न स्कन्द रोगा न तु शाकिनीभ्यः ।
भय भवेन्नैव जलान्निदिग्भ्यो
बालस्य राज्ञोऽपि विशेषतश्च ॥

(१) प्रवर्द्धमाने इति पुलस्तकान्तरे पाठः ।

(२) जगन्निदिग्भ्यो इति पुलस्तकान्तरे पाठः ।

सम्प्राप्य राज्यं नृपतिः समान्ते
 कुर्यादिदं शान्तिमहीत्सवच्च ।
 ग्रहान् सुसंपूज्य विनायकञ्च
 दुर्गा च भक्त्या कुमुदादिदेवी ।
 यः पूजयेद्भक्तिपुरःसरं वै
 जेता रिपूणां बलबुद्धियुक्तः ॥
 इति सङ्कीर्णविधिः ।

— ००० —

अथर्वणगीपथसाम्राज्ये ।

अथ घृतावेक्षणं ।

प्रातः प्रातः शङ्खदुन्दुभिनादेन ब्रह्मघोषेण वा प्रबोधितो
 राजा शयनगृहादुत्थायापराजितान्दिशमभिकर्म्योपाध्यायं प्रती-
 क्षेत । अथ पुरोधाः स्नातानुलिप्तः शुचिः शुक्लवामाः कृतमङ्गल-
 रचितोष्णीषः शान्तिगृहं प्रविश्य देवानां नमस्कारं कृत्वा स्वस्ति-
 वाचनमनुष्णाप्य विनीतोपविश्येद्यमस्य लोकाद्यथाकालं यो न
 जीवीसीति स्वस्थयनं कृत्वोन्मिष्याभ्युक्ष्य परिस्तीर्य शान्तातीयेन
 तिलान् घृताक्तान् जुहुयात् शान्तः सौवर्णराजतमौदुस्वरं वा पात्रं
 घृतपूर्णं सहिरण्यं घृतस्य जुतिसहस्रं शृङ्गीरुविष्णो विक्रमस्त्रि-
 त्वभिमन्त्रा आज्यन्तेज इति तदा लभते ।

आज्यन्तेजः ससुद्धिमाज्यं पापहरं परं ।

आज्येन देवास्तृप्यन्ति आज्ये लोकाः प्रतिष्ठिताः ॥

भोमान्तरीक्षदिदं वा यस्ते कल्पसमागतं ।

सर्वं तदाज्यमंस्पर्शान् प्रणायमुपगच्छतु ॥

तस्मिन् सर्वमात्मानं पश्येदक्ष्णा । शिरोहृदयमन्वाकभे-
दुच्चापतन्त्रमिति ह्यर्था । सूर्यस्यावृतमिति प्रदक्षिणमावृत्य शेषं
साधयेदिति ।

तत्र श्लोकाः ।

अयं घृतावेक्षणस्य प्रोक्तो विधिरथर्वणः ।
एवं समाचरेत्सम्यक् प्रयतः सुसमाहितः ॥
उपास्योदयकाले तु स राजा जयमिच्छया ।
स राजा जयते राष्ट्रं न पश्यन्ते तु शत्रवः ॥
पश्चादानीय कपिलां राजा दद्याद्विजातये ।
आशीर्वाद् ततश्चैव श्रुत्वा तन्मुखनिःसृतं ॥
गुणवावेदिते तस्माद्दीर्घमायुरवाप्नुयात् ।
पुत्रान् पौत्रांश्च मित्राणि सभते नात्र संशयः ॥
आयुष्मद्य वृद्धस्य सौभाग्यं शत्रुतापनं ।
दुःस्वप्ननाशनं धन्यं घृतावेक्षणमुच्यते ॥

इति घृतावेक्षणविधिः ।

अथ अगस्त्यार्घ्यविधिः ।

पद्मपुराणात् ।

भीष्म उवाच ।

भूर्लोकोऽथ भुवर्लोकः स्वर्लोकोऽथ महर्जनः ।
तपः सत्यञ्च सप्तैते देवलोकाः प्रकीर्त्तिताः ॥
पर्यायेण तु सर्वेषां आधिपत्यं कथं भवेत् ।

इह लोके शुभं रूपं आयुरारोग्यमेव च ।
लक्ष्मीश्च विपुला ब्रह्मन् कथं स्यात्सुरपूजित ॥

पुलस्त्य उवाच ।

वसिष्ठो यो भवेत्तस्मिन् जलकुम्भे च पूर्व्ववत् ।
ततश्चेतश्चतुर्बाहुः साक्षसुत्रकमण्डलुः ॥
अगस्त्य इति शान्तात्मा बभूव ऋषिसत्तमः ।
मलयस्यैव देशे च वैखानसविधानतः ॥
सभार्यः समुतोविप्रैस्तपसके सुदुष्करं ।
ततः कालेन महता तारकादिनिपौडितं ॥
जगद्दीप्य स कोपेन पीतवान्वरुणाक्षयं ।
ततोऽस्य वरदाः सर्वे बभूवुः शङ्करादयः ॥
ब्रह्मा विष्णुश्च भगवान् वरदानाय जग्मतुः ।
वरं वृणीष्व भद्रं ते यथाभीष्टोऽथ वै सुने ॥

अगस्त्य उवाच ।

यावद्ब्रह्मसहस्राणां पञ्चविंशतिकोटयः ।
वैमानिको भविष्यामि दक्षिणाश्वरवर्त्मनि ॥
महिमानोदयात् कुर्यात् यः कश्चित् पूजनं मम ।
स चेव पुण्यतां यातु वर एष वृत्तो मया ॥
आहं ये तु करिष्यन्ति पिण्डपूर्व्वम्तु भक्तितः ।
तेषां पितृगणः सर्व्वो मया सार्धं दिवि स्थितः ॥
एतत् कालञ्च तिष्ठेत् एष एव वरो मम ।
एवमस्त्विति तेष्यक्ता जग्मुर्द्वा यथागतं ।
तदर्थः संप्रदातव्यो अगस्त्यस्य सदा बुधैः ॥

विष्णुधर्मोत्तरे ।

अगस्त्यस्य महामुनिं प्रति

पितामहवाक्यं ।

देवकार्यमहं ब्रह्मन् त्वया कृतमिदं शुभं ।
 तस्मात्स्थानन्तु ते वक्ष्मि वैश्वानरपथादहिः ॥
 दिव्यदेहो भवांस्तत्र विमानवरमास्थितः ।
 दक्षिणां दिशमान्नित्यं अस्तोदयसमन्वितः ॥
 प्रसादमन्त्रसां श्रेयं निर्विषत्वं तवोदये ।
 भविष्यत्यमलप्रज्ञ मत्प्रसादात्तदैव तु ॥
 शरत्समुदितो भूत्वा वसन्तेऽस्तमयं हि ज ।
 प्राकाम्ययुक्तश्च तथा समयां वसुधाक्षर ॥
 शरत्समयमासाद्य तस्माद्विप्र तवोदये ।
 पूजां त्वमाप्स्यसे लोके मत्प्रसादाद्विजोत्तम ॥
 ये च त्वां पूजयिष्यन्ति गन्धमात्यफलाक्षतैः ।
 दधिकाक्षनरत्नैश्च परमान्त्रेन मूरिणा ॥
 पूर्णकुम्भैः सकृष्णगण्डैश्चोपानहयष्टिभिः ।
 धेन्वा वृषेण भक्षैश्च वासीभिः कनकेन च ॥
 संवत्सरश्च त्यागेन फलस्यैकस्य वाप्यथ ।
 पूजनैर्ब्राह्मणानाञ्च त्वन्मन्त्रं परिकीर्त्तनैः ।
 विधानं यदगस्त्यस्य पूजने तद्वदस्व मे ॥

पुलस्त्य उवाच ।

प्रसूषसमये विद्वान् कुर्यादस्योदये निधि ।
 ज्ञानं यत्कृतिलैसाहङ्गुक्तमान्वाङ्मयी गृही ॥

निश्चये निशि दिनमुखे स्नानं समाचरेत् ।

स्थापयेद्व्रणं कुम्भं माण्यवस्त्रविभूषितं ॥

पञ्चरत्नसमायुक्तं घृतपात्राच्चसंयुतं ।

नानाभक्षफलैर्घृतं ताम्रपात्रसमन्वितं ॥

अङ्गुष्ठमात्रं पुरुषं तथैव

सौवर्णमत्यायतबाहुदण्डं ।

चतुर्भुजं कुम्भमुखे निधाय

धान्यानि सप्ताम्बरसंयुतानि ॥

सकाशपुष्पाक्षतशुक्तियुक्तं

मन्त्रेण दद्याद्द्विजपुङ्गवाय ।

सत्क्षिप्य लम्बोदरदीर्घबाहु-

मनन्यचेता यमदिक्षु खल्वयः ॥

सकाशपुष्पाक्षतया शुक्त्या युक्तं प्रयुक्तमर्घ्यं सत्क्षिप्य दद्यादित्य-
न्वयः । अत्यायतबाहुदण्डमित्युत्क्षेपणक्रियाविशेषणं । लम्बोदर-
दीर्घबाहुमिति प्रतिमाविशेषणं । द्विजपुङ्गवीऽगस्त्यः ।

श्वेताणां दद्याच्छ्वसिमुक्तिरोप्य-

श्ववत्सुरां हेममुखीं सवक्त्रां ।

धेनुवतः क्षीरवतीं प्रशम्य

सवस्त्रघण्टाभरणां द्विजाय ।

भविष्योत्तरात् ।

वाचनं कारयित्वा च यथाशक्त्या सुशीभनं ।

बुधवाक्कतिं प्रशान्त्य जटामण्डलधारिणं ॥

कमण्डलुकरं शिष्यैः स्वर्गे च परिवारितं ।

अन्यथविषहन्तारं दर्भाक्षस्रग्धरं मुनिं ।
तस्मिन् कुम्भे समालम्बनं चन्दनेन ततो न्यसेत् ॥
आपितश्चानुलिप्तश्च चन्दनेन सुगन्धिना ।
पूजितं जातिकुसुमैश्चैधूपैश्च धूपितं ॥
अथ विष्णुरहस्ये ।

काशपुष्पमयीं रम्यां कृत्वा मूर्तिं तु वारुणेः ।
प्रदोषे विन्यसेत्तान् पूर्यकुम्भे स्खलङ्कते ॥
इह पूर्वोक्तचतुर्वर्णकप्येण सह शतयनुसाराद्विकल्पः । पूर्वकुम्भो
जलपूर्यकुम्भः ।

कुम्भस्थं पूजयेत्तन्तु पुष्पधूपविलेपनैः ।
दध्यक्षतबलिं दद्याद्राक्षीं कुर्यात् प्रजागरं ॥
पूजा च वक्ष्यमाणैरर्घ्यमन्त्रविधेया ।
प्रभाते तं समादाय यावत् पुण्यजलाशयं ।
निशावसाने तान् पश्यन् जलान्ते प्रतिमां मुनेः ॥
अर्घ्यं दद्यादगस्त्याय भक्त्या सम्यगुपवीतः ।
पुष्पैर्मूलैः फलेर्गन्धैर्धूपैश्च सुगन्धिभिः ॥
द्राक्षाखर्जूरकर्कशूनारिकेलादिभिः शुभैः ।
पञ्चरत्नसमायुक्तं हेमरूप्यसमन्वितं ॥
सप्तधान्यभृतं पात्रचन्दनेन समायुतं ।
तत्तु तान्त्रमयं कृत्वा दद्यादर्घ्यं द्विजातये ॥
अगस्त्यः खनमानेति पठन्मन्त्रमिमं मुने ।
यथा लाभकतार्थेन सर्व्वैर्वाद्य स्वशक्तितः ॥
अर्घ्यं ददुरागस्त्याय शूद्रेमन्त्रविधिस्त्वयं ।

काशपुष्पप्रतीकाश वज्रिमाहृतसम्भव ।

मित्रावरुणयोः पुत्र कुम्भयोने नमोस्तु ते ॥

भविष्योत्तरात् ।

ततश्चार्घ्यः प्रदातव्योयैर्द्रव्यैस्तान् नृणुस्व मे ।

खर्जूरैर्नालिकेलैश्च कुष्माण्डैश्चपुसैरपि ॥

कर्कोटैः कारुवैक्षैश्च कर्मरैर्वज्रिपूरकैः ।

हस्ताकैर्दाडिमैश्चैव नारदैः कदलीफलैः ॥

सूर्वाङ्गरैः कुशैः काशैः पद्मैर्नीलोत्पलैस्तथा ।

नानाप्रकारैर्भक्षैश्च गोभिर्वस्त्रै रसैः शुभैः ॥

विरुद्धैः सप्तधान्यैश्च वंशपात्रे निधापितैः ।

सौवर्णरूप्यपात्रेण ताम्रवंशमयेन च ॥

सूर्ध्वं स्थितेन नम्रेण जानुभ्याम्बरणीं गतः ।

दक्षिणाभिमुखो भूत्वा ध्यात्वागच्छं क्षणं नृप ॥

दद्यादर्थ्यं प्रयत्नेन चेतसागुरुचन्दनैः ।

शुक्लाकारं चर्च्य पात्रं सकाशपुष्पाक्षतशुक्तीति वचनात् ।

काशपुष्पप्रतीकाश वज्रिमाहृतसम्भव ।

मित्रावरुणयोः पुत्र कुम्भयोने नमोऽस्तु ते ॥

वातापिर्भक्षितो येन समुद्रः शोषितः पुरा ।

लोपासुद्रापतिः त्रीमान् योऽसौ तस्मै नमो नमः ॥

येनोदितेन पापानि विलयं यान्ति व्याधयः ।

तस्मै नमोस्त्वगस्थाय सशिष्याय च पुत्रिणे ॥

ब्राह्मणो वेदमन्त्रेण दद्यादर्थ्यं नृपोत्तम ।

यगस्वः सुगमानः सुनिव्रतैः प्रजामपत्वं वसमिच्छमानः ।

उभौ वर्षाद्विषयः पुष्येण सत्या देवेष्वाग्निषो जगाम ॥
 दत्वेवमर्घ्यं कौरव्यं प्रणिपत्य विसर्जयेत् ।
 अर्चितस्त्वं यथाशक्त्या नमोऽगस्त्यमहर्षये ।
 ऐहिकानुभिर्कीं दत्त्वा कार्यसिद्धिं व्रजस्व मे ॥

विसर्जनमन्त्रः ।

विसर्जयित्वाऽगस्त्यं तं विप्राय प्रतिपादयेत् ।
 दैवज्ञे व्यासरूपाय वेदवेदाङ्गवादिने ॥
 अगस्त्यो मे मनस्वोऽस्तु अगस्त्यो हिम्नं घटे स्थितः ।
 अगस्त्यो हिजरूपेण प्रतिगृह्णातु सत्कृतः ॥
 अगस्त्यः समज्ज्योत्स्नाशयत्वावयोरघं ।
 अतुलं विमलं सौख्यं प्रयच्छ त्वं महामुने ।

प्रतिग्रहमन्त्रः ।

एवं यः कुरुते भक्त्या ज्ञागस्त्यव्रतमादरात् ।
 फलमेकं तथा धान्यं रसस्यैकं परित्यजेत् ।
 सम्यग्ने च तत्रा वर्षं पुनरप्यनुपक्रमेत् ॥

विष्णुरहस्ये ।

दत्त्वार्घ्यं विधानेन नरः कुम्भोद्भास्य च ।
 त्यजेद्गस्त्यमुद्दिश्य धान्यमेकं फलं रसं ॥

अथ मासेष्यगस्त्यार्घ्यमभिधाय ।

प्रत्यब्दं फलत्वागमेवं कुम्भं न सीदति ।

होमं कृत्वा ततः पञ्चाहर्जयेन्मानवः फलं ॥

होमं समाह्वानेन प्रचवादिना अर्घ्यमन्त्रेण सर्पिणा विधेयः ।

ततोऽनु पूजयेद्विप्रान् वृतपायसमोदकैः ।
 गाः सुवर्षश्च वासांसि तेभ्यो दद्याच्च दक्षिणां ॥
 वृतपायसयुक्तेन पात्रेण स्वगिताननं ।
 सहिरस्सच्च तं कुम्भं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥
 अप्राप्ते भास्करे कन्यामर्वाग्नौ सप्तभिर्दिनेः ।
 अर्घ्यं ददुरगस्त्वाय ये वसन्ति महीदये ॥
 पूर्वान्चत्नान्तर्गतेऽर्क ईत्वर्घः । उज्जयन्त्यां त्वर्वाक् ।

यदाह वराहमिहिरः ।

संख्याविधानात् प्रतिदेशमस्य
 विज्ञाय संदर्शनमादिशेद्वृद्धः ।
 तच्चोज्जयन्त्यामगतस्य कन्यां
 भागेः स्वराख्यैः स्फुटभास्करस्य ॥

स्वराख्यैर्भागेः सप्तभिरंशैः कन्यामगतस्य स्फुटस्यादित्यस्य
 मघाद्वितीयचरणान्तर्गतस्येत्यर्थः ।

तथा ।

ईषत्प्रकाशेऽक्षरस्मिजाले ।
 नैशेऽन्धकारे दिशि दक्षिणस्यां ॥
 संवत्सरावेदितदिग्विभागो ।
 भृगोऽर्घ्यमूर्ध्वा प्रयतः प्रयच्छेत् ॥

भविष्योत्तरे कृष्णवाक्यं ।

तस्मैव चेष्टितस्यार्घ्येः प्रयच्छाख्यं बुधिष्ठिर ।
 कन्यायामागते सूर्ये अर्वाग्नौ सप्तमे दिने ।
 कन्यायां समनुप्राप्ते अर्घ्यकालो निवसते ॥

युविष्ठिरे पुरे पूर्वां तृतीयचरणस्त्रिंशः सत्यर्कउदये इत्यर्थः ।
यस्मिन् देशे यस्मिन् दिने अगस्त्यसन्दर्शनं भवति । तस्मिन्
देशे तस्मिन्नर्घ्यदानमिति रुच्येपः । कन्यायां समनुप्राप्ते इत्यादि-
ना सप्तमाहिनादारभ्य संक्रान्तिमवधीकुर्वता उदयादारभ्य सप्त-
दिनाभ्यन्तरेऽपि युक्तमर्घदानमित्येतद्दर्शितं ।

तथाच पञ्चपुराणे ।

आसतरात्रादुदयादयमस्य

दातव्यमेतत्सकलं नरेण ॥

यमस्य अगस्त्यस्य । उदयादूर्ध्वं आसतरात्रात् । सतरात्रमव-
धीकृत्य एकस्मिन् दिने अर्घ्यादातव्य इत्यर्थः ।

सतरात्रादूर्ध्वं तु अर्घ्यदानमनर्धकमिति ।

महापुराणे ।

अगस्त्योदक्षिणामाशामाश्रित्य नभसि स्थितः ।

वरुणस्यात्मजो योगौ विश्वपादविमर्द्दनः ॥

कन्याशिभ्यः पश्चिमेभ्यः षट्भ्यः प्रारभ्य संख्यया ।

अंगान् द्विसप्ततिं यावत् भुङ्क्ते सूर्यस्तु राशिषु ।

उदेति तावद्भगवान् अगस्त्यो व्योम्नि धामभृत् ॥

उक्षांशेभ्यः पश्चिमेभ्यः प्रारभ्य पूर्ववत् क्रमात् ।

षट्त्रिंशतश्च यावच्च भुङ्क्ते भानुयेथाक्रमं ॥

तावच्छान्तस्य पातालं प्रयात्यस्तमुपैति च ।

उक्षा षष्ठमः । अंगचरणः । नवचरणो राशिः । सप्तादनक्ष-
त्रयभोगात् । सतरात्रतृतीयचरणादयः । तद्विसप्ततिरस्मिन्नी तृती-
यचरणान्ताः । एतावत् सूर्यभागेनोदयकालः । शेषोऽपि कालः

कृतीपवासः सम्पश्येदगस्त्यमुदितं मुनिं ।
 सर्वकामप्रदं पुण्यं सर्वभाग्यप्रवर्धनं ॥
 अर्चनीयश्च भगवान् अवाभक्तिसमन्वितैः ।
 पूर्वकुम्भैः सकृन्माण्डैर्यवैर्धान्यैर्हृतेन च ॥
 जातिपद्मोत्पलैः पुष्पैश्चन्दनेन सितेन च ।
 गोभिर्हृतैस्तथा वस्त्रै रत्नैः सागरसम्भवैः ॥
 उपानच्छत्रदण्डैश्च पादुकाञ्जनवल्कलैः ।
 हविषा परमाननेन फलैः पुष्पैश्च शीभनैः ॥
 अन्धप्रकारैर्भक्ष्यैश्च होमैर्ब्राह्मणतर्पणैः ।
 आशास्य च शुभं काममुद्दिश्यैकं मनोगतं ॥
 यद्यहं प्राप्नुयाम् कामं भगवन्मनसि स्थितं ।
 त्वत्प्रसादादविघ्नेन भूयस्त्वां पूजयाम्यहं ॥
 इत्युक्त्वा पूजयेत्पद्माद्देवार्चां च तथा गुरुम् ।
 ब्राह्मणान् भोजयित्वा तु ततो भुञ्जीत वाग्यतः ॥

अथ पद्मपुराणे ।

आसत्पराजानुदयाद्यमस्य

दातव्यमित्यक्तकलं नरेण ।

यावत्समाः सप्तदशाश्च वा स्त्रु-

रवोर्ध्वमप्यत्र वहन्ति केचित् ॥

अनेन विधिना यस्तु पुमानर्घं निवेदयेत् ।

इमं लोकमवाप्नोति रूपारोग्यसमन्वितः ॥

द्वितीयेन भुवर्लोकं स्वर्लोकश्च ततः परं ।

सतैव लोकानाप्नोति सप्तार्चान् च प्रवच्छति ॥

यावदायुश्च यः कुर्यात् स परं ब्रह्म गच्छति ।
वराहसंहितायां ।

नरपतिरिममर्घ्यं अहधानो ददानः
प्रविगतमद्दोषैर्निर्जितारातिपक्षः ।
भवति यदि हि दद्यात्सप्तवर्षाणि सम्यक् ।
जलनिधिरसनायाः स्वामितामेति भुमिः ॥

भविष्योत्तरात् ।

दत्त्वाऽर्घ्यं सप्तवर्षाणि क्रमेणानेन पाण्डव ।
पुमान्यत्फलमाप्नोति तदेकाग्रमनाः शृणु ॥
ब्राह्मणः स्यात् चतुर्वेदः सर्वशास्त्रविशारदः ।
क्षत्रियः पृथिवीं सर्व्यां प्राप्नोत्यर्णवमेखलां ॥
वैश्यानां धान्यनिष्पत्तिर्गोधनञ्चापि निन्दति ।
शूद्राणां धनमारोग्यं सस्यान्नञ्चाधिकं भवेत् ॥
स्त्रीणां पुत्राः प्रजायन्ते सौभाग्यं गृहसुखिमतम् ।
विधवानां महत्पुण्यं वर्धते पाण्डुनन्दन ॥
कन्या भर्तारमाप्नोति व्याधेर्मुचेत दुःखितः ।
येषु देशेष्वगस्तुर्धनं पूजेयं कियते जनेः ॥
तेषु देशेषु पर्व्वन्धः कामवर्षी प्रजायते ।
ईतयः प्रथमं यान्ति नश्यन्ति व्याधवस्तथा ॥
पठन्ति ये त्वगस्तुर्व्वर्त्तनं शृण्वन्ति चापरे ॥
ते सर्व्वे पापनिर्मुक्ताः चिरं स्थित्वा महीतले ।
हंसयुक्तविमानेन स्वर्गं यान्ति नरोत्तमाः ॥
मर्त्य्यदीप्सि गृहं परमर्षिबुद्धं

पूजयेद्विविधैः पुष्पैस्तथा सागुरुचन्दनैः ।
 धूपं कृष्णागुरुं दद्यात्सृष्टं वापि गुग्गुलं ॥
 वामांसि च सुसूक्ष्माणि विकेशानि निपिद्येत् ।
 पादसं छृतसंयुक्तं छृतदीपांश्च दापयेत् ॥
 सर्वं निवेद्य मन्त्रेण ततो गच्छेत् प्रदक्षिणं ।
 प्रणम्य शिरसा भानुमुत्थायेनं क्षमापयेत् ॥
 सर्व्वीपहारसंयुक्तं बलिन्देवाय चानुरेत् ।
 खखोलकायेति मन्त्रेण सर्वायामिततेजसे ॥
 अनेन विधिवद्देवञ्चार्चयित्वा पुरा रविं ।
 अहं ब्रह्मत्वमापन्नः प्रसादान्नास्करस्य तु ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तं व्योमव्रतं ।

— ००० —

निशि कृत्वा जले वासं प्रभाते गोपदो भवेत् ।
 वारुणं लोकमाप्नोति वरुणव्रतमिहाच्यते ॥

इति पद्मपुराणोक्तं वरुणव्रतं ।

— — —

योऽष्टमेकं प्रकुर्व्वीत नक्तं पर्व्वणि पर्व्वणि ।
 पर्व्व पञ्चदशी ।
 ब्रह्मचारो जितक्रोधः शिवार्चनरतः सदा ।
 वत्सरान्ते च विप्रेन्द्र शिवभक्तान् समाहितान् ॥

भोजयित्वा ततो ब्रूयात् प्रीयतां भगवान् प्रभुः ।
 एवं विधिसमायुक्तः शिवलोकञ्च गच्छति ।
 न च मानुषतां लोके अभ्रुवां प्राप्नुते नरः ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तं पर्वनक्तव्रतं ।

—०००—

पृथिवीभाजने भुङ्क्ते नित्यं पर्वसु यो नरः ।
 अतिरात्रफलं देवि अहोरात्रेण विन्दति ॥
 पृथिवीभाजने भूमावन्नं निधायेत्यर्थः शिवोऽत्र देवता ।

इति पद्मपुराणोक्तं पर्वभूभाजनव्रतं ।

—००(॥)००—

यो विंशतिपलादूर्ध्वं महीं कृत्वा तु काञ्चनीं ।
 दिनं पयोव्रतं दद्याद्भद्रलोके महीयते ।
 धराव्रतमिदं प्रोक्तं सप्तकल्पयतानुगं ।
 दिनं देवानामुत्तरायणं पयोव्रतमित्यभन्तरं कृत्वेत्यनुसङ्गः ।
 रुद्रो देवता धरादानं पारणं ।

इति पद्मपुराणोक्तं धराव्रतं ।

—०००—

नन्दिकेश्वर उवाच ।

तथा सर्वफलत्यागमाहात्म्यं शृणु नारद ।

यदक्षयं परे लोके सर्वकामफलव्रतं ॥
 मार्गशीर्ष शुभे मासि तृतीयायां मुनिव्रतं ।
 द्वादश्यामथ वाष्टम्याञ्चतुर्दश्यामथापि वा ॥
 आरभेच्छुक्लपक्षस्य कृत्वा ब्राह्मणवाचनं ।
 अन्येष्वपि च मासेषु पुण्ये ऽङ्गि मुनिसत्तम ॥
 सदक्षिणां पायसेन शक्तितः पूजयेद्भिजान् ।
 अष्टादशानां धान्यानां अन्यत्र फलमात्रकं ॥
 वर्जयेदष्टमेकन्तु विनैवौषधकारणात् ।
 सप्तमं काञ्चनं रुद्रन्यर्मराजञ्च कारयेत् ॥
 कृष्णान्ध्रं मातुलिङ्गञ्च हस्ताकम्पनसन्तथा ।
 आम्नाम्नातकपितृथानि कालिङ्गमथ वारुकं ॥
 श्रीफलाश्वत्थवदरञ्चम्बीरं कदलीफलं ।
 कर्भरन्दाडिमं शक्त्या कलधीतानि षोडश ॥

कलधीतं हेम ।

मूलकामलकञ्जमूतिन्तिङ्गीकरमन्दकं ।
 कडैलकञ्च तुण्डीरं करीरकुटजं समी ॥

एलकमेलाफलं ।

उदुम्बरं नारिकेलन्दाचाथ वृहतीद्वयं ।
 रीप्यानि कारयेच्छ्रुतया फलानीमानि षोडश ॥
 ताम्रन्तालफलं कुर्यादगस्तिफलमेव च ।
 पिण्डीरकाश्मर्यफलं तथा मृणालकन्दकं ॥

काश्मर्यः श्रीपर्णी ।

रत्नालुकाकण्टकञ्च केतकान्नीकचिर्भटं ।

केतकः अम्बुप्रसादनफलं । अम्बुलीकश्चिच्छा ।

चित्रवल्लीफलं तद्वत् कूटशीलमल्लिजं फलं ।

कूटशास्त्रलिः रोहीतकः ।

ग्रामनिष्ठावमधुकवटेऽङ्गुदपटोलकं ।

मधुकीमधुकः । ईङ्गुदो हिङ्गुणः ।

ताम्राणि षोडशैतानि कारयेच्छक्तितो नरः ।

उदकुम्भद्वयं कुर्याद्वाग्योपरि सवस्त्रकं ॥

ततश्च कारयेच्छय्यां शय्योपरि सवासनं ।

भक्षपात्रद्वयोपेतं यमं रुद्रहृषान्वितं ॥

धेन्वा सहेव शास्ताय विप्रायाथ कुटुम्बिने ।

सपत्नीकाय संपूज्य पुण्येऽङ्गि विनिवेदयेत् ॥

यथा फलेषु निवसन्त्यमरा रसरूपिणः ।

तथा सर्वफलत्यागव्रताङ्गतिः शिवेऽस्तु मे ॥

यथा शिवश्च धर्मश्च सदानन्दफलप्रदः ।

तद्युक्तफलदानेन तो स्यातां मे फलप्रदौ ॥

यथा फलानि कामाः स्युः शिवभक्तेषु सर्वदा ।

तथानन्तफलप्राप्तिर्मेऽस्तु जन्मनि जन्मनि ॥

यथा भेदेन पश्यामि शिवविष्णुकपञ्चजां ।

तथा ममास्तु विश्वात्मा शङ्करः शङ्करः सदा ।

इति वत्सरतः सर्वमलङ्कृत्य च भूषणैः ॥

वत्सरतः वर्षात्परं ।

शक्तश्चेच्छयनं दद्यात्सर्वोपस्करसंयुतं ।

अशक्तस्तु फलान्येव यद्योक्तानि विधानतः ॥

तथोदकुम्भयुग्मञ्च शिवधर्मौ च काचनेः ।
 विप्राय दत्त्वा भुञ्जीत वाग्यतस्तैलवर्जितं ॥
 अन्यानपि यन्नाशक्त्या भोजयेद्विजपुङ्गव ।
 एतस्मान्न परं किञ्चिदिह लोके परञ्च च ॥
 व्रतमस्य मुनिश्रेष्ठ बदनन्तफलप्रदं ।
 सौवर्णतान्मरौप्येषु यावन्तः परमाणवः ॥
 भवन्ति चूर्णमानेषु फलेषु मुनिसत्तम ।
 तावद्युगसहस्राणि रुद्रलोके महीयते ॥

एतस्मिन्स्तकलुषापहरं जनाना-
 माजीवनाय मनुजेषु च सर्वदा स्यात् ।
 जन्मान्तरेषु न च पुत्रविशोगदुःख-
 माप्नोति धाम च पुरन्दरदेवजृष्टं ॥

इति मत्स्यपुराणोक्तं फलत्यागव्रतं ।

— ००० —

श्रीकृष्ण उवाच ।

हन्ताकस्य विधिं वक्ष्ये शृणु पार्थ सन्नाहितः ।

संवत्सरं वा षण्मासान् त्रीन्मासान् वा न भजयेत् ॥

अथ भरण्यां मघायां वा एकरात्रोपवासं कृत्वा स्थण्डिले
 देवतामाहूय गन्धपुष्पनैवेद्यादिना च संपूज्य दर्भपाणिर्गन्धो
 दकेनावाहयेत् । यमराजमावाहयामि । कालमावाहयामि ।
 चित्रगुप्तमावाहयामि । मृत्युमावाहयामि । परमेष्ठिनमावाहयामि
 इति । ततोऽग्निं समाधाय तिलाज्यं जुहुयात् । यमाय स्वाहा ।
 नीलाय स्वाहा नीलकण्ठाय स्वाहा । यमराजाय स्वाहा । चित्र-

गुमाय स्वाहा । वैवस्वताय स्वाहा ।

अग्निमूर्ध्व्याहृतीरष्टशतञ्जहुयात् ।

प्रायश्चित्तं दत्त्वा ब्राह्मणः स्वयमेव इतरेषामाचार्यः । अथ
स्वशक्त्या सौवर्णं हन्ताकं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ।

कृष्णां गान्ध्या वृषञ्च तथैव कर्णवेष्टाङ्गुलीयकैः कृत्रोपानहौ
कृष्णवस्त्रयुगं कृष्णकम्बलं दद्यात् ।

ब्राह्मणान् भोज्याग्निषो वाचयेत् ।

अनेन विधिना यस्तु हन्ताक्तञ्च प्रयच्छति ।

चीन्मासान्षन्मासं वा वर्षमेकं न भक्षयेत् ॥

अथ वैनं विधिं कृत्वा जन्मावधि त्यागं करोति स तु विष्णु
लोकं प्रगाति पौण्डरीकोऽश्वमेधफलमाप्नोति ।

सप्तजन्मसहस्राणि नाकष्टे महीयते ।

सप्तलोकोत्तरं यावद्यमलोकं न पश्यति ॥

हन्ताकमप्रतिहतं वरहेमसिद्धं

दद्याद्द्विजाय दृढवस्त्रसमन्वितं यः ।

कृत्वा तु वर्षमपि मासमथैकमेव

याम्यं न पश्यति पुरं पुरुषः कदाचित् ॥

इति भविष्योत्तरोक्तो हन्ताकत्यागविधिः ।

— ००० —

अष्टं पयोव्रते स्थित्वा काञ्चनं कल्पपादपं ।

पलादूर्ध्वं यथाशक्त्या तन्दुलं सूपसंयुतं ॥

सूपमग्नीहव्यं ।

दत्त्वा ब्रह्मपदं याति कल्पवृक्षव्रतं स्मृतं ॥

वतखण्ड २ अध्यायः ।] चेमाद्रिः ।

८११

ब्रह्माऽत्र देवता ।

इति पद्मपुराणोक्तं कल्पवृक्षव्रतं ।

—(११०)—

हैमं पलद्वयादूर्ध्वं रथमश्वयुगादिकं ।

ददन् क्षतोपवासः स्याद्वि कल्पगतं वसेत् ।

तदन्ते राजराजः स्यादश्वव्रतमिदं स्मृतं ॥

इन्द्रोऽत्र देवता ।

इति पद्मपुराणोक्तं अश्वव्रतं ।

—(१११)—

तद्वैमरथं दद्यात्करिभ्यां संयुतं पुनः ।

सत्यलोके वशीकृत्य सङ्गमथ भूमिपः ।

भवेदुपोषितो भूत्वा करिव्रतमिदं स्मृतं ॥

उपोषितो भूत्वा दद्यादित्यन्वयः । तदत्कल्पद्वयादूर्ध्वं ब्रह्मा-
ऽत्र देवता ।

इति पद्मपुराणोक्तं करिव्रतं ।

—

ष्टताभिषेकं यः कुर्यादङ्गारात्रं शिवस्य तु ।

नियतं क्लृप्ताङ्गाराभिः पृथगामे समुद्यतः ॥

गीतनृत्योपहारेषु शङ्खवादिनिःस्वनैः ।

कुर्यात्कागरणं तत्र प्रदीपादुपशोभया ॥

समस्तपापनिर्मुक्तः समस्तकुलसंयुतः ।

ज्वलद्भिः स महायानैरसंख्यैर्नगोत्तमैः ॥
 युक्तः शिवपुरे नित्यं मोदते शिववत्सखी ।
 ग्रहणे विषुवे चैव पुण्येषु दिवसेषु च ॥
 धृताभिषेकं यः पश्येदासमाप्तिमुपोषितः ।
 विधूय सर्वपापानि शिवलोकं स गच्छति ॥
 एकः पूजयते भक्त्या अन्यो भक्त्या प्रशस्यति ।
 तुल्यमेव फलन्ताभ्यां भक्तिरेवाऽत्र कारणं ॥

इति शिवधर्मोक्तो दृढस्तपनविधिः ।

— ००० —

सुत उवाच ।

दुर्लभा खलु या मुक्तिरनायासेन देहिनां ।
 जायते कर्मणा येन शृणुष्वं तद्विजोत्तमाः ॥
 गोचर्ममात्रमालिख्य मण्डलं गोमयेन च ।
 चतुरस्रं विधानेन चरुणाभ्युक्ष्य मन्त्रवित् ॥
 अलङ्कृत्य वितानाद्यैश्चैवापि मनोरमैः ।
 बहुदेरर्चयन् द्रैश्च स्वर्णैश्च तथैव च ॥
 सितैर्विकसितैः पद्मैः रक्तैर्नीलोत्पलैस्तथा ।
 विमानेन विचित्रेण मुक्ता दाम्ना द्विजोत्तमाः ।
 सितनृत्यात्मकैश्चैव सुश्रवणैः पूर्णकुम्भकैः ॥
 फलपल्लवमालाभिवैजयन्तोभिरंशुकैः ।
 पञ्चाशद्दीपमालाभिर्धूपैश्च विविधैस्तथा ॥
 पञ्चाशद्वलसंयुक्तं लिखित्वा पद्ममुत्तमं ।
 तत्तद्वर्णैस्तथा चूर्णैश्चैव तच्चूर्णैरिथापि वा ॥

एकहस्तप्रमाणेन कृत्वा पद्मं विधानतः ।
 कर्णिकायां न्यसेद्वेवन्द्याद्देवेष्वरम्भवं ॥
 तत्र वर्णनकारादीन् न्यसेत् प्रागाद्यनुक्रमात् ।
 प्रणवादिनमोस्तांसं सर्व्ववर्णान् हि सुव्रतः ॥
 संपूज्यैव मुनिश्रेष्ठ गन्धपुष्पादिभिः क्रमात् ।
 ब्राह्मणान् भीजयेत्तत्र पञ्चाशद्विधिपूर्व्वकं ॥
 अक्षमालीपवीतञ्च कुण्डलानि कमण्डलुं ।
 आसनञ्च तथा दण्डं उष्णीषं वस्त्रमेव च ॥
 दत्त्वा तेषां हि जेन्द्राणां देवदेवाय शम्भवे ।
 महाचरुञ्च नैवेद्यं कृण्वन् गोभिश्च न तथा ॥
 अन्नैश्च देवदेवाय दत्त्वा तद्वर्णमण्डलं ।
 योगोपयोगिद्रव्याणि शिवानि विनिवेदयेत् ॥
 ओंकाराद्यं जपेद्दामान् प्रतिकर्णमनुक्रमात् ॥
 एवमालिख्य धी भक्त्या वर्णमण्डलमुत्तमं ।
 यत् फलं लभते सर्व्वं सत्तद्वदामि समासतः ॥
 साङ्गान् वेदान् यथान्यायमधीत्य विधिपूर्व्वकान् ।
 इष्ट्वा यज्ञैर्यथान्यायं ज्योतिष्टोमादिभिः क्रमात् ॥
 ततो विश्वजितश्रेष्ठा पुत्रानुत्पाद्य तादृशान् ।
 वानप्रस्थाश्रमं गत्वा सदारः सांम्नरेव च ॥
 चान्द्रायणादिकान् कृत्वा संन्यस्य वै दिजः क्रमात् ।
 ब्रह्मविद्यामधीत्यैव ज्ञानमापाद्य यत्नतः ॥
 ज्ञानेन ज्ञेयमालोक्य योगी यत्फलमाप्नुयात् ।
 तत् फलं लभते सर्व्वं वर्णमण्डलदर्शनात् ॥

येन केनापि वा लिख्य प्रलिप्यायतनाश्रयं ।
 उत्तरे दक्षिणे वापि पृष्ठतो वा द्विजोत्तमाः ॥
 चतुःश्लोकेऽपि वा वर्णैरलङ्कृत्य समन्ततः ।
 विकीर्त्य गन्धकुसुमैर्धूपदोषैश्चतुर्विधैः ।
 प्रार्थयेद्देवमीशानं शिवलोकश्च गच्छति ॥
 तत्र भुक्त्वा महाभोगान् कल्पकोटिशतं नरः ।
 स्वदेहगन्धैः स शुभैः पूरयेच्छिवमन्दिरं ॥
 क्रमाद्गन्धर्व्वमासाद्य गन्धर्व्वैस्तत्र पूजितः ।
 क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् राजा भवति वीर्यवान् ॥
 इति सौरपुराणोक्तं वर्णमण्डलं ।
 शुक्लपक्षे नवं धान्यं पक्वं ज्ञात्वा सुशीभनं ।
 सुतिथौ च सुनक्षत्रे सुहर्त्ते च शुभे सति ॥
 गच्छेत् क्षेत्रं विधाने च गीतवाद्यपुरःसरः ॥
 तत्र वह्निन्तु प्रज्वाल्य धान्यैः संस्तीर्य्य शास्त्रवत् ।
 कृत्वा होम ततः पञ्चान्नयेद्धान्यं विभूषितं ॥
 पुष्पैर्वस्त्रैः फलैर्मूर्त्तैर्हस्त्यश्वरथसंयुतं ।
 तेन देवान् पितॄन् बभूवुर्न तर्प्ययित्वा यथाक्रमं ॥
 विभज्य च यथाशक्त्या देवज्ञाः सस्यरक्षितः ।
 नववस्त्रावृतः स्रग्वी स्वनुलिप्तः स्वलङ्कृतः ॥
 स्त्रियः पूर्णमखस्तुष्टा ब्रह्मघोषपुरःसरः ।
 श्वश्रवणा परमं हृष्टो मङ्गलालम्बनादयुक् ॥
 प्राग्नीयाहुधिसंयुक्तं नवमन्त्राभिमन्त्रितं ।
 कृताङ्गारम् कुरुते गीतवाद्यैर्महोत्सवं ॥
 इति ब्रह्मपुराणोक्तं सस्योत्सवः ।

क्षीरोदसागरात् पूर्वं मथ्यमानात् पुरातनात् ।
 श्यामा देवी समुत्पन्ना सर्वलक्षणसंयुता ॥
 नारायणी याऽसावुक्ता सुकुमारा यशस्विनी ।
 सतीदेहसमुद्भूता सती परमगीभना ॥
 तां दृष्ट्वा चकितास्तत्र ततः सर्वे सुरासुराः ।
 मनोन्ना समुखी चेपा हन्त दत्तामहे वयं ॥
 एवमुक्ता वचस्तां ददृशुः सर्वे एव तत् ।
 चतुर्नामाथ तस्यास्ते द्राचेति भुवि विस्तरं ॥
 अतोऽर्धं सा सुपक्वा च पूजितव्या प्रयत्नतः ।
 पुष्पधूपानुलेपाद्यैस्तथा ब्राह्मणतर्प्यैः ॥
 ह्यो बालको तथा हृदो संपूज्य तदनन्तरं ।
 धर्मार्थकाममोक्षश्च समृद्धिश्च कुटोरकेः ।
 स्त्रीसहायेन हृष्टेन भृत्यमित्सुतैः सह ॥
 स्रगुल्लिप्तेन विधिवत् स्रग्विणा च सुवाससा ।
 निवेदिता गुरुभ्यश्च स्वयं भोज्या न चान्यथा ।
 उत्सवश्चापि कर्त्तव्यो नृत्यगीतसमाकुलः ॥

इति आदित्यपुराणोक्तः श्यामामक्षीसुवः ।

—००—

ब्रह्मीवाच ।

ऋग्वेदमात्रेयगोचं सोमदेवं विदुर्मुने ।
 काश्रपं च यजुर्वेदं उपदेवं विदुर्बुधाः ॥
 सामवेदोऽपि गोचेन भारद्वाजः पुरन्दरः ।

अधिदेवं विजानीयाद्रूपाण्यस्माच्छृणुष्व तु ॥

ऋग्वेदः पद्मपत्रायताक्षः प्रलङ्घिताम्बरः ।

सुविभक्तग्रीवः कुञ्चितकेशश्मश्रुः प्रमाणेनापि वितस्तयः पद्म ।

स राजतो मौक्तिकजोऽथ पूज्यो

वरप्रदो भक्तियुतद्विजाय ॥

यजुर्वेदः पिङ्गलाक्षः कथमध्यस्थूलगलकपोलः ताम्रवर्णः प्रादे-
शात् षड्दैर्घ्येण ।

चित्रे लिङ्गेऽथवा पूज्य सर्वकामानवाप्नुयात् । सामवेदो
नित्यस्त्रग्वो सुव्रतः शुचिः शुचिवासाः क्षमी दान्तश्च दण्डी
काचनयनः आदित्यवर्णो वर्णेन षड्वरत्रिमात्रः । ताम्रेय-
मणाविन्द्राद्यास्थेष्ठा पूजितः शुभदो भवेत् । अथर्वदेदस्तीक्ष्णदण्डः
कामरूपी विश्वात्मा विश्वकृत् क्रूर ऊर्ध्वज्वालावान् क्षुद्रकर्मा
वंशज्जलोत्थापी नीलोत्पलवर्णो वर्णेन स्वदारतुष्टः सौवर्णः पद्म-
रागे वा रुद्राक्षे वा पूजनीयः प्रपूज्य सर्वान् कामानवाप्नुयात् ।

अथर्ववेदविहितानि ।

यावन्ति वेदगोतानि पुण्ययज्ञव्रतानि च ।

तावन्ति श्रवणादस्य प्राप्नुयाद्भक्तिभावितः ॥

अपुत्रो लभते पुत्रानधनो धनमाप्नुयात् ।

विद्यामविद्वानाप्नोति दुःखी दुःखात् प्रमुच्यते ॥

पठित्वा सर्वदेवानां सम्पतो द्विजवत्सभः ।

जायते नात्र सन्देहो देवी च वरदा सदा ॥

इति देवीपुराणोक्तं देवव्रतं ।

सौरपुराणात् ।

अथात्मचरणौ स्थित्वा शिवक्षेत्रे वसेन्नरः ।
देहान्ते शिवसायुज्यं लभते नात्र संशयः ॥

लिङ्गपुराणात् ।

भित्त्वा पदद्वयं वापि शिवक्षेत्रे वसेत्तु यः ।
स याति शिवताक्षेत्रे नात्र कार्या विचारणा ॥

इति तीव्रव्रतं ।

—०—

शङ्कर उवाच ।

आदित्यग्रहणे राम ग्रहणे च निशाभृतां ।
उपवासादवाप्नोति सर्वकल्मषनाशनं ॥
स्नानं दानं तथा ज्ञाप्यमन्त्रं तत्तदा स्मृतं ।
ग्राह्यं भार्गवश्रेष्ठ वह्निमंपूजनं तथा ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरीक्तो ग्रहणोपवासः ।

—०००—

अथ महातपोव्रतानि ।

मासे मासे च यः कुर्यात्त्रिरात्रचरणं शुभः ।
कौवेरं लोकमासाद्य स विन्देत् परमं पदं ॥
चतुर्थेऽहनि यो भुङ्क्ते व्रतवांश्च शुचिर्नरः ।
गान्धर्वं स पदं प्राप्य मोदते शक्रवद्विवि ॥
पञ्चमेऽहनि यो भुङ्क्ते प्रतिमासमतन्द्रितः ।

विमुक्तः सर्वपापैश्च स गच्छेद्विभूजितः ॥
 यो भुङ्क्ते दिवसे षष्ठे नित्यं नियमवान् शुचिः ।
 वारुणं लोकमासाद्य स विन्देत्परमं पदं ॥
 सप्तमेऽहनि यो भुङ्क्ते जितदन्धो दृढव्रतः ।
 आदित्यलोकमासाद्य सोऽपि विन्देन्महाश्रियं ॥

जितदन्धः सहिष्णुः ।

अष्टमेऽहनि यो भुङ्क्ते जितदन्धो दृढव्रतः ।
 वैष्णवं लोकमासाद्य स भवेत्परमद्युतिः ॥
 नवमेऽहनि यो भुङ्क्ते नरा नियममास्थितः ।
 स वसूनां प्रियो भूत्वा चरते वसुभिः सह ॥
 दशमेऽहनि यो भुङ्क्ते द्वादशाहफलं लभेत् ।
 अग्निभ्यां च समो भूत्वा अश्वयं खिलते तथा ॥

द्वादशाहः कृतुविशेषः ।

एकादशे तु यो भुङ्क्ते दिवसे मानवः शुचिः ।
 एकादशाहं संप्राप्य स रुद्रगणतां व्रजेत् ॥
 यो द्वादशे तु दिवसे भुङ्क्ते देवि सदा नरः ।
 द्वादशाहन्तु सम्प्राप्य शकलोके महीयते ॥
 त्रयोदशे तु यो नित्यमग्राति दिवसे नरः ।
 वसेत् स भागैवस्थानं प्राप्य दिव्यसुखान्वितं ॥
 चतुर्दशे तु दिवसे नित्यमग्राति यो नरः ।
 स वसेद्दुद्रलोके तु गिवमायुच्यतां व्रजेत् ॥
 अर्धमासं क्षिपेद्यस्तु नित्यमेव जितेन्द्रियः ।
 देवराजं तुल्योऽसीभूत्वा स्वर्गं च तिष्ठति ॥

यस्तु मासं क्षिपेद्दीरो जितक्रीडो जितेन्द्रियः ।
विमानेन स दिव्येन अप्सरोभिः समन्वितः ॥
सर्वलोकेषु वसते जन्मान्यष्टायुतानि च ।
ततो ब्रह्माक्षुनं प्राप्य ब्रह्मणा च सुपूजितः ।
ब्रह्मलोके निवसते यथा ब्रह्मनरोत्तमः ॥

महाभारत ।

मामि मामि निरात्राणि कृत्वा वर्षाणि द्वादश
गणाधिपत्यं प्राप्नोति निःसपत्नमनाविलं ॥
यस्तु संवत्सरं पूर्णं एकाहारी भवेन्नरः ।
अतिरात्रस्य यज्ञस्य सप्त फलमुपाश्रुते ॥
दशवर्षसहस्राणि सर्गलोके महायते ।
तत्तत्तयादिह चागत्य साक्षात्प्राप्तिपद्यते ॥
यस्तु संवत्सरं पूर्णं शतैर्भक्तमश्रुते ।
अहिंसानिरतो नित्यं सत्यवाग्जितेन्द्रियः ॥
वाजपेयस्य यज्ञस्य स फलं समुपाश्रुते ।
त्रिंशद्वर्षसहस्राणि वर्षाणां दिवि मोदते ।
अष्टमेन तु भक्तेन जीवेत्संवत्सरं नरः ।
गवां मेधस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोति मानवः ॥
हंसमारमयुक्तेन विमानेन स गच्छति ।
पञ्चाशत्सहस्राणि वर्षाणि दिवि मोदते ॥
पक्षे पक्षे गते राजन् योऽश्रोयाद्वर्षमेव तु ।
यगमासानगनन्तस्य भगवानङ्गिराऽब्रवीत् ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि दिवमावसते स च ॥

अश्वीयाद्वितीये पक्षे सर्वदिनेष्विति विशेषः ।

वीणानां वल्लकोनाञ्च वेणूनाञ्च विशाम्यते ।

सुघोषैर्भधुरैः शब्दैः सुसुप्तः प्रतिबुध्यते ॥

संवत्सरमिहैकमु मासि मासि पिवेत् पयः ।

फलं विश्वजित्स्नात प्राप्नोति स नरोत्तमः ॥

सिंहव्याघ्रप्रयुक्तेन विमानेन स गच्छति ।

गतश्चाष्टौ सुरकन्या रमयन्ति च तद्वरं ।

सप्ततिञ्च सहस्राणि वर्षाणां दिवि मोदते ।

मासादूर्ध्वं नरव्याघ्र नोपवासो विधीयते ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

यो दरिद्रैरपि विधिः शक्यः प्राप्तुं भवेत् प्रभो ।

तुल्यो यज्ञफलैरेव तन्मे ब्रूहि पितामह ॥

भीष्म उवाच ।

यस्तु कल्यं तथा सायम्भञ्जानो नान्तरा पिवेत् ।

अहिंसानिरतो नित्यं जुह्वानो जातवेदसं ॥

यज्ञं बहुसुवर्णं यो वासवप्रियमाहरेत् ।

सत्यवाक् दानशीलश्च ब्रह्मशासनमूचकः ॥

शान्तो दास्तो जितक्रोधो यस्फलं समवाप्नुयात् ।

पाण्डुराभप्रतीकाग्निं विमाने हंसलक्षणे ॥

कल्यामति प्रातः । पिवेदुदकमपीति शेषः ।

षड्भिरेव च स वर्षैः सिध्यते नात्र संशयः ।

देवस्त्रीणामपि वसेत् नृत्यगीतनिनादिते ।

प्राजापत्यं वसेत् पद्मं वर्षाणामग्निसम्भवं ॥

पद्मं कीटिशतं ।

त्रीणि वर्षाणि यः प्राशेत् शततन्त्रे कभीजनं ।
धर्मपत्नीरतीनित्यमग्निष्टोमफलं लभेत् ॥
द्वितीये दिवसे यस्तु प्राश्यादेकभोजनं ।
सदा द्वादशमासान्वै जुह्वानो जातवेदसं ॥
यज्ञं बहुसुवर्णं यो वासवप्रियमाचरेत् ।
सत्यवाग्दानशीलश्च ब्रह्मण्यासनसूयकः ॥
क्षान्तो दान्तो जितक्रोधः गतं फलं समराग्रयात् ।
पाण्डुराभ्रप्रतीकाशे विमाने च सलक्षणे ॥
द्वे समाप्ते ततः पक्षे सोऽप्सरोभिर्वर्षेकश्च ।

समाप्ते परिपूर्णे ।

तृतीये दिवसे यस्तु प्राश्यादेकभोजनं ।
सदा द्वादशमासान्वै जुह्वानो जातवेदसं ॥
अग्निकार्यपरी नित्यं नित्यकार्यप्रबोधनं ।
अतिरात्रस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोत्यनुत्तमं ॥
सप्तर्षीणां सदा लोके सोऽप्सरोभिर्वर्षेकसह ।
निवर्त्तनञ्च तथाप्य त्रीणि पद्मानि वै विदुः ॥

आस्येति स्थित्वा ।

दिवसेयश्चतुर्थे तु प्राश्यादेकभोजनं ।
स च द्वादशमासान्वै जुह्वानो जातवेदसं ॥
वाजपेयस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोत्यनुत्तमं ।
सागरस्य च पर्यन्ते सर्वलोके च वेद्ययेत् ॥
देवराजस्य च क्रोडानित्यकालमवेक्षते ।

मोगरस्य च पथ्यन्तं समुद्रसंख्याविशेषान्तं ॥

दिवसे पञ्चमे यस्तु प्राश्नीयादेकभोजनं ।

स च द्वादशमासां वै जुह्वानो जातवेदसं ॥

अलुब्धः सत्यवादी च ब्रह्मण्यथाविहितकः ।

अनसूयुरपापस्थो द्वादशाहफलं लभेत् ॥

जाम्बूनदमयं दिव्यं विमानं हंसलक्षणं ।

सूर्यमालासमाभासमारोहेत्पाण्डुरं गृहं ॥

आवर्त्तनानि चत्वारि । तुलापद्मानि द्वादश ।

शराग्निपरिमाणञ्च तथाभी वसते चिरं ॥

आवर्त्तनानि मन्वन्तराणि तुलापद्मानि गतंप्रमानि ।

शराग्निपरिमाणं । शराः पञ्च । अग्नयस्तयः ॥ इदमपि
परिमाणं मन्वन्तराणामेव ।

दिवसे यस्तु पष्टे तु मुनिः प्राश्नोत भोजनं ।

सदा द्वादशमासान् वै जुह्वानो जातवेदसं ॥

सदा विषवणस्त्रायी ब्रह्मचर्य्यनसूयकः ।

मुनिः संयतवाक् ।

गवांमिधस्थं यज्ञस्य फलं प्राप्नोत्यनुत्तमं ।

तथैवाप्सरसामङ्गे प्रसुप्तः प्रतिबुध्यते ।

नृपूराणां निनादेन मेखलानाञ्च निस्त्रिनैः ।

कीटोसहस्रवर्षाणि युगकोटिशतानि च ॥

पद्मान्यष्टादश तथा पताके द्वे तथैव च ।

अयुतानि च पञ्चाशद्वत्तचर्म्मशतस्य च ।

लोम्ना प्रमाणेन समं ब्रह्मलोके महीयते ॥

पताकाः संख्याविशेषः ।

दिवसे सप्तमे यस्तु प्राश्नीयादेकभोजनं ।
सदा द्वादशमामान्ते जुह्वानी जातवेदसं ॥
सरस्वतीं गोपयानां ब्रह्मचर्यं समाचरेत् ।
सुमनोवर्णकश्चैव मधुमांसश्च वर्जयेत् ॥
पुरुषो मरुतां लोकमिन्द्रलोकश्च गच्छति ।
तत्र तत्र च मिदार्थो देवकन्याभिरर्च्यते ।
फलं बहुसुवर्णस्य यज्ञस्य लभते नरः ॥
संख्यामतिगुणां वापि तेषु लोकेषु मोदते ।

कुडुमादि त्रिगुणं । अतिक्रान्तगुणानामपिरिमितमिति
यावत् ।

यस्तु संवत्सरं पूर्णं भुङ्क्तेऽहन्त्यष्टमे नरः ।
देवकार्यपरो नित्यं जुह्वानी जातवेदसं ॥
पौण्डरीकस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोत्यनुत्तमं ।
पद्मवर्णनिभश्चैव विमानमधिरोहति ॥
कृष्णाः कनकगौराद्यनार्यः श्यामास्तर्था पराः ।
वयोरूपसमायुक्ता लभते नात्र भगवः ॥
यस्तु संवत्सरं भुङ्क्ते नवमे नवमेऽहनि ।
सदा द्वादशमामान्ते जुह्वानी जातवेदसं ॥
अश्वमेधस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोति मानवः ।
पुण्डरीकप्रकाशं वै विमानं लभते नरः ।
दीप्तसूर्याग्निनेत्रोऽभिर्दिव्यमानाभिरिव च ।

नीयते रुद्रकन्याभिः सोऽन्तरिक्षं मनातनं ॥
 अष्टादशसहस्राणि वर्षाणां कल्पमेव च ।
 कोटीशतसहस्रञ्च तेषु लोकेषु मोदते ॥
 यस्तु संवत्सरं भुङ्क्ते दशाहे वै गते गते ।
 सदा द्वादशमासान्वै जुह्वानो जातवेदसं ॥
 गते प्राप्ते तथा ब्रह्मकन्या चामरविजिता ।
 कुरुते तत्र सा क्रीडा सर्व्वभूतमनोहरे ॥
 अश्वमेधसहस्रस्य फलं प्राप्नोत्यनुत्तमं ।
 रूपवत्यथ तं कन्या रमयन्ति सदा नरं ॥
 एकादशे तु दिवसे यः प्राप्ते प्रायते हविः ।
 सदा द्वादशमासांश्च जुह्वानो जातवेदसं ॥
 परस्त्रियं नाभिलषेद्वाचाथ मनसापि वा ॥
 अनृतञ्च न भाषेत मातापित्रोः कृतेऽपि च ।
 अभिगच्छेन्महादेवं विमानस्थं महाबलं ।
 रुद्राणां तमधोवासं दिवि दिव्यं मनोरमं ।
 वर्षाणां परिमेयानि युगान्ताग्निसमप्रभः ॥
 कोटीशतसहस्रञ्च कोटिदशशतानि च ।
 रुद्रं नित्यं प्रणमते देवदानवसंस्तुतः ॥
 स तस्मै दर्शनं प्राप्नोति दिवसे दिवसे भवेत् ।
 दिवसे द्वादशे यस्तु प्राप्ते वै प्रायते हविः ।
 सदा द्वादशमासान्वै जुह्वानो जातवेदसं ।
 आदित्यद्वादशाभासं विमानं सोऽधिरोहति ॥
 अष्टमहर्षिसंयुक्तं ब्रह्मलोके प्रतिष्ठितं ।

नित्यमावसथं राजन् नरमारीसमाकुलं ।
 तयोदशे तु दिवसे यः प्राप्ते भुञ्जते हविः ॥
 सदा द्वादशमासान् वै देवसत्रफलं लभेत् ।
 रत्नपद्मोदयं नाम विमानं साधयेन्नरः ।
 तत्र शङ्खपताके हि युगान्तं कल्पमेव च ॥
 अयुतायुतं तथापद्मं समुद्रश्च तथा वसेत् ॥

शङ्खपताकाप्रभृतयः पताकाविशेषः ।
 गीतगन्धर्वघोषैश्च भेरीपणवनिःस्वनैः ।
 सदाप्रमुदितस्ताभिर्देवकन्याभिरीज्यते ॥
 चतुर्दशे तु दिवसे यः सदाप्राशयेत्तुविः ।
 सदा द्वादशमासान् वै महामेधफलं लभेत् ॥
 अनिर्देश्यवयोरूपा देवकन्याः स्वलङ्कृताः ।
 मृष्टतमाङ्गदधरा विमानैरूपयान्ति तं ॥
 कलहंसविनिर्घोषैर्नूपुराणाञ्च निस्वनैः ।
 काञ्चीनाञ्च समुत्कर्षेस्तत्र तत्र वियोध्यते ॥
 देवकन्यानिवासे च तस्मिन् वसति मानवः ।
 जाङ्गवीवालुकाकीर्मूर्ध्निपूर्णसंवत्सरं नरः ॥
 यस्तु पक्षे गते भुङ्क्ते एकभक्तं जितेन्द्रियः ।
 सदा द्वादशमासांस्तु जहानो जातवेदसं ॥
 राजसुगसहस्रस्य फलं प्राप्नोत्यनुत्तमं ।
 यानमारोहते दिव्यं हंसवर्हिणसेवितं ॥
 मनिमण्डलकैश्चित् जातरूपसमावृतं ।
 दिव्याभरणयोगाभिर्व्यरस्त्रीभिरलङ्कृतं ॥

एकस्तम्भश्चतुर्दारं सप्तभौमं सुमङ्गलं ।
 वैजयन्तीसहस्रैश्च शोभितं गीतनिखनैः ॥
 दिव्यं दिव्यगुणोपेतं विमानमधिरोहति ।
 मणिमुक्ताप्रवालैश्च भूषितं वैद्युतप्रभं ॥
 वसेत् युगसहस्रं च खड्गकुञ्जरवाहनः ।
 षोडशे दिवसे प्राप्ते यः कुर्यादेकभोजनं ।
 सदा द्वादशमासान् वै सोमयज्ञफलं लभेत् ॥
 सोमकन्यानिवासेषु सोऽध्यावसति नित्यशः ।
 सौम्यगन्धानुलितश्च कामचारगतिर्भवेत् ॥
 सुदर्शनाभिर्नारीभिर्मुधुराभिस्तथैव च ।
 अर्चयेत् वै विमानं च कामभोगैश्च सेव्यते ॥
 फलं पद्मशतप्रस्थं महाकल्पं दशाधिकं ।
 आवर्त्तनानि चत्वारि साधयेच्चाप्यसौ नरः ॥
 दिवसे सप्तदशमे यः प्राप्ते प्रायते हविः ।
 सदा द्वादशमासान् वै जुह्वानो जातवेदसं ॥
 स्थानं वारुणमैन्द्रश्च रुद्रश्चाप्यधिगच्छति ।
 मारुतीशनसश्चैव ब्रह्मलोकं स गच्छति ॥
 तत्र देवतकन्याभिरासने नोपचर्यते ।
 भूर्भुवश्चापि देवर्षिं विश्वरूपमवेक्षते ॥
 तत्र देवाधिदेवस्य कुमार्यो रमयन्ति तं ।
 द्वात्रिंशद्रूपधारिण्यो मधुराः समलङ्कृताः ॥
 चन्द्रादित्याऽभौ यावत् गगणे चरतः प्रभौ ।
 तावच्चरत्यसौ वीरः सुधामृतरसाशनः ॥

अष्टादशे यो दिवसे प्राग्नीयादेकभोजन ।
 सदा द्वादशमासान् वै सप्तलोकान् स पश्यति ॥
 रथैः सनन्दिघोषैश्च पृष्ठतः सोऽनुगम्यते ।
 देवकन्याभिरुदैस्तु भ्राजमानैः स्वलङ्कृतैः ॥
 व्याघ्रसिंहप्रयुक्तश्च मेघस्वनमिनादितं ।
 विमानमुत्तमं दिव्यं सुमुखी ह्यधिरोहति ॥
 तत्र कल्पसहस्रं स कन्याभिः सह भीदत ।
 सुधारमश्च भुञ्जीत अमृतोपममुत्तमं ॥
 एकोनविंशतिदिने यो भुङ्क्ते एकभोजनं ।
 सदा द्वादशमासान् वै सप्तलोकान् स पश्यति ॥
 उत्तमं लभते स्थानमप्सरोगणसेवितं ।
 गन्धर्वैरूपगीतश्च विमानं सूर्यवर्षमं ॥
 तत्रामरवरप्सोभिर्मोदते विगतज्वरः ।
 दिव्याम्बरधरः श्रीमानयुतानां शतं शतं ॥
 पूर्णैश्च विंशे दिवसे यो भुङ्क्ते त्वेकभोजनं ।
 सदा द्वादशमासांस्तु सत्यवादी धृतव्रतः ॥
 अमांसाशो ब्रह्मचारी सर्वभूतहिते रतः ।
 स लोकान् विपुलान् रम्यानादित्यानामुपाश्रये ॥
 गन्धर्वैरप्सरोभिश्च दिव्यमाभ्यानुलेपनैः ।
 विमानैः काञ्चनैर्हिष्यैः पृष्ठतश्चानुगम्यते ॥
 एकविंशे तु दिवसे यो भुङ्क्ते द्वेकभोजनं ।
 सदा द्वादशमासान् वै जुह्वानो जातवेदसं ॥
 लोकभोगनसं दिव्यं शक्रलोकश्च गच्छति

अश्विनोर्मरुताच्चैव सुखेष्वभिरतः सदा ।
 अनभिन्नश्च दुःखानां विमानवरमास्थितः ॥
 सेव्यमानो वरस्त्रीभिः क्रीडत्यमरवत् प्रभुः ।
 द्वाविंशे दिवसे प्राप्ते यो भुङ्क्ते लोकभोजनं ।
 सदा द्वादशमासान् वै जुह्वानो जातवेदसं ॥
 अहिंसानिरतो धीमान् सत्यवागनसृयक ।
 लोकान् वसूनामाप्नोति दिवाकरसमप्रभः ॥
 कामचारी सुधाहारी विमानवरमास्थितः ।
 रमते देवकन्याभिर्हिव्याभरणभूषितः ॥
 त्रयोविंशे तु दिवसे यः प्राप्तेदेकभोजनं ।
 सदा द्वादशमासांस्तु मिताहारी जितेन्द्रियः ॥
 वायोऋसनश्चैव रुद्रलोकश्च गच्छति ।
 कामचारी कामगमः पूज्यमानोऽसुरोगणैः ॥
 अनेकगुणपर्यन्तं विमानवरमास्थितः ।
 रमते देवकन्याभिर्हिव्याभरण भूषितः ॥
 चतुर्विंशे तु दिवसे यः प्राप्तेदेकभोजनं ।
 सदा द्वादशमासान् वै जुह्वानो जातवेदसं ॥
 आदित्यानामधीवासे मोदमानो वसेच्चिरं ।
 रमते देवकन्यानां सहस्रै वायुतै स्तथा ।
 पञ्चविंशे तु दिवसे यः प्राप्तेदेकभोजनं ॥
 सदा द्वादशमासान्वै पुष्कलं यानमारुहन् ।
 रथैः सनन्दघोषैस्तु पृष्ठतोऽग्नयुगम्बते ॥
 देवकन्यासमारुढे राजतैर्बिम्बैः शुभैः ।

तत्र कल्पसहस्रं वै रमते स्त्रीगतावृतः ॥
 भोज्यं रसञ्च लभते सदा ते अमृतोपमं ।
 षड्विंशे दिवसे यस्तु प्राश्यादेकभोजनं ॥
 सदा द्वादशमासान्वै नियतो नियताग्रनः ।
 जितेन्द्रियो वीतरागो जुह्वानो जातवेदसं ॥
 सम्प्राप्नोति महाभाग पूज्यमानोऽप्सरीगणैः ।
 समानां मन्त्रां लोकान्वसूनाञ्च समश्नुते ॥
 गन्धर्वैरप्सरीभिश्च पूज्यमानः समश्नुते ।
 हे युगानां सहस्रेतु दिवि दिव्येन तेजसा ॥
 समविंशे तु दिवसे यः प्राशेदेकभोजनं ।
 सदा द्वादशमासान्वै जुह्वानो जातवेदसं ॥
 फलमाप्नोति विपुलं देवलोके च मोदते ।
 अमृताशी वसंस्तत्र स वै तप्तः प्रपूज्यते ॥
 स्त्रीभिर्भनोभिरामाभीरममाणो मदीकटः ।
 युगकल्पसहस्राणि त्रीण्यावमति वै सुखं ॥
 योऽष्टाविंशे तु दिवसे प्राश्यादेकभोजनं ।
 सदा द्वादशमासान्वै जितात्मा च जितेन्द्रियः ॥
 फलं देवर्षिचरितं विपुलं समपाश्रुते ।
 भोगवांस्तेजसायुक्तः स्वर्गे रविरिवामनः ॥
 सुकुमार्यश्च तं नार्यो रममाणाः सुवर्चसः ।
 रमयन्ति मनःकान्ते विमाने सूर्यवर्चसे ॥
 सर्वकामयुते दिव्ये कल्पायुतशतं समाः ।
 एकोनविंशे दिवसे यः प्राशेदेकभोजनं ॥

सदा द्वादशमासान् सत्यव्रतपरायणः ।
 तस्य लीकाः शुभा दिव्या दिव्यगन्धगुणान्विताः ॥
 तत्र वैतं शुभानार्थो दिव्याभरणभूषिताः ।
 मनोभिरामा मधुरा रमयन्ति मदीत्कटाः ॥
 भोगवांस्तेजसा युक्तो वैश्वानरसमप्रभः ।
 दिव्यो दिव्येन वपुषा भ्राजमान इवामरः ॥
 वसूनां मरुताश्चैव साध्यानामश्विनोस्तथा ।
 रुद्राणाञ्च तथा लोकान् ब्रह्मलोकञ्च गच्छति ॥
 यस्तु मासे गते भुङ्क्ते एकभक्तं समात्मकः ।
 सदा द्वादश वै मासान् ब्रह्मलोके गतिर्भवेत् ॥
 सुधारसकृताष्टारः श्रीमान् सर्वमनोहरः ।
 तेजसा वपुषा युक्तोभ्राजते रस्मिमानिव ॥
 स्वयं प्रभाभिर्नारीभिर्विमानस्थो महीयते ॥
 रुद्रदेवर्षिकन्याभिः सततञ्चाभिपूज्यते ।
 यावद्वर्षसहस्रन्तु जम्बूद्वीपेऽभिवर्षति ॥
 तावत्संवत्सराः प्रोक्ता ब्रह्मलोकस्य धीमतः ।
 विप्रश्चैव यावन्त्यो निपतन्ति नभस्यालात् ॥
 वर्षा सु वर्षतस्तावन्नवसत्यमरप्रभः ।

यावदित्यादि । जम्बूद्वीपेषु च वर्षासु वर्षसहस्रं धीमती
 देवस्य वृष्टिकुर्व्वती यावन्तो विप्रवोजलकणा नमस्तस्यान्निपतन्ति
 तावन्तः संवत्सरान् ब्रह्मलोके वसतीत्यर्थः ।
 मासोपवासी वर्षस्तु दशभिः स्वर्गमुत्तमं ।
 मर्षित्वमथासाद्य सगरीरगतिर्भवेत् ॥

मुनिर्दान्तो जितक्रोधोजितशिश्रोर्द्रस्तथा ।

जुह्वन्मनो नियमतः सन्ध्योपासनसेविता ।

बहुभिर्नियमैरेवं मासमश्रान्ति योनरः ।

अन्नावकाशशीलस्य तस्य यासोनिरुप्यते ॥

दिवङ्गत्वा शरीरेण स्वेन राजन् यथाऽमरः

स्वर्गे पुण्यं यथाकामं नृप भुङ्क्ते यथाविधि ॥

उपवासानिमान् कृत्वा गच्छेच्च परमां गतिं ।

तथा वैश्याश्च शूद्राश्च उपवासं प्रकुर्वते ॥

त्रिरात्रं द्वित्रिरात्रश्च तयोः पुष्टिर्न विद्यते ।

चतुर्थभक्तक्षपणं वैश्यशूद्रेऽभिधीयते ॥

त्रिरात्रन्तु न धर्म्यैर्विहितं ब्रह्मवादिभिः ।

इति महातपोव्रतानि ।

—०—

राम उवाच ।

लक्ष्मणाणां श्रोतुमिच्छामि नामानि च विधिं तथा ।

एतन्मे ब्रूहि धर्म्यज्ञत्वं हि वेत्सि यथा तथं ॥

पुष्कर उवाच ।

लक्ष्मण्येतानि कार्याणि राम वर्णत्रयेण च ।

लक्ष्मण्येतेषु शूद्रस्य नाधिकारो विधीयते ॥

आदौ तु मण्डलं कार्यं सर्वलक्ष्मण्ये भगव ।

नित्यं त्रिघण्टान् केशवस्य च पूजनं ॥

होमः पवित्रमन्त्रैश्च तद्वातकृत एव च ।

स्त्रीशूद्रपतितानाञ्च तथालापं विवर्जयेत् ॥
 एतत् कष्टेषु सर्वेषु कर्त्तव्यमविशेषतः ।
 वीरासनञ्च कर्त्तव्यं कामतोऽथ यथाविधि ॥
 वीरामनेन हीनञ्च विधिहीनं प्रकीर्तितं ।

राम उवाच ।

वीरामनमहं तत्त्वं श्रोतुमिच्छामि सुव्रत ॥
 वीरासनेन सहितं कष्टं बहुगुणं यथा ।

पुष्कर उवाच ।

उत्थितस्तु दिवा तिष्ठेदुपतिष्ठेत्तथा निशि ।
 एतद्दीरासनं प्रोक्तं महापातकनाशनं ॥
 आमिच्छया तु द्वौ मासौ पक्वौ न पयसा तथा ।
 अष्टरात्रं तथा दध्ना त्रिरात्रमपि सर्पिषा ॥
 निराहारस्त्रिरात्रं तु कुर्यादुद्दालकव्रतं ।
 सर्वपापप्रशमनं सर्वकामप्रदन्तथा ॥
 स्नापयेदात्मनोर्थाय पावकं भृगुनन्दन ।
 वक्त्रो ततो नु जुहुयादघातेन च कस्यचित् ॥
 मङ्गदेवेति मन्त्रेण साद्यमानो विचक्षणः ।
 दर्भांस्तु खलु बभ्रूयाद्द्वार्यमिति च स्तुतिः ॥
 अत्र तच्च स्नाप्यमानञ्च भाण्डे न्यस्तं तथा पुनः ।
 अनेन राम मन्त्रेण नरस्त्रिरभिमन्त्रयेत् ॥
 यवोसि धान्यराजोसि वारुणं मधुसंयुतं ।
 विच्छेदे सर्वपापानां पवित्रमग्निभिस्तु तं ॥
 घृतं यवा मधु यवा आपोहि अमृतं यवाः ।

सर्वं पुनीत मे पापं यन्मया दुःष्कृतं कृतं ।
 वाचाकृतं कर्मकृतं दुःस्वप्नं दुर्विचिन्तितं ॥
 अलक्ष्मीं नाशयत्येव सर्वं पुनीत मे यवाः ।
 श्वशूकरावलीढञ्च उद्राद्युपहतञ्च यत् ।
 मातुर्गुरोश्च शुश्रूषा सर्वं पुनीत मे यवाः ।
 गणान्नं गणिकान्नञ्च शूद्रान्नं आहृतकं ॥
 चीरस्थान्नं नवग्रहं सर्वं पुनीत मे यवाः ।
 बालहृत्तमधर्मं च राजहारगतञ्च यत् ॥
 सुवर्णस्तेन्यजं ब्राह्ममयान्यस्य च याजनं ।
 ब्राह्मणानां परीवादं सर्वं पुनीत मे यवाः ॥
 भाण्डं न्यस्तस्य मन्त्रोयन्तस्तु परिकीर्त्तयेत् ।

ये देवा मदनी जाताः मनोयुताः तेसुदत्ता दत्तपितारस्ते नः
 पान्तु ते नोऽवन्तु तेभ्यो नमस्तस्यैः ।

अनेनात्मनि धर्मज्ञ जुहुयादात्मनः सदा ।
 न कुर्यादतिशौहित्यं ब्रह्म एतद्दि यावकं ॥
 ये चार्थिनस्त्रिरात्रन्तु षट्पञ्चमपि यापितः ।
 उपपातकिना प्रोक्तं सप्तरात्रिमरिन्दम ।
 मष्टापातकयुक्तस्तु षड्भूतं द्विगुणं षृतं ॥
 एकविंशतिरात्रेण कामानाप्नोति वाञ्छितं ॥
 मासेन सर्वपापेभ्यो मोक्षमाप्नोत्यसंशयं ।
 गवां निहारनिर्मुक्तैर्यवैः कृत्वात देव तु ॥
 फलं प्राप्नोति धर्मज्ञ तथा दशगुणं भुवं ।
 मासेन मोक्षान् त्रिदशान् वेदान् विद्याञ्च पश्यति ॥

वरशापसमर्थं तथा भवति भार्गव ।
 एकैकवृक्षा ग्राशयान् पिण्डाद्विष्यन्संमितान् ॥
 एकैकं क्रासयेत् कण्ठे प्रतिपत्प्रवृत्तिक्रमात् ।
 हविष्यश्च महाभाग नाग्रीयाश्चन्द्रसंचये ॥
 एतच्चान्द्रायणं प्रोक्तं यवमध्यं महामुनिः ।
 एतदेव विपर्यस्तं वाजिमेध्यं प्रकीर्तितं ॥
 अष्टभिः प्रत्यहं यासैर्य वैश्वान्द्रायणश्चरेत् ।
 तथा कथञ्चित्पिण्डानाञ्चत्वारिंशच्छतद्वयं ॥
 मासेन भक्षयेदेतत्सुरचान्द्रायणं भवेत् ।
 गोचीरं सप्तरात्रश्च द्वे सुरे च चष्टयं ॥
 सुराचयात् सप्तरात्रं सप्तरात्रात्सुराद्वयं ।
 सुरा एयेण घञ्जात्रं त्रिरात्रं वायु ना भवेत् ॥
 एतत् सोमायनं नाम व्रतं कल्पवनाशनं ।
 त्र्यहं पिवेदपस्तूणाः त्र्यहमुष्णं पयः पिवेत् ॥
 त्र्यहमुष्णं घृतं पौत्वा वायुभक्षो भवेत् त्र्यहं ।
 तप्तकच्छमिदं प्रोक्तं शीतैः शीतं प्रकीर्तितं ॥
 कच्छातिकच्छं पयसा दिवसानेकविंशतिः ।
 गोमूत्रं गोमयं चीरं दधि सर्पिः कुशीदकं ॥
 एकरात्रोपवासश्च कच्छं सान्तपनं स्मृतं ।
 एतच्च प्रत्यहाभ्यस्तं महासान्तपनं स्मृतं ॥
 त्र्यहाभ्यस्तमथैकैकं महासान्तपनं स्मृतं ।
 कच्छं पराकसंश्च स्यात् द्वादशाहमभोजनं ॥
 एकभक्ते न नक्ते न तथैवायाचिते न च ।

उपवासेन चैकेन कच्छपादः प्रकीर्तितः ॥
 एतदेव चिरम्भस्तं शिशुकच्छं प्रकीर्तितं ।
 ग्रहं प्रातस्त्रहं सायं ग्रहमद्याद्याचितं ॥
 ग्रहं परस्त्र नाश्रीयात् प्राजापत्यचरेहिजः ।
 पिण्याकचन तक्राम्बुसक्तनां प्रतिवासरं ॥
 एकैकमुपवासश्च सौम्य कच्छं प्रकीर्तितं ।
 अम्बुसिद्धैस्तथा मासं केवलं वारुणं समैः ॥
 फलैर्मासेन कथितं फलकच्छं मनीषिभिः ।
 श्रीकच्छं श्रीफलैः प्रोक्तं पद्माक्षैरपरं तथा ।
 मासमामलकैरेव श्रीकच्छं अपरं स्मृतं ॥
 पत्रैर्युतं पत्रकच्छं पुष्पैस्तत्कच्छं मुच्यते ।
 मूलकच्छं तथा मूलैस्तोयकच्छं जलेन तु ॥
 दध्ना क्षीरेण तक्रैण पिण्याकचनकैस्तथा ।
 शाकं मासन्तु कार्याणि स्वनामानि विचक्षणैः ॥
 सायं प्रातश्च भुञ्जानो नरो येनान्तरा पिवेत् ।
 षष्ठ्यभिर्ष्वर्षैरिदं प्रोक्तं कच्छं नित्योपवासिना ॥
 एकभक्तेन मासेन कथितश्चैकभक्तकं ।
 नक्तमे भोजयेद्वदस्तु नक्तकच्छं च वक्षरात् ॥
 नक्तोसितस्तु धर्म्यं एकभक्तश्च वा पुनः ।
 ग्रहं सोपवसेद्यस्तु ज्ञाथीत सवनत्रयं ॥
 निमग्नश्च तथैवाप्यु त्रिःपठेद्वधमर्षणं ।
 देवताभावस्तन्तु हृन्दयेवाप्यनुष्टुभं ॥
 संस्मरेत्तस्मै च तथा ऋषिदेवाधमर्षणं ।

चतुर्थऽहनि दातव्या ब्राह्मणाय पयस्विनी ॥
 ग्राहं जपेद्यथाशक्ति शुचिद्यैवाघमर्षणं ।
 भावहृत्तः स्मृती देवस्तथा च पुरुषः परः ॥
 तद्देवत्वं विजानीयात् सुक्तान्तदघमर्षणं ।
 यथाश्वमेधे क्रतुराट् सर्वपापापनोदनः ॥
 तथाघमर्षणं प्रोक्तं सर्वकल्मषनाशनं ।
 कृष्णाजिनं वा कुतपं परीधायथ वल्कलं ॥
 संवत्सरं व्रतं कुर्यात् सचित्रं रामभागंव ।
 गृहं न प्रविशेत्तत्र भवेदाकाशशायकः ॥
 अशक्तो वा भवेद्राम महाशैलगुहाश्रयः ।
 नित्यन्निषवणस्त्रायी तथास्य दिश्वसम्भव ॥
 भैक्षशाकफलाहारः कामं स्याद् द्विजसत्तम ।
 वीरासनं तथा कुर्यात् काष्ठमौनं तथैव च ॥
 सर्वकामप्रदं ह्येतत् सर्वकल्मषनाशनं ।
 वायव्यं कच्छसूक्तान्तु पाणिपूरान्नभोजनं ॥
 मासेनैकेन धर्मज्ञः सर्वकल्मषनाशनः ।
 तिलैर्द्वादशरात्रेण कच्छमान्नेयमुच्यते ॥
 राजप्रसूतिमप्येकं कनकेन समन्वितं ।
 भुञ्जानस्य तथा मासं कच्छश्च नददेवतं ॥
 सर्वान् हरीतकीयुक्तैर्यवैः सक्तान् समघतः ।
 याम्यकच्छं विनिर्द्दिष्टं मासेन भृगुनन्दन ॥
 गोमूत्रेण चरेत् स्नानं वृत्तिं गोमयमाचरेत् ।
 गवां मध्ये सदा तिष्ठेद्गोपुरीषे च संदिशेत् ॥

गोखपीतासु न पिवेदुदकं भृगुनन्दन ।
 अभुक्तवत्सु नाग्नीयादुत्थितासूत्थितो भवेत् ॥
 तथाचैवोपविष्टासु सर्वासुपविशेन्नरः ।
 मासेनैकेन कथितं गोव्रतं कल्पषापहं ॥
 अनालच्छ्रुं तदैवेतदजामध्ये तु वर्त्तिनः ।
 त्रिराग्निसुषादात्मा(१) सन्तुष्टो न फलैरुभे ॥
 द्वादशाहेन कथिते सर्वपातकनाशने ।
 उपोषितयतुर्ह्यं पञ्चदशामनन्तरं ॥
 पञ्चगव्यं समग्नीयाद्विष्ठागी त्वनन्तरं ।
 ब्रह्मकूर्चमिदं कुर्यादुक्तप्रशमनाय वै ॥
 पक्षान्ते त्वथवा कार्यं मासमध्येऽथवा पुनः ।
 ब्रह्मकूर्चं नरः कुर्यात् पौर्णमासीषु यः सदा ।
 तस्य पापं क्षयं याति दुर्भुक्तादि न संग्रहः ॥
 मासेन द्विर्नरः कृत्वा ब्रह्मकूर्चं समाहितः ।
 सर्वपापविनिर्मुक्तो यथेष्टाङ्गतिमाप्नुयात् ॥
 ब्रह्मभूतममावास्यां पौर्णमास्यां तथैव च ।
 योगभूतं परिचरन् केगवं महमाप्नुयात् ॥
 एवमेतानि कृच्छ्राणि कथितानि मया तव ।
 शमितानीह पापानि दुरितानि च भार्गव ॥
 संवत्सरस्यैकमपि चरेत् कृच्छ्रं द्विजोत्तमः ।
 अज्ञातभुक्तशुद्ध्यर्थं ज्ञातस्य तु विशेषतः ॥
 अज्ञानं यदि वा ज्ञातं कृच्छ्रपापं विशेषयेत् ।

(१) पाठोऽप्यमाद्वर्तते च समोषोऽपीति भवितुं शक्यम् ।

कृच्छ्रसंशुद्धपापानां नरकं न विधीयते ॥
 श्रीकामः पुष्टिकामश्च स्वर्गकामस्तथैव च ।
 देवताराधनपरस्तथा कृच्छ्रं समाचरेत् ॥
 रसायनानि मन्त्राश्च तथा चैवौषधाश्च ये ।
 तस्य सर्वेऽपि सिध्यन्ति यो नरः कृच्छ्रकृद्भवेत् ॥
 वैदिकानि च कर्माणि यानि काम्यानि कानिचित् ।
 सिध्यन्ति सर्वाणि तदा कृच्छ्रकर्तुर्भूतम ॥
 तेजमस्तस्य संयोगो महतश्चैव जायते ।
 वाञ्छितान्मानसान् कामान् स प्राप्नोति न संशयः ॥
 ज्ञातो भवति देवेषु तथा ऋषिगणेष्वपि ।
 विपाप्मा वितमस्कश्च संशुद्धश्च विशेषतः ॥
 आराधनार्थं पुरुषोत्तमस्य
 कृच्छ्राणि कृत्वा मधुसूदनस्य ।
 पापैर्विमुक्तः परिशुद्धचित्तः
 कामानवाप्नोति यथेप्सितांश्च ॥
 आयातु भगवान् ब्रह्मा समुनिर्हंसवाहनः ।
 तपोयज्ञव्रतानान्तु भर्ता देवश्चतुर्मुखः ॥
 आह्वय पद्मयोनिन्तु मन्त्रेणानेन मन्त्रवित् ।
 देवस्य चेति मन्त्रेण भक्तितस्तं समर्चयेत् ॥
 अर्घ्यैर्धूपैः पवित्रैश्च मात्रया कुसुमैः फलेः ।
 मूलैर्वन्युपहारेण नैवेद्यैर्विविधैरपि ।
 दीपदानैर्यथाशक्त्या जपेन स्तुतिमङ्गलैः ।
 तदग्रे पञ्चगव्यन्तु कुर्वीत सुसमाहितः ॥
 गोमूत्रन्ताम्रवर्णायास्त्वष्टमाषकसंख्यया ।

पुण्यं वरुणदेवत्यं गायत्र्या चाभिमन्त्रणं ॥
 गोमूत्रं श्वेतवर्णयाद्यतुर्माषकमाषकं ।
 गृह्णीयादग्निदेवस्य गन्धहारेति वै शनैः ॥
 पयः काञ्चनवर्णया सोमदेवत्यमेष च ।
 आप्यायस्वेति मन्त्रेण माषकहादयान्तिकं ॥
 गृह्णन्ति वायुदेवत्यं कृष्णवर्णीद्वयं दधि ।
 दशमाषकमाचन्तु दधिक्रावण इति स्मरन् ॥
 घृतन्तु नीलवर्णयाः पञ्चमाषकसंख्यया ।
 गृह्णन्ति सूर्यदेवत्यं तेजोसोति जपन् क्रमात् ॥
 शतत्रयं माषकानां चत्वारिंशच्च पृथक् च ।
 कुयोदकस्य गृह्णीत देवस्यत्वेति कीर्त्तयेत् ॥
 ताम्रपात्रे पलाशे वा पात्रे मियोक्तश्च यत् ।
 आपोद्दिष्टेति चालोढा प्रणवेन पिबन्ति च ॥
 उदङ्मुखस्त्रिराचम्य ततो गच्छेत् स तदुग्रहं ।
 तत्राग्निहोमं प्रागूढं कृत्वा दद्याच्च दक्षिणां ॥
 ब्राह्मणेभ्यो यथाशक्त्या भोजनञ्च मनुजैः ।
 गवां वर्णास्तु शृङ्गाद्याः सन्ति शेषेषु यत् च ।
 तत्र वर्णविभागेन पञ्चगव्यानि चाहरेत् ॥
 वर्णालाभाच्च दीर्घास्ति मात्राह्नीनं विवर्जयेत् ।
 त्याज्यानि दूषितानाञ्च न विन्द्यत्रयमांसि च ॥
 प्रसक्तानाञ्च शुक्रेण प्रक्षतानाञ्च शोणितं ।
 चेलकेश्याश्च भक्ष्याणामभक्ष्यैः संपृतान्तया ॥
 रोगार्त्तानाञ्च पूर्णाद्यैर्मृताण्डानाममङ्गलैः ।

निष्फलत्वेन वृद्धानां कृशानां कृमिभिस्तथा ॥
 अनतिप्रीतिदत्तानि साधनाप्रभवाणि च ।
 शङ्खभाण्डे मनोज्ञे तु भूमावपतितानि तु ॥
 गृहीतव्यानि विधिना खेदत्तासां न कारयेत् ।
 ब्रह्मकूर्चव्रतमिदं सर्वपापप्रनाशनं ॥
 सर्वकामप्रदं पुंसां रूपारोग्ययशस्करं ।
 महतामपि पापानां नाशनं श्रीविवर्धनं ॥

इति ब्रह्मपुराणोक्तं ब्रह्मकूर्चव्रतं ।

—000—

विष्णुधर्मोत्तरात् ।

ऋषय ऊचुः ॥

कर्मणा केन पुरुषः किमाप्नोति महामते ।
 एतन्मे संग्रहं किञ्चिद्विजानां द्विजसत्तम ॥

हंस उवाच ।

दानेन भोगी भवति तपसा विन्दते महत् ।
 हृदोपसेवया विप्रप्राज्ञो भवति मानवः ॥
 यज्ञेन लोकानाप्नोति सत्येन च पराङ्गतिं ।
 स्नानेन शुद्धिमाप्नोति प्राणायामाद्विशेषतः ॥
 ध्यानेन धारणाभिस्तु पद्माप्नोत्यनुत्तमं ।
 दमने सर्वमाप्नोति यत्किञ्चिन्नसि स्थितं ॥
 शौचेन देवाः प्रीयन्ते प्रीयन्ते चोपवासतः ।
 उपवासव्रतस्थानां कामावाप्तिर्भवं भवेत् ॥
 भवन्ति विपुला भोगाः संग्रामेष्वपलायिनां ।

मधुमांसनिवृत्तस्य सर्व्व एव मनोरथाः ॥
 मांसाशननिवृत्तोऽपि परं सौख्यमुपाश्रुते ।
 अहिंसया त्वरोगी स्याद्दीर्घायुष्याप्यहिंसया ॥
 रूपलावण्यसौभाग्यधनधान्ययुतः सदा ।
 तीर्थानुसरणाहिप्राः पापनाशमवाप्नुयात् ॥
 सर्व्वकल्मषह्नीनस्तु यान् लोकान् मनसीच्छति ।
 प्रतिश्रयप्रदानेन स्थानमाप्नोत्यनुत्तमं ॥
 पूज्य पूजयिता विषा यशसा युज्यते नरः ।
 अभिवादनशौलस्य नित्यं हृदोपसेविनः ॥
 समङ्गत्वा विवर्द्धन्ते कीर्त्तिमायुर्यशोबलं ।
 ऋतुकालादृते भार्यां तथैव परिवर्जयेत् ॥
 पानीयमपि विप्रेन्द्रा विष्णुलोकं स गच्छति ।
 अनेनैव विधनेन देशकालगनेनरः ॥
 सर्व्व कामानवाप्नोति गतिं प्राप्नोत्यभीप्सितां ।
 तथा भोजनकाले तु यस्तु मौनं समाचरेत् ॥
 उपवासफलस्तस्य प्रत्यहं भोजनस्य तु ।
 सर्व्वान् कामानवाप्नोति मौनी नृताशनः सकृत् ॥
 नाप्नोति नरकं दुःखं नित्यस्रागो नरो यदिः ।
 यो दद्यादपरिक्लिष्टमन्नमध्वनिवर्त्तिने ॥
 शान्तागादृष्टपूर्वाय तस्य पुण्यफलं महत् ।
 पाद्यमामनमेवाथ दीपमन्नं प्रतिश्रयं ॥
 दद्यादतिथिपूजार्थं स यत्तः पञ्चदक्षिणः ।
 चतुर्द्द्यान्मनो दद्याद्वाचं दद्याच्च स्मृतां ॥

अनुव्रजेदुपाक्षीणः सर्वकामफलप्रदः ।
 पुष्पाग्निनाम्नैश्चैश्वर्यं धनं शाकाग्निनां महत् ॥
 पयोभक्ष्या दिवं याति अभक्ष्यायामितां गतिं ।
 दत्तो लूस्वलको विप्रो यद्याप्युच्छेन जीवति ॥
 कापोती मास्यतो वृत्तिं यथेष्टाङ्गतिमाप्नुयात् ।
 प्रायोपवेशनाद्राज्यं सर्वं च फलमुच्यते ।
 येन प्रीणाति पितरन्तेन प्रीतः प्रजापतिः ॥
 प्रीणाति मातरं येन पृथिवी तेन पूजिता ।
 येन प्रीणात्युपाध्यायन्तेन स्याद्ब्रह्म पूजितं ॥
 सर्वे तस्यादृता धर्मा यस्यैते त्रय आदृताः ।
 अनादृतास्तु यस्यैते सर्वा तस्याफला क्रिया ॥
 गुरुशुश्रूषया विद्या निष्पन्ना ह्येन सन्ततिः ।
 नित्यस्त्रायी भवेद्दत्तः संध्ये तु द्वे जपेत्सदा ।
 द्विजशुश्रूषया राज्यं द्विजत्वं वापि पुष्कलं ।
 देवशुश्रूषया कामं यथेष्टं प्राप्नुयात् ततः ।
 सात्त्विकः सर्वभूतानां सर्वलोकेः प्रपूज्यते ॥
 परिचर्यातुरं सम्यक् न रोगैः परिभूयते ।
 गोलोकमाप्नोति तथा गवाश्च परिचर्यया ॥
 देवमाख्यापनयनात्पादग्रीवात् द्विजस्य तु ।
 श्रान्तसंवाहनादिप्राः सुखमत्यन्तमश्नुते ॥
 जले सप्तसहस्राणि एकादश हुताग्ने ।
 भृगुप्रपाते च दश संपामे विंशतिस्तथा ॥
 नरो वर्षसहस्राणि तनुं त्यक्त्वा तु मोदते ।

अनाशके तु धर्मज्ञाः परिसंख्या न विद्यते ॥
 मेरोः साधयते राज्यं यथेष्टं भुवि जायते ।
 पुण्यप्रस्थानमाविश्य यथेष्टाङ्गतिमाप्नुयात् ॥
 वज्रिप्रवेशे नियतमभीष्टं लोकमश्नुते ।
 वारुणं लोकमाप्नोति त्यक्त्वाभूमि तनुन्नरः ॥
 शष्पं मृगमुखीत्शृष्टं यो मृगैः सङ्ग सेवते ।
 दीक्षितो वै सुदा युक्तः स गच्छत्यमरावतीं ॥
 शैबलं शीर्णपर्णम्वा तद्भूतं यो निषेवते ।
 शीतयोगवहे नित्यं स गच्छेत्परमाङ्गतिं ॥
 वायुभक्षीरुभीक्षी वा फलमूलाशनोऽपि वा ।
 याक्षमैश्वर्यमाप्नोति मोदतेऽप्सरमाङ्गणैः ॥
 अग्नियोगवहे घोषी विधिवदृष्टेन कर्मणा ।
 दीर्घहादशवर्षाणि राजा भवति पार्थिवः ॥
 आहारनियमं कृत्वा मुनिर्द्वादशवर्षिकं ।
 व्रतं समाप्य कालेन राजा भवति पार्थिवः ॥
 स्थण्डिले शुद्धमाकाशं परिशुद्धं समन्ततः ।
 प्रविश्य च सुदायुक्तो दीक्षां द्वादशवर्षिकीं ।
 स्थण्डिलस्य फलान्वाह यानानि शयनानि च ।
 गृहाणि शयनार्हाणि चन्द्रशुभ्राणि ब्राह्मण ॥
 आत्मानमुपजीवन् यो नियतो नियताशनः ।
 देहं वानशने त्यक्त्वा स स्वर्गं समुपायते ॥
 आत्मानमुपजीवन् यो दीर्घहादशवर्षिकीं ।
 अन्नना चरन् दत्त्वा गुणकेषु च मोदते ॥

साधयित्वात्मनात्मानं निर्हन्तो निष्परिग्रहः ।
 तीर्त्वा द्वादशवर्षाणि दीक्षाभेकां मनोगतां ।
 स्वर्गलोकमवाप्नोति पितृभिः सह मोदते ॥
 स्वात्मानमुपजीवन्त्यो दीक्षां द्वादशवार्षिकीं ।
 त्यक्त्वा महाहवे देहं वारुणं लोकमाप्नुयात् ॥
 आत्मानमुपजीवन्त्यो दीक्षां द्वादशवार्षिकीं ।
 हुताग्नी देहमुत्सृज्य वज्रलोके महीयते ॥
 यस्तु विप्रो यथान्यायं दीक्षितो नियतेन्द्रियः ।
 आत्मन्यात्मानमाधाय निर्हन्तो धर्म्मलालसः ।
 तीर्त्वा द्वादशवर्षाणि दीक्षाभेतामरोगतां ।
 अरणीसहितः स्कन्धे तीर्थाटनविधिक्षरेत् ॥
 वीराध्वानमवानीत्य वीरासनगतः सदा ।
 वीरस्थायी च सततं स वीरगतिमाप्नुयात् ॥
 वीरलोके गते वीरो वीरयोगावहः सदा ।
 मत्स्यस्य सर्वमुत्सृज्य दीक्षितो नियतः शुचिः ।
 शक्रलोकगतः श्रोमान् मोदते दिवि देववत् ॥
 उपव्रताः शुचिर्दान्ता अहिंसाः सत्यवादिनः ।
 संसिद्धाः प्रेत्यगन्धर्वैः सह मोदन्त्यनामयं ॥
 मण्डूकयोगशयनो यथास्थानं यथाविधि ।
 दीक्षां चरति धर्म्मात्मा स नागैः सह मोदते ॥
 आर्द्रवासास्तु शिशिरे व्रतं वहति यो नरः ।
 द्वादशाब्दानि नियतं राजा भवति पार्थिव ॥
 वृक्षवनगतान् प्राणान् सप्तपूर्वापरांस्तथा ।

नरांस्तारयते दुःखादात्मानञ्च विशिषतः ॥
 येन येन शरीरेण यद्यत्कर्म करोति यः ।
 तेन तेन शरीरेण तत्फलं हि समश्नुते ॥
 यस्यां यस्यामवस्थायां यत् करोति शुभाशुभं ।
 तस्यां तस्यामवस्थायां तत्फलं समपाश्रुते ॥

महाभारतात् ।

फलमूलाग्निनां राज्यं स्वर्गः पर्णाग्निनाम्भवेत् ।
 पयोभक्षो दिवं याति स्थनिन द्रविणीदृक् ॥
 गवायः शाकदीक्षाभिः स्वर्गमाहुस्तृणाग्निनां ।
 स्त्रियस्त्रिसवणस्त्रानादायुं पीत्वा क्रमं लभेत् ॥
 नित्यस्त्रायी लभेद्राज्यं मर्त्ये तु द्वे जयं द्विजः ।
 सेन्द्रं साधयते राज्यं नाकपृष्ठमनाशकः ॥
 स्थण्डिले तु गयानानां गृहाणि गयमानि च ।
 रमानां प्रतिसंहारे मौमाय्यममिविद्यते ॥
 आमिषप्रतिसंहारे प्रजा आयुष्मती भवेत् ।
 उदवासं वसेद्यत्नं, स नराधिपतिर्भवेत् ॥
 प्रतिसंहारः परित्यागः, उदवास उदके वासः ।
 सत्यवादी नरयेष्ठो दैवतैः सह मीदते ॥
 गन्धमास्थानुवृत्त्या तु कान्तिर्भवति पुष्कला ।
 केशश्मश्रु धारयति तामग्र्यां वसति लभेत् ॥
 उपवासञ्च दोक्षाञ्चाप्यभिकञ्च पार्थिव ।
 कृत्वा द्वादश वर्षाणि वामवत्वादिशिष्यते ॥
 अवाक्शिरास्त, यो लब्धेदुदवासं वसेच्च यः ।

(११८)

सततञ्चैकसाधी यः स लभेदीप्सिताङ्गतिं ॥
 परं विन्दति दानेन मौनेनात्मा प्रतीच्छति ।
 उपभोगांश्च तपसा ब्रह्मचर्येण जीवितं ॥
 रूपमैश्वर्यमारोग्यं अहिंसाफलमुच्यते ।
 प्रायोपवेशनाद्राज्यं सर्व्वत्र फलमश्रुते ॥
 स्वर्गं सत्येन लभते दीक्षया कुलमुत्तमं ।
 अधीत्य सर्व्ववेदान्चै सद्यो दुःखात् प्रमुच्यते ॥
 मानसन्तु वरं धर्मं स्वर्गलोकमवाप्स्यते ।
 विष्णुधर्म्मोत्तरात् ऋषय ऊचुः ।
 कं लोकं कर्मणा केन संप्राप्नोति नरोत्तमः ।
 तत्त्वमस्माकमाचक्ष्व त्वं हि सर्व्वविदुच्यते ॥

हंस उवाच ।

ज्येष्ठं स्वसारं पितरं गुरुं मातरमेव च ।
 नित्यं संपूजयेद्भक्त्या याम्यलोके महीयते ॥
 भोजनावसथाद्येन त्वतिथिञ्चैव पूजयेत् ।
 राजराजस्य लोकेषु मोदते नात्र संशयः ॥
 मेरोः समोपं गच्छन्ति यथा चैवीत्तरान् कुरुन् ।
 नित्यं दानपराः शान्ता लोकं गच्छन्ति शीतगोः ॥
 आदित्यलोकं गच्छन्ति यथा येन परिस्थिताः ।
 तीर्थयात्रां परां यान्ति तथा लोकं प्राचेतसः ॥
 संग्रामे निहता यान्ति शक्रलोकमसंशयं ।
 प्राजापत्यं तथा यान्ति सम्यग् दत्त्वा महीक्षितः ॥
 गवां भक्त्या तथा यान्ति गोलोकं मानवोत्तमाः ।

यान्ति लोकन्तु साध्यानां नित्यं ये सत्यभाषिनः ॥
 प्रतियहन्निवृत्ताय वसूनामपि मानवाः ।
 वायुलोके महीयन्ते रोगिणां परिचारकाः ॥
 लोकं गच्छन्त्यथान्ये वल्लिशूषणे रताः ।
 यान्ति ते नैर्ऋतं लोकं पररक्षणतत्पराः ।
 भृगूणामथ लोकेषु मोदन्त्याकाशभाषिनः ॥
 यान्ति चाङ्गिरसे लोके व्रतिनी नात्र संशयः ।
 मरुताञ्च तथा लोकं यान्ति यानप्रदा नराः ॥
 नासत्यलोके मोदन्ते तथैवोपधिदायिनः ।
 रुद्रलोकं प्रपद्यन्ते गोविप्रातुरवक्त्रलाः ॥
 स्ववाचि निरता यान्ति वैश्वदेवसंशयं ।
 आदित्येः सह मोदन्ते दयावन्तस्तु ये नराः ॥
 ब्रह्मलोकं विष्णुलोकं रुद्रलोकं तथैव च ।
 तद्गौरवेण लभ्यन्ते नान्यथा हिजसत्तमाः ॥
 यस्य देवस्य यां भक्तिं सदा वहति मानवाः ।
 सम्पदस्तस्य सालोक्यं याति नास्त्यत्र संशयः ॥
 लोकेषु दिव्येषु गतिर्मयीक्ता
 कर्मानुरूपा पुरुषस्य विप्राः ।
 अतः परं किं कथयाम्यहं वे
 तन्मे वदध्वन्तपमि प्रयान्ताः ॥

इति नानाशुभफलानि ।

अथ शरीरोत्सर्गविधिरभिधीयते । तेचानयनाग्निप्रवेश
भृगुपतनादयः ।

तत्र विष्णुधर्मोत्तरात् ।

नरो नव्याधिरहितः सन्त्यजेदात्मनस्तनुं ।
अधमा नाम ये लोका अन्वेन तमसावृताः ।
तांस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः ॥
अनिष्टैरात्मनो ज्ञात्वा मृत्युकालमुपस्थितं ।
व्याधितो भिषजा त्यक्तः पूर्णं वायुषि चात्मनः ॥
यथा युगानुसारेण सन्त्यजेदात्मनस्तनुं ।
तस्मिन् काले तनुत्यागाद्यथोक्तं फलमोप्नुयात् ॥
आयुषस्तु पुरा दृष्टं मरण ब्राह्मणस्य च ।
क्षत्रियस्य तु संग्रामे मृतभर्त्तरि योपितः ॥
ब्राह्मणार्थं गवार्थं वा सन्त्यजेदात्मनस्तनुं ।
सर्वो ह्यप्राप्तकालोऽपि गतिमग्रामवाप्नुयात् ॥

आदित्यपुराणात् ।

समायुक्तो भवेद्यस्तु पातकेर्महदादिभिः ।
दुष्टिकित्तैर्महारोगैः पौडितो वा भवेत्तु यः ॥
स्वयं देहे विनाशस्य काले प्राप्ते महामतिः ।
आब्राह्मणोऽपि स्वर्गादिमहाफलजिगीषया ॥
प्रातरूज्वलनन्दोषं करोत्यनशनं तथा ।
अगाधतोयराशिं वा भृगोः पतनमेव वा ॥
गच्छेन्नृपापथं वापि तृषारगिरिमादरात् ।
प्रयागवटशाखाग्रे देहत्यागं करोति वा ॥

उत्तमान् प्राप्तुं यात् लोकान् नात्मघाती भवेत् कश्चित् ।
 महापापक्षयात् सर्वो दिव्यान् भोगान् समश्नुते ॥
 एतेषामधिकारस्तु तपसा सर्वत्र नृप ।
 नराणामथ नारीणां सर्ववर्गेष्वयं विधिः ॥
 श्वश्रुश्च मातरश्चैव भगिनीं ब्राह्मणीं मतीं ।
 मासोपवामिनीं गत्वा गुरुपत्नीं तथैव च ।
 करीषाम्निं विशेहि प्रो गच्छेत्तत्र महातपः ॥

तथा रेवाखण्डे ।

ये मृता नर्मदातीरे सङ्गमे लिङ्गदर्शने ।
 तेषां गृहाश्च रम्याश्च पूर्वभागव्यवस्थिताः ॥
 नर्मदामेदमध्ये तु सावित्रीसङ्गमे तथा ।
 त्रिपुरासन्निधाने च विष्णौ सन्निहिते तथा ॥
 र्क्षाकारदक्षिणे भागे पूर्वतो सरस्वत्ये ।
 जलाधारे कीटितीर्थे ये मृताः स्वप्नमानवाः ॥
 हर्म्यैरिमैर्मनोरम्यैर्वसन्ति च नरोत्तमाः ।
 भृगावम्नौ जले वापि नद्याः सकलसङ्गमे ।
 गोदावर्यां पयोण्यां च तपायश्चैव सङ्गमे ॥
 आत्रेय्याश्चैव भारत्यां ताराणस्यान्तर्गेषु च ।
 दुमालये गोगृहे च गोकर्णे च महालये ॥
 हरिश्चन्द्रे पुरीषन्द्रे मीशिले त्रिपुरात्मके ।
 कृष्णायान्तुङ्गभद्रायां महारथ्यां मङ्ग नदीं च ।
 कार्तिके स्वामिकुण्डे च ये स्त्रियन्ते च पुत्रक
 सरस्वत्यान्त्यजेषु प्राणान् प्रभासे शशिभूषणे ॥

पारियात्रे महाकाले जायन्ते तत्त्ववर्त्तिनः ।

अनशनं तावदुच्यते ।

विष्णुधर्मात् ।

तदेतदुक्तं तपसामशेषानां महामते ।

गुणैरनशने ब्रह्मा प्रधानतममब्रवीत् ॥

त्यजेदनशनस्थो हि प्राणान् यः संस्मरन् हरिं ।

स याति विष्णुमालोक्य यावदिन्द्रायतुर्दृश ॥

अतीतानागतानीह कुलानि पुरुषर्षभ ।

पुनान्यनशनं कुर्वन् सप्त सप्त च सप्त च ॥

नान्यत्सुक्ततमुद्दिष्टं तमेरनशनात् परं ।

तस्याहं लक्षणं वक्ष्ये यच्च जप्यं सुसूक्ष्मम् ॥

यादृक् रूपं भगवान् चिन्तनीयो जनार्दनः ।

आसन्नमात्मनः कालं ज्ञात्वा प्राज्ञो महासुर ॥

निधूतमलदोषश्चाती नियतमानसः ।

समभ्यर्च्य हृषीकेशं पुष्पधूपादिभिस्तथा ॥

प्रणिपातैः स्तवैः पुण्यैर्धानयोगैश्च पूजयेत् ।

दत्त्वा दानञ्च विप्रेभ्यो विकलादित्य एव च ॥

समायोगि ब्राह्मणीकी देवीकस्तपयोगि च ।

बन्धौ पुत्रे कलत्रे च स्नेतृधन्यधनादिषु ॥

मितवर्गं च दैत्येन्द्र ममत्त्वं विनिवर्त्तयेत् ।

मित्राण्यमित्रमध्यस्थान् परांश्चाश पुनः पुनः ॥

अभ्यर्चनोपचारेण समयेत् सुकृतं स्वकं ।

ततश्च प्रयतः कुर्यादुत्कर्षं सर्वकर्मणां ॥

शुभाशुभानां दैत्येन्द्र वाक्यं वेदमुदाहरेत् ।
 परित्यजाम्यहं दानं यजामि सुहृदोऽखिलान् ॥
 भोजनादि मयोत्सृष्टुन्ताम्बूलमनुलेपनं ।
 सूत्रघृणादिकं त्यक्तं दानञ्चादानमेव च ॥
 होमादयः पदार्था ये ये च नित्यक्रमा मम ।
 निमित्ताश्च तथा काम्याः यावत्कर्माक्रियोदिता ॥
 त्यक्ताद्यात्रमिषां धर्मा वर्णधर्मास्तथा हिताः ।
 पद्भ्यां कराभ्यां विहरन् कुर्वन् वा काममत्यहं ॥
 न पापं कस्यचिद्दास्ये प्राणिनः सन्तु निर्भयाः ।
 न भक्षि प्राणिनो ये च ये जलेष्वपि भूतले ॥
 क्षितौ विवरगा ये च ये च पाषाणसङ्घटे ।
 ये धान्यादिषु वस्त्रे च शयने स्नासनेषु च ॥
 न स्त्र्यं किञ्च बुद्ध्यात् दत्तस्तेभ्यो भयावहं ।
 तस्मिंस्ति बान्धवः कश्चिद्विष्णुं त्यक्त्वा जगद्गुरुं ॥
 मित्रपत्ने च मे विष्णुरधोर्ध्वं तथा घृतः ।
 पार्श्वयोमुर्द्धि हृदये बाहुभ्यां वापि चक्षुषोः ॥
 श्रोत्रादिषु तथाङ्गेषु मम विष्णुः प्रतिष्ठितः ।
 इति सर्व्वं समुत्सृज्य ध्यात्वा सर्व्वगमश्चरन् ॥
 वासुदेवस्य नियतं नाम देवेश कीर्त्तयेत् ।
 दक्षिणायेषु दर्भेषु शयीत प्राक्क्षिरास्ततः ॥
 उदक्क्षिरा वा दैत्येन्द्र चिन्तयन् जगतः पतिं ।
 विष्णुं जिष्णुं हृषीकेशं केगवं मधुसूदनं ।
 नारायणं नरं सौरिं वासुदेवं जनार्दनं ।

वाराहं यज्ञपुरुषं पौण्डरीकमथाच्यतं ॥
 वामनं श्रीधरं कृष्णं नृसिंहमपराजितं ।
 पद्मनाभमजं श्रीगं दामोदरमधोजजं ॥
 सर्वेश्वरेश्वरं शुक्लमनन्तं राममीश्वरं ।
 चक्रिणश्चदिनं शान्तं गङ्गिनं गरुडध्वजं ॥
 किरीटकौस्तुभधरं प्रणमाम्यहमव्यय ।
 अहमस्मिन् जगन्नाथे मयि वास्तु जनार्दनः ।
 आवयोरन्तरं मास्तु धर्मीराकाशयोरिव ।
 अयं विष्णुरयं सौरिरयं कृष्णः पुरी मम ।
 नीलीत्पलदलश्यामः पद्मपत्रायतेक्षणः ॥
 एष दृश्यतमो ह्रीगः पश्याम्यहमबोहरिं ।
 यतो न व्यतिरिक्तोऽहं यन्मनोऽहं यदाश्रयः ॥
 इत्थं जपेदेकमनाः स्मरन् सर्वेश्वरं हरिं ।
 अतीतः सर्वदुःखेषु ममो मित्राहितेषु च ॥
 नमोऽस्तु वासुदेवाय व्रतोज्ञं सततं जपेत् ।
 यद्बोदीरयितुं नाम समर्थस्तदुदीरयेत् ।
 तथा ध्यायेच्च देवस्य विष्णोरूपं मनोरमं ॥
 प्रसन्ननेत्रभ्रूवक्त्रं शङ्खचक्रगदाधरं ।
 श्रीवक्त्रसं सुमनसञ्चतुर्बाहुं किरीटिनं ॥
 पीताम्बरधरं कृष्णं चारुकेयूरधारिणं ।
 चिन्तयेच्च सदा रूपं मनः कृत्वा कनिष्ठये ॥
 यादृशे वामनः स्थिर्य रूपे बध्नाति चक्रिणः ।
 तदेव चिन्तयेद्रूपं वासुदेवेति कौर्त्तयेत् ।

इत्थं जपन् स्मरन्नित्यं स्वरूपं परमात्मनः ।
 आप्राणीपरमाह्वीरस्तस्मिन्सस्तत्परायणः ।
 सर्वपातकयुक्तोऽपि पुरुषः पुरुषर्षभ ।
 प्रयाति देवदेवेशे लयमीकृतमेऽच्युते ॥
 यथाग्निस्तृणजातानि दहत्यनिलसङ्गतः ।
 तथानशनसङ्कल्पः पुंसां पापान्यलङ्घ्यताः ॥
 पृष्ठतस्त्रामरधरा विमानैरनुयान्ति तं ।
 देवकन्या निवासे च तस्मिन् वसति मानवः ।
 जाह्नवीवाल्मीकापूर्णे पूर्णसंवत्सरं नरः ॥
 बलिरुवाच ।

उत्क्रान्तिकाले भूतानां मुह्यन्ते चित्तवृत्तयः ।
 जराव्याधिविहीनानां किञ्च व्याध्यादिदोषिणः ॥
 अत्यन्तं वयसा वृद्धो व्याधिना रोगपीडितः ।
 यदि स्यात् न शक्नोति क्षितिस्थो दर्भसंस्तरे ।
 तत् किमन्वोष्यपायोऽस्ति नरानशनकर्मणि ।
 वैफल्यं येन नाप्नोति तन्मे ब्रूहि पितामह ॥
 प्रह्लाद उवाच ।

नात्र भूमिर्न च कुशास्त्रास्तत्र न कारणं ।
 चित्तस्यालम्बनोभूतो विष्णुरेवात्र कारणं ॥
 तिष्ठन् व्रजन् स्वपन् बुध्यन् तत्रा धावनितस्ततः
 उत्क्रान्तिकाले गोविन्दं संस्मरन् तन्मयो भवेत् ॥
 किं जपेः किं नु वा कृत्यैः किङ्कुमैर्देव्यसत्तम ।
 तत्रापि कुर्वन्ती यस्य हृदये न जनाई न ॥

तस्मात् पुत्र सदा कार्यं वासुदेवस्य चिन्तनं ।
 तन्मयत्वेन दैत्येन्द्र तस्योपायस्य विस्मरात् ॥
 इत्येतत् कथितं सर्वं यत् पृष्टोऽहं त्वयानघ ।
 उत्क्रान्तिकाले स्मरणं किञ्चूयः कथयामि ते ॥
 भविष्योत्तरात् ।

समासहस्त्राणि तु सम वै जले
 दशैकमग्नौ पतने च घोषश ।
 गवां गृहे घटिरशीतिराहवे
 अनाशने भारत चाक्षया गतिः ॥
 तथा च शतपथी श्रुतिः ।

तमेतं वेदानुवचनेन विविदिषन्ति ब्रह्मचर्येण तपसा अहया
 यज्ञेनानाशनेन ।

सौरपुराणात् ।

शिवक्षेत्रे निराहारो भूत्वा प्राणान् परित्यजेत् ।
 शिवसायुज्यमाप्नोति प्रभावात् परमेष्ठिनः ॥

लिङ्गपुराणात् ।

यावत्तावन्निराहारो भूत्वा प्राणान् परित्यजेत् ।
 शिवक्षेत्रे मुनिश्रेष्ठाः शिवसायुज्यमाप्नुयात् ॥

इति अनशनविधिः ।

—ooOoo—

अथ महायात्राप्रकरणं ।

क्रीडन्त्याकाशगङ्गायामष्टमे वातवर्त्मनि ।

गजेन्द्राः कुमुदायाय येन प्राप्ता जनाहूतं ॥
 तस्मात् प्रधानमत्रोक्तं वासुदेवस्य चिन्तनं ।
 निर्भलं ब्रह्मसम्भूतं करैस्तज्जाह्नवीजलं ॥
 गृहीत्वा प्रतिमुञ्चन्ति फुत्कारं दर्शयामुक्ताः ॥
 भ्रुष्टाः पृष्ठेषुपातैश्च सामीप्यात् सूर्यरश्मिभिः ॥
 बहुधुस्तम्भसामर्थ्यं दाहस्य गमनाय च ।
 महाप्रपातं नीलाभं पतमानन्तु तज्जलं ॥
 वायुना स्थाप्यमानन्तु स्थानत्वमुपगच्छति ।
 तत्पुण्यं हिमवत्क्षानो पतते च यदा हिमं ॥
 प्रथमं तत्र संपूज्यो हिमवांश्चिश्चिरस्तथा ।
 हिमन्तश्च तथा नागो नीलनीलाब्जसम्भवः ।
 स्थाननागाश्च संपूज्याः कालपात्रेर्नमैरुजैः ।
 स्वर्कपुष्पाणि देवानि धूपो नुग्गुलसम्भवः ॥
 मध्याह्न्यतिलसमिधं पिष्टभिश्च हिमं वधु ।
 यस्मिन् देये हिमं न स्यात् तत्र द्रव्याहिमं हिमं ॥
 महाप्रस्थानयात्रा च कर्त्तव्या तु हिमोष्णि ।
 आश्रित्य सर्व्वं धैर्य्यं च मदाः स्वर्गादा च सा ॥
 यावत् पुरन्दरं लोके न यातः कार्य्यगौरवात् ।
 तावत्तुषारमध्ये तु स्वन्तदुन्मत्तमुत्तरेण ॥
 यतस्तुषारदम्भस्तु मृत्तन प्राणान विचेतम ।
 प्रदक्षिणावर्त्तगङ्गां पश्येद्वीमद्वितामन ।
 साकर्षणं वपुर्विज्जोद्यन्द्वाग्निभवदाहकं ॥

इति ब्रह्माण्डपुराणोक्त महाप्रस्थानं ।

अथाग्निप्रवेशः

वायुपुराणे ।

यो वाहिताग्निप्रवरो वीराध्वानं गतोऽपि वा ।

समाधाय मनः पूर्वं मन्त्रमुच्चारयेच्छनेः ॥

त्वमग्ने रुद्रस्त्वंसुरोमहोदिवस्त्वं गर्हीमास्तं पृच्छदग्निधे ।

त्वं वातैररुणैर्यासि शङ्खयस्त्वं पूषा विधतः पासि आत्मना ॥

इत्येवं मनसा मन्त्रं सम्यगुच्चारयन् हिजः ।

अग्निं प्रविशते यस्तु रुद्रलोकं स गच्छति ॥

अग्निस्तु भगवान् कालः कालोरुद्र इति स्मृतः ।

तस्माद्यः प्रविशेदग्निं स रुद्रमतिवर्त्तते ॥

लिङ्गपुराणात् ।

आधायान्निं शिवक्षेत्रे संपूज्य परमेश्वरं ।

स्वदेहपिण्डं जुहुयात् स याति परमं पदं ॥

सौरपुराणात् ।

शिवस्य पुरतो वज्रिं संस्थाप्याभ्यर्च्य केशवं ।

जुहुयादात्मनो देहं स याति शिवसन्निधिं ॥

अथ स्त्रीणामग्निप्रवेशोविधीयते ।

तत्र बृहस्पतिः ।

आर्त्तास्ते मुदिते हृष्टा प्रोषिते मलिना क्षया ।

मृते म्रियेत या पत्यौ सा स्त्री ज्ञेया पतिव्रता ॥

अथ अङ्कुराः ।

साध्वीनामिह्नारीणामग्निप्रपतनादृते ।

नान्यो धर्मो हि विज्ञेयो मृते भर्त्तरि कर्हिचित् ।

तावन्न मुच्यते नारी स्त्रीशरीरात् कथञ्चन ॥

सदृत्तभावापितभर्तृकाणां

स्त्रीणां वियोगः चित्तिकातराणां ।

तासाम्यतावस्तमिते यतः स्वा-

दम्निप्रवेशादपरो हि मार्गः ॥

हारीतः ।

मृते भर्त्तरि वा नारी धर्मशीला दृढव्रता ।

अनुगच्छति भर्त्तारं मृणु तस्यास्तु यत्फलं ॥

तिस्रः कोट्योर्ब्रह्मकोटौ वा यावद्गोमाणि मानुषे ।

तावदब्दसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते ॥

माह्वकं पैतृकञ्चैव यत्र कन्या प्रदीयते ।

कुलत्रयं पुनान्येषा भर्त्तारं यानुगच्छति ॥

व्यासः ।

ब्रह्मघ्ने वा लतघ्ने वा मित्रघ्ने यच्च दुष्कृतं ।

भर्त्तु पुनाति सा नारी तमादाय मृता तु या ॥

आदायाल्लिङ्गेत्यर्थः । एवं कल्पसूचकाराः । भर्तृशरीरेण

सह संवेद्यमानाहुः पत्नी संवेद्ययन्तीति ।

आदित्यपुराणात् ॥

लुहोत्यग्नौ शरीरं वा मृतेन पतिना सह ।

सखोद्वेकान्नहन्वीरा या काचित्सा पतिव्रता ॥

पितृमैत्रमहायज्ञः स्त्रोणामेषः प्रकीर्तितः ।

देहः सजीवो यत्र स्वाहविः प्राणास्तु दक्षिणा ॥

अविश्वस्यगर्थन्तु देवरः सार्वकालिकं ।
 आराधयेद्वाटजायां सह भर्ता समन्वितां ॥
 चितामारोपयन् प्राज्ञः प्रसृतं चर्ममुत्तमं ।
 इमाः पतिव्रताः पुण्याः स्त्रियोजाताः पतिव्रताः ॥
 अवैधव्यमनुप्राप्ताः रत्नाभरणभूषिताः ।
 कुङ्कुमाज्याञ्जनाः स्रग्भिरर्चिताः कृतमण्डनाः ॥
 सुस्थिरं भर्तृसंयोगं प्राप्नुवन्तु स्वयं बलात् ।
 दुष्टप्रवादरहिता सुस्यास्त्वव्याधिदूषिताः ।
 सह भर्तृशरीरेण संविशन्तु विभावसुं ॥
 एवं श्रुत्वा ततो नारी अहोभक्तिसमन्विता ।
 पिष्टमेधेन यज्ञेन यहा स्वर्गमवाप्नुयात् ॥
 मृते भर्तारि सुस्त्रीणां न चान्या विद्यते गतिः ॥
 नान्यद्भवेद्वियोगाग्निदाहस्य शमनं भवेत् ।
 ऋग्वेदवचनात् साध्वी न भवेदात्मघातिनी ॥

तदेवेदं ऋग्वेदवचनं ।

इमा नारीरविधवाः सुपत्नी
 रज्जनेन सर्पिषा सविशन्तु ।
 अनस्रवी अनमौराः सुरक्षा
 आरोहन्तु जनयो गोनिमग्ने ॥

देशान्तरमृते तस्मिन् साध्वी तत्पादुकादयं ।
 निधायोरसि संशुद्धा प्रविशेज्जातदेदं ॥

व्यासः ।

दक्षितं यान्यदेशस्य कृतं श्रुत्वा पतिव्रता ।

समारोहति दीप्तेऽग्नौ तस्याः शक्तिं निबोधत ॥
हृत्तं मृतमित्यर्थः ।

यदि प्रविष्टो नरकं बहः पाशैः सुदारुणैः ।
संप्राप्या यातनास्तत्र गृहीतो यमकिङ्करैः ॥
तिष्ठते विवर्षी दीनो वेष्टमानः स्वकर्मभिः ।
व्यालयाही यथा व्यालं बलादुद्धरते बलात् ।
तद्वद्वर्त्तारमादाय दिव याति तपोबलात् ॥
तत्र सा भर्तृपरमा स्तूयमानाऽस्मरोगणैः ।
क्रीडते पतिना साहचर्यं यावदिन्द्रायतुर्दृश ॥

वाराहपुराणे ।

ततो दिव्याम्बरधरन्दिव्याभरणभूषितं ।
दिवि दिव्यविमानस्थं भर्तारं स्वन्ददर्श सा ॥

कूर्मपुराणात् ।

ब्रह्मघ्नं वा सुरापञ्च महापातकदूषितं ।
भर्तारमुद्धरेयारी प्रविष्टा मह पावकं ॥
एतदेव परं स्त्रीणां प्रायश्चित्तं विदुर्मुधाः ।
सर्वपापं समुद्धूतं नात्र कार्या विचारणा ॥

आदित्यपुराणात् ।

मृते भर्तारि या वज्रं समारोहति कर्हिवित् ।
सारथ्यतौ समाचारा स्वर्गलाके महोयते ॥
मातृकं पैतृकं वापि यत्र कन्या प्रदीयते ।
पुनरिति त्रिकुलं नारी भर्तारं यावदगच्छति ॥
क्रीडते पतिना यत्र यावदिन्द्रायतुर्दृश ।

स्वेच्छया तदवाप्नोति यत्र गत्वा न शोचति ॥

इत्यग्निप्रवेशविधिः ।

— ००० —

अथ कारीषाग्निसाधनं ।

कारीषं साधयेद्यस्तु पुष्करे तु वने नरः ।

सर्वं लोकान् परित्यज्य ब्रह्मलोकं स गच्छति ॥

ब्रह्मलोके वसेत्तावत् यावत् कल्पक्षयो भवेत् ।

नैव भ्रश्यति मर्त्येषु क्लिश्यमानः स्रक्र्मभिः ॥

गतिश्चास्याप्रतिहता तिर्य्यगूर्ध्वमधस्तथा ।

सप्तर्षिसर्वं लोकेषु स्ववशो विचरन् वशी ॥

उपचारविधिस्तथ सर्वंन्द्रियमनोहरः ।

नृत्यवादित्रगीतज्ञः सुभगः प्रियदर्शनः ॥

संसेव्यमानः कुसुमैः दिव्याभरणभूषितः ।

नीलोत्पलदलश्यामो नीलकुञ्चितमूर्धजः ।

अजेयतनुमध्याय सर्वसौभाग्यपूजिताः ।

सर्वं श्रय्यगुणोपेताः यौवनेनातिगर्बिताः ॥

स्त्रियः सेवन्ति तं नित्यं शयने रमयन्ति च ।

वीणावेणुनिनादैश्च सुतः स प्रतिबुध्यते ॥

महोत्सवसुखं भुङ्क्ते दुष्प्रापमकृतात्मभिः ।

प्रसादाद्देवदेवस्य ब्रह्मणः शुभकारिणः ॥

इति पद्मपुराणोक्तं कारीषाग्निसाधनं ।

— ००० —

अथ भृगुपतनविधिः ।

रेवाखण्डात् ।

युधिष्ठिर उवाच ।

भृगोः पतन्ति ये शूराः काङ्क्षन्ति वै प्रयान्ति ते ।

ओतुमिच्छाम्यहं ह्येतत् कथय त्वं महासुने ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

एकान्तरोपवासैश्च भृगुगोपहसंयतैः ।

प्राणांस्त्यजन्ति ये शूरा गतिं तेषां निबोधय ॥

पृथक् पृथक् निवासश्च तेषां कर्मानुसारतः ।

चतुर्विंशतिकोट्यस्तु सप्तदश तथापराः ॥

उमायां तु पुरा शप्ता मध्यमोत्तमकल्पकाः ।

अनेन विधिना यस्तु प्राणांस्त्यजति मानवः ॥

स तु भर्ता मया दत्तो युष्माकन्तु प्रसादतः ।

अमरेश्वरं प्रमोताश्च भर्तृतां वो व्रजन्ति वै ॥

भृगुं दृष्ट्वा न्ययेष्ट मुच्यते ब्रह्महत्याया ।

चतुरशीतिभृगवो जम्बूद्वीपे प्रकीर्तिताः ॥

तथान्ये सप्त निर्दिष्टाः स्वर्गसोपानमुत्तमाः ।

भैरवश्च भृगुश्रेष्ठो ज्ञेयश्चामरकण्ठके ॥

शूद्राश्च क्षत्रिया वैश्या अन्यजाबाधमास्तथा ।

एते त्वज्येयुः प्राचान्यै वर्जयित्वा द्विजं नृप ॥

पतित्वा ब्राह्मणस्तत्र ब्रह्महा शाकहा भवेत् ॥

(१२१)

द्वाविंशच्च सहस्राणि राहुसोमसमागमे ।
 वर्षाणां जायते राजन् राजा विद्याधरे पुरे ॥
 ग्रस्ते तु राहुणा सूर्ये द्विगुणं फलमश्नुते ।
 अवशः स्ववशी वापि जलपूरानलेर्हतः ।
 नृपते गोभृगुं प्राप्य स विद्याधरराड् भवेत् ॥
 भृगुं भैरवरूपेण विद्धि कैलाससम्भवं ।
 गर्हयन्ति भृगुं ये तु ते लिङ्गब्रह्मवादिनः ।
 भैरवः क्षमते तेषामिति स्कन्देन कीर्तितं ॥
 सन्नासाच्च च्युतो विप्रो मातृहा पित्रहा तथा ।
 श्वश्रुगो मातृगश्चैव सुषागः स्वसृगस्तथा ॥
 एतेषां पतनं शस्तं काषाम्निश्च प्रसाधनं ।
 मुच्यते तेन पापेन शिवलोकं स गच्छति ॥
 वत्सरं वत्सरार्धन्तु त्रिमासं मासमेव च ।
 सप्तत्रीणि दिनानीह वसेद्यो वै युधिष्ठिर ॥
 एकान्तरोपवासाद्वै स गच्छेद्विवमन्दिरं ।
 हरिश्चन्द्रे पुरीषन्द्रे श्रीशैले त्रिपुरान्तरे ॥
 धीतपापे महापुण्ये वाराहे विन्ध्यपर्वते ।
 कावेर्यास्तु तथा कुण्डे पतनात् स्वर्गमाप्नुयात् ॥
 भृगोस्तु दक्षिणे भागे लिङ्गं वै चापलेश्वरं ।
 क्षेत्रसंरक्षणायेह विख्यातं पापनाशनं ॥
 भृगुः षष्ठ्या भृगोस्तच्च विज्ञेयं चापलेश्वरं ।
 आरोहति गिरिं यस्तु तमदृष्ट्वा तु मानवः ।
 तस्य पुष्पकसं सख्यं स गृह्णाति न संशयः ॥

आलिख्य च पटे सूर्यं पताकादङ्गमण्डितं ।
 बलयश्च करे कृत्वा वीज्यमानस्तु चामरैः ।
 वीरैरुद्रपतितच्छत्रं आरोहेद्भृगुपर्वतं ।
 पदे पदे यज्ञफलं तस्य स्याच्छङ्करोऽब्रवीत् ॥
 पर्वकालं प्रतीचन्तेऽम्बरसः काममोहिताः ।
 दिव्ययानसमारूढा दिव्याभरणभूषिताः ॥
 वीरस्तु पतितस्तत्र स्वयं त्यक्त्वा कलेवरं ।
 तत्क्षणाद्विज्यलोकेषु शक्तुष्यो भवेन्नृप ॥
 कामदं यानमारुह्य विवादेन परस्परं ।
 गच्छेच्छिवपुरं सार्धं अप्सरोभिर्मुदा युतः ॥
 क्लीवस्य सत्त्वहीनस्य ह्यस्तीर्णस्य भृगोः पुनः ।
 पदे पदे ब्रह्महत्या भवेत्तस्य न संशयः ॥
 न चिरायुर्धृती मर्त्योः सत्योः कस्माद्विभेत्यसौ ।
 केऽपि धारयितुं शक्ताः कालमृत्युवशं नरं ॥
 स पापिष्ठो दुराचारश्चाण्डालो लोकगर्हितः ।
 सन्नगासादिकमारुह्य च्यवते यस्तु मानवः ॥
 सन्नगासप्रच्युतं, विप्रं दृष्ट्वा नरोऽर्कवीक्षणं ।
 कुर्यात्सर्वप्रयत्नेन स्वर्गं चान्द्रायणचरेत् ॥
 सत्यानृतं न वक्तव्यन्तेन सार्धं कदाचन ।
 प्रस्थातव्यं हि मौनेन न चेत्पापमवाप्नुयात् ॥
 निश्चिते मरणे प्राप्तिं कथं भृगुवेष्यते ।
 जरामृत्युश्च रोगश्च संसारोदधिसङ्घटे ।
 एवं कृत्वा नृपयेष्ट आरोहेत् भृगुमुत्तमं ॥

भविष्योत्तरात् ।

कृष्ण उवाच ।

अहन्ते कथयिष्यामि तं विधिं पाण्डु नन्दन ।
 यत् कृत्वा प्रथमं कर्म निपतेत्तदनन्तरं ॥
 कृत्वा कृच्छ्रत्रयं पूर्वं जपन् लक्षान् दशैव तु ।
 शाकयावकाहारस्य शुचिस्त्रिषवणो नरः ॥
 त्रिकालमर्चयेद्दीपं देवदेवं त्रिलोचनं ।
 दशांशेन तु राजेन्द्र होमस्तत्रैव कारयेत् ॥
 लक्षवारक्षपेदेवं गन्धमास्त्यैव पूजयेत् ।
 रात्रौ स्वप्ने तदा पश्येहिमानस्यन्ततः क्षिपेत् ।
 आत्मानं मन्यते तात अकृतार्थं कथञ्चन ॥
 अनैनैव विधानेन आत्मानं यस्तु निक्षिपेत् ।
 स्वर्गलोकमनुप्राप्य मोदते त्रिदशैः सह ॥
 त्रिंशद्वर्षसहस्राणि त्रिंशत्कोटास्तथैव च ।
 क्रीडित्वा विविधान् भोगान् तदा गच्छेन्नहीतलं ॥
 पृथिवीमेककक्षेण भुङ्क्ते स द्विजपूजितः ।
 व्याधिशोकविनिर्मुक्तो जीवेच्च शरदां शतं ॥

देवीपुराणात् ।

परमेश्वर उवाच ।

यद्दि वै भैरवं रूपं कृतं भूतक्षयं प्रति ।
 अनुपहाय भूतानां भूधरेन्द्रे भविष्यति ॥
 तस्मिन् ये भावमापन्ना मत्पुत्रा मयि भाविताः ।

पतन्ति ते च भर्तारो मम तुल्या भवन्ति वै ।
भुक्ता भोगांस्तथा तेन राज्ञा राजपुरीषितान् ।
क्रमादनुब्रुवं यान्ति तच्च मोक्षपदं ध्रुवं ॥

ब्रह्मीवाच ।

एवं तासां वची दत्तं देवदेवेन शूलिना ।
नारीणां भर्तृकामानां नित्यमानन्दकारकं ॥

सनत्कुमार उवाच ।

किं रूपं भैरवं ह्येतत् कथं कायं गती विभी ।
पातयाच्चाफलं देव कथयस्व प्रसादतः ॥

ब्रह्मीवाच ।

ये ते संभावसम्पन्नाः कृत्वा मनसि वै शिवं ।
भैरवं यान्ति ते रुद्रं ते यान्ति परमं पदं ॥
ये वा स्नेहाद्वयाज्ञोभात् कौतुकात् यान्ति भैरवं ।
तेऽपि वै तत्प्रसादेन भुवनानां महामते ।
शिवत्वं क्रमयोगेन रुद्रत्वं यान्ति ते द्विजाः ॥
अथवा भैरवं रूपं पावनं सुरपूजितं ।
कृत्वा स्वाख्यां महावाद्ये भैरवं सर्वकामदं ।
पञ्चविंशभुजं देवं रुद्रत्वं यान्ति ते द्विजाः ॥
अथवा भैरवं रूपं पटगं सुरपूजितं ।
कृत्वा स्वाख्यां महावाद्ये भैरवं सर्वकामदं ॥
पञ्चविंशभुजं देवं पीताङ्गं सुरपूजितं ।
सङ्गुणैः कथं कार्यं शूलोद्यतधरं परं ॥

गजचर्मधरश्चैव चक्रोद्यतभुजं तथा ।
 खटाङ्गश्च कपालश्च वज्रं डमरुकं तथा ॥
 एवंविधेन रूपेण भीमदंष्ट्रं धराननं ।
 अश्वकं भिन्दमानन्तु शङ्करन्तु तिलोचनं ॥
 कुर्वन्तु भैरवं देवं ससुरासुरपूजितं ।
 नानाशिवशिवैर्युक्तं ननाभरणभूषितं ॥
 नवयौवनशोभाटं सर्वशोभाप्रकाशकं ।
 क्षुरिकानागराजेन वासुकिशोपवीतकं ॥
 कुलिकस्तु जटाबन्धे शङ्खपालेन कङ्कणं ।
 तक्षकः पद्मनागश्च कार्थी केयूरमण्डने ॥
 पद्मकर्कोटकी नागौ नूपुरौ पादगौ शुभौ ।
 एवं देवं प्रकुर्वीत भैरवं सर्वकामदं ॥
 तस्य हास्यौ प्रकर्त्तव्यौ पीताङ्गौ सर्वलक्षणी ।
 शूलहस्तौ शुभौ देवौ गजवाजिरवौ परौ ॥
 हारपौ तत्र गङ्गाद्या हारे कार्यास्तु भैरवे ।
 उद्देजितास्तु, पीडाद्यैः प्रकुर्युरिह पातकं ॥
 एवञ्चात्र प्रसङ्गेन कथितं तव सुव्रत ।
 कपालशूलहस्तौ तु उत्पलाङ्गुरधारिणौ ।
 हास्यौ देवस्य कर्त्तव्यौ सर्वाभरणभूषितौ ॥
 भैरवश्चोर्ध्वदंशनं ब्रह्मविष्णादिभिर्युतं ।
 शूलभिन्नान्धकं रूपं धार्यमानं तु कल्पयेत् ॥
 एवं पटगतङ्गत्वा पूजयित्वा परं विभुं ।
 सानुगं सह मन्त्रेण रक्तमाण्याम्बरादिभिः ॥

आत्मानं भूषयित्वा तु सुद्रालङ्घ्यतपाणिना ।
 प्राप्य तद्दृष्ट्वा रम्यं भोगमोक्षप्रदायकं ॥
 पूजाङ्गत्वा तु देवेशे गयाभ्युक्तमदापहे ।
 आरोहेदमरं स्थानं भुक्तिमुक्तिफलप्रदं ॥
 आकारं चिन्तयित्वा तु रूपं स्वच्छन्ददायकं ।
 तस्य वक्त्रानले होममात्माहुत्या तु कारयेत् ॥
 देववक्त्रं हुताशस्तु स्वयङ्मततिलादिकं ।
 होतव्यं तेन भावेन परां सिद्धिमभीप्सकेः ॥
 पातङ्गकेन वीरो वै यथावर्त्तं निबोधत ।
 पतङ्ग इव चात्मानं दीपाग्नौ निक्षिपेत्तु यः ।
 पातङ्गो नाम पातोऽयं हंससंज्ञमतः शृणु ॥
 संयम्य पक्षसङ्घातं कृत्वा वेगवतीं तनुं ।
 तं पातं हंसनामानं साधकेच्छापलप्रदं ॥
 मृगोऽपि यूथे गर्त्तादिलङ्घनैस्तु यथा व्रजेत् ।
 समपादमतिर्यस्तु मृगपातः स उच्यते ॥
 मीशलं मुगलीभूत्वा पतेद्यद्दुदूखले ।
 विमानं ध्वजमालादिशाखादोलादिकं लभेत् ॥
 वृषभस्यैव कृत्वा तु धूननं सुचिरं द्विज ।
 वृषपातं विजानीहि रुद्रलोकफलप्रदं ॥
 सिंही गजेन्द्रनिधने यथा विक्रमते तनुं ।
 एवं तत्कृतभावस्तु पातः सिंहकर्मो मतः ॥
 कृत्वा तु भैरवं रूपं सायुधं विगतज्वरः ।
 शिवानने क्षिपेत्कार्यं तं पातश्चेवप्रदं ॥

पातङ्गाद्या यथा पाताः स्वात्मभावगता द्विजाः ।
 तथा ते फलदाः सर्वे क्रमन्ते भैरवं पदं ॥
 भुवनानि विचित्राणि असंख्येयानि संख्यया ।
 अन्नपानानि यानीह क्रमशः सीन्नि तानि तु ॥
 दीक्षादिना विरहिता येऽपि भङ्गवशङ्कताः ।
 तेऽपि भुक्ता वरान् भोगान् प्रयान्ति परमं पदं ॥
 पापीपि हि पुमांस्तत्र वर्णाश्रमविवर्जितः ।
 प्रभावाच्चैव देवस्य भुङ्क्ते चैव वरं सुखं ॥
 नन्दकेदारदेवस्य तथा रुद्रमहालयं ।
 भैरवेण तु तुल्याणि भोगान्ते मोक्षदानि तु ॥
 चत्वारि देवशादूर्ल सर्वानिष्टहराणि तु ।
 प्रसङ्गेनापि नुद्यन्ते तत्र ये कुपितैर्नराः ।
 तेऽपि यानं समारुह्य त्वायान्ति च शिवं पदं ॥
 स्वर्गताः क्रमयोगेन भुङ्क्तास्तु बहुधा परान् ।
 विचित्ररूपसपत्नाः सर्वकामसुखप्रदाः ॥
 कन्या हिरण्यवर्षाश्च पीनोन्नतपयोधराः ।
 भुञ्जन्ति सुविचित्रास्ताः पातं युञ्जन्ति मानवाः ॥
 नार्थी वा पतनं कुर्युस्तदा भुञ्जन्ति भैरवान् ।
 प्रभुत्वं दिव्यभोगाद्याः अप्सरोगणसंयुताः ॥
 गान्धर्वश्च यथा यच्च किन्नरं वारुणं तथा ।
 तथा विद्याधरं सीरं रौद्रं च क्रमशः स्थितं ॥
 स्वकामभोगसम्यक् पतनाद्भूवनं लभेत् ।
 स्वकामतोपि तद्भुक्ता चान्ते याति परं पदं ॥

वैष्णवास्थिमयीं मालां कम्बुकं शाश्वतं सदा ।
 धारयेद्देवदेवेशं लोकानुग्रहकारणात् ॥
 ये चित्रधातुकाष्ठोत्थं रत्नशैलमयञ्च वै ।
 पूजयन्ति कृतपुण्यास्तेऽपि यान्ति शिवं पदं ॥
 एवं गृहेऽथ शैले वा नदीविन्ध्याटवीषु च ।
 भैरवं पूजयेद्यस्तु स लभेदीप्सितं फलं ॥
 पत्रं पुष्पं मठं कूपमारामाणि च भैरवे ।
 कृत्वा च तानि चत्वारि देशानि सुखमिदये ॥
 यद् दत्त्वा सर्वदेवानां फलं प्राप्नोति मानवः ।
 विप्रे वा वेदविदुषे तत् फलं भैरवान्नभेत् ॥

इति मृगपतनविधिः ।

—००००००००००—

अथ संध्यामविधिः ।

वज्रपुराणात् ।

धर्मध्वज उवाच ।

शूराणां मे समाख्याता स्वर्गतियुधिसंस्तरात् ।
 कृते त्वया मुनिश्रेष्ठ तस्मात् त्वं वक्तुमर्हसि ॥
 मे चैव उवाच ।

अग्निष्टोमादिभिर्व्यष्टैरिष्टा विपुलदक्षिणेः ।
 न तत् फलमवाप्नोति संध्यामे वदवाप्नुयात् ।

(१२२)

इति यज्ञविदः प्राहुर्यज्ञकर्मविशारदाः ।
 तस्मात्तत्ते प्रवक्ष्यामि यत् फलं शस्त्रजीविनां ॥
 धर्मलाभोऽर्थलाभश्च यशोलाभस्तथैव च ।
 यः शूरो विद्यते पुंसां विमृश्य परवाहिनीं ॥
 तस्य धर्मार्थकामश्च यज्ञाद्यैवासदक्षिणाः ।
 परं ह्यभिमुखं हत्वा तद्यानं योऽधिरोहति ॥
 विष्णुकान्तं स यतते एवं युध्यन् रणाजिरे ।
 अश्वमेधानवाप्नोति चतुरस्तेन कर्मणा ॥
 यस्तु गस्त्रमनुत्सृज्य वीर्यवान् वाहिनीमुखे ।
 सम्मुखो वर्त्तते शूरः स स्वर्गान्न निवर्त्तते ॥
 राजा वा राजपुत्रो वा सेनापतिरथापि वा ।
 हतः क्षत्रेण येनाशु तस्य लोकोऽक्षयो ध्रुवं ॥
 यावन्ति तस्य शस्त्राणि भिन्दन्ति त्वचमाहवे ।
 तावतो लभते लोकान् सर्वकामदुहोऽक्षयान् ॥
 वीरासनं वीरशय्या धीरस्थानस्थितिस्थिरा ।
 गवार्थं ब्राह्मणस्यार्थं गोस्वाभ्यर्थं तु ये हताः ।
 ते गच्छन्त्यमलं स्थानं यथा सुकृतिनस्तथा ॥
 अभग्नं यः परं हन्याद्भग्नश्च परिरक्षति ।
 पृष्ठस्थितः पालयति सोऽपि गच्छति तद्भक्तिं ॥
 अनुत्तीर्णस्तथा सद्यः प्राणान् सम्यजते युधि ।
 हताश्वः पतते युष्मे सः स्वर्गान्न निवर्त्तते ॥
 दंष्ट्रिभिः शृङ्गिभिर्वापि हता स्त्रैश्चैव तत्करैः ।
 स्वाम्यर्थं ये मृता राजन् तेषां स्वर्गो न संशयः ॥

भयेन लज्जया वापि स्नेहेन च रणाजिरे ।
 सम्मुखो न्निघते राजन् तदा स्वर्गो न संशयः ॥
 यस्य चिह्नीकृतं गात्रं शरशक्त्यष्टितोमरैः ।
 देवकन्यास्तु तं वीरं रमयन्त्यनुयान्ति च ॥
 परास्परः सहस्राणि शूरमायोधने हतं ।
 त्वरितन्तं विधावन्ति मम भर्ता ममेति च ॥
 यत्र तत्र हतः शूरः शत्रुभिः परिवेष्टितः ।
 अन्तर्गताभते लोकान् यदि स्त्रीषां न भाषते ॥
 जिते च लभते लक्ष्मीर्मृते नापि सुराङ्गणां ।
 क्षणविध्वंसिकायाय का चिन्ता मरणे रणे ॥
 हतस्याभिमुखस्यस्य पतितस्यानिवर्त्तिनः ।
 ह्रियते यत्परैर्द्रव्यं स्वमेव सफलं हि तत् ॥

विष्णुधर्मात् ।

शक्यन्त्वहं सधर्मस्तु यदुक्तं शतैर्वरैः ।
 आत्मदेहस्तु विप्रार्थं त्यक्तुं युधि सुदुष्करं ॥

यां यज्ञसङ्घैस्तपसा च विप्राः ।
 स्वर्गैर्विणः सचचयैश्च यान्ति ।
 क्षणेन तामेव गतिं प्रयान्ति
 महाहवे स्वातनुमुत्त्यजन्ति ॥
 सर्व्वं च वेदाः सह षड्भिरङ्गैः
 साङ्गश्च योगं तपसा च पुंसां ।
 एतान् गुणानेकपदैः तियेत
 संशमध्वन्मात्मतनुं त्यजेद् यः ॥

इमां गिरं चित्रपदां शुभाक्षरां
 सुभाषितां वृषभिदां दिवौकसां ।
 रणोन्मुखे यः स्मरते दृढव्रतः
 न हन्यते हस्ति च सङ्गरे रिपून् ॥
 एषः पुण्यतमः स्वर्गः सुयज्ञः सर्व्वतोमुखः ।
 सर्व्वेषामेव वर्णानां क्षत्रियस्य विशेषतः ॥
 भूयश्चैव प्रवक्ष्यामि भीष्मवाक्यमनुत्तमं ।
 यादृशो यः प्रहर्त्ता तं तादृशं परिवर्जयेत् ॥
 आततायिनमायान्तमपि वेदान्तकद्रुणे ।
 जिघांसन्तं जिघांसीयान्न तेन ब्रह्महा भवेत् ॥
 हताश्वश्च न हन्तव्यः पानीयं यश्च भाषते ।
 व्यसनार्त्ता भवेद्यश्च भुञ्जानश्च महामते ॥
 पलायनपरश्चैव प्राणेषु कृपणं त्यजेत् ।
 विमुक्तकेशो धावंश्च यश्चोन्मत्ताकृतिर्भवेत् ॥
 पर्णशाखादणयाहो तक्षणीति च यो वदेत् ।
 ब्राह्मणोऽस्मीति यथाहं वाली वृद्धो नपुंसकः ।
 तस्मादेतान् परिहरेद् यथोद्दिष्टान् रणाजिरे ॥
 काशिकापुराणात् ।

ऋषयस्तु पुरा ख्यातं नराणां नास्ति निष्कृतिः ।
 आतुरभूतमुद्दिग्धं कायस्थं शरणागतं ॥
 स्त्रियमप्यथ बालं वा गावं पङ्कं तपस्विनं ।
 विलपन्तं तद्योन्मत्तं विस्रस्तं ब्राह्मणं तथा ॥
 पतन्तं प्रपलायन्तं एकाकिनं निरस्त्रकं ।

नम्नं दीनं तथा वृद्धं हताशाभ्यासमादन ॥
 मुक्तकेशं तथा मत्तं सुप्तं भूरिवनौकसं ।
 स्रदयिष्यन्ति ये मूढा नूनन्ते नरकार्णवात् ॥
 अनुत्थाना विविध्यन्ते पतितः कुञ्जरो यथा ॥
 विष्णुधर्मोत्तरात् ।

राम उवाच ।

सांग्रामिकं महत्तत्त्वं श्रोतुमिच्छामि भूभुजां ।
 सर्व्वं वेत्ति महाभाग त्वं देव परमेष्ठिवत् ॥
 पुष्कर उवाच ।

द्वितीयेऽहनि संग्रामो भविष्यति गदा तदा ।
 गजांश्च स्रपयेद्राजा सर्व्वोपधिजलैः शुभैः ॥
 गन्धमाल्यैरलङ्कय्यात् पूजयेच्च यथाविधि ।
 नृसिंहं पूजयेद्विष्णुं राजलिङ्गान्यश्वपतः ॥
 कृत्वा ध्वजं पताकाञ्च धर्मं चैव महाभुज ।
 आयुधानि च सर्व्वानि तथा पूज्यानि भूभुजा ॥
 तेषां संपूजनं कृत्वा रात्रौ प्रथमपूजनं ।
 कृत्वा तु प्रार्थयेत् स्वप्नं विजयायेतराय वा ॥
 प्रथमञ्च महापार्थ धरण्याञ्च महोपतिः ।
 भिषक्पुरोहितामात्यमन्त्रिमध्ये तदा स्वपेत् ॥
 संयतो ब्रह्मचारी च नृसिंहं संस्मरन् हरिं ।
 रात्रौ दृष्टे शुभे स्वप्ने समरारम्भमाचरेत् ॥
 रात्रिशेषे समुत्थाय स्नातः सर्व्वोपधिजलैः ।
 पूजयित्वा नृसिंहं वाहनाद्यमशेषतः ॥

पुरोधसा हुतं पश्यन् ज्वालितं जातवेदसं ।
 पुरोधाः पूर्ववत्तत्र मन्त्रांस्तु जुह्याच्छुचिः ॥
 दक्षिणाभिस्ततो विप्रान् पूजयेत् पृथिवीपतिः ।
 ततोऽनुलिम्पेद्वात्राणि गन्धद्वारेति पार्थिव ॥
 चन्दनागुरुकर्पूरं कान्तकालीयकैः शुभैः ।
 मूर्ध्नि कण्ठे समालभ्य रोचनाञ्च तथा शुभां ॥
 आयुष्यं वर्चस्यञ्चेति मन्त्रेणानेन मन्त्रितं ।
 अलङ्करणमावध्याच्छ्रियन्त्योतुरितिस्रजं ॥
 ध्यात्वौषधय इत्येवं धारयेदौषधीः शुभाः ।
 नवीनवेति वस्त्रञ्च कार्पासं विभ्रयाच्छुभं ॥
 ऐन्द्राग्नेति ततो धर्मं ध्वन्वमागेति त्रैबुधः ।
 ततो राजा समादद्यात् सरस्वत्वभिमन्त्रितं ॥
 कुञ्जरं वा रथं वाश्वन्दुहेदित्यभिमन्त्रितं ।
 आरुह्य सिद्धिमद्राजा निष्क्रम्य तु समप्रभे ॥
 देशे च दृश्यः शत्रूणां कुर्यात् प्रकृतिकल्पनां ।
 संहतान् योधयेदल्पान् कामं विस्तारयेद्वहन् ॥
 सूचीमुखमनीकं स्यादल्पाणां बहुभिः सह ।
 व्यूहाः प्राणङ्गरूपाश्च द्रव्यरूपाश्च कीर्त्तिताः ॥
 गरुडाकारव्यूहश्च चक्रस्येनस्तथैव च ।
 अर्धचन्द्रश्च वज्रश्च शकटव्यूहएव च ॥
 व्यूहञ्च सर्व्वतोभद्रः सूचीव्यूहस्तथैव च ।
 पद्मश्च मण्डलव्यूहः प्राधान्येन प्रकीर्त्तिताः ॥
 व्यूहानामथ सर्व्वेषां पञ्चधा सैन्यकल्पना ।

द्वौ पक्षौ बन्धपक्षौ तु द्वारस्य पञ्चमे भवेत् ॥
 एकेन यदि वा द्वाभ्यां तत्समं युद्धमाचरेत् ।
 भागतयं स्थापयेत् तेषां रक्षार्थमेव च ॥
 न व्यूहे कल्पना कार्या राज्ञो भवति कर्हिचित् ।
 पत्रच्छेदे फलच्छेदे वृक्षच्छेदावकल्पने ॥
 पुनः परोहमायाति मूलच्छेदे विनश्यति ।
 स्वयं राज्ञा न योद्धव्यमपि सर्वास्त्रशालिना ॥
 नित्यं लोके हि दृश्यन्ते शक्तिभ्यः शक्तिमत्तराः ।
 सैन्यस्य पञ्चाक्षिष्टे तु क्रोशमात्रे सहोपतिः ॥
 भग्नमन्यारणं तत्र योधानां परिकीर्तितं ।
 प्रधानत्वेन सैन्यस्य नावस्थानं विधीयते ॥
 न भग्नान् पीडयेच्छत्रून् नैकाग्रनगता हि ते ।
 मरणे निश्चिताः सर्वे हन्तुः शत्रुचमृमिति ॥
 भटभङ्गच्छलेनापि नयन्ति सभवं परान् ।
 तेषां स्वभूमिसंस्थानां बधः स्यात्सुकरस्तदा ॥
 न संहतात्र विरलान् योधान् व्यूहे प्रकल्पयेत् ।
 आयुधानान्तु संमर्द्दी यथा न स्यात् पम्परं ॥
 तथा च कल्पना कार्या योधानां भृगुनन्दन ।
 भेदकामः परानीकं संहतैरेव भेदयेत् ॥
 देवरक्षापरेणापि कर्त्तव्या संहता तथा ।
 स्वेच्छया कल्पयेत् व्यूहं ज्ञात्वा चारप्रकल्पनं ॥
 व्यूहान्तदा वङ्गन् कुर्यात् त्रिगुव्यूहस्य पाथिबः ।
 गजस्य देया रक्षार्थं चत्वारः सुरथा द्विज ॥

रथस्याश्वास चत्वारस्तावन्तस्तस्य चर्मिणः ।
 चर्मिभिश्च समास्तत्र धन्विनः परिकीर्त्तिताः ॥
 पुरस्ताच्चर्मिणो देया देयास्तदनु धन्विनः ।
 धन्विनामनु चाश्वीयं रथांस्तदनु योजयेत् ॥
 रथानां कुञ्जराष्णानु दातव्याः पृथिवीक्षिताः ।
 पदातिकुञ्जरास्थानां वर्म कार्यं प्रयत्नतः ॥
 आवर्जयित्वा यो बाह्यमात्मानं वर्मयेन्नरः ।
 शूरा मरणकं यान्ति सुकृतेनापि कर्मणा ॥
 शूराः प्रमुखतो देया न देया भीरवः क्वचित् ।
 शूरा वा मुखतो दत्ता तनुमात्रप्रदर्शनं ॥
 कर्त्तव्यं भीरुसङ्घे न शत्रुविद्रावकारकं ।
 दानयन्ते(१) पुरस्तात्तु विद्वता भीरवः पुरः ॥
 य उक्ताहयन्ते रणे भीरुं शूराः पुरा स्थिताः ।
 प्रांशवः सुकनासाश्च योजिब्रह्मेक्षणा नराः ॥
 संहतभू युगासैव क्रोधनाः कलहप्रियाः ।
 नित्यदृष्ट्या न हृष्टाश्च शूरा ज्ञेयाश्च कामिनः ॥
 पञ्चालाः शूरसेनाश्च रथेषु कुशला नराः ।
 दक्षिणात्याश्च विज्ञेयाः कुशलाः खड्गचर्मिणः ॥
 कङ्कला धन्विनो ज्ञेया पर्वतीयास्तथैव च ।
 पाषाणयुद्धकुशलाः तथा पर्वतवासिनः ॥
 काम्बोजा ये च गाम्बाराः कुशलास्ते हयेषु च ।
 प्रायश्च तथा क्लृप्ता विज्ञेयाः प्रासयोजिनः ॥

१ पाठोज्यमादर्शदोषश्च न समोक्षीनो भवितुमर्हति ।

अङ्गा वङ्गाः कलिङ्गाश्च ज्ञेया मातङ्गयोधिनः ।
 आहतानाञ्च पतने रणादानयनक्रिया ॥
 प्रतियुद्धमजानाञ्च तोयदानादिकञ्च यत् ।
 आयुधानयनञ्चैव पत्तिकर्म विधीयते ॥
 रिपूणां भेत्तुकामानां स्रसैन्यस्य तु रणञ्च ।
 भेदनं संहतानाञ्च चर्मिणाश्चर्मकीर्तनं ॥
 विमुखीकरणं युद्धे धन्विनाञ्च तथोच्यते ।
 दूरापसरणं यत्तदस्त्रिनश्च तथोच्यते ॥
 प्रासनं रिपुसैन्यानां रथकम्ब तथोच्यते ।
 भेदनं संहतानाञ्च भिन्नानामपि संहतिः ॥
 प्रासादात् गोमुखादालट्टमभङ्गाश्च भार्गव ।
 गजानां कर्म निर्दिष्टं यदसह्य तथा परैः ॥
 पक्षी च विषमा ज्ञेया रथास्त्रस्य तथा समा ।
 शक्यद्रुमा च नागानां युद्धभूमिरुदाहृता ॥
 एवं विरचितव्यूहः कृतपृष्ठदिवाकरः ।
 तथातुलोमशुक्राग्निर्दिक्पालरुधमारुतः ॥
 योधानश्च जयेत्सर्वान्मनासावदानतः ।
 भोगप्राप्ताश्च विजयाः स्वर्गप्राप्ताश्च मृतस्य च ।
 धन्यानि तु निमित्तानि वदन्ति विजयं हि ज ॥
 अद्वयं शुभगात्राणि शुभस्वप्ननिर्दर्शनं ।
 निमित्तञ्च गजाणाञ्च सर्वतो दृश्यते शुभं ॥
 शङ्खं मङ्गलाद्यैव दृश्यन्ते हि मनोनुगैः ।
 विपरीतमरिः सर्वमत्र पश्यति नान्यथा ॥

भवन्तीपि कुक्षे जाताः सर्वभाषास्त्रपारणाः ।
 ननु धर्मपरा नित्यं नित्यं सन्नार्णमाश्रिताः ॥
 अनाहार्याः परैर्नित्यं कथं न स्याज्जयो मम ।
 राज्यश्रीर्भवतामिव भवद्भिः केवलं मम ॥
 हे चामरेऽधिके शूराः क्वचं चन्द्राभमेव च ।
 जित्वारिभागसम्प्राप्तिर्द्युतस्य च परा गतिः ।
 निष्कृतिः स्वामिपिच्छस्य नास्ति युद्धपरा गतिः ॥
 शूराणां यद्विनिर्ग्याति रक्तं सास्त्राधतः क्वचित् ।
 तेनैव सह पाप्मानं सर्वं त्यजति धार्मिकः ॥
 तथा चिकित्सां कुर्व्याद्वा वेदनां हरते तु यः ।
 ततो नास्त्यधिका लोके बाधा परमदारुणा ॥
 मृतस्य नाग्निसत्कारो नाशौचं नोदकक्रिया ।
 कर्तुमिच्छति यस्येह संग्रामादधिकस्तु किं ॥
 तपस्विनो दानपरा यज्वानो बहुदक्षिणाः ।
 शूरानां गतिमिच्छन्ति दृष्ट्वा भोगाननुत्तमान् ॥
 वराप्सरः सहस्राणि शूरमायोधने हतं ।
 अभिद्रवन्ति कामार्त्ता मम भर्ता भविष्यति ॥
 स्वामी सुकृतमादत्तेऽभयानां विनिवर्त्तनात् ।
 कसं तेषां तथा प्रोक्तमाश्रमेधं पदे पदे ॥
 जित्वारिभोगसंप्राप्तिर्द्युतस्य च परा गतिः ॥
 सपर्यां तस्य कुर्वन्ति देवाः शक्रपुरोगमाः ।
 अश्वमेधफलं प्रोक्तं भयानां विनिवर्त्तनात् ॥
 पदे पदे महाभाग सन्मुखानां महात्मनां ।

देवस्त्रियस्तवालक्ष्मीरपाप्मानमयस्तथा ।
 प्रतीक्षन्ते महाभाग संयामे समुपस्थिते ॥
 परामयो मया प्राज्ञो जीवत्यवाप वा मृते ।
 इत्येवमामयस्तस्य पाप्मना सह तिष्ठति ॥
 लक्ष्मीः सन्तिष्ठते तस्य जीवतः कृतकर्मणः ।
 मृतस्य चोपतिष्ठन्ति विमानस्थाः सुरस्त्रियः ॥
 एवमुद्धर्षणं कृत्वा धर्म्मणेक्षेज्जयं रणे ।
 अधर्म्मविजये राज्ञो यमलोको भयावहः ॥
 अधर्म्मविजयादर्धं यच्छिद्रमभिधीयते ।
 छिद्रादेवापरं छिद्रस्तस्य स्यान्नात्र संशयः ॥
 न कर्णो न तथादिग्धः शरस्यार्धमयोधिना ।
 नास्तु शल्कः शरः कार्यो दत्तशल्कस्य भार्गव ।
 समः समेन यो बध्यो नानोपचारनेर्हिज ॥
 सत्रहेन च सत्रहः साग्वशाश्वागतेन च ।
 रथी च रथिना नाम पदातिश्च पदातिना ॥
 कुञ्जरस्थो गजस्थेन यो बध्यो भृगुनन्दन ।
 विमुखो भग्नशस्त्री च स्त्रीबालपरिरक्षिता ॥
 व्यायुधो भम्बगात्रश्च तथैव शरणागतः ।
 परेण युद्धमानश्च युद्धप्रेक्षक एव च ।
 आर्त्ततीयप्रदाता च दण्डपाणिस्तथैव च ।
 एते रणे न हन्तव्याश्च अधर्म्ममभीषता ।
 पापिष्ठे कूटयुद्धे तु कर्त्तव्यो मुखवाहनः ॥
 आग्नेन प्रातिभूतेन अर्द्धोत्तीर्णबलेन च ।

दुर्दिने न च युद्धानि कर्त्तव्यानि महाबल ॥
 प्रवृत्ते समरे राम परेषां नाम कारणात् ।
 बाह्व प्रगृह्य विक्रीयेद्गन्ताभ्यमान् परेखितान् ॥
 प्राप्तश्चित्रबलो भूरिनायकोऽत्र निपातितः ।
 सेनानीर्निहतः सोऽयं सेनानीषापि वैकृतः ॥
 एवं चित्रासनं कुर्यात्परेषां भृगुनन्दन ।
 विद्रुतानाम्नु योधानां सुविघातो विधीयते ।
 धनुर्वेदविधानेन कल्पना च तथा भवेत् ॥
 वपाश्च देया धर्मज्ञास्तथा च परमोहनी ।
 एतयाभ्युच्छ्रयः कार्यः स्वस्थले च तथा शुभः ॥
 सन्भारश्चैव कर्त्तव्यो वादित्राणां जयावहः ।
 एतत्कर्त्तव्यं प्रवक्ष्यामि भवोपनिषदि द्विज ॥
 संप्राप्य विजयं युद्धे कार्यश्चैव तु पूजनं ।
 पूजयेत् ब्राह्मणांश्चात्र गुरुनपि तु पूजयेत् ॥
 रत्नानि राजगामोनि वर्न्म बाह्वनमेव च ।
 सर्व्वमन्यद्भवेत्तस्य यद्येनैव रणे हृतं ॥
 कुलस्त्रियस्तु विज्ञेयास्तथा राम न कस्यचित् ।
 स्वदेशे परदेशे वा साध्वी यत्र च दूषयेत् ॥
 अन्यथा संगरो घोरो भवतीह जयावहः ।
 यत्र प्राप्तं रणे सुतः पुत्रस्तस्य प्रकीर्त्तितः ॥
 पुनस्तेन न योद्धव्यन्तस्य धर्मविदां मतं ।
 देशे देशे य आचारः पारम्पर्य्यक्रमगतः ॥
 स एव परिपात्यः स्यात् प्राप्य देशं समीक्षितः ।

नृणां प्रदर्शयेद्राजा समरेऽपि हृते रिपौ ॥
 न मे प्रियं क्षतन्तेन येनायं समरे हृतः ।
 किन्तु पूजां करोत्यस्य मङ्गलमविजानतः ॥
 हृतोऽयं महितार्थाय प्रियमद्यापि नो मम ।
 अपुत्राणां स्त्रियश्चैव नृपतिः परिपालयेत् ॥
 ततस्तु स्वपुरं प्राप्य मुहूर्त्तं प्रविशेत्तृष्टं ।
 यात्राविधानविहितं भूयो देवतपूजनं ॥
 द्विजानां पूजनञ्चैव तथा कुर्याद्विशेषतः ।
 संविभागं परावाप्तेः कुर्याद्विजयनस्य तु ॥

विजित्य धर्मेण नृपस्तु पृथ्वीं
 यज्ञीययूपादिसुरालयाङ्गां ।
 कृत्वा तथान्यान् विजयांश्च शक्त्या
 लोकं जयत्यप्यमराधिपस्य ॥

आह पराशरः ।

ललाटे रुधिरस्नातः पतितो भुवि सङ्गरे ।
 सोमपानस्तदेवास्य सर्वदेवगणो भवेत् ॥
 ललाट देशे रुधिरं स्त्रवन्
 यच्छस्त्रघातात्तु मुखे प्रविष्टं ।
 तत्सोमपानेन तु तस्य तुल्यं
 संग्रामयज्ञे विधिरेव दृष्टः ॥

याज्ञवल्क्यः ।

आनीय विप्र सर्वस्वं हतं घातित एव वा ।

तन्निमित्तं कृतः शस्त्रैः कुर्वन्नपि विशुध्यति ॥
 संग्रामे वाहनो यस्तु मृतः शुद्धिमवाप्नुयात् ।
 मृतकल्पप्रहारैर्वा जीवन्नपि विशुध्यति ॥
 यत्र यत्र हतः शूरः शत्रुभिः परिवेष्टितः ।
 अक्षयान् लभते लोकान् यदि क्लीवं न भाषते ॥

मनुः ।

हाविमौ पुरुषौ लोके सूर्यमण्डलभेदिनौ ।
 परित्राङ्गयोगयुक्तश्च रणे वाभिमुखो हतः ॥

भविष्यपुराणात् ।

यो ब्राह्मणार्थमुद्युक्तः प्राणैर्यदि विमुच्यते ।
 प्राप्नोति परमं स्थानं यत्र देवो दिवाकरः ॥

ब्रह्मवैवर्त्तात् ।

गीब्राह्मणस्वामिधने महार्णवे
 त्यक्त्वा शरीराख्यभयास्तु ये नराः ।
 न योगिनस्तत्परमात्मचित्रकाः
 फलं लभन्ते श्रमतां जनादिभिः ॥

यदाह शालिहोत्रः ।

या संख्या रोमकूपाणां वाहकस्य हयस्य च ।
 तावत्समा वसेत् स्वर्गे हयपृष्ठहतो नरः ॥
 यं लोकं वाजिपृष्ठेषु हता गच्छन्ति मानवाः ।
 तं लोकमधिगच्छन्ति वड्ढवासु हताश्च ये ॥

पालकाप्यः ।

गजस्तम्बहता यान्ति स्वर्गं स्वर्गेऽपि मत्ततः ।

तुम्हानोगचसं (१) वीचिर्व्यारिधिरिव मन्दिरः ॥

शरतोमरचक्रैश्च नागस्कन्धहता नराः ।

अवात्स्वर्गं प्रयात्येव यावदाहृतसंग्रवं ॥

इति संग्रामविधिः ।

—०००@०००—

अथ वृषोत्सर्गः ।

कार्त्तिकवामस्ययुज्यां वा । तत्रादौ वृषभं परीक्षेत । जीव-
वक्षायाः पुत्रं सर्वलक्षणोपेतं नीललोहितं वा पुच्छपादेषु
सर्वशुक्लं यूथस्याच्छादकं ।

ततो गवां मध्ये सुममिदमग्निं परिस्तीर्य पीण्यश्चक्रे अप-
यित्वा पूषा गा अन्वेतु न इहरादिति च हुत्वा वृषभमयस्कार-
माह्वयेत् । एकस्मिन् पार्श्वे चक्रेष्वपपरस्मिन् शूलेनाक्षितश्च
हिरण्यवर्णेति चतसृभिः शन्नोदेवीति च ज्ञापयेत् । ज्ञातालङ्कृतं
ज्ञातालङ्कृताभिद्यतसृभिर्वत्सतरीभिः सार्द्धमानीय रुद्रान् पुरुष-
सूक्तं कृष्णाण्डोच्च जपेत् ।

पिता वक्षेति मन्त्रे वृषभस्य दक्षिणे कथे ।

वृषो हि भगवान् धर्मयतुष्याद् प्रकीर्तितः ।

वृषोमि तमहं भक्त्या स मां रक्षतु सर्वतः ॥

एनं युवानं पतिं वो ददानि तेन क्रीडन्तीसरसं प्रियेष ।

मानः प्राप्तप्रनुवेति ।

१ शन्नोऽयं वादर्वदोषेण वकीचोको नपितुं नार्हति ।

माहात्म्यं हि प्रजयामातनूभिर्मरिधामद्विषते सोमराजन् ।
 वृषं वत्सतरीयुक्तं ऐशान्यां कारयेत् दिशि ।
 ह्योतुर्वस्त्युगं दद्यात्सुवर्णं कांस्यमेव च ॥
 अयस्कारस्य दातव्यं वितनं मनसेषितं ।
 भोजनं बहुसार्पिथ्यं ब्राह्मणांश्चात्र भोजयेत् ॥
 उत्सृष्टो वृषभो यस्मिन् पिवत्यथ जलाशये ।
 शृङ्गेणोल्लिखते भूमिं यत्र कचन दर्पितः ।
 पितृणामन्नपानादि प्रभूतमुपतिष्ठते ॥

ब्रह्मपुराणे ।

अन्यच्चैत्र्यां वृषोत्सर्गं कार्त्तिक्यां वा प्रयत्नतः ।
 कर्त्तव्यः श्लक्ष्णशयेतस्त्रिभिर्वर्णं द्विजातिभिः ॥
 वृषभः कृष्णसारस्तु प्रत्यग्रस्तु त्रिहायनः ।
 मनोज्ञो दर्शनीयश्च सर्वलक्षणसंयुतः ॥
 अष्टाभिर्धेनुभिर्युक्तश्चतुर्भिरथवा क्रमात् ।
 त्रिहायनीभिर्धन्याभिः सुरूपाभिश्च शोभितः ॥
 सर्वोपकरणोपेतः सर्वसस्यचरो महान् ।
 उत्सृष्टो विधिनानेन अपि स्मृतिविधानतः ॥
 प्रागुदक्प्रवणे देशे मनोज्ञे निर्ज्जने वने ।
 न च वाह्यो न तत्क्षीरं पातव्यं केनचित् क्वचित् ।
 स्वधा पितृभ्यो मातृभ्यो बन्धुभ्यश्चापि वृत्तये ॥
 मातृपक्षाच्च ये केचित् ये चान्ये पितृपक्षाः ।
 गुह्यश्च शूरबन्धूनां ये कुलेषु समुद्रवाः ।
 ये प्रेतभावमापन्ना ये चान्ये आहवर्जिताः ।

वृषोत्सर्गेन ते सर्वे लभन्ते वृषिसुत्तमां ॥
 दद्यादनेन मन्त्रेण तिलाक्षतयुतं जलं ।
 पितृभ्यश्च समासेन ब्राह्मणेभ्यश्च दक्षिणां ॥
 ततः प्रमुदितास्तेन वृषभेण समन्विताः ।
 वनेषु गावः क्रीडन्ति वृषोत्सर्गप्रसिद्धये ॥
 अप्रवृत्ते वृषोत्सर्गे दाता वक्रोक्तिभिः पदैः ।
 ब्राह्मणानाह यत्किञ्चिन्मयोत्सृष्टन्तु निजने ॥
 तत्कश्चिदन्यो न नयेद्दिभाज्यन्तु यथाक्रमं ।
 वृषोत्सर्गादृते नान्यत् पुण्यमस्ति महोत्तले ॥

मत्स्यपुराणे ।

मनुस्वाच ।

भगवन् श्रोतुमिच्छामि वृषभस्य तु लक्षणं ।
 वृषोत्सर्गविधिश्चैव तथा पुण्यफलं महत् ॥
 धेनुमादौ परीक्षेत सुशीलां लक्षणान्वितां ।
 अव्यङ्ग्यामपरिक्षित्नां जीववत्सामरीगिणो ॥
 स्निग्धवर्णां स्निग्धक्षुरां स्निग्धशृङ्गान्तथैव च ।
 भनोद्गरातिसौम्याश्च सुप्रमाणामनुदृतां ॥
 आवर्त्तैर्दक्षिणावर्त्तयुक्ता दक्षिणतश्च या ।
 वामावर्त्तैर्वामतश्च विस्तीर्णजघनस्तना ॥
 मृदुसंहतताम्बीष्ठी रक्तजिह्वा सुपूजिता ।
 आस्यावदीर्घा स्फुटितरक्तजिह्वा तथा च या ॥
 ताम्नाभवलिनेषा च शफेरविरलेदेहे ।

वैदूर्यमधुवर्णैश्च जलवुद्बुदसन्निभैः ॥
 रक्तस्निग्धैश्च नयनैस्तथा रक्तकनीलकैः ।
 समचसुहृद्गदन्ता भवेदश्यामतालुका ॥
 बहुव्रता सुपार्श्वीरुपृथुपद्मसमायुता ।
 अष्टायतशिरोघ्नीवायुता सा, शुभलक्षणा ।
 बहुव्रता भवेत् केषु केषु पद्मसु चायता ।
 चायताश्च तथैवाष्टौ धेनूनाङ्गे शुभावहाः ॥
 मत्स्य उवाच ।

उरः पृष्ठं शिरः कुक्षिः श्रोणी च वसुधाधिप ।
 बहुव्रतानि धेनूनां कथयन्ति विचक्षणाः ॥
 कर्णौ नेत्रे ललाटञ्च पञ्चैव रविनन्दन ।
 समायतानि शस्यन्ते पुच्छं शस्तञ्च चामरं ॥
 चत्वारश्च स्तना राजन् एवमष्टौ मनीषिभिः ।
 शिरोघ्नीवायुताश्चैव भूमिपालायता भृशं ॥
 तस्याः सुतं परीक्षितं हृषभं लक्षणान्वितं ।
 उन्नतस्कन्धककुदं ऋजुलाङ्गूलकम्बलं ॥
 महाकटिं तटस्कन्धं वैदूर्यमणिलोचनं ।
 प्रबालवर्णमृत्पात्रं सुदीर्घमणिबालधिं ॥
 नवाष्टदशसंख्यैर्वा तीक्ष्णायैर्दशनैः शुभैः ।
 मल्लिकाक्षश्च मोक्षव्यो गृहेऽपि धनधान्यदः ॥
 वर्णतस्ताम्रकपिलो ब्राह्मणस्य प्रशस्यते ।
 श्वेतो रक्तश्च गौरश्च कृष्णः पाटल एव च ॥
 हृन्मनीषाभट्टश्च श्वेतः पद्मकालकः ।

पृष्ठकर्णी महास्कन्धचक्षूरोमा च यो भवेत् ॥
 रक्ताक्षः कपिलो यस्य रक्तशृङ्गश्च यो भवेत् ।
 श्वेतोदरः कण्ठपृष्ठो ब्राह्मणस्य च शस्यते ॥
 श्वित्थरक्तेन वर्णमक्षत्रियस्य प्रशस्यते ।
 काश्वनाभिन वैशस्य कण्ठो नाप्यन्धजम्बनः ॥
 यस्य प्रागायते शृङ्गे स्वमुखाभिमुखे सदा ।
 सर्वेषामेव वर्णानां स च सर्वार्थसाधकः ॥
 मार्जारपादकपिलो धन्यः कपिलपिङ्गलः ।
 श्वेतो मार्जारपादस्तु धन्यो मणिनिभेक्षकः ॥
 करटः पिङ्गलश्चैव श्वेतपादस्तथैव च ।
 स्वच्छपादधिरा यस्तु द्विपादः श्वेत एव च ॥
 कपिञ्चलनिभो धन्यस्तथा तिमिरसन्निभः ।
 आकर्णमूलाच्छत्रं तु मुखं यस्य प्रकाशते ।
 नान्दीमुखः स विज्ञेयो रक्तवर्णो विप्रपतः ॥
 श्वेतश्च जठरं यस्य भवेत् पृष्ठञ्च गोपते ।
 उदरः स समुद्राक्षः सततं कुलवर्धनः ॥
 मल्लिकापुष्पचित्रश्च धन्यो भवति पुङ्गवः ।
 कमलैर्मण्डलैश्चापि चित्रो भवति गोपदः ॥
 अतसीपुष्पवर्णश्च तथा धन्यतरः स्मृतः ।
 एते धन्यास्तथा धन्यान् कीर्त्तयिष्यामि ते नृप ॥
 कण्ठताल्वोष्ठदशना रुक्ताशृङ्गशफाश्च ये ।
 अव्यक्तवर्णा क्रुत्वाश्च व्याघ्रभस्मनिभाश्च ये ॥
 ध्वाङ्गशृङ्गसवर्णाश्च तथा मूषकसन्निभाः ।

कुण्डाः काणास्तथा खण्डा केकः रास्यास्तथैव च ।
 विषमश्चेतपादाय उद्गातनयनास्तथा ॥
 न ते वृषाः प्रमोक्तव्या न ते धार्यास्तथा गृहे ।
 मोक्तव्यानाञ्च धार्याणां भूयो वक्ष्यामि लक्षणं ॥
 स्वस्तिकाकारशृङ्गाश्च मेघोच्चसदृशस्रजाः ।
 महाप्राणाश्चैव तथा मत्तमातङ्गगामिनः ॥
 महोरक्ता महोष्णासा महाबलपरीक्षमाः ।
 गिरः कर्णौ ललाटश्च बालधियरणास्तथा ॥
 नेत्रे पार्श्वे च कर्णानि शस्यन्ते चन्द्रसन्निभाः ।
 श्वेतान्येतानि शस्यन्ते कृष्णास्तु विशेषतः ॥
 भूमौ कर्षति लाङ्गूलं सुस्थूलश्चैव बालधि ।
 पुरस्तादुद्यतो नालो वृषभस्तु प्रशस्यते ॥
 शक्तिध्वजपताकाभा येषां राज्ञी विराजते ।
 अनङ्गाहस्तु ते धन्या वित्तसिद्धिजयावहाः ॥
 प्रदक्षिणा निवर्त्तन्ते स्वयं ये विनिवर्त्तिताः ।
 समुन्नतशिरोघ्रीवा धन्यास्ते यूथवर्षिणाः ॥
 रक्तशृङ्गोन्नयनाः श्वेतवर्णो भवेद्यदि ।
 शफैः प्रबालसदृशैर्नास्ति धन्यतमस्ततः ॥
 एते धार्याः प्रयत्नेन मोक्तव्या यदि वा वृषाः ।
 धारिताश्च तथा सुक्ता धनधान्यविवर्षिणाः ॥
 चरणाय मुखं पुच्छं यस्य श्वेतानि गोपते ।
 लाञ्छारससवर्णश्च तं नीलमिति निर्दिशेत् ॥
 वृष एव स मोक्तव्यो न स धार्यो गृहे भवेत् ।

तदर्थं भेषाविरला लोके गाथा पुराणकौ ।
 एष्टव्या बहवः पुत्रा यद्यप्येको गयां व्रजेत् ॥
 एवं हृषं लक्षणसम्प्रयुक्तं
 गृहीद्वं कीर्तमथापि राजन् ।
 मुक्ता न शोचेन्नरणं महात्मा
 नी वा विधिं वै महते विधास्येत् ॥
 आदित्यपुराणात् ।

भानुरूपाय ।

भुञ्जन्ति वृषभं ये तु नीलश्वेव सुशोभनं ।
 लाङ्गूलार्कसर्वाङ्गं शृङ्गयुक्तं मनोहरं ॥
 कार्तिक्यां ददते यस्तु दत्त्वा पूजां न संशयः ।
 त्रिवर्षास्त्वथ गुर्वित्यो दद्याद्भावो वृषस्य च ॥
 सावित्रीश्च जपेत्तत्र तथा चैवाघमर्षण ।
 कर्णजाप्यं प्रदद्यात् तु वृषभस्य न संशयः ॥
 घण्टां लोहकृतां दद्यात् शृङ्गैश्च पटलेः शुभैः ।
 रुद्रस्यापि भोजयेच्च ब्राह्मणान् वै यथाविधि ॥
 यावन्ति रोमकूपाणि वृषभस्य भवन्ति वै ।
 गवाश्चैव तथा क्षीम यावच्छ्रयति वै मुने ।
 तावन्तोऽसिगुह्याणि रुद्रलोके महीयते ॥ .
 यत्किञ्चित् कुरुते पापं पुरुषो हस्तिकर्षितः ।
 ते सर्वे विलयं यान्ति गोपते परिमोचनात् ॥
 वृषभस्यैव शब्देन पितरः सपितामहाः ।
 आशुक्तेन दृश्यन्ते स्वर्गलोके न संशयः ॥

जले प्रक्षिप्य लाङ्गूलन्तोयश्चोदरते वृषः ।
 दशवर्षसहस्राणि पितरस्तेन तर्पिताः ॥
 कूले समुच्छ्रिता यावच्छङ्गे लिखति मृत्तिकां ।
 भक्ष्यभोज्यमयैः शैलैः पितरस्तेन तर्पिताः ॥
 गवां मध्ये यदा चेव वृषभः क्रीडते तु यः ।
 अप्सरसां सहस्रेण क्रीडन्ते पितरः सदा ॥
 लाङ्गूलमुत्सृजन् यावत्तोये संक्रीडते तु मः ।
 अप्सरीगणसङ्घैश्च सेव्यन्ते पितरस्तदा ॥
 सहस्रदत्तमात्रेण तडागेन यथाविधि ।
 तस्मिन्नुया पितॄणां वै सा वृषेण समीच्यते ॥

देवीपुराणात् ।

मनुरूवाच ।

अश्वमेधसमं पुण्यं वृषोत्सर्गाद्वाप्यते ।
 रेवत्यां वाश्विने मामि कृत्तिकां कार्तिकस्य वा ॥
 गोविवाहोऽथ वा कार्थ्या माघ्या वै फाल्गुनेऽपि वा ।
 शिवोमामङ्गलं चेव तृतीयायां महाफलं ॥
 अश्वत्थोदुम्बरीयोगं विवाहविधिना भवेत् ।
 सतीरणं भवेत्तीर्थं उत्सङ्गे गोकुलेऽपि वा ॥
 चतस्रो वत्सिका भद्रा द्वौ वा सश्वतोऽपि वा ।
 वत्सं सर्वाङ्गमपूर्णं कन्या सा वत्सिका भवेत् ॥
 अलङ्कृत्वा यथाशीघ्रं उत्सर्गं कारयेन्मने ।
 विवाहमेकवात्सर्यं नीलेन च लभते सदा ॥

वृषेण अश्वमेधस्य यागस्य लभते फलं ।
 जायेरन् बहवः पुत्रा यद्येकोऽपि गयां व्रजेत् ॥
 यजेत चाश्वमेधेन नीलं वा हपमुत्सृजेत् ॥
 रोहिती यस्तु वर्णेन शङ्खवर्णस्वरो वृषः ।
 सलाङ्गूलं शिरः श्वेतं स वै नीलवृषः स्मृतः ।
 अङ्गं वोत्सृज्य वै पूर्वं गां वालङ्ग्य सन्वतः ॥
 तदामि वामतश्चक्रं याम्ये शूलं समानिखेत् ॥
 धातुना हेमतारेण आशमेनाश्ववाङ्मयेत् ।
 एवं कृत्वा अवाप्नोति फलं वाजिमखादितं ॥
 यमुद्दिश्योत्सृजेदङ्गं स लभेताविचारणात् ।
 यथा शिवोमयोरर्चा पूजिता सर्व्वकामदा ॥
 एवं देवत्रयं यद्वा अनन्तं लभते फलं ।
 मङ्गलं विहितं यच्च कृत्वा गोदानजं फलं ।
 क्रतोः सहस्रं कृत्वा यत् वृषोत्सर्गादशप्रयात् ॥
 वाराहपुराणात् ।

सुक्ता तु नीलकण्ठस्तु कोमुदाः समपार्श्वमे ।
 आङ्गं कृत्वा तु सुश्रोणि तर्पयित्वा तिजातयः ॥
 दत्त्वा तिलोदकं पिण्डं पित्रप्रेताभ्ये च ।
 नरा ये चात्र तिष्ठन्ति पतिताः पितृवाग्भवाः ॥
 तेषाम्नाता भविष्यन्ति नीलं क्लृष्टो यथाविधि ।
 गृहीत्वोडुम्बरं पात्रं कृत्वा कृष्णतिलोदकं ॥
 विप्राणां वचनं कृत्वा यथागच्छा च दक्षिणां ।
 नीलकण्ठस्य लाङ्गुले त्रायमभ्युत्सृजेद्यदि ॥

षष्टिवर्षसहस्राणि पितरस्तेन तर्पिताः ॥
 मुक्तमात्रेण शृङ्गेण नीलकण्ठेन भेदितं ।
 उद्धृतं यदि सुश्रेणि पङ्कं शृङ्गगतं भवेत् ॥
 बान्धवाः पितरस्तस्य नरके ये वसन्ति च ।
 उद्धृता नरकात् सर्वे सोमलोकां व्रजन्ति ते ।
 नीलकण्ठस्य मुक्तस्य बहुपुण्येन सुन्दरि ॥
 षष्टिवर्षसहस्राणि षष्टिवर्षगतानि च ।
 सोमलोके तु भुञ्जन्ति सर्वेऽमृतरसं सदा ॥

कालिकापुराणात् ।

अनिलाद् उवाच ।

नीलोत्पलसमप्रख्यः श्वेताङ्गश्चन्द्रमस्तकः ।
 सुभूर्युवा लोहिताक्षो वृषभी नील उच्यते ॥
 अथवा लोहितं पिङ्गं सुखेतं वा विमोचयेत् ।
 चतुष्पात् सकलो धर्मा वृषोऽयं हरवाहनः ॥
 तमुद्दिश्य समो कूप्यो विधिना येन मे शृणु ।
 सोपवासः शुचिः स्नात्वा गवाक्षैव हरालयं ॥
 वितानद्वीपमुच्छाद्य विन्यसेच्छिवमूर्धनि ।
 गव्येन शुभगन्धेन स्नानं संकारयेच्छिवे ॥
 पलैस्तु पञ्चत्रिंशद्भिः सर्पिषा यत्नतो बधः ।
 समुद्धृत्य कषायैस्तु क्षाल्य कोशेन वारिणा ॥
 भूयोऽप्यभ्यङ्गा यत्नेन पञ्चगव्येन शङ्करं ।
 ततः स्नाप्य शिवं भक्त्या कर्पूरागुरुचन्दनैः ॥

पूजयेत् कुसुमैः श्रेष्ठैः समालिप्य च चन्दनैः ।
 भीवर्णपङ्कजं कार्यं पञ्चविंशद्वलाकुलं ॥
 सरत्नञ्च न्यसेद्भूर्द्धिं केसरारुणं सकर्णिकं ।
 वस्त्रयुग्मं तथा श्वेतं सूक्ष्मं दद्यात्सुशोभनं ॥
 दत्त्वाधि बोधयेद्दीपं ततः षड्विंशसंख्यया ।
 शीघ्रतास्त्रादिपात्रस्थं नीराजनन्तु कारयेत् ॥
 ततो भूतबलिं दद्यात्सर्वदिक्षु प्रयत्नतः ।
 पूजान्ते पूजयेद्विप्रानष्टौ दद्याच्च दक्षिणां ॥
 ततो वेदीं चितानञ्च चतुर्हस्तं प्रकल्पयेत् ।
 तत्रैवाग्निं समाधाय चक्रत्रयं न्यसेद्बुधः ॥
 स्थालीपाकञ्च रुद्राय यावत्कं चरुपायसं ।
 तथा चाहुतये दत्त्वा एभीरीद्रवन्निस्ततः ॥
 हरेः सर्व्वसु काष्टासु मन्त्रेण विधिपूर्व्वकं ।
 सार्द्धं वत्सतरोभिश्च ब्रह्मघोषेण वै ततः ॥
 अभिषिञ्च्य हृषं तन्तु विधिदृष्टेन कर्मणा ।
 रक्तपीतमितैः कल्पैः पुष्पैश्चापि विभूषयेत् ॥
 संयुक्ते वस्त्रयुग्माभ्यां हेमवैदूर्य्यसम्भवे ।
 घण्टिके कण्टिकाभ्याञ्च वासयित्वा विभूषयेत् ॥
 विकिरेच्च ततो लाजान् जातवदः प्रदक्षिणं ।
 परोताञ्चलिना पुच्छं सङ्घेमेन तु धारयेत् ॥
 हराय परमेशाय पुष्पोदकयुक्तेन च ।
 हस्तादुत्क्षिप्य भीक्षुष्यो मया दत्तमुदीरयेत् ॥
 जङ्गामूर्धस्त्रिचावूर्द्धं मीचयित्वा प्रदक्षिणं ।

(१२५)

अङ्गयेत्, चिगूलेन कुङ्कुमेन विपयितः ॥
 दद्यादर्चयते कुम्भं प्रणम्येगश्च सोदकं ।
 कर्षाईहेमविन्यस्तं सम्पूर्णं तिलसंयुतं ॥
 तं चास्य वस्त्रयुग्मेन सहाचार्याय दापयेत् ।
 शिवव्रतधरान् विप्रान् संयतांश्च विशेषतः ॥
 हिरण्यवस्त्रदानेन व्रतस्थान् भोज्य दक्षयेत् ।
 दीनान्मदुःखितानाञ्च भोजनञ्चानिवारितं ॥
 अरण्ये चत्वरे यापि गोष्ठे वा गोचयेत् हृषं ।
 न गृहे मोचयेद्दिहान् पुष्कलं कामनाफलं ॥

विष्णुधर्मोत्तरात् ।

मार्कण्डेय उवाच ।

अश्वयुक् शुक्लपक्षस्य पञ्चदश्यां नराधिप ।
 कार्तिके प्यथवा मासि हृषोत्सर्गन्तु कारयेत् ॥
 ग्रहणे हि महापुण्ये तथा चैवायनद्वये ।
 विषुवद्वितये चैव सृताह्ने वाम्बवस्य च ॥
 सृताह्ने यस्य यस्मिन् वा तस्मिन्नहनि कारयेत् ।
 मातरं स्थापयित्वायं पूजयेत् कुसुमाक्षतैः ॥
 मातृश्रावं ततः कुर्यात् वंशाभ्युदयकारकं ।
 अकालमूलं कलसं अश्वत्थदलमेवितं ॥
 तत्र रुद्रान् समावाह्य जपयेद्बृहदेवताः ।
 सुसमिद्धं गवां मध्ये सुविस्तीर्य हुताग्रनं ।
 पयसाऽपयेद्दिहान् चरुं पोष्यं समाहितः ॥

तथैव पौरुषं सूक्तं कूष्माण्डानि तथैव च ।
ततोऽङ्गयीत वृषभमवस्कारः सुशिल्पवान् ॥
शूलेन दक्षिणे पार्श्वे वामे चक्रेण निर्दिशेत् ।
अङ्कितं स्रपयेत्पश्चात् खाने तस्य यथा पठेत् ॥
हिरण्यवर्णेति ऋचयतस्त्रो मनुजेश्वर ।
आपोहिष्टेति तिस्रश्च शन्नोदेवीति चाप्युत ॥
वसतर्थायतस्त्रस्तु तं वृषश्च नराधिप ।
अलङ्कृत्यास्ततः पद्याहन्मन्त्रैश्च शक्तितः ॥
किङ्किणीभिश्च रम्याभिस्तथा चीनोश्चकैः शुभैः ।
ततोऽङ्किते जपेन्मन्त्रमिमं प्रयतमानसः ॥
वृषो हि भगवान् धर्मयतुष्पादः प्रकीर्तितः ।
वृषोमि तमहं भक्त्या स मां रचतु सर्व्वतः ॥

एतं युवानं वृषभं ददामि
गवां पतिं यूथपतिं महार्घं ।
अनेन सार्व्वधरत प्रकामं
कामं तथा प्राप्नुत वक्षतर्थाः ॥
एतं युवानं पतिं वी ददामि
तेन क्रीडन्धरत प्रियेण ।
सहस्रहि प्रजया मातनूभि
स्तन्मारिषाम दिधते सोमराजं(१) ।
मन्त्रं पितावक्ष इति प्रतीतं
जपेत् कर्णे वृषभस्य सख्ये ।

प्रचालयेत्तं वृषभं ततस्तु
 पूर्व्यां दिशं वक्षतरीस्तु सर्वाः ॥
 वासोयुगं ह्योतुरथ प्रदेयं
 सुवर्णयुक्तं सष्टतश्च कांस्यं ।
 शिल्पिप्रधानस्तु तथैव मूल्यं
 देयं तथा पुष्टिमुपैति राजन् ॥
 विप्रास्तथान्नं दधिसर्पिषा युतं
 सञ्भोजनीयाः पयसा च मिश्रं ।
 उत्सृष्टमात्रे वृषभे व्रजन्ति
 तस्मिं परान्तस्य पितामहा ये ॥
 यस्मिंस्तडागे स जलं तद्वार्त्तः
 पातुं समागच्छति तत् पित्रणां ।
 दिव्यान्तु पूर्णा सकला मञ्जीपते
 लोके परे तस्मिन्मसौ विधत्ते ॥
 सरिहरां काञ्चिदथोपयाति
 तृणान्वितस्तस्य पितामहानां ॥
 तस्मिं विधत्ते सरिताम्बरिष्ठा
 सुदीर्घं कालं विविधास्त्रुवाहा ॥
 दर्पणं पूर्णं स विद्यावधत्तै-
 र्धरां यदा दारयते नरेन्द्र ।
 पित्रादयस्तस्य तदन्नं कूटां
 ध्रुवं लभन्तीति न संशयोऽन्य ॥
 रोम्बाश्च तुल्यानि शतानि राजन्

मीक्षा तथा तस्य दिवं प्रयाति ।

संवत्सराणां परिपूर्णकामः

संसेव्यमानस्त्रिदशाङ्गनाभिः ।

इति वृषोत्सर्गविधिः ।

—000—

शतानीक उवाच ।

भगवन् केन विधिना श्रोतव्यं भारतं नरे ।

चरितं रामभद्रस्य पुराणानि विशेषतः ॥

कथञ्च वैष्णवा धर्माः शिवधर्मा अग्रेषतः ।

सौराणां वापि विप्रेन्द्र श्रवणे उच्यतां विधि

सुमन्तुरुवाच ।

हन्त ते कथयिष्यामि पुराणश्रवणे विधिं ।

इतिहासपुराणानि श्रुत्वा भक्त्या विगम्यते

मुच्यते सर्वपापेभ्यो ब्रह्माहत्यादिभिर्विभो ॥

सायं प्रातस्तथा रात्रौ शुचिर्भूत्वा शृणोति यः

तस्य विष्णुस्तथा ब्रह्मा तुष्यते गङ्गास्तथा ॥

प्रत्यूषे भगवान् ब्रह्मा दिनान्ते तुष्यते हरिः ।

महादेवस्तथा रात्रौ शृण्वतां तृप्तिमाप्नुयात् ।

पुराणानि दशाष्टौ च तदेकं शृण्वतां विभो ।

भारतं राजगादूर्ल शृणु तेषाञ्च यत् फलं ।

विधानं वाचकस्येदं शृणु तावद्विगम्यते ॥

एववासा गृहादेश्च स्यान् यत् समयान्वितं ।

प्रदक्षिणं ततः कृत्वा वा तस्मिन् देवतैव हि ॥
 तां विधानेन सर्व्वेषां अशेषगुरुवद्गृप ।
 नमस्कृत्य यथा आद्यं शिवमस्त्विति चान्ततः ।
 नान्यतो नृपशार्दूल सर्व्वैर्वर्णैर्महीपते ॥
 शूद्राणां पुरतो वैश्या वैश्यानां क्षत्रियास्तथा ।
 क्षत्रियाणां तथा विप्राः शृण्वन्तेऽतेऽद्यतः सदा
 मध्यस्थितोऽथ सर्व्वेषां वाचको वाचयेन्नृप ।
 ये च सङ्गरजा राजन् दूरात्तच्छूद्रपृष्ठतः ॥
 ब्राह्मणं वाचकं विद्यावान्यवर्णजमादरात् ।
 श्रुत्वान्यवर्णजाद्राजन् वाचकाक्षरकं ब्रजेत् ॥
 इत्थं हि शृण्वतां तेषां वर्णानामनुपूर्व्वशः ।
 मासि मासि भवेद्वाजन् पारणं कुरुनन्दन ॥
 त्रयोदशमासो राजन् पूजयेद्वाचकं नृप ।
 मासि पूर्णे नृपश्चेष्ट दातव्यः स्वर्णमाषकः ॥
 ब्राह्मणेन महाबाहो ह्यो देयौ क्षत्रियेण तु ।
 वाचकस्य नृपश्चेष्ट वैश्येनापि च यस्तथा ॥
 शूद्रे णाप्यथ क्षत्रियो दातव्याः स्वर्णमाषकाः ।
 मासि मासि नृपश्चेष्ट श्रद्धया वाचकस्य तु ॥
 प्रथमे पारणे राजन् वाचकं पूज्य शक्तितः ।
 अग्निष्टोमस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोति मानवः ॥
 कार्तिकादि महाबाहो कार्तिकं यावदेव तु ।
 अग्निष्टोमं गोसवश्च ज्योतिष्टोमं तथैव च ॥
 मैत्रावरुणं वाजपेयं वैष्णवश्च तथा विभु' ।

माहेश्वरं तथा ब्राह्मं पुण्डरीकञ्च भूपते ॥
 आदित्ययज्ञस्य यथा राजसूयाश्रमेधयोः ।
 फलं प्राप्नोति राजेन्द्र मासैर्द्वादशभिः कृमात् ॥
 इत्थं यज्ञफलं प्राप्य याति लोकानघोत्तमान् ॥
 समाप्ते पर्वणि तथा स्वयत्तया तर्पयन् नृप ।
 वाचकं ब्राह्मणञ्चैव सर्वकामैः प्रपूजयेत् ॥
 गन्धमास्थानि दिव्यानि वस्त्राण्याभरणानि च ।
 वाचकाय प्रदद्यात्तु तर्पणं विप्रान् प्रपूजयेत् ॥
 हिरण्यं रजतं वस्त्रं गावः कांस्योपदोहनैः ।
 दत्त्वा तु वाचकायेह श्रुतस्य प्राप्नुते फलं ॥
 वाचकः पूजितो येन प्रसन्नास्तस्य देवताः ।
 तस्माद्जनं सदा पूर्वं देयन्तस्य विदुर्मुधाः ॥
 आदे तस्य द्विजो भुङ्क्ते वाचकः अहयाश्रितः ।
 भवन्ति पितरस्तस्य तस्मा वर्षगतं नृप ॥
 ब्राह्मणादिषु वर्षेषु यन्त्यार्थं वाचयेन्नृप ।
 य एवं वाचयेद्राजन् स विप्रो व्यास उच्यते ॥
 अतोऽन्यथा वाचयानी ज्ञेयाऽसौ पितृनामतः ।
 इत्थंभूतो वसेद्यस्मिन् वाचको व्याससंमितः ॥
 देशेषु पत्तने राजन् स देगः प्रथमः स्मृतः ।
 प्रणम्य वाचके भक्त्या यत् फलं प्राप्यते नरैः ॥
 न तत्कृतुसहस्रेण प्राप्यते कुरुनन्दन ॥
 यथैकतो ग्रहाः सर्वे एकतस्तु दिवाकरः ।
 तथैकतो द्विजाः सर्वे एकतस्तु स वाचकः ॥

देवे कर्मणि पित्रो च पावनं परमं नृप ।
 वाचकश्च यतिश्चैव तथा चैव षडङ्गवित् ॥
 एते सर्वे नृपश्रेष्ठ विज्ञेयाः पङ्क्तिपावनाः ।
 त्रिविधं वाचकं विद्यात्सदारगुणभेदतः ॥
 व्यावक्य महावाही त्रिविधो गुणभेदतः ।
 हावेतो कथ्यमानो त्वं निबोध गदतो मम ॥
 अतिद्रुतं तथाऽस्पष्टं खरसर्ष्वविवर्जितं ।
 पदच्छेदविहीनञ्च तत्तद्भावविवर्जितं ॥
 अव्युध्यमानो ग्रन्थार्थं लोलसोत्साहवर्जितः ।
 ईदृशं वाचयेद्यस्तु स विप्रश्च नरेण्वर ॥
 क्रोधनोऽप्रियवादी च अज्ञातो ग्रन्थदूषकः ।
 न च तृणति कष्टानि स ज्ञेयो वाचकोऽधमः ॥
 विस्पष्टमद्भुतं शान्तं स्पष्टाक्षरपदं तथा ।
 तारस्वरसमायुक्तं रसभावविवर्जितं ॥
 अव्युध्यमानो ग्रन्थार्थं वाचयेद्यस्तु वाचकः ।
 स ज्ञेयो राजसो राजन् इदानीं सात्विकं शृणु ॥
 ग्रन्थार्थं व्युध्यमानस्तु समग्रं कृत्स्नशो नृप ।
 ब्राह्मणादिषु वर्णेषु अर्चयेद्बिधिवन्नृप ॥
 य एवं वाचयेद्राजन् स ज्ञेयः सात्विको बभूवै ।
 अडाभक्तिविहीनोऽसौ लोभी च दूषकस्तथा ॥
 हेतुवादपरो राजन् तथासूयासमन्वितः ।
 नित्यां नैमित्तिको काम्यामददहन्निषां नृप ॥
 वाचकाय महावाही शृणुयाद्यस्तु मानवः ।

स ज्ञेयस्तामसी राजन् तामसी मानवः मदा ।
 न तस्य पुरतो वीर वाचयेत् प्राप्त एव हि ॥
 प्रमज्जात् शृणुयाद्यस्तु, अडाभक्तिविवर्जितः ।
 श्रोता कौतुकमात्रस्तु, स ज्ञेयो राजसो बुधैः ॥
 सन्त्यज्य सर्वकर्मणि भक्तिश्रदामन्वितः ।
 सततं पूजयानस्तु, वाचकं श्रद्धया नृप ॥
 नित्ये नैमित्तिके काम्ये गुरुं च ददत्तथा ।
 य एव वाचको वीर स ज्ञेयः सात्विको बुधैः ॥
 व्यासः पूज्यः यावकाणां यथा व्यासश्चो नृप ।
 तस्मात् पूज्यो नृपश्चेष्ट प्रथमं वाचको बुधैः ॥
 आपत्काले च हृद्वी च तथाऽसौ गुरुवत् स्मृतः ॥
 वैशाखसमये वीर तृतीयायान्तु सुप्रत ।
 कार्त्तिकवामश्याद्याश्च संपूज्यः प्रथमो भवेत् ॥
 पर्वस्वेषु च विभो संपूज्य धर्मतः स्मृतः ॥
 हिरण्यं च सुवर्णं च धनं धान्यं तथैव च ।
 अन्नञ्चापि तथा पक्कं मांसञ्च कुरुतन्दन ।
 दातव्यं प्रथमं तस्मै यावकीरतिभक्तिः ॥
 दत्त्वा पुष्पं फलं तीर्थं पत्रमन्यनमेव च ।
 सारस्वतञ्च यश्चान्यत्तस्मै देयं समस्ततः ॥
 अथ सर्वैस्तथा कार्यं यावकैः पूजनं नृप ।
 वाचकस्तु यथा नित्यं सुखमास्ति नराधिप ।
 न पीडयति यथा हन्तैस्तथा कार्यं नराधिप ।
 हेमन्ते सोमशं देयं क्वं प्राहपि चोत्तमं ॥

उपानही कालयोगे कालौ वै कुशलोमशौ ॥
 यदा दातुं न शक्नोति माषकं काष्ठनस्य तु ।
 ततस्तस्य तदा दद्यात् माषकं त्रैयसेऽनघ ॥
 तदभावे हिरण्यं वा वित्तशठं विवर्जयेत् ।
 मृत्तिकापि हि दातव्या कुर्वता सफलं नृपतं ॥
 इत्येषा कथिता नित्या मासि मासि भवेत्ततः ।
 नैमित्तिकी भवेद्वाजन् ग्रहणादिषु पर्वसु ॥
 अमले वाससी राजन् गन्धमाब्जविभूषणे ।
 समाप्ते पर्वणि विभो दातव्ये भृतिमिच्छता ॥
 ज्ञात्वा पर्वसमामित्तु वाचकं पूजयेद् बुधः ।
 आत्मानमपि विवर्ज्य य इच्छेत् सफलं नृपतः ।
 नैमित्तिकी च नित्या दद्यात् न ददाति यः ॥
 शृणोति च सदा तान् तस्य तत् निष्कलं फलं ।
 चतुर्गुणा भवेद्वाजन् यः नित्यं दक्षिणा विभो ॥
 ऐच्छकं भोगमाप्नोति इत्याह भगवान् शिवः ।
 इत्येष कथितो राजन् पुराणश्रवणे विधिः ॥

इति श्रीमहाराजाधिराज-श्रीमहादेवस्य समस्तकरणा-

धीश्वर-सकलविद्याविशारद-श्रीहेमाद्रिविरचिते

चतुर्वर्गचिन्तामणौ व्रतखण्डे

प्रकीर्णकव्रतानि ।

अथ शान्तिकपोष्टिकानि ।



नीतः शान्तिमनः स्वदानसखिलस्त्रावैः सहस्रै रमो
येनात्यर्थकदर्शितार्थिनिवहो दारिद्र्यदावानलः ।
लीकं यः सततकृपालुहृदयः पुण्याति लक्ष्णातुरं
सोऽयं शान्तिकपोष्टिकानि गदितुं हेमाद्रिरथोद्यतः ॥

तच्च विनायकखपनमुच्यते ।

आह याज्ञवल्क्यः ।

विनायकः कर्मविघ्नसिद्धार्थं विनियोजितः ।
गणानामाधिपत्ये च रुद्रेण ब्रह्मणा तथा ॥
तेनोपसृष्टो य स्तस्य लक्षणां निबोधत ।
स्वप्नेऽवगाहतेऽत्यर्थं जलं शुष्काश्च पश्यति ॥

अत्यर्थमिति स्त्रोतसि ऋयते निमज्जति वा अवगाहमात्रस्य
च बलवत्वात् ।

काषायवाससश्चैव क्रव्यादस्याधिरोहति ॥

क्रव्यादः, गृध्रव्याघ्रादीन् ।

अस्य जैर्गर्भैरुद्वैः सहैकभावतिष्ठति ।

व्रजमानं तथात्मानं मन्यतेऽनुगतं परैः ॥

परैः शत्रुभिः, पृष्ठतो धावद्भिरभिभूयमानं मन्यते ।

विमानानि फलारम्भाः संगत्येति निमित्ततः ।

तेनोपसृष्टो लभते न राज्यं राजनन्दनः ॥

कुमारी न च भर्तारमपत्यङ्गर्भसङ्गता ।

आचार्यत्वं श्रोत्रियश्च न शिष्योऽध्ययनं तथा ॥

वणिक् लाभं न वाप्नोति कपिशैव कृषीबलः ।

स्रपनं तस्य कर्त्तव्यं पुण्येऽङ्गि विधिपूर्वकं ॥

पुण्येऽङ्गि, अनुकूलनञ्चादियुतेऽङ्गि न रात्रौ ।

गौरसर्षपकलेन साज्येनोत्सादितस्य तु ।

‘उत्सादनमुदत्तं’ ।

सर्वोपधैः सर्वं गन्धैर्विलिप्तशिरसस्तथा ।

भद्रासनोपविष्टस्य स्वस्तिवाचाः द्विजाः शुभाः ॥

शुभा अनूचानाः । तत्वारो द्विजाः स्वस्ति भवन्ती ब्रुवन्ति त्व
वाचाः । अस्मिन् समये गृह्योक्तविधिना पुण्याहवाचनं कुर्या-
दित्यर्थः ।

अश्वस्थानाङ्गस्थानाहस्त्रीकात् सङ्गमात् ऋदात् ।

मृत्तिकां रोचनां गन्धान् गुग्गुलुश्चाप्सं निक्षिपेत् ॥

या आहूता ह्येकवर्णैश्चतुर्भिः कलयैर्ऋदात् ।

चर्मस्थानडुहे रक्ते स्थाप्य भद्रासनं तथा ॥

तत उक्तोदकमृत्तिकां गन्धादिमङ्गितांयूतादिपल्लवोपशो-
भितान् तान्स्रग्दामवेष्टितकण्ठान् चन्दनेन चर्चितान् नवा-
हृतवसुभूषितांश्चतुरः कलशांश्च तिसृषु पूर्वदिषु दिक्षु स्थापयि-
त्वा शुचौ सुलिप्ते स्थण्डिले रचितपञ्चवर्णस्वस्तिके लोहितमानडुहं
चर्मोत्तरलोमपाचीनग्रीवमास्तीर्य तस्योपरि श्वेतवस्त्रपच्छा-
दितमासनं स्थाप्य तत्रोपविष्टस्य स्वस्तिवाचनानन्तरं जीवत्पति
पुत्राभिः रूपगुणशालिनीभिः कृतमङ्गलस्य गुरुरभिषेकं कुर्यात् ।

सहस्राक्षं शतधारसृषिभिः पावनं कृतं ।
 तेन त्वामभिषिञ्चामि पावमानाः पुनस्तु ते ॥
 भगन्ते वरुणो राजा भगं सूर्यो वृहस्पतिः ।
 भगमिन्द्रश्च वायुश्च भगं सप्तर्षयो विदुः ॥
 यत्ते केशेषु दोर्भाग्यं सीमन्ते यच्च मूर्धनि ।
 ललाटे कर्णयोरक्षोरपस्तत् घ्नन्तु ते सदा ॥
 कलशतये मन्त्रत्रयमुक्तं, चतुर्थं तु सर्व्वमन्त्रैरभिषेकः ।
 स्नातस्य सार्षपमूलं श्रुवेणोदुम्बरेण तु ॥
 जुहुयाद्मूर्धनि कुशान् सव्येन परिगृह्य च ।
 सव्यपाणिगृह्योत्कुशानन्तर्हारं जुहुयात् ॥
 मितय संमितश्चैव तथा शालकटं कटौ ।
 कूष्माण्डो राजपुत्रयेत्यश्वत्थाहसमन्वितैः ।
 नामभिर्बर्षिमन्त्रे य नमस्कारसमन्वितैः ॥

प्रणवादिभिरिति शेषः ।

अनन्तरं लोकिकेऽग्नौ स्थालीपाकविधिना चरुं उपयित्वा
 तैरेवषड्भिमन्त्रैस्तस्मिन्नेवाग्नौ दृत्वा तच्छेषं बलिमन्त्रे-
 रिन्द्राग्नि यम-निर्ऋति वरुण-वायु भोमेगानत्रह्मन्नत्तानां नाम-
 भिश्चतुर्थ्यन्तेर्नमोस्तैस्तेभ्यो बलिन्दद्यात् ।

दद्याच्चतुर्थ्ये सूर्यं कुशानां स्तीर्य यज्ञतः ।

कृताकृतांस्तण्डुलांश्च पल्लोदनमेव च ॥

कृताकृताः सकृदवहताः तण्डुलाः पल्लवं तिलपिटलमग्नि-
 यमोदनं पल्लोदनं ।

मत्स्यान् पक्षांस्तथैवामान् मांसमेतावदेव तु ।

चित्रं पुष्पं सुगन्धश्च सुराश्च विविधामपि ॥

मूलकं पूरिकां पूषांस्तथैवोण्डरकस्तजः ।

दध्यन्नं पायसश्चैव गुडपिष्टं समोदकं ।

उण्डरका पिष्टादिमयः ताः प्रोताः स्तजः, गुडपिष्टं गुडमिश्रं
शाल्यादिपिष्टं ।

एतान् सर्वाणुपाहृत्य भूमौ कृत्वा ततः शिरः ।

एतान्याहृत्य

ओं तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि

तन्नो दन्तो प्रचोदयात् । इति विघ्ने शं ।

सुभगायै विद्महे काममालिन्यै धीमहि तन्नो गौरो प्रचोदया-
दिति अम्बिकां नमस्कृत्यात् ।

एवं विनायकं तज्जनन्यै संपूज्योपहारशेषमास्तीर्य कुशे
सुर्पे निधाय चतुष्पथे निदध्यात् ।

बलिं गृह्णन्निभं देवा आदित्या वसवस्तथा ।

मरुतोऽथाश्विनौ रुद्राः सुपर्णाः पन्नगा यहाः ॥

असुरा यातुधानाश्च पिशाचा मातरो नगाः ।

शाकिन्यो यक्षवेतालयोगिन्यः पूतना शिवाः ॥

जम्बकाः सिङ्गगन्धर्वा मालाविद्याधरानघाः ।

दिक्पाला लोकपालाश्च ये च विघ्नविनायकाः ॥

जगतां शान्तिकर्तारो ब्रह्माद्याश्च महर्षयः ।

भूषराः स्त्रेवराश्चैव ये चान्ये चोपदेशिकाः ॥

मा विप्रो मा च मे पापं मा सन्तु परिपन्थिनः ।

सौम्या भवन्ति ह्येषां भूतप्रेताः सुखावहाः ॥

इत्येते चतुष्पथे बलिहरणमन्त्राः ॥

विनायकस्य जननीमुपतिष्ठेत्ततोऽम्बिकां ।

दूर्वासर्षपपुष्पाणां दत्त्वा र्घ्यं पूर्णमञ्जलिं ॥

स कुसुमेनोदकेनार्घ्यं दत्त्वा दूर्वासर्षपपुष्पाणां पूर्णमञ्जलिञ्च
दत्त्वोपतिष्ठेत् वक्ष्यमाणमन्त्रेषु ।

रूपं देहि यमो देहि भगं भगवति देहि मे ।

युवान् देहि धनं देहि सर्वान् कामांश्च देहि मे ॥

विनायकोपस्थाने भव्यवन्नित्यूहः ।

ततः शुक्लाञ्जलधरः शुक्लमात्राबुलेपनः ।

ब्राह्मणान् क्षीरबेहृद्याहन्त्युष्मं गुरोरपि ॥

गुरोर्दक्षिणादानमप्यपि शब्दात् । विनायकोद्देशेन ब्राह्मणेभ्यः ।

एवं विनायकं पूज्यं वहांश्चैव विधानतः ।

कर्षणां फलमाप्नोति श्रियं ब्राह्मणैश्चुत्तमां ॥

आदित्यस्य सदा पूर्वां तिलकं स्थाप्य नृप ।

महाभीरुपतश्चैव कुर्यान् सिद्धिं ववाप्नुयात् ॥

विनायकोपस्थाधिकारे ।

मविष्णुपुराणे ।

करणे मूढभाजानमनीलान्तरगस्तथा ।

पितृभिद्याहृतो सति श्रमगान्कटं नृप ॥

करणे विधेये कार्ये अनीलान्तरगः भूम्यादावसंलग्नः सन्न-
न्तरीक्षे गच्छतीत्यर्थः ।

पश्यते नृपशार्दूल स्वप्नान्ते नात्र संशयः ।

तैलार्द्रगात्रविधुरं करवीरविमूषितं ॥

स्वप्नान्ते स्वप्नमध्ये । तथा

स्नपनं तस्य कर्त्तव्यं पुण्येऽङ्घ्रि विधिपूर्वकं ।

गौरमर्षपकलकेन सक्तनोत्सादितो नरः ॥

शुक्लवस्त्रे चतुर्थांश वारेण धिषणस्य च ।

तिथौ वीरजनक्षत्रे तस्यैव पुरतो नृप ॥

उक्षादित उदसितः । धिषणो वृद्धस्यतिः ।

सर्वौषधैः सर्वगन्धैर्विलिप्तशिरसस्ताथा ।

भद्रासनोपविष्टस्य स्वस्तिवाच्या हिजाः शुभाः ॥

व्योमकेशन्तु संपूज्य पार्ष्णीं भीमजन्तया ।

कृष्णस्य पितरं वाथ अकर्मरश्मिनं तथा ॥

धिषणं क्लेदपुत्रश्च कोणलक्ष्मीश्च भारत ।

विप्रस्तकं वाहुलेयं नवकस्य च धारिणं ।

अश्वस्थानगजस्थान इत्यादिको ग्रन्थो याज्ञवल्कासमानः ।

अश्विकोपस्थानमग्नस्तु ।

रूपं देहि यशो देहि भगं भगवति देहि मे ।

पुत्रान् देहि धनं देहि सर्वकामांश्च देहि मे ॥

अचलां कुरु मे देवि विपुलां ख्यातिसम्भवां ।

ख्यातिसम्भवा लक्ष्मी ।

इति विनायकस्नपनं ।

बुक्कर उवाच ।

ज्ञानमन्यत् प्रवक्ष्यामि तवाङ्गं दुरितापहं ।
 राजन् माहेन्द्रं पुण्यं कृतं विजयावहं ॥
 दानवेन्द्राव तु घने यज्जगाद् मनुः पुरा ।
 धन्यं यमस्वमायुषं सर्वं यन्मुच्यते ॥
 प्रभातायाश्च यज्जगत् भास्करेऽभ्युदिते तथा ।
 ज्ञायीत दानवेन्द्रे विधिदृष्टेन कर्मणा ॥
 सोवर्षं राजतं कुम्भं चक्रवापि महोमवं ।
 नादेयैः पारसैस्तोयैः कल्पवित्ता यथाविधि ॥
 श्रीवधौर्विन्दसेतुश्च समाभ्यङ्गाः सुसूचिताः ।
 जया च विजया चैव तथा सूक्तफलेति च ॥
 धूपनं सुसुवीजा च भङ्गी च कुसुमानि च ।
 श्रीरजं पञ्चनिर्मलाय देवीनिःसारमेव च ॥
 फलिनो वराङ्गना चैव गजेन्द्रस्य च मञ्जरी ।
 सुद्रुजाङ्गरजा चैव घने द्वे द्वे विभावरी ॥
 महोद्यं मूर्तिके चैव तुम्बं यज्ञभुवं तथा ।
 गगाङ्गमृगदर्प्यश्च दानश्च करिणस्तथा ।
 श्रीवध्यः कथितास्तुभ्यं ज्ञानमन्त्रमतः शृणु ॥

श्रीं नमो भगवते रुद्राय धवलपाङ्कुरोपचितभङ्गानुलित-

गात्राय ।

तद्यथा ।

जय जय विजय सर्वान्धसमुच्च कलहविषहविवादेषु ।

जम्भ जम्भ मय मय सर्वप्रत्यर्थिका ।

(१२७)

योऽसौ युगान्तकाले तु दिधक्षति इमां पुनः ।
 रोद्रीं भूर्तिं सहस्राक्षः स त्वो रक्षतु जीवितं ॥
 संवत्स्रकामितुल्यञ्च त्रिपुरान्तकरः शरः ।
 सर्वदेवमयः सोऽपि स त्वो रक्षतु जीवितं ॥

निखिर्नमित्यनि स्नाहा ।

एवं स्नानन्तु तेनैव मन्त्रेण तिलतण्डुलं ।
 घृताक्षं ज्वलते बह्नी जुहुयात् प्रयतः श्रुचिः ॥
 ततः संपूजनं कुर्याद्देवदेवस्य शूलिनः ।
 घृतक्षीराभिषेकेण गन्धपुष्पफलाक्षतैः ॥
 दीपधूपनमस्कारेस्तथा चान्नेन भूरिवा ।
 गीतवाद्यैस्तु मधुरैर्वाङ्मयस्तिवाचनैः ॥
 माहेश्वरस्नानमिदं हि कृत्वा
 रक्षोहृणं शत्रुनिवर्हणञ्च ।
 सर्वानवाप्नोति नरस्तु कामान्
 यासाम काञ्चिन्नरसि स्थिताय ॥

इति विष्णुधर्म्मोत्तरोक्तं माहेश्वरस्नानं ।

—०००(८)०००—

पुष्कर उवाच ।

स्नानान्यन्यानि ते वक्ष्मि निबोध गदतो मम ।
 रक्षोघ्नानि यशस्नानि मङ्गलानि विशेषतः ॥
 स्नानं घृतेन कञ्चितममुषोर्वर्धनं परं ।
 राम गोयलता स्नानं परं सखीविवर्धनं ॥

गीमूत्रेषु तथा ज्ञानं सर्वपापनिवर्हणं ।
 पञ्चगव्यजलज्ञानं सर्वव्याधिनिघूदनं ॥
 ज्ञानं क्षीरेण कवितं बलवद्विवर्धनं ।
 ज्ञानञ्च कथितं दत्ता परं लक्ष्मोविवर्धनं ॥
 तथा दर्भोदकज्ञानं सर्वपापनिवर्हणं ।
 पञ्चगव्यजलज्ञानं सर्वकार्यार्थसाधनं ॥
 गवां मूत्रोदकज्ञानं सर्वपापनिवर्हणं ।
 पलाशविल्वकमलपुष्पज्ञानं पुरीकृतं ॥
 वचा हरिद्रा मण्डिता तगरं वाचके तथा ।
 ज्ञानमेतद्विनिर्दिष्टं रघोन्नं पापघूदनं ॥
 वचा हरिद्रे हे सुस्ते ज्ञानं रघोद्वचं परं ।
 चातुर्वचश्च तथा मन्त्रं धन्यं निधाविवर्धनं ॥
 ज्ञानं पवित्रं मातृत्वं तथा ज्ञानवारिणा ।
 ज्ञानादूनतरे किञ्चिदूषयतामोदकैस्ततः ॥
 तथा रजोदकैः ज्ञानं संघामे विलयान् कृष्ट ।
 वैकुण्ठमध्यतः कृत्वा प्रबालैः परिचारयेत् ॥
 तेन पात्रेण यत् ज्ञानं सर्वकामप्रदं भवेत् ।
 तथा पुष्पोदकज्ञानं भवेदारोग्यकारकं ॥
 तथा बीजोदकज्ञानं सर्वबीजप्रसादकं ।
 तथैवामलकज्ञानं पल्लवीनाशनं परं ॥
 तिलमिहाषकैः ज्ञानममातृत्वं प्रनाशनं ।
 केवलैर्वा तिलैः ज्ञानं यत्रवा गौरनर्षपैः ।
 ज्ञानं प्रियङ्गुना प्रोक्तं तथा सौभाग्यवर्धनं ॥

वन्धाकर्कोटकौमूलं कुमारी पद्मवारिणी ।
 ज्ञानं रोगविनाशाय क्लृप्तं प्रत्येकशो हि ज ॥
 मांशो मुरा चोरकनागपुष्पैः
 सनामदानैररिनाशकेषु ।
 कुतश्च कङ्कोलकजातिपूगैः
 समस्तसौख्यञ्च सुतप्रदं स्यात् ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तनानाज्ञानविधिः ।

—000—

युधिष्ठिर उवाच ।

रुद्रज्ञानं विधानेन कथयस्व जनार्दन ।
 सर्व्वं दुष्टोपशमनं सर्व्वं शान्तिप्रदं नृणां ॥

कृष्ण उवाच ।

देवसेनापतिस्तन्मदं रुद्रपुत्रं ब्रह्मज्ञानं ।
 अगस्त्यो मुनिशार्दूलः सुखासीनमुवाच ह ॥
 सर्व्वं शोऽसि कुमार त्वं प्रसादाच्छङ्करस्य वै ।
 ज्ञानं रुद्रविधानेन ब्रूहि कस्य कथं भवेत् ॥

स्कन्द उवाच ।

मृतवत्ता तु या नारी दुर्भगा चतुर्वर्जिता ।
 या सृते कन्यका बन्धां ज्ञानमासां विधीयते ॥
 षष्ट्यां वा चतुर्हस्यां उपवासपरायणा ।
 षष्ठौ शुद्धे चतुर्धेऽङ्गि प्राप्ते सूर्यदिनेऽथ वा ॥

नद्योस्तु सङ्गमे कुर्यात्प्रहानयो विशेषतः ।
 शिवालयेऽथवा गोष्ठे विविक्ते वा गृहाङ्गणे ॥
 पाहिताग्निं हिजं ग्रामं धर्मज्ञं सत्यशालिनं ।
 क्षान्तां चार्चयेद्देवं निपुणे रौद्रकर्त्तृभिः ॥
 ततस्तु मण्डपं कुर्याच्चतुरक्षमुदङ्मुखं ।
 बह्वचन्दनमास्त्य च गोमयेनानुलेपितं ॥
 तन्मध्ये स्त्रीतरजला संपूर्णं पद्ममालिखेत् ।
 मध्ये तस्य महादेवं स्थापयेत् कर्षिकोपरि ॥
 दद्याद्दलेषु मण्डपादीन् चतुर्षु विधिपूर्वकं ।
 इन्द्रादिसौकपासां च दलेष्वप्येषु विन्यसेत् ॥
 देवीं विनायकश्चैव स्थापयेत्तत्र पार्श्वे च ।
 दत्तात्रेयं गन्धपुष्पैश्च धूपं दीपं गुह्योदनं ॥
 भवाग्रानाविधान् दद्यात् फलानि विविधानि च ।
 चतुष्कोणेषु गृहकारान्तरैश्च दलभूषितं ॥
 एकैकं विन्यसेद्ब्रह्मन् सध्वौषधिसमन्वितं ।
 चतुर्हिंस्तु मण्डपस्य दद्याद्भूतबलिं ततः ॥
 पात्रेभ्यो दिशि कर्त्तव्यं मण्डलस्य समीपतः ।
 अम्बिकायै शुभे कुण्डे पञ्चपुष्पैरलङ्किते ॥
 लवणं सर्पिषा युक्तं घृतेन मधुना सह ।
 मांसं स्तोकेन जुहुयात् कृतहोमे नवघहे ॥
 द्वितीयस्याम्बिकार्यस्य कर्त्ता च ब्राह्मणो भवेत् ॥
 बह्वजाप्यकदाचार्यं सितचन्दनचर्चितं ।
 सितवस्त्रपरीधानं सितमाभ्यविभूषितं ॥

शोभयेत् कण्टकैः कण्टैः कर्चवेष्टाङ्गुलीयकैः ।
 मण्डपस्य समीपस्थी जपेद्गुह्यान् विमलरः ॥
 यावदेकादश गताः पुनरेव जपेच्च तान् ।
 देवमण्डलवत् कार्यं द्वितीयं मण्डलं शुभं ॥
 तस्य सध्ये तु या नारी श्वेतपुष्पैरलङ्कृता ।
 श्वेतवस्त्रपरीधाना श्वेतगम्यामुलेपना ॥
 सुखासनोपविष्टा या आचार्यो रुद्रजापकः ।
 अभिविञ्चेत्ततश्चेनामर्कवचपुटान्मना ॥

चतुःषष्टिसंख्यानामेकादशकृत्यः ।

पवित्रामिन्द्रकीटाजगृहणोदावरीमृदं ।
 सर्वौषधी रोचनाञ्च नदीतीर्थादकानि च ॥
 एतत् संचिप्य कक्षग्रे शिवसंज्ञसुपूजिते ।
 आपादतश्चकेशान्तं कुचिद्रेये विशेषतः ॥
 सर्वाङ्गं लेपयेद्भक्त्या सुशीला काचिदङ्गना ।
 रुद्राभिजमेन ततः स्थापयेत् ललनाञ्च तं ॥
 तोयपूर्णैकलशैरश्वत्थदलपूरितैः ।
 सर्वतोदिक्स्थितैः पश्चात् स्थापयेत् कलशाक्षतैः ॥
 एवं स्नाता स्नापकाय दद्याद् गां काञ्चनं तथा ।
 होतुरेवाच निर्दिष्टा दक्षिणा गोः पयस्विनी ॥
 ब्राह्मणानामग्रान्येषां स्वयञ्जवा मुनिपुङ्गव ।
 गोवस्त्रकाञ्चनादीनि दत्त्वा सर्वान् चमापयेत् ॥
 कृतेनानेन विभ्रेन्द्र रुद्रस्नानेन भामिनि ।
 सुभगा कान्तिसंयुक्ता बहुपुत्रा प्रजायते ॥

सर्वेष्वपि हि मासेषु ब्राह्मणानुमते शुभं ।
 तस्मादवश्यं कर्तव्यं पुत्रान् स्त्रीं सुखस्य च ॥
 या ज्ञानमाचरति रुद्रमिति प्रसिद्धं
 अद्यान्विता द्विजवरानुमता नताङ्गी ।
 दीधान् निहत्य सकलांश्च शरीरमाजो
 भर्तुः प्रिया भवति भारत जीवन्मता ॥

इति भविष्यत्तरोक्तं रुद्रज्ञानं ।

—००००—

ईश्वर उवाच ।

नृणु षण्मुख तत्त्वेन ज्ञानं घटिकया परं ।
 धारयिष्यन्ति ये वक्ष्यं घटिकां देवनिर्मितां ॥
 तेषामर्थस्य कामस्य सौभाग्यं हविर्निष्पति ।
 पूर्वोक्तं मण्डलं कृत्वा गोरीं तत्रैव पूजयेत् ॥
 कुङ्कुमागुक्कपूर्वचन्दनेन विलेपयेत् ।
 ऐशान्यां दिशि संस्थाप्य घटिकां मधुपूरितां ।
 पुष्पमाल्यैरलङ्कृत्य रक्तसूत्रेण वेष्टयेत् ॥
 हिरण्यं निक्षिपेत्तत्र न शून्यां कारयेद् बुधः ।
 वस्त्रेण तु समादृत्य गन्धान्तचैव निक्षिपेत् ॥
 कुङ्कुमागुक्कपूर्वचन्दनेन विलेपयेत् ।
 उशीरं चन्दनं मुस्तां बालकं सर्वसौख्यं ।
 तथा चामलकीं दूर्वां क्षिपेद्गोरीचनं बुधः ॥
 शतमष्टोत्तरं कृत्वा गोर्वां वै मूलविद्यया ।

ततोऽभिमन्त्र्य घटिकां गौरीमन्त्रेण तां पुनः ।
 शताष्टाधिकजप्तेन अभिमन्त्रोदकं गुह्य ॥
 ततोऽभिषेकं कुर्याद्वै योषितो वा नरस्य वा ।
 घटिकाभिषिक्ता चैव या नारी मण्डले गुह्य ।
 सुभगा सा भवेदित्यं नरस्य विधिवद्गृह्य ॥
 अपुत्रा लभते पुत्रं अजीवा जीविनो भवेत् ।
 अनेनैव विधानेन गुर्विणी यदि कारयेत् ॥
 पुत्रं प्रसूयते सा तु महावीर्यपराक्रमं ।
 राजा विजयमाप्नोति धारयित्वा सुसङ्गरे ॥
 या या रूपवती कन्या वरं न लभते सदा ।
 सा घटिकाभिषेकेण सौभाग्यमतुलं लभेत् ॥
 येन येन हि भावेन घटिकां कारयेद्बुधः ।
 तस्य तेन हि भावेन तत्फलं ददते बुधः ॥
 यन्मेनोक्तं यश्चोक्तं सङ्क्षेपेण कथयन् ।
 तत्सर्वं मूलमाश्रित्य अनेनैव तु कारयेत् ॥
 मूलमाश्रित्य पूर्वोक्तमूलमन्त्रेणैत्यर्थः ।
 न घटिकापरं किञ्चिदौभाग्यकरणं मतं ।
 न घटिकापरं स्कन्द धर्मकामार्थमोषदं ॥
 घटिका धारयेद्यस्तु स कामानश्लिलान् लभेत् ।
 क्रमो लभते पुत्रमधनो धनमपुत्रात् ॥
 इति भविष्यपुराणोक्तो घटिकाभिषेकः ।

कार्तिकेय उवाच ।

पूर्वमेव त्वया ज्ञातं सन्ति बन्ध्या न हि स्त्रियः ।

दोषैस्तु विविधाकारैर्यद्विधातुविकारजैः ।

बन्ध्यात्वं जायते तासां तानाचक्ष्य प्रयत्नतः ॥

ईश्वर उवाच ।

ग्रहदीपाब् प्रवक्ष्यामि नृण पुत्र यथार्थतः ।

द्वाविंशतिग्रहाः प्रोक्ता नारीपीडाकरास्तु ते ॥

ग्रहाः कोमारिकाद्यान्ये तेषां द्वाविंशकोत्तिताः ।

चतुःषष्टिषु संख्या वै ग्रहाणां क्रूरकर्षणां ॥

चतुःषष्टिसहस्राणि एकैकस्य प्रविस्तराः ।

तेषां मध्ये तु प्रोच्यन्ते चतुःषष्टस्तु नायकाः ॥

दोषैर्द्वादशभिर्वत्स ग्रहा गृह्णन्ति योषितं ॥

एकपात्रेण यानेन परशय्यासनेन तु ॥

परपुरुषसंयोगेन परतस्त्रविभूषणैः ॥

तातोष्कृष्टकमान्येन एकभाजनभोजनैः ॥

केयोदकेन संसृज्यादन्यनार्यैर्बगूहनात् ।

एतैर्दोषैश्च संख्येय ग्रहाः पीडाकराः स्मृताः ॥

प्रजनं गृह्णते पुण्यं गर्भश्च तदनन्तरं ।

पश्चात् क्षीरन्ततो बालमेवमाहुर्न संशयः ॥

ग्रहनामानि वक्ष्यामि सचरी रेवती शिवा ।

सुखमन्दी च लम्बा च पूतना कण्डपूतना ॥

गोमुखी च बिडाली च नवा चैव महाकला ।

काकोली च हस्तती च अहहारी जवा तथा ।

(१२८)

मुक्तकेयी त्रिदण्डी च अजासुखी च रोचना ॥
 मुकुला पिङ्गला नाम पिटनासा तथापरा ।
 स्कन्दग्रहास्तथा चान्ये सर्वेषां नायकाः स्मृताः ॥
 रजनी कुम्भकर्णी च तापसी राक्षसी परा ।
 मोदनी रोदनी चात्र धनदा च कुला तथा ॥
 चतुःषष्टिः समाख्याता मातरो बालमातरः ।
 भार्जकी जम्भकी भाम उपस्कन्द्य पञ्चमः ॥
 बालानां पीङ्गनाः सर्वे भ्रमन्ते बलिकांश्चिणः ।
 बलिन्दद्याद्विधानेन ततो मुञ्चन्ति नान्यथा ॥
 चतुरस्रं कृतं चेत्तं समसूत्रं कृतं ततः ।
 सप्तभागान् समान् सर्वान् कृत्वा होमं विचक्षणः ॥
 तेषामन्तर्गुकोष्ठेषु नवपद्मानि कारयेत् ।
 सबाह्याभ्यन्तरे वत्स चक्रमालिख्य यज्ञतः ॥
 अष्टपत्रं सितं शुभ्रं केसरेः सह कर्णिकैः ।
 तेषु पात्रेषु च गणाः सर्व्वे तुष्टिं यथाक्रमं ॥
 पूर्वादीं पूजयेत् सर्वान् तथाष्टाष्टकमष्टधा ।
 शिवस्तु कर्णिकामध्ये पद्मेषु नवसु स्थितं ॥
 कमले मध्यमे वत्स अङ्गैस्तु सहितं शिवं ।
 पूजयेत् पूर्वविधिना कल्पयित्वा तु वासनं ॥
 अस्य कर्माणि वक्ष्यामि येन मुञ्चन्ति योषितः ।
 ज्ञात्वा तासां विकारांश्च सर्वाभरणभूषिताः ॥
 शापयेच्च विधानज्ञः सोपवासपरायणः ।
 यतोपातविनिर्मुक्ते ज्ञानहृदयांश्चुभेऽहनि ॥

त्रिभूतरेषु रेवत्यां प्राजापत्ये पुनर्वसौ ।
 अश्विन्यामथ पुष्ये च नक्षत्रे रोहिणी तथा ॥
 मातृगृहे गृहे वापि त्रिपथे वा चतुष्पथे ।
 जीर्णकूपे तडागे वा नदीनां सङ्गमेषु च ॥
 एकवृक्षे श्मशाने वा देवतायतनेऽपि वा ।
 अष्टम्बां राजपत्नीन्तु मध्याह्ने स्नापयेत्ततः ॥
 पुष्कामान्तु गोतीर्थे राजपत्नीन्तु सङ्गमे ।
 मातृस्नाने तु दीर्घायां श्मशाने मृतपुत्रिकां ॥
 काकवस्त्रां जीर्णकूपे बन्ध्यां पुष्करिणीषु च ।
 अभिचारकृतां नारीं पुरुषञ्च विरेतसं ।
 स्नापयेत्तान् प्रयत्नेन शिवायतनसङ्गमे ॥
 आचार्यस्तु सुसंपूर्णः शकृवस्त्रः शुचिः सदा ।
 अष्टहस्तप्रमाणेन चतुर्हस्तमथापि वा ॥
 चतुर्हस्तं चतुर्द्वारं तोरणध्वजशोभितं ।
 चन्द्राभन्तु कृतादीपं पुष्पमाख्योपशोभितं ।
 स्नानपानैश्च नैवेद्यैर्विविधं कारयेद्दलितं ॥
 त्रिरजोभिः समालिख्य मण्डलं सर्वकामिकं ।
 श्वेतरक्तं तथा कृष्णं वर्णानाञ्च क्रमेण तु ॥
 ईशो ब्रह्मा तथा विष्णुः रजमासधिपाः स्मृताः ॥
 मण्डलस्योत्तरे भागे कुर्यात् सपनमण्डनं ।
 चतुर्हस्तप्रमाणेन वर्णकैरुपशोभितं ॥
 अकालमूलकलसां चतुर्हस्तप्रमाणतः ।
 चतुर्हस्तवसंयुक्तान् तथेष्टपरिचेष्टितान् ।

हिरण्यकृतदूर्वाभिरोषधीसङ्गसंयुतान् ॥
 नद्याद्योभयकूलान्तं वल्मीकहृच्चमूलतः ।
 गृहीत्वा नृदमत्पान्तु स्थापयेत् प्रथमे घटे ॥
 द्वितीये गोमयं स्थाप्य तृतीये गन्धवारि च ।
 चतुर्थे हेमरजते पञ्चमे सर्व्वमौषधं ॥
 षष्ठे तीर्थाश्वविन्यासः सप्तमे सप्तसागरं ।
 कलशे चाष्टमे न्यस्य शङ्करं मातृभिः सह ।
 अनेन विधिना मन्त्री त्वभिषेकं प्रदापयेत् ॥
 स्रुतवत्सा जीवपुत्रा बन्ध्या चापि प्रसूतिका ।
 अवीजा वीजतां याति स्त्री वाद्य पुनर्घोऽपि वा ।
 अभिचारकृतं दोषं मन्त्रोऽयं नाशयेदिति ॥
 अनेनैव हि योगेन मुख्येन सर्व्वबन्धुना ।
 दुर्भगा सुभगा वापि कन्या प्राप्नोति सङ्गरं ॥
 हस्त्यश्वरथयानं वा मुकुटं कुण्डलानि च ।
 धनधान्यहिरण्यानि येन वै तुष्यते गुरुः ।
 येन तुष्टेन तुष्यन्ति देवता मातरो यहाः ॥

अथाभिषेकविद्या भवति । ओं रौं ह्रीं स्रीं वीषट् । अभिषे-
 कोऽनेन कौलिते गर्भे ओं वृङ् । श्रीं स्नाहा । अनेनाभिषेक
 भुक्तक्षये पुरुषः स्थातु । ओं श्रीलक्ष्मं स्नाहा ।

पुष्यक्षये तु नारीषामभिषेकश्च दापयेत् ॥

ओं रौं ह्रीं स्नाहा । अनेन कौलिते गर्भे अभिषेकं देयं ।

यो जीवति तस्माच्छतेन स्रुतं वा पतिं भ्रवं ।

ओं ह्रीं फट् । रौं स्नाहा ।

सर्षपैरक्षतैर्वापि तं देहस्ताडयेच्छिरोः ।

मौनचेन्म्रियते बालो रुदते जीवते ध्रुवं ॥

इति वन्ध्याभिषेकविधिः ।

—000@000—

भगवदुवाच ।

हन्त्रादिस्त्रीपरागे च यन्मानमभिधीयते ।

तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि द्रव्यं मन्त्रविधानतः ॥

मत्स्य उवाच ।

यस्य राशिं समासाद्य भवेद्ब्रह्मसम्भवः ।

तस्य ज्ञानं प्रवक्ष्यामि मन्त्रोपधिसमन्वितं ॥

चन्द्रोपरागं संप्राप्य कृत्वा ब्राह्मणवाचनं ।

संपूज्य चतुरो विप्रान् शुक्लमास्थानुलेपनैः ॥

सर्वमेवोपरागस्य समानीयोपधादिकं ।

स्थापयेत्तुरः कुम्भान् चत्रणान् सलिलान्वितान् ॥

गङ्गाशरथवल्लीकसङ्गमाद्गङ्गोकुलात् ।

राजहारप्रदेशाच्च मृदमानोय निक्षिपेत् ॥

पञ्चगव्यञ्च कुम्भेषु पञ्चरत्नानि चैव हि ।

रोचनापद्मशङ्खञ्च पञ्चभङ्गसमन्वितं ॥

स्फटिकचन्दनञ्चैव तीर्थवारि मसर्षपं ।

मज्जदन्तं कुङ्कुमञ्च तथैवौशीरगुग्गुलं ।

एतत्सर्वं विनिक्षिप्य कुम्भेऽथावाहयेत्सुगन् ॥

सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः ।

आयातु यजमानस्य दुरितक्षयकारकाः ॥
 योऽसौ बहुतरो देव आदित्यानां प्रभुर्भूतः ।
 सहस्रनयनचन्द्रः पीडामत्र व्यपोहतु ॥
 सुखं यः सर्वदेवानां सप्तार्धिरमितश्रुतिः ।
 चन्द्रोपरागसम्भूतामग्निपीडां व्यपोहतु ॥
 यः कर्मसाक्षी लोकानां धर्मराजेतिविश्रुतः ।
 यमचन्द्रोपरागोत्थां पीडामत्र व्यपोहतु ॥
 रक्षोगणाधिपः साक्षात् प्रलयानलसंप्रभः ।
 खड्गव्यपोऽतिभीमश्च रक्षःपीडां व्यपोहतु ॥
 नागपाशधरो देवः सदा मकरवाहनः ।
 स जलाधिपतिश्चन्द्रः बहुपीडां व्यपोहतु ॥
 योऽसौ निधिपतिर्देवः खड्गशूलगदाधरः ।
 चन्द्रोपरागकुलुर्धनदेवो व्यपोहतु ॥
 योऽसाविन्दुधरो देवः पिनाकी वृषवाहनः ।
 चन्द्रोपरागपापानि विनाशयतु शङ्करः ॥
 त्रैलोक्ये यानि भूतानि स्वावराणि चरानि च ।
 ब्रह्मविष्णुर्केशानि तानि पापं हरन्तु ते ॥
 पूजयेद्बहुगोदानैर्ब्राह्मणानिष्टदेवतां ।
 एतानि च ततो मन्त्रान्वितश्च कनकान्वितां ।
 प्राप्नुयुः पूजयित्वा तु सम्प्रश्रुतीष्टदेवतां ॥
 कलशं द्रव्यसंयुक्तं प्राप्तं बहुचपर्वणि ।
 चन्द्रग्रहे निहत्य ते तु कृते गोदीहमङ्गले ।
 उतकामश्च तं घटं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥

अनेन विधिना वस्तु सयहं ज्ञानमाचरेत् ।
 न तस्य ग्रहपीडास्वात् च बन्धुधनक्षयः ॥
 परमां सिद्धिमाप्नोति पुनरावृत्तिदुर्लभा ।
 सूर्यग्रहे सूर्यनाम सहा मन्त्रेण कौर्त्तयेत् ॥
 द्रव्यैस्तेरेव कथितं ज्ञानं नृपकुलोद्भवं ।
 अस्मिंस्तु पञ्चरागः क्वात् कपिला च सुग्रीभना ॥
 य इदं नृपुषाक्षित्वं आचरेहापि मानवः ।
 सर्वपापविनिर्मुक्तः शक्तलोके गहीयते ॥
 चन्द्रग्रहे नृप रविग्रहचोऽप्यजन्मा
 मन्त्रैरिजैः समभिनम्य हृभोदकुम्भान् ।
 ज्ञानं करोति निश्चयेन नरस्य पीडा
 न तस्य तं ब्रह्मता पुद्गलं दुनोति ॥

इति मत्स्यपुराणोक्तं चन्द्रसूर्यपरागज्ञानं ।

—0000000000—

अथातो यमलज्जननमान्तिं व्याख्यायामो यस्य भार्या गोर्हा
 सी बहुवा विलतिं प्रसवेत् । प्रायश्चित्तीभवेत् पूर्वं दशाहे चतुर्णां
 क्षीरहस्ताणां कषायस्तुपसंहरेत् । ब्रह्मचर्यदुष्कराग्रतश्चामीदेव
 दारुगौरसर्पपाशेषां सहिरस्त्रदूर्वाहरैश्च पञ्चवैरष्टौ कलयात्
 पूरयित्वा सर्वविधिना दन्वती ज्ञापयेत् । आपोऽहिष्टेति तिस्र-
 भिः, कयानक्षिचेति पञ्चेन्द्रेण पञ्चबाहणेनेदमापः प्रवृत्तेत्यपा-
 यमिति ज्ञापयित्वा कङ्कालं तौ र्भेषु उपवेशयेत् । मासं तं स्थाली-

पाकं उपयित्वाऽथ भागाविद्वाज्याहुतीर्जुहोति । पूर्वोक्तस्य पन-
मन्त्रैः स्थालीपाकं जुहोति । अग्नये स्वाहा । पवनाय स्वाहा ।
मारुताय स्वाहा । यमाय स्वाहा । अन्तर्काय स्वाहा । मृत्यवे
स्वाहा । ब्रह्मणे स्वाहा । अग्नये स्विष्टिकृते स्वाहा । गृहोत्पा-
तेषूल्कः कपोतो गृध्रः श्वेनोवाविशेषस्ततः प्ररोहे वल्लीको वा
भवेदुदकुम्भप्रचलने, आसनशयनयानभञ्जे, गृहगोधिकाकृकला-
शसरीसृपसर्पणे, कृन्धजविनाशेऽप्यन्ये उत्पाते प्येतदेव प्राय-
श्चित्तं ग्रहणशान्तिं प्रीक्षेन विधिना कृत्वाचार्याय वरं दत्वा
स्वस्ति वाच्याशिषः प्रतिगृह्य शान्तिर्भवतीति ।

इति कात्यायनोक्तयमलजननशान्तिः ।

—०००—

पुष्कर उवाच ।

दन्तजम्बुविशालानां लक्षणं तन्निबोध मे ।
उपरि प्रथमं यस्य जायन्ते हि शिशोर्हिजाः ॥
दन्तैर्वा सह यस्य स्याज्जम्बु भार्गवसत्तम ।
मातरं पितरं वाद्य खादेदात्मानमेव वा ।
तच्च शान्तिं प्रवक्ष्यामि तां मे निगदतः शृणु ॥
गजपृष्ठगतं बालं नौख्यं वा स्थापयेद्भिज्ज ।
तदभावेन धर्मज्ञ काश्यपेन वरासने ॥
सर्व्वोषधैः सर्व्वगन्धैर्बीजैः पुष्पैः फलैस्तथा ।
पञ्चगव्येन रत्नैश्च पताकाभिश्च भार्गव ।
स्थालीपाकेन दातारं पूजयेत्तदनन्तरं ॥

सप्ताहश्चात्र कर्तव्यं तथा ब्राह्मणभोजनं ।
 अष्टमेऽहनि विपानां तथा देवा च दक्षिणा ॥
 काश्चनं रजतं गाव भुवमाज्जानमेव वा ।
 दत्तं जग्निं सामान्ये ऋणं स्नानमतः परं ॥
 भद्रासने निवेश्य च सृष्टिर्मूलैः फलैस्तथा ।
 सर्वौषधैः सर्वबीजैः सर्वगन्धैस्तथैव च ।
 स्त्रापयेत् पूजयेच्चार्च्यं सोमं ममीरणं ॥
 प्रथमं स्त्रापयेत्तत्र देवदेवश्च केशवं ।
 स तेषामेव जुहुयाद्भृतमग्नी यथाविधि ॥
 ब्राह्मणानान्तं दातव्या ततः पूजा च दक्षिणा ।
 ततः स्वस्त्युक्तं बालं भासनेषूपवेशयेत् ॥
 भासन्तं हस्तमूर्ध्नि बीजैः सुस्त्रापयेत्ततः ।
 सुस्त्रिर्बालकानाञ्च तैश्च कार्यं पूजनं ।
 पूज्याश्च विधवा नार्यो ब्राह्मणाः सुहृदस्तथाः ॥
 इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तदन्तोत्पत्तिशान्तिः ।

—०—

जनमारसमुत्पत्तिं प्रवक्ष्यामि वसन्तिका ।
 यदा लोभसमाविष्टः पीडयानो धनैः प्रजाः ॥
 रसत्यभिद्रवन् राजा न च धर्मेण तिष्ठति ।
 वचस्तस्यानुवर्त्तन्ते प्रजा धर्मे विहाय ताः ॥
 क्रीडन्ती भसमाविष्टाः साध्वचारविवर्जिताः ।
 पूजयन्ते न चाभीष्टं देवान् विप्रांस्तथा पितॄन् ॥

(१२८)

तास्वधर्माभिभूतास्तु ततो रुद्रः प्रकुप्यति ॥
 अन्तर्को एष भगवान् भूतानां प्रिय एव च ।
 कुरुतेऽसौ विकारांश्च हेतुभूतः पृथग्विधान् ॥
 ताराग्रहान् केतुदण्डान् राहुकाकवलाहकान् ।
 ससूर्यसन्ध्याविक्रान्तिं घोरां खल्वगपक्षिणः ।
 भूमिकम्पोरुक्कनिर्घाताः शीतोष्णतिलविक्रयाः ॥
 अतिवर्षमवर्षश्च तथैवर्तुविपर्ययाः ।
 ओषध्यो रसहीनाश्च भवन्तीह विपर्यये ॥
 रसवीर्यविहीनास्ता रोगानुत्पादयन्ति च ।
 रुद्रप्रकोपनं तस्माज्जनमारं प्रचक्षते ॥
 तस्मात् प्रसादयेत् यथाहिवदेवं महेष्वरं ।
 दैवज्ञानप्रदिष्टेन विधिना सुसमाहितः ॥
 गाणपत्येन विधिना अथर्वशिरसा तथा ।
 यामलेन विधानेन कुर्यादेवं प्रसादनं ॥
 शिवसूक्तमुमासूक्तं जपेच्च शतरुद्रियं ।
 बल्यपहारविविधान् चत्वरेषु निवेदयेत् ॥
 आवाहयेत्तं सगणं रुद्रं रात्रावहः शुचिः ।
 ब्राह्मणान् भक्ष्यभोज्यैश्च दक्षिणाभिश्च पूजयेत् ॥
 प्रसादिते ततो रुद्रे जनमारो निवर्त्तते ।
 जप्य एवास निरतो नृपतिश्च यतेन्द्रियः ॥
 युक्तो होममुपाश्रित्य नियमेन यथाविधि ।
 एवं युक्तस्य नृपतेः कर्मसिद्धिः प्रशस्यते ॥
 कर्मणस्तस्य मूलं हि यद्दधानो नृपः स्मृतः ।

उपोषितो नृपः स्नातः शुकवस्त्रसमाहितः ॥
 आत्मरक्षां स्वयं कृत्वा ततः शान्तिं प्रयोजयेत् ॥
 धर्मात्मा धर्मविद्येषां राजा राजपुरोहितः ।
 राजवंशगुणो येषां कुशलं तत्र वर्हते ॥

इति गौरीकृतजनमारशान्तिः ।

—०१०—

अथ गोशान्तिः, गर्गप्रोक्ता ।

व्याधयस्तु दृश्य प्रोक्ता गवां वक्ष्यामि यादृशाः ।
 उद्विम्बो हृदयग्राही पतनो मोहनस्तथा ॥
 तेषां रूपसमुत्थानन्तादृशं तद्ब्रवीमि वः ।
 शान्तिकर्म च निर्दिष्टं यादृशं तत्र निर्मितं ॥
 राक्षो गोष्ठेषु या गावो विव्रसन्ति यतस्ततः ।
 उद्विम्बो नाम स व्याधिस्तोनैव प्रजायते ॥
 अशुप्रसोचं कुर्वन्ति नयनात् प्रपतन्ति च ।
 हृद्रोगं तं विजानीयाद्गोषु रोगं विनिर्ह्रियेत् ॥
 शोषितं यत्र कुर्वन्ति पुरीषं सूचयन्ति वा ।
 प्रवेपमानाश्चक्षिताः पतिता व्याधिरुच्यते ॥
 दुर्द्वारमत्र कुर्वन्ति मच्छलानि तद्येव च ।
 भविष्यान्मंत्रिप्रवन्ती च मूढसंज्ञं विदुर्बुधाः ॥
 पुरीषं पूतिकं वासां क्षौद्रमभ्यंत् प्रवर्तते ।
 तं पूतनायकं विद्याद्गोषु रोगसमुत्थितं ॥
 यदि जिह्वा विनिर्भज्य गौर्वां सन्नभिधावति ।

कलिलो नाम नान्नेह गोषु व्याधिर्भवत्यपि ॥
 रक्तानि जवनेदानि विप्रवन्ति श्रवन्ति च ।
 मक्षिकायापि लीयन्ते व्याधिं विद्यात्सुदारुणं ॥
 उत्थाय मण्डलं याति बातेन क्षिप्यते च या ।
 कर्णक्षेपगतिर्ज्ञेयो गोषु व्याधिः समुत्थितः ॥
 क्षुरेण या न शक्नोति यातुमुल्लङ्घ्यसंस्थिता ।
 स्त्रैरको नाम स ज्ञेयो गोषु रोगः समुत्थितः ॥
 यस्याः स्फुरन्ति गात्राणि रोमाण्यूर्ध्वानि सन्ति च ।
 उभौ च कर्णौ लम्ब्यते विद्यात्सं कर्णलम्बकं ॥
 ईत्येते व्याधयो दिष्टा यथेज्या एव चापरे ।
 तेषु तेषु यथोद्दिष्टं शान्तिकर्म प्रयोजयेत् ॥
 मृग्यचारो गिरःकातो निराहारः क्षमी शुचिः ।
 आकरणां स्वयं कृत्वा ततः शान्तिं प्रयोजयेत् ॥
 मन्त्राः कषायवसना मूढा ये परिचारिणः ।
 व्यङ्गाश्च खल्लिताश्चैव दूरतः परिवर्जयेत् ॥
 कार्णाक्षिषाश्च कुष्ठाश्च तथा पक्षहतानपि ।
 अन्त्यावसायिनश्चैव दूरतः परिवर्जयेत् ॥
 अश्वत्थे वा पलाशे वा समदेशे त्वनूषरे ।
 महास्थानैकपक्षे वा देवगोष्ठेऽपि वा भवेत् ॥
 मणकस्तु शुचिर्भूत्वा देवताद्युपकल्पयेत् ।
 प्रतिष्ठाप्य ततो देवान् वेदोद्गुर्यात् प्रमाणतः ॥
 पूर्वं कुशान् कुशान् मातुं लाजानुज्जोमिकांस्तथा ।
 मांसं पक्षाशनञ्चापि तथैव हिमपिण्डिकां ॥

वृत्तसर्षपतैलेन सर्षपानक्षतांस्तथा ।
 कृत्तप्रतिसरान् गन्धान् समिधस्तु समाहरेत् ॥
 उदुम्बरं पलाशञ्च खदिरं विल्वमेव च ।
 अश्वत्थञ्च शमीञ्चैव समिधस्तात्र कारयेत् ॥
 चत्वार्य्यत्र खड्गस्त्राणि पर्व्वमात्राणि कारयेत् ।
 हृद्यास्त्रिवारणास्त्रीनि उलूकस्य समाहरेत् ॥
 एतान्यस्त्रीनि धूपार्थं सर्वाण्येव समाहरेत् ।
 वचसा सञ्च संयुक्तं धूपङ्गेषु समानयेत् ॥
 सुराक्षधिरसंयुक्तं मांसं पक्वामिषन्तथा ।
 दिशाञ्च विदिशाञ्चैव बलिं कुर्यात् पदक्षिणां ॥
 गावस्तु सर्व्वगोष्ठात्तु देवगोष्ठमुपानयेत् ।
 आग्न्यधूपञ्च गन्धाञ्च ब्राह्मिणा पदक्षिणां ॥
 अग्निं प्रणीय विधिजत् परित्स्थीर्य्य समन्ततः ।
 बलेन विजयेद्यापि सुहृत्तं कर्मा कारयेत् ॥
 शान्तिमेतां प्रयुञ्जानः सावित्रीं मनसा जपेत् ।
 एषा हि वेदमाता तु हिजेः पूर्व्वमुदाहृता ॥
 लक्षणच्छागस्य देहेन कर्माभ्यां यज्ञो गोष्ठितः ।
 समिधो जूहुयाच्छान्तो सर्व्वदेव हृतेन च ॥
 रक्षोघ्नतैलङ्गशरं रत्नमाग्नेन संयुतं ।
 एवं तु जुहुयादग्निं जङ्गोऽगस्य बिनाशनं ॥
 पुण्यकर्म्मण्य ज्ञानस्य गोष्ठितं हवयेत्ततः ।
 यावनं कदुतेजसञ्च आभिः दृष्टानुपातनं ॥
 शमीमव्यस्तु बलिषः जगत् यावकल्पया ।

रक्षातैलेन संयुक्तं व्याधिः स्नात्वात्र मोहकः ॥
 पाण्डुरस्य तु क्वागस्य वसां हृदयमेव च ।
 मधु सर्पिष जिह्वाश्च जुहुयात् पूतनागृहे ॥
 अश्वत्थोदुम्बरः समित् ।

पलाशखादिरीमांसैः व्याधिः साम्यति दारुणः ।
 कृष्णग्रीवस्य क्वागस्य क्वागत्या वा तथा भवेत् ॥
 शोणितं सर्पिषा युक्तं जुहुयाद्दारुणामये ।
 वयोद्वयस्य क्वागस्य वसां हृदयशोणितं ॥
 अरिष्टाकृतसंयुक्तं कण्ठक्षेमस्य नाशनं ।
 घृतं सर्पपतैलञ्च हृदयं कुक्कुटस्य च ॥
 यथोपनीताः समिधा ह्वायेच्चस्वकर्णिके ।
 गवां शान्तिं यथोद्दिष्टां यः प्रयुक्तां द्विजर्षभ ॥
 कारयेच्च गवार्थं वा जपेयुश्च शतैर्वरं ।
 तस्य पुत्राश्च पीत्राश्च धनधान्यन्तथैव च ॥
 गावश्च सम्यग्वर्हन्ते लोके कौत्सिमवाप्नुयात् ।

शिवधर्मात् ।

—०००—

ब्रह्मणा ब्रह्मपादेन स्तूयते प्रणवेन सः ।
 स शिवः शाश्वतो देवो गोषु मारिं व्यपोहतु ॥
 लम्बोदरेण देवेन गजवक्त्रेण सुस्तुतः ।
 स शिवः शाश्वतो देवो गोषु मारिं व्यपोहतु ॥
 योऽर्च्यते च सदा भक्त्या विष्णुना प्रभविष्णुना ।

स शिवः शाश्वतो देवो गोषु मारीं व्यपोहतु ॥
 सर्वरोगहरेणापि रविषा यः प्रणम्यते ।
 स शिवः शाश्वतो देवो गोषु मारीं व्यपोहतु ॥
 श्रीमतां रुचिराङ्गिणं घण्टाकर्णगणेन यः ।
 नित्यं प्रणम्यते भक्त्या हृष्टेनानन्यचेतसा ॥
 स शिवः शाश्वतो देवो गोषु मारीं व्यपोहतु ।
 नित्यं रुद्रबलीपेती रुद्रभक्तिसमन्वितः ॥
 घण्टाकर्णगणो देवः शिवज्ञानविधायकः ।
 शिवयोगानुभावेन गोषु मारीं व्यपोहतु ॥
 नमः शिवाय देवाय महादेवाय भाविने ।
 रुद्राय स्नानवे नित्यं हरायोपाय ते नमः ॥
 परमेशाय सिन्धाय मन्त्रसिद्धिप्रदायिने ।
 चाम्बकाय महेशाय अनन्ताय नमोनमः ॥
 अभिमन्त्र्य सदा तीर्थमेतैर्मन्त्रैर्यथाक्रमं ।
 प्रार्थयित्वा गवां देवं ततः सिद्धिर्भविष्यति ॥
 य इदं पठते गोषु प्रस्थाने वा समागमे ।
 आयुश्चान् बलवान् भोगी श्रीमानर्थपतिर्भवेत् ॥
 देहान्ते च परं स्नानं स गच्छेद्वाच मगयः ।
 सर्वपापविशुद्धयै गोशान्तिकमिदं पठेत् ॥

इति गोशान्तिः ।

—०—

सुश्रुतो रदराजश्च गर्गो मित्रजिदेव च ।

पृच्छन्ति वाहनागारं शालिहोत्रं तपोनिधिं ॥
 हयानां मरुको घोरः कथं जायेत वै प्रभो ।
 कथं वा शान्तिकं तेषां एतच्छुभ्रुत तां वद ॥
 तानुवाच महतिजाः शालिहोत्रस्तपोनिधिः ।
 स्थानेऽशुभे स्थापितानां सशस्त्रे वाघसंघहे ॥
 हयानां मरुको घोरो जायते नात्र संशयः ।
 यस्य वा जम्बूनक्षत्रं कर्मेजं वाघ मानस ॥
 मघादिकं सानुदायं वैनाशिकमद्यापि वा ।

जम्बूनक्षत्राच्चतुर्धदशमषोडशाष्टादशानां नक्षत्राणां मानसा-
 दयः संज्ञाः ।

पीड्यते सौरिचर्याद्यैर्यदि वाप्यथ राहुना ।
 त्रिविधैर्वा तथोत्पातैस्तस्य स्याद्वाजिमारुचं ॥
 यस्य वै ब्राह्मणाः क्रुद्धा देवा वा पितरोऽप्यथ ।
 विनायकोपसृष्टो वा क्रुद्धा वा यस्य वाजिनः ॥
 हयमारुतु तस्य स्यात् स तु शान्तिकरो भवेत् ।
 न वर्धन्ते हयात् पुत्रा रोगैः पीड्यन्ति चापरे ॥
 स्थानाद्विवर्त्तनं कार्यं शल्योदरमिव वा ।
 कृत्वा कुर्वीत तत्रैव वासुदैवतपूजनं ॥
 तथा नक्षत्रपीडायां स्नानं विहितमाचरेत् ।
 पीडकश्च ग्रहः पूज्यो नक्षत्रमपि पीडकं ॥
 विनायकोपसृष्टेन पूज्यो गणपतिर्भवेत् ।
 मितश्च संमितश्चैव तथा शालकटं कटो ॥
 कृष्णपङ्क्ति राजपुत्रश्च पूज्यो वै चाम्बिका तथा ।

यस्य वै ब्राह्मणाः क्रुद्धाः पूज्यास्त्वे ते न चान्यथा ।
 देवानां पूजनं कार्यं यस्य क्रुद्धा दिवौकसः ॥
 राज्ञो च बाहनागारे यदालिन्दापकर्षणं ।
 कृते स्यात्तत्र कर्त्तव्यं गन्धर्व्याणाञ्च पूजनं ॥
 अदौपे स्थापिते स्थाने तथा शुचिविवर्जिते ।
 स्थानापकर्षणं कृत्वा त्रियः पूजा विधीयते ॥
 उच्चैः श्रवाद्यः पूज्या यस्य क्रुद्धास्तरङ्गमाः ॥
 हयमारे तु संप्राप्ते हयानां वाप्यपद्रवे ।
 इमं शान्तिं प्रवक्ष्यामि तस्मै निगदतः शृणु ॥
 मोमयेनानुलिप्ते तु शुभे देशे पराहितः ।
 अहीराचोषितो भूत्वा शान्तिकर्म समारभेत् ॥
 धीतशुक्लास्वरधरः शुक्लमान्यानुलिपनः ।
 सोऽश्वीषालङ्कृतः यत्न्या हयैस्तैः शुचिभिः सह ॥
 चत्वारो ब्राह्मणाद्यास्य सहायाघूततन्दिताः ।
 ऋग्वेदपारगश्चैको द्वितीयो यजुषां वरः ।
 तृतीयः सामविद्भगव्यस्तर्थाप्यशर्षणः ॥
 सर्वे व्यङ्गाः कुलीनाश्च शुचयः शीलसंयुताः ।
 गृहीतास्वरसम्बोताः षड्विक्कक्रास्तास्तथा ।
 मध्येऽग्निकुण्डं कुर्वीत मण्डलन्तु ममायतं ॥
 त्रिदिक्षु विन्यसेत् कुम्भान् पुर्णानाघभिर्वाणिना ।
 रमपात्रं न्यसेत्तेषु ऐशान्यादिक्रमेण तु ॥
 सर्पिषः पयसो दध्ना मधुनश्च यथाक्रमं ।
 कुण्डस्य पूर्वभागे तु कुर्याद्देवैश्वरं पदे ॥

दक्षिणे तु यमं कुर्याद्दक्षिणं पश्चिमे तथा ।
 उत्तरे च तथा भागे कुर्याद्वैश्वणं प्रभुं ॥
 सर्वांस्तान् पूजयेद्विप्रा गन्धमात्यानुलेपनैः ।
 वस्त्रैर्धूपैरलङ्कारैस्तथैव वैद्यपूजनं ॥
 तेषामवाप्य तस्मिन्मन्त्रराज्येन पावकं ।
 यजुर्वेदविदः पूर्वं जपेदेन्द्रान्विशारदः ॥
 याम्ये सोमं सामगस्तु वारुणं बह्वचोपि च ।
 मन्त्रं कुबेरसंयुक्तं जपेद्विद्वानथर्वणः ॥
 सुवर्णमङ्गतं वामः कांस्यङ्गाच्च पृथक् पृथक् ।
 पञ्चाङ्गां दक्षिणा दत्त्वा हयमारात् प्रमुच्यते ॥
 हयमारे तु संप्राप्ते हयानां वाप्युपद्रवे ।
 इमां शान्तिं प्रवक्ष्यामि तस्मै निगदतः शृणु ॥
 पूर्वोक्ते तु शुभे स्थाने पूर्वोक्तविधिना ततः ।
 अग्निः खण्डं दिशोऽग्न्यां पूर्वं वै पूर्वदक्षिणे ।
 भूमौ कुर्वीत देवानां मण्डलेष्वपि पूजनं ॥
 अथ विपत्यं कार्यं नैवकार्यं स्वथर्वणः ।
 आग्नेये त्वय दिग्भागे वह्निपूजा विधीयते ॥
 ऐशान्यां पूजनं वायोः पूर्वं तु सवितुर्भवेत् ।
 सावित्रस्तु जपेन्मन्त्रं यजुर्वेदविशारदः ॥
 आग्नेये वह्नुवक्ष्येव सोमं सामविशारदः ।
 सर्व्वमन्यत् कर्त्तव्यं पूर्वोद्दिष्टं विजानता ॥
 उत्पातेषु निमित्तेषु वाजिनामिङ्गितेषु च ।
 प्रायश्चित्तं प्रकुर्वीत ततः सर्वं प्रशाम्यति ॥

ह्यशालोत्तरे भागे स्थण्डिलं तत्र कल्पयेत् ।
 तिराचोपोषितस्तत्र शान्तिं कुर्यात् पुरोहितः ॥
 नववासीभिराचमं स्थण्डिलान्तु चतुर्दिशं ।
 उदकुशस्तु चत्वारः स्थापनीयास्तुर्दिशं ॥
 रसपात्राणि देयानि पूर्णं कुम्भे च सुश्रुत ।
 शिरः स्नातः कृतोष्णीषो यथावत् कृतमण्डलः ॥
 शुक्लवासा जितक्रोधो बहुत्वेन समीरितः ।
 आहुतो जुहुयादङ्गो ज्ञानेन सुसमाहितः ॥
 पितामहाय रुद्राय स्कन्दाय वरुणाय च ।
 अग्निभ्याश्चैव सूर्याय शक्राय च तथामये ॥
 वाहाय वाक् हरये अग्नये देव्यै तथैव च ।
 गन्धर्वेभ्यश्च सोमाय उच्चैः श्रवस एव च ॥
 देवता या भवेत्तत्र उत्पातस्य तु कारणी ।
 मण्डले तां विदित्वा तु बलिभिर्द्यापि पूजयेत् ॥
 अन्तमष्टाधिकं हुत्वा प्रतिदेवं पुरोहितः ।
 ततस्तु पूजनं कुर्याद्देवानान्तु विशेषतः ॥
 पादयोज्ञेपकादीपधूपदीपादिलेपनैः ।
 अधुपाद्यसंसमिधं विप्रा भोज्याः सदक्षिणाः ॥
 एकैकदेवसुहृदस्तद्ग सप्त च पञ्च वा ।
 सुवर्णसहितं वासी गावश्च कांस्यं दक्षिणां ॥
 निष्कृत्य तदा देयं तिराचान्तु महीभुजा ।
 पुरोहिताय तुष्टार्चयेत् तुष्टत्वसो हिजः ॥
 वाहनान् पूजयेत् सर्वान् स्निग्धवाच्यं हितोत्तमान् ।

एतच्च शान्तिकं कार्यं नित्यमौत्पातिके सदा ॥

रक्षोघ्नस्तु यशस्वस्तु सर्वोत्पातविनाशनं ।

राक्षो विजयदं पुण्यं धनधान्यविवर्धनं ॥

इति शालिहोत्राश्वशान्तिः ।

— ००० —

अथ गजशान्तिः ।

तत्र पालकलक्षणाणि पालकगृहीतगजलक्षणांश्चाभिधा-
याह पालकाप्यः ।

क्षरस्तोत्रोपसर्गाय चरतीत्यभिलक्षयेत् ।

बल्लन् स कुक्षरान् हन्ति श्रेष्ठं वापि मतङ्गजं ॥

इमां तत्र क्रियाङ्कुर्यात् श्रेयोर्थी नृपतिः स्वयं ।

पूजयेद्यज्ञतो रुद्रं विष्णुं सर्वांश्च देवताः ॥

राक्षो भूतबलिचापि कर्त्तव्यो मांसशोणितैः ।

सर्वासु गजशालासु चत्वरिण्यवरेषु च ॥

नगराक्षहसा राक्षो निर्णयेद्धारणान् बहिः ।

दिशि प्राच्यामुदीच्यां वा स्नानं जनमनोरमं ॥

मनोरमतारान् देशानपरेङ्गि मतङ्गजान् ।

सञ्चार्य्यचरणा राजन् हृत्तभङ्गटणाग्रजाः ॥

यथाविधि महामन्त्रैरेकाहारैस्तु संयतैः ।

सप्ताहमेव सञ्चार्य्या जपहोमपरायणैः ॥

पुरोहितस्तु कुर्वीत शान्तिं पापप्रणाशनीं ।

नर्पयित्वा द्विजांस्तत्र दक्षिणाभिष पूजयेत् ॥

महीमात्राय सप्ताहं शुचयः समितवताः ।
एकशतं निशि स्नात्वा भुञ्जीरन् हविषोदनैः ॥
वृषभकृत्वाहारानिकस्थाने निवेगयेत् ।
आरण्यकत्वं तेषान्तु सङ्कल्पं मनसा भवेत् ॥
हविस्थानेषु यून्यस्तु गावः सप्ताहमेव च ।
वासयेत् सह वत्सेषु वृषभैर्विहितैस्तथा ॥
द्वितोरणं निवेष्टाय जलस्रोभयनीरजं ।
स्वस्तिकस्तोषु चैकोकीभवेद्द्रोणोऽथ काञ्चनः ॥
महामात्राय तत्रैव स्युस्ते स्थण्डिलवासिनः ।
सुवर्णानां शतञ्चात्र त्रिन्यस्यमुदकं द्विज ॥
सामान्ययज्ञप्रोक्तं यत् स्नानं तदुपकल्पयेत् ।
तोरणे च भवेत्कार्यं चतुर्मासविधी तथैव ॥
मन्त्रैर्जुहुयाद्विप्रस्तु समिद्धिर्जातवेदसं ।
सामान्ययज्ञं निर्वर्त्य यथाप्रोक्तं विधानवित् ॥
मन्त्रैस्तु जुहुयादेतैः समिद्धिर्जातवेदसं ।
इन्द्रेः सह मरुद्भिश्च गजेनैरावतेन च ॥
उत्पातन्तु निरुद्धीयात् उदोच्यां आपयेत् गजान् ।
एवं कृत्वा हविःशेषैर्बलिं प्रतिदिशं हरेत् ॥
मन्त्रैस्तैरेव पूर्वोक्तैर्हवेभ्यस्तैभ्य एव च ।
दक्षिणस्यान्दिशि विप्रो ततो होमं समाचरेत् ॥
नामाग्नये विश्वेभ्यश्च भूतिभ्योऽथ बलिमया ।
दक्षिणायां वारुणन्तु हरिद्राक्तोदनं बलिं ।
द्विप्रो मन्त्रमिमं राजन् नियतेः सुस्वनैर्जपन् ॥

ये च पश्चिमायान्दिशि समान्विता रुद्रा रुद्रमनुष्याः रौद्राणि
च भूतानि रोमाणि व्याधयस्य येत्वारोग्यं व्याधयो जीवितं चाय-
त्तन्तेभ्य एव बलिः ।

पूर्वोत्तरावान्दिशि तु हुत्वा हरेन्द्रायोदनम् ।

सुसमाहितो बलिं हरेष्वान्यायमिमममङ्गं विप्रो यज्ञेन योजये-
दिति नमो राक्षस-पिशाच-गन्धर्व-रक्षोभ्यो येषु पिबं संस्मर्य एव
प्राप्तावायत्तास्तेभ्य एव बलिरिति बलिं सर्वेभ्यो दिशमिमं
मङ्गमुदीरयेत् ।

धम्ये पार्श्वानां सत्वानामपार्श्वानां सत्वानामधिपतये एव
ते बलिः वायोरान्तरिक्षाणां सत्वानामधिपतये एव ते बलिः ।

रुद्राय च यजान्यायं क्रमेणोपहरेद् बलिं ।

ये ह्येषु ये तीर्थेषु ये वीक्षिषु तेभ्यो नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो
हराम्यहं ।

येऽन्तरिक्षे ये निविष्टास्तु पृथिव्यां ये च संश्रिताः ।

तेभ्यो नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो बलिमेभ्यो हराम्यहं ॥

हुत्वा हुत्वा बलिं सम्यक् द्विजातीन् स्मृतिवाच्यं च ।

पूर्वोक्तेन विधानेन रागाक्षीराजते क्रमात् ॥

दत्त्वावगाहन्तेषाम् ततस्तीरं परं नयेत् ।

हारे द्वितीये नीराज्यास्तो नैव विधिना पुनः ॥

नीराजपेक्षं पञ्चाहं यथा राजजनन्ततः ।

सप्तमे संप्रवेश्येतान् क्षतकोतुकमण्डलान् ॥

गीतवादित्रशब्दैश्च सहजान् स्मृतिवाच्यं च ।

सर्ववोजैः फलैः पुष्पैः शालगन्धैश्च पूजितान् ॥

सहिरण्यास्ततः कुम्भान् शालादारेषु विन्यसेत् ।
 संसृष्टालङ्कृतान् कृत्वा सर्वसम्भारपूजितान् ॥
 भरहाजो मरुद्विष ऋद्रीभूष उदाहृतः ।
 तथा पुनश्च शालायां क्षेममङ्गलसम्भृतां ॥
 प्रविशंशानिरुद्धस्तु स्तम्भे तिष्ठन् शरच्छतं ।
 अरोगी बलवान् भूयो राज्यं च विजयावहः ॥

तथा ।

अङ्गस्तु राजा चम्पायां पालकाप्यं स्म पृच्छति ।
 चातुर्मासीषु सर्वासु कथंसीराजयेद्भजान् ॥
 प्रब्रूहि पृष्टमेतस्मै यथावच्छ्रुतिमत्तम ।
 संपृष्टस्त्वङ्गराजेन पालकाप्यस्ततोऽब्रवीत् ॥
 इदं शृणु महाराज यस्मान्त्वं परिपृच्छसि ।
 रोमाय नैर्ऋतिश्चैव तथा रत्नांमि पन्नगाः ॥
 पिशाचा गुह्यकाश्चैव गन्धर्वा राजमास्तथा ।
 दानवाश्चैव यक्षाश्च कौमाराद्यापि ये यद्गाः ॥
 ये अघोरा जयाद्याश्च ये च रुद्राश्च देवताः ।
 उपसर्गाश्च ये केचित् पीडानक्षत्रजाश्च ये ॥
 बलिं वा भोक्तुकामाश्च हन्तुकामास्तथाऽपरे ।
 तथा क्रोडितुकामाश्च घोररूपा महादहः ॥
 देवोपघाता ये चान्ये तत्र शान्तिं व्रजन्ति ते ।
 एतदर्थं महीपाल गजनीराजनी श्रुता ॥
 कार्तिकी प्रथमा राजन् द्वितीया फल्गुनी तथा ।
 आषाढी तु तृतीया स्वात् तिस्रो नीराजनाः श्रुताः ॥

चतुर्मासी भवेत् कुर्याद् गजानां हितमिच्छता (१) ।
 यथाहं देवतानाञ्च सिद्धानाञ्च बलिं हरेत् ॥
 उष्ट्रान् पिकांश्च जालांश्च धान्यन्दधेष्टं मधु ।
 पायसं मधु कल्पाषं लोहितान्नं गुडोदनं ।
 सुप्रतिष्ठं भद्रपीठं दिव्यमाभ्यानुलेपनं ॥
 दीर्घायान् हरितान् दर्भान् विप्राणाञ्चैव भोजनं ।
 नवं शिवञ्च विधिवद्भोजोपस्करमाहरेत् ॥
 आक्रान्तस्तगरोशीरं प्रियङ्गुञ्चोपराजयेत् ।
 सर्वरक्षोषधैश्चापि धूपमाभ्याञ्जनानि च ॥
 रक्षाविधानं कुर्वीत गजानां स्वस्तिवाचनैः ।
 गमागमेपि कर्त्तव्या शान्तिः सन्ध्याहयेपि च ॥
 पुरोहितो दक्षिणतो जुहुयाद्व्यवाहनं ।
 उत्तरे जुहुयाद्दक्षः शुचिवस्त्रः समाहितः ॥
 आहृतक्षीमवसनः शुचिर्भूत्वा कृताञ्जलिः ।
 अष्टौ देवान् नमस्कृत्य गजानां स्वस्तिवाञ्च च ॥
 प्रजापतिं च विष्णुञ्च यमञ्चैव शचीपतिं ।
 रुद्रञ्च बलदेवञ्च वरुणं धनदं तथा ॥
 सेनापतिं नमस्यामि गजानां स्वामिनां प्रभुं ।
 यज्ञभाण्डमयानीय यज्ञभूमिं प्रक्षपयेत् ॥
 पूर्वोणान्तरतो वापि ब्राह्मणानुमते शिवे ।
 प्रागुदक् प्रवणे देशे स्निग्धौषधिनगे समे ॥
 पदक्षिणोदके चैव सर्वतः सुपरिक्रमे ।

गोमयेनोपलिप्याथ यज्ञभूमिं प्रवेशयेत् ॥
 तस्मात्त्वनरकं तत्र भूमादृष्टादरवयः (१) ।
 नोद्यानदेयोपहतान् नोर्द्विशृङ्खान् दृढान् वृषान् ।
 भगुगम्यान्वान् वृक्षान् कृत्तुञ्चानसुस्थितान् ।
 उत्क्षेपान् हादगारतीन् वारयेत् विचक्षणः ॥
 हस्त्यागाराणि सर्वाणि गोमयेनोपलेपयेत् ।
 शुचीनि कारयित्वा षट् बलिभयं विभूषयेत् ॥
 स्थानेषु पुष्पमालाश्च करणे तोरणानि वा ।
 राजाथ प्राजनान् सर्वान् गृहीत्वा चाक्षतोदकं ।
 प्रोक्षयेत् स्तम्भमूलानि धरणीं परिवास्तथा ।
 परिकर्मिणः सुस्नाताः शुचयः शुकवाससः ॥
 यावन्निर्व्वर्णकाले तु जलाभ्यासं नयेद्भजं ।
 शालिञ्ज जुहुयाच्च ब्राह्मणथैव वाचरेत् ॥
 द्रव्यानि हस्त्यागाराणि तथा प्रश्रवणानि च ।
 वरुणं तीर्थकन्याश्च नागानुदकदैवतान् ॥
 सागरान् सरितथैव उदपानं सराणि च यः ।
 तडागानि च सर्वाणि सुरानभ्यर्चयच्छुचिः ॥
 प्रायश्चित्तानि कृत्वा च ततः पश्चापयेद्भजं ।
 सर्व्वरत्नौषधैर्बलिः पूर्ण्यैव विचक्षणः ॥
 चन्दनैश्च यथा प्रोक्षेत् स्नापयेदृतुपूर्व्वगः ।
 स्नातस्य तस्य नागस्य कारयेदाहृतानि तु ॥
 हारिद्रं पिष्टमादाय पूर्यात् पश्चाद्भुलान्यथ ।

१. लोकार्द्धमदं न सम्यक् प्रतिभाति ।

मङ्गलानि च सर्वाणि कारयेत्, विचक्षणः ॥
 रोचनया प्रियं यच्च सम्यग्ग्रामं समालभेत् ।
 अङ्गि खलङ्कृतं हृष्टं तुर्याभिः समवसरेत् ॥
 शोभितं वैजयन्तीभिर्न बद्धैः पञ्चरत्नभिः ।
 काञ्चना राजता वापि दिव्यवासः समन्विता ॥
 यथिता क्षौमसूत्रेण नागरोगोरमित्रिता ।
 सन्धूता पर्वताग्रे च सर्वदेवनमस्कृता ॥
 शतपासीनसुहार्षे गजानां स्वस्तये भवेत् ।
 धारोम्बायैव नागानां नृपस्य विजयाय च ॥
 मध्ये च स्वस्तिकं कुर्यात्स्वस्ति गच्छन्ति कुञ्जराः ।
 अवकीर्त्य तु लाजैश्च यज्ञभूमिं समन्ततः ॥
 कुशोदुम्बरशाखाभिः सर्वतः परिताडयेत् ।
 काष्ठैः पलाशजैश्चापि सिद्धकोदुम्बरैस्तथा ॥
 ज्योतीषिं जनयेद्यावत् समिद्धं वाचकं ततः ।
 गृहीत्वा घोदकं पात्रं प्रीक्षयेद्दव्यवाहनं ॥

अदिते नमस्ते । सरस्वति नमस्ते । देवसवितर्नमस्ते ।

उत्तिष्ठाय विवर्हस्य प्रभावं त्वरितं मम ।

विबोधयत्यम्बरसः सुभहस्ताश्च ब्राह्मणाः ॥

योगं मम प्रयच्छस्व प्रसन्नो हव्यवाहन ।

शुवेष्णव्यं गृहीत्वाद्य गान्तिर्भवतु हस्तिनां ॥

स्वाहा । समिधे स्वाहा । सुवाय स्वाहा । भूः स्वाहा ।

भुवः स्वाहा ।

बुद्धो बोधय भूतानि ब्रह्माणश्चामितोजसं ।

सहस्राक्षं भूतपतिं कुबेरं वरुणं यमं ॥
 विष्णुश्चैव महात्मानं तथा नारदपर्वतो ।
 उद्दालकं काश्यपश्च मरीचिं भृगुमेव च ॥
 ऋषिमुख्यान्ममस्यामि सर्व्यानेव कृताञ्जलिः ।
 आसिष्याज्याहुतिं तेषां भूयः स्वस्ति गजे पुनः ॥
 भवन्त्यरोगाः राजानः समृध्यन्ताश्च याजकाः ।
 द्विजे दानं प्रयच्छन्तु बलारोग्ययशांसि च ॥

स्वाहा ।

दक्षं भूतानि गन्धर्वाः ओषध्यश्च दिशोगणाः ।
 आदित्यमरुतश्चैव अश्विन्यो च तथा ग्रहाः ।
 गजानां संप्रयच्छन्ति बलारोग्ययशांसि च ॥

स्वाहा ।

ऐरावतं पुष्पदन्तं कुमुदं वामनं तथा ।
 पौण्डरीकं नीलवन्तं सार्वभौमं सुतेजसं ॥
 सुप्रतीकश्च नागेन्द्रं महाबलिनमेव च ।
 महागजांस्तथैवान्यान् नमस्यामि कृताञ्जलिः ॥
 आसिष्याज्याहुतिं तेषां भूयः स्वस्ति गजे पुनः ।
 भवन्त्यरोगाश्च गजाः समृध्यन्ताश्च याजकाः ।
 प्रयच्छन्तु च नागानां बलारोग्ययशांसि च ॥

स्वाहा ।

आच्येयं जमदग्निश्च वसिष्ठं पुलहं क्रतुं ।
 ह्रीर्षं वरुणश्चैव पुलस्त्यं चवनं तथा ॥
 वेदीक्षमाश्च स्वाहाश्च पर्वतं चात्र मालिनं ।

हिमवत्प्रमुखश्चापि समेतान् कुलपर्वतान् ॥
 तथैव सर्वतोऽनन्तान् नमस्यामि कृताञ्जलिः ।
 दिशो दश च ये नागा सर्वकालमधिष्ठिताः ॥
 भूमिधराः भुजङ्गाश्च नमस्यामि कृताञ्जलिः ।
 आसिन्ध्याज्याहुतिं तेषां भूयः स्वस्ति गजे पुनः ॥
 भवन्तूरोगाश्च गजाः समृध्यन्ताश्च याजकाः ।
 प्रयच्छन्तु च नागानां वर्णारोग्ययमांसि च ॥

स्वाहा ।

भूमिधरान् अभिमतान् महातेजान् महाबलान् ।
 देवदत्तौघहाभोग्यान् शुचिर्भूत्वा कृताञ्जलिः ॥
 अनन्तं प्रथमं वन्दे सर्वलोकाभिपूजितं ।
 कर्कोटकं धूमविधं वासुकिश्च महाबलं ॥
 कालीयश्चापि वन्दित्वा बलमुत्पलमेव च ।
 हरिश्च विद्युज्जिह्वश्च कवलाश्वतरावुभौ ॥
 उदयन्तमथादित्यं जिह्वायां परिलेहति ।
 प्रपततं तं पुनश्चापि लाङ्गुलेन निषेवते ॥
 अनुरागं महाभागः पञ्चशीर्षो महाबलः ।
 नागो मन्त्रिग्रहश्च ये चापि धरणीधराः ॥
 कुर्वन्तु स्वस्ति नागानां निर्वाणे तरणे तथा ।
 अन्तर्भूमौ च ये नागा ये च ये दिशि गोचराः ॥
 आसिन्ध्याज्याहुतिं तेषां भूयः स्वस्ति गजे पुनः ।
 भवन्तूरोगाश्च गजाः समृध्यन्ताश्च याजकाः ॥
 संप्रयच्छन्तु नागानां वर्णारोग्ययमांसि च ।

उत्तरेण जपेद्दिप्रः सेनायामपि कीर्त्तनं ॥
 सेनापतिं शक्तिधरं गजानां स्वामिनं प्रभुं ।
 षष्ठोपि यं क्रोश्रिपुं पण्मुखं द्वादशेक्षणं ॥
 रत्नमाल्याम्बरधरं घण्टाभरणकुण्डलं ।
 ब्रह्मकं द्वादशभुजं कार्त्तिकेयं दुरासदं ॥
 रत्नप्रतिसरं माल्यं प्रकृतं कामचन्दनैः ।
 अर्चयेद्गुडसंयावपायमस्वस्तिकादिभिः ॥
 पूर्वदक्षिण दिग्भागं दक्षिणाञ्च दिशं तथा ।
 तथैव नैऋतीं वन्दे पश्चिमाञ्च दिशं तथा ॥
 वायव्याश्चोत्तराश्चैव तथा पूर्वोत्तरां दिशं ।
 ततोऽर्द्धाञ्च दिशं वन्दे अदितिं देवमातरं ॥
 अधिपत्रये वसन्नागास्ताम्रमस्ये कृताञ्जलिः ।
 आसिन्ध्याज्याहुतिं तेषां भूयः स्वस्ति गजे पुनः ॥
 भवन्तुरोगाय गजाः समृध्यन्ताञ्च याजकाः ।
 संप्रयच्छन्तु नागानां वर्णारोग्ययशांसि च ॥ स्वाहा ।
 स्वस्तिकापूपसंयावमधुलाजा घृतं तथा ।
 हिरण्यञ्च सुवर्णञ्च वासांस्यभिनवानि च ॥
 मैत्रेयञ्च सुराचैव वाचैषा वरवारुणी ।
 गुडोदनञ्च मालञ्च मण्यं कल्पायमेव च ॥
 सर्वमेतदुपन्यस्तं ब्रह्माणामशतो हितं ।
 प्रतिगुप्तं सुगुप्तं वा बहुधा वद पाप्मनः ।
 संप्रयच्छन्तु नागानां वर्णारोग्ययशांसि च ॥

स्वाहा ।

व्यपोहतु च पापानि इह राज्ञः शतं समाः ।
 त्वया विसृष्टा आरण्या मानुषाणामसङ्गताः ॥
 अविसृष्टं त्वया नास्ति भोक्तुमर्हसि कामदः ।
 अपूतिमांसमासारं ह्युपधापरिचर्जितं ॥
 अनारुढं मनुष्यैस्तु तमारुह्य च कुञ्जरं ।
 गृहणे च यथातत्त्वं सेनान्ये भद्रमस्तु ते ।
 संप्रयच्छन्तु नागानां वर्णारोग्ययशंसि च ॥

स्वाहा ।

पादायधं ताम्रचूडं शतपत्रं मनोरमं ।
 विचित्रपत्रकाञ्च कुक्कुटं दर्शयामि ते ॥
 कुक्कुटं मे गृहाण त्वं सेनानि भद्रमस्तु ते ।
 संप्रयच्छन्तु नागानां वर्णारोग्ययशंसि च ॥

स्वाहा ।

प्रभूतवर्णलाङ्गूलं सर्वाङ्गसुसमाहितः ।
 धीतमामलकं कल्केः क्वागं सन्दर्शयामि ते ॥
 क्वागं मम गृहाण त्वं सेनान्ये भद्रमस्तु ते ।
 संप्रयच्छन्तु नागानां वर्णारोग्ययशंसि च ॥

स्वाहा ।

सहस्रशूलावनतं देवराजविलेपनं ।
 प्रवरं सर्वमूलानां उशीरं दर्शयामि ते ॥
 उशीरं मे गृहाण त्वं सेनान्ये भद्रमस्तु ते ।
 संप्रयच्छन्तु नागानां वर्णारोग्ययशंसि च ॥

स्वाहा ।

नैराजिनीं त्विमां मालां सहस्राक्षेण धारितां ।
 सभूतां देवतानाञ्च राक्षसानां मनोहरां ॥
 प्रीतिसञ्जननीं देवीं भूतनागनिषेवितां ।
 आबाहेषु विवाहेषु क्षेत्रनीराजनीषु च ॥
 नागानाञ्च प्रवेशेषु मङ्गल्या वारुणी स्मृता ।
 सुरा सुगन्धा सुरमा मदोत्तरमना समा ॥
 पूजिता देवमनुजैः प्रसन्नी दर्शयामि ते ।
 वारुणीं मे गृहाण त्वं सेनान्ये भद्रमस्तु ते ।
 संप्रयच्छस्व नागानां वर्णारोग्ययशांसि च ॥

स्वाहा ।

पुरा देवासुरे युहे संग्रामे तारकामये ।
 सेनानीः संस्कृतो देवैर्देवानाममितद्युतिः ॥
 रक्ष सैन्यं सराजानं सेनान्ये भद्रमस्तु ते ॥
 संप्रयच्छस्व नागानां वर्णारोग्ययशांसि च ।

स्वाहा ।

इमे शङ्खा मृदङ्गाश्च कांस्यवाद्यानि यानि च ।
 वीणासर्पाणि पणवा गोधा परिवदन्तकाः ॥
 आहुता मङ्गलार्थं वै वाद्यस्ते मधुरस्वराः ।
 हृद्देकरात्रं दिवसं विजयाय नृपस्य च ॥
 विविधानि च रूपाणि सम्यग्बुद्धा हृताग्ने ।
 ह्वयमाननिमित्तज्ञः रक्षणार्थं विनिर्दिशेत् ॥
 क्रियमाने क्षयं यान्ति यद्यग्निः सुदृढायते ।

चित्रघ्नः परुषथापि वसुगन्धस्तथैव च ॥
 अतिवर्णी विचित्रय वल्लीकाकृतिसंस्थितः ।
 होत्रिदायी च यो वल्लिर्हिजानां जयमादिशेत् ॥
 कृत्तमानः स्फुलिङ्गाद्यैः राज्ञो रूक्षो विरूपवान् ।
 धूमवातगुतथाय वर्गगन्धः समथयः ॥
 गोसुखाकृतसंस्थानो गवां संचयमादिशेत् ।
 चिरेणोत्तिष्ठते यस्य क्षिप्रश्चैव प्रशाम्यति ॥
 कृष्णवर्णी विधूमाश्च कृशरागन्ध एव च ।
 ह्वयमानस्तद्ग वज्रिगन्धति नृपतेर्विधं ॥
 गृध्रोलूकनिभथापि राज्ञो मरणमादिशेत् ।
 अश्वक्त्वर्णी दुर्गन्धो विप्रकीर्णशिखोऽनलः ॥
 क्षिप्रं विनागयेद्वाङ्गं सामान्यं सपरोहितं ।
 राज्ञो मरणमेवापि शवगन्धो यदाऽनलः ॥
 हीनस्वनो यदा वज्रिः कुणपथ हुताग्नः ।
 सगन्धः स्याद्विवर्णय हतमाख्याति पार्थिवं ।
 श्यावः पाटलकश्चैव वज्रिर्विधनमादिशेत् ॥
 विप्रकीर्णशिखथापि वायसप्रतिनिस्वनः ।
 राज्ञः कोषस्य नाशाय युवराजवधाय च ॥
 तद्विधं कुरुते वज्रिगतिधूमोद्यतिस्वनः ।
 करे चोरसि दाहो च होतवाही च यो भवेत् ॥
 तत्रार्थहानिं जानीयात्तस्मिन्नत्पातदर्शने ।
 करीषधूमसङ्काश इन्द्रायुधसमद्युतिः ॥
 हस्त्यश्वस्य चयं क्षिप्रं तद्विधो वज्रिरादिशेत् ।

कर्वूरवर्णी विकृतस्तु तथा चर्मसुगन्धिकः ॥
 जननाशं तदाख्याति क्लृप्तमानो दृताशनः ।
 हविर्हरिद्रावर्णाभो लेपमानो यथाऽनलः ॥
 निगडाकृतिसंस्थानस्तथा शङ्खनिभाकृतिः ।
 पाशाकृतिनिभश्चापि राज्ञो बन्धनमादिशेत् ॥
 विष्कृन्नशतसूर्याणामाकृतौ रुदिनस्वनः ।
 वामते यस्य गत्वा च धूमः प्रतिनिवर्त्तते ।
 मत्स्यगोणितगन्धानां तुङ्गो यज्ञाय जायते ।
 राज्ञः पुत्रबन्धं विद्यात् शास्त्रप्रोक्तेरिमेहिजः ॥
 अशुभान्यवमादीनि न निवेद्यानि भूपते ।
 प्रामादाद्रिनिभश्चापि स्त्रीपशुः कलशाकृतिः ॥
 प्रदक्षिणाकृतिशिखी हंसरत्नीदधिस्वनः ।
 शङ्खप्रभमथाश्वत्थानामेव दुन्दुभिनिस्त्रयः ।
 सुवर्णरत्नप्रख्यः क्षीरपायमगम्यवान् ॥
 शस्त्राणां कवचानाञ्च वारणानां महोपते ।
 रासते यस्य चात्पथं संग्रामे जयमादिशेत् ॥
 प्रहृष्टमनसश्चापि शुक्लाम्बरधरा यदि ।
 ईशयेयुः शुभागारन्तःसुवेज्जलक्षणं ॥
 यदा गुरुस्वप्नसन्धौ जहृद्याह्वयवाहनं ।
 महाभयं विजानीयात् नृपश्चापि गज्रादिकं ॥
 अनन्यवाहनान् पूज्यान् दिव्यलक्षणसंयुतान् ।
 गदादीनि विशिष्टेन तोयेन स्नापयेद् बधः ॥
 अन्यवाहनान् हिपक्षयान् सर्वांस्तान् समाहितान् ।

बाह्यकुम्भोदकेनैव स्नापयेत्तत्र साधकः ॥
 राज्ञे नोराजनं कुर्यात्तदहःषु च मन्त्रवित् ।
 अन्येष्वेवम्विधः कार्यः स हि रत्नाकरः परः ॥
 राजानं वाहनान्यांश्च तथान्यांश्च पुरोहितः ।
 सर्वालङ्कारसंयुक्तान् सर्वमङ्गलसंयुतान् ।
 कृत्वानुवाचयेत्पश्चाद् ब्राह्मणैरागिषा बहु ॥
 दक्षिणामतुलान्दद्याद्विगम्यां गुरवे नृपः ।
 वाहनञ्च सभूषाढामाचार्याय प्रदापयेत् ॥
 दासदासीकभृत्पिषाणामादिषु च सर्वशः ।
 सर्वालङ्कारसंयुक्तान् राजा वाह्यपरिस्थितान् ॥
 साराहैद्यापि संयुक्तान् मत्तद्विपहृथोत्तमैः ।
 ब्राह्मणैः स्वस्तिवचनेऽर्च्यं त्विगमिः सह संयुतैः ॥
 आचार्यो राजभवनं नृपं संवेगयेत् स्वयं ।
 पूर्वस्नानविशिष्टेन कुम्भतोयेन मन्त्रवित् ॥
 गजशालाञ्च सप्रोक्ष्य वाजिशालान्तथैव च ।
 सिद्धार्थतण्डुलतिलैः पुष्पैश्चाप्यवकौर्यं च ॥
 शालामध्ये नृसिंहञ्च सुदर्शनमनामयं ।
 पूजयेद् गन्धपुष्पादिसर्वालङ्कारसंयुतैः ।
 सक्तभिः लङ्गरात्रेण कुर्याद्भूतबलिं बहिः ॥
 ततः शालासु सर्वासु ब्राह्मणान् भोजयेदलं ।
 ततः सवेशने कुर्यादाचार्यो गजवाहिनं ॥
 एवं शान्तिं प्रकुर्वीत निमित्ते सति तद्गुरुः ।
 परिच्छेदस्य नृपतेर्भक्त्यवित्समाहितः ॥

सर्चकल्याणसंपूर्णः सर्वबाधाविवर्जितः ।

मुपष्टराज्यवन्तन्तु नृपस्तेन महोद्यते ॥

इति गजशान्तिः ।

— (७) —

गृहमध्ये स्थूणा विराहेत्कपोतो यायारमध्ये निपतेत् ।
 धायसो वा गृहं प्रविशेत् । गौर्गृहमारोहेत् । गौरात्मानं प्रतिधा-
 येत् । अनङ्गान् वा मुदित उक्लिखेदनग्नीं वा धूमो जायते वल्गो-
 कक्षोपजायते कृत्वाकनिर्यामक्षोपजायते । मण्डूकी अवष्टो वाम-
 येत् । स्वप्नेऽस्थिदन्तपतने गृहपतिजायां महापतयिदन्ति अन्येषु
 वा गृहोत्पातेषु अगद्वेयजनाम्ने खनप्रत्यग्निमुखान् कृत्वा स्थानो-
 पाकं जुहोति । यत इन्द्रभयामह इति पुरोऽन्यं स्वस्तिदायिग-
 स्मृतिरितियाज्यया जुहोत्याज्याहुतीरुपजुहोति यक्षो व्याख्याते ।
 शत्र इन्द्राग्नी भवतामर्वाभिः शत्र इन्द्रायकृणारानहव्या । शमि-
 न्तासो मासुवितायशयोः शत्रः इन्द्रापूषणावाजमानो । कयानचित्र-
 आभुवको अद्ययुक्ते भवानवः समनमाविति । लिटि शतं प्रशति-
 तुष्टामा धेनूवरप्रदानम् ।

अथस्त्रेण शमीपत्रेण हुतशेषं निदधाति ॥

शत्रोदेवो रभिष्टये आपो भवन्तु पीतये शंशोरमिस्रवन्तु न ।
 इति स्थानोमं चालनमाज्यशेषमुदकशेषञ्च पात्रां समानीय
 एतेषूत्पातेषु उत्पत्रेण विनयेत् । प्रोक्ष्वा तच्छंशोरावुष्णोमह
 इति ।

अन्तं संस्तुत्य ब्राह्मणान् संपूज्याशिशो वाचयित्वा शिवं शिव-
मित्यब्रुवती व्याख्यातः ।

अरुण उवाच ।

—०००००—

नानारोगहतानाञ्च आर्हितानां तद्यारिभिः ।
आदित्याराधनं मुक्ता नान्यच्छ्रेयस्करं परं ॥
तस्मादाराधयादित्यं सर्वरोगविनाशनं ।
ग्रहोपघातहन्तारं सर्वोपद्रवनाशनं ॥
पूजयानो जगन्नाथं भास्करं तिमिरापहं ।
सूर्याग्निकार्यं सततं मिथ्यार्थं सुखमाचरेत् ॥
महाशान्तिरितिख्यातं सर्वोपद्रवनाशनं ।
ग्रहोपघातहन्तारं दृढकायकरं परं ॥
यत् कृते मम सूर्येण पुरा शान्त्यर्थमादरात् ।
सर्वपापहरं पुण्यं महाविघ्नविनाशनं ॥
महोदयं शान्तिकरं लक्ष्मणममिति स्मृतं ।
तालध्वजपताकाय महावस्त्राय ते नमः ॥
स्वाहेति च दानायेह आहुतिं विसृजेद् बुधः ।
महोदराय श्वेताय पिङ्गाक्षाय महामते ॥
स्वाहा पद्माधिपतये आहुतिं विसृजेद् बुधः ।
उत्तरादिङ्मुखायेह महादेव प्रियाय च ॥
श्वेताय श्वेतवर्णाय त्रिवेदाय नमो नमः ।
शान्ताय शान्तरूपाय पिमाकवरधारिणे ॥
ईशानदिङ्मुखायेह स्वाहा ईशान आहुतिं ।

विमृजेत् खगशादूर्ल विधिवत्पावकोपम ॥
 भुते देवं महात्मानं पापकं विधिवन्मृप ।
 लोकपालमुखं देवं विगाहं यावदादरात् ॥
 एवं हुताग्निकार्येषु स्वैरं खगवरोत्तम ।
 लक्ष्मीमञ्च विधिवत्ततः शान्तिं समाचरेत् ॥
 भूर्भुवः स्वरिति स्वाहा लक्ष्मीमविधिः स्मृतः ।
 महाहोमे च वै सौर एष एव विधिः परः ॥
 कृत्वेवमग्निकार्यन्तु सौरं खगवरोत्तम ।
 लक्ष्मीमञ्च विधिवत्ततः शान्तिं समाचरेत् ॥
 सिन्दूरारुणरक्ताभः पद्मरत्नान्तलोचनः ।
 सहस्रकिरणो देवः समाश्वरथवाहनः ॥
 गभस्तिमाली भगवान् सर्वलोकनमस्कृतः ।
 करोति ते महाशान्तिं यद्वपीङ्गानिवारिणीं ॥
 सुचक्ररथमारुढः अर्पा सारमयोऽम्बुजः ।
 समाश्ववाहनो देवः शान्तये त्वस्मृतप्रभुः ॥
 ग्रीतांशुरमृतांशुश्च क्षयवृद्धिसमन्वितः ।
 सोमः सौम्येन भावेण यद्वपीङ्गं व्यपाङ्कतु ॥
 तप्तगैरिकसङ्काशः सर्वशास्त्रविशारदः ।
 सर्वदेवगुरुर्विप्रेः अथर्वविशारदः परः ॥
 वृद्धस्मृतिरितिस्थ्यातो अर्थशास्त्रपरय यः ।
 शान्तेन चेतसा शान्तिः परेण सुममाहितः ॥
 यद्वपीङ्गं विनिर्जित्य करोतु तव शान्तिक ।
 सूर्यार्चनपरो नित्य प्रसादाद्वाक्करस्य च ॥

हिमकुन्देन्दुवर्णाभदैवदानवपूजितः ।
 महेश्वरस्तुतो वीरो महामौरो महामुनिः ॥
 सूर्यार्चनपरो नित्यं शुक्रः शुक्रनिभः सदा ।
 नीतिशान्तपरो नित्यं ग्रहपीडां व्यपोहतु ॥
 भिन्नाञ्जनचय प्रख्यम्हायाजः सुमहादद्युतिः ।
 सूर्यपुत्रः सूर्यरतो ग्रहपीडां व्यपोहतु ॥
 नानारूपधरोऽव्यक्तः रविज्ञानरतिषु गः ।
 नोत्पत्तिर्जायते तस्य नोदयः पण्डितैरपि ॥
 एकमूलो हिमूलश्च त्रिशिखः पञ्चचूडकः ।
 सहस्रशिखरूपश्च इन्द्रकेतुरिव स्थितः ॥
 सूर्यपुत्रोऽग्निपुत्रश्च ब्रह्माग्निशिवत्माजः ।
 अनेकशिखरः केतुः स ते रुजं व्यपोहतु ॥
 एते ग्रहाः महात्मानः सूर्यार्चनपराः सदा ।
 शान्तिं कुर्वन्ति मे हृष्टाः सदा कालहितैषिणः ॥
 पद्मासनः पद्मवर्णः पद्मपत्रदलेक्षणः ।
 कमण्डलुधरः श्रीमान् देवगन्धर्वसेवितः ॥
 चतुर्भुजो देवपतिः सूर्यार्चनपरः सदा ।
 सुरथेष्टो महातेजाः सर्व्वलाकप्रजापतिः ॥
 ब्रह्मगन्धेन दिव्येन ब्रह्माशान्तिं करोतु वै ।
 निष्कालतत्त्वविज्ञो यः कालवित् कालतत्परः ॥
 पीताम्बरधरो देव आतिथीवरदः सदा ।
 शङ्खचक्रगदापाणिः श्यामवर्णश्चतुर्भुजः ॥
 अग्निः साक्षात्कृतो येन वनेषु परयेव यः ।

यज्ञदेवी तन्मी देवी गायत्री मधुसूदनः ॥
 सूर्यभक्त्यान्वितो नित्यं विगतिर्विगतिप्रियः ।
 सूर्यध्यानपरो नित्यं त्रिष्णुः शान्तिं करोतु मे ॥
 हे मकुन्देन्दुसङ्काशो गोशुत्याभरणाऽरिहा ।

गोशुतयः सर्पाः ।

चतुर्भुजो महातेजाः पुष्पेन्दुः शशिशेखरः ।
 चतुर्मुखो भस्मधरः श्मशाननिलयः सदा ॥
 माताणां नियतश्चैव तथ च क्रतुसूदनः ।
 वरी वरेण्यो वरदो देवदेवो महेश्वरः ॥
 त्रैलोक्यनमितः श्रीमानादित्याराधने रतः ।
 आदित्यपरमो नित्यमादित्यध्यानतत्परः ॥
 आदित्यदेहसम्भूतः स मे शान्तिं करोतु वै ।
 पद्मरागनिभा देवो चतुर्वदनपङ्कजा ।
 अक्षमालापितकरा कमण्डलुधरा शुभा ॥
 ब्रह्माणो सौम्यवदना आदित्याराधने रता ।
 शान्तिं करोतु ते प्रीत्या आशीर्वादपद्मा खग ॥
 महाश्वेतेति विख्याता आदित्यदयिता सदा ।
 महाश्वेतेति सेत्वस्मिन् ख्यातिं लोके गता खग ॥
 हिमकुन्देन्दुसङ्काशो महावृषभवाहिनी ।
 त्रिशूलहस्ताभरणा गोशुत्याभरणा मती ॥
 चतुर्भुजा चतुर्वक्त्रा त्रिनेत्रा पापनाशिनी ।
 वृषध्वजा यानरता रुद्राणो शान्तिदाऽस्तु मे ॥
 मयूरवाहना देवी सिंहवाहणविग्रहा ।

शक्तिहस्ता महाकाया सर्वालङ्कारभूषिता ॥
 सूर्यरक्ता महावीर्या वनवासपरा सदा ।
 कौमारी वरदा देवी शान्तिं सातु करोतु ते ॥
 कञ्जचक्रधरा श्यामा पीताम्बरधरा खग ।
 चतुर्भुजा च या देवी चतुर्वदनपङ्कजा ॥
 सूर्यार्चनरता नित्यं सूर्यैकगतमानसा ।
 शान्तिं करोतु ते नित्यं सर्वसुरविमर्दनो ॥
 ऐरावतगजारूढा पविहस्ता महाबला ।

पविर्वज्रं ।

सहस्रलोचनादेवी वर्णतथ्यम्पकेक्षणा ॥
 सिंहगन्धर्व्वनमिता सर्वाभरणभूषिता ।
 इन्द्राणी ते सदा वीर शान्तिमाशु करोतु वै ॥
 वराहरूपा विकटा वाराहवरवर्णिनी ।
 श्यामावदाता या देवी शङ्खचक्रगदाधरा ।
 तर्जयन्तीह निःशेषं पूजयन्ती सदा रविं ॥
 वाराही वरदा देवी तव शान्तिं करोतु वै ।
 अर्धेकेगीतकटामास्ता निर्मासा स्नायुबन्धना ॥
 करालवदना घोरा खड्गघण्टीयता सती ।
 कपालमालिनी घोरा खट्वाङ्गवरधारिणी ॥
 आरक्तपिङ्गनयना गजचर्मवगुण्ठिता ।
 गायदाभरणा देवी श्मशानविनिवासिनी ।
 शिवा रूपेण घोरेण शिवाराधभवङ्करी ॥
 चामुण्डा चण्डरूपेण सदा रक्षाङ्करोतु मे ।

चण्डमुखकरा देवी चण्डमुखगता सती ॥
 आकाशमातरो देव्यस्तथा लोकस्य मातरः ।
 भूतानां मातरः सर्वास्तथा च पितृमातरः ॥
 वृद्धशैस्तु पूज्यन्ते तास्तु देव्या मनोविभिः ।
 मात्रे प्रमात्रे तन्मात्रे इति मातृमुखास्तु ताः ॥
 पितामही तु तन्माता वृद्धा या च पितामही ।
 इत्येतास्तु पितामह्यः शान्तिं ते पितृमातरः ॥
 सर्वमातृमुखादेव्यः खाद्युधाः शस्त्रपाणयः ।
 जगद्ग्रास्य प्रतिष्ठस्यो बलिकामा महोदयाः ॥
 शान्तिं कुर्वन्तु ते नित्यमादित्याराधने रताः ।
 शान्तेन चेतसा शान्ता शान्ता स्वं भव शान्तिदा ॥
 सर्ववयवयुक्तेन गात्रेण तनुमञ्जमा ।
 पीतश्यामादिसौम्येन चित्रलेखेव शोभिता ॥
 ललाटतिलकोपेतचन्द्रलेखाश्च धारिणी ।
 चित्राम्बरधरा देवी सर्वाभरणभूषिता ॥
 वरा स्त्रीमयरूपाणां शुभा गुणमहास्पदं ।
 सर्वमन्त्रे तु सन्तुष्टा उमा देवी वरप्रदा ॥
 साक्षादागत्य रूपेण शान्तेनामिततेजसा ।
 शान्तिं करोतु ते प्रीत्या म्मादित्यचरणे रता ॥
 अवलम्बालरूपेण षड्वक्त्रः शिखिवाहनः ।
 पूर्णवदन्तः श्रीमान् त्रिशुखः शक्तिमान् विभुः ॥
 कृत्तिकापत्यरूपेण समुदीप्तः सुरार्चितः ।
 कार्तिकेयो महातेजा आदित्याहरदर्पितः ॥

(१३३)

शान्तिं करोतु सततं फलं सौख्यञ्च सम्पदः ।
 आत्रेयीमबलां जन्म तथारोग्यं खगाधिपः ॥
 श्वेतवस्त्रपरीधानस्तार्क्ष्यश्च कनकप्रभुः ।
 शूलहस्ती महाप्राज्ञो नन्दीशो रविभात्रितः ॥
 शान्तिं करोतु ते शान्तो धर्मो मतिमनुत्तमां ।
 धम्म तरतु भो नित्यमचलं संप्रयच्छतु ॥
 महादरो महाकायो गजवक्त्रो महाबलः ।
 नागयज्ञोपवीतेन नागाभरणसूषितः ॥
 सर्वार्थसम्पदाधारो गणाध्यक्षा वरप्रदः ।
 भीमगात्रो भवो देवो नायकोऽथ विनायकः ।
 करोतु ते महाशान्तिं प्रीतिं प्रीतेन चेतसा ॥
 पीताम्बरधरा कन्या नानालङ्कारभूषिता ।
 यमुना स्ताम्बिका पुण्या सर्व्वलीकनमस्कृता ॥
 सर्व्वसिद्धिकरा देवी प्रभादात्परमा परा ।
 शान्तिं करोतु ते माता भुवनस्य खगाधिप ॥
 त्रिगुणान्तेन सर्व्वेण महामहिषमर्दनौ ।
 धनुः-शक्ति-प्रहरण-खड्ग-पट्टिशधारिणी ॥
 आर्जवेनोद्यतकरा सर्व्वोपद्रवनाशिनी ।
 शान्तिं करोतु ते सौरा दुर्गा भगवतो शिवा ॥
 निर्मासेन शरीरेण स्नायुरज्ज्निबन्धनः ।
 अतिसूक्ष्मोऽतिव्यक्तो यः अक्षोभः क्षिरोटी महान् ॥
 सूर्यात्मको महावीर्य्यः सूर्य्यं च कृतमानसः ।
 सूर्य्यभक्तिपरो नित्यं स ते शान्तिं प्रयच्छतु ॥

प्रचण्डगणसैन्योऽसौ महाकटाक्षधारकः ।
 अक्षमालार्पितकरस्त्राक्षयणेश्वरो वरः ॥
 चण्डपापहरो नित्यं ब्रह्महत्यादिनाशनः ।
 शान्तिं करोतु ते नित्यं आदित्याराधने रतः ।
 करोतु च महायोगी कल्पान्तास्ताः परस्परम् ॥
 आकाशे मातरो देव्यस्तथा लोकस्य मातरः ।
 भूतानां मातरः सर्वास्तथा देवस्य मातरः ॥
 सूर्यार्चनपरा देव्यो जगद्ग्राह्य व्यवस्थिताः ।
 शान्तिं कुर्वन्तु ते नित्यं मातरः सुरपूजिताः ॥
 ये रौद्रा रौद्रकर्माणो रौद्रस्थाननिवासिनः ।
 मातरो रौद्ररूपाश्च गणानामधिपाश्च ये ॥
 विघ्नभूतास्तथा चान्ये दिवि दिक्षु समाश्रिताः ।
 सिद्धिं कुर्वन्तु ते नित्यं भयेभ्यः पान्तु सर्वदा ॥
 ऐन्द्रां दिशि गता ये तु वज्रहस्ता महाबलाः ।
 हिमकुन्देन्दुपट्टोद्यनीलकण्ठाङ्गलोहिताः ॥
 दिव्यान्तरिक्षा भीमाश्च पातालतलवासिनः ।
 सूर्यार्चनरता ऐन्द्राः शान्तिं कुर्वन्तु ते मदा ॥
 आग्नेय्यां ये स्थिताः सर्वे श्रुतहस्तानुपङ्गिनः ।
 सूर्यभक्तास्तु रक्तास्तु तथा वै रक्तभृङ्गणाः ॥
 दिव्यान्तरिक्षा भीमाश्च आग्नेया भास्करप्रियाः ।
 आदित्याराधनपराः शं प्रयच्छन्तु ते मदा ॥
 याम्यां दिशि गता ये तु सततं दण्डपाणयः ।
 कृष्णाङ्गाः कृष्णनेत्र्याः वरा वै कृष्णलोहिताः ॥

दिव्यान्तरिक्षा भीमाय यमस्यानुचराः खम ।
 आदित्याराधनपराः शं प्रयच्छन्तु ते सदा ॥
 नैर्ऋत्यां संस्मृता ये तु राक्षसाः सत्पुपाणयः ।
 नीलाङ्गा नीलवर्णाश्च तथा वै नीललोहिताः ॥
 दिव्यान्तरिक्षा भीमाय विरूपाक्षानुगामिनः ।
 आदित्यस्यार्चने नित्यं कुर्वन्त्वारोग्यमुत्तमं ॥
 अपरस्यां वरा ये तु सततं कर्मपाणयः ।
 कर्माभाः कर्मरूपाश्च सदा क्षणिकवीक्षणाः ॥
 दिव्यान्तरिक्षा भीमाय आदित्याराधने रताः ।
 कुर्वन्तु ते सदा शान्तिं वारुणा वरुणानुगाः ॥
 वायव्यां संस्थिता नित्यं महावेगाश्चराः खगाः ।
 पीताङ्गाः पीतनिर्भासास्तथा वै पीतलोहिताः ॥
 दिव्यान्तरिक्षा भीमाय आदित्याराधने रताः ।
 सूर्यव्रताः सुमनसः शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा ॥
 उत्तरायां दिशि गताः सततं निधिपाणयः ।
 गिरिकाक्षाः कस्तूरिकास्तथा वै कण्वलोहिताः ॥
 दिव्यान्तरिक्षा भीमाय अलङ्काधिपवज्रभाः ।
 आदित्याराधनपराः शं प्रयच्छन्तु ते सदा ॥
 ऐशान्यां संस्थिता ये च प्रशान्ताः भूलपाणयः ।
 भस्मोद्धूलितदेहाश्च नीलकण्ठलोहिताः ॥
 दिव्यान्तरिक्षा भीमाय पातालतलवासिनः ।
 सूर्यपूजापरा नित्यं शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा ॥
 लोकपालानुया ह्येते महाबलपराक्रमाः ।

आदित्यं पूजयित्वा तु बलिभेषां विनिक्षिपेत् ॥
 ततः सुशान्तसनसो लोकपालसमन्विताः ।
 आग्नेयीसबलाः सर्वं शं प्रयच्छन्तु पूजिताः ॥
 अमरावती नाम पुरी पूर्वभागे व्यवस्थिता ।
 विद्याधरगणाकीर्णा सिद्धगन्धर्वसेविता ।
 रत्नप्रकाररुचिरा महारत्नोपशोभिता ॥
 तत्र देवपतिः श्रीमान् वषट्पाणिर्महाबलः ।
 गोपतिर्गोसहस्रेण शोभमानेन शोभते ॥
 ऐरावतगजारूढो गैरिकाभो महाद्युतिः ।
 इन्द्रः सहस्रनयनः आदित्याराधने रतः ॥
 सूर्यध्यानैकपरमः सूर्यभक्तिसमन्वितः ।
 सूर्यप्रणामपरमः शान्तिं ते शीघ्रमृच्छतु ॥
 आग्नेये दिक्विभागे तु पुरी तेजवती सदा ।
 नानादेवगणाकीर्णा नानारत्नोपशोभिता ॥
 तत्र ज्वालासमाकीर्णा दीप्ताङ्गारसमद्युतिः ।
 पुरा गोदेहिनां देहे ज्वलनं पापनाशनं ॥
 आदित्याराधनपरा आदित्यगतमानसाः ।
 शान्तिं करोतु ते देवा अथ पापपरिहृयं ॥
 वैवस्वती पुरी रम्या दक्षिणे च महात्मनः ।
 सुरनाथगणाकीर्णा पित्ररसोगणाकुला ॥
 तत्रेन्द्रनीलसङ्काशो रत्नान्तावतलोचनः ।
 महामहिषमारूढो रत्नसम्पन्नभूषणः ॥
 अन्तर्कोऽथ महातेजाः सौरभर्गपरायणः ।

आदित्याराधनपरः क्षेमारीग्यं ददातु मे ॥
 नैर्ऋते तु दिशो भागे पुरो कृण्वेति विश्रुता ।
 महारक्षोगणाकीर्णा पिशाचप्रेतसंकुला ॥
 तत्र स्कन्दनिभो देवो रक्तस्त्रग्वस्त्रभूषणः ।
 खड्गपाणिर्भृङ्गातेजाः करालवदनोज्ज्वलः ॥
 राक्षसेन्द्रो वसेन्नित्यं आदित्याराधने रतः ।
 करोतु ते महाशान्तिं धनं धान्यञ्च यत्नतः ॥
 पश्चिमे तु दिशां भागे पुरी शुक्लवती शुभा ।
 ऋषिसिद्धगणाकीर्णा नानारत्नसुशोभिता ॥
 तत्र कुन्देन्दुसंकाशो हरिः पिङ्गललोचनः ।
 शुक्लास्वरधरो देवो पाशहस्तो महाबलः ॥
 वरुणः परया भक्त्या आदित्यगतमानसः ।
 रोगकाशादिसंकाशं तापं निर्व्वीपयत्वथ ॥
 वायव्ये दिग्दिभागे तु पुरी गन्धवती शुभा ।
 ऋषिसिद्धगणाकीर्णा हेमप्राकारतोरणा ॥
 तत्र होश्वरदेहस्तु कृष्णः पिङ्गललोचनः ।
 पृथिव्याः प्रान्तसन्तानो ध्वजयष्टायुधोच्छ्रितः ॥
 चरमः परमो देवो महेश्वर परात्परः ।
 क्षेमारीग्यं बलं शान्तिं करोतु सततं तव ॥
 महोदया नाम पुरी मन्दरेण महोदया ।
 नानायक्षसमाकीर्णा नानारत्नोपशोभिता ॥
 तत्र देवो गदाहस्तश्चित्रस्त्रग्वस्त्रभूषणः ।
 हस्तबाहुर्महातेजा हरिः पिङ्गललोचनः ॥

शान्तिं करोतु ते प्रीतः शान्तः शान्तेन चेतसा ।
 यशोवतौ पुरो रम्या ऐशानीं दिग्माश्रिता ॥
 नानागणसमाकीर्णा नानाकृतसुरालया ।
 तेजःप्राकारपर्यन्ता अनोपम्या महोज्ज्वला ॥
 तत्र कुन्देन्दुसंकाशो अङ्गरागविभूषितः ।
 त्रिनेत्रः शान्तरूपात्मा अक्षमालाधरा वरः ।
 ईशानः परमो देवः सदा ते शान्तिसृञ्छतु ॥
 उमापतिर्महति जायन्द्रार्द्धकृतशेखरः ।
 भूर्लोके च भुवर्लोके स्वर्लोके निवसन्ति ये ।
 देवी देवीसमाकीर्णा शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा ॥
 महर्लोके जनोलोके तपोलोके च ये स्थिताः ।
 ते सर्व्यं मुदिता देवाः शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा ॥
 सत्यलोके तु ये देहास्त्वथ भोज्ज्वलविषहाः ।
 सूर्यभक्ताः सुमनसो भयं निर्नाशयन्तु ते ॥
 गिरिकन्दरदुर्गेषु वनेषु निवसन्ति ये ।
 सूर्यार्चनपरा देवा रक्षां कुर्वन्तु ते सदा ॥
 शरच्चन्द्रातिगौरेण देहेनामलतेजसा ।
 सरस्वती सूर्यभक्ता शान्तिं यञ्छतु ते सदा ॥
 या तु चामीकरकाया सरोजकरपद्मवा ।
 सूर्यभक्ता श्रिया देवी शान्तिं यञ्छतु ते सदा ॥
 हारेण सुविचित्रेण भास्वत्कनकमेखला ।
 अपराजिता सूर्यपरा करोतु विजयं तव ॥
 कृत्तिका परमा देवी रोहिणी च वरानना ।

श्रीमन्मृगशिरो भद्रमाद्री च परमोज्ज्वला ॥
 पुनर्वसुस्तथा पुष्याः अश्लेषा च तथा खग ।
 सूर्यार्चनरता नित्यं सूर्यभावेन भाविताः ।
 पूर्वभागे स्थिता ज्येष्ठाः शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा ।
 नक्षत्रमातरो ज्येष्ठाः कुर्वन्तु रविनोदिताः ॥
 अश्वराधा ततो ज्येष्ठा मूलं सूर्यपरं तथा ।
 पूर्वषाढा महावीर्या आषाढा चोत्तरा तथा ॥
 अभिजित्नाम नक्षत्रं अवश्यं बहुश्रुतं ।
 एताः पश्चिमतो दौसा राजन्ते चानुभूतं च ॥
 भास्करं पूजयन्त्येताः सर्वकालं सुभाविताः ।
 शान्तिं कुर्वन्तु ते नित्यं विभूतिश्च महाधिका ॥
 अनिष्टा शतभिषा वा तु पूर्वभाद्रपदा तथा ।
 उत्तराभाद्रपदेत्येवावशिष्टा च महामते ।
 भरणी च महादेवी नित्यमुत्तरतःस्थिता ॥
 सूर्यार्चनरता नित्यमादित्यगतमानसाः ।
 शान्तिं कुर्वन्तु ते नित्यं विभूतिश्च महार्हका ॥
 वृषो वृषाधिपः सिंहराशिर्दीप्तिमतां वरः ।
 पूर्वेषु भासयन्त्येते सूर्ययोगपराः शुभाः ।
 शान्तिं कुर्वन्तु ते भक्त्या सूर्यपादाब्जपूजकाः ॥
 धनुः कन्या च परमा मकरस्यापि ऋषिमान् ।
 एते दक्षिणभागे तु पूजयन्ति रविं सदा ॥
 तुला मिथुनकुम्भाश्च पश्चिमेन व्यवस्थिताः ।
 सूर्यपादार्चनरताः शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा ॥

कर्कटो वृश्चिको मीन एते उत्तरतः स्थिताः ।
 यजन्येते महाकालमादित्यं ग्रहनायकं ।
 शान्तिं कुर्वन्तु ते नित्यं स्वस्वीकृतज्ञानतत्पराः ॥
 यतयः कृतपुण्याश्च ये स्मृताः सततं बुधैः ।
 ऋषयः सप्तविंशत्याः प्रशान्ताः परमोज्ज्वलाः ।
 सूर्यप्रसादसम्पन्नाः शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा ॥
 कश्यपो गालवो गार्ग्यो विश्वामित्रो महासुनिः ।
 मनुर्दक्षो वसिष्ठश्च मार्त्तण्डः पुलहः क्रतुः ॥
 नारदो भृगुरात्रेयो भरद्वाजोऽङ्गिरा सुनिः ।
 वाल्मीकिः कौशिकः कण्वः शालव्योऽथ पुनर्वसुः ॥
 शालङ्कायन इत्येते ऋषयो वै खगाधिप ।
 सूर्यध्यानेकपरमा आदित्याराधने रताः ॥
 तारकोऽग्निमुखो दैत्यः कालनेमिर्म्हबाबलः ।
 एते दैत्या महात्मानः सूर्यभावेन भाविताः ॥
 पुष्टिं बलं तथारोग्यं प्रयच्छन्तु सुरारयः ।
 वैरोचनो हिरण्यक्षः सुपर्वा वसुलोचनः ॥
 मधुकुन्दो मुकुन्दश्च दैत्यो रैवतकस्तथा ।
 भावेन परमेणापि वक्त्रान्तायतलोचनः ।
 महाभोगकृताटोपः शङ्कान्तकृतलक्षणः ॥
 अनन्तो नागराजेन्द्र आदित्याराधने रतः ।
 महापापक्षयं हत्वा शान्तिमाशु करोतु ते ॥
 अतिश्वेतशरीरेण स्फुरन्मोक्तिकसन्निभः ।
 नित्यं राजयिष्या युक्तो वासुकिः शान्तिसृच्छतु ।

अतिपीतेन वस्त्रेण विस्फुरन् भोगसम्पदा ।
 तेजसा चापि दिव्येन कृतस्वस्तिकलाञ्छनः ॥
 नागराट् तच्चक्रः श्रीमान् नायकौघसमन्वितः ।
 करोतु ते महाशान्तिं सर्वदोषविषापहः ॥
 अतिकृष्णेन वर्णन जटाविकटमस्तकः ।
 कण्ठे रेखाचयोपेतो घोरदंष्ट्रायुधीयतः ॥
 कर्कोटको महाभागो विषदर्पोदलान्वितः ।
 विवसन् सर्वमन्तापं हत्वा शान्तिं करोतु ते ॥
 पद्मवर्णेन देहेन चारुपद्मायतेक्षणः ।
 पञ्चविन्दुकताभासो ग्रीवायां शुभलक्षणः ॥
 व्योमपद्मो महाभागः सूर्यपादार्चने रतः ।
 करोतु ते महाशान्तिं महापापभयापहं ॥
 पुण्डरीकनिभेनापि देहेनामिततेजसा ।
 शङ्खशूलाङ्गरचितैर्भूषितो मूर्ध्नि सर्वदा ॥
 महापद्मो महानागो नित्यं भास्करपूजकः ।
 स ते शान्तिं श्रियं जन्म निर्मलं संप्रयच्छतु ॥
 श्यामेन देहभारेण श्रीमान् कमललोचनः ।
 विषदर्पबलोन्मत्तो ग्रीवायां रेखयान्वितः ॥
 शङ्खपालः श्रिया युक्तः सूर्यपादकपूजकः ।
 महाविषहरो हृष्टः स च शान्तिं करोतु ते ॥
 अतिदेहेन गौरेण चन्द्रार्द्धकृतमस्तकः ।
 दीप्ताभोगकृताटोपः शुभलक्षणलक्षितः ॥
 कुलिशो नाम नागेश्वरी नित्यं मूरपरायणः ।

अपहृत्य विषं घोरं करोतु तव शान्तिकं ॥
 अन्तरिक्षे च ये नागा ये नागाः स्वर्गसंस्थिताः ।
 पाताले ये स्थिता नागाः सर्वेष्वत्र समाश्रिताः ।
 सूर्यपादार्चनरताः शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा ॥
 नागिन्यो नागकन्याश्च तथा नागकुमारकाः ।
 सूर्यभक्ताः सुमनसः शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा ॥
 य इमं नागसंस्थानं कीर्त्तयेच्छृणुयात्तथा ।
 न तस्य सर्पा हिंसन्ति न विषं क्रमते सदा ॥
 गङ्गा पुण्या महादेवो यमना नर्मदा नदी ॥
 गोमती चापि शोना च वरुणा देविका तथा ।
 सर्वग्रहपतिं देवं देवेशं लोकनायकं ॥
 पूजयन्ति सदा नदाः सूर्यवद्भावभाविताः ।
 शान्तिं कुर्वन्तु ते नित्यं सूर्यध्यानेकमानसाः ॥
 नैरञ्जना नाम नदी शोनयापि महानदः ।
 मन्दाकिनी च परमा तथा सत्यान्विता शुभा ॥
 एताद्यान्याश्च वङ्गो वै भुवि दिव्यन्दुरोत्तमाः ।
 सूर्यार्चनपरा नदाः कुर्वन्तु तव शान्तिकं ॥
 महावैश्रवणो देवो यक्षराजो महाबलः ।
 यक्षकोटिपरो वारो यक्षसंक्षेपसंगुतः ॥
 महाविभवसम्पन्नः सूर्यपादार्चने रतः ।
 सूर्यध्यानेकपरमः सूर्यभावेन भाविता ।
 शान्तिं करोतु ते प्रीतः पद्मपत्रायतेक्षणः ॥
 मणिभद्रो महायक्षो मणिरत्नविभूषितः ।

चमाद्रिः । [व्रतखण्डं ३२ अध्यायः ।

मनोहरेण हारेण कम्बुलम्बेन राजते ॥
 यक्षिणीयक्षकन्याभिः परिवारितविग्रहः ।
 सूर्यार्चनसमायुक्तः करोतु तव शान्तिकं ॥
 सुवीरो नाम यक्षेन्द्रो मणिकुण्डलभूषितः ।
 ललाटे हेमपट्टेन प्रवृद्धेन विराजते ॥
 वापिकी नाम यक्षेन्द्रः कण्ठाभरणभूषितः ।
 मुकुटेन विचित्रेण बहुरत्नान्वितेन च ॥
 यक्षवृन्दसमाकीर्णो यक्षकोटिसमन्वितः ।
 सूर्यार्चनपरः श्रीमान् करोतु तव शान्तिकं ॥
 धृतराष्ट्रो महाराजा नागयक्षाधिपः खग ।
 दिव्यपट्टोऽगुरुच्छदो मणिकाञ्चनभूषितः ॥
 सूर्यभक्तः सूर्यरतः सूर्यपूजापरायणः ।
 सूर्यप्रसादसम्पन्नः करोतु तव शान्तिकं ॥
 पूर्णभद्रो महायक्षः सर्वालङ्कारभूषितः ।
 ललाटे हेमपट्टेन प्रवृद्धेन विराजते ॥
 बहुयक्षसमाकीर्णो यक्षकोटिशतेन च ।
 सूर्यप्रणामपरमः सूर्यभक्त्या समन्वितः ।
 सूर्यार्चनसमायुक्तः करोतु तव शान्तिकं ॥
 विरूपाक्षाख्ययक्षेन्द्रो श्वेतवासा महाद्युतिः ।
 नानाकाञ्चनमालाभिरुपशोभितकाञ्चनः ॥
 सूर्यपूजापरो नित्यं कञ्चाक्षः कञ्चसन्निभः ।
 तेजसादित्यसङ्काशः करोतु तव शान्तिकं ॥
 अन्तरिक्षगता यक्षाः ये यक्षा सूर्यवासिनः ।

गिरिदुर्गेषु ये यक्षाः पातालतलवासिनः ।
 नानारूपधरा यक्षा सूर्यभक्ता दृढव्रताः ॥
 ये तद्भक्तास्तन्मनसः सूर्यपूजाममुत्सुकाः ।
 शान्तिं कुर्वन्तु ते च्छाः शान्ताः शान्तिपरायणाः ॥
 यक्षिण्यो विविधाकारास्तथा यक्षकुमारकाः ।
 यक्षकन्या महाभागा सूर्यस्यार्चनतत्पराः ॥
 शान्तिं स्वस्त्ययनं क्षेमं बलं कल्याणमुत्तमं ।
 सिद्धिमाशु प्रयच्छन्तु नित्याच्च सुसमाहिताः ॥
 अर्चिताः सर्वतः सर्वे यक्षाश्चैव महाधिपाः ।
 सूर्यभक्ता सदाकालं शान्तिं कुर्वन्तु ते पराम् ॥
 सागराः सर्वतः सर्वे ग्रहरत्नानि सर्वगः ।
 सूर्यस्याराधनपराः कुर्वन्तु तव शान्तिकं ॥
 राजसाः सर्वतश्चैव धाररूपा महाबलाः ।
 स्थूलाश्च राजसा ये तु अन्तरिक्षचराश्च ये ॥
 पाताले राजसा ये तु नित्यं सूर्यार्चने रताः ।
 प्रेतानामधिपाः सर्वे प्रेताश्च सर्व्वीतांशुखाः ।
 अतिदीप्ताश्च ये प्रेता ये प्रेता रुधिरागनाः ॥
 अन्तरिक्षचराः प्रेतास्तथाऽन्ये स्वर्गवासिनः ।
 पाताले भूतले वापि ये प्रेताः कामचारिणः ॥
 एकचक्रो रथो यस्य यस्तु देवो वृषध्वजः ।
 तेजसा तस्य देवस्य शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा ॥
 ये पिशाचा महावीर्या ऋद्धिमन्तो महाबलाः ।
 नानारूपधराः सर्वे नाना च गुणवत्तराः ॥

अन्तरिक्षे पिशाचा ये स्वर्गे ये च महाबलाः ।
 पाताले भूतले ये च बहुरूपा मनोजवाः ॥
 यस्याहं सारथिर्वीरि यस्य त्वं तुरगः सदा ।
 तेजसा तस्य देवस्य शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा ॥
 अपस्मारग्रहाः सर्वे सर्वे वापि ज्वरग्रहाः ।
 गर्भबालग्रहा ये च दन्तरोग्रहाश्च ये ।
 अन्तरिक्षग्रहा ये च शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा ॥
 इति देवादयः सर्वे सूर्यज्ञानविधायिनः ।
 कुर्वन्तु जगतः शान्तिं सूर्यभक्त्यैव सर्वदा ॥
 जयः सूर्याय देवाय तमोमोहविरोधिने ।
 जगतामेकसूर्याय भास्कराय नमोऽस्तु ते ॥
 ग्रहोत्तमाय शान्ताय जयः कल्याणकारिणे ।
 जयः पद्मविकाशाय बुद्धरूपाय ते नमः ॥
 जयो दीप्तिविधानाय जयः कान्तिविधायिने ।
 तमोघ्नाय अजेयाय अजिताय नमो नमः ॥
 जयो वाजेयदीप्तेश सहस्रकिरणोज्ज्वल ।
 रयनिर्जितलोकाय बहुरूपाय ते नमः ॥
 गायत्रीवेदरूपाय सावित्रीदयिताय च ।
 धराधराय सूर्याय मार्त्तण्डाय नमो नमः ॥

सुमन्तुरूवाच ।

—००००००००—

एवं हि विहिता शान्तिरक्षणेन महीपते ।
 श्रेयसे वैततेन्द्राय गरुडाय महात्मने ॥

एवमन्येऽपि राजेन्द्र मानवाञ्चरोगिणः ।
 अस्मिन् कृतेऽग्निकार्यं तु नीरुजास्ते भवन्ति हि ॥
 तस्माद्यत्नेन कर्त्तव्यो अग्निकार्यो विधानतः ।
 करणीयन्तु राजेन्द्र यदिदं गान्तिलक्षणं ॥
 ग्रहोत्पातेषु दुर्मिते उत्पातेषु च कुस्रयः ।
 अप्रपमाने पर्जन्ये लक्षहोमममन्वित ॥
 त्रपित्वा योऽग्निमुकन्तु ध्यात्वा रवि प्रयत्नतः ।
 एव कृते भुवन्द्यो वर्षते कामतो नृणां ॥
 इत्येवं गान्तिकाध्याय यः पठेत्पुण्यादापि ।
 तिहाय सर्वलोकांस्तु सृष्ट्यलोके महीयते ॥
 कन्यार्थी लभते कन्यां जयकामो जयं लभेत् ।
 अर्थकामो लभेदर्थं पञ्चकामः सर्वं लभेत् ॥
 यं यं प्रार्थयते कामं शृणुते मानवी वृष ।
 तं सर्वं गौघमाप्नोति भास्करस्य प्रिया मयत ॥
 श्रुत्वा गान्तिमिमां पण्ड्यां समयां कुरुनन्दन ।
 संशामं प्रविशेद्यस्तु ध्यायमानो दिवाकरः ।
 सर्वान् जित्वा रणे शत्रून् आनन्दपरमो भवेत् ॥
 अक्षयं मोदते कालं अतिरक्ततगामनः ।
 व्याधिभिर्नाभिभूयते पुत्रपौत्रप्रतिष्ठितः ॥
 भवेदादित्यसदृशस्तेजसा प्रभया तथा ॥
 यमुद्दिश्य पठेद्द्वार वाचकी मानवं प्रति ।
 न पीडयते त्वमो दीपैर्वातकम्पकफाब्जकैः ॥
 नाकाले मरणं तस्य सर्वपापेन दुष्यते ।

न विषं क्रमते देहे न जड़ो मान्स्मूकता ।
 न चोत्पातभयं तस्य नचैवाऽरिभयं भवेत् ॥
 ये रोगा ये महीत्पाता ये ग्रहा यन्महाविषं ।
 ते सर्वे प्रगमं यान्ति श्रवणादस्य भारत ॥
 यत्पुण्यं सर्वतीर्थानां गङ्गादिषु निषेवितः ।
 तत्पुण्यं कीटिगुणितं प्राप्नोति श्रवणादिभिः ॥
 दशानां राजसूयानां अन्येषाञ्च विशेषतः ।
 जोषेहर्षशतं साग्रं सर्वबाधाविर्वर्जितः ॥
 गोघ्नश्चैव कृतघ्नश्च ब्रह्महा गुरुतल्पगः ।
 शरणागतहन्ता च ये च विश्वासघातकाः ॥
 दुष्टपापसमाचारः पिष्टहा मातृहा तथा ।
 श्रवणाच्चैव पाठेन मुच्यते सर्वपातकैः ॥
 इतिहासमिदं पुण्यं अग्निकार्यमनुत्तमं ।
 सूर्यभक्ते सदा देयं सूर्य्येण कथितं पुरा ॥
 अरुणस्य महाबाहो अरुणेनानुजस्य त् ।
 अनुजेन पुरा प्रोक्तं भोजकानां महात्मनां ॥
 सूर्य्यशर्ममुखानान्तु शाकदीपे महीपते ।
 तेनापि कथितं मङ्गलं सर्वपापभयापहं ॥

इति भविष्यपुराणोक्ता महाशान्तिः ।

—००—

अथाद्भुतशान्तयः । तत्र मत्स्यपुराणे ।

मनुरुवाच ।

दिव्यन्तरिक्षे भीमेषु या शान्तिरभिधोयते ।

तामहं श्रोतुमिच्छामि महीत्यातेषु केशव ॥

मत्स्य उवाच ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि त्रिविधेष्वद्भुतेषु च ।

विशेषेण तु भौमेषु शान्तिं कुर्यान्नराधिप ॥

अभया चान्तरिक्षेषु भौमा दिव्येषु पार्थिव ।

विजिगीषुपराद्राजन् भूतिकामस्य यो भवेत् ॥

विजिगीषुपरेणैव अभियुक्तस्तथा परैः ।

तथाभिचारशङ्कायां गन्नूणामपि नाशने ।

भये महति संप्राप्ते अभया शान्तिरिष्यते ॥

भूतेषु दृश्यमानेषु रौद्री शान्तिस्तथेष्यते ।

वेदनाशे समुत्पन्ने जने जाते च नास्तिके ।

अपूज्यपूजने जाते ब्राह्मी शान्तिस्तथेष्यते ॥

भविष्यत्यभियोगे च परचक्रभयेऽपि च ।

राष्ट्रभेदे च संप्राप्ते रौद्री शान्तिः प्रशस्यते ॥

त्राहातिरिक्ते पवने कले सर्वदिगुत्थिते ।

वैकृते वातजे व्याधौ वायवी शान्तिरिष्यते ॥

अनासृष्टिभये जाते तथा विकृतवर्षणे ।

जलाशयविकारे च वारुणी शान्तिरिष्यते ॥

अभिशापभये प्राप्ते भार्गवी च तथाहिज ।

जाते प्रसववैकृत्ये प्राजापत्या महाभुज ।

उपस्कराणां वैकृत्ये त्वाष्ट्री पार्थिवनन्दन ॥

बालानां शान्तिकामस्य क्रोमारी च तथा कृप ।

आग्नेयीं कारयेच्छान्तिं संप्राप्ते वज्रिवैकृते ॥

(११५)

आञ्जाभङ्गे तथा जाते जायाभृत्यादिसंचये ।
 अश्वानां शान्तिकामस्य तदिकारे समुत्थिते ।
 अश्वानां काममानस्य गान्धर्वी शान्तिरिष्यते ॥
 गजानां शान्तिकामस्य तदिकारे समुत्थिते ।
 गजानां काममानस्य शान्तिराङ्गिरसी भवेत् ॥
 पिशाचादिभये जाते शान्तिस्तु, नैऋती स्मृता ।
 अपमृत्युभये जाते दुःस्वप्नेऽपि महाभुज ॥
 काम्यान्तु कारयेच्छान्तिं संप्राप्ते मकरे तथा ।
 धननाशे समुत्पन्ने कौबिरो शान्तिरिष्यते ॥
 वृक्षाणाञ्च तथार्थानां वैकुण्ठे समुपस्थिते ।
 भूमिकामस्तथा शान्तिं पार्थिवीञ्च प्रयोजयेत् ॥
 प्रथमे दिनयामे च रात्रौ वा मनुजोत्तम ।
 हस्ते स्वात्याञ्च चित्रायामादित्ये वाश्विने तथा ॥
 आर्यस्मिन् सोमजातेषु वायव्येष्वङ्गतेषु च ।
 द्वितीये दिनयामे च रात्रौ च रविनन्दन ॥
 पुष्याग्नेयविशाखायां पितृजभरणीषु च ।
 उत्पाता ये तथा भाग्ये आग्नेयीं तेषु कारयेत् ॥
 तृतीये दिनयामे च रात्रौ च रविनन्दन ।
 रोहिण्यां वैष्णवे ब्राह्मे वासवे विश्वदैवते ॥
 ज्येष्ठायाञ्च तथा मैत्रेये भवन्त्यङ्गताः क्वचित् ।
 ऐन्द्री भेषु प्रयोक्तव्या महाशान्तिः कुलोदह ॥
 चतुर्थे दिनयामे च रात्रौ च रविनन्दन ।
 सर्पे पौष्णे तथार्द्रायामहिब्रध्ने च दारुणे ॥

मूले वरुणदैवत्ये ये भवन्त्यद्भुतास्तथा ।
 वारुणी तेषु कर्त्तव्या महाशान्तिर्महोचिता ॥
 भिन्नमण्डलवेलासु ये भवन्त्यद्भुताः क्षचित् ।
 शान्तिः शान्तिद्वयं कार्यं निमित्ते सति नाम्यथा ।
 निर्निमित्तकता शान्तिर्निमित्तमुपजायते ॥

बाणप्रहारा न भवन्ति यद्-
 द्वाजवृक्षां सम्बोद्धनैर्युतानां ।
 दैवोपघाता न भवन्ति तद्-
 हर्मात्मनां शान्तिपरायणानां ॥

मनुस्वाच ।

अद्भुतानां फलं देव शमनञ्च तथा वद ।
 त्वं हि वेत्सि विशालाक्ष ज्ञेयं सर्वमशेषतः ॥

मत्स्य उवाच ।

अथ ते वर्णयिष्यामि यदुवाच महातपाः ।
 अथ मे हृद्गर्भस्तु सर्वधर्मैश्चताम्बर ॥
 सरस्तत्यां सन्नासौनं गार्गं पार्थिवमन्दन ।
 पप्रच्छेति महातेजा गर्गो मुनिवरप्रियः ॥

अत्रिस्वाच ।

पश्यतां पूर्वरूपाणि जनानां कथयस्व मे ।
 मगराणां तथा राज्ञां त्वं हि सर्वविदुष्यते ॥

गर्ग उवाच ।

पुरुषापहारनियमादपराञ्चन्ति देशताः ।
 ततोपराधाद्देवानामुपसर्गः प्रवर्त्तते ॥

दिव्यान्तरिक्षं भौमञ्च त्रिविधं परिकीर्तितं ।
 ग्रहर्क्षवैकृतं दिव्यमात्सरिचं निबोध मे ॥
 उल्कापातो दिशान्द्राहः परिवेशस्तथैव च ।
 गन्धर्वनगरञ्चैव दृष्टिश्च विकृता च या ।
 एवमादीनि लोकेऽस्मिन् आकाशानि विनिर्द्दिशेत् ॥
 चरस्थिरभवं भौमं भूकम्पमपि भूमिजं ।
 जलाशयानां वैकृत्यं भौमं तदपि कीर्तितं ॥
 भौमञ्चाल्पफलं ज्ञेयं चिरेण परिपच्यते ।
 अमयं मध्यफलदं मध्यकालफलं द्रुतं ॥
 अद्भुते तु समुत्पन्ने यदि दृष्टिः शिवा भवेत् ।
 समाहाभ्यन्तरे ज्ञेयमशुभं निष्फलं भवेत् ॥
 अद्भुतस्य विपाकश्चेद्दिना शान्त्या न दृश्यते ।
 त्रिभिर्वर्षैस्तु तद्भयं सुमहद्भयकारकं ॥
 रात्रः शरीरे लोके च पुरे दारे पुरोहिते ।
 पाकमायाति पुत्रेषु तथा वै कोशवाहने ॥
 ऋतुस्वभावाद्राजिन्द्र भवन्त्यद्भुतसंज्ञिताः ।
 शुभावहाश्च विज्ञेयास्तांस्त्वं मे वदतः शृणु ॥
 वज्रा-शनि-महोक्कम्प-सन्ध्यानिघात-निःस्वनाः ।
 परिवेष्टरजोधूम-रक्ताकास्तमनोदयाः ॥
 दूमेभ्योऽथ रसस्नेही बहुशस्त्रफलोद्भवाः (१) ।
 गोपक्षिमदृष्टिश्च शुभानि (२) मधुमाधवे ॥

(१) मधुपुष्पफलोद्भवा इति कश्चित् पाठः ।

(२) विशाच इति पुस्तकालये पाठः ।

तारोत्कापातकलुषं कपिलाकैन्दुमण्डलं ।
 अग्निज्वलनं स्फोटं धूमदिव्यानिलाहतं(१) ॥
 रक्तपद्माकृता सन्ध्या नभः क्षुब्धार्णवोपमं ।
 सरिताश्चाम्बुसंशोषं दृष्ट्वा योष्ये शुभं वदेत् ॥
 शक्रायुधपरिवेशी विद्युच्छुष्कविरोहणं ।
 कम्पोद्वर्तनवैकल्यं रमनं दरणं क्षितेः ॥
 नद्युद्पानसरसां तृष्टृर्द्धाभरणप्लवाः ।
 शीर्षाणि वारिरोधानां वर्षासु शुभदानि च(२) ॥
 दिव्यस्त्रीरूपगन्धर्वविमानाहतदर्शनं(३) ।
 ग्रहनक्षत्रताराणां दर्शनं वागमानुषो(४) ॥
 गीतवादित्रनिर्वीषो वनपर्वतसाक्षुष ।
 शस्यतृहीरसोत्पत्तिः शरत्काले शुभाः स्मृताः(५) ॥
 शीतानिलतुषारत्वं नन्दनं मृगपक्षिणां ।
 रक्षोयक्षादिषत्त्वानां दर्शनं वागमानुषी ॥
 दिशो धूमाश्वकाराश्च शलभा वनपर्वताः ।
 उच्चैः सूर्योदयास्तत्वं हेमस्ते शोभनाः स्मृताः ॥
 हिमपातानिस्त्रोत्यातविरूपाहतदर्शनं ।
 दृष्ट्वाञ्जनाभमाकाशस्तारोत्कापातपिञ्जरं ॥

-
- (१) धुमरेचजिह्वाकुलमिति वा पाठ ।
 (२) पतनवादित्रेक्षणां वर्षासु च अथावदिति वा पाठ ।
 (३) दिव्यस्त्रीरूपगन्धर्व विमानाङ्ग तद्दर्शनमिति पाठान्तरं ।
 (४) दर्शनं दिवास्मरे इति क्वचित् पाठः ।
 (५) अथापा शरदि स्मृता इति वा पाठ ।

चित्रागर्भोद्भवास्त्रोषु गोजाश्चमृगपक्षिणां ।
 पद्माङ्कुरलतानाञ्च विकाराः शिशिरे शुभाः ॥
 ऋतुस्वभावेन विनाङ्कुरस्य
 जातस्य दृष्टस्य तु शीघ्रमेतत् ।
 कृतागमा शान्तिरनन्तरम्
 कार्या यथोक्ता वसुधाधिपेन ॥

इत्यङ्कुरशान्तौ चौत्पातिकं ।

—000—

गर्ग उवाच ।

देवतार्चाः प्रनृत्यन्ति वेपन्ते प्रज्वलन्ति च ।
 आरटन्ति च रोदन्ति प्रतिष्ठन्ति हसन्ति च ॥
 उत्पत्तिञ्च निषीदन्ति प्रभावन्ति वसन्ति च ।
 भूञ्जतो विक्षिपन्ते वा शाकप्रहरणध्वजान् ॥
 अवाङ्मुखा वा तिष्ठन्ति स्थानात् स्थानं भ्रमन्ति च ।
 वमत्यग्निं तथाधूमं स्नेहरक्ते तथा वसां ।
 एवमादीनि दृश्यन्ते विकाराः सहस्रोत्थिताः ॥
 लिङ्गायतनक्षेत्रेषु तत्र वासं न रोचयेत् ।
 राज्ञी वा शमनं तत्र स वा देशोऽविनश्यति ॥
 देवयात्रासु चौत्पातान् दृष्ट्वा देशभयं वदेत् ।
 पितामहस्वधर्मेषु तत्र वासं न रोचयेत् ॥
 वसूनां वसुजं ज्ञेयं नृपाणां लोकपालजं ।

ज्ञेयं सेनापतीनाञ्च यस्मात् स्कन्दशिवगिजं ॥
 लोकानां विष्णुवायुन्द्रं विश्वकर्मासमुद्रवं ।
 विनायकोद्भव ज्ञेयं गणानाञ्चैव नायक ॥
 देवदेव नृपञ्चैव देवस्त्रीषु नृपस्तयः ।
 वास्तु देवेषु विज्ञेयं गृहाणामिव नान्यथा ॥
 देवतार्चाविकारेषु श्रुतिवेत्ता पुराहितः ।
 देवतार्चान्तु गत्वा वै तांस्तामाच्छाद्य भूषयेत् ॥
 पूजयेत्तां महामागं गन्धमाल्यासमम्पदा ।
 मधुपर्केण विधिवदुपतिष्ठेदनन्तरं ॥
 तस्मिन्निर्वाचनमात्रेण स्थालीपाकं यथाविधि ।
 पुरोधा जुहुयादङ्गो सप्तरात्रमतन्द्रितः ॥
 विप्राय पूज्या मधुरात्रपानैः
 सदर्शिनैः सप्तदिनं द्विजेन्द्र ।
 प्राप्तिःष्टमे च चित्तिगोप्रदानैः
 सकाञ्चनैः शान्तिमुपैति पापं ॥
 इत्यङ्गुतशान्ती अर्चवैकृतांपशमनं ।

—000—

गर्ग उवाच ।

अनन्निर्हीयते यत्र राष्ट्रे भृशमतिस्वरः ।
 न दीप्यते चैश्वरवान् स राष्ट्रः पीडयते नृप
 प्रज्वलेद्द्रुमं यत्र तथार्द्रम्बा कथञ्चन ।
 प्रासादतीरणद्वारं नृपवेश्मसुगलयं ।

एतानि यत्र दहन्ते तत्र राजभयं भवेत् ॥
 विद्युता वा प्रदहन्ते तत्रापि नृपतेर्भयं ।
 अनैशानि तमांसि स्युः विशालमुपपद्यते ।
 धूमश्चानग्निजो यत्र तत्र विद्यान्महद्भयं ॥
 तद्दिहिनाम्ने गगने भयं स्याद्दृष्टिर्वर्जिते ।
 दिवा सतारे गगने तथैव भयमादिशेत् ॥
 विकारसायुधानां स्यात्तत्र संग्राममादिशेत् ।
 त्रिरात्रोपोषितस्तत्र पुरीषाः सुसमाहितः ।
 समिद्धिः क्षीरवृक्षाणां सर्षपैश्च घृतेन च ॥

दद्यात्सुवर्णञ्च तथा हिजेभ्यो
 गाक्षैव वस्ताणि तथा भुवञ्च ।
 एवं कृते पापमुपैति नाशं
 यद्ग्निवैकृत्यभय हिजेन्द्र ॥

इत्यङ्गुतशान्तौ अग्निवैकृत्यं ।

— ००० —

गर्ग उवाच ।

पुरेषु येष दृश्यन्ते पादपा देवचोदिताः ।
 वदन्ती वा हसन्ती वा स्त्रवन्ती वा रसं बहु ।
 प्ररीहा वा विना बाधं शाखा मुञ्चन्त्यसंकमं ।
 फलं पृथन्त्यथालं दर्शयन्ति त्राहायनाः ॥
 पूर्व्वविस्थान्दर्शयन्ति फलं पृथं तथाभवं ।
 क्षीरं स्नेहं सुरां रक्तं मधु तीर्थं स्रवन्ति वा ॥

पुष्पव्यरीगाः सहसा शुष्कं रोहन्ति वा पुनः ।

उत्तिष्ठन्तीह पतिताः पतन्ति च तथोत्थिताः ॥

तत्र वक्ष्यामि ते ब्रह्मन् विपाकफलमेव च ।

रोदने व्याधिमभ्येति हसने देशविभ्रमं ॥

शाखापपातने कुर्यात् संयामे रोद्धपातनं ।

बालानां मरणं कुर्यात् बालानां फलपुष्पतः ॥

स्रराष्ट्रभेदं कुरुते फलपुष्पमनन्तरं ।

क्षयं सर्वत्र गोक्षोरं स्नेहं दुर्भिर्जलक्षणं ॥

शुष्केषु संप्रहारेषु वीर्यमन्त्रं न रोहति ।

पर्वतानां महाराजभयं भेदकरम्भवेत् ॥

स्थानात् स्थानन्तु गमने देशभङ्गं तथादिशेत् ॥

जल्पतस्वपि च वृक्षेषु रोदते वा धनक्षयं ॥

एतत्पूजितवृक्षेषु सर्वराष्ट्रीऽपि पच्यते ।

पृथ्वीः फलैश्चाधिकृतै राज्ञो मृत्युस्तथादिशेत् ॥

अन्येषु चैव वृक्षेषु वृक्षोत्पातेश्चतन्द्रितः ।

आच्छादयित्वा तं वृक्षं गन्धमान्यैर्विभूयेत् ॥

वृक्षोपरि तथाकुक्षं कुर्यात्पापप्रशान्तये ।

शिवमभ्यर्चयेद्देवं पशुघ्नस्मै निवेदयेत् ।

मूलेभ्य इति यदीमात् कृत्वा रुष्टं जपेत्ततः ॥

सध्याज्ययुक्तेन तु पायसेन

संपूज्य विप्रांश्च भुवश्च दद्यात् ।

गौतेन वृत्तेन तथाचनेन

देवं ह्यं पापविनाशहेतोः ॥

इत्यहं तस्मान्ती वृक्षोत्पातशमनः ।

(१३८)

गर्ग उवाच ।

अतिवृष्टिरनावृष्टिर्दुर्भिक्षादिभयं मतं ।
 अनृतौ तु दिनादूर्ध्वं वृष्टिर्ज्ञेया भयाय तु ॥
 अनल्पे विवृता चैव विज्ञेया राजसूत्यवे ।
 शीतोष्णताविपर्यया ऋतूनां रिपुजन्मभयं ॥
 शोणितं वर्षते यत्र तत्र शस्त्रभयं भवेत् ।
 अङ्गारपांशुवर्षेषु नगरं संविनश्यति ।
 मज्जास्थिस्नेहमांसानां जनमारभयं भवेत् ॥

गर्ग उवाच ।

प्रविशन्ति यदा ग्राममारण्यमृगपक्षिणः ।
 अरण्यं यान्ति वा ग्राम्याः स्थलं यान्ति जलोद्भवाः ॥
 स्थलजा वा जले यान्ति घोरं वा सन्ति निर्भयाः ।
 राजदारे पुरदारे शिवा वाप्यशिवप्रदाः ॥
 दिवा रात्रिचरा वापि रात्रौ वापि दिवाचराः ।
 ग्राम्यास्त्यजन्ति ग्रामं वा तच्चोत्पातं विनिर्द्दिशेत् ॥
 दोषा वा सन्ति सन्ध्यास्तु मण्डलानि च कुर्वते ।
 रसन्ते विप्रियं यत्र तदा प्रेतफलं लभेत् ॥
 प्रदीपे कुक्कुटावासो हेमन्ते वापि कोकिलः ।
 अर्क्षोदयेऽर्क्षीभिस्तुखी शिवा यमभयं वदेत् ॥
 गृहहृत्पीतः प्रविशेत् क्रव्यादा मुद्गिं लीयते ।
 मधु वाऽमक्षिका कुर्यात् शूलगृहपतेर्भवेत् ॥
 प्राकारदारगेहेषु तोरणापणवीथिषु ।
 केतुच्छत्राबुधाख्येषु क्रव्यात् संपतते यदि ॥

जायन्ते वाय वास्तीका मधु वा सन्दने यदि ।
 प्रदेशो नाशमायाति राजा च स्त्रियते तदा ॥
 मूषिकान् शलभान् हृष्टा प्रभूतं जुह्वयं भवेत् ।
 काष्ठोष्णकास्थिशृङ्गास्थाः श्वानोमरकवेदिनः ॥
 दुर्भिक्षवेदना ज्ञेयाः काका धान्यमृषो यदि ।
 जना अभिभवन्ति स्म निर्भया रणवेदिनः ॥
 काको मैथुनयुक्तस श्वेतः स यदि दृश्यते ।
 राजा वा स्त्रियते तत्र तदा देशो विनश्यति ॥
 उल्लूको वसते यत्र निपतेहा तथा गृहे ।
 ज्ञेयो गृहपतेर्मृत्युर्जननाशस्तथैव च ॥
 मृगपक्षिविकारेषु कुर्याद्भोमं सदक्षिणं ।
 देवाः कपोत इति च जप्तव्यं पञ्चभिर्हिजैः ॥
 सुदेव इति चेकेन देया गावः सदक्षिणाः ।
 जपेच्छाकुनसूक्तञ्च मनोवेदशिरांसि च ॥
 देवाः कपोतादयो मन्त्रा ऋग्वेदे प्रसिद्धाः ।
 गावश्च देया विधिवत् द्विजानां ,
 सकाञ्चना वस्त्रयुगोत्तरीयाः ।
 एवं कृते शान्तिमुपैति पापं
 सृगैर्हिजैर्वा विनिवेदितं यत् ॥
 इत्यङ्गुतशान्तौ मृगपक्षिवैकतोपशमन ।

—ooOoo—

गर्ग उवाच ।

प्रासादतारश्च च्छादं द्वारं प्राकारवेश्मनां ।

अनिमित्तस्तु पतितं दृढानां राजमृत्यवे ॥
 रजसा वाष्पधूमेन दिशो यत्र समाकुलाः ।
 आदित्यचन्द्रताराश्च विवर्णा भयवृक्षये ॥
 राक्षसा यत्र दृश्यन्ते ब्राह्मणाश्च विधर्मिणः ।
 ऋतवस्तु विपर्यस्ता अपूज्यं पूजयेज्जनः ।
 नक्षत्राणि वियोगानि तन्महद्बलक्षणं ॥
 केतूदयोपरागे च क्षिद्रता शशिसूर्ययोः ।
 फलं पुष्पं तथा धान्यं हिरण्म्याभरणानि च ॥
 पाण्डुजस्तु(१) फलानाञ्च वर्षणे रोगजन्मयं ।
 क्षिद्रञ्चातिप्रवर्षायां शस्यानां प्रीतिवर्धनं ॥
 विरजस्को रत्नावभ्रे यद्वा च्छाया न दृश्यते ।
 दृश्यते न प्रदीपे वा तत्र देशभयं भवेत् ॥
 निरभ्रे वापि रात्रौ वा श्वेतं याम्योक्तेरेण च ।
 इन्द्रायुधं तथा दृष्ट्वा लक्ष्म्यापातं तथैव च ॥
 दिग्दाहपरिवेषो च गन्धर्वनगरस्तथा ।

परचक्रभयं ब्रूयाद्देशोपद्रवमेव च ॥

सूर्य्येन्दुपर्जन्यसमीरणानां

होमस्तु कार्यो विधिवद्विजेन्द्रैः ।

धान्यानि गोकामनदक्षिणाश्च

देया द्विजानामघनाग्रहेतोः ॥

इत्यङ्गुतशान्तौ दृष्टिवैज्ञतप्रशमनं ।

गर्ग उवाच ।

नगरादपसर्पन्ते समोपमुपयान्ति वा ।
 नद्या ऋदप्रश्रवणा विरसा हि भवन्ति च ॥
 विवर्णकल्षं तप्तं फेनवर्जन्तु सङ्गुलं ।
 क्षीरस्त्रेहसुगारक्तं वहन्ते बहुलोदकाः ।
 घग्नासाभ्यन्तरे तत्र परचक्रभयं भवेत् ॥
 जलाशया नदस्ते च प्रज्वलन्ति कश्चिन्ति वा ।
 विजल्पन्तेऽतिजिह्वाश्च ज्वालाधूम सृजन्ति च ॥
 अखाति वा जलोत्पातः समर्था वा जलाशयाः ।
 सगीतशब्दा दृश्यन्ते जनमारोऽत्र सम्भवेत् ॥
 दिव्याश्रोगोभयं सर्पिर्मधुनावावमेचन ।
 जप्तव्या वारुणा मन्त्रास्तेस्तु हामा जले भवेत् ॥

मध्वाण्ययुक्तं परमावमत्र

देयं द्विजानां द्विजभोजनार्थं ।

गावश्च देयाः सितवस्त्रयुक्ता-

स्तथोदकुम्भाः सकलाघगान्ते ।

इत्यङ्गुतश्मन्तौ सलिलाशयवैकृत ।

— ००० —

गर्ग उवाच ।

अकालप्रसवा नार्यः कालातीतप्रजास्तथा ।

विकृतप्रसवाश्चैव युग्मप्रसवनास्तथा ॥

अमातुषाच घण्टाश्च सञ्जाता व्यञ्जनास्तथा ।

हीनाङ्गा अधिकाङ्गाश्च जायन्ते यदि वा त्रयः ॥

पशवः पक्षिणश्चैव तथैव च सरीसृपाः ।

विनाशस्तस्य देशस्य कुलस्य च विनिर्दिशेत् ॥

निर्वासयेत्तां नृपतिश्च राष्ट्रात्

स्त्रियश्च पूज्याश्च ततो द्विजेन्द्राः ।

यदृच्छन्त्यैर्ब्राह्मणतर्प्य णश्च

लोके ततः शान्तिमुपैति पापं ।

इति वेकृतशान्तौ प्रसववैकृतं ।

—000—

गर्ग उवाच ।

यान्ति यानान्ययुक्तानि युक्तान्यपि न यान्ति चेत्

चोद्यमानानि तत्र स्यात् महद्भयसमुत्थितं ॥

वाद्यमाना न वाद्यन्ते वाद्यन्ते वाप्यनाहताः ।

अचलाश्च चलन्त्येव न चलानि चलन्ति च ।

उपस्करादिविक्रते धारं शस्त्रभयं भवेत् ॥

वायोस्तु पूजा द्विजपुङ्गवैश्च

कृत्वा तदुक्तांश्च जपेच्च मन्त्रान् ।

दद्यात् प्रभूतं परमाद्यमन्नं

सदक्षिणन्तेन शमोऽस्य भूपतेः ॥

इत्युपस्करवैकृतोपशमः ।

—000—

ग्रहर्क्षविक्रतियत्र तत्रापि भयमादिशेत् ।
 स्त्रियश्च कलहायस्ते वाचा निवृत्तिर्बालकान् ॥
 क्रियाणामुचितानाञ्च विस्थितिर्यत्र दृश्यते ।
 अग्निर्यत्र न दीप्येत ह्ययमानाषु शास्त्रिषु ॥
 पिपीलिकाश्च कव्यादा यान्ति वास्तवतास्ततः ।
 पूर्णकुम्भाः स्रवन्ते च हविर्वा विप्रलुप्यते ॥
 मङ्गल्याः स्वामिनो यत्र न श्रुयन्ते समन्ततः ।
 वेपथुर्बोधते वापि प्रोक्ताहे मति निन्दितः (१) ॥
 न च देवेषु वत्सन्ते यथावद्वाङ्मणेषु च ।
 मन्दघोषानि वाद्यानि वाद्यन्ते विश्वराणि च ॥
 गुरुमित्रद्विषो यत्र शत्रुपूजारता जनाः ।
 प्राङ्मणान् सुहृदोमान्धान् जमो यत्रावमन्यते ॥
 शान्तिमङ्गलहोमेषु नास्तिको यत्र जायते ।
 राजा वा म्रियते यत्र सर्वदेशो विनश्यति ॥
 राज्ञो विनाशे संप्राप्ते निमित्तानि निबोध मे ।
 ब्राह्मणान् प्रथमं हेष्टि ब्राह्मणांश्च विनिन्दति ॥
 ब्राह्मणानवमन्येत ब्राह्मणांश्च जिघांसति ।
 न तान् स्मरति कृत्येषु याचितञ्चावसीयते ॥
 नमनञ्च नचायिष्य प्रशंसां नाभिनन्दति ।
 अपूर्वन्तु करं लोभात्तथा सम्प्रीहिते जने ॥

पूतांथाभ्यर्चयेत् सम्यक् सपत्निकान् हिजोत्तमान् ।

भोज्यानि चैव कार्याणि सुराणां बल्यस्तथा ॥

गावश्च देया दिजपुङ्गवेभ्यो

भुवन्तथा काञ्चनमम्बरञ्च ।

होमथ कार्यो हिजपूजनञ्च

एवं कृते शान्तिमुपैति पापं ॥

इति मत्स्यपुराणीक्तान्यद्भुतशान्तिकानि

समाप्तानि ।

इति श्रीमहाराजाधिराज-श्रीमहादेवस्य समस्तकरणा

धोश्वर-मकलविद्याविशारद-श्रीहेमाद्रिविरचिते

चतुर्वर्गाचिन्तामणौ व्रतखण्डे

अद्भुतशान्तिकानि समाप्तानि ।



ASIATIC SOCIETY CALCUTTA

ASIATIC SOCIETY, CALCUTTA

